प्रकाशकः—
शंभुलाल जगशी शाह
गूर्जर ग्रन्थरत्न कार्यालय
गांधीरस्तो, अमदावाद

मुद्रक—
पंडित भगवानदास हरखचन्द दोशी
शारदामुद्रणालय
१५, जैन सोसाइटी, अमदावाद

प्रवेशक

वैदिक परंपरानुं मूळभूत शास्त्र 'वेदो' छे, जरथोस्ती परम्परानुं मूळभूतशास्त्र 'अवेस्ता' छे, बौद्ध परंपरानुं मूळभूत शास्त्र पाली 'त्रिपिटक' छे, तेम जैन परंपरानुं मूळभूत शास्त्र द्वादशांग 'गणिपिटक' छे.

मूळ जैन आगमो बार अंगोमां वहेंचायेला छेः १ आयार, २ सूयगड, ३ ठाण, ४ समवाय, ५ वियाहपण्णत्ति, ६ नायाधम्मकहा, ७ उवासगदसा, ८ अंतगडदसा, ९ अणुत्तरोववाइअदसा, १० पण्हावागरण, ११ विवाग अने १२ दिट्ठिवाय.

समवायमां अंगसूत्रोनो परिचय आप्यो छे त्यां अने नंदीसूत्रमां (पृ० २०९ थी २४६ सुधी) आ बारे अंगोनो सविस्तर परिचय आपेलो छे

वर्तमानमां अगियार अंग उपलब्ध छे अने बारमुं अंग-दिट्ठिवाय आज घणा वखतथी विच्छेद पामेलुं छे. तथा जे अगियार अंगो उपलब्ध छे ते पण जेवां हतां तेवां ने तेवां ज आजे छे एम न कही शकाय.[1]

उक्त बार अंगो उपरांत बीजा पण अनेक जिनआगमोनी विद्यमानतानो उल्लेख नंदीसूत्रमां मळे छे. आर्य श्रीदूष्यगणिना शिष्य

१ दाखला तरीके आचारागसूत्रनुं सातमुं अध्ययन 'महापरिण्णा' उपलब्ध थतु नथी. प्रश्नव्याकरणनो नंदिसूत्रमा जेवो परिचय आप्यो छे ते रीते ए विषयो एमां उपलब्ध थता नथी. आगमना पदोनी संख्यामा घणो घटाडो थइ गयेलो छे. नंदीसूत्रना उल्लेख प्रमाणे ज्ञाताधर्म कथामा साडात्रण क्रोड कथाओ हती. आ उल्लेख कदाच अतिशयोक्त होय तो पण अत्यारे ए सूत्रना मात्र वीस ज अध्ययन मळे छे ते जोता एमा घणो घटाडो थयो लागे छे.

देववाचक क्षमाश्रमणे रचेला उक्त नंदीसूत्रमां समस्त मूळ जैन श्रुतनो नामग्राह सविस्तर उल्लेख आवे छे. तेमां 'गमिकश्रुत[२]–अगमिकश्रुत' 'अंगप्रविष्टश्रुत[३]–अंगबाह्यश्रुत' 'कालिकश्रुत[४]–उत्कालिकश्रुत' एम अनेक विभागो बतावीने ए क्षमाश्रमणे श्रुतज्ञानने वर्णव्युं छे. तेमां उत्कालिकश्रुतनां नामो गणावतां प्रस्तुत रायपसेणइअने नोंधेलुं छे. (समितिनुं नंदीसूत्र पृ० २०२)

नंदीसूत्रमां आवेली रायपसेणइअना नामनी नोंध उपरथी एना समय विशे जरूर थोडुं विचारी शकाय.

ग्रन्थनो समय

नंदीसूत्रना प्रणेता देववाचके सूत्रना आरंभमां पोतानी परंपरा बतावेली छे. जेमां पोताना पूर्वपुरुषोनां बीजां अनेक नामो साथे ब्रह्मद्वीपिक शाखाना आर्य सिंहसूरि, माथुरीवाचनाना सूत्रधार आर्य स्कन्दिलाचार्य, आर्य नागार्जुनाचार्य, नागिलकुल (नागेन्द्रकुल) ना आर्य भूतदिन्नाचार्यनां नामो पण नोंधेलां छे.

कल्पसूत्रनी प्रांते वंचाती स्थविरावलीमां जणाव्युं छे के "आर्य सिंहगिरिना चार शिष्योः आर्य धनगिरि, आर्यवज्र, आर्य समिअ अने आर्य अरिहदिन्न. तेमां आर्य समिअथी ब्रह्मद्वीपिक शाखानो उद्भव थयो अने आर्य वज्रस्वामीना शिष्य श्रीवज्रसेन द्वारा आर्य नाइली शाखा नीकळी"

---

२ जेमां वारंवार एकसरखा पाठो आवता होय ते 'गमिक' श्रुत कहेवाय. आ श्रुतमां दृष्टिवादसूत्रनो ज मात्र समावेश थाय छे. आचाराग वगेरे 'अगमिक' श्रुत लेखाय छे.

३ गणधरोए रचेलु श्रुत ते 'अंगप्रविष्ट' अने स्थविरोए रचेलु श्रुत ते 'अगबाह्य श्रुत' समजवुं. अथवा नियत पाठवाळु श्रुत ते 'अंगप्रविष्ट' श्रुत अने अनियत पाठवाळु श्रुत ते 'अगबाह्य श्रुत'.

४ जे श्रुत अमुक नियत काळे ज भणी शकाय ते 'कालिक' श्रुत अने जेना भणवा माटे कोइ नियत काळ न होय ते 'उत्कालिक श्रुत'

प्रस्तुत नाइली शाखा अने नंदीसूत्रमां सूचवेलुं नागिलकुल ए बन्ने एक छे ब्रह्मद्वीपिक शाखाना उद्भावक आर्य समिअनो समय
वीरात् छट्ठो सैको कही शकाय अने नागिल शाखाना उत्पादक श्रीवज्रसेननो समय वीरात् सातमो सैको गणी शकाय, एटले नागिल
शाखानो समय पण वीरात् सातमो सैको ठरे. आ नागिल शाखामां थयेला भूतदिन्न आचार्यना शिष्य लोहित्यसूरि अने ते पछी
थयेला दूष्यगणिना शिष्य देववाचक.

आ गणना द्वारा नंदीसूत्रना प्रणेता देववाचकनो समय वीरात् आठमो वा नवमो सैको सहजे ठरावी शकाय. आ गणनाने साची
मानवाने बाध न होय तो प्रस्तुत रायपसेणइअनो समय वीरात् नवमा सैका करतां य पहेलो आवे एटले रायपसेणइअने विक्रमनी
पांचमी शताब्दी करतां य पूर्वेनुं मानी शकाय आ एक गणना

नंदीसूत्रमां जैन ग्रन्थो उपरांत वैदिक परंपराना कौटिल्य, घोटकमुख वैशेषिक, षष्टीतन्त्र, माठर, पातंजल वगेरे ग्रन्थोनां नामो पण
आवे छे अने ग्रन्थ तरीके 'बुद्धवचन' नो पण उल्लेख आवे छे. एटले नंदीसूत्रना प्रणेता, माठर अने पतंजलि पछी ज होई शके. आ
गणनाने आधारे प्रस्तुत रायपसेणइअनो समय माठर अने पतजलि पहेलांनो ठरे अथवा समसमय पण कही शकाय आ बीजी गणना.

रायपसेणइअमां पएसी राजानी साथे सम्बन्ध धरावती जे बधी हकीकत आवे छे तेने ज मळती हकीकत त्रिपिटिकमांना दीघ-
निकायमां पायासी राजाना नाम साथे संकळायेली आजे पण उपलब्ध छे. अने तेमां राजा पसेनदीए आपेल राजदेय भागने राजा
पायासी भोगवे छे, ए हकीकत पण आपेली छे ए बधुं जोतां दीघनिकायमां आवेली हकीकत अने रायपसेणइअमां आवेली हकीकतनो
समान समय कल्पी शकाय, अने ते पण राजा पसेनदीनो जे समय निश्चित थयो होय ते आ त्रीजी गणना.

आ त्रीजी गणना ग्रन्थनी हकीकतना समय उपर प्रकाश पाडे छे, परन्तु ते हकीकत ग्रन्थरूपे लिपिबद्ध क्यारे थई ए विशे कशुं
सूचवी शकती नथी, ए ख्यालमां रहे.

देवर्द्धिगणि क्षमाश्रमणे जैन आगमोने वीरात् ९८० मां एटले विक्रमात् छट्ठा सैकामां लिपिबद्ध कर्यां के संकलित कर्यां एवो मत

जैन परंपरामां प्रचलित छे. ए जोतां प्रस्तुत रायपसेणइअ विक्रमना छठ्ठा सैका पहेलांनुं ठरे आ चोथी गणना.

आम एकंदर जोतां प्रस्तुत ग्रन्थनो मोडामां मोडो समय छठ्ठो सैको तो खरो ज.

ग्रन्थनुं नाम

[1]नंदीसूत्रना मुद्रित पुस्तकमां 'रायपसेणिय' एवुं नाम मळे छे, त्यारे मारी पासेनी लिखित पोथीओमां केटलेक स्थळे 'रायपसेणइअ' नाम मळे छे. विवरणकार श्रीमलयगिरिसूरि 'रायपसेणीअ' नाम स्वीकारे छे. अने तेनो संबंध संस्कृत 'राजप्रश्नीय' साथे जोडे छे. 'प्रश्न' शब्दनां प्राकृत उच्चारण 'पण्ह' अने 'पसिण' बन्ने थाय छे, परन्तु 'पसेण' एवुं थई शकतुं नथी. उच्चारण शास्त्रनी वैज्ञानिक रीतने ध्यानमां लईए तो 'पसिण' रूपसुधीनुं परिवर्तन उचित लागे छे, अने प्राकृत व्याकरणनी दृष्टिए पण ए ज घटमान लागे छे छतां 'आर्ष' कहीने 'पसेण' रूपनी पण संगति करवा ललचाईए तो 'आर्ष'ना अपवादनो वधारे पडतो उपयोग थयो गणाय. अने 'आर्ष'ने नामे शुद्धिअशुद्धिनो विवेक क्यां समजवो ते नक्की नहीं थाय.

आ सूत्रमां 'राजाए करेल प्रश्नो छे' एम समजीने विवरणकारे सूत्रना नामनो संबंध संस्कृत 'राजप्रश्नीय' शब्द साथे योज्यो जणाय छे एमनी वात तो खरी छे, परन्तु प्रस्तुत विवरणकार करतां पूर्वना आचार्य तत्त्वार्थवृत्तिकार गंधहस्ती-आचार्य सिद्धसेन आ सूत्रनुं नाम 'राजप्रसेनकीय' जणावे छे, अने वादी देवसूरिना गुरु श्रीमुनिचंद्रसूरि 'राजप्रसेनजित' जणावे छे. ए प्राचीन आचा-

---

१ प्रस्तुत रायपसेणइय सुत्तमा पण १६५मी कंडिकामां 'नंदिसुत्त'नो उल्लेख आवे छे. ए उल्लेख त्या ज्ञाननी बधी हकीकत जाणवा माटे संकलनाकारे उमेरेलो छे एम समजवानुं छे. नदिसुत्त देववाचके करेलु छे ए निश्चित छे माटे केशीश्रमणना मुखमांनो ऐ उल्लेख 'रायपसेणइय' अने 'नदिसुत्त'ना पौर्वापर्यना साधन तरीके निरुपयोगी छे अथवा नंदिसूत्रमा पण एक 'नदी' सूत्रनो उल्लेख छे एटले आ वर्तमान नंदिसूत्र करतां कोई बीजु प्राचीन 'नंदी' होय अने तेनो उल्लेख केशीश्रमण करता होय तो ते पण घटमान खरुं.

र्योए जणावेलां नामोने विशेष प्रामाणिक समजीने अने प्राचीन पाठने आधारभूत राखीने 'रायपसेणइअ' नाम मान्य राख्युं छे जो के नंदीसूत्रना मुद्रित पुस्तकमां 'रायपसेणिअ' पाठ छे, पण सूत्रोनुं संपादनकाम जोतां ए पाठनी प्रामाणिकता विशे शंका रहे छे. अने आ लखती वखते नंदीसूत्रनी लखेली पोथीओ जोवानो समय रह्यो नथी. एटले ज में गंधहस्ती अने मुनिचंद्रसूरिने मान्य राख्या छे.

दीघनिकायमां राजा प्रसेनजितनो उल्लेख आवे छे एथी आ पुस्तकनी अभिधेय वस्तुनो संबंध राजा पायासिना वडाराजा प्रसेनजित साथे जोडाएलो होय. जो के दीघनिकायमां पण प्रश्नकार तो पायासि ज छे, छतां तेना वडाराजा तरीके राजा प्रसेनजितनुं नाम होवाथी प्रस्तुत सूत्रनुं नाम पण ते नामे जैन परंपरामां प्रचलित थयुं होय.

जे आचार्योए 'राजप्रसेनकीय' अथवा 'राजप्रसेनजित' नामो लख्यां छे तेमनी शी कल्पना हशे ते तो केम कही शकाय ?

आजकाल वर्तमान रायपसेणइअमां जे हकीकत उपलब्ध छे ते ज हकीकत जो उक्त आचार्य सिद्धसेन गणि अने श्रीमुनिचंद्र सूरिना समयमां उपलब्ध थता रायपसेणइअमां होय तो जे सूत्रमां राजा प्रसेनजितनु नामनिशान पण नथी आवतुं ते सूत्रनुं नाम ए आचार्योए राजप्रसेनकीय अथवा राजप्रसेनजित एवुं जे आप्युं छे ते उपरथी नीचेनी बे कल्पनाओ उठे छेः

[१] विवरणकार घणी जग्याए जणावे छे के प्रस्तुत सूत्रमां वाचनाभेदनी बहुलता छे ए दृष्टिए जोतां वर्तमान वाचना अने ए पूर्वाचार्योना वखतनी वाचनामां जरूर कोई प्रकारनो पाठभेद होय एम मानवुं वधारे पडतु नथी. एटले उपलब्ध वाचनामां राजा प्रसेनजितनो उल्लेख न होवा छतां ए पूर्वाचार्योना वखतनी वाचनामां राजा प्रसेनजितनो उल्लेख होय एम संभवी शके छे, अने ए उल्लेखने आधारे उक्त आचार्योए ए सूत्रनुं नाम 'राजप्रसेनकीय' अथवा 'राजप्रसेनजित' एवुं लख्युं होय तो ए संगत कहेवाय.

आवा बहुश्रुत अने आगमधर आचार्योने माटे एवुं कहेवुं के तेमणे उक्त नामोनी कल्पना मात्र वर्णविकारनी दृष्टिए ज करी छे अने आगमनी अंदरनी वस्तुनी उपेक्षा करी छे ए, एमनुं विशाळ ज्ञान जोतां, अजुगतुं लागे छे

[२] एम पण होई शके के मूळ सूत्रमां राजा प्रसेनजितनो उल्लेख एमना वखतमां न रह्यो होय, पण परंपराथी एमणे ए सूत्रमां

राजा प्रसेनजितनो संबंध होवानुं जाण्युं होय अने ते आधारे तेमणे राजप्रसेनकीय अथवा राजप्रसेनजित एवुं नाम आप्युं होय

आ सिवाय बीजी कोई एवी कल्पना ख्यालमां नथी आवती के जे उक्त नामोनो खुलासो आपी शके अने आ सूत्रनां जे नामो ए आचार्योए लख्यां छे तेने खोटां तो कही ज केम शकाय ?

आ सूत्रमां आवती पएसी-प्रदेशीनी हकीकत उपरथी वेबर महाशये 'रायपसेणीय' ने बदले 'रायपएसीय'नी कल्पना करी छे. वस्तु जोतां आ नाम अन्वर्थ लागे छे, पण ए कल्पनाने कशो आधार मळतो नथी

उपांग

परंपरा प्रमाणे आ सूत्र सूयगडंग सूत्रनुं उपाग कहेवाय छे आ परंपरामां केटलुं प्रामाण्य छे ए वस्तु विशेष विचारणीय छे. नंदीसूत्रमां ज्यां श्रुतज्ञानना विभागो कर्या छे तेमां 'अंग' 'उपांग' तरीकेनो विभाग जणातो नथी, परन्तु 'अंग' अने 'अंगबाह्य' एवो विभाग मळे छे. वळी तेमां मात्र अंगोनो ज परिचय आप्यो छे, पण उपांगो विशे के अमुक उपांगना अमुक अंग साथेना संबंध विशे कशुं जणाववामां आव्युं नथी, एटले 'अमुक सूत्रो उपांग छे अने ते अमुक सूत्रोनां उपांग छे' एवी मान्यताने प्राचीन शास्त्रोनो टेको न मळे त्यां सुधी ए मान्यता केवळ परंपरा ज गणाय अने ए परंपरागत मान्यताने स्वीकारतां, इतिहासनी दृष्टिए, बहु विचार करवो पडे

ग्रंथनी वस्तु

आ सूत्रमां मुख्य नायक राजा पएसी छे, तदुपरांत, चित्त सारथि, भगवान महावीर, केशीकुमार श्रमण, राजा जितशत्रु, राजा सेय, राजा सेयनी राणी धारिणी, पएसीनी राणी सूर्यकांता, तेनो पुत्र सूर्यकांत वगेरे व्यक्तिओ तथा आमलकप्पा नगरी, श्रावस्ती नगरी, श्वेतांबी नगरी, केकयदेश, कुणालदेश वगेरे स्थळोनुं वर्णन आवे छे. ए वर्णन ते वखतनी नगररचना, प्रजानी स्थिति, राजानी स्थिति

अने देशनी स्थिति विशे सारी समज आपे एवुं छे आ उपरांत सूत्रनी संकलना करनारे सूत्रनी बधी हकीकत भगवान महावीरना मोढामां मूकेली छे. भगवान महावीर फरता फरता आमलकप्पामां आव्या छे, अने अंबसालवनमां अशोकवृक्षनी नीचे एक मोटी काळी शिलापाट उपर बेठा छे. त्यां एमनी पासे स्वर्गनो सूर्याभदेव एमने वांदवा आवे छे. आ प्रसंगने लईने संकलनाकारे भगवान महावीरनुं शारीरिक वर्णन अने एमना आध्यात्मिक भाव बहु सरस रीते बतावेला छे. अने सूर्याभदेवनुं वर्णन पण ठीक ठीक आपेलुं छे. सूर्याभदेवनुं वर्णन करतां तेना निवासरूप विमानना वर्णने आ सूत्रमां घणा पानां रोक्यां छे. वर्णनकारे सूर्याभदेवना विमाननी प्रत्येक वस्तुनुं-नळियां, वळीओ सिक्खेनुं-झीणवट भर्युं वर्णन कर्युं छे. आ वर्णन एटलुं बधुं भरचक थई गयुं छे के सामान्य वांचनारना मन उपर कोई जातनी स्पष्ट आकारनी कल्पना आवी शकती नथी. तोपण जो कोई शिल्पशास्त्री आ वर्णन बहु ज धीरज अने खतथी वांचे तो जरूर तद्दन नवा प्रकारना एक मोटा महालयनी कल्पना करी शके, अने शिल्पविद्याने लगता केटलाक पारिभाषिक शब्दो पण मेळवी शके एमांना केटलाक शब्दो तो गुजराती अने बीजी भाषामां सारी रीते प्रचलित छे जेमकेः मूळमां 'अग्गला' भाषामां 'आगळियो' (पृ० १५८) मूळमां एक 'अग्गलापासाय' शब्द आवे छे जेनो शब्दार्थ 'आगळियानो महेल' एवो थाय छे. (पृ० १५८) ए अर्थ जोतां आ शब्द, बंध करती वखते आगळियो जेना उपर रहे छे ते लाकडाने बतावतो होय एम मालुम पडे छे. भाषामां आ वस्तुने कया शब्दथी संबोधे छे ते जाणवुं जोईए 'मूळमां' 'उत्तरंग' भाषामां 'ओतरंग' (पृ० १६७) मूळमां 'कवेल्लु' गुजराती भाषामां 'कवलुं'-नळियुं (पृ० १५९) आ जातना घणा शब्दो मळे छे. एमांना केटलाक शब्दोना अर्थो गम्य थई शकता नथी.

आ सूत्रमां सूर्याभदेव भगवान महावीर पासे आवीने वादन, संगीत अने नाच करे छे अने पछी अभिनयात्मक नाटक करे छे. आने लगतुं वर्णन घणी सुंदर रीते आमां आपेलुं छे एमां संगीतनुं स्वरूप, संगीतना प्रकार, अनेक प्रकारनां वाद्यनां नामो, जुदा जुदा वाद्य वगाडवानी जुदी जुदी रीतो वगेरे हकीकत घणी विशद रीते मूळमां ज बतावेली छे. वादनविद्याविशारद अने संगीतविद्याविशारद माणस ए तरफ ध्यान आपे तो घणुं ज नवुं समजी शके एम छे सूर्याभदेवे भगवान महावीरनी पासे बत्रीश प्रकारनुं अभि-

नयात्मक नाटक करी वताव्युं छे. ए अभिनयोमां केटलाक अभिनयो प्राकृतिक छे. सागरना तरंगनो अभिनय, चंद्रना ऊगवानो अभिनय, सूर्यना ऊगवानो अभिनय, हाथीनी गतिनो अभिनय वगेरे अनेक विचित्र विचित्र अभिनयो बतावेला छे. तदुपरांत एमां लिपिना अभिनयो पण वताव्या छे. अने तेमां मात्र पांच वर्गना अक्षरोना अभिनयो नोंधेला छे. 'क'नो अभिनय एटले 'क'नी आकृति जेवो अभिनय करीने गान करवुं, नाचवुं अने वगाडवुं ए ज रीते बीजा बधा अक्षरोना अभिनय विशे समजवानुं छे ए अभिनयमां स्वरोने, अन्तस्थ अक्षरोने अने श ष स ह ने स्थान नथी ते खास विचारवा जेवुं खरुं. आमांना केटलाक अभिनयोनां नाम भरतना नाट्यशास्त्रमां पण आवे छे. आनी नोंध में मारा भगवतीसूत्रना अनुवादना खण्ड बीजाना पृष्ठ ४४ मां टिप्पणमां आपी छे. नाटकनी अन्दर बत्रीशमुं अभिनयात्मक नाटक विशेष ध्यान खेंचे एवु छे, एमां सूर्याभदेवे भगवान महावीरना जीवनना प्रसंगो अभिनयमां उतार्या छे. भगवाननी बालक्रीडा, भगवाननी कामभोगनी लीला, भगवाननी दीक्षा, भगवाननी तपश्चर्या, भगवाननी केवलज्ञाननी प्राप्ति, भगवाननुं तीर्थप्रवर्तन अने भगवाननु निर्वाण आ प्रसंगोनो अभिनय करी बताव्यो छे ज्यारे सूर्याभदेव भगवान पासे नाटक करवा आव्यो त्यारे तेणे भगवाननी ए माटे सम्मति मागी. भगवाने एने सम्मति न आपतां मौन राख्युं. सूर्याभदेवे बे–त्रण वार पूछ्युं, तो पण भगवाने मौन ज राख्युं. अने तेम छतां सूर्याभदेव तो नाटक करीने ज रह्यो. आ बधी हकीकत विशेष विचारणा मागे छे. आ जमानामां जेओ द्रव्यपूजाने वधू महत्त्व आपे छे तेओ आ तरफ वधू लक्ष्य करशे तो तेमने भगवानना मौननो खरो अर्थ समजाशे. विवरणकार मलयगिरिए भगवानना मौननो एवो अर्थ काढ्यो छे के गौतमादि श्रमणोने स्वाध्यायमां विघ्न आवे माटे भगवाने एने सम्मति न आपी. ज्यारे मलयगिरि जेवा आचार्य, भगवानना मौननो आवो अर्थ करे छे अने आवी भक्तिने साधुओने माटे स्वाध्यायनी विघातक समजे छे त्यारे अत्यारनी आ जातनी द्रव्यभक्तिनो प्रकार साधुओने माटे स्वाध्यायनो विघातक खरो के नहीं ये जरूर विचारणीय छे.

वीजुं गमे तेम हो परन्तु प्राचीन काळनी अभिनयविद्या, संगीतविद्या अने वादनकळा उपर सूर्याभदेवना नाटकनुं प्रकरण ऐतिहासिक दृष्टिए विशेष प्रकाश पाडे एवुं छे. माटे अभिनय विद्याना जिज्ञासुओ भरतनुं नाट्यशास्त्र, आ प्रकरण, ए बन्ने साथे राखीने

जोशे तो आधुनिक रंगभूमि उपर तेओ कोई नवी कल्पना जरूर करी शकशे.

आ ग्रन्थना मूळनुं प्रमाण अनुष्टुप श्लोकनी गणतरीए २१२० श्लोक लगभगनुं तथा टीकानुं प्रमाण ३७०० श्लोक जेटलुं छे.

ग्रंथनी भाषा

मूळसूत्रनी भाषा आर्षप्राकृत छे आ सूत्रनी भाषानुं आर्षप्राकृतपणुं एटलुं स्पष्ट छे के ए विशे कंई चर्चा करवा जेवुं रहेतुं नथी मूळसूत्रमां एवा घणा शब्दो छे जे गुजराती शब्दो साथे भारोभार साम्य धरावे छे. ए दृष्टिए गुजराती भाषाना अने जुनी गुजराती भाषाना इतिहासना अभ्यासीए आ सूत्र तेम ज अन्य जैन सुत्रो अवश्य वांचवा जोईए

कर्ता अने टीकाकार

आ ग्रन्थना मूळसूत्रना कर्ता विशे कोई चोक्कस नाम जणावी शकातुं नथी. परन्तु भगवान महावीर पासेथी सांभळेली हकीकत कोई गुरू कोई शिष्यने कहेता होय एवो भास रचनाशैली जोतां थाय छे. परन्तु आखो ग्रन्थ जोवा छतां कोई पण विशिष्ट कर्तानो उल्लेख मळी शकतो नथी. एटले एना कर्ता सम्बन्धी शोध करवानी बाकी रहे छे. सांप्रदायिक मान्यता प्रमाणे अंगबाह्य श्रुतनी रचना स्थविरो करे छे ए जोतां कोई स्थविर मुनिए आ सूत्र रच्युं होय एम कही शकाय.

आ सूत्रना टीकाकार आचार्य मलयगिरि सम्बन्धी विशेष हकीकत उपलब्ध थई नथी. तेओ आचार्य हेमचन्द्रना समसमयी छे ए वात निर्विवाद छे. तेमणे अंग उपांग वगेरे उपर अनेक टीकाओ रची छे, अने तेओ एक टीकाकार तरीके घणी ज ख्याति पामेला आचार्य छे तेमनी टीकामां घणी जग्याए तेमनुं स्वतन्त्र व्यक्तित्व पण मालुम पडे छे. तेमणे अनेक टीकाओ रच्या छतां कोई पण जग्याए पोतानो कशो परिचय आप्यो नथी एनुं कारण ते समये इतिहास लखवानो रीवाज नहीं ए कहेवा करतां तेमनी नम्रता कहेवी ए विशेष उचित छे तेओ वैयाकरण पण हता तेमणे एक व्याकरण पण रच्युं हतुं. अने पोतानी टीकामां घणे स्थळे पोताना

व्याकरणनो उपयोग कर्यो छे तेओ प्राकृतना पंडित होवा उपरान्त देश्यप्राकृतना पण पंडित हता तेथी ज तेमणे तेमनी टीकाओमां देश्य शब्दोना अर्थो समजाववा माटे 'अभिमानचिह्न' नामना देशी कोशकारनो उल्लेख करीने तेम ज कशा उल्लेख विना पण देशी कोशनां प्रमाणो जग्याए जग्याए आपेलां छे. तेमनी टीकाओमां घणी वस्तुओ तद्दन नवी ज जाणवा मळे छे. कोई जिज्ञासु मात्र तेमनी टीकाओ उपर निबन्ध लखे तो तेमनी विचारसरणीनी नवीनता जरूर प्रकाशमां आवे. तेओ श्रद्धाळु छे छतां अनुगामी नथी एम चोक्कस मालुम पडे छे.

जिज्ञासुनुं जीवनवृत्त

आ सूत्र वांचनाराए एमांथी खास शुं सार लेवानो छे तेनी समजनी खातर आ नीचे आ सूत्रना मूळ नायकनुं घणुं संक्षिप्त वृत्तान्त आपवामां आव्युं छेः

आ समग्र ग्रंथमां एक जिज्ञासुनी जीवनकथा आलेखाएली छे. ग्रंथकारे वाचकोनी जिज्ञासाने उत्तेजित करवा, जिज्ञासुनी जीवनीनो जे उत्तरभाग× छे ते पूर्वभागमां उत्तेजक भाषाद्वारा वर्णवेलो छे अने तेनो जे पूर्वभाग छे ते उत्तरभागमां सांकळेलो छे.

आपणे अहीं उत्तरभागमां वर्णवाएली अनुकरणीय जीवनी विशे ज विचार करवानो छे. संवादकथा जेवी जीवनीद्वारा पण 'आपणा वर्तमान जीवनमां क्यां केवो अने कई रीते फेरफार कराए तो कल्याणमार्गनी प्राप्ति माटेनो आपणो चालु प्रयास सफळ थई शके' ए स्पष्ट समजी शकाय एम छे

×आ उत्तरभाग वाचनार जिज्ञासु नीचेना पद्योनो भाव बराबर लक्ष्यगत करेः

"देवादिगतिभंगमा जे समजे श्रुतज्ञान, माने निज मत वेषनो आग्रह मुक्तिनिदान".

"जे जिनदेह प्रमाणने समवसरणादि सिद्धि, वर्णन समजे जिननुं रोकी रहे निजबुद्धि."–श्रीमद् राजचंद्र.

जिज्ञासुनुं नाम पएसी छे. अहीं तेने एक क्रूर राजा तरीके ओळखावेलो छे.तेनो एक मित्र कहो, अमात्य कहो के सारथि कहो, ते चित्त नामे कल्याणमित्र छे ए राज्यकर्मकुशळ अने विशेष समयज्ञ छे. ग्रंथकारना कहेवा प्रमाणे पएसीनो पिता अने पितामह पण तेनी जेवो ज क्रूर हतो अने मातामही तो धर्मनिष्ठ श्रमणोपासिका हती अने जीव अजीव तत्त्वोनी जाणकार हती

पएसीनुं वर्णन आपतां मूळकार कहे छे के ते अधार्मिक चंड रौद्र साहसिक अने घातक हतो, श्रमण ब्राह्मण गुरुजन कोईनो विनय न करतो, एटलुं ज नहीं पण ए पोताना देशनो कारभार सुद्धां बराबर न चलावतो.

'शरीरथी जुदो एक आत्मा छे', 'मरण पछी जन्मांतर छे' 'पुण्यपापनी प्रवृत्तिद्वारा ज सुखदु:खनुं निर्माण छे' एवा एवा ख्यालोने ते स्वीकारतो नहि. तेने लीधे ज संभव छे के ते एवो क्रूर अने अविनयी थई गयो होय

तेनो कल्याणमित्र चित्त, पएसीना ए ख्यालो संबंधे वहारथी तो उदासीन-तटस्थ जेवो रहेतो, पण पोताना मित्र राजाने ए संबंधे कहेवानो-समजाववानो-अवसर तो ते शोध्या ज करतो.

एक प्रसंगे चित्त, राजकीय कार्य माटे राजधानी छोडी बीजे गाम गयो, त्यां ते, श्रीपार्श्वनाथ भगवाननी परंपराना केशी नामना मुनिनो धर्मोपदेश सांभळी तेमनो अनुयायी थयो-श्रमणोपासक थयो

ए चित्ते पोताना गुरुभूत मुनिने पोताना राजानी मान्यताओ विशे वात करी अने राजानी ए मान्यताओने लीधे पोताना देशनी दु:खमय कथनी कही संभळावी अने ए दुःखमय स्थितिमांथी देशने अने राजाने छोडववा अने ते अर्थे पोतानी राजधानीमां पधारवा ते मुनिराजने तेणे आग्रह भर्युं आमंत्रण आप्युं अने साथे उमेर्युं के, आप आवशो तो राजा जरूर सुधरी जशे अने ते द्वारा अमारो-अमारा आखा देशनो-देशनी समस्त जनतानो उद्धार करवानुं श्रेय आपने मळशे

राजानो क्रूर स्वभाव अने नास्तिकता भरेला ख्यालो जाणी केशी मुनिए चित्तना ते आमंत्रणनो प्रथम तो अस्वीकार कर्यो अने तेना समर्थनमां जणाव्युं के-चित्त! जे वनमां घणां दुष्ट श्वापदो रहेतां होय ते वनमां वसवुं सलामत कहेवाय? तेम जे नगरमां

क्रूर राजानुं शासन प्रवर्त्ततुं होय त्यां आववुं शुं श्रेयरूप छे?

पछी तो ते चित्ते केशी मुनिने कह्युं के-स्वामी ! आप देवानुप्रियने पएसी राजानुं शुं काम छे? राजधानीमां बीजा घणा य सार्थवाहो इभ्यो वसे छे, तेओ आपनो आदर करशे अने खानपान वगेरेनी विपुल सामग्रीद्वारा आपनी सेवा करशे

चित्तनुं ए जातनुं सुव्यवस्थित आग्रहभर्युं आमंत्रण जाणी केशी मुनिए कह्युं के, एम छे तो वळी प्रसंगे वात-फरतां फरतां त्यां आवी जशुं

पछी तो चित्त राजधानी सेयवियामां आव्यो, पोताना गुरुसंबंधे तेने भारे खटको हतो तेथी आवतां ज तेणे बगीचाना माळीओने बोलाव्या अने तेमने भारपूर्वक भलामण करी के, आपणी आ राजधानीमां श्रीकेशी नामना एक मोटा ज्ञानी मुनिराज आववाना छे, तेओ आपणा बगीचामां ऊतरशे, तो तेओ ज्यारे पधारे त्यारे तमो बधा तेमनो बहु विनयपूर्वक आदर करजो, तेमने वांदजो-नमजो अने खानपाननी सामग्रीद्वारा तेमनो सत्कार करजो.

वखत जतां केशी मुनि पण गामेगाम फरता फरता राजा पएसीनी राजधानीमां जावी पहोंच्या.

चित्ते तेमनो खूब आदर कर्यो अने कह्युं के हुं आपनी पासे राजा पएसीने कोईनेकोई व्हाने लावीश तो खरो ज, पछी आप तेने धर्म अधर्मनी समजण पाडशो, राजाने समजावतां जरा पण ग्लान न थशो-कंटाळशो नहि, तेम ज तेने जे समजाववुं होय ते नीडर थईने समजावजो, एमां लेश पण अचकाशो नहि.

चित्तनी तो पहेलेथी ज इच्छा हती के श्रीकेशी मुनि अने राजा पएसीनो समागम थाय तो राजानी वृत्तिमां कोमळता आवे अने तेम थाय तो केकय देशनी प्रजा पण सुखी थाय.

बराबर लाग जोईने एक वार चित्ते कह्युं महाराज ! आपणे त्यां कंबोज देशना पेला जे चार घोडाओ आवेला छे तेमनी तो हजु परीक्षा पण न करी, ते हवे क्यारे करवाना छो ?

राजाए कह्युंः चित्त! आजे ज करीए, चाल तैयार था अने ए घोडाओने धरमां नाखी रथ जोडी लाव

बन्ने जणा रथमां बेसी अश्वपरीक्षा माटे बहार नीकळ्या. चित्त सारथिए रथने पूरपाट हांकी मूक्यो, बहु दूर जई पहोंच्या. राजा तो थाकी गयो अने गरमी तथा धूळथी गभरायो. एणे रथने पाछो वळाव्यो.

चतुर अने समयज्ञ चित्ते विश्रांति माटे ते ज बगीचो पसंद कर्यो ज्यां तेना गुरु केशी मुनि ऊतर्या हता

बगीचामां घोडा छोड्या, तेमने चारो नाख्यो अने बन्ने जण थाक खावा बेठा. एवामां राजा पर्षदाने काने केशी मुनिनो घेरो अवाज अथडायो.

राजा वडवड्योः आ मुंडको अहीं आटले छेटे थाक खावा आव्या छीए तोपण सुखे निरांते बेसवा देतो नथी, आ ते आवडो मोटो घोंघाट शेनो?

चित्ते घणी ज नम्रताथी पोताना प्रिय राजाने मुनिनो परिचय कराव्यो अने तेमनी विद्वत्तानी थोडी प्रशंसा पण करी. सरळ स्वभावी राजा मुनिने मळवा उत्सुक थयो अने बन्ने जणा-राजा अने अमात्य-मुनिश्री पासे पहोंच्या.

राजाए आत्मा जन्मांतर अने पुण्य पाप संबंधेनी पोतानी जिज्ञासा मुनि समक्ष रजु करी अने कह्युंः

हे श्रमणायुष्मन्! में आत्मा वगेरे तत्त्वोने शोधवा प्राप्त करवा घणा घणा प्रयोगो करी जोया छतां अत्यारसुधीमां हुं ए प्रयोगोमां अफळ नीवड्यो छुं अने अत्यारसुधीना मारा जातजातना ए प्रयोगो उपरथी हुं एवा निर्णय उपर आव्यो छुं के आत्मा नथी, जन्मांतर नथी अने पुण्य-पाप पण नथी. आ संबंधे आप कोई नवो प्रयोग बतावशो वा आपना विचारो प्रकट करशो तो कृपा थशे

श्रीकेशी मुनि राजानी जिज्ञासा अने आत्मानी शोध माटेनी तालावेली बराबर समजी गया.

राजाए रजु करेली साफ साफ वातो द्वारा मुनिराजे तेना मानसनी स्थिति जाणी. 'आ राजा गतानुगतिक नथी' 'हा जी हा भणे एवो नथी' पण शुद्ध परीक्षाद्वारा-विशुद्ध प्रयोगद्वारा वस्तुतत्त्वने शोधनारो-समजनारो साचो ग्राहक छे, खरो जिज्ञासु छे, ए बाबतनी

पाकी खात्री थई

वळी, राजा उपर क्रूरतानो वा अधार्मिकतानो जे आरोप छे ते आरोप मात्र छे, दृष्टिभेदनुं परिणाम छे. जेम कोई शोधक, पोताना जीवननी शुद्धि माटे वा पोते स्वीकारेला मार्गनी परीक्षाद्वारा पाकी खात्री करवा माटे अनेक प्रयोगो करे-पोता उपर के बीजा उपर अनेक क्रियाओ करे, एवो कोई पण शोधक, गतानुगतिक लोकोनी नजरमां खूनी वा क्रूर ज लेखावानो, तेम आ राजा क्रूर लेखायो छे एवो अभिप्राय मुनिराजे राजा माटे बांध्यो

राजाए आत्मानी शोध माटे जे जे प्रयोगो करेला ते बधा मुनिराजे सावधानताथी सांभळ्या ते प्रत्येक प्रयोग पाछळ राजानी प्रखर तर्कशक्तिनुं बळ हतुं ते पण तेमना समजवामां आव्युं.

मुनिराजे राजाने कह्युंः पएसी! तें श्रम तो खूब कर्यो छे पण तारो ए श्रम शरूआतथी ज विपरीतता भणी जनारो होई तने तेमां संतोष के शांति न मळे ए बनवा जेवुं छे.

राजाना प्रयोगो संबंधे चर्चा करतां कया प्रयोगमां कयो कयो दोष हतो ए हकीकत मुनिराजे स्पष्ट कही बतावी अने छेवटे कह्युं के, पएसी! जे वृक्ष नीचे आपणे बेठा छीए तेनां पांदडां कोण हलावे छे? ऊडीने आपणा तरफ आवती आ धूळ कोण ऊडाडे छे? शुं तुं ते पांदडां हलावनारने वा धूळ ऊडाडनारने जोई शके छे?

पएसी बोल्यो महाराज! हलावनार तो पवन छे, पण हुं तेने जोई शकतो नथी.

मुनि बोल्याः पएसी! पवन तो रूप रस गंध स्पर्श अने शब्दवाळो छे छतां आपणे तेने नरी आंखे जोई शकता नथी, तो रूप रस गंध स्पर्श अने शब्दथी पर रहेला आकार विनाना एवा अमूर्त आत्माने आपणे नरी आंखे शी रीते निहाळी शकीए? आत्मा आंखनो वा बीजी कोई इन्द्रियनो विषय नथी, माटे तेने शोधवा तें करेला भौतिक प्रयोगो तद्दन नकामा नीवडे ए बनवाजोग छे; ए तो एक मात्र अनुभवनो ज विषय छे.

हा, ए खरुं के, तें जे प्रयोगो पेला चोरना शरीर उपर कर्या ते ज प्रयोगो तारा पोताना शरीर उपर अजमाव्या होत तो कदाच तने आत्मानी प्रतीति थात खरी हजु कांई वखत वीत्यो नथी. तुं ए ज प्रयोगो तारी पोतानी जात उपर-तारी इंद्रियो मन, शरीर अने संकल्पो उपर अजमावीश तो तने 'आत्मा छे' एवी खात्री थया विना नहि रहे.

पएसी ! आत्मानी पूर्णतया प्रतीति थाय ए माटे हुं पण मारी जात उपर घणा आकरा प्रयोगो अजमावी रह्यो छुं, तेथी मने आत्मानी प्रतीति तो छे, पण हजु तेनी पूर्णतया प्रतीति-आत्मानो पूर्ण साक्षात्कार-बीजा घणा आकरा प्रयोगोनी राह जुए छे. ए बधा आकरामां आकरा प्रयोगोनी कसोटीमांथी अणीशुद्ध रीते पसार थई शकीश तो ज हुं पूर्ण आत्माने अनुभवी शकीश.

पएसी! आत्मानो अनुभव मेळववा अने तेनो सर्व प्रकारे साक्षात्कार पामवा तारे अंतर्मुख थवुं पडशे. रूप रस गंध स्पर्श अने शब्दजन्य सुखोने मेळववा मन अने इंद्रियो जे दोडादोडी करी रह्यां छे तेमने तारे संयममां राखवां पडशे, आ स्थूळ शरीर सुख पामे-ते करमाई न जाय, ते माटे तुं जे हजारो प्रयत्नो सेवी रह्यो छे अने ए प्रयत्नो माटे हजारो मानवोनी शक्तिनो उपयोग करी रह्यो छे ते बधुं तारे जतुं करवु पडशे

आत्मसुख आत्माद्वारा ज वेदी शकाय छे. आत्मा पोताना सुखथी संतुष्ट छे. "आत्मन्येव आत्मना तुष्टः" ए सिद्धांतने तारे जीवन-व्यवहारमां सावधानीथी आचरवो जोईशे.

खरुं कहुं तो आपणे बधा शरीर, इंद्रिय, मन अने संकल्पोथी ऊपजतां सुखमां संतोष मेळवी अने ते ज सुखने परमसुख मानी तेनी पाछळ पड्या छीए अने ते मिथ्या प्रयासने लीधे ज आत्मसुखनो स्वाद चाखी शकता नथी

जेम एक व्यापारी व्यापार अर्थे देशांतरमां जाय ते एवी मोटी आशा राखे के हुं लक्षाधिपति थाउं. रस्तामां जतां तेने एक निधान मळी जाय अने तेमांथी ते मात्र हजार मुद्रा पामी पाछो वळे अने ते द्वारा ज संतुष्ट थई जेमतेम जीवननिर्वाह करे. तेने बीजो व्यापारी समजण आपे के, भाई ! आ हजार मुद्राने व्यापारमां रोकी तेमांथी दसगुणी के शतगुणी बीजी मुद्रा कमा, पण ते साहस

विनानो एम करतां भय पामे छे अने मळेली हजार मुद्रा वर्थाक चाली जाय तो पछी शुं थाय? एम समजी साहस करवा समर्थ थतो नथी पोते अनेक साहसिकोने ए रीते लक्षाधिपति थएला नजरे प्रत्यक्ष जुए छे छतां तेनो पूर्वग्रह छूटतो नथी, तेम आपणे पण शरीर, इंद्रिय, मन अने संकल्पोथी ज थतां सुखोमां सपडाया छीए. तेथी ए सुखने छोडी वा ए सुख उपर अंकुश मुकी अंतर्मुख थई शकता नथी पूर्वग्रहजन्य सुखो छोडतां आपणे आपणी जातने अशरण दुःखी अने कष्टमय थई गएली कल्पीए छीए.

पएसी! ज्यांसुधी आपणे आपणा पूर्वग्रहनो ए ग्रंथि भेदीने आगळ न वधीए त्यांसुधी आत्माना अनुभव माटेना आपणा सर्वे प्रयासो नर्या फांफां छे साहस कर्या विना छूटको ज नथी अहीं तो "माथा साटे माल छे." "महीं पड्या ते महासुख माणे" ए ज न्याय छे माटे तारे हवे आ ज प्रयोग करवानो रह्यो अने हुं तारी जिज्ञासा अने आत्मानुभव संबंधी तालावेलीथी जाणी शकुं छुं के ए प्रयोगने अंते विजय तारो ज छे

पएसी! ए प्रयोग तो घणा लोको करे छे पण तेमांना केटलाक तो साधनोमां ज अटकी पडे छे, केटलाक बाह्य प्रवृत्तिमां ज फसाई जाय छे, केटलाक वळी प्रतिष्ठामां ज पटकाई पडे छे, माटे तारे ए प्रयोग करतां बराबर विवेक-सावधानी राखवी जरूरी छे

सांभळ,

"कोई क्रियाजड थई रह्या शुष्क ज्ञानमां कोई, बाह्य क्रियामां राचता अंतर्भेद न कांई."
"बंध मोक्ष छे कल्पना भाखे वाणी मांहि, वर्ते मोहावेशमां शुष्कज्ञानी ते आंहि."
"वैराग्यादि सफळ तो जो सह आतमज्ञान, तेम ज आतमज्ञाननी प्राप्तितणां निदान."
"त्याग विराग न चित्तमां थाय न तेने ज्ञान, अटके त्याग विरागमां तो भूले निजभान"
"ज्यां ज्यां जे जे योग्य छे तहां समजवूं तेह, त्यां त्यां ते ते आचरे आत्मार्थी जन एह."

"होय मुमुक्षु जीव ते समजे एह विचार, होय मतार्थी जीव ते अवळो ले निर्धार."
"बाह्य त्याग पण ज्ञान नहीं ते माने गुरु सत्य, अथवा निजकुळधर्मना ते गुरुमां ज ममत्व."-श्रीमद् राजचंद्र.

तात पएसी! तारे एकडे एकथी शरू करवानुं छे, गभरावानु कशुं कारण नथी तें अत्यारसुधीमां इन्द्रियोना मनना अने संकल्पोना जे घोडा पूरपाट दोडाव्या छे अने ते अर्थे कोईना पण सुखनी परवा करी नथी ते बराबर नथी कर्युं हवे तारे ए घोडाने अंकुशमां लाववा पडशे सर्वथा इष्ट तो ए छे के ए घोडानो वेग तद्दन बन्ध ज थई जाय, पण ए एकदम तो न ज बने ते हुं मारा अनुभवथी समजु छुं, माटे ज तने ए प्रवृत्ति क्रमपूर्वक करवानी सूचना करुं छुं

प्रथम तो तारे तारा पूर्वग्रहो धीरे धीरे छोडवा, अहिंसा-सर्वप्राणिप्रेम-वृत्ति केळववी, ए माटे प्रथम तो तारे तारी निकट वसता मानवीओना सुखदुःख जाणवा प्रयत्न करवो अने एमना जीवनविकासने रुंधनारां ए दुःखो मटाडवा माटे अखिन्नपणे भरचक उद्यम सेववो तथा ए माटे तारे तारी पोतानी जातनो भोग आपवो पडे तोपण जरूर आपवो एक ज वार तुं ए रीते तारी जातनो भोग आपीश त्यारे तने जरूर आत्मानी झांखी थवानी ए खात्रीथी मान अने पछी जेम जेम ए तारो आपभोग वधतो जशे तेम तेम तने तारा आत्मार्थने लगता प्रयासमां वधुने वधु सफळता मळशे.

श्रीकेशी मुनिराजे जे कांई कह्युं ते वधुं राजा पएसीए ध्यानपूर्वक-वणी ज सावधानताथी-सांभळ्युं-अवधार्युं अने तेनुं मनन करी ते धोरणे जीवननो अखतरो करवानो तेने ऊमळको पण थई आव्यो

राजाने तेनी सरळ प्रकृति अने आत्मार्थ सम्बन्धी तालावेलीने लीधे ए वधुं तद्दन नवुं छतां अजमाववा जेवुं तो लाग्युं ज.

पछी तो तेणे

"सेवे सद्गुरु चरणने त्यागी दई निजपक्ष, पामे ने परमार्थने निजपदनो ले लक्ष"
"प्रत्यक्ष सद्गुरुयोगथी स्वच्छंद ते रोकाय, अन्य उपाय कर्या थकी प्राये बमणा थाय."

"मानादिक शत्रु महा निज छंदे न मराय, जातां सद्गुरु शरणमां अल्पप्रयासे जाय."-श्रीमद् राजचंद्र.

आ पद्योक्त भावने लक्ष्यमां राखी राजाए साधना शरू करी अने गुरुराजना कहेवा प्रमाणे पोतानी जात उपर ज अखतरो शरू कर्यो. साधनाने मंगळमय करवा माटे प्रथम तो राजा पएसीए पोताना गुरुदेव केशी मुनिने क्षमा आपवा माटे प्रार्थ्या, राजाए भरसभामां जणाव्युं के, आ पवित्र मुनिराजनो में घणो अविनय कर्यो छे ते बदल ते महात्मा मने क्षमा करवा कृपा करे ए मारी तेमने नम्र विनंती छे.

पछी तो राजाए पोतानी सर्व संपत्तिना चार सरखा भाग कर्या, जेमांनो एक भाग मात्र तेणे दान माटे ज योज्यो अने दानधर्मने दानपारमिताने-केळवतो राजा पोतानी साधनामां लयलीन रहेवा लाग्यो

हवे ते पटलो बधो साधनामय बनवा लाग्यो के, तेने पोतानी प्रिय राणीनी पण भोगसाधन तरीकेनी विस्मृति थवा लागी, पटलुं ज नहि पण राणीए राजाने विष आप्युं अने ते राजानी जाणमां आव्युं छतां तेनुं एक रुंवाडुं पण न फरक्यु. तेने पोताना देहनी पटली बधी विस्मृति थई गई के देहनो नाश करनारी राणी माटे तेने मनमां कशुं ज न ऊग्युं-ते तद्दन स्वस्थ रह्यो अने "आत्मन्येव आत्मना तुष्टः"नी परिस्थितिए लगभग पहोंचु पहोंचु थतां सूर्याभ-सूर्य जेवी झगारा मारती दिव्य-स्थितिने पाम्यो अने छेवटे* विदेह थई ज्योतमां ज्योतनी दशाने ते अनुभवशे.

गतानुगतिकता, अंधश्रद्धा, परीक्षणशक्तिनो विरोध वा अभाव, नवा नवा प्रयोगोने विवेकपूर्वक खेडवानुं साहस न होवुं, पूर्वग्रहनो अत्यधिक पक्षपात, कोईएक जातनी विवेक विनानी स्थितिचुस्तता, जिज्ञासा ज न थवी, तर्कशक्तिनो दुरुपयोग, आडंबरप्रियता, मुंझवणने दबावी देवानी वृत्ति, शांत करवा माटे मुंझवणने प्रकट करवानी अशक्ति वा प्रकट करतां कोई जातना भयनी आशंका इत्यादि अनेक दुर्गुणो मुमुक्षु जिज्ञासुना जीवनविकासनो संहार करे छे

* श्री केशी मुनिराज अने राजा पएसीना सवादमां में जे नवनीत जोयुं छे ते अहीं जणावेलुं छे.

कथानायक पएसीमां आ दुर्गुणो न होवाथी ज ते विदेह स्थितिने पामे छे, ए आपणे ध्यानमां राखवा जेवुं छे.

हुं समजुं छुं त्यां सुधी आ सूत्रनो स्वाध्याय करनारे राजा पएसीना चित्त शुद्धीकरणने ज ध्यानमां राखवानुं छे. ए सिवाय धर्मने नामे कषाय वधे ए रीते आ सूत्रनो उपयोग करवो घटित लागतो नथी.

[एक विलक्षण समानता]

बौद्धपरंपरा अने जैनपरंपरा ए बन्नेनुं एक नाम श्रमणपरंपरा छे. ते बन्नेमां अनेक प्रकारनी समानताओ रहेली छे शब्दरचनानी, भावसंकलनानी, श्रमणना आचारबंधारणनी वा केटलीक खास खास शब्दोनी समानताओ उपरांत आखेआखां आख्यानोनी समानता पण मळी आवे छे. जे आख्यान-आ पएसीनुं आख्यान वांचकोनी दृष्टिसमक्ष छे ते आखुं आख्यान जेवुं ने तेवुं ज बौद्ध परंपराना 'दीघनिकाय' नामना सुत्तपिटक ग्रंथमां पायासिसुत्तना मथाळा नीचे नोंधेलुं छे

पएसीना आ आख्यानमां मुख्य नायक पएसी छे त्यारे बौद्ध आख्यानमां नायक पायासी छे.

उपदेष्टा त्यां कुमारकाश्यप छे त्यारे अहीं केशीकुमार छे. बन्ने उपदेष्टा पांचसो भिक्षुओना अधिष्ठाता छे अने उपदेशनुं स्थान बन्ने स्थळे सेतविया-सेतव्या नगरी छे.

कल्याणमित्र अहीं चित्त छे त्यारे त्यां खत्त छे.

प्रष्टव्य स्थानो-परलोक नथी, कोई औपपातिक सत्ता नथी अने सुकृत दुष्कृतरूप कर्मोनुं फल नथी-ए बधां बन्नेमां समान छे.

आ प्रष्टव्यो संबंधे जे जे प्रतिवचनो अने तेमने लगती युक्तिप्रयुक्तिओ आवी छे ते बधीय बन्नेमां लगभग समान छे.

पेला कंबोज देशना घोडानी हकीकत जे अहींना आख्यानमां छे ते पायासीनी कथामां नथी जणाती अने पएसीनुं जे भावी वृत्तांत आ आख्यानमां पूर्वेमां नोंधेलुं छे ते पायासीना आख्यानमां क्रम प्रमाणे छेवटे जणावेलुं छे. तदुपरांत सूर्याभदेवे करेली नाट्य रचना अने बीजी विधिओ ते पायासीना आख्यानमांथी नीकळी गई छे.

आ रीते थोडो घणो फेरफार छतां मूळ वस्तु बन्ने आख्यानमां बराबर सचवाएली छे ए विवाद विनानुं छे. आ उपरथी आ आख्याननी ऐतिहासिक किंमत घणी वधी जाय छे. अने आ बन्ने भिन्नभिन्न परंपराओ पण केवी रीते समानताना प्रवाहमां वही रही छे ते पण जणाई आवे छे.

राजा पसेनजित अने पएसी वा पायासी ए बन्ने एक नथी ए वस्तु कोई न भूले.

आ माटे विशेष जाणवानी इच्छावाळाए पाली टेक्स्ट सोसाईटी तरफथी बहार पडेल अने श्री. टी. डबल्यु राईस डेविडझ संपादित 'दीघनिकाय'नी १९०३ नी आवृत्तिनु पृ० ३१६थी ३५८ सुधीमांनुं 'पायासीसुत्तंत' नामनुं प्रकरण जोवुं, हिन्दी भाषानुं पुस्तक जोवा इच्छनारे महाबोधि ग्रन्थमाळा तरफथी प्रसिद्ध थयेल अने राहुल सांकृत्यायने अनुवादित करेल 'दीघनिकाय' ग्रन्थमांनुं पृ. १९९थी २११ सुधीमांनुं 'पायासिराजञ्ञ सुत्त' नामक प्रकरण जोवुं.

पालीटेक्स्ट सोसाईटीवाळुं 'दीघनिकाय' वापरवा देवा माटे शेठ अगरचंद भैरवदान शेठियानो हुं आभारी छुं.

संशोधननां साधनो

आ सूत्रना संपादन माटे में हस्तलिखित सात अने एक समितिवाळी मुद्रित प्रत एम आठ प्रतोनो उपयोग कर्यो छे. जेमांनी पांच प्रतो पाटणथी आवेली छे अने बे प्रतो भावनगरथी आवेली छे. पाटणथी आवेली मूळनी त्रण प्रतोनो परिचय आ प्रमाणे छेः ए त्रणे प्रतोनो संकेत आ रीते में राख्यो छे

१ मूळनी प्रत पा. १
२ ,, पा. २
३ ,, पा. ३

पा. १–आ प्रतिनां पानां ३४ छे प्रत्येक पानानी लंबाई १२॥ इंच अने पहोळाई ५। इंचनी छे. प्रत्येक पानामां पंदर लाइनो अने प्रत्येक लाइनमां लगभग ६० थी ६५ अक्षरो छे. आ प्रतना अंतमां पुष्पिकामां संवत लख्यो नथी, परन्तु लिपि अने कागळ उपरथी एम कही शकाय के ए प्रत ३००–४०० वर्षनी जुनी होवी जोईए आमां ग्रन्थाग्र २१२० श्लोकनुं आप्युं छे. आनी पुष्पिका आ प्रमाणे छेः

नमो जिणाणं। जियभयाण। नमो सुयदेवयाए भगवतीए। नमो अं भगवतो अरहतो। पस्से सुपसे पस्सवणीए नमो। छ। रायप्पसेणइय सूत्रं समाप्तं।

पा. २–आ प्रतनां पानां ४७ छे प्रत्येक पानानी लंबाई ११॥ इंच अने पहोळाई ४॥ इंच छे. प्रत्येक पानामां १२ थी १४ पंक्तिओ अने प्रत्येक पंक्तिमां लगभग ४५ थी ५० अक्षरो छे. आमां ग्रंथाग्र २०७९ श्लोकनुं छे. आ प्रतमां पडिमात्रा छे. आ प्रत वि. सं. १६०४मां लखायेली छे. एनी पुष्पिका आ प्रमाणे छेः

---

५ आ ग्रन्थना अन्तमां आपेली अने बधी प्रतिओमां मळती मूळपाठनी पुष्पिकामा 'भगवतो अरहतो पस्से सुपसे पस्सवणीए नमो' एवु कोई जग्याए, 'भगवतो अरहउ पासे सुपस्से पस्सवणीए नमो' एवुं अने कोई जग्याए 'भगवउ अरहउ पासस्स। पस्से सुपस्से पस्सवर्णी नमो' आवा आवा अनेक प्रकारना पाठो मळे छे. अने तेना अर्थ माटे आज सुधी कशो प्रयत्न थयो होय एम लागतुं नथी. हु पण एनो शुद्ध अर्थ करी शकुं एम जणातु नथी छतां मारी कल्पना प्रमाणे ए पाठने आ रीते वांचवामां आवे तो तेनो कईक अर्थ नीकळी शकेः 'नमो भगवतो अरहतो पासस्स। पएसिस्स पण्हे पण्णवणीए नमो' एटले के आदिना वाक्यथी भगवान पार्श्वनाथने नमस्कार थाय छे अने पाछळना वाक्यथी प्रदेशी राजाना प्रश्नोने बतावनार आ सूत्रने नमस्कार कर्यो छे. आ वाक्योमाना बेवडा 'स' 'ण' जेवा देखाय छे तेथी ज 'पस्से'नु 'पण्णे' अने 'पस्सवणीए' नुं 'पण्णवणीए' कल्पवु ठीक लागे छे. खरी रीते तो आवा घणा उताराओने सामे राखीने पछी ज योग्य निर्णय करी शकाय.

नमो जिणाणं। नमो सुयदेवयाए भगवईए। नमो पण्णत्तीए भगवईए। णमो भगवओ अरहउ पासे सुपस्से पस्सवणी णमो। रायपसेणीयं संमत्तं।

संवत् १६०४ वर्षे मार्गवदि ५ गुरवासरे। श्रीवृधतपापक्षे महोपाध्याय श्री ४ श्री जयमंदिरगणिगरुभ्यो नमः भट्टारिक श्री श्री ४ श्री कल्याणरत्नसूरिगुरुभ्यो नम॰ ॥ पं श्री वद्यारत्नमुनिपरिभोग्यं स्वयं विलोकनार्थं राजप्रस्नी उपांगसुत्रं वाचनार्थं ज्ञातव्यंः ॥

पा. ३–आ प्रतनां पानां ४८ छे प्रत्येक पानानी लंबाई ११ इंच अने पहोळाई ४॥ इंच छे. प्रत्येक पानामां १५ पंक्ति अने प्रत्येक पंक्तिमां ४० थी ४५ अक्षरो छे आमां ग्रंथाग्र २१२० श्लोकनु छे. आ प्रत वि. सं. १६१९नी छे. पनी पुष्पिका आ प्रमाणे छे

णमो जिणाणं। जेभइयाणं। णमो सुयदेवताए भगवतीए। णमो पण्णत्तिए भगवतीए। नमो भगवतो। अरहतो पस्सेसु। पस्से पस्सवणीए णमो। इति रायपसेणी सूत्रं संम्मत्तं समासं। संवत् १६१९ वर्षे ॥ माघमासे। कृष्णपक्षे। त्रयोदशी तिथौ। शुक्रवारे। पूर्वानक्षत्रे। सिद्धनामजोगे। लग्निक दिने। श्रीमज्जोधपुरे ॥ राजाधिराय महाराय श्रीमालदेवपट्टे श्री राय श्री चंद्रसेनराज्ये ॥ लिखितं। श्री कोरंटगच्छे। वा. श्री आसदेवपट्टे भोजदेव। जइतिलक भोजदेवपट्टे वा. श्री देवकलसपट्टे वा. श्री देवसुंदरशिष्य ग. देवमूर्ति। तत् शिष्य श्री देवप्रभुणा राजप्रश्नी ग्रन्थं लिलेषि।

आ उपरांत टीकावाळी जे चार प्रतोनो उपयोग कर्यो छे तेनो संकेत नीचे प्रमाणे राख्यो छे

पा. ४ मात्र टीकावाळी पाटणथी मळेली प्रत
पा. ५ मात्र टीकावाळी ,,
भा. १ टीका तथा मूळवाळी भावनगरथी मळेली प्रत.
भा. २ ,,

पा. ४–आ प्रतनां पानां ६९ छे. प्रत्येक पानानी लंबाई १०॥ इंच अने पहोळाई ४॥ इंच छे प्रत्येक पानामां १५ पंक्तिओ अने प्रत्येक पंक्तिमां ५५ थी ६० अक्षर छे आमां टीकानुं ग्रन्थाग्र ३७७५ श्लोकनुं छे. आ प्रत वि सं. १५७५ लखायेली छे पनी पुष्पिका आ प्रमाणे छेः

इति मलयगिरिविरचिता राजप्रश्नीयोपांगवृत्तिका समर्थिता ॥ छ ॥ स्वस्ति संवत् १५७५ समये वैशाप शुदि १३ शुक्रवासरे। श्रीखरतरगच्छे भट्टारक श्री जिनराजसूरि तत् सिष्य उपाध्या श्री राजसुंदर तस्यार्थे सांभवत्यागोत्रे साधु श्री गोपीचन्द लिखापितं दत्तं।

पा. ५–आ प्रतनां पानां ५९ छे. प्रत्येक पानानी लंबाई १३॥ इंच अने पहोळाई ५ इंच छे. प्रत्येक पानामां १६ पक्तिओ अने प्रत्येक पंक्तिमां लगभग ६५ अक्षरो छे. आमां ग्रन्थाग्र ३७०० श्लोकनुं छे. आ प्रत वि सं. १४८५ मां लखायेलो छे. आमां पडिमात्रा छे. पाटणनी पांच प्रतोमां आ प्रत विशेष सुंदर छे पनी पुष्पिका आ प्रमाणे छेः

इति मलयगिरि विरचिता राजप्रश्नीयोपांगवृत्तिकाः समर्थिता। समाप्तमिति। प्रत्यक्षर गणनया ग्रंथाग्रं।

प्रत्यक्षरगणनातो ग्रन्थमान विनिश्चितं। सप्तत्रिंशत् शतान्यत्र श्लोकानां सर्वसंख्यया ॥

संवत् १४८५ वर्षे भाद्रवा सुदि २ शुक्रे उपांगवृत्तौ समाप्तमिति विप्र वैजनाथेन लिखितं।

भा. १–आ प्रतनां पानां १२८ छे, आ त्रिपाठ प्रत छे. प्रत्येक पानामां वच्चे मूळ अने उपर नीचे टीका छे आ प्रतनी लंबाई १०। इन्च अने पहोळाई ४। इंच छे. त्रिपाठ होवाथी पंक्ति तथा अक्षरोनी गणना एकसरखी जळवाई नथी. आमां मूळनुं ग्रंथाग्र २०७९ अने टीकामां ३७०० श्लोकनुं छे, आ प्रत वि. सं. १६८५नी छे. आनी पुष्पिका आ प्रमाणे छेः

श्री णमो जिणाणं णमो सुयदेवयाए भगवइए नमो पण्णत्तिए भगवीए णमो भगवउ अरहउ पासस्स। पस्से सुपस्से पस्सवर्णी णमो

रायपसेणीयं सम्मत्त।

संवत् १६८५ वर्षे फाल्गुणमासे शुक्लपक्षे अष्टम्यां तिथौ संपूर्ण राजप्रश्नीउपांगमिति।

इति श्री मलयगिरिविरचिता राजप्रश्नीयोपांगवृत्ति. समर्थिता।

भा. २–आ प्रतनां १४४ पानां छे आ त्रिपाठ प्रत छे प्रत्येक पानामां वच्चे मूळ अने उपर नीचे टीका छे प्रत्येक पानानी लंबाई ९॥ इंच अने पहोळाई ४ इंच छे त्रिपाठ होवाथी पंक्ति तथा अक्षरोनी गणना एकसरखी जळवाई नथी आ प्रतमां लख्या संवत् नथी आप्यो छतां अक्षरो अने कागळो जोतां लगभग ४०० वर्षनी होवी जोईए. आमां मूळनुं ग्रंथाग्र २१०० अने टीकानुं ३६५० श्लोकनुं आप्यु छे. एनी पुष्पिका आ प्रमाणे छेः

नमो जिणाणं। जियभयाणं नमो सुयदेवताए भगवतीए नमो भगवतो अरहतो। पस्से सुपस्से पस्सवणीए नमो। इति श्री रायप्पसेणइयं सूत्रं समाप्त।

अधरीकृतचिन्तामणिकल्पलताकामधेनुमाहात्म्याः। विजयंतां गुरुपादा विमलीकृतशिष्यमतिविभवाः॥

राजप्रश्नीयमिदं गम्भीरार्थं विवृण्वता। कुशलं यदवापि मलयगिरिणा साधुजनस्तेन भवतु कृती॥

इति श्रीमलयगिरिविरचितायां श्रीराजप्रश्नीयोपांगवृत्ति' समाप्ता।

आ रीते पंदरमा सैकाथी मांडीने सत्तरमा सैका सुधीमां लखायेली सात प्रतोनो में उपयोग कर्यो छे आ प्रतोमां पाटणनी 'पा. ५' संज्ञावाळी अने 'भा. २' संज्ञावाळी ए बे प्रतो सरखामणीमां वधारे शुद्ध कही शकाय. वीजी प्रतो पण वहु ज भूलोवाळी तो न ज कही शकाय.

आ ग्रन्थनुं संशोधन करती वखते में मूळ पाठनो निर्णय विवरणने आधारे ज करेलो छे अने ज्यां विवरण नथी त्यां अर्थदृष्टिनो अने हस्तलिखित प्रतोनो आधार लीधेलो छे समितिवाळी आवृत्तिमां छापेल मूळ घणे स्थळे विवरणनी साथे मेळ खातुं नथी, त्यां विवरणनी प्रतीकोने विशेष प्रामाणिक मानी मूळ तरीके राखेली छे अने ज्यां मूळ अने विवरणनो दूर न करी शकाय एवो विसंवाद छे त्यां कांई पण फेरफार कर्यो नथी, परन्तु टिप्पणमां मूळ अने विवरणना पाठभेदनो उल्लेख कर्यो छे. वळी केटलेक स्थळे केवळ विवरण ज छे, पण मूळपाठ उपलब्ध नथी त्यां जीवाजीवाभिगमनो आधार लईने ते मूळपाठ टिप्पणमां टांकी बताव्यो छे. आचार्य मलयगिरिए विवरणमां घणी जग्याए लख्युं छे के अहीं घणो वाचनाभेद छे, अहीं घणो पाठभेद छे, ए हकीकत खास खास स्थळे टिप्पणमां स्पष्टीकरण साथे जणावी छे. वाचनाभेदने लगता टीकाकारना उल्लेखो जोतां एम जणाय छे के घणे स्थळे आ सूत्रमां बहु पाठभेद थइ गयेलो होवो जोईए. ज्यां सुधी आवा भिन्न भिन्न पाठो विशे चोक्स निर्णय न थई शके त्यांसुधी कोई पण जातनुं पृथक्करण कर्या सिवाय के पाठान्तरो आप्या सिवायनुं आगमोनुं मुद्रण के उत्कीर्णीकरण (पत्थरमां कोतरवुं ते) पुरातत्त्वनी दृष्टिए विश्वासपात्र न लेखाय. शुद्ध साहित्यनी दृष्टिए आगमोनुं मुद्रण करवुं होय तो कोई पण जातनो आग्रह राख्या सिवाय तेमनुं संशोधन थवुं जोईए. अने तेवुं संशोधन करवा माटे आगमना अनेक अभ्यासीओए मळीने अनेक प्रतिओनो उपयोग करवो जोइए. उपरान्त मूळपाठना शुद्धीकरण माटे आगमनी निर्युक्ति, भाष्य, चूर्णि अने टीकानो खास आधार लेवावो जोईए तेम करवा छतां य ज्यां मूळ अने निर्युक्ति वगेरेमां जे कांई भेद जेवुं जणाय तेनी पण नोंध लेवावी जोईए.

समितिए जे आगमो छपावेला छे ते सारी रीते शोधाया ज नथी तेमां पाठांतर, प्रस्तावना, परिचय के अर्थभेदने लगतां टिप्पणो वा टीकामां आवेला अवतरणोनुं स्पष्टीकरण वगेरे कशुं ज आपवामां आव्युं नथी. एटलुं ज नहीं पण मूळ पाठ पण विनकाळजीथी छपायेलो छे. आ संबंधी विशेष विस्तारथी लखवानुं के उदाहरण आपवानुं आ स्थळ नथी, छतां मात्र जाणनी खातर एक-बे उदाहरणो आपीए छीए:

सूत्रकृतांग सूत्रना पहेला अध्ययनना त्रीजा उद्देशानी त्रीजी गाथा तेमां आ रीते छपायेली छेः

उदगस्स पभावेणं सुक्कं सिग्घं तमिंति उ ।

आ गाथा उपरनी टीका जोतां तेनुं शुद्धरूप आ रीते होइ शकेः

उदगस्स पभावेणं सुक्कंसि घंतमिंति उ ।

रायपसेणइअ सूत्रमां समितिनी आवृत्तिमां [पृ० ८८ प्रथम बाजु] मूळमां 'जोयणं उव्वेहेणं जोयणं विक्खंभेणं' एवो पाठ छे अने तेना विवरणमां 'अर्धक्रोशम्–अर्धगव्यूतमुद्वेधेन अर्धक्रोशं विष्कम्भतः' आवो मूळना भावथी जुदा भाववाळो पाठ छे. आ पाठमां मूळमां 'योजन'नुं माप बताव्युं छे त्यारे विवरणकार 'अर्धकोश'नुं माप बतावे छे आ कांई साधारण विसंवाद न गणाय!

रायपसेणइअ सूत्रमां समितिनी आवृत्तिमां [पृ० ८८] मूळमां 'दस जोयणाइं उव्वेहेणं' पाठ छे अने तेना विवरणमां 'द्वासप्तति-योजनानि' पाठ छे. 'दस योजन'नुं विवरण करतां आगमनो अभ्यासी विवरणकार 'बहोंतेर योजन' केम लखी शके?

आ रीते आगमना छपायेला प्रत्येक पुस्तकमां मूळ अने विवरणमां घणाय विसंवादो रही गया छे, जेना निराकरण माटे संपादके अक्षर पण पाड्यो नथी तेम तेनी नोंध पण लीधी नथी.

ज्यारे के अत्यार आगमच छपायेला आगमोमां आ प्रमाणे मूळ तेम ज विवरणनो विसंवाद छे, मूळना शुद्ध पाठो अनिश्चित छे अने विवरणकारे अनेक पाठभेदो नोंधेला छे त्यारे अमुक प्रकारना पाठनो निर्णय कर्या विना ते आगमोने शिलारूढ करवा तेमां पारमार्थिक दृष्टिए आगमनी पूजा छे खरी?

संपादनशैली

आ मुद्रणमां विवरणमां आवेली मूळनी प्रतीको मूळमां ज आवी जती होवाथी ते विवरणमां मूकवामां आवी नथी. परन्तु ज्यां आवश्यक जेवुं जणायुं त्यां ते प्रतीको राखवामां आवी छे. वीजुं मूळपाठना जे जे शब्दो उपर विवरण छे त्यां मूळना शब्दो उपर

तेम ज विवरणना शब्दो उपर अंको मूकवामां आव्या छे वांचनार मूळ शब्दनुं विवरण क्यां छे ते सहेलाईथी मेळवी शके ए उद्देशथी आ प्रमाणे करवामां आव्युं छे विवरणमां ज्यां ज्यां व्याकरण के कोशना अवतरणो आपेलां छे, ते अवतरणो विवरणमांथी खसेडीने नीचे टिप्पणमां मूकेला छे, अने ते अवतरणोनां स्थळो मळी शक्यां एटलां मेळवीने नोंधेलां छे. विवरण वांचनार सळंग विवरण वांची शके ते माटे आ प्रमाणे अवतरणो टिप्पणमां मूक्यां छे अने बनी शके एटलुं विवरणने स्पष्ट करवामां आव्युं छे कोई जग्याए विवरणमां अंकोनो क्रम एकसरखो नथी रह्यो तेनुं कारण विवरणनी अन्वयवाळी शैली छे. मूळपाठना वर्णकोनी पूर्ति माटे अने मूळना बीजा केटलाक पाठो समजाववा माटे उववाइअसूत्र, जीवाजीवाभिगमसूत्र अने नंदीसूत्रनो आ सूत्रना संपादनमां उपयोग करवामां आव्यो छे प्रस्तुत ग्रन्थना ५९मा पाने वीसमी कंडिकामां 'देवाइ' एवुं पद छे. तेनु जे विवरण विवरणकारे करेलुं छे ते विचारणीय छे. मारा विचार प्रमाणे 'देवाइ' एक पद नथी पण विवरणकारे तेने 'देवादि' कहीने एक पद कह्युं छे मारा अभिप्रायने श्रीअभयदेवसूरिनो टेको पण छे [जुओ पृ० ५९ ए शब्द उपरनुं टिप्पण] सूत्रमांना चालु विषयने समजवा माटे ते ते स्थळे हांसियामां मथाळां मूकेलां छे. टिप्पणमां केटलाक मूळ शब्दोने प्रचलित भाषाना शब्दो साथे सरखावेला छे. पाछळ आ सूत्रनो सारभूत अनुवाद मूळसूत्रनी कंडिकावार मूक्यो छे. अनुवादमां पण उपयुक्त टिप्पणो आपेलां छे. ग्रन्थनी पाछळ विशेष नामोनो अने खास खास उपयुक्त एवा ऐतिहासिक शब्दोनो पृष्ठवार अकारादि अनुक्रम आपेलो छे

आभार

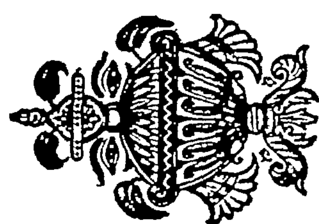
पाटणनी प्रतो मोकलवा माटे पूज्यपाद प्रवर्तक श्रीकांतिविजयजीना शिष्य प्रशिष्य मुनिराज श्रीचतुरविजयजी अने पुण्यविजयजीनो हु अनुगृहीत छुं. अने भावनगरनी बन्ने प्रतो माटे धर्मबंधु रा रा कुंवरजीभाई तेमज शेठ डोसाभाई अभेचंदनी पेढीनो हुं आभार

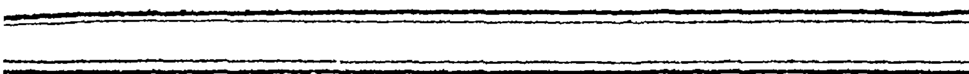
मानुं छुं आवां प्रकाशनो वहार पाडवां ए एक ज माणस माटे बहु मुश्केल वात होवा छतां आ सूत्रने प्रसिद्ध करवा माटे श्रीगुर्जर-ग्रन्थरत्न कार्यालयवाळा भाई शंभुलाल जगशीभाई शाहने हुं अभिनन्दन आपुं छुं आ प्रकाशनमां केटलीक खामीओ रही गई छे अने ते मारा ध्यान वहार नथी, परन्तु नवळी आंखवाळो एकलो हुं, खूब इच्छा थतां, ए खामीओने दूर करी शक्यो नथी. कोई आगमप्रेमी आ प्रकाशन मारफत आगमना विशेष शुद्धीकरण माटे पूर्वोक्त रीते प्रयत्न करशे तो हुं मारा आ प्रयत्नने सफळ थयो मानीश.

१२/ब, भारतीनिवास सोसाईटी
एलिसब्रिज
अमदावाद.
शु० १९/११/९४ ।

बेचरदास.

विषयानुक्रम ।





१ पाठभेद अने २ वाचनाभेद

१ ज्यां ज्यां टीकाकारे पाठभेद बताव्या छे त्यां त्यां बधे टिप्पणमां ए वातने नोंधी बतावी छे.

२ टीकाकारे बे त्रण ठेकाणे विशेष वाचनाभेदनी सूचना करी छे ते सूचना, विचारक वाचकना ध्यान उपर आवे माटे तेने मोटा जाडा अक्षरमां छापेली छे. आवा विशेष वाचनाभेद पृ० २१९ पं० १२। पृ० २४१ पं० ११। पृ० २५९ पं० ७। उपर छे. मारी समज प्रमाणे आ वाचनाभेद विशेष अर्थसूचक छे तेथी आगमार्थना जिज्ञासुओ अने अनाग्रही वाचको ए बाबत जरूर विचारशे.

१ सुधारो अने २ वधारो

१ —सुधारो

पृ०	पं०	अशुद्ध —	शुद्ध —
८	१	आसित्तोसित्त	आसत्तोसत्त
८	८	आसिक्तावसिक्त	आसक्तात्सक्त
४१	३	सिरसा कंठे माल-	सिरसाकंठेमाल
४७	५	तिर्यक	तिर्यक्
८८	१३	का विकुरो-	-का चिकुरा
९३	११	'पारनियमेन' इत्यादि	बारमी पक्तिना 'वाग्व्या'
		टिप्पणगत वाक्य,	शब्दनी साथे जोडीने वांचवुं अर्थात् 'वाग्व्यापारनियमेन परिशुद्धं प्रतिभाति'एम वांचवुं
१०५	१२	पानिय	पानीय
२१३	८	११३	२१३ अने आ पछीना पण खोटा अंको सुधारीने वांचवा.
२१३	१३	[पृ० पं०]	[पृ० १९ पं० ८]

३३४		पएसि (हांसियामां)	पएसी
३३५	१३	भिथ्या	मिथ्या
३३५		पएसि (हांसियामां)	पएसी
३४१	६	गंधव्वणकट्ट	गंधव्वणट्ट

गूजराती-सार पृ० ४६ पं० १३ लीला अरीठा जेवा-जुओ कागडाना वच्चा जेवा टीका पृ० ८४ – टिप्पण

आ सिवाय बीजी पण जे काई कानो, मात्रा वा अक्षरनी अशुद्धिओ रही गई होय ते, गुणज्ञ वाचक सुधारीने वांचवा कृपा करशे

२ —वधारो

पृ० पं०

२४ १४ 'जोणिसुद्धो' आ गाथा जीतकल्पभाष्यमां १९९७ मी छे पृ० १७१.

३४ ६ मूळ 'आगासफालिहमएणं'ने बदले टीकानी बधी प्रतोमां 'आगासफालियामएणं' एवो पाठ छे.

३४ १४ 'तटि' शब्दनुं विवरण—" 'तटि'-विस्तारित-" औपपातिक वृत्ति पृ० २१।

९८ ९ 'चक्कला' शब्दनुं विवरण—"चक्कलानि पादानामध प्रदेशाः" जीवाजीवाभिगमविवरण प्र०पृ० २१० पं० ४.

१९२ १२ 'पडिहत्थं' इत्यादि वचन 'अभिमानचिह्न' नामना देशी-कोशकारनुं छे एम नंदीसूत्रनी टीकामां पृ० ४६ पं० ११ मां लखेलुं छे.

केटलेक स्थळे मूळ पाठ उपर अंक आप्यो छे छतां टीकामां ते अंकवाळो शब्द नथी त्यां टीकाकारे ए शब्दनी व्याख्या नथी करी ए बताववा मूळपाठ उपर अंक राख्यो छे.

टीकाकारे साक्षी तरीके वापरेला ग्रंथो

औपपातिक सूत्र

जीवाजीवाभिगममूलटीका

१ संपादके उपयोगमां लीधेला ग्रंथोनी यादी अने २ संकेतोनुं स्पष्टीकरण

आखुं नाम	संकेत
१ औपपातिक वृत्ति	औ० वृ०
अमरकोश	
हैमशब्दानुशासन	हैमश० अथवा हैम०
काशिकावृत्ति	
व्याख्याप्रज्ञप्तिमूल अने वृत्ति	
भरतप्रणीत नाट्यशास्त्र	
हैमअभिधानचिन्तामणि	हैमअभिधानचिन्ता०
देशीनाममाला	देशीना० देशीनाम०
जीवाजीवाभिगमसूत्र	जीवाजीवा०
जीवाजीवाभिगमसूत्रविवरण	जीवा० वि०
पंचकल्पभाष्य	
श्लोकवार्तिक	श्लो० वा०
पाइअलच्छीनाममाला	
जंबूद्वीपप्रज्ञप्तिवृत्ति	
ज्ञाताधर्मकथावृत्ति	
हैमअनेकार्थकोश	

२–श्लो०	श्लोक
सू०	सूत्र
गा०	गाथा
लि०	लिखित
श्रीपुण्य०	श्रीपुण्यविजयजी महाराज पासेनुं
व०	वर्ग
राय०वि० राय०विव०	राजप्रश्नीयविवरण–श्री मलयगिरिजीनुं
वि० वा०	विवरण वाह्य पाठ



॥ नमो तस्स समणस्स भगवओ वद्धमाणस्स ॥

आचार्यश्रीमलयगिरिविहितविवरणयुतम्—

रायपसेणइयं।

प्रणमत वीरजिनेश्वरचरणयुगं परमपाटलच्छायम्। अधरीकृतनतवासवमुकुटस्थितरत्नरुचिचक्रम् ॥
राजप्रश्नीयमहं विवृणोमि यथाऽऽगमं गुरुनियोगात्। तत्र च शक्तिमशक्तिं गुरवो जानन्ति का चिन्ता ? ॥

अथ कस्माद् इदमुपाङ्गं राजप्रश्नीयाभिधानमिति? उच्यते, इह प्रदेशिनामा राजा भगवतः केशिकुमारश्रमणस्य समीपे यान् जीवविषयान् प्रश्नानकार्षीत्, यानि च तस्मै केशिकुमारश्रमणो गणभृत् व्याकरणानि व्याकृतवान्, यच्च व्याकरणसम्यक्परिणतिभावतो बोधिमासाद्य मरणान्ते शुभानुशययोगतः प्रथमे सौधर्मनाम्नि नाकलोके विमानमाधिपत्येनाध्यतिष्ठत्, यथा च विमानाधिपत्यप्राप्त्यनन्तरं सम्यगवधिज्ञानाभोगतः श्रीमद्वर्धमानस्वामिनं भगवन्तमालोक्य भक्त्यतिशयपरीतचेताः सर्वस्वसामग्रीसमेत

रायपसेणइयं। ॥२॥

विवरणकारदर्शितं 'रायपसेणइय' सूत्रस्य उपाङ्गत्वम्

इहावतीर्य भगवतः पुरतो द्वात्रिंशद्विधि नाट्यमनरीनृत्यत्, नर्तित्वा च यथाऽऽयुष्कं दिवि सुखमनुभूय ततश्च्युत्वा यत्र समागत्य मुक्तिपदमवाप्स्यति, तदेतत् सर्वमस्मिन् उपाङ्गेऽभिधेयम्, परं सकलवक्तव्यतामूलम्-'राजप्रश्नीय' इति-राजप्रश्नेषु भवं राजप्रश्नीयम्।

अथ कस्याङ्गस्य इदमुपाङ्गम्? उच्यते, सूत्रकृताङ्गस्य, कथं तदुपाङ्गतेति चेत्, उच्यते, सूत्रकृते ह्यङ्गे अशीत्यधिकं शतं क्रियावादिनाम्, चतुरशीतिः अक्रियावादिनाम्, सप्तषष्टिः अज्ञानिकानाम्, द्वात्रिंशत् वैनयिकानाम्—सर्वसंख्यया त्रीणि शतानि त्रिषष्ट्यधिकानि पाखण्डिकशतानि प्रतिक्षिप्य स्वसमयः स्थाप्यते। उक्तं च नन्द्यध्ययने-"सूयगडे णं असीयस्स किरियावाइसयस्स, चतुरासीईए अकिरियावाईणं, सत्तट्ठीए अण्णाणियवाईणं, बत्तीसाए वेणइयवाईणं—तिण्हं तेसट्ठाणं पासंडियसयाणं वूहं किच्चा ससमए ठाविज्जइ"त्ति [नन्दीसूत्र-अङ्गप्रविष्टाधिकार पृ० २१२] प्रदेशी च राजा पूर्वम्-अक्रियावादिमतभावितमना आसीत्, अक्रियावादिमतमेव चावलम्ब्य जीवविषयान् प्रश्नानकरोत्, केशिकुमारश्रमणश्च गणधारी सूत्रकृताङ्गसूचितमक्रियावादिमतप्रक्षेपमुपजीव्य व्याकरणानि व्याकार्षीत्, ततो यान्येव सूत्रकृताङ्गसूचितानि केशिकुमारश्रमणेन व्याकरणानि व्याकृतानि तान्येवात्र सविस्तरमुक्तानीति सूत्रकृताङ्गगतविशेषप्रकटनाद् इदमुपाङ्गं सूत्रकृताङ्गस्येति।

एतद्वक्तव्यता च भगवता वर्द्धमानस्वामिना गौतमाय साक्षादभिहिता, तत्र यस्यां नगर्यां येन प्रक्रमेण अभ्यधीयत तदेतत् सर्वमभिधित्सुरिदमाह—

१ "सूत्रकृते अशीत्यधिकस्य क्रियावादिशतस्य, चतुरशीतेः अक्रियावादिनाम्, सप्तषष्टेः अज्ञानिकानाम्, द्वात्रिंशतो वैनयिकानाम्—सर्वसंख्यया त्रयाणां त्रिषष्ट्यधिकानां पाखण्डिशताना व्यूहम्-प्रतिक्षेपं कृत्वा स्वसमयः स्थाप्यते"-इति नन्दीसूत्रस्य श्रीमलयगिरिकृता वृत्तिः।

[१] [1]ते णं काले णं ते णं समए णं आमलकप्पा नामं नयरी होत्था–[2]रिद्ध–[3]त्थिमिय–[4]समिद्धा जाव [[5]पमुइयजण–जाणवया [6]आइण्णजणमणूसा

'आमलकप्पा' वर्णनम् ॥३॥

[१] १ 'ते णं काले णं ते णं'इत्यादि। 'ते' इति प्राकृतशैलीवशात् 'तस्मिन्' इति द्रष्टव्यम्–अस्यायमर्थः–यस्मिन् काले भगवान् वर्द्धमानस्वामी स्वयं विहरति स्म तस्मिन्निति। 'णं'इति वाक्यालङ्कारे, दृष्टश्चान्यत्रापि 'णं'शब्दो वाक्यालङ्कारार्थः–यथा–"इमा णं पुढवी" [ ]इत्यादाविति। 'काले' अधिकृतावसर्पिणीचतुर्थविभागरूपे,अत्रापि 'णं'शब्दो वाक्यालंकृतौ। 'ते णं समए णं' समयोऽवसरवाची, तथा च लोके वक्तारः–'नाद्याप्येतस्य वक्तव्यस्य समयो वर्त्तते'–किमुक्तं भवति–नाद्याप्येतस्य वक्तव्यस्यावसरो वर्तते इति।

'तस्मिन्'इति यस्मिन् समये भगवान् सूर्याभदेववक्तव्यतामचकथत् तस्मिन् समये आमलकल्पा नाम नगरी अभवत्, ननु इदानीमपि सा नगरी वर्त्तते ततः कथमुक्तम् 'अभवत् इति ? उच्यते, वक्ष्यमाणवर्णकग्रन्थोक्तविभूतिसमन्विता तदैवाभवत्, न तु विवक्षितोपाङ्गविधानकाले, तदपि कथमवसेयम् ? इति चेत्, उच्यते, अयं कालः अवसर्प्पिणी, अवसर्प्पिण्यां च प्रतिक्षणं शुभा भावा हानिमुपगच्छन्ति, एतच्च सुप्रतीतं जिनवचनवेदिनाम् अतः 'अभवत्' इत्युच्यमानं न विरोधभाक्।

सम्प्रत्यस्या नगर्या वर्णकमाह—२ऋद्धा–भवनैः पौरजनैश्चातीव वृद्धिमुपागता, "ऋधि वृद्धौ" [दिवादि–४३–धातुपारायण]इति वचनात्। ३स्तिमिता–स्वचक्रपरचक्रतस्करडमरादिसमुत्थभयकल्लोलमालाविवर्जिता। ४समृद्धा–धनधान्यादिविभूतियुक्ता, ततः पदत्रयस्य विशेषणसमासः। यावच्छब्देन—'५प्रमुदिताः–प्रमोदवन्तः प्रमोदहेतुवस्तूनां तत्र सद्भावात्, जना–नगरीवास्तव्यलोकाः जानपदाः-जनपदभवाः तत्र प्रयोजनवशाद् आयाताः सन्तो यत्र सा प्रमुदितजन-जानपदा। ६मनुष्यजनैराकीर्णा, प्राकृतत्वात् पदव्यत्ययः।

[8]हलसयसहस्ससंकिट्ठविगिट्ठलट्ठपण्णत्तसेउसीमा [9]कुक्कुडसंडेयगामपउरा [10]उच्छु-जव-सालिकलिआ [11]गो-महिस-गवे-लगप्पभूया [11]आयारवंतचेइय-जुवइविसिट्ठसन्निविट्ठबहुला [12]उक्कोडिय-गाय-गंठिभेद-तक्कर-खंड-रक्खरहिया [13]खेमा [14]निरुवद्दवा [15]सुभिक्खा [16]वीसत्थसुहावासा [17]अणेगकोडिकोडुंबियाइण्णणिव्वुत्तसुहा [18]नड-नट्ट-जल्ल-मल्ल-मुट्ठिय-वेलंबग-कहग-पवग-लासग-आइक्खग-लंख-मंख—

७हलानां शतैः सहस्रैश्च संकृष्टा-विलिखिता विकृष्टा-नगर्या दूरवर्त्तिनी बहिर्वर्तिनीति भावः, लष्टा-मनोज्ञा प्राज्ञैः-छेकैराप्ता प्राज्ञाप्ताः-छेकपुरुषपरिकर्मिता इति भावः-सेतुसीमा कुल्याजलसेक्यक्षेत्रसीमा यस्याः सा हलशतसहस्रसंकृष्टविकृष्टलष्टप्राज्ञाप्तसेतुसीमा। ८कुक्कुटसम्पात्या ग्रामाः सर्वासु दिक्षु विदिक्षु च प्रचुरा यस्याः सा कुक्कुटसण्डेयग्रामप्रचुरा। ९इक्षु-यव-शालिकलिता। १०गावो-बलीवर्दाः महिषाः-प्रतीताः गावः-स्त्रीगव्यः एडकाः-उरभ्राः ते प्रभूता यस्यां सा तथा। ११आकारवन्ति-सुन्दराकाराणि चैत्यानि, युवतीनां च-पण्यतरुणीनामिति भावः—विशिष्टानि सन्निविष्टानि-सन्निवेशपाटका इति भावः-बहुलानि-बहूनि यस्यां सा तथा। १२उत्कोटा-लञ्चा तया चरन्ति उत्कोटिकास्तैः गात्रभेदैः-शरीरविनाशकारिभिः ग्रन्थिभेदैः-ग्रन्थिच्छेदैः तस्करैः खण्डरक्षैः-दण्डपाशिकैः रहिता, अनेन तत्रोपद्रवकारिणामभावमाह। १३'क्षेमा' अशिवाभावात्। १४निरुपद्रवा राजादिकृतोपद्रवाभावात्। १५सुभिक्षा भिक्षुकाणां भिक्षायाः सुलभत्वात्। १६विश्वस्तसुखावासा-विश्वस्तो-निर्भयः सुखमावासो लोकानां यस्यां सा तथा। १७ अनेककोटीभिः-अनेककोटिसंख्याकैः कौटुम्बिकैराकीर्णा निर्वृत्ता सन्तुष्टजनयोगात् शुभा शुभवस्तूपेतत्वात्, ततः पदत्रयस्य कर्मधारयः। १८नटा-नाटयितारः, नर्त्तका ये नृत्यन्ति, जल्लाः-राज्ञः स्तोत्रपाठकाः, मल्लाः प्रतीताः मौष्टिका-मल्ला एव ये मुष्टिभिः प्रहरन्ति, विडम्बकाः-विदूषकाः, कथकाः-प्रतीताः,

तूणइल्ल-तुंबवीणिय-अणेगतालाचराणुचरिया [१९]आराम-उज्जाण-अगड-तलाग-दीहिय-वप्पिणगुणोववेया [२०]उं-व्विद्धविउलगंभीरखात-फलिहा [२१]चक्क-गय-मुसंढि-ओरोह-सयग्घि-जमलकवाडघणदुप्पवेसा [२२]धणुकुडिलवंक-पागारपरिक्खित्ता [२३]कविसीसयवट्टरइयसंठियविरायमाणा [२४]अट्टालय-[illegible]-गोपुर-तोरण-उन्नय-सुवि-

प्लवका-ये उत्प्लवन्ते नद्यादिकं वा तरन्ति, लासकाः-ये रासकान् गायन्ति, जयशब्दप्रयोक्तारो वा भाण्डा इत्यर्थः, आख्यायिकाः-ये शुभाशुभमाख्यान्ति, लङ्खाः-महावंशाग्रखेलकाः, मङ्खाः-चित्रफलकहस्ता भिक्षुकाः, 'तूणइल्ल'-तूणाभिधानवाद्यविशेषवन्तः, तुम्बवीणिकाः-तुम्बवीणावादकाः अनेके च ये तालाचराः-तालादानेन प्रेक्षाकारिणः, एतैः सर्वैरनुचरिता-आसेविता या सा तथा। १९आरामाः यत्र माधवीलतागृहादिषु दम्पत्यादीनि आगत्य रमन्ते,उद्यानानि-पुष्पादिमद्वृक्षसंकुलानि उत्सवादौ बहुजनभोग्यानि,'अगड'त्ति-अवटाः कूपाः तडाकानि-प्रतीतानि, दीर्घिकाः-सारिण्यः, 'वप्पिण'त्ति-केदाराः, एते गुणोपपेता-रम्यतादिगुणोपपेता यस्यां सा तथा। २०उव्विद्धं-उण्डम् विउलं- विस्तीर्णम् गम्भीरम्-अलब्धमध्यम् खातम्-उपरिविस्तीर्णम् अधःसङ्कुचितम् परिखा च-अध उपरि च समखातरूपा यस्यां सा तथा २१चक्राणि-प्रहरणविशेषरूपाणि, गदाः-प्रहरणविशेषाः, मुषण्ढयोऽप्येवंरूपाः, अवरोधः-प्रतोलीद्वारेष्वन्तः-प्राकारः सम्भाव्यते, शतघ्न्यो-महायष्टयो महाशिला वा याः पातिताः शतानि पुरुषाणां घ्नन्ति, यमलानि-समस्थितद्रव्यरूपाणि यानि कपाटानि घनानि च-निश्छिद्राणि तैर्दुष्प्रवेशा या सा तथा। २२'धणुकुडिल' कुटिलं धनुस्ततोऽपि वक्रेण प्राकारेण परिक्षिप्ता या सा तथा। २३कपिशीर्षकैर्वृत्तरचितसंस्थितैः-वर्तुलकृतसंस्थानैर्विराजमाना-शोभमाना या सा तथा। २४ अट्टालकाः-प्राकारोपरिभृत्याश्रयविशेषाः चरिका अष्टहस्तप्रमाणो मार्गः द्वाराणि-भवन-देवकुलादीनाम् गोपुराणि-प्राकारद्वाराणि तोरणानि च उन्नतानि-उच्चानि यस्यां सा तथा,

भत्तरायमग्गा [२५]छेयायरियरइयदढफलिह-इंदकीला [२६]विवणि-वणिच्छित्त-सिप्पिआइण्णनिव्वुयसुहा [२७]सिंघाडग-तिय-चउक्क-चच्चर-पणियापणविविहवत्थुपरिमंडिया [२८]सुरम्मा [२९]नरवइ-पविइण्णमहिवइपहा [३०]अणेगवरतुरग-मत्तकुंजर-रहपहकर-सीय-संदमाणीआइण्णजाणजोग्गा [३१]विमउलनवनलिणसोभियजला [३२]पंडुरवरभवणपंति-

सुविभक्ताः-विविक्ताः राजमार्गा यस्यां सा तथा। ततः पदद्वयस्य कर्मधारयः। २५छेकेन-निपुणेन आचार्येण-शिल्पोपाध्यायेन रचितो दृढः-बलवान् परिघः-अर्गला इन्द्रकीलश्च-संपाटितकपाटद्वयाधारभूतः प्रवेशमध्यभागो यस्यां सा तथा। २६विपणीनां-वणिक्पथानां हट्टमार्गाणाम् वणिजां च क्षेत्रं-स्थानं सा विपणिवणिक्क्षेत्रं तथा शिल्पिभिः कुम्भकारादिभिर्निर्वृतैः-सुखिभिः शुभैः-स्वस्वकर्मकुशलैराकीर्णा। प्राकृतत्वाच्च सूत्रेऽन्यथा पदोपन्यासः ततः पूर्वपदेन कर्मधारयः। २७शृङ्गाटकत्रिकचतुष्कचत्वरैः पणितानि-क्रयाणकानि तत्प्रधानेषु आपणेषु यानि विविधानि वस्तूनि-द्रव्याणि तैश्च परिमण्डिता। शृङ्गाटकम्-त्रिकोणं स्थानम्, त्रिकम्-यत्र रथ्यात्रयं मिलति, चतुष्कम्-रथ्याचतुष्कमीलनात्मकम्, चत्वरम्-बहुरथ्यापातस्थानम्। २८सुरम्या-अतिरम्या। २९नरपतिना-राज्ञा प्रविकीर्णो-गमनागमनाभ्यां व्याप्तो महीपतिपथो-राजमार्गो यस्यां सा तथा। ३०अनेकैर्वरतुरगाणाम्, मत्तकुञ्जराणाम्, रथानां च पहकरैः-सङ्घातैः तथा शिबिकाभिः स्पन्दमानीभिः यानैः युग्यैश्च आकीर्णा-व्याप्ता या सा तथा। आकीर्णशब्दस्य मध्यनिपातः प्राकृतत्वात्। तत्र शिबिकाः कूटाकारेणाच्छादिता जम्पानविशेषाः, स्पन्दमानिकाः-पुरुषप्रमाणा जम्पानविशेषाः, यानानि-शकटादीनि, युग्यानि-गोल्लविषयप्रसिद्धानि द्विहस्तप्रमाणानि वेदिकोपशोभितानि जम्पानान्येव। ३१विमुकुलैः-विकसितैर्नवैर्नलिनैः-कमलैः शोभितानि जलानि यस्यां सा तथा।
३२ पाण्डुरवरभवनपङ्क्तिमहिता ।

महिया [33]उत्ताणयनयणपिच्छणिज्जा] [34]पासादीया [35]दरिसणिज्जा [36]अभिरूवा [37]पडिरूवा।

[२] [1]तीसे णं [2]आमलकप्पाए नयरीए [3]बहिया [4]उत्तरपुरत्थिमे दिसीभाए [5]अंबसालवणे नामं [6]चेइए [7]होत्था-[❀चिराईए पुव्वपुरिसपण्णत्ते पोराणे सद्दिए कित्तिए नाए सच्छत्ते सज्झए सघंटे सपडागे पडागाइपडागमंडिए सलोमहत्थे कयवेयड्डिए लाइयउल्लोइयमहिए गोसीससरसरत्तचंदणददरदिण्णपंचंगुलितले उवचियचंदणकलसे

'अंबसालवण' चैत्यस्य वर्णनम्

॥७॥

३३उत्तानकनयनप्रेक्षणीया इति सुगमम्। ३४प्रासादेषु भवा प्रासादीया-प्रासादबहुला इत्यर्थः। अत एव ३५दर्शनीया द्रष्टुं योग्या, प्रासादानामतिरमणीयत्वात्। तथा ३६अभि द्रष्टॄन् प्रति प्रत्येकमभिमुखमतीव चेतोहारित्वात् रूपम्-आकारो यस्याः सा अभिरूपा। एतदेव व्याचष्टे-३७प्रतिरूपा प्रतिविशिष्टम्-असाधारणम् रूपम्-आकारो यस्याः सा प्रतिरूपा॥

[२] १ तस्यां 'णं' इति पूर्ववत्। २ आमलकल्पायां नगर्यां ३ बहिः ४ उत्तरपौरस्त्ये-उत्तरपूर्वारूपे ईशानकोणे-इत्यर्थः-दिग्-भागे। ५ 'अम्बसालवणे' इति आम्रैः शालैश्च अतिप्रचुरतयोपलक्षितं यद् वनं तद् आम्रशालवनम् तद्योगात् चैत्यमपि आम्रशालवनम् ६ चितेः-लेप्यादिचयनस्य भावः कर्म वा चैत्यम् तच्च इह संज्ञाशब्दत्वात् देवताप्रतिबिम्बे प्रसिद्धम् ततस्तदाश्रयभूतं यद् देवताया गृहं तदप्युपचारात् चैत्यम् तच्चेह व्यन्तरायतनं द्रष्टव्यम् न तु भगवतामर्हतामायतनम्। ७ होत्थ'त्ति अभवत्। तच्च किंविशिष्टमित्याह-

❀चिरातीतम् पूर्वपुरुषप्रज्ञप्तम् पुराणम् शब्दितम् कीर्तितम् ज्ञातम् सच्छत्रम् सध्वजम् सघण्टम् सपताकम् पताकातिपताकामण्डितम् सलोमहस्तम् कृतवितर्दिकम् +लाइय-उल्लोइय-महिय गोशीर्षसरसरक्तचन्दनदर्दरदत्तपञ्चाङ्गुलितलम् उपचितचन्दनकलशम् चन्दनघटसुकृततोरणप्रतिद्वारदेशभागम्

+ "लाइयं भूमेश्छगणादिना उपलेपनम् उल्लोइयं कुड्यमालाना सेटिकादिभिः समृष्टीकरणम् ततस्ताभ्या महितम्-पूजितम् तत् लाइय-

चंदणघडसुकयतोरणपडिदुवारदेसभाए आसित्तोसित्तविउलवट्टवग्घारियमल्लदामकलावे पंचवण्णसरससुरभिमुक्कपुप्फपुंजोवयारकलिए कालागुरु-पवरकुंदुरुक्क-तुरुक्कधूवमघमघंतगंधुद्धूयाभिरामे सुगंधवरगंधगंधिए गंधवट्टिभूए णड-णट्टग-जल्ल-मल्ल-मुट्ठिय-वेलंबग-पवग-कहग-लासग-आइक्खग-लंख-मंख-तूणइल्ल-तुंबवीणिय-भुयग-मागहपरिगए बहुजण-जाणवयस्स विस्सुयकित्तिए बहुजणस्स आहुस्स आहुणिज्जे पाहुणिज्जे अच्चणिज्जे वंदणिज्जे नमंसणिज्जे पूयणिज्जे सक्कारणिज्जे सम्माणणिज्जे कल्लाणं मंगलं देवयं चेइयं विणएणं पज्जुवासणिज्जे दिव्वे सच्चे सच्चोवाए जागसहस्सभागपडिच्छए बहुजणो अच्चेइ आगम्म अंबसालवणचेइयं अंबसालवणचेइयं]

८ 'चिरातीते पुराणे' यावच्छब्दकरणात् 'सद्दिए कित्तिए नाए सच्छत्ते सज्झए' इत्यादि-औपपातिकग्रन्थप्रसिद्धवर्णकपरिग्रहः* ।

आसिक्तावसिक्तविपुलवृत्तलम्बमानमाल्यदामकलापम् पञ्चवर्ण-सरससुरभिमुक्तपुष्पपुञ्जोपचारकलितम् कालागुरु-प्रवरकुन्दुरुक्क-तुरुष्कधूपमघमघायमान-गन्धोद्धूताभिरामम् सुगन्धवरगन्धगन्धितम् गन्धवर्तिभूतम् नट-नर्तक-जल्ल-मल्ल-मौष्टिक-विडम्बक-प्लवक-कथक-रासक-आख्यायक-लङ्ख-मङ्ख-तूणिक-तुम्बवीणिक-भुजग (भुजगा भोगिनः) मागधपरिगतम् बहुजन-जानपदस्य विश्रुतकीर्तितम् बहुजनस्य आहोतुः आहवनीयम् प्राहवनीयम् अर्चनीयम् वन्दनीयम् नमस्यनीयम् पूजनीयम् सत्कारणीयम् सम्माननीयम् कल्याणम् मङ्गलम् देवतम् चैत्यम् (इव) विनयेन पर्युपासनीयम् दिव्यम् सत्यम् सत्योपायम् यागसहस्रभागप्रतीच्छकम् बहुजनः अर्चति आगम्य आम्रशालवनचैत्यम् आम्रशालवनचैत्यम्।

उल्लोइय-महियं"—औपपातिकवृत्तिः * विवरणकारनिर्दिष्टः एष चैत्यवर्णकपरिग्रहः औपपातिकग्रन्थमाश्रित्य इह मूले एव संकलितः।

*[से[1] णं अंबसालवणे चेइए एगेणं महया वणसंडेणं सव्वओ समंता संपरिक्खित्ते। से णं वणसंडे किण्हे किण्होभासे नीले नीलोभासे हरिए हरिओभासे सीए सीओभासे णिद्धे णिद्धोभासे तिव्वे तिव्वोभासे, किण्हे किण्हच्छाए नीले नीलच्छाए हरिए हरियच्छाए सीए सीअच्छाए णिद्धे णिद्धच्छाए तिव्वे तिव्वच्छाए घणकडिअकडिच्छाए रम्मे महामेहणिकुरंबभूए पासाइए[2] दरिसणिज्जे[3] अभिरूवे पडिरूवे]।

एवंरूपं च चैत्यवर्णकमुक्त्वा वनखण्डवक्तव्यता वक्तव्या। सा चैवं–१ 'से णं अंबसालवणे चेइए एगेणं महया वणसंडेणं सव्वओ समंता संपरिक्खित्ते, से णं वणसंडे किण्होभासे'इत्यादि यावत् 'पासाइए दरिसणिज्जे अभिरूवे पडिरूवे'। तत्र २ प्रसादीयम्–कृष्णावभासत्वादिना गुणेन मनःप्रसादहेतुत्वात् ३ दर्शनीयं चक्षुरानन्दहेतुत्वात् ४ अभिरूपप्रतिरूपशब्दार्थः प्राग्वत्, तत उक्तम्–'जाव पडिरूवे'।

* तद् आम्रशालवनं चैत्यम् एकेन महता वनसण्डेन सर्वतः समन्तात् सपरिक्षिप्तम्। स वनसण्डः कृष्णः कृष्णावभासः नीलः नीलावभासः हरित. हरितावभासः शीतः शीतावभासः स्निग्धः स्निग्धावभासः तीव्रः तीव्रावभासः कृष्णः कृष्णच्छायः नीलः नीलच्छाय. हरित' हरितच्छायः शीतः शीतच्छायः स्निग्धः स्निग्धच्छायः तीव्र. तीव्रच्छायः ×घणकडिअकडिच्छाए रम्यः महामेघनिकुरम्बभूतः प्रतिरूपः।

× "अन्योन्य शाखानुप्रवेशाद् बहलनिरन्तरच्छायः"–औ० वृ०।

'असोगवरपायव' वर्णनम्

[३] [[1]तस्स णं [2]वणसंडस्स [3]बहुमज्झदेसभाए [4]एत्थ णं [5]महं [6]एगे] [7]असोगवरपायवे [[8]पन्नत्ते [9]कुरुग्गयकंदमूल-वट्ट-लट्ठसंधि-असिलिट्ठे [10]घण-मसिण-सिणिद्ध-अणुपुव्विसुजाय-निरुवहत-उव्विद्ध-पवरखंधे [11]अणेगणरप-

---

[३] अशोकवरपादपस्य पृथिवीशिलापट्टकस्य च वक्तव्यता औपपातिकग्रन्थानुसारेण ज्ञेया+। अस्या व्याख्या-१तस्य 'णं'इति पूर्ववत् २ वनखण्डस्य ३बहुमध्यदेशभागे ४अत्र एतस्मिन् प्रदेशे ५ महान् ६ एकः ७ अशोकवरपादपः ८ प्रज्ञप्तस्तीर्थकर-गणधरैः। स च किम्भूतः ? इत्याह-'जाव पडिरूवे' अत्र 'यावत्' शब्देन ग्रन्थान्तरप्रसिद्धं विशेषणजातं - सूचितम्। ९ दूरम् उत्-प्राबल्येन गतं कन्दस्याधस्तात् मूलं यस्य स दूरोद्गतकन्दमूलः तथा वृत्तभावेन परिणतः-एवं नाम सर्वासु दिक्षु विदिक्षु च शाखाभिः प्रशाखाभिश्च प्रसृतो यथा वर्तुलः प्रतिभासते इति, तथा लष्टाः-मनोज्ञाः सन्धयः-शाखागता यस्य स लष्टसन्धिः तथा अश्लिष्टः-अन्यैः पादपैः सहासम्पृक्तः-विविक्त इत्यर्थः। ततो विशेषणसमासः स च पदद्वयमीलनेनावसेयः बहूनां पदानां विशेषणसमासानभ्युपगमात्। तथा १० घनः-निबिडः, मसृणः-कोमलत्वक् न कर्कशस्पर्शः, स्निग्धः-शुभकान्तिः, आनुपूर्व्या-मूलादिपरिपाट्या सुष्ठु जन्मदोषरहितं यथा भवति एवं जातः आनुपूर्वीसुजातः, तथा निरुपहतः-उपदेहिकाद्युपद्रवरहितः, उद्विद्धः-उच्चः,प्रवरः-प्रधानः स्कन्धो यस्य स घनमसृणस्निग्धानुपूर्वीसुजातनिरुपहतोद्विद्धप्रवरस्कन्धः। तथा ११ अनेकस्य नरस्य-मनुष्यस्य ये प्रवराः-प्रलम्बा भुजाः-बाहवः तैरग्राह्यः-अपरिमेयः अनेकनरप्रवरभुजाग्राह्यः-अनेकपुरुषव्यामैरपि अप्रतिमेयस्थौल्य इत्यर्थः। तथा

+ सा च वक्तव्यता औपपातिकग्रन्थमाश्रित्य अत्रैव मूले संयोजिता। - विवरणकारसूचितं ग्रन्थान्तरप्रसिद्धं विशेषणजातम् मूलेन सह निवेशितम्।

वरभुयअगेज्झे, [13]कुसुमभरसमोणमंत-पत्तल-विसाल-साले [14]महुकरि-भमरगण-गुमगुमाइय-णिलिंत-उड्डेंतस-स्सिरीए [15]णाणासउणगणमिहुणसुमहुर-कण्णसुह-पलत्त-सद्दमहुरे [16]कुसविकुसविसुद्धरुक्खमूले [17]पासादीए [18]दरि-

१३कुसुमभरेण-पुष्पसम्भारेण सम्-ईषदवनमन्त्यः पत्रसमृद्धाः-§"पत्तसमिद्धं तिक्खं च पत्तलं"[ ]इति वचनात्-विशालाः-विस्तीर्णाः शालाः-शाखा यस्य स कुसुमभरसमवनमत्पत्रलविशालशालः। तथा १४ मधुकरीणां भ्रमराणां च ये गणाः 'गुमगुमायिता' गुमगुमायन्ति स्म-कर्मकर्तृत्वात् कर्तरि 'क्त' प्रत्ययः-गुमगुमेति शब्दं कृतवन्तः सन्त इत्यर्थः, निलीयमानाः-आश्रयन्तः उड्डीयमानाः-तत्प्रत्यासन्नमाकाशे परिभ्रमन्तः तैः सश्रीकः मधुकरीभ्रमरगणगुमगुमायितनिलीयमानोड्डीयमानसश्रीकः। तथा १५ नानाजातीयानां शकुनगणानां यानि मिथुनानि-स्त्रीपुंसयुग्मानि तेषां प्रमोदवशतो यानि परस्परसुमधुराणि अत एव कर्णसुखानि-कर्णसुखदायकानि प्रलप्तानि-भाषणानि-शकुनगणानां हि स्वेच्छया क्रीडतां प्रमोदभरवशतो यानि भाषणानि तानि 'प्रलप्तानि' इति प्रसिद्धानि ततः 'पलत्त'इत्युक्तम्-तेषां यः शब्दो-ध्वनिः तेन मधुरः नानाशकुनगणमिथुनसुमधुरकर्णसुखप्रलप्तशब्दमधुरः। तथा १६ कुशा-दर्भादयः विकुशा-वल्वजादयः तैर्विशुद्धं-रहितं वृक्षस्य-सकलस्याशोकपादपस्य—इह मूलं शाखादीनामपि आदिमो भागो लक्षणया प्रोच्यते यथा 'शाखामूलमिदम्' 'प्रशाखामूलमिदम्' इत्यादि ततः सकलाशोकपादपसत्कमूलप्रतिपत्तये वृक्षग्रहणम्—मूलं यस्य स कुशविकुशविशुद्धवृक्षमूलः १७ यश्चैवंविधः स द्रष्टॄणां चित्तसन्तोषाय भवति, तत आह-प्रासादीयः-प्रसादाय-चित्तसन्तोषाय-हितः तदुत्पादकत्वात् प्रासादीयः। १८

§ "पत्तसमिद्ध पत्तल"-पाइअलच्छीनाममाला अङ्क ३४८। "पत्तल-पड्डवइया पत्तिसमिद्ध चेव तिक्खम्मि"-देशीनाममाला वर्ग ६ गा० १४।

सणिज्जे [१९]अभिरूवे [२०]पडिरूवे]

[से णं [१]असोगवरपायवे अन्नेहिं बहूहिं [२]तिलएहिं लउएहिं छत्तोवगेहिं सिरीसेहिं सत्तवण्णेहिं दधिवन्नेहिं लोद्देहिं धवेहिं चंदणेहिं अज्जुणेहिं नीवेहिं कयंबेहिं फणसेहिं दाडिमेहिं तालेहिं तमालेहिं पियालेहिं पियंगूहिं रायरुक्खेहिं जाव नंदिरुक्खेहिं सव्वओ समंता संपरिक्खित्ते। [३]ते णं तिलगा जाव नंदिरुक्खा कुसविकुसविसुद्धरुक्खमूला [४]मूलमंतो [५]कंदमंतो जाव [६]खंधिमन्तो [७]तयामन्तो [८]सालमन्तो [९]पवालमन्तो [१०]पत्तमन्तो-पुप्फमन्तो-

—अत एव दर्शनीयो—द्रष्टुं योग्यः। कस्मादित्याह १९ अभिरूपः द्रष्टारं द्रष्टारं प्रति—अभिमुखं न कस्यचिद् विरागहेतू रूपम्—आकारो यस्यासावभिरूपः एवंरूपोऽपि कुतः ? इत्याह २० प्रतिरूपः—प्रतिविशिष्टम् सकलजगदसाधारणं रूपं यस्य स प्रतिरूपः।

१ 'से णं असोगवरपायवे' इत्यादि 'जाव नंदिरुक्खेहिं' इत्यत्र *यावच्छब्दकरणात् २एते च तिलक—लवक—च्छत्रोपग—शिरीष—सप्तपर्ण—दधिपर्ण—लुब्धक—धव—चन्दन—अर्जुन—नीप—कदम्ब—फनस-दाडिम—ताल—तमाल—प्रियाल—प्रियङ्गु—राजवृक्ष-नन्दिवृक्षाः प्रायः सुप्रसिद्धाः। ३ 'ते णं तिलगा जाव नंदिरुक्खा कुसविकुस'इत्यादि। ते तिलका यावन्नन्दिवृक्षाः कुशविकुशविशुद्धवृक्षमूलाः। अत्र व्याख्या पूर्ववत्। ४ मूलवन्तः मूलानि प्रभूतानि दूरावगाढानि च सन्त्येषामिति मूलवन्तः। ५कन्दः एषामस्तीति कन्दवन्तः। *यावच्छब्दकरणात्। अस्य व्याख्या—इह मूलानि सुप्रतीतानि यानि कन्दस्याधः प्रसरन्ति, कन्दास्तेषां मूलानामुपरिवर्तिनस्ते अपि प्रतीताः। ६खंधी—थुडम् ७त्वक्—छल्ली ८शालाः—शाखाः ९ प्रवालः—पल्लवाङ्कुरः १०पत्रपुष्पफलबीजानि सुप्रसिद्धानि। सर्वत्रातिशयेन क्वचिद्

* अत्र 'यावत्' शब्देन यत् सूचितम् तदत्र मूले एव स्थापितम्।

फलमन्तो–बीयमन्तो [1]अणुपुव्विसुजायरुइलवट्टभावपरिणया [2]एगखंधी [3]अणेगसाहप्पसाहविडिमा [4]अणेगनरवाम-सुप्पसारियअगिज्झघणविपुलवट्टखंधा [5]अच्छिद्दपत्ता [6]अविरलपत्ता [7]अवाईणपत्ता

भूम्नि वा 'मतुप्' प्रत्ययः। १ आनुपूर्व्या–मूलादिपरिपाट्या सुष्ठु जाता आनुपूर्वीसुजाताः रुचिराः–स्निग्धतया देदीप्यमानच्छविमन्तः तथा वृत्तभावेन परिणता वृत्तभावपरिणताः, किमुक्तं भवति?–एवं नाम सर्वासु दिक्षु विदिक्षु च शाखाभिः प्रशाखाभिश्च प्रसृता यथा वर्त्तुलाः संजाता इति, आनुपूर्वीसुजाताश्च ते रुचिराश्च आनुपूर्वीसुजातरुचिराः ते च ते वृत्तभावपरिणताश्च आनुपूर्वीसुजातरुचिरवृत्तभावपरिणताः ते तथा। २ तिलकादयः पादपाः प्रत्येकमेकस्कन्धाः, प्राकृते *चास्य स्त्रीत्वमिति 'एगखंधी' इति सूत्रपाठः। ३ तथा अनेकाभिः शाखाभिः प्रशाखाभिश्च मध्यभागे विटपः–विस्तारो येषां ते तथा। ४ तिर्यग् बाहुद्वयं प्रसारणप्रमाणो व्यामः–व्यामीयन्ते परिच्छिद्यन्ते रज्ज्वादि अनेनेति व्यामः—बहुलवचनात् करणे "क्वचित्" [५–१–१७१ हैमश०] इति 'ड'प्रत्ययः–अनेकैर्नरव्यामैः–पुरुषव्यामैः सुप्रसारितैरग्राह्यः अप्रमेयः घनो–निबिडो विपुलः–विस्तीर्णो वृत्तस्कन्धो येषां ते अनेकनरव्यामसुप्रसारिताग्राह्यघनविपुलवृत्तस्कन्धाः। तथा ५ अच्छिद्राणि पत्राणि येषां ते अच्छिद्रपत्राः–किमुक्तं भवति?–न तेषां पत्रेषु वातदोषतः कालदोषतो वा गड्डरिकादिरीति+रुपजातो येन तेषु पत्रेषु छिद्राण्यभविष्यन्नित्यच्छिद्रपत्राः अथवा एवं नाम अन्योऽन्यं शाखाप्रशाखानुप्रवेशात् पत्राणि पत्राणामुपरि जातानि येन मनागपि अपान्तरालरूपं छिद्रं नोपलक्ष्यते इति। तथा चाह–६ 'अविरलपत्ता' इति, अत्र हेतौ प्रथमा, ततोऽयमर्थः–यतः अविरलपत्रा अतोऽच्छिद्रपत्राः। अविरलपत्राः इत्यपि कुतः? इत्याह–७ अवातीनपत्राः वातीनानि–वातोपहतानि–

* अस्य 'खंध' शब्दस्य। + अतिवृष्टि–अनावृष्टिप्रमुखोपद्रवविशेषः ईतिः।

अणईइपत्ता [2]निद्धूयजरढपंडुपत्ता [3]नवहरियभिसंतपत्तभारंधयारगंभीरदरिसणिज्जा [4]उवनिग्गयनयतरुणपत्त-पल्लवकोमलउज्जलचलंतकिसलसुकुमालपवालसोभियपवरवरंकुरग्गसिहरा [5]निच्चं [6]कुसुमिया

वातेन पातितानीत्यर्थः, न वातीनानि अवातीनानि पत्राणि येषां ते तथा–किमुक्तं भवति ?–न प्रबलेन खरपरुषेण वातेन तेषां पत्राणि भूमौ निपात्यन्ते, ततोऽवातीनपत्रत्वादविरलपत्रा इति अच्छिद्रपत्रा इति। १ 'अच्छिद्रपत्राः' इत्यत्र प्रथमव्याख्यानपक्षमधिकृत्य हेतुमाह–'अणईइपत्ता' न विद्यते ईतिः–गड्डरिकादिरूपा येषां तानि अनीतीनि, अनीतीनि पत्राणि येषां ते अनीतिपत्राः, अनीतिपत्रत्वाच्च अच्छिद्रपत्राः। २ निर्द्धूतानि–अपनीतानि जरठानि पाण्डुपत्राणि येभ्यस्ते निर्द्धूतजरठपाण्डुपत्राः–किमुक्तं भवति ?–यानि वृक्षस्थानि जरठानि पाण्डुपत्राणि वातेन निर्द्धूय निर्द्धूय भूमौ पातितानि, भूमेरपि च प्रायो निर्द्धूय निर्द्धूयान्यत्रापसारितानीति। ३ नवेन–प्रत्यग्रेण हरितेन–नीलेन भासमानेन स्निग्धत्वेन वा दीप्यमानेन पत्रभारेण–दलसञ्चयेन यो जातोऽन्धकारस्तेन गम्भीराः–अलब्धमध्य-भागाः सन्तो दर्शनीयाः नवहरितभासमानपत्रभारान्धकारगम्भीरदर्शनीयाः तथा ४ उपविनिर्गतैः निरन्तरविनिर्गतैरिति भावः, नवतरु-णपत्रपल्लवैः तथा कोमलैः–मनोज्ञैः उज्ज्वलैः–शुद्धैः चलद्भिः–ईषत्कम्पमानैः किशलयैः-अवस्थाविशेषोपेतैः पल्लवविशेषैः तथा सुकुमारैः प्रवालैः–पल्लवाङ्कुरैः शोभितानि वराङ्कुराणि–वराङ्कुरोपेतानि अग्रशिखराणि येषां ते उपविनिर्गतनवतरुणपत्रपल्लवकोमलोज्ज्वलचलत्कि-शलयसुकुमालप्रवालशोभितवराङ्कुराग्रशिखराः। इह अङ्कुर–प्रवालयोः कालकृतावस्थाविशेषाद् विशेषो भावनीयः। तथा ५ नित्यम् सर्व-कालम्–षट्स्वपि ऋतुषु इत्यर्थः। ६ कुसुमिताः कुसुमानि–पुष्पाणि संजातान्येषामिति कुसुमिताः, तारकादिदर्शनात् 'इत'प्रत्ययः।

[1]निच्चं मउलिया निच्चं [2]लवइया [3]निच्चं थवइया [4]निच्चं गुलइया [5]निच्चं गोच्छिया [6]निच्चं जमलिया [7]निच्चं जुयलिया [8]निच्चं विणमिया [9]निच्चं पणमिया [10]निच्चं सुविभत्तपडिमंजरिवडिंसयधरा [11]निच्चं कुसुमिय-मउलिय-लवइय-थवइय-गोच्छिय-जमलिय-जुयलिय-विणमिय-पणमिय-सुविभत्तपडिमंजरिवडिंसयधरा [12]सुक-बरहिण-मयणसलागा-कोइल-कोरग-कोभव-भिंगारक-कोंडलग-जीवंजीवक-नन्दीमुख-कविल-पिङ्ग-लक्खग-कारंडव-चक्कवाक-कलहंस-सारसअणेगसउणगणमिहुणवियरियसद्दोन्नइयमहुरसरणाइया

१नित्यं-सर्वकालं मुकुलितानि, मुकुलानि नाम कुड्मलानि कलिका इत्यर्थः। २ पल्लविताः। ३ नित्यं स्तबकिताः स्तवकभारवन्त इत्यर्थः। ४ नित्यं गुलिमताः स्तबकगुल्मौ गुच्छविशेषौ। ५ नित्यं गोच्छवन्तः ६ नित्यं यमलम्-नाम-समानजातीययोर्युग्मम् तत् संजातमेषामिति यमलिताः। ७ नित्यं युगलिता युगलम्-सजातीयविजातीययोर्द्वन्द्वम् तदेषां संजातमिति युगलिताः। तथा ८ नित्यं-सर्वकालं फलभरेण विनताः-ईषन्नताः, तथा ९ नित्यं महता फलभरेण प्रकर्षेणातिदूरं नताः प्रणताः। तथा १० नित्यं सर्वकालं सुविभक्तः-सुविच्छित्तिकः प्रतिविशिष्टो मञ्जरीरूपो योऽवतंसकस्तद्धरास्तद्धारिणः। एवं सर्वोऽपि कुसुमितत्वादिको धर्म एकैकस्य वृक्षस्योक्तः। साम्प्रतं केषाञ्चिद् वृक्षाणां सकलकुसुमितत्वादिधर्मप्रतिपादनार्थमाह-११ 'निच्चं कुसुमियमउलिय'इत्यादि। किमुक्तं भवति-केचित् कुसुमिताद्येकैकगुणयुक्ताः केचिद् समस्तकुसुमितादिगुणयुक्ता इति, अत एव 'कुसुमिय-मउलिय'-इत्यादिपदेषु कर्मधारयः। तथा १२ शुक-बर्हिण-मदनशालिका-कोकिला-कोरक-कोभव-भिङ्गारक-कोण्डलक-जीवंजीवक-नन्दीमुख-कपिल-पिङ्गलाक्ष-कारण्डव-चक्रवाक कलहंस-सारसाख्यानामनेकेषां शकुनगणानां मिथुनैः-स्त्रीपुंसयुक्तैर्यद् विचरितम्-इतस्ततो गमनम् यच्च शब्दो-

[1]सुरम्मा [2]संपिंडियदरियभमर—महुयरिपहकरपरिलिंतमत्तछप्पयकुसुमासवलोलमहुरगुमगुमंतगुंजंतदेसभागा [3]अब्भिंतरपुप्फफला [4]बाहिरपत्तोच्छण्णा [5]पत्तेहि य पुप्फेहि य उच्छन्नपलिच्छिन्ना [6]नीरोगका [7]अकंटका

न्नतिकम् उन्नतशब्दकम् मधुरस्वरं च नादितम्–लपितं येषु ते तथा–अत एव १ सुरम्याः सुष्ठु रमणीयाः–अत्र शुकाः कीराः, बर्हिणो
॥१६॥ मयूराः, मदनशालिकाः शारिकाः, कोकिलाः–पिकाः, चक्रवाक–कलहंस–सारसाः प्रतीताः, शेषास्तु जीवविशेषा लोकतो वेदितव्याः।
तथा २ सम्पिण्डिताः–एकत्र पिण्डीभूताः दृप्ताः—मदोन्मत्तया दर्पाध्माता भ्रमरमधुकरीणां [पहकराः सङ्घाताः–"पहकर–ओरोह–
संघाया" [ ] इति *देशीनाममालावचनात्–यत्र ते सम्पिण्डितदृप्तभ्रमरमधुकरीपहकराः, तथा परिलीयमानाः–अन्यतः आगत्याश्रयन्तः
मत्ताः षट्पदाः कुसुमासवलोलाः–किञ्जल्कपानलम्पटाः मधुरं गुमगुमायमानाः गुञ्जन्तश्च–शब्दविशेषं च विदधाना देशभागेषु येषां ते
परिलीयमानमत्तषट्पदकुसुमासवलोलमधुरगुमगुमायमानगुञ्जद्देशभागाः। गमकत्वादेवमपि समासः ततो भूयः पूर्वपदेन विशेषणस-
मासः। तथा ३ अभ्यन्तराणि अभ्यन्तरभागवर्तीनि पुष्पाणि च फलानि च पुष्पफलानि येषां ते तथा। ४ बहिस्तः पत्रैश्छन्नाः–व्याप्ताः
बहिःपत्रच्छन्नाः। तथा ५ पत्रैश्च पुष्पैश्च अवच्छन्नपरिच्छन्नाः–अत्यन्तमाच्छादिताः। तथा ६ नीरोगकाः–रोगवर्जिताः। ७ अक-

* आचार्यहेमचन्द्रविरचितायां देशीनाममालायां नैतद् वचनं दृश्यते। अत एतद् वचनं संभवेत् ततोऽपि प्राचीनतरायां कस्यांचिद् देशीनाममालायाम्। धनपाल–हेमचन्द्रनिर्मितयोः पाइअलच्छी–देशीनाममालयोः 'ओरोह' शब्दो न दृश्यते समूहवाची अतः अस्मिन् वचने 'पहकर–पयर–ओह–संघाया' इति पाठः साधुतरः स्यात्। "पहयरो गणो पयरो। ओहो निवहो संघो संघाओ"—पाइअल० अं० १८। "पग्गेज्ज–पहयरा णियरे"–दे० ना० वर्ग ६ गा० १५।

[1]साउफला [2]निद्धफला [3]णाणाविहगुच्छगुम्ममंडवगसोहिया [4]विचित्तसुहकेउबहुला [5]वावि-पुक्खरिणी-दीहियासु य सुनिवेसियरम्मजालघरगा [6]पिंडिमनीहारिमसुगंधिसुहसुरभिमणहरं च महया गंधद्धणिं मुंचंता [7]सुहसेउ-केउबहुला अणेगरह-सगड-जाण-जुग्ग-गिल्लि-थिल्लि-सिविय-संदमाणियापडिमोयणा

ण्टककाः-कण्टकरहिताः, न तेषां प्रत्यासन्ना बब्बूलादिवृक्षाः सन्तीति भावः। तथा १ स्वादूनि फलानि येषां ते स्वादुफलाः। २ तथा स्निग्धानि फलानि येषां ते स्निग्धफलाः। तथा प्रत्यासन्नैः ३ नानाविधैः-नानाप्रकारैर्गुच्छैः वृन्ताकीप्रभृतिभिः गुल्मैः नवमालिकादिभिर्मण्डपकैः शोभिताः-नानाविधगुच्छगुल्ममण्डपकशोभिताः। तथा ४ विचित्रैः-नानाप्रकारैः शुभैः-मण्डनभूतैः केतुभिः-ध्वजैर्बहुलाः व्याप्ताः विचित्रशुभकेतुबहुलाः। तथा ५ वाप्यश्चतुरस्राकाराः, ता एव वृत्ताः पुष्करिण्यः, यदिवा पुष्कराणि वर्त्तन्ते यासु ताः पुष्करिण्यः, दीर्घिकाः-ऋजुसारिण्यः, वापीषु पुष्करिणीषु दीर्घिकासु च सुष्ठु निवेशितानि रम्याणि जालगृहकाणि येषु ते वापी-पुष्करिणी-दीर्घिकासु सुनिवेशितरम्यजालगृहकाः। ६ तथा पिण्डिमा-पिण्डिता सती निर्हारिमा-दूरं विनिर्गच्छन्ती पिण्डिमनिर्हारिमा तां सुगन्धिम् सुगन्धिकाम् शुभसुरभिभ्यो गन्धान्तरेभ्यः सकाशात् मनोहरा शुभसुरभिमनोहरा तां च—'महया' इति प्राकृतत्वात् द्वितीयार्थे तृतीया-महतीम्—इत्यर्थः-गन्धघ्राणिं यावद्भिर्गन्धपुद्गलैर्गन्धविषये गन्धघ्राणिरुपजायते तावती गन्धपुद्गलसंहतिः-उपचारात्-गन्धघ्राणिरित्युच्यते, तां निरन्तरं मुञ्चन्तः। तथा ७ शुभाः-प्रधाना इति-सेतवः-मार्गाः आलवालपाल्यो वा केतवः-ध्वजाः बहुलाः-बहवो येषां ते तथा। ८ 'अणेगरह-सगड-जाण-जुग्ग-*गिल्लि-थिल्लि-सिविय-संदमाणियपडिमोयणा' इति, रथा द्विविधाः-

* 'गिल्लि'—"हस्तिनः उपरि कोल्लररूपा या मानुषं गिलतीव"-औ० वृ०। लोकभाषायां 'अंबाडी' इति प्रसिद्धा। ÷ थिल्लि—"लाटानां यानि

[1]पासाईया दरिसणिज्जा अभिरूवा जाव पडिरूवा।

॥१८॥ ते णं तिलगा जाव नन्दिरुक्खा अन्नाहिं बहूहिं पउमलयाहिं [2]नागलयाहिं असोगलयाहिं चंपगलयाहिं चूयलयाहिं [3]वणलयाहिं वासंतियलयाहिं अइमुत्तयलयाहिं कुंदलयाहिं सामलयाहिं सव्वतो समंता संपरिक्खित्ता।

ताओ णं पउमलयाओ जाव सामलयाओ निच्चं कुसुमियाओ निच्चं मउलियाओ निच्चं लवइयाओ निच्चं थवइयाओ निच्चं गुच्छियाओ निच्चं गुम्मियाओ निच्चं जमलियाओ निच्चं जुयलियाओ निच्चं विणमियाओ निच्चं पणमियाओ सुविभत्तपडिमंजरिवडिंसगधरीओ निच्चं कुसुमियमउलियथवइयलवइयगुम्मियजम-

---

क्रीडारथाः संग्रामरथाश्च, शकटानि प्रतीतानि, यानानि–सामान्यतः शेषाणि वाहनानि, युग्यानि–गोल्लविषयप्रसिद्धानि द्विहस्तप्रमाणानि [चतुरस्राणि] वेदिकोपशोभितानि जम्पानानि, शिबिकाः–कूटाकारेणाच्छादिता जम्पानविशेषाः, स्यन्दमानिकाः–पुरुषप्रमाणजम्पानविशेषाः, अनेकेषां रथशकटादीनाम् अधोऽतिविस्तीर्णत्वात् प्रतिमोचनं येषु ते तथा। १ 'पासादीया' इत्यादिपदचतुष्टयं प्राग्वत्।

'ते णं तिलगा' इत्यादि पाठसिद्धम्। नवरम् २ 'नागलयाहिं' ति नागाः–द्रुमविशेषाः ३ 'वणलयाहिं' ति वना अपि द्रुमविशेषाः, द्रुमाणां च लतात्वम् एकशाखाकानां द्रष्टव्यम् ये हि द्रुमा ऊर्ध्वगतैकशाखा न तु दिग्विदिक्प्रसृतबहुशाखाः ते लता इति प्रसिद्धाः।

४ एतच्च समस्तं प्राग्वद् (पृ० १४ पं० १२ अं० ५) व्याख्येयं।

अड्डपल्यानानि तानि अन्यविषयेषु 'थिल्लीओ' अभिधीयन्ते"–औ० वृ०। थिल्लि–बे घोडानी बगी [?]–थिल्लि–ठेला गाडी?

लियजुयलियगुच्छियविणमियपणमियसुविभत्तपडिमंजरिवडिंसगधरीओ संपिंडियदरियभमर–महुयरिपहकरपरिलिंतमत्तछप्पयकुसुमासवलोलमहुरगुमगुमेंतगुंजंतदेसभागाओ जाव पासादीयाओ दरिसणिज्जाओ अभिरूवाओ पडिरूवाओ।

[1]तस्स णं [2]असोगवरपायवस्स उवरिं [3]बहवे [4]अट्ठ अट्ठ मङ्गलगा पन्नत्ता। [5]तं जहा–[6]सोत्थिय–[7]सिरिवच्छ–[8]नन्दियावत्त–[9]वद्धमाणग–[10]भद्दासण–[11]कलस–[12]मच्छ–[13]दप्पणा [14]सव्वरयणामया [15]अच्छा [16]सण्हा [17]लण्हा [18]घट्ठा [19]मट्ठा [20]णीरया

१ तस्य 'णं'इति प्राग्वत्। २अशोकवरपादपस्य उपरि ३बहूनि ४ +अष्टावष्टौ मङ्गलकानि प्रज्ञप्तानि। ५ तद् यथा–६स्वस्तिकः। ७ –श्रीवृक्षः। ८ *नन्द्यावर्त्तः, क्वचिद्–'नन्दावत्त'–इति पाठः, तत्र 'नन्दावर्त्तः'इति शब्दसंस्कारः। ९ =वर्द्धमानकम् शरावसंपुटम्। १० भद्रासनम्। ११ कलशः। १२ मत्स्ययुग्मम्। १३ दर्पणः–एतानि चाष्टावपि मङ्गलकानि १४ सर्वरत्नमयानि। १५ अच्छानि–आकाशस्फटिकवदतीव स्वच्छानि। १६ श्लक्ष्णानि–श्लक्ष्णपुद्गलस्कन्धनिष्पन्नानि श्लक्ष्णनिष्पन्नपटवत्। १७ लण्हानि–मसृणानि घुण्टितपटवत्। १८ घृष्टानीव घृष्टानि खरशाणया पाषाणप्रतिमावत्। १९ मृष्टानीव मृष्टानि सुकुमारशाणया पाषाणप्रतिमेव। २० अत एव

+ "'अष्टौ अष्टौ' इति वीप्साकरणात् प्रत्येकं ते अष्टौ इति वृद्धाः। अन्ये तु अष्टौ इति संख्या, अष्टमङ्गलकानि इति च संज्ञा"–औ० वृ०। – "श्रीवत्सः तीर्थंकरहृदयावयवविशेषाकारः"–औ० वृ०। "श्रिया युक्तो वत्सो वक्षः अनेन श्रीवत्सः रोमावर्तविशेषः"–अभिधान० कां० २ श्लो० १३६। * "नन्द्यावर्तः प्रतिदिग्नवकोणः स्वस्तिकविशेषः रूढिगम्यः"–औ० वृ०। = "वर्धमानकम् शरावम्, पुरुषारूढः पुरुषः इत्यन्ये"–औ० वृ०।

॥२०॥

[1]निम्मला [2]निप्पंका [3]निक्कंकडच्छाया [4]सप्पभा [5]समिरीया [6]सउज्जोया [7]पासादीया दरिसणिज्जा अभिरूवा पडिरूवा ।

[8]तस्स णं [9]असोगवरपायवस्स [10]उवरिं [11]बहवे [12]किण्हचामरज्झया [13]नीलचामरज्झया [14]लोहियचामरज्झया [15]हालिद्दचामरज्झया [16]सुक्किल्लचामरज्झया [17]अच्छा [18]सण्हा लण्हा [19]रुप्पपट्टा [20]वइरामयदंडा [21]जलयामलगंधिया [22]सुरम्मा [23]पासादीया दरिसणिज्जा अभिरूवा पडिरूवा ।

नीरजांसि–स्वाभाविकरजोरहितत्वात् । १ निर्मलानि–आगन्तुकमलाभावात् । २ निष्पङ्कानि–कलङ्कविकलानि कर्दमरहितानि वा । ३ निष्कङ्कटा–निष्कवचा—निरावरणा निरुपघातेति भावार्थः—छाया–दीप्तिर्येषां तानि निष्कङ्कटच्छायानि । ४ सप्रभाणि स्वरूपतः प्रभावन्ति ५ समरीचीनि बहिर्विनिर्गतकिरणजालानि । अत एव ६ सोद्योतानि–बहिर्व्यवस्थितवस्तुस्तोमप्रकाशकराणि । ७ 'पासाइया' इत्यादिपदचतुष्टयव्याख्या पूर्ववत् ।

८ तस्य 'णं' इति प्राग्वत् । ९ अशोकवरपादपस्य १० उपरि ११ बहवः १२ कृष्णचामरध्वजाः, चामराणि च ध्वजाश्च चामरध्वजाः कृष्णाश्च ते चामरध्वजाश्च कृष्णचामरध्वजाः । एवं १३ नीलचामरध्वजाः, १४ लोहितचामरध्वजाः, १५ हारिद्रचामरध्वजाः, १६शुक्लचामरध्वजाः । एते च कथम्भूताः ? इत्याह–१७ अच्छाः–स्फटिकवदतिनिर्मलाः । १८ श्लक्ष्णाः–श्लक्ष्णपुद्गलस्कन्धनिष्पन्नाः । १९ रूप्यः रूप्यमयः वज्रमयस्य दण्डस्योपरि पट्टो येषां ते रूप्यपट्टाः । 'वइरदण्डा' इति २० वज्रः–वज्ररत्नमयः दण्डो रूप्यपट्टमध्यवर्ती येषां ते वज्रदण्डाः । तथा २१ जलजानामिव–जलजकुसुमानां पद्मादीनामिव अमलो गन्धो येषां ते जलजामलगन्धकाः । अत एव २२ सुरम्याः–अतिशयेन रमणीयाः । २३ 'पासाइया' इत्यादि पूर्ववत् ।

[1]तस्स णं [2]असोगवरपायवस्स उवरिं [3]बहवे छत्ताइच्छत्ता [4]पडागाइपडागा [5]घंटाजुयला [6]चामरजुयला [7]उप्पलहत्थगा [8]पउमहत्थगा [9]कुमुयहत्थगा [10]नलिणहत्थगा [11]सुभगहत्थगा [12]सोगंधियहत्थगा [13]पोंडरियहत्थगा [14]महापोंडरियहत्थगा [15]सयपत्तहत्थगा [16]सहस्सपत्तहत्थगा [17]सव्वरयणामया [18]अच्छा जाव पडिरूवा]

[४] [[19]तस्स णं [20]असोगवरपायवस्स [21]हेट्ठा [22]एत्थ णं [23]एगे

---

१ 'तस्स णं'इति प्राग्वत्। २अशोकवरपादपस्योपरि ३बहूनि छत्रातिच्छत्राणि छत्रात्–लोकप्रसिद्धाद् एकसंख्याकाद् अतिशायीनि छत्राणि उपर्यधोभागेन द्विसंख्यानि त्रिसंख्यानि वा छत्राणि छत्रातिच्छत्राणि। तथा ४ बह्व्यः पताकाभ्यो लोकप्रसिद्धाभ्योऽतिशायिन्यः पताकाः पताकातिपताकाः। ५बहूनि तेष्वेव छत्रातिच्छत्रादिषु घण्टायुगलानि। ६ चामरयुगलानि। तथा ७तत्र तत्र प्रदेशे उत्पलहस्तकाः–उत्पलाख्या जलजकुसुमसंघातविशेषाः। एवं ८ पद्महस्तकाः ९ कुमुदहस्तकाः १० नलिनहस्तकाः ११ सुभगहस्तकाः १२ सौगन्धिकहस्तकाः १३ पुण्डरीकहस्तकाः १४ महापुण्डरीकहस्तकाः १५ शतपत्रहस्तकाः १६ सहस्रपत्रहस्तकाः।

७ उत्पलं–गर्दभकम्। ८ पद्मं–सूर्यविकाशि पङ्कजम् ९ कुमुदं–कैरवम्। १० नलिनम्–ईषद्रक्तं पद्मम्। ११ सुभगं–पद्मविशेषः १२ सौगन्धिकं–कल्हारम् १३ पुण्डरीकं–श्वेताम्बुजम् १४ तदेवातिविशालं महापुण्डरीकम् १५–१६शतपत्र–सहस्रपत्रे पत्रसंख्याविशेपावच्छिन्नौ पद्मविशेषौ। एते च छत्रातिच्छत्रादयः सर्वेऽपि १७ सर्वरत्नमयाः–सर्वात्मना रत्नमयाः १८ 'अच्छा सण्हा' इत्यादि विशेपणजातं पूर्ववत् (पृ० १९ पं० ८ अं० १५)।

[४]१९तस्य 'णं'इति प्राग्वत्। २०अशोकवरपादपस्य। २१अधस्तात्। अशोकवरपादपस्य यदधः २२अत्र 'णं'इति पूर्ववत्। २३एको

[1]महं]पुढविसिलापट्टए। वत्तव्वया उववातियगमेणं नेया। [[2]पन्नत्ते [3]ईसिंखंधासमल्लीणे [4]विक्खंभायाम-सुप्पमाणे [5]किण्हे [6]अंजणग-घण-कुवलय-हलधरकोसेज्जसरिसे [7]आगास-केस-कज्जल-कक्केयण-इंदनील-अयसिकुसुमप्पगासे [8]भिंग-अंजणभंगभेय-रिट्ठग-नीलगुलिय-गवलाइरेगे [9]भमरनिकुरुंबभूए [10]जंबूफल-असणकुसुमबंधण-नीलुप्पलपत्तनिकर-मरगय-आसासग-नयणकीय-असिवन्ने [11]निद्धे [12]घणे [13]अज्झुसिरे [14]रूवगपडिरूवगदरिसणिज्जे

१महान् १ पृथ्वीशिलापट्टकः २ प्रज्ञप्तः। कथम्भूतः? इत्याह-३ इह स्कन्धः स्थुडमित्युच्यते, तस्याशोकवरपादपस्य यत् स्थुडं तत् ईषद्-मनाक् सम्यग् लीनस्तदासन्न इत्यर्थ इति। ४ विष्कम्भेणायामेन च शोभनम्-औचित्यानतिवर्ति प्रमाणं यस्य स विष्कम्भायामसुप्रमाणः। ५ कृष्णः। कृष्णत्वमेव निरूपयति ६ अञ्जनको-वनस्पतिविशेषः घनो-मेघः कुवलयं-नीलोत्पलम् हलधरकौशेयं-बलदेववस्त्रं तैः सदृशः-समानवर्णः। ७ आकाशं धूलीमेघादिविरहितम् केशाः-शिरसिजाः, कज्जलं-प्रतीतम् कर्केतनेन्द्रनीलौ-मणिविशेषौ, अतसीकुसुमं प्रसिद्धम् एतेषामिव प्रकाशो-दीप्तिर्यस्य स तथा। ८ भृङ्गः-चतुरिन्द्रियः पक्षिविशेषः अञ्जनं-सौवीराञ्जनम् तस्य भङ्गेन-विच्छित्त्या भेदः-छेदोऽञ्जनभङ्गभेदः रिष्टको-रत्नविशेषः नीलगुटिकाः-प्रतीताः गवलं-माहिषं शृङ्गम् तेभ्योऽपि कृष्णत्वेनातिरेको यस्य स तथा। ९ अत्र भूतशब्दः औपम्यवाची-यथा अयं लाटदेशः सुरलोकभूतः-सुरलोकोपमः इत्यर्थः-ततोऽयमर्थः-भ्रमरनिकुरुम्बोपमः। १० जम्बूफलानि प्रतीतानि असनकुसुमबन्धनं-असनपुष्पवृन्तम् नीलोत्पलपत्रनिकरः मरकतमणिः प्रतीतः आसासको-बीयकाभिधानो वृक्षः, नयनकीकः-नेत्रमध्यताराः, असिः-खड्गम् तेषामिव वर्णो यस्य स तथा। ११ स्निग्धो न तु रूक्षः। १२ घनो-निबिडो न तु कोष्ठक इव मध्यशुषिरः। १३ 'अज्झुसिरे' इति श्लक्ष्णशुषिररहितः। १४ रूपकाणां यानि-तत्र

[1]आयंसगतलोवमे [2]सुरम्मे [3]सीहासणसंठिए [4]सुरूवे [5]मुत्ताजालखइयंतकम्मे [6]आइणग-रूत-बूर-नवणीय-तूलफासे [7]सव्वरयणामए अच्छे जाव पडिरूवे।

[५] [[8]तत्थ णं [9]आमलकप्पाए नयरीए] [10]सेओ* राया [होत्था [11]महयाहिमवंत-महंतमलय-मंदर-महिंदसारे [12]अच्चंतविसुद्धरायकुलवंसप्पसूए [13]निरंतरं रायलक्खणविराइयंगमंगे

संक्रान्तानि प्रतिरूपकाणि प्रतिबिम्बानि तैः दर्शनीयो रूपकमतिरूपकदर्शनीयः। १ आदर्शतलोपमः-आदर्शो-दर्पणस्तस्य तलं तेन समतयोपमा यस्य स आदर्शतलोपमः। २ सुष्ठु मनांसि रमयतीति सुरम्यः "कृद् बहुलम्" [ ] इति वचनात् कर्त्तरि 'य'प्रत्ययः। ३ सिंहासनस्येव संस्थितं-संस्थानं यस्य स सिंहासनसंस्थितः। अत एव ४ सुरूपः-शोभनम् रूपम्-आकारो यस्य स सुरूपः। इतश्च सुरूपो यत आह-५ मुक्ताजालानि-मुक्ताफलसमूहाः खचितानि अन्तकर्मसु-प्रान्तप्रदेशेषु यस्य स मुक्ताजालखचितान्तकर्मा। ६ आजिनकं-चर्ममयं वस्त्रम् रूतं-प्रतीतम् बूरो-वनस्पतिविशेषः नवनीतं-म्रक्षणम् तूलं-अर्कतूलम् तेषामिव कोमलतया स्पर्शो यस्य स आजिनकरूतबूरनवनीततूलस्पर्शः। ७ 'सव्वरयणामए' इत्यादिविशेषणकदम्बकं प्राग्वत् (पृ० १९ पं० ८ अं० १४)।

[५] ८तस्यां ९आमलकल्पायां नगर्यां १०श्वेतो नाम राजा। ११महाहिमवान् हैमवतस्य क्षेत्रस्योत्तरतः सीमाकारी वर्षधरपर्वतः, मलयः-पर्वतविशेषः सुप्रतीतः, मन्दरो-मेरुः महेन्द्रः-शक्रादिको देवराजः तद्वत् सारः-प्रधानः-महाहिमवत्-महामलय-मन्दर-महेन्द्रसारः। तथा १२ अत्यन्तविशुद्धे राजकुलवंशे प्रसूतः अत्यन्तविशुद्धराजकुलवंशप्रसूतः। तथा १३निरन्तरम्-अपलक्षणव्यवधानाभावेन राजलक्षणैः-

* सेणिए राया भा०। सेणिओ राया पा० १-३ (३ लि० स० वि० व० १६१९)

[1]बहुजणबहुमाणपूइए [2]सव्वगुणसमिद्धे [3]खत्तिए [4]मुइए [5]मुद्धाभिसित्ते [6]माउपिउसुजाए [7]दयपत्ते [8]सीमंकरे [9]सीमंधरे [10]खेमंकरे [11]खेमंधरे [12]मणुस्सिंदे [13]जणवयपिया [14]जणवयपाले

राज्यसूचकैर्लक्षणैर्विराजितानि अङ्गमङ्गानि–अङ्गप्रत्यङ्गानि यस्य स निरन्तरराजलक्षणविराजिताङ्गमङ्गः। तथा १बहुभिर्जनैः बहुमानेन–अन्तरङ्गप्रीत्या पूजितो बहुजनबहुमानपूजितः। कस्मात्? इत्याह–२सर्वैः शौर्योपशमादिभिर्गुणैः समृद्धः–स्फीतः सर्वगुणसमृद्धः। ततो बहुजनबहुमानपूजितः गुणवत्सु प्रायः सर्वेषामपि बहुमानसम्भवात्। तथा ३क्षत्रस्यापत्यं क्षत्रियः "क्षत्रादियः"[६–१–९३ हैमश०] इति 'इय' प्रत्ययः, अनेन नवमाष्टमादिनन्दवत् राजकुलप्रसूतोऽपि न हीनजातीयः, किन्तु उत्तमजातीयः इत्यावेदितम्। तथा ४ *मुदितः सर्वकालं हर्षवान्, प्रत्यनीकोपद्रवासम्भवात्, तदसम्भवश्च प्रत्यनीकानामेवाभावात्। तथा चाह–५ प्रायः सर्वैरपि प्रत्यन्तराजैः प्रतापमसहमानैः 'नान्यथाऽस्माकं गतिः' इति परिभाव्य मूर्धभिः–मस्तकैरभिषिक्तः–पूजितो मूर्द्धाभिषिक्तः। तथा ६ मातृपितृभ्यां सुजातो मातृपितृसुजातः, अनेन समस्तगर्भाधानप्रभृतिसम्भविदोषविकलः इत्यावेदितः। तथा ७ +दयाप्राप्तः स्वभावतः शुद्धजीवद्रव्यत्वात्। तथा ८ सेवागतानामपूर्वापूर्वनृपाणां सीमां–मर्यादां करोति यथा 'एवं वर्तितव्यमेवं न' इति सीमङ्करः। तथा ९ पूर्वपुरुषपरम्परायातां स्वदेशप्रवर्त्तमानां सीमां–मर्यादां धारयति–पालयति न तु विलुम्पतीति सीमन्धरः। तथा १० क्षेमं–वशवर्त्तिनां उपद्रवाभावं करोति क्षेमङ्करः चौरादिसंहारात्। तथा ११ तद् धारयति आरक्षकनियोजनात् क्षेमन्धरः। अत एव १२ मनुष्येन्द्रः। तथा १३ जनपदस्य पितेव जनपदपिता। कथं पितेव? इत्यत आह–१४जनपदपालः–जनपदं पालयतीति जनपदपालः, ततो भवति जनपदस्य पितेव।

* " 'मुइए'त्ति निर्दोषमातृकः। यदाह–मुइओ जो होइ जोणिसुद्धो "–औ० वृ०। + " 'दयपत्ते'त्ति प्राप्तकरुणागुणः "–औ० वृ०।

जणवयपुरोहिए [२]सेउकरे [३]केउकरे [४]नरपवरे [५]पुरिसवरे [६]पुरिससीहे [७]पुरिसवग्घे [८]पुरिसआसीविसे [९]पुरिसवरपोंडरीए [१०]पुरिसवरगंधहत्थी [११]अड्ढे [१२]दित्ते [१३]वित्ते [१४]वित्थिन्नविपुलभवण-सयण-आसण-जाण-वाहणाइण्णे [१५]बहुधण-बहुजायरूव-रजए [१६]आओग-पओगसंपउत्ते [१७]विच्छड्डियपउरभत्तपाणे

तथा १ जनपदस्य शान्तिकारितया पुरोहित इव जनपदपुरोहितः। तथा २ सेतुः-मार्गस्तं करोतीति सेतुकरः-मार्गदेशक इति भावः ३ केतुः-चिह्नं तत् करोतीति केतुकरः-अद्भुतसंविधानककारीति भावः। तथा ४ नरेषु-मनुष्येषु मध्ये प्रवरो-नरप्रवरः। स च सामान्यमनुष्यापेक्षयापि स्यात् अत आह-५ पुरुषेषु-पुरुषाभिमानिषु मध्ये वरः-प्रधानः उत्तमपौरुषोपेतत्वादिति पुरुषवरः। यतः ६ पुरुषः सिंह इवाप्रतिमल्लतया पुरुषसिंहः। ७ तथा पुरुषो व्याघ्र इव शूरतया पुरुषव्याघ्रः। ८ पुरुषः आशीविष इव दोषविनाशनशीलतया पुरुषाशीविषः। ९ पुरुषः वरपुण्डरीकमिवोत्तमतया भुवनसरोवरभूषकत्वात् पुरुषवरपुण्डरीकः। १० पुरुषः वरगन्धहस्तीव परान् असहमानान् प्रतीति पुरुषवरगन्धहस्ती, ततो भवति पुरुषवरः। तथा ११ आढ्यः-समृद्धः। १२ दीप्तः शरीरत्वचा देदीप्यमानत्वात् दृप्तो वा दृप्तारिमानमर्दनशीलत्वात्। अत एव १३ वित्तो-जगत्प्रतीतः। यदुक्तम् आढ्यः इति तदेव सविस्तरमुपदर्शयति-१४ विस्तीर्णानि-विस्तारवन्ति विपुलानि-प्रभूतानि भवनानि-गृहाणि शयनानि आसनानि च प्रतीतानि यानानि-रथादीनि वाहनानि-अश्वादीनि एतैराकीर्णो-व्याप्तो युक्तः- विस्तीर्णविपुलभवनशयनासनयानवाहनाकीर्णः। १५ तथा बहु धनम् बहु जातरूपं-सुवर्णम् रजतं च-रूप्यं यस्य स बहुधनबहुजातरूप-रजतः। तथा १६ आयोगप्रयोगसम्प्रयुक्तः-आवाहनविसर्जनकुशलः। तथा १७ विच्छ-

बहुदासी-दास-गो-महिस-गो-एलगप्पभुए [2]पडिपुन्नजंत-कोस-कोट्ठागार-आउहघरे [3]बलवं [4]दुब्बलपच्चामित्ते [5]ओहयकंटयं [6]मलियकंटयं [7]उद्धियकंटयं [8]अप्पडिकंटयं [9]ओहयसत्तुं [10]निहयसत्तुं [11]मलियसत्तुं

दितं-तथाविधः*विशिष्टोपकाराकारितया विसृष्टम् [8]उकुरुटकादिषु प्रचुरं भक्तपानं यस्मिन् राज्यमनुशासति स विच्छर्दितप्रचुरभक्तपानः-अनेन पुण्याधिकतया न तस्मिन् राज्यमनुशासति दुर्भिक्षमभूदिति कथितम् । तथा १ बहूनां दासीनां दासानां गवां-बलीवर्दानां महिषाणां गवां-स्त्रीगवानां एडकानां च प्रभुः बहुदासीदासगोमहिषगवेलकप्रभुः-ततः स्वार्थिक 'क'प्रत्ययविधानात् प्रभुकः । तथा २ प्रतिपूर्णानि-भृतानि यन्त्रकोशकोष्ठागाराणि-यन्त्रगृहाणि, कोशगृहाणि-भाण्डागाराणि, कोष्ठगृहाणि-धान्यानां कोष्ठागाराणि गृहाणि इति भावः, आयुधगृहाणि च यस्य स प्रतिपूर्णयन्त्रकोशकोष्ठागारायुधगृहः । तथा ३ बलं शारीरिकम् मानसिकं च यस्यास्ति स बलवान् ४ दुर्बलप्रत्ययमित्रः-दुर्बलानामकारणवत्सल इति भावः । एवंभूतः सन् राज्यं प्रशासत् विहरति-अवतिष्ठते इति योगः । कथम्भूतं राज्यम्? इत्याह-५ अपहतकण्टकम्-इह देशोपद्रवकारिणश्चरटाः कण्टका इव कण्टकाः ते अपहता अवकाशानासादनेन स्थगिता यस्मिन् तत् अपहतकण्टकम् तथा ६ मलिताः-उपद्रवं कुर्वाणा मानम्लानिमापादिताः कण्टका यत्र तद् मलितकण्टकम् । तथा ७ उद्धृताः स्वदेशत्याजनेन जीवितत्याजनेन वा कण्टका यत्र तत् उद्धृतकण्टकम् । तथा ८ न विद्यते प्रतिमल्लः कण्टको यत्र तद् अप्रतिमल्लकण्टकम् तथा ९ प्रत्यनीकाः राजानः शत्रवः ते अपहताः स्वावकाशमलभमानीकृता यत्र तत् अपहतशत्रु । तथा १० निहताः-रणाङ्गणे पातिताः शत्रवो यत्र तद् निहतशत्रु तथा ११ मलिताः-तद्गतसैन्यत्रासापादनतो मानम्लानिमापादिताः शत्रवो यत्र तत्

*-विशिष्टोपकारकारितया पा० ५ (लि० स० वि० व० १४८५) भा० । 8 भाषायाम् 'उकरडो' इति प्रसिद्धं मलनिक्षेपणस्थानम् । अस्य

[1]उद्धियसत्तुं [2]निज्जियसत्तुं [3]पराइयसत्तुं [4]ववगयदुब्भिक्खदोसमारि [5]भयविप्पमुक्कं [6]खेमं [7]सिवं [8]सुभिक्खं [9]पसंतडिंबडमरं रज्जं पसासेमाणे विहरइ।

'धारिणी देवी' वर्णनम्

[६] [तस्स णं सेयरण्णो] धारिणी [नामं] [3]देवी [होत्था [4]सुकुमालपाणिपादा [5]अहीणपडिपुण्णपंचिंदियसरीरा

मलितशत्रु। तथा १ स्वातन्त्र्यच्यावनेन स्वदेशच्यावनेन जीवितच्यावनेन वा उद्धृताः शत्रवो यत्र तत् उद्धृतशत्रु। एतदेव विशेषणद्वयेन व्याचष्टे–२ निर्जितशत्रु। ३ पराजितशत्रु। तथा ४ व्यपगतं दुर्भिक्षं दोषो मारिश्च यत्र तत् व्यपगतदुर्भिक्षदोषमारि तथा ५ भयेन स्वदेशोत्थेन परचक्रकृतेन वा विप्रमुक्तम्। अत एव ६ क्षेमं–निरुपद्रवम्। ७ शिवम्–शान्तम्। ८ सुभिक्षम् शोभना–शुभा भिक्षा दर्शनिनां दीनानाथादीनां च यत्र तत् सुभिक्षम्। तथा ९ प्रशान्तानि डिम्बानि–विघ्नाः डमराणि–राजकुमारादिकृतविड्वराः* यत्र तत् प्रशान्तडिम्बडमरम्।

[६] १ तस्य समस्तान्तःपुरप्रधाना भार्या सकलगुणधारिणी २ धारिणीनामा ३ देवी। 'जाव समोसरणं समत्तं' इति यावच्छब्दकरणाद् राजवर्णको देवीवर्णकः समवसरणं च औपपातिकानुसारेण तावद् वक्तव्यं ४ ×यावत् समवसरणं समाप्तम्। देवीवर्णके ४ सुकुमारौ पाणी पादौ च यस्याः सा सुकुमारपाणिपादा। तथा ५ अहीनानि–अन्यूनानि स्वरूपतः प्रतिपूर्णानि लक्षणतः पञ्चापीन्द्रियाणि

मूलप्रकृतिः सं० 'उत्कर' शब्दः समूहवाची। * विड्वरो वैराज्यम्–राज्यविरुद्धता। ×'यावत्' शब्देन यत् यत् सूचित तत् समग्रं विवरणकारकथनानुसारेण औपपातिकसूत्रपाठमनुसृत्य अत्र तत्तत्स्थाने मूले यथोचितं निक्षिप्तम्।

[१]लक्खण-वंजण-गुणोववेया [२]माण-उम्माण-पमाणपडिपुण्णसुजायसव्वंगसुंदरंगी [३]ससिसोमागारकंतपियदंसणा [४]सुरूवा [५]करयलपरिमियपसत्थतिवलिवलियमज्झा [६]कुंडलुल्लिहियगंडलेहा [७]कोमुइरयणियरविमलपडिपुण्णसो-

---

यस्मिन् तथाविधं शरीरं यस्याः सा अहीनप्रतिपूर्णपञ्चेन्द्रियशरीरा तथा १ लक्षणानि-स्वस्तिक-चक्रादीनि व्यञ्जनानि-मषी-तिलकादीनि गुणाः-सौभाग्यादयस्तैरुपपेता लक्षणव्यञ्जनगुणोपपेता । 'उप अप इत' इति शब्दत्रयस्थाने "पृषोदरादयः" [३-२-१५५ हैमश०] इति अपाऽकारस्य लोपे उपपेता इति द्रष्टव्यम् । तत्र २ मानं-जलद्रोणप्रमाणता, कथमिति चेत्, उच्यते, जलस्यातिभृते कुण्डे पुरुषे ५
स्त्रियां वा निवेशितायां यज्जलं निस्सरति तद्यदि द्रोणप्रमाणं भवति तदा स पुरुषः स्त्री वा मानप्राप्त उच्यते, तथा उन्मानं-अर्द्धभारप्रमाणता, सा चैवम्-तुलायामारोपितः पुरुषः स्त्री वा यद्यर्द्धभारं तुलति तदा स उन्मानप्राप्तोऽभिधीयते, प्रमाणं-स्वाङ्गुलेनाष्टोत्तरशतोच्छ्रितता, ततो मानोन्मानप्रमाणैः प्रतिपूर्णानि-अन्यूनानि सुजातानि-जन्मदोषरहितानि सर्वाणि अङ्गानि-शिरःप्रभृतीनि यानि तैः सुन्दराङ्गी मानोन्मानप्रमाणप्रतिपूर्णसुजातसर्वाङ्गसुन्दराङ्गी । तथा ३ शशिवत् सोमाकारम्-अरौद्राकारम् कान्तं-कमनीयम् प्रियं द्रष्टॄणामानन्दो-
त्पादकम् दर्शनं-रूपं यस्याः सा शशिसोमाकारकान्तप्रियदर्शना । अत एव ४ सुरूपा, तथा ५ करतलपरिमितो-मुष्टिग्राह्यः प्रशस्त- १०
लक्षणोपेतः त्रिवलीको-वलित्रयोपेतो रेखात्रयोपेतो वलिको-बलवान् मध्यो-मध्यभागो यस्याः सा करतलपरिमितप्रशस्तत्रिवलीकवलिकमध्या । ६ तथा कुण्डलाभ्यां उल्लिखिता-घृष्टा गण्डलेखा-कपोलविरचितमृगमदादिरेखा यस्याः सा कुण्डलोल्लिखितगण्डलेखा । ७ कौमुदी-कार्तिकी पौर्णमासी तस्यां रजनिकरः-चन्द्रमाः तद्वद् विमलं-निर्मलम् प्रतिपूर्णम् अन्यूनातिरिक्तमानम्

मवयणा [1]सिंगारागारचारुवेसा [2]संगयगय-हसिय-भणिय-चिट्ठिय-विलास-ललिय-संलावनिउणजुत्तोवयारकुसला [3]सुंदर-थण-जघण-वयण-कर-चरण-नयणलायण्णविलासकलिया *सेएण रण्णा सद्धिं अणुरत्ता अविरत्ता इट्ठे सद्द-फरिसे रस-रूव-गंधे पंचविहे माणुस्सए कामभोगे पच्चणुभवमाणा विहरइ]।

सौम्यम्-अरौद्राकारं वदनं यस्याः सा तथा। १ शृङ्गारस्य-रसविशेषस्य अगारमिव अगारम् अथवा शृङ्गारो-मण्डनभूषणाटोपस्तत्प्रधान आकारः-आकृतिर्यस्याः सा तथा, चारुः वेषो-नेपथ्यं यस्याः सा तथा-ततः कर्मधारयः-शृङ्गाराऽगा(ऽऽका)रचारुवेषा। तथा २ सङ्गता ये गत-हसित-भणित-चेष्टित- विलासाः यश्च निपुणो युक्तश्च स्वजन-परजनान् प्रति उपचारः तेषु कुशला संगतगतहसितभणितचेष्टितविलास--ललितसंलापनिपुणयुक्तोपचारकुशला, तत्र सङ्गतं नासङ्गतम् गतं यद् गुप्ततया गृहस्यैवान्तर्गमनं न तु बहिः स्वेच्छाचारितया, सङ्गतं हसितं यत् कपोलविकाशमात्रसूचितं न त्वट्टट्टहासादि। "हसियं कपोलकहियं" [ ] इति वचनात्। सङ्गतं भणितं यत् समागते प्रयोजने नर्मभणितिपरिहारेण विवक्षितार्थमात्रप्रतिपादनम्, सङ्गतं चेष्टितं यद् कुचजघनाद्यवयवाच्छादनपरतयोपवेशनशयनोत्थानादि, सङ्गतो विलासः-स्वकुलौचित्येन शृङ्गारादिकरणम्। तथा ३ सुन्दरैः स्तन-जघन-वदन-कर-चरण-नयनलावण्यविलासैः कलिता, अत्र विलासः-स्थानासनगमनादिरूपश्चेष्टाविशेषः। उक्तं च-"स्थानासनगमनानां हस्त-

* श्वेतेन राज्ञा सार्धम् अनुरक्ता अविरक्ता इष्टान् शब्द-स्पर्शान् रस-रूप-गन्धान् पञ्चविधान् +मानुषकान् -कामभोगान् प्रत्यनुभवन्ती विहरति। ∸ ललितसंलापः प्रतीतः अत एव विवरणकारेण न व्याख्यातः। * विवरणकारकथनानुसारेण 'श्वेतेन' इति।

+मनुष्यभोग्यान्। - श्रोत्र-नेत्रगम्यौ कामौ-शब्दः रूपं च। घ्राण-रसन-स्पर्शनगम्या भोगाः-गन्धः, स्वाद स्पर्शश्च।

महावीरः समागतः

[७] ⊖सामी समोसढे [ते णं काले णं ते णं समए णं समणे भगवं महावीरे आइगरे तित्थगरे सहसंबुद्धे पुरिसुत्तमे पुरिससीहे पुरिसवरपुंडरीए पुरिसवरगंधहत्थी अभयदए चक्खुदए मग्गदए सरणदए जीवदए दीवो ताणं सरणं गई पइट्ठा धम्मवरचाउरंतचक्कवट्टी अप्पडिहयवरनाणदंसणधरे वियट्टछउमे जिणे जावए तिण्णे तारए मुत्ते मोयए बुद्धे बोहए सव्वण्णू सव्वदरिसी सिवं अयलं अरुयं अणंतं अक्खयं अव्वाबाहं अपुणरावत्तिअं सिद्धिगइणामधेज्जं ठाणं संपाविउकामे अरहा जिणे केवली।

भ्रूनेत्रकर्मणां चैव। उत्पद्यते विशेषो यः श्लिष्टोऽसौ विलासः स्यात्" ॥ [ ]। अन्ये त्वाहुः—"विलासो नेत्रजो विकारः" [ ] तथा चोक्तम्—"हावो मुखविकारः स्यात् भावश्चित्तसमुद्भवः। विलासो नेत्रजो ज्ञेयो विभ्रमो भ्रूसमुद्भवः" ॥ [ ]

[७] समस्तोऽपि औपपातिकग्रन्थप्रसिद्धो भगवद्वर्णको वाच्यः, स चातिगरीयानिति न लिख्यते, केवलमौपपातिकग्रन्थादवसेयः* ।

⊖स्वामी समवसृतः—तस्मिन् काले तस्मिन् समये श्रमणः भगवान् महावीरः आदिकरः तीर्थकरः सहसंबुद्धः पुरुषोत्तमः पुरुषसिंहः पुरुषवरपुण्डरीकः पुरुषवरगन्धहस्ती अभयदयः चक्षुर्दयः मार्गदयः शरणदयः जीवदयः द्वीपः त्राणम् शरणम् गतिः प्रतिष्ठा धर्मवरचातुरन्तचक्रवर्ती अप्रतिहतवरज्ञानदर्शनधरः व्यावृत्तच्छद्मा जिनः जापकः तीर्णः तारकः मुक्तः मोचकः बुद्धः बोधकः सर्वज्ञः सर्वदर्शी शिवम् अचलम् अरुजम् अनन्तम् अक्षतम्

* विवरणकारसूचनानुसारेण समस्तोऽपि भगवद्वर्णकः औपपातिकग्रन्थाद् अत्र मूले उद्धृतः।

[८] 8सत्तहत्थुस्सेहे समचउरंससंठाणसंठिए वज्जरिसहनारायसंघयणे अणुलोमवाउवेगे कंकग्गहणी कवोयपरिणामे सउणिपोसपिट्ठंतरोरुपरिणए पउमुप्पलगंधसरिसनिस्सासंसुरभिवयणे छवी निरायंकउत्तमपसत्थअइसेयनिरुवमपले जल्लमल्लकलंकसेयरयदोसवज्जियसरीरनिरुवलेवे छायाउज्जोइयंगमंगे घणनिचियसुबद्धलक्खणुण्णयकूडागारनिभपिंडियग्गसिरए सामलिबोंडघणनिचियप्फोडियमिउविसयपसत्थसुहुमलक्खणसुगंधसुंदरभुयमोयगभिंगनेलकज्जलपहट्ठभमरगणनिद्धनिकुरंबनिचियकुंचियपयाहिणावत्तमुद्धसिरए दालिमपुप्फप्पगासतवणिज्जसरिसनिम्मलसुणिद्धकेसंतकेसभूमी छत्तागारुत्तिमंगदेसे णिव्वणसमलट्ठमट्ठचंदद्धसमणिडाले उडुवइपडिपुण्णसोमवयणे अल्लीणपमाणजुत्तसवणे सुस्सवणे पीणमंसलकवोलदेसभाए आणामियचावरुइलकिण्हब्भ-

अव्याबाधम् अपुनरावृत्तिकम् सिद्धिगतिनामधेयं स्थानं सम्प्राप्तुकामः अर्हन् जिनः केवली ।

8सप्तहस्तोत्सेधः समचतुरस्रसंस्थानसंस्थितः वज्रऋषभनाराचसंहननः अनुलोमवायुवेगः =कङ्कग्रहणिः ×कपोतपरिणामः ≥ शकुनिपोस–पृष्ठान्तरोरुपरिणतः पद्मोत्पलगन्धसदृशनिःश्वाससुरभिवदनः छविमान् निरातङ्कउत्तमप्रशस्तअतिश्वेतनिरुपमपलः ∸ जल्ल–मल्लकलङ्कस्वेदरजोदोषवर्जितशरीरनिरुपलेपः छायोद्योतिताङ्गाङ्गः घननिचितसुबद्धलक्षणोन्नतकूटाकारनिभपिण्डिताग्रशिरस्कः शाल्मलिबोण्ड○घननिचितस्फोटितमृदुविशदप्रशस्तसूक्ष्मलक्षणसुगन्धसुन्दरभुजमोचक–भृङ्ग–नैल–कज्जल–प्रहृष्टभ्रमरगणस्निग्धनिकुरम्बनिचितकुञ्चितप्रदक्षिणावर्त्तमूर्धशिरोजः दाडिमपुष्पप्रकाशतपनीयसदृशनिर्मलसुस्निग्धकेशान्तकेशभूमिः छत्राकारोत्तमाङ्गदेशः निर्व्रणसमलष्टमृष्टचन्द्रार्धसमललाटः उडुपतिप्रतिपूर्णसोमवदनः आलीनप्रमाणयुक्तश्रवणः सुश्रवणः पीनमांसलकपोलदेशभागः

= कङ्कपक्षिवद् ग्रहणी गुदाशयो यस्य । × कपोतस्य जठराग्निः पाषाणलवानपि जरयति इति श्रुतिः । ≥ 'पोस' अपानदेशः—यस्य अपानदेशः शकुनेरिव निर्लेपः । ∸ याति च लगति च जल्लः, स्वल्पप्रयत्नापनेयो मल्लो–मलः । ○ बोंड च फलम् ।

॥३२॥ राइतणुकसिणणिद्धभमुहे अवदालियपुंडरीयणयणे कोयासियधवलपत्तलच्छे गरुलाययउज्जुतुंगणासे उवचियसिलप्पवालबिंबफलसण्णिभाहरोट्ठे 'पंडुरससिसयलविमलणिम्मलसंखगोक्खीरफेणकुंददगरयमुणालियाधवलदंतसेढी अखंडदंते अप्फुडियदंते अविरलदंते सुणिद्धदंते सुजायदंते एगदंतसेढी विव अणेगदंते हुयवहणिद्धंतधोयतत्ततवणिज्जरत्ततलतालुजीहे अवट्ठियसुविभत्तचित्तमंसू मंसलसंठियपसत्थसद्दूलविउलहणुए चउरंगुलसुप्पमाणकंबुवरसरिसग्गीवे वरमहिसवराहसीहसद्दूलउसभनागवरपडिपुण्णविउलक्खंधे जुगसण्णिभपीणरइयपीवरपउट्ठसुसंठियसुसिलिट्ठविसिट्ठघणथिरसुबद्धसंधिपुरवरफलिहवट्टियभुए भुयगीसरविउलभोगआयाणपलिहउच्छूढदीहबाहू रत्ततलोवइयमउयमंसलजायलक्खणपसत्थअच्छिद्दजालपाणी पीवरकोमलवरंगुली आयंबतंबतलिणसुइरुइलणिद्धनखे चंदपाणिलेहे संखपाणिलेहे चक्कपाणिलेहे दिसासोत्थियपाणिलेहे चंद–सूर–संख–

आनामितचापरुचिरकृष्णाभ्रराजितनुकृष्णस्निग्धभ्रूः अवदारितपुण्डरीकनयन. विकसितधवलपत्रलाक्षः गरुडायतऋजुतुङ्गनासः उपचितशिलाप्रवालबिम्बफलसन्निभाधरोष्ठः पाण्डुरशशिसकलविमलनिर्मलशङ्खगोक्षीरफेनकुन्ददकरजोमृणालिकाधवलदन्तश्रेणि' अखण्डदन्त' अस्फुटितदन्तः अविरलदन्तः सुस्निग्धदन्तः सुजातदन्तः एकदन्तश्रेणिः इव अनेकदन्तः हुतवहनिर्ध्मातधौततप्ततपनीयरक्ततलताल्जिह्वः अवस्थितसुविभक्तचित्रश्मश्रुः मांसलसंस्थितप्रशस्तशार्दूलविपुलहनुकः चतुरङ्गुलसुप्रमाणकम्बुवरसदृशग्रीवः वरमहिषवराहसिंहशार्दूलवृषभनागवरप्रतिपूर्णविपुलस्कन्धः युगसन्निभपीनरतिदपीवरप्रकोष्ठसुसंस्थितसुश्लिष्टविशिष्टघनस्थिरसुबद्धसंधिपुरवरपरिघवर्तितभुजः भुजगेश्वरविपुलभोगआदानपरिघउत्क्षिप्तदीर्घबाहुः रक्ततलोपचितमृदुकमांसलजातलक्षणप्रशस्तअच्छिद्रजालपाणिः पीवरकोमलवराङ्गुलिः आताम्रताम्र×तलिनशुचिरुचिरस्निग्धनखः चन्द्रपाणिलेखः शङ्खपाणिलेखः चक्रपाणिलेखः दिशास्वस्तिकपाणिलेखः चन्द्र–सूर्य–शङ्ख–चक्र–

× तलिन सूक्ष्मम् ।

चक्क-दिसासोत्थियपाणिलेहे कणगसिलायलुज्जलपसत्थसमतलउवचियवित्थिण्णपिहुलवच्छे सिरिवच्छंकियवच्छे अकरंडुयकणगरुययनिम्मलसुजायनिरुवहयदेहधारी संनयपासे संगतपासे सुंदरपासे सुजायपासे मियमाइयपीणरइयपासे उज्जुयसमसहियजच्चतणुकसिणणिद्धआइज्जलडहरमणिज्जरोमराई झसविहगसुजायपीणकुच्छी झसोयरे सुइकरणे पउमवियडणाभे गंगावत्तगपयाहिणावत्ततरंगभंगुररविकिरणतरुणबोहियअकोसायंतपउमगंभीरवियडणाभे साहयसोणंदमुसलदप्पणणिगरियवरकणगच्छरुसरिसवरवइरवलियमज्झे पमुइयवरतुरगसीहवरवट्टियकडी वरतुरगसुजायगुज्झदेसे आइण्णहउ व्व णिरुवलेवे वरवारणतुल्लविक्कमविलसियगई गयससणसुजायसन्निभोरू समुग्गनिमग्गगूढजाणू एणीकुरुविंदावत्तवट्टाणुपुव्वजंघे संठियसुसिलिट्ठगूढगुप्फे सुप्पइट्ठिय-

दिशास्वस्तिकपाणिलेखः कनकशिलातलोज्ज्वलप्रशस्तसमतलउपचितविस्तीर्णपृथुलवक्षाः श्रीवत्साङ्कितवक्षाः +अकरण्डुककनक*रुचकनिर्मलसुजातनिरुपहतदेहधारी संनतपार्श्वः संगतपार्श्वः सुन्दरपार्श्वः सुजातपार्श्वः =मितमात्रिकपीनरचितपार्श्वः ऋजुकसमसहितजात्यतनुकृष्णस्निग्धआदेयलडह×रमणीयरोमराजिः झषविहगसुजातपीनकुक्षिः झषोदरः शुचिकरणः पद्मविकटनाभः गङ्गावर्तकप्रदक्षिणावर्ततरङ्गभङ्गुररविकिरणतरुणबोधितविकासमानपद्मगम्भीरविकटनाभः सहतसोणंद○मुसलदर्पण-निगरियवरकनकत्सरुसदृशवरवज्रवलितमध्यः प्रमुदितवरतुरगसिंहवरवर्तितकटिः वरतुरगसुजातगुह्यदेशः आजन्यहय इव निरुपलेपः वरवारणतुल्यविक्रमविलसितगतिः गजश्वसनसुजातसंनिभोरुः समुद्गनिमग्नगूढजानुः एणीकुरुविन्दावर्तवृत्तानुपूर्वजङ्घः सस्थितसुश्लिष्टगूढगुल्फः सुप्रति-

+ अकरण्डुकम्-मांसलतया अनुपलक्ष्यमाणपृष्ठवशास्थिकम्। * रुचकः रुचिः। = मितमात्रिकौ उचितपरिमाणयुक्तौ। × लडह लावण्ययुक्तम्।
○ सोणंद त्रिकाष्ठिका इत्याकारो घटाधारः। ∸ निगरियं सारीकृतम्।

कुम्मचारुचलणे अणुपुव्वसुसंहयंगुलीए उण्णयतणुतंबणिद्धणक्खे रत्तुप्पलपत्तमउयसुकुमालकोमलतले नगनगरमगरसागरचक्कंकवरंगमंगलंकियचलणे विसिट्ठरूवे हुयवहनिद्धूमजलियतडितडियतरुणरविकिरणसरिसतेए अट्ठसहस्सवरपुरिसलक्खणधरे× ।

[९]*अणासवे अममे अकिंचणे छिन्नसोए निरुवलेवे ववगयपेमरागदोसमोहे निग्गंथस्स पवयणस्स देसए सत्थनायगे पइट्ठावए समणगणवई समणगविंदपरिअट्टए चउत्तीसबुद्धवयणाइसेससंपत्ते[१] पणतीससच्चवयणातिसेससंपत्ते आगासगएणं चक्केणं आगासगएणं छत्तेणं आगासियाहिं चामराहिं आगासफालिहमएणं सपायपीढेणं

[९] १ चतुस्त्रिंशद् बुद्धानाम्-भगवतामर्हतां वचनप्रमुखाः "सर्वस्वभाषानुगतं वचनं धर्मावबोधकरम्"[ ] इत्यादिना उक्तस्वरूपा ये अतिशेषा-अतिशयाः तान् प्राप्तः-चतुस्त्रिंशद्बुद्धवचनातिशेषसम्प्राप्तः । इह वचनातिशेषस्योपादानमत्यन्तोपकारितया प्राधान्य-

छितकूर्मचारुचरणः अनुपूर्वसुसंहताङ्गुलिकः उन्नततनुताम्रस्निग्धनखः रक्तोत्पलपत्रमृदुकसुकुमालकोमलतलः नगनगरमकरसागरचक्राङ्कवराङ्गमङ्गलाङ्कितचरणः विशिष्टरूपः हुतवहनिर्धूमज्वलित8तटितडित्तरुणरविकिरणसदृशतेजाः अष्टसहस्रवरपुरुषलक्षणधरः ।

*अनास्रवः अममः अकिञ्चन छिन्नस्रोता निरुपलेपः व्यपगतप्रेमरागद्वेषमोहः निर्ग्रन्थस्य प्रवचनस्य देशक शास्तृनायकः प्रतिष्ठापकः श्रमणगणपतिः श्रमणकवृन्दपरिवर्तक चतुस्त्रिंशद्बुद्धवचनातिशेषसप्राप्तः पञ्चत्रिंशत्सत्यवचनातिशेषसंप्राप्तः आकाशगतेन चक्रेण आकाशगतेन छत्रेण

× अय च समस्तोऽपि शरीरवर्णक. प्रश्नव्याकरणसूत्रे देवकुरु-उत्तरकुरुनिवासिना शरीरवर्णके प्रायोऽक्षरशः समुपलभ्यते ।

8 पतन्त्या विद्युतः 'तड् तड्' इति जायमानस्य ध्वनेः अनुकरणम् 'तटि' इति ।

ख्यापनार्थम्, अन्यथा देहवैमल्यादयस्ते पठ्यन्ते। तथा च–“*देहं विमलसुगन्धं आमयपस्सेयवज्जियं अरयं। रुहिरं गोक्खीराभं निव्विस्सं पंडुरं मंसं”॥ [ ] इत्यादि । २ पञ्चत्रिंशत् ये सत्यवचनस्यातिशेषा–+अतिशयास्तान् सम्प्राप्तः पञ्चत्रिंशद्वचनातिशेषसम्प्राप्तः। ते चामी सत्य+वचनातिशेषाः– १ संस्कारवत्त्वम् २ उदात्तत्वम् ३ उपचारोपेतत्वम् ४ गम्भीरशब्दत्वम् ५ अनुनादित्वम् ६ दक्षिणत्वम् ७ उपनीतरागत्वम् ८ महार्थत्वम् ९ अव्याहतपौर्वापर्यत्वम् १० शिष्टत्वम् ११ असन्दिग्धत्वम् १२ अपहतान्योत्तरत्वम् १३ हृदयग्राहित्वम् १४ देशकालाव्यतीतत्वम् १५ तत्त्वानुरूपत्वम् १६ अप्रकीर्णप्रसृतत्वम् १७ अन्योऽन्यप्रगृहीतत्वम् १८ अभिजातत्वम् १९ अतिस्निग्धमधुरत्वम् २० अपरमर्मवेधित्वम् २१ अर्थधर्म्माभ्यासानपेतत्वम् २२ उदारत्वम् २३ परनिन्दात्मोत्कर्षविप्रमुक्तत्वम् २४ उपगतश्लाघत्वम् २५ अपनीतत्वम् २६ उत्पादिताविच्छिन्नकौतूहलत्वम् २७ अद्भुतत्वम् २८ अनतिविलम्बित्वम् २९ विभ्रमविक्षेपकिलिकिञ्चितादिवियुक्तत्वम् ३० अनेकजातिसंश्रयाद् विचित्रत्वम् ३१ आहितविशेषत्वम् ३२ साकारत्वम् ३३ सत्त्वपरिगृहीतत्वम् ३४ अपरिखेदितत्वम् ३५ अव्युच्छेदितत्वं चेति ।

तत्र १ संस्कारवत्त्वं संस्कृतादिलक्षणयुक्तत्वम् २ उदात्तत्वं उच्चैर्वृत्तिता ३ उपचारोपेतत्वम्–अग्राम्यता ४ गम्भीरशब्दत्वं मेघस्येव ५ अनुनादिता प्रतिरवोपेतत्वम् ६ दक्षिणत्वं सरलता ७ उपनीतरागत्वं–उत्पादिता श्रोतृजने स्वविपयबहुमानता। एते सप्त शब्दापेक्षा अतिशयाः। अत ऊर्ध्वं तु अर्थाश्रयाः–तत्र ८ महार्थत्वं–परिपुष्टार्थाभिधायिता ९ अव्याहतपौर्वापर्यत्वं–पूर्वापरवाक्याविरोधः १० शिष्टत्वं

---

* देहो विमलसुगन्धः आमय–प्रस्वेदवर्जितः अरजाः । रुधिरं गोक्षीराभम् निर्विस्रं पाण्डुर मांसम् ॥

\+ “सत्यवचनातिशया आगमे न दृष्टाः। एते तु ग्रन्थान्तरदृष्टाः संभाविताः”–समवायाङ्गसूत्रटीकाया श्रीअभयदेवसूरयः पृ० ६३ ।

वक्तुः शिष्टत्वसूचनात् असन्दिग्धत्वं परिस्फुटार्थप्रतिपादनात् [१२] अपहृतान्योत्तरत्वं–परदूषणाविषयता [१३] हृदयग्राहित्वं–दुर्गमस्याप्यर्थस्य परहृदये प्रवेशकरणम् [१४] देशकालाव्यतीतत्वं प्रस्तावोचितता [१५] तत्त्वानुरूपत्वं–विवक्षितवस्तुस्वरूपानुसारिता [१६] अप्रकीर्णप्रसृतत्वं–संबन्धाधिकारपरिमितता [१७] अन्योऽन्यप्रगृहीतत्वं–पदानां वाक्यानां वा परस्परसापेक्षता [१८] अभिजातत्वं–यथाविवक्षितार्थाभिधानशीलता [१९] अतिस्निग्धमधुरत्वं–बुभुक्षितस्य घृतगुडादिवत् परमसुखकारिता [२०] अपरमर्मवेधित्वं–परमर्मानुद्घट्टनशीलता [२१] अर्थधर्माभ्यासानपेतत्वं–अर्थधर्मप्रतिबद्धता [२२] उदारत्वं–अतिविशिष्टगुम्फगुणयुक्तता अतुच्छार्थप्रतिपादकता वा [२३] परनिन्दात्मोत्कर्षविप्रमुक्तत्वं प्रतीतम् [२४] उपगतश्लाघत्वं–उक्तगुणयोगतः प्राप्तश्लाघता [२५] अपनीतत्वं–कारककालवचनलिङ्गादिव्यत्ययरूपवचनदोषापेतता [२६] उत्पादिताविच्छिन्नकुतूहलत्वं–श्रोतॄणां स्वविषये उत्पादितं–जनितमविच्छिन्नं कौतूहलं–कौतुकं येन तत् तथा तद्भावस्तत्त्वम् श्रोतृषु स्वविषयाद्भुतविस्मयकारितेति भावः [२७] अद्भुतत्वम् [२८] अनतिविलम्बित्वम् च प्रतीतम् [२९] विभ्रमविक्षेपकिलिकिञ्चितादिवियुक्तत्वमिति–विभ्रमो–वक्तुर्भ्रान्तमनस्कता विक्षेपो–वक्तुरेवाभिधेयार्थं प्रत्यनासक्तता किलिकिञ्चितं–रोषभयलोभादिभावानां युगपदसकृत्करणं आदिशब्दाद् मनोदोषान्तरपरिग्रहः तैर्विमुक्तं यत् तत् तथा तद्भावस्तत्त्वम् [३०] अनेकजातिसंश्रयाद् विचित्रत्वं–सर्वभाषानुयायितया चित्ररूपता [३१] आहितविशेषत्वं–शेषपुरुषवचनापेक्षया शिष्येषूत्पादितमतिविशेषता [३२] साकारत्वं–विच्छिन्नपदवाक्यता [३३] सत्त्वपरिगृहीतत्वम्–ओजस्विता [३४] अपरिखेदित्वम्–अनायाससंभवात् [३५] अव्युच्छेदितत्वं–विवक्षितार्थसम्यक्सिद्धिं यावद् अविच्छिन्नवचनप्रमेयता इति।

२ आकाशस्फटिकं–यद् आकाशवत् अतिस्वच्छं स्फटिकं तन्मयेन।

सीहासणेणं पुरतो [1]धम्मज्झएणं पगढिज्जमाणेणं|चउद्दसहिं समणसाहस्सीहिं छत्तीसाए अज्जियासाहस्सीहिं सद्धिं संपरिवुडे [2]पुव्वाणुपुव्विं [3]चरमाणे [4]गामाणुगामं [5]दुइज्जमाणे [6]सुहंसुहेणं [7]विहरमाणे [8]जेणेव आमलकप्पा नयरी [9]जेणेव वणसंडे ०जेणेव असोगवरपायवे. जेणेव पुढविसिलापट्टए [11]तेणेव [10]उवागच्छइ [12]उवागच्छित्ता [13]अहापडिरूवं

१ धर्मचक्रवर्तित्वसूचकेन केतुना महेन्द्रध्वजेनेत्यर्थः, तथा २ पूर्वानुपूर्व्या क्रमेणेत्यर्थः ३ चरन्–सञ्चरन्, एतदेवाह ४ ग्रामश्च अनुग्रामश्च–विवक्षितग्रामादनन्तरं ग्रामो ग्रामानुग्रामः तम् ५ द्रवन्–गच्छन्–एकस्मादनन्तरं ग्राममनुल्लङ्घयन् इत्यर्थः–अनेनाप्रतिबद्धविहारिता ख्यापिता। तत्राप्यौत्सुक्याभावमाह–६ सुखंसुखेन–शरीरखेदाभावेन × संयमाबाध्यविहारेण * च= ७; ग्रामादिषु विहरन्–अवतिष्ठमानः ८ +'जेणेव' यस्मिन्नेव देशे आमलकल्पा नगरी ९ यस्मिन्नेव प्रदेशे च वनखण्डः १० यस्मिन्नेव देशे सोऽनन्तरोक्तस्वरूपः शिलापट्टकः। ११ तस्मिन्नेव देशे उपागच्छति, १२ उपागत्य च; १३ यथाप्रतिरूपं यथोचितं मुनिजनस्य

आकाशिकाभिः चामराभिः आकाशस्फाटिकमयेन सपादपीठेन:सिंहासनेन पुरतः धर्मध्वजेन प्रकृष्यमाणेन चतुर्दशभिः श्रमणसहस्रैः षट्त्रिंशद्भिः आर्यिकासहस्रैः सार्धं संपरिवृतः पूर्वानुपूर्वं चरन् ग्रामानुग्रामं द्रवन् सुखंसुखेन विहरन् येनैव *आमलकल्पा नगरी येनैव वनखण्डः येनैव अशो-

० यस्मिन्नेव अशोकवरपादपः। × संयमः अबाध्यः यस्मिन् विहारे–विचरणे–तेन। * संयमाबाध्यविहरेण–पा०४। सयमबाधाविरहेण–भा०२। = वा–पा० ४। + 'जेणेव' इति "प्राकृतत्वात् सप्तम्यर्थे तृतीया"–विवरणकारः। यथा वा संस्कृतभाषायां 'पूर्वेण' इति 'एन' प्रत्ययान्तं सविभक्तिकप्रतिरूपकमव्यय 'पूर्वस्मिन्' अर्थे प्रयुज्यते तथा 'येन–जेण' इति अव्ययं 'यस्मिन्' अर्थे प्राकृते व्यवह्रियमाणं बोध्यम्। तथैव 'तेण' इत्यस्यापि निष्पत्तिर्ज्ञेया। * विवरणकारकथनानुसारेण 'आमलकल्पा' इति।

उग्गहं उगिण्हइ उग्गिण्हित्ता असोगवरपायवस्स अहे पुढविसिलापट्टगंसि पुरत्थाभिमुहे संपलिअंकनिसन्ने संजमेणं तवसा अप्पाणं भावेमाणे विहरति]

[१०] परिसा निग्गया जाव राया पज्जुवासइ [तए णं आमलकप्पानयरीए सिंघाडग-तिय-चउक्क-चच्चर-चउम्मुह-महापहेसु बहुजणो अण्णमण्णं एवं आइक्खइ एवं भासेइ एवं पण्णवेइ एवं परूवेइ-एवं खलु देवाणु-

---

१ अवग्रहम्-आवासम् अनुज्ञापनापूर्वकम् २ अवगृह्णाति ३ अवग्रहश्च अशोकवरपादपस्य ४ अधः ५ पृथिवीशिलापट्टके ६ पूर्वाभिमुखः-तीर्थकृतो हि भगवन्तः सदा समवसरणे पृथिवीशिलापट्टके वा देशनायै -पूर्वाभिमुखा अवतिष्ठन्ते-७ संपर्यङ्कनिषण्णः ८ संयमेन तपसा चात्मानं भावयन् ९ विहरति आस्ते। ततः पर्षन्निर्गमो + वाच्यः।

वरपादपः येनैव पृथिवीशिलापट्टकः तेनैव उपागच्छति उपागम्य यथाप्रतिरूपम् अवग्रहम् अवगृह्य अशोकवरपादपस्य अधः पृथिवीशिलापट्टके पौरस्त्याभिमुखः संपल्यङ्कनिषण्णः संयमेन तपसा आत्मानम् भावयमानः विहरति ।

(१०) पर्षद् निर्गता यावत् राजा पर्युपास्ते ततः आमलकल्पानगर्याम् १ शृङ्गाटक-त्रिक-चतुष्क-चत्वर-चतुर्मुख-महापथेषु बहुजनः अन्योन्यम्

— "उत्तरदिक् पूर्वदिक् च लोके पूज्या, ततस्तस्याः पृष्ठप्रदाने लोकमध्येऽवर्णवादो भवति" इत्यादि-सनिर्युक्ति-भाष्य-वृत्तिकबृहत्कल्पसूत्र पृ० १३२ गा० ४५६-४५। + अयं च निर्गमः औपपातिकसूत्रमाश्रित्य अत्र मूले संयोजितः। १ शृङ्गाटकम्—शृङ्गाटकाभिधानफलविशेषाकारं स्थानम्-त्रिकोणम्। त्रिकम्-यत्र स्थाने रथ्यात्रयमीलकः। चतुष्कम्-रथ्याचतुष्कमीलकः। चत्वरम्-यत्र बहवो मार्गा मिलन्ति। चतुर्मुखम्-तथाविधदेवकुलादि। महापथो राजमार्गः।

दिपया ! समणे भगवं महावीरे जाव आगासगएणं छत्तेणं जाव [पृ० ३० पं० १ पृ० ३८ पं० २] संजमेणं तवसा अप्पाणं भावेमाणे विहरति, तं महाफलं खलु देवाणुप्पियाणं तहारूवाणं अरहंताणं नाम-गोयस्स वि सवणयाए किमंग पुण अभिगमणवंदणनमंसणपडिपुच्छणपज्जुवासणयाए ? तं सेयं खलु एगस्स वि आरियस्स धम्मियस्स सुवयणस्स सवणयाए किमंग पुण विउलस्स अट्ठस्स गहणयाए ? तं गच्छामो णं देवाणुप्पिया ! समणं भगवं महावीरं वंदामो णमंसामो सक्कारेमो सम्माणेमो कल्लाणं मंगलं देवयं चेइयं पज्जुवासेमो, एयं णं इहभवे परभवे य हियाए सुहाए खमाए निस्सेयसाए आणुगामियत्ताए भविस्सइ, तए णं आमलकप्पाए नयरीए

'तए णं आमलकप्पाए नयरीए बहवे उग्गा भोगा' इत्यादि औपपातिक * ग्रन्थोक्तं सर्वमवसातव्यं यावत् समग्राऽपि राजप्रभृतिका परिषत् पर्युपासीना अवतिष्ठते।

एवम् आख्याति एवं भाषते एवं प्रज्ञापयति एवं प्ररूपयति-एवं खलु देवानुप्रियाः ! श्रमणो भगवान् महावीरः यावत् आकाशगतेन छत्रेण यावत् संयमेन तपसा आत्मानं भावयमानः विहरति, तत् महाफलं खलु देवानुप्रियाणा तथारूपाणाम् अर्हता नामगोत्रस्यापि श्रवणतया किमङ्ग पुनः अभिगमन-वन्दन-नमस्यन-प्रतिप्रच्छन-पर्युपासनतया ? तत् श्रेयः खलु एकस्यापि आर्यस्य धार्मिकस्य सुवचनस्य श्रवणतया किमङ्ग पुनः विपुलस्य अर्थस्य ग्रहणतया ? तद् गच्छामः देवानुप्रियाः ! श्रमणं भगवन्तं महावीरं वन्दामहे नमस्यामः सत्कारयामः सम्मानयामः कल्याणं मङ्गलं देवता चैत्यं पर्युपास्महे, एतत् तद् इहभवे परभवे च हिताय सुखाय २ क्षमाय निःश्रेयसाय आनुगामिकतया भविष्यति, ततः आमलकल्पायाः नगर्याः

* औपपातिकग्रन्थोक्तमेतत् सर्वं तं ग्रन्थमाश्रित्य मूले सन्निवेशितम्। २ क्षमाय संगतत्वाय।

बहवे उग्गा उग्गपुत्ता भोगा भोगपुत्ता राइण्णा राइण्णपुत्ता खत्तिया खत्तियपुत्ता भडा भडपुत्ता जोहा जोहपुत्ता पसत्थारो मल्लई मल्लइपुत्ता लेच्छई लेच्छइपुत्ता अण्णे य बहवे राईसरतलवरमाडंबियकोडुंबिय-इब्भसेट्ठिसेणावइसत्थवाहप्पभितयो अप्पेगइया वंदणवत्तियं अप्पेगइया पूयणवत्तियं एवं सक्कारवत्तियं सम्माणवत्तियं दंसणवत्तियं कोऊहलवत्तियं, अप्पेगइया अट्ठविणिच्छयहेउं-अस्सुयाइं सुणेस्सामो सुयाइं निस्संकियाइं करिस्सामो, अप्पेगइया अट्ठाइं हेऊइं कारणाइं वागरणाइं पुच्छिस्सामो, अप्पेगइया सव्वओ समंता मुंडे भवित्ता

बहवः ३ उग्राः उग्रपुत्राः भोगाः भोगपुत्राः राजन्याः राजन्यपुत्राः क्षत्रियाः क्षत्रियपुत्राः भटाः भटपुत्राः योधाः योधपुत्राः प्रशास्तारः मल्लकिनः मल्लकिपुत्राः लिच्छविनः लिच्छविपुत्राः अन्ये च बहवः ४ राज–ईश्वर–तलवर–माडम्बिक–कौटुम्बिक–इभ्य–श्रेष्ठि–सेनापति–सार्थवाहप्रभृतयः ५ अप्येककाः वन्दनवृत्तिकम् अप्येककाः पूजनवृत्तिकम् एवं सत्कारवृत्तिकम् सम्मानवृत्तिकम् दर्शनवृत्तिकम् कुतूहलवृत्तिकम्, अप्येककाः अर्थविनिश्चयहेतुम्–अश्रुतानि श्रोष्यामः श्रुतानि निःशङ्कितानि करिष्यामः, अप्येककाः अर्थान् हेतून् कारणानि व्याकरणानि प्रक्ष्यामः, अप्येककाः सर्वतः समन्तात् मुण्डा

३ उग्र–भोग–राज न्य–क्षत्रिय–भट–योध–प्रशास्तृ–मल्लकि–लिच्छविशब्दा विशिष्टराजवंशसूचकाः। ४ राजा–माण्डलिकः। ईश्वरः युवराजः। तलवरः परितुष्टनरपतिप्रदत्तपट्टबन्धविभूषितो राजस्थानीयः। माण्डविको मण्डपाधिपः। कौटुम्बिकः- कतिपयकुटुम्बप्रभुः। इभ्यः यद्द्रव्यनिचयाच्छन्नो महेभो न दृश्यते। श्रेष्ठी श्रीदेवतामुद्रायुक्तसुवर्णपट्टविभूषितोत्तमाङ्गः। सेनापतिः नृपतिनियुक्तश्चतुरङ्गसेनापतिः। सार्थवाहः सार्थनायकः। ५ अपि एकका:–केचन।

अगाराओ अणगारियं पव्वइस्सामो, पंचाणुव्वइयं सत्तसिक्खावइयं दुवालसविहं गिहिधम्मं पडिवज्जिस्सामो, अप्पेगइया जिणभत्तिरागेणं अप्पेगइया 'जीयमेयं' ति कट्टु ण्हाया कयबलिकम्मा कयकोउयमंगलपायच्छित्ता सिरसा कंठे मालकडा आविद्धमणिसुवण्णा कप्पियहार-अद्धहार-तिसर-पालंब-पलंबमाणकडिसुत्तयकयसोहाभरणा पवरवत्थपरिहिया चंदणोलित्तगायसरीरा, अप्पेगइया हयगया एवं गयगया रहगया सिबियागया संदमाणियागया अप्पेगइया पायविहारचारेणं पुरिसवग्गुरापरिक्खित्ता महया उक्किट्ठसीहणायबोलकलकलरवेणं पक्खुब्भियमहासमुद्दरवभूयं पिव करेमाणा आमलकप्पाए नयरीए मज्झंमज्झेणं णिग्गच्छन्ति णिग्गच्छित्ता जेणेव अंबसालवणे चेइए तेणेव उवागच्छन्ति उवागच्छित्ता समणस्स

भूत्वा अगाराद् अनगारिकं प्रव्रजिष्यामः, पञ्चानुव्रतिकं सप्तशिक्षाव्रतिकं द्वादशविधं गृहिधर्मं प्रतिपत्स्यामहे, अप्येकका: जिनभक्तिरागेण, अप्येकका: ६ 'जीतम् एतत्' इति कृत्वा स्नाता: कृतबलिकर्माणः कृतकौतुकमङ्गलप्रायश्चित्ता: शिरसा कण्ठे कृतमाला: आविद्धमणिसुवर्णा: कल्पितहार-अर्धहार-त्रिसर-प्रालम्ब-प्रलम्बमानकटिसूत्रककृतशोभाभरणाः परिहितप्रवरवस्त्राः चन्दनावलिप्तगात्रशरीरा:, अप्येकका: हयगता: एवम् गजगता: रथगता: शिबिकागता: स्यन्दमानिकागता:, अप्येकका: पादविहारचारेण पुरुषवागुरापरिक्षिप्ताः महता उत्कृष्टसिंहनाद ७ बोलकलकलरवेण प्रक्षुब्धमहासमुद्ररवभूतमिव कुर्वन्त: आमलकल्पायाः नगर्याः ८ मध्यंमध्येन निर्गच्छन्ति, निर्गम्य येनैव आम्रशालवनं चैत्यम् तेनैव उपागच्छन्ति उपागम्य श्रमणस्य

६ जीतम् आचार:-प्रथा-परम्परा ७ बोल: अस्पष्टशब्दः। कलकल: स्पष्टशब्दः। ८ "मध्यंमध्येन इत्यर्थः। 'गृहंगृहेण' 'मध्यंमध्येन' 'पदपदेन' 'सुखंसुखेन' इत्यादयः शब्दा: चिरतनव्याकरणेषु सुसाधवः प्रतिपादिता इति नायम् अपप्रयोग:"—श्रीमलयगिरिकृतं रायपसेणइयविवरणम्।

भगवओ महावीरस्स अदूरसामन्ते छत्तादीए तित्थयराइसेसे पासन्ति पासित्ता जाण-वाहणाइं ठवेंति ठवित्ता जाण-वाहणेहिंतो पचोरुहन्ति पचोरुहित्ता जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव उवागच्छन्ति उवागच्छित्ता समणं भगवं महावीरं तिक्खुत्तो आयाहिणपयाहिणं करेंति करित्ता वंदंति णमंसंति वंदित्ता णमंसित्ता णच्चासण्णे णाइदूरे सुस्सूसमाणा णमंसमाणा अभिमुहा विणएणं पञ्जलिउडा पज्जुवासंति]

४[तए णं से सेए राया नयणमालासहस्सेहिं पेच्छिज्जमाणे पेच्छिज्जमाणे जाव सा णं धारिणी देवी जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव उवागच्छंति उवागच्छित्ता जाव समणं भगवं महावीरं तिक्खुत्तो आयाहिणपयाहिणं करेंति वन्दंति णमंसंति सेअरायं पुरओ कट्टु जाव विणएणं पञ्जलिकडाओ पज्जुवासंति]

-[तए णं समणे भगवं महावीरे सेअस्स रण्णो धारिणीए देवीए तीसे य महइमहालियाए परिसाए जाव

भगवतो महावीरस्य अदूरसामन्ते छत्रादिकान् तीर्थकरातिशेषान् पश्यन्ति दृष्ट्वा यान-वाहनानि स्थापयन्ति स्थापयित्वा यान-वाहनेभ्यः प्रत्यवरोहन्ति प्रत्यवरुह्य येनैव श्रमणो भगवान् महावीरः तेनैव उपागच्छन्ति उपागम्य श्रमणं भगवन्त महावीरं १त्रिकृत्वः आदक्षिणप्रदक्षिणं कुर्वन्ति कृत्वा वन्दन्ते नमस्यन्ति वन्दित्वा नमस्यित्वा नात्यासन्ने नातिदूरे शुश्रूषमाणाः नमस्यमानाः अभिमुखाः विनयेन प्राञ्जलिपुटाः पर्युपासते । ४ततः स श्वेतो राजा नयनमालासहस्रैः प्रेक्ष्यमाणः प्रेक्ष्यमाणः यावत् सा धारिणी देवी येनैव श्रमणो भगवान् महावीरः तेनैव उपागच्छन्ति उपागम्य यावत् श्रमणं भगवन्तं महावीरं त्रिकृत्वः आदक्षिणप्रदक्षिणं कुर्वन्ति वन्दन्ते नमस्यन्ति श्वेतराजं पुरतः कृत्वा यावत् विनयेन कृतप्राञ्जलयः पर्युपासते ।

-ततः श्रमणो भगवान् महावीरः श्वेतस्य राज्ञः धारिण्या देव्याः तस्याश्च महातिमहत्याः पर्षदः यावत् धर्मं परिकथयति ।

१ त्रिकृत्वः वारत्रयम् ।

पर्षत्प्रतिगमः ।।४३।।

धम्मं परिकहेइ]

[११] [तए णं सा महइमहालिया मणूसपरिसा समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतिए धम्मं सोचा णिसम्म हट्ठतुट्ठ जाव हियया जाव समणं भगवं महावीरं वंदित्ता एवं वयासी–सुअक्खाए ते भन्ते ! निग्गन्थे पावयणे जाव णत्थि णं अण्णे केइ समणे वा माहणे वा जे एरिसं धम्मं आइक्खित्तए किमङ्ग पुण एत्तो उत्तर-तरं ? एवं वदित्ता जामेव दिसं पाउब्भूया तामेव दिसं पडिगया]

×[तए णं से सेए राया सा धारिणी देवी समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतिए धम्मं सोचा णिसम्म हट्ठतुट्ठ जाव हियया उट्ठाए उट्ठेंति उट्ठित्ता सुअक्खाए णं भन्ते ! निग्गन्थे पावयणे एवं वदित्ता जामेव दिसिं पाउब्भूयाओ तामेव दिसिं पडिगयाओ]

---

[११] ततः सा महातिमहती मनुष्यपर्षद् श्रमणस्य भगवतो महावीरस्य अन्तिके धर्मं श्रुत्वा निशम्य हृष्टतुष्टा–यावत् १०–हृदया यावत् श्रमणं भगवन्तं महावीरं वन्दित्वा एवम् अवादीत्–सुआख्यातं त्वया भगवन् ! नैर्ग्रन्थ्य प्रवचनम् यावत् नास्ति अन्यः कश्चित् श्रमणो वा ब्राह्मणो वा य ईदृशं धर्मम् आख्यातुम्, किमङ्ग पुनः इतः ११ उत्तरतरम् ? एवम् उदित्वा यामेव दिशं प्रादुर्भूता तामेव दिशं प्रतिगता ।

× ततः स श्वेतो राजा सा धारिणी देवी श्रमणस्य भगवतो महावीरस्य अन्तिके धर्मं श्रुत्वा निशम्य हृष्टतुष्टा यावत् हृदया उत्थया उत्तिष्ठन्ति उत्थाय सुआख्यात भगवन् ! नैर्ग्रन्थ्यं प्रवचनम् एवम् उदित्वा यामेव दिशं प्रादुर्भूताः तामेव दिशं प्रतिगताः।

---

१० 'यावत्' शब्देन 'आनन्दितचित्ता नन्दिता प्रीतिमनाः परमसौमनस्यिता हर्षवशविसर्पद्धृदया' इति पूर्तिर्ज्ञेया । ११ उत्तमतरम्।

सूर्याभदेवेन भगवानवलोकितः

[१२] [1]ते णं काले णं [2]ते णं समए णं [3]सूरियाभे [4]णामं ⊖ देवे [5]सोहम्मे कप्पे [6]सूरियाभे विमाणे [7]सभाए सुहम्माए [8]सूरियाभंसि सिंहासणंसि चउहिं [9]सामाणियसाहस्सीहिं, [10]चउहिं अग्गमहिसीहिं–[11]सपरिवाराहिं,

[१२] १ 'ते' इति प्राकृतशैलीवशात् 'तस्मिन्'इति द्रष्टव्यम्, यस्मिन् काले भगवान् वर्धमानस्वामी साक्षाद् विहरति तस्मिन् काले, २ तस्मिन् समये यस्मिन्नवसरे भगवान् आम्रशालवने चैत्ये देशनां कृत्वोपरतस्तस्मिन्नवसरे इति भावः, ३ सूर्याभः ४ नाम्ना देवः । नामशब्दो ह्यव्ययरूपोऽप्यस्ति ततो विभक्तिलोपः । ५ सौधर्मे सौधर्माख्ये कल्पे यत् ६ सूर्याभम्–सूर्याभनामकं विमानं तस्मिन् या ७ सभा सुधर्माभिधा तस्याम् ८ यत् सूर्याभाभिधानं सिंहासनम् तत्रोपविष्टः सन्निति गम्यते । ९ समाने द्युतिविभवादौ भवाः सामानिकाः–अध्यात्मादित्वाद् – 'इकण्'–विमानाधिपतिसूर्याभदेवसदृशद्युतिविभवादिका देवा इत्यर्थः, ते च मातृ–पितृ–गुरु–उपाध्याय–महत्तरवत् सूर्याभदेवस्य पूजनीयाः केवलं विमानाधिपतित्वहीना इति सूर्याभं देवं स्वामिनं प्रतिपन्नाः, तेषां सहस्राणि सामानिकसहस्राणि तैश्चतुर्भिः, प्राकृतत्वाच्च सूत्रे * सकारस्य दीर्घत्वम् स्त्रीत्वं च । १० चतसृभिरग्रमहिषीभिः–इह ×कृताभिषेका देवी महिषी इत्युच्यते, सा च स्वपरिवारभूतानां सर्वासामपि देवीनामग्रा इत्यग्रा, अग्राश्च ता महिष्यश्च अग्रमहिष्यस्ताभिश्चतसृभिः । कथम्भूताभिः? इत्याह–११ सपरिवाराभिः परिवारः सह यासां ताः सपरिवारास्ताभिः, परिवारश्चैकैकस्या

⊖ लिखितादर्शेषु मुद्रितपुस्तकेऽपि चासन् 'णामं' शब्दः विवरणकारविवरणानुसारेण अस्माभिर्मूले योजितः । – "अध्यात्मादिभ्य इकण्"–[६–३–७८ हैमश०] * 'सहस्स' शब्दस्य आद्यसकारो दीर्घो जातः । × "या कृताभिषेका नृपपत्नी सा महिषी, अन्या अकृताभिषेका नृपस्त्रियो भोगिन्य इत्युच्यन्ते" अमरकोश० द्वि० का० मनुष्यव० श्लो० ५ ।

[1]तिहिं परिसाहिं, [2]सत्तहिं अणिएहिं, [3]सत्तहिं अणियाहिवईहिं, [4]सोलसहिं आयरक्खदेवसाहस्सीहिं,

देव्याः सहस्रं सहस्रं देवीनाम् । तथा १ तिसृभिः पर्षद्भिः, तिस्रो हि विमानाधिपतेः सर्वस्यापि पर्षदः, तद्यथा–अभ्यन्तरा मध्या बाह्या च, तत्र या वयस्यमण्डलीस्थानीया परममित्रसंहतिसदृशी सा अभ्यन्तरपर्षत् , तया सह अपर्यालोचितं स्वल्पमपि प्रयोजनं न विदधाति । अभ्यन्तरपर्षदा सह पर्यालोचितं यस्यै निवेद्यते यथा–'इदमस्माकं पर्यालोचितं सम्मतमागतम् युष्माकमपीदं सम्मतं किं वा न'? इति–सा मध्यमा । यस्याः पुनरभ्यन्तरपर्षदा सह पर्यालोचितं मध्यमया च सह दृढीकृतं करणायैव निरूप्यते यथा–'इदं क्रियताम्'इति–सा बाह्या । तथा २ अनीकानि–सैन्यानि, तानि च सप्त–तद्यथा–हयानीकम् गजानीकम् रथानीकम् पत्त्यनीकम् वृषभानीकम् गन्धर्वानीकम् नाट्यानीकम्, तत्राद्यानि पञ्चानीकानि संग्रामाय कल्पन्ते, गन्धर्व–नाट्यानीके पुनरुपभोगाय–तैः सप्तभिरनीकैः ३ अनीकानि स्वस्वाधिपतिव्यतिरेकेण न सम्यक् प्रयोजने समापतिते सत्युपकल्पन्ते ततः सप्तानीकाधिपतयोऽपि तस्य वेदितव्याः, तथा चाह–'सत्तहिं अणियाहिवईहिं' । तथा ४ षोडशभिः आत्मरक्षदेवसहस्रैः इति–विमानाधिपतेः सूर्याभस्य देवस्यात्मानं रक्षयन्तीत्यात्मरक्षाः–"कर्मणोऽण्"[५–१–७२ हैमश०] इति 'अण्'–प्रत्ययः–ते च शिरस्त्राणकल्पाः–यथा हि शिरस्त्राणं शिरस्याविद्धं प्राणरक्षकं भवति तथा तेऽप्यात्मरक्षका गृहीतधनुर्दण्डादिप्रहरणाः समन्ततः पृष्ठतः पार्श्वतोऽग्रतश्चावस्थायिनो विमानाधिपतेः सूर्याभस्य देवस्य प्राणरक्षकाः। देवानामपायाभावात् तेषां तथाग्रहणपुरस्सरमवस्थानं निरर्थकमिति चेत्, न, स्थितिमात्रपरिपालनहेतुत्वात् प्रीतिप्रकर्षहेतुत्वाच्च, तथाहि–ते समन्ततः सर्वासु दिक्षु गृहीतप्रहरणा ऊर्ध्वस्थिता अवतिष्ठमानाः स्वनायकशरीररक्षणपरायणाः स्वनायकैकनिषण्णदृष्टयः परेषामसहमानानां क्षोभमापादयन्तो जनयन्ति स्वनायकस्य परां प्रीतिमिति । एते च नियतसंख्याकाः सूर्याभस्य

अन्नेहिं बहूहिं सूरियाभविमाणवासीहिं वेमाणिएहिं देवेहि य देवीहि य सद्धिं संपरिवुडे महया[3] अहय[4]नट्ट[5]-गीयवाइय[6]तंतीतलतालतुडियघणमुइंगपडुप्पवादियरवेणं [8]दिव्वाइं [9]भोगभोगाइं भुञ्जमाणे विहरति, [10]इमं च णं [11]केवलकप्पं

देवस्य परिवारभूता देवा उक्ताः। १ ये तु तस्मिन् सूर्याभे विमाने पौरजनपदस्थानीयाः, ये त्वाभियोग्याः–दासकल्पाः–तेऽतिभूयांसः आस्थानमण्डल्यामपि चानियतसंख्याका इति तेषां सामान्यत उपादानमाह–'अन्नेहिं बहूहिं सूरियाभविमाणवासीहिं देवेहि देवीहि य सद्धिं संपरिवुडे'–एतैः सामानिकप्रभृतिभिः सार्धम् २ संपरिवृतः–सम्यग्नायकैकचित्ताराधनपरतया–परिवृतः। ३ 'महता रवेण' इति योगः ४ 'अहय' इति "आख्यानकप्रतिबद्धानि" इति वृद्धाः। अथवा अहतानि–अव्याहतानि–अक्षतानि इति भावः–५ नाट्यगीतवादितानि च ६ तन्त्री–वीणा तलाः–हस्ततालाः तालाः कंसिकाः *तुटितानि–शेषतूर्याणि, तथा ७ घनः–घनसदृशो ध्वनिसाधर्म्यात् यो मृदङ्गः–मर्दलः पटुना–दक्षपुरुषेण प्रवादितः–तत एतेषां पदानां द्वन्द्वः–तेषां यो रवस्तेन ८ दिव्यान्–दिवि भवान् अतिप्रधानानित्यर्थः, ९ 'भोगभोगाइं' इति भोगार्हा ये भोगाः–शब्दादयस्तान्–सूत्रे ×नपुंसकता प्राकृतत्वात्, प्राकृते हि लिङ्गव्यभिचारः। यदाह पाणिनिः स्वप्राकृतलक्षणे–"लिङ्गं –व्यभिचार्यपि"[ ] इति–भुञ्जानो विहरति आस्ते। न केवलमास्ते किंतु १० इमं–प्रत्यक्षतया उपलभ्यमानं ११ केवलकल्पम्–ईषदपरि8समाप्तं =केवलं–केवलकल्पम्–परिपूर्णतया केवलसदृशमिति भावः

* स० तूर्य–प्रा० तुरिय–तुडिय–तुटिय–तुटित–इति शब्दपरिवर्तनम्। × 'भोग'शब्दस्य। – लिङ्गमतन्त्रम् [८–४–४४५] इति आचार्य–हेमचन्द्रः 8 –समाप्त परिसमाप्त केवल केवलज्ञानकेवल–भा० १। = केवलं केवलज्ञानं केवल–पा० ५। भा० २।

[१]जम्बुद्दीवं दीवं [२]विउलेणं ओहिणा [३]आभोएमाणे आभोएमाणे पासति।

[१३] [४]तत्थ [५]समणं [६]भगवं [७]महावीरं [८]जंबूद्दीवे भारहे वासे आमलकप्पाए नयरीए बहिया अंबसालवणे चेइए अहापडिरूवं उग्गहं उगिगण्हित्ता संजमेणं तवसा अप्पाणं भावेमाणं पासति, पासित्ता हट्ठतुट्ठचित्तमाणंदिए

१ जम्ब्वा रत्नमय्या उत्तरकुरुवासिन्या उपलक्षितो द्वीपो जम्बूद्वीपस्तं जम्बूद्वीपम्–जम्बूद्वीपाभिधानं द्वीपम् २ विपुलेन विस्तीर्णेन अवधिना, तस्य हि सूर्याभस्य देवस्यावधिः–अधः प्रथमां पृथिवीं यावत् –तिर्यक संख्येयान्(?) द्वीपसमुद्रानिति भवति विस्तीर्णस्तेन ३ आभोगयन् आभोगयन्–परिभावयन् पश्यति, अनेन 'सत्यप्यवधौ यदि तं ज्ञेयविषयमाभोगं न करोति तदा न किञ्चिदपि तेन जानाति पश्यति च' इत्यावेदितम् ।

[१३]४ 'तत्र' तस्मिन् विपुलेनावधिना जम्बूद्वीपविषये दर्शने प्रवर्तमाने सति ५श्रमणम्–श्राम्यति–तपस्यति नानाविधमिति श्रमणः ६ भगः–समग्रैश्वर्यादिलक्षणः उक्तं च–"ऐश्वर्यस्य समग्रस्य रूपस्य यशसः श्रियः। धर्मस्याथ प्रयत्नस्य षण्णां भग इतीङ्गना" [ ] भगोऽस्यास्तीति भगवान् तम्–भगवन्तम् ७ "शूर वीर विक्रान्तौ" वीरयति–कषायान् प्रति विक्रामति स्मेति वीरः, महांश्चासौ वीरश्च महावीरस्तम् ८जम्बूद्वीपे भारते वर्षे आमलकल्पाया नगर्या बहिर्–आम्रशालवने चैत्ये अशोकवरपादपस्याधः पृथिवीशिलापट्टके सम्पर्यङ्कनिषण्णं गणसमृद्धिसंपरिवृतं यथाप्रतिरूपमवग्रहं गृहीत्वा संयमेन तपसा आत्मानं भावयन्तं पश्यति दृष्ट्वा च–९ हृष्टतुष्टोऽतीवतुष्ट

– तिर्यक् असख्येयान्–मुद्रिते एव पुस्तके पाठः। "सौधर्म–एशानयोर्देवा अवधिविषयेण अधो रत्नप्रभां पश्यन्ति, तिर्यग् असंख्येयानि योजनसहस्राणि, ऊर्ध्वम् आ स्वभवनात्"–तत्त्वार्थभाष्ये अ० ४ सू० २१।

[1]पीइमणे [2]परमसोमणस्सिए [3]हरिसवसविसप्पमाणहियए [4]विकसियवरकमलणयणे [5]पयलियवरकडगतुडियकेऊर-मउडकुंडल-[6]हारविरायंतरइयवच्छे [7]पालंबपलंबमाणघोलंतभूसणधरे

इति भावः, अथवा हृष्टो नाम विस्मयमापन्नो यथा–'अहो भगवानास्ते' इति, तुष्टः–तोषं कृतवान् यथा–भव्यमभूद् यन्मया भगवानवलोकितः तोषवशादेव चित्तमानन्दितं–स्फीतीभूतं–"टु नदु समृद्धौ" इति वचनात्–यस्य स चित्तानन्दितः, सुखादिदर्शनात्*पाक्षिको निष्ठान्तस्य परनिपातः, मकारः प्राकृतत्वादलाक्षणिकस्ततः पदत्रयस्य पदद्वयमीलनेन कर्मधारयः १ प्रीतिर्मनसि यस्यासौ प्रीतिमनाः–भगवति बहुमानपरायण इति भावः ततः क्रमेण बहुमानोत्कर्षवशात् २ शोभनं मनो यस्य स सुमनास्तस्य भावः सौमनस्यम् परमं च तत् सौमनस्यं च परमसौमनस्यम् तत् सञ्जातमस्येति परमसौमनस्यितः एतदेव व्यक्तीकुर्वन्नाह–३ हर्षवशेन विसर्पत्–विस्तारयायि हृदयं यस्य स हर्षवशविसर्पद्धृदयः ४ हर्षवशादेव विकसिते वरकमलवत् नयने यस्य सः ५ तथा हर्षवशादेव शरीरोद्धर्षेण प्रचलितानि वराणि कटकानि–कलाचिकाभरणानि ऽत्रुटितानि–बाहुरक्षकाः केयूराणि–बाह्वाभरणविशेषरूपाणि मुकुटो–मौलिभूषणम् कुण्डले–कर्णाभरणे यस्य स प्रचलितवरकटकत्रुटितकेयूरमुकुटकुण्डलः, तथा ६ हारेण विराजमानेन रचितं–शोभितं ⊖वक्षो यस्य स हारविराजमानरचितवक्षाः ततः पूर्वपदेन कर्मधारयसमासः तथा ७ प्रलम्बते इति ○प्रलम्बः='पदकणुं'–प्रलम्ब-

* "जाति-काल-सुखादिभ्य. परवचनम्" इति काशिकावृत्तौ–२–२–३६। ऽ "तुटिकाश्च बाहुरक्षकाः"–औ० वृ०। ⊖ वक्षो यस्य स इह विवक्षित–पा० ५–४। भा० १। ○ "प्रालम्बो झुम्बनकम्"–औ० वृ०। 'झूमणुं' इति भाषा। "सुवर्णनिर्मिता–आनाभिलम्बितकण्ठिका प्रालम्बिका" इति अमरकोशः द्वि० का० मनुष्यव० श्लो० १०४। = 'पदकणु' इत्यय शब्दो देशभाषायाः प्रतीयते।

[1]ससंभमं [2]तुरियं [3]चवलं [4]सुरवरे ×सीहासणाओ अब्भुट्ठेइ अब्भुट्ठित्ता पायपीढाओ पच्चोरुहति पच्चोरुहित्ता पाउयाओ ओमुयइ ओमुयइत्ता एगसाडियं उत्तरासंगं करेति करित्ता तित्थयराभिमुहे सत्तट्ठपयाइं अणुगच्छइ अणुगच्छित्ता वामं जाणुं [4]अंचेइ दाहिणं जाणुं धरणितलंसि निहट्टु तिक्खुत्तो मुद्धाणं धरणितलंसि [x]निमेइ निमित्ता ईसिं पच्चुन्नमइ पच्चुन्नमित्ता कडय-तुडियथंभियभुयाओ साहरइ साहरित्ता करयलपरिग्गहियं दसणहं सिरसावत्तं मत्थए अंजलिं कट्टु एवं वयासी—

मानम्-आभरणविशेषम्-घोलन्ति+ च भूषणानि धरन्तीति प्रलम्बप्रलम्बमानघोलद्भूषणधरः। सूत्रे च 'प्रलम्बमान'पदस्य विशेष्यात् परतो निपातः प्राकृतत्वात् । हर्षवशादेव १ ससंभ्रमम् संभ्रमः इह विवक्षितक्रियाया बहुमानपूर्विका प्रवृत्तिः, सह सम्भ्रमो यस्य वन्दनस्य= गमनस्य वा तत् ससम्भ्रमम् क्रियाविशेषणमेतत्, २ त्वरितं-शीघ्रम् ३ चपलं-सम्भ्रमवशादेव व्याकुलं यथा भवत्येवं ४ सुरवरो-देववरः ।

× सिंहासनाद् अभ्युत्तिष्ठति अभ्युत्थाय पादपीठात् प्रत्यवरोहति प्रत्यवरुह्य पादुकाः अवमुञ्चति अवमुच्य एकशाटिकम् उत्तरासङ्गं करोति कृत्वा तीर्थकराभिमुखः सप्ताष्टपदानि अनुगच्छति अनुगम्य वाम जानुम्-अञ्चति दक्षिण जानु धरणितले निधाय त्रिकृत्वः मूर्धानं धरणितले निम्नयति निम्नयित्वा ईषत् प्रत्युन्नमति प्रत्युन्नम्य Oकटक-तुटिकस्तब्धभुजान् संहरति संहृत्य करतलपरिगृहीतां दशनखा शिरस्यावर्तां मस्तके अञ्जलिं कृत्वा एवमवादीत्- ४ "उत्पाटयति"-ऊर्ध्वं करोति । x "निम्नयति"-नीचैः करोति । + 'घोलत्' शब्दस्य द्वितीयाबहुवचनम् । घोलन्ति'-चलानि-चञ्चलानि इति भावः । = -स्य नमनस्य-पा० १-४ ।

O "कटक-तुटिकैः-हस्ताभरण-बाह्वाभरणविशेषै."-औ० वृ० ।

सूर्याभदेवेन भगवान् स्तुतः

[१४] ○नमोऽत्थु णं अरिहंताणं भगवंताणं आदिगराणं तित्थगराणं सयंसंबुद्धाणं पुरिसुत्तमाणं पुरिससीहाणं पुरिसवरपुण्डरीयाणं पुरिसवरगन्धहत्थीणं लोगुत्तमाणं लोगनाहाणं लोगहिआणं लोगपईवाणं लोगपज्जोयगराणं अभयदयाणं चक्खुदयाणं मग्गदयाणं जीवदयाणं सरणदयाणं बोहिदयाणं धम्मदयाणं धम्मदेसयाणं धम्मनायगाणं धम्मसारहीणं धम्मवरचाउरंतचक्कवट्टीणं अप्पडिहयवरनाणदंसणधराणं वियट्टछउमाणं जिणाणं जावयाणं तिण्णाणं तारयाणं बुद्धाणं बोहयाणं मुत्ताणं मोयगाणं सव्वन्नूणं सव्वदरिसीणं सिवं अयलं अरुयं अणंतं अक्खयं अव्वाबाहं अपुणरावत्तियं सिद्धिगइनामधेयं ठाणं संपत्ताणं ।

[१५] नमोऽत्थु णं समणस्स भगवओ महावीरस्स आदिगरस्स तित्थयरस्स जाव [कण्डिका १४] संपाविउकामस्स, वन्दामि णं भगवन्तं तत्थगयं इहगते, [1]पासइ मे भगवं तत्थगते इहगतं [2]ति कट्टु वन्दति णमंसति [3]वंदित्ता णमंसित्ता [4]सीहासणवरगए [5]पुव्वाभिमुहं सण्णिसण्णे ।

---

[१५] १ पश्यति मां स भगवान् तत्रगतः इहगतम् २ इति कृत्वा वन्दते–स्तौति नमस्यति–कायेन मनसा च ३ वन्दित्वा नमस्यित्वा च भूयः ४ सिंहासनवरगतः गत्वा च ५ पूर्वाभिमुखं सन्निषण्णः ।

---

[१४] ○ एषां शब्दानां व्याख्यानं पृ० ३० ⊖टिप्पणे द्रष्टव्यम् केवलं विभक्तिभेदः । तत्र अनागतानां तु व्याख्यानमेवं बोध्यम्–नमोऽस्तु अर्हताम् भगवताम् स्वयंसंबुद्धानाम् लोकोत्तमानाम् लोकनाथानाम् लोकहितानाम् लोकप्रदीपानाम् लोकप्रद्योतकराणाम् शरणदयानाम् बोधिदयानाम् धर्मदयानाम् धर्मदेशकानाम् धर्मनायकानाम् धर्मसारथीनाम्....सम्प्राप्तानाम्

[१६] [१]तए णं [२]तस्स–सूरियाभस्स–[३]इमे [४]एतारूवे *[५]अज्झत्थिते [६]चिंतिते [७]पत्थिते [८]मणोगते [९]संकप्पे [१०]समुपज्जित्था–
[१७] [११]सेयं [१२]खलु [१३]मे समणे भगवं महावीरे जम्बूदीवे दीवे भारहे वासे आमलकप्पाए णयरीए वहिया अम्ब-सालवणे चेइए अहापडिरूवं उग्गहं उग्गिण्हित्ता संजमेणं तवसा अप्पाणं भावेमाणे विहरति, तं महाफलं खलु तहारूवाणं भगवन्ताणं णामगोयस्स वि सवणयाए किमङ्ग पुण अभिगमणवन्दणणमंसणपडिपुच्छणपज्जुवासणयाए? एगस्स वि आरियस्स धम्मियस्स सुवयणस्स सवणयाए किमङ्ग पुण विउलस्स अट्ठस्स गहणयाए? तं गच्छामि णं [१३]समणं भगवं महावीरं वन्दामि णमंसामि सक्कारेमि

[१६] १ ततः निषदनानन्तरम् २ तस्य–सूर्याभदेवस्य ३अयम् ४एतद्रूपः सङ्कल्पः समुदपद्यत। कथम्भूतः? इत्याह–५मनोगतः मनसि गतो–व्यवस्थितः नाद्यापि वचसा प्रकाशितस्वरूप इति भावः। पुनः कथम्भूतः? इत्याह–६आध्यात्मिकः आत्मनि अधि अध्यात्मम् तत्र भव आध्यात्मिकः–आत्मविषय इति भावः। सङ्कल्पश्च द्विधा भवति–कश्चिद् ध्यानात्मकः अपरश्चिन्तात्मकः, तत्रायं चिन्तात्मकः इति प्रतिपादनार्थमाह–७ चिन्तितः चिन्ता सञ्जाता अस्येति चिन्तितः–चिन्तात्मक इति भावः, सोऽपि कश्चिदभिलाषात्मको भवति कश्चिदन्यथा, तत्रायमभिलाषात्मकः, तथा चाह–८ प्रार्थितः प्रार्थनं प्रार्थः–णिजन्तत्वात् 'अल्'प्रत्ययः–प्रार्थः सञ्जातोऽस्येति प्रार्थितः–अभिलाषात्मक इति भावः। किंस्वरूपः? इत्याह–

[१७] ९ श्रेयः ४ १० खलु निश्चितम् ११ मे मम श्रमणं भगवन्तं महावीरं वन्दितुं कायेन मनसा च प्रणन्तुम्। सत्कार-

* अत्र मूले टीकायां च पदाना व्युत्क्रमः। 8 इदं विवरणं प्रस्तुतं मूलपाठं शब्दशो नानुसरति अतो ज्ञायते यत् विवरणकारस्य दृष्टौ कश्चिद्

सम्माणेमि कल्लाणं मङ्गलं चेतियं देवयं पज्जुवासामि, एयं मे पेच्चा हियाए सुहाए खमाए णिस्सेयसाए आणुगामियत्ताए भविस्सति त्ति[१] कट्टु एवं[२] संपेहेइ[३], एवं संपेहित्ता आभिओगे[४] देवे सद्दावेइ[५] सद्दावित्ता[६] एवं[७] वयासी–

[१८] एवं[८] खलु देवाणुप्पिया[९]! समणे भगवं महावीरे जम्बूदीवे दीवे भारहे वासे आमलकप्पाए नयरीए बहिया अम्बसालवणे चेइए अहापडिरूवं उग्गहं उग्गिण्हित्ता संजमेणं तवसा अप्पाणं भावेमाणे विहरइ। तं गच्छह णं तुमे देवाणुप्पिया! जम्बूदीवं[११] दीवं भारहं[१२] वासं आमलकप्पं[१३] णयरिं

यितुम्–कुसुमाञ्जलिमोचनेन पूजयितुम्, सम्मानयितुम्–उचितप्रतिपत्तिभिराराधयितुम्, कल्याणं कल्याणकारित्वात् मङ्गलं दुरितोपशमकारित्वात् देवतां–देवं त्रैलोक्याधिपतित्वात् चैत्यं सुप्रशस्तमनोहेतुत्वात् पर्युपासितुं–सेवितुम् १ इतिकृत्वा इतिहेतोः २ एवं यथा वक्ष्यमाणं तथा ३ सम्प्रेक्षते बुद्ध्या परिभावयति, संप्रेक्ष्य च ४ आभियोगिकान्–आभिमुख्येन योजनं अभियोगः–प्रेष्यकर्मसु व्यापार्यमाणत्वम्–अभियोगेन जीवन्ति इति आभियोगिकाः "वेतनादेर्जीवति"[६–४–१५ हैमश०]इति 'इकण्'प्रत्ययः–आभियोगिकाः–स्वकर्मकरास्तान् ५ शब्दापयति–आकारयति ६ शब्दापयित्वा च तेषां सम्मुखम् ७ एवमवादीत्–

[१८] ८ एवं खलु देवानांप्रियाः! इत्यादि सुगमम् नवरं ९ देवानांप्रियाः–ऋजवः प्राज्ञाः। १० यस्मादेवं भगवान् विहरन् वर्तते तत्–तस्माद्–देवानांप्रियाः! यूयं गच्छत ११ जम्बूद्वीपं द्वीपम् तत्रापि १२ भारतं वर्षम् तत्रापि १३ आमलकल्पां नगरीम्

परिवर्तितो मूलपाठो भवेत्।

[1]अम्बसालवणं चेइयं [2]समणं भगवं महावीरं [3]तिक्खुत्तो [4]आयाहिणपयाहिणं करेह करेत्ता [5]वंदह णमंसह वन्दित्ता णमंसित्ता [6]साइं साइं [7]नामगोयाइं [8]साहेह साहित्ता [9]समणस्स भगवओ महावीरस्स [10]सव्वओ [11]समन्ता [12]जोयण-परिमण्डलं [13]जं किंचि 8 [14]तणं वा [15]पत्तं वा [16]कट्ठं वा सक्करं वा [17]असुइं [18]अचोक्खं वा [19]पूइअं [20]दुब्भिगन्धं [21]तं सव्वं [22]आहुणियं आहुणिय [23]एगन्ते [24]एडेह एडेत्ता

तत्रापि १ आम्रशालवनं चैत्यम् २ श्रमणं भगवन्तं महावीरं ३ त्रिकृत्वः–त्रीन् वारान् ४ आदक्षिणप्रदक्षिणं कुरुत–आदक्षिणाद्–दक्षिणहस्तादारभ्य प्रदक्षिणः–परितो भ्राम्यतो दक्षिण एव आदक्षिणप्रदक्षिणस्तं कुरुत। कृत्वा च ५ वन्दध्वम् नमस्यत, वन्दित्वा नमस्यित्वा च ६ स्वानि–स्वानि आत्मीयानि आत्मीयानि ७ नामगोत्राणि, गोत्रम्–अन्वर्थस्तेन युक्तानि नामानि नामगोत्राणि। ○राजदन्तादिदर्शनात् 'नाम' शब्दस्य पूर्वनिपातः। ८ साधयत–कथयत, कथयित्वा च ९ श्रमणस्य भगवतो महावीरस्य १० सर्वतः–सर्वासु दिक्षु ११ समन्ततः–सर्वासु विदिक्षु १२ योजनपरिमण्डलं–परिमाण्डल्येन योजनप्रमाणं यत् क्षेत्रं तत्र १३ यत् १४ तृणं किलिञ्चादि १६ काष्ठं वा काष्ठशकलं वा १५ पत्रं वा निम्बाऽश्वत्थादिपत्रजातम् कचवरं वा–श्लक्ष्णतृणधूल्यादिपुञ्जरूपं कथम्भूतम्? इत्याह–१७ अशुचि अशुचिसमन्वितम्, १८ अचोक्षम्–अपवित्रम्, १९ पूयितं–कुथितम् अत एव २० दुरभिगन्धं २१ तत् संवर्त्तकवातविकुर्वणेन २२ आहत्याहत्य २३ एकान्ते–योजनपरिमण्डलात् क्षेत्राद् दवीयसि देशे २४ एडयत अप-

8 अत्रापि विवरणकारस्य दृष्टौ कश्चित् परिवर्तितः मूलपाठो भवेत्। स च विवरणानुसारेण एवं संभवेत्–'तणं वा कट्ठं वा कट्ठसगलं वा पत्तं वा कयवरं वा असुइं' ○ "राजदन्तादिषु" [३–१–१४९ हैमश०]

णच्चोदगं णाइमट्टियं पविरल[3]पप्फुसियं रयरेणु[4]विणासणं दिव्वं[5] सुरभिगन्धोदयवासं[6] वासंह[7] वासित्ता णिहयरयं[8] णट्ठरयं[9] भट्ठरयं[10] उवसंतरयं[11] पसंतरयं[12] करेह[13] करित्ता कुसुमस्स[14] जाणुस्सेहपमाणमित्तं[15] ओहिं[16] वासं[17] वासह वासित्ता जलयथलयभासुरप्पभूयस्स[18]

नयत एडयित्वा च १ नात्युदकम् २ नाप्यतिमृत्तिकं यथा भवति एवं ६ सुरभिगन्धोदकवर्षं ७ वर्षत, कथम्भूतम् ? इत्याह–५ दिव्यं–प्रधानं सुरभिगन्धोपेतत्वात्, पुनः कथम्भूतम्? इत्याह–३ प्रकर्षेण यावद् रेणवः स्थगिता भवन्ति तावन्मात्रेणोत्कर्षेणेति भावः, स्पर्शनानि प्रस्पृष्टानि प्रविरलानि घनभावे कर्दमसम्भवात् प्रस्पृष्टानि–प्रकर्षवन्ति स्पर्शनानि–मन्दस्पर्शनसम्भवे रेणुस्थगनासम्भवात्–यस्मिन् वर्षे तत् प्रविरलप्रस्पृष्टम् अत एव ४ श्लक्ष्णतरा रेणुपुद्गला–रजः त एव स्थूला रेणवः, रजांसि च रेणवश्च रजोरेणवस्तेषां विनाशनम्। एवम्भूतम् च सुरभिगन्धोदकं वर्षं वर्षित्वा योजनपरिमण्डलं क्षेत्रं ८ निहतरजः कुरुतेति योगः, निहतं रजो–भूय उत्थानासम्भवात्–यत्र तद् निहतरजः, तत्र निहतत्वं रजसः क्षणमात्रमुत्थानाभावेनापि सम्भवति तत आह–९ नष्टरजः–नष्टं सर्वथाऽदृश्यीभूतं रजो यत्र तद् नष्टरजः, तथा १० भ्रष्टं–वातोद्धूततया योजनमात्रात् क्षेत्राद् दूरतः पलायितं रजो यस्मात् तद् भ्रष्टरजः एतदेव एकार्थिकद्वयेन प्रकटयति–११ उपशान्तरजः १२ प्रशान्तरजः १३कुरुत, कृत्वा च १४ कुसुमस्य जातावेकवचनं कुसुमजातस्य १५ जानूत्सेधप्रमाणमात्रम् १६ ओघेन–सामान्येन सर्वत्र योजनपरिमण्डले क्षेत्रे १७ वर्षं वर्षत, किंविशिष्टस्य कुसुमस्य? इत्याह–१८ जलजं च स्थलजं च जलजस्थलजम्–जलजं पद्मादि स्थलजं विचकिलादि भास्वरं–दीप्यमानम् प्रभूतं–अतिप्रचुरम् ततः कर्मधारयः, भास्वरं च तत् प्रभूतं च भास्वरप्रभूतं जलजस्थलजं च तत् भास्वरप्रभूतं च जलजस्थ-

विंट[1]ट्ठाइस्स दसद्ध[2]वण्णस्स कालागुरु[3]पवरकुन्दुरुक्कतुरुक्कधूवमघमघंतगन्धुद्धूयाभिरामं सुगन्धवरगन्धियं गन्धव[4]ट्टिभूतं दिव्वं सुरवराभिगमणजोग्गं करेह कारवेह करित्ता य कारवेत्ता य खिप्पामेव[11] एयमाणत्तियं[12] पच्चप्पिणह[13] । ॥५५॥

लजभास्वरप्रभूतम् तस्य पुनः कथम्भूतस्य ? इत्याह–१ वृन्तेन–अधोवर्तिना तिष्ठतीत्येवंशीलं वृन्तस्थायि तस्य वृन्तस्थायिनः–वृन्तमधोभागे उपरि पत्राणीत्येवंस्थानशीलस्येत्यर्थः । २ दशानामर्धं पञ्च दशार्धं वर्णा यस्य तद् दशार्धवर्णं तस्य पञ्चवर्णस्येति भावः । इत्थम्भूतस्य च कुसुमजातस्य वर्षं वर्षित्वा ततः योजनपरिमण्डलं क्षेत्रं ६ दिव्यं–प्रधानं ७ सुरवराभिगमनयोग्यं ८ कुरुत । इत्यत आह–३ कालागुरुः प्रसिद्धः, प्रवरः–प्रधानः कुन्दुरुक्कः[1]–चीडा तुरुक्कं–सिल्हकम् कालागुरुश्च प्रवरकुन्दुरुक्कतुरुक्कौ च कालागुरुप्रवरकुन्दुरुक्कतुरुक्काः तेषां धूपस्य यो मघमघायमानो गन्धः उद्धूतः–इतस्ततो विप्रसृतस्तेनाभिरामं–रमणीयं कालागुरुप्रवरकुन्दुरुक्कतुरुक्कधूपमघमघायमानगन्धोद्धूताभिरामम् तथा ४ शोभनो गन्धो येषां ते सुगन्धास्ते च ते वरगन्धाश्च–वासाः सुगन्धवरगन्धास्तेषां गन्धः सोऽस्यास्तीति सुगन्धवरगन्धिकम् "अतोऽनेकस्वरात्" [७–२–६ हैमश०] इति 'इक' प्रत्ययः, अत एव ५ गन्धवर्त्तिभूतम्–सौरभ्यातिशयात् गन्धद्रव्यगुटिकाकल्पमिति भावः, न केवलं स्वयं कुरुत किन्त्वन्यैरपि ९ कारयत १० कृत्वा च कारयित्वा च १२ एताम् आज्ञप्तिकां ११ क्षिप्रमेव–शीघ्रमेव १३ प्रत्यर्पयत–यथोक्तकार्यसम्पादनेन सफलां कृत्वा निवेदयत ।

---

१ कुन्दरुक्कः–पा० ५ । कुन्दरुक्कतुरुक्क चीडाभिधं गन्धद्रव्यविशेषः–भा० १ ।

रायपसेणइयं।

॥५६॥

[१९] [१]तए णं [२]ते आभियोगिया देवा सूरि[३]याभेणं देवेणं [४]एवं वुत्ता समाणा ह[५]ट्ठतुट्ठ–जाव–हियया ×कर[६]यलपरिग्गहियं ×दसनहं [७]सिरसावत्तं× [८]मत्थए [९]अंजलिं [११]कट्टु ‘[१२]एवं देवो ! तहत्ति आणाए’ वि[१३]णएणं व[१४]यणं पडिसुण[१५]न्ति, ‘एवं देवो तहत्ति आणाए’ विणएणं वयणं पडिसुणे[१६]त्ता उत्त[१७]रपुरत्थिमं दिसिभागं अव[१८]क्कमन्ति, उत्तरपुरत्थिमं दिसिभागं अवक्कमित्ता वेउ[१९]व्वियसमुग्घाएणं समोहण्ण[२०]न्ति समोहणित्ता संखे[२१]ज्जाइं जोयणाइं द[२२]ण्डं

आभियोगिकानां श्रीमहावीरं प्रति गमनम्

[१९] १ ततो ‘णं’ इति पूर्ववत् २ ते आभियोगिका देवाः ३ सूर्याभेण देवेन ४ एवमुक्ताः सन्तः ५ ‘हट्ठतुट्ठ–जाव हियया’ इति, अत्र ‘यावत्’ शब्दकरणात् [पृ० ४३ टिप्पण १०] इति द्रष्टव्यम्। १० द्वयोर्हस्तयोरन्योऽन्यान्तरिताङ्गुलिकयोः सम्पुटरूपतया यदेकत्र मीलनं सा अञ्जलिः ताम् ६ करतलाभ्यां परिगृहीता–निष्पादिता करतलपरिगृहीता ताम् ७ दश नखा यस्यां एकैकस्मिन् हस्ते नखपञ्चकसम्भवात् दशनखा ताम् तथा ८ आवर्त्तनमावर्त्तः शिरस्यावर्त्तो यस्याः सा शिरस्यावर्त्ता–‘कण्ठेकालः’ ‘उरसिलोमा’ इत्यादिवत् अलुक्समासः–ताम् अत एवाह–९ मस्तके ११ कृत्वा १३ विनयेन १४ वचनं सूर्याभस्य देवस्य १५ प्रतिशृण्वन्ति–अभ्युप–गच्छन्ति। कथम्भूतेन विनयेन ? इत्याह–१२ ‘हे देव ! एवं यथैव यूयमादिशत तथैवाज्ञया =भवदादेशेन कुर्मः’ इत्येवंरूपेण। ‘देवो’ इत्यत्र ओकारः आमन्त्रणे प्राकृतलक्षणवशात् यथा ‘अज्जो !’ इत्यत्र। १६प्रतिश्रुत्य वचनम् १७उत्तरपूर्वदिग्भागम् ईशानकोणमित्यर्थः, तस्यात्यन्तं प्रशस्तत्वात् १८ अपक्रामन्ति–गच्छन्ति अपक्रम्य च १९ वैक्रियसमुद्घातेन वैक्रियकरणाय प्रयत्नविशेषेण २० समवहन्यन्ते समवहता भवन्तीत्यर्थः, समवहताश्चात्मप्रदेशान् दूरतो विक्षिपन्ति, तथा चाह–२२ दण्ड इव दण्डः–

× एतानि त्रीणि अञ्जलेर्विशेषणानि। – –गच्छन्ति अपक्रम्य–पा० ५–४। भा० १। = भगवदा–भा० २।

निस्सिरंति, तंजहा–रयणाणं[2] वयराणं[3] वेरुलियाणं[4] लोहियक्खाणं[5] मसारगल्लाणं[6] हंसगब्भाणं[7] पुलगाणं[8] सोगन्धियाणं[9] जोईरसाणं[10] अञ्जणाणं[11] अञ्जणपुलगाणं[12] रययाणं[13] जायरूवाणं[14] अङ्काणं[15] फलिहाणं[16] रिट्ठाणं[17] अहाबायरे[18] पुग्गले[19] परिसाडंति[20] परिसाडित्ता अहासुहुमे[21] पुग्गले[22] परियायंति[23] परियाइत्ता दोच्चं[24] पि वेउव्वियसमुग्घाएणं समोहण्णंति[25] समोहणित्ता उत्तरवेउव्वियाइं[26] रूवाइं विउव्वंति[27]

ऊर्ध्वाध आयतः शरीरबाहल्यो जीवप्रदेशसमूहस्तं शरीराद् बहिः २१संख्येयानि योजनानि यावत् १ निसृजन्ति–निष्काशयन्ति, निसृज्य तथाविधान् पुद्गलानाददते । एतदेव दर्शयति, तद्यथा २–रत्नानाम्–कर्केतनादीनाम् ३ वज्राणाम् ४ वैडूर्याणाम् ५ लोहिताक्षाणाम् ६ मसारगल्लानाम् ७ हंसगर्भाणाम् ८ पुलकानाम् ९ सौगन्धिकानाम् १० ×ज्योतीरसानाम् ११ अञ्जनानाम् १२ अञ्जनपुलकानां १३ रजतानाम् १४ जातरूपाणाम् १५ अङ्कानाम् १६ स्फटिकानाम् १७ रिष्टानाम् १८ योग्यान् यथाबादरान् १९–असारान् पुद्गलान् २० परिशातयन्ति २१ यथासूक्ष्मान् २२–सारान् पुद्गलान् २३ पर्याददते पर्यादाय च चिकीर्षितरूपनिर्माणार्थं २४द्वितीयमपि वारं वैक्रिय*समुद्घातेन २५समवहन्यन्ते, समवहत्य च यथोक्तानां रत्नादीनाम्≡अयोग्यान् यथाबादरान् पुद्गलान् परिशातयन्ति यथासूक्ष्मानाददते आदाय च ईप्सितानि २६ उत्तरवैक्रियाणि २७ विकुर्वन्ति ननु रत्नादीनां प्रायोग्याः पुद्गला औदारिकाः, उत्तरवैक्रियरूपयोग्याश्च पुद्गला ग्राह्या वैक्रियास्ततः कथमेवमुक्तमिति ? उच्यते, इह रत्नादिग्रहणं सारतामात्रप्रतिपादनार्थम् नतु 'रत्नादीनामेव' परिग्रहार्थम् ततो रत्नादीनामिवेति द्रष्टव्यमिति न कश्चिद् दोषः । अथवा औदारिका अपि ते8 गृहीताः सन्तो

× ज्योतीरत्नानाम्–पा० ५–४ भा० १ । * समुद्घट्टनेन–पा० ५–४ भा० २ । ≡–ना योग्याना य–पा० ५–४ भा० १ । 8 तैः–मु० पु० ।

वि[1]उव्वित्ता [2]ताए उक्किट्ठाए[3] तुरियाए[4] चवलाए[5] चंडाए[6] जवणाए[7] सिग्घाए[8] उद्धूयाए[9] दिव्वाए[10] देवगईए[11] [12]तिरियं [13]असंखेज्जाणं दीवसमुद्दाणं [14]मज्झंमज्झेणं वीईवयमाणे वीईवयमाणे जेणेव जंबुद्दीवे दीवे जेणेव भारहे वासे जेणेव आमलकप्पा णयरी जेणेव अंबसालवणे चेतिए जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव उवागच्छंति, तेणेव उवागच्छित्ता समणं भगवं महावीरं तिक्खुत्तो आयाहिणपयाहिणं करेंति वंदंति नमंसंति वंदित्ता नमंसित्ता एवं वदासि—अम्हे णं भंते ! सूरियाभस्स देवस्स आभियोगा देवा देवाणुप्पियाणं वंदामो णमंसामो सक्कारेमो सम्माणेमो

वैक्रियतया परिणमन्ते, पुद्गलानां तत्तत्सामग्रीवशात् तथातथापरिणमनस्वभावत्वात् अतोऽपि न कश्चिद्दोषः । १तत एवमुत्तरवैक्रियाणि रूपाणि कृत्वा २ तया देवजनप्रसिद्धया ३ उत्कृष्टया प्रशस्तविहायोगतिनामोदयात् प्रशस्तया ४ शीघ्रसञ्चरणात् त्वरितया त्वरा सञ्जाता अस्या इति त्वरिता ५ तया +प्रदेशान्तराऽऽक्रमणमिति चपला तया ६ ×क्रोधादविमृश्यैव श्रमासंवेदनात् चण्डेव चण्डा तया ८ निरन्तरं शीघ्रत्वगुणयोगात् शीघ्रा तया शीघ्रया ७ परमोत्कृष्टवेगपरिणामोपेता जवना तया ९ वातोद्धूतस्य दिगन्तव्यापिनो रजस इव या गतिः सा उद्धूता तया १० दिव्यया–दिवि देवलोके भवा दिव्या तया ११ देवगत्या १२ तिर्यग् १३असंख्येयानां द्वीपसमुद्राणां १४ मध्यंमध्येन=–मध्येनेत्यर्थः । अवपतन्तोऽवपतन्तः–समागच्छन्त इति भावः, पूर्वान् द्वीपसमुद्रान् व्यतिक्रामन्तो व्यतिक्रामन्तः उल्लङ्घयन्त इत्यर्थः । शेषं सुगमं यावत्—

+प्रदेशान्तराक्रमेणमिति–भा० १। त्वरितगत्या हि प्रदेशान्तराक्रमणं भवति इति त्वरितगतिरेव 'चपला' शब्देन विशेष्यते इति भावो गम्यते।
× क्रोधादिव श्रमा–भा० २। क्रोधाविष्टस्येव श्र–मु० पु०। = पृ० ४१ टिप्पण ८।

कल्लाणं मगलं देवयं चेइयं पज्जुवासामो।

[२०] *देवाइ[१] समणे भगवं महावीरे ते[२] देवे एवं[३] वदासी–पोराणमेयं[४] देवा! +जीयमेयं देवा! किच्चमेयं देवा!

१ ×देवादियोगात् देवादिः श्रमणो भगवान् महावीरः २ तान् देवान् ३ एवमवादीत्–४पुराणेषु भवं पौराणमेतत् कर्म भो देवाः! चिरन्तनैरपि देवैः कृतमिदं चिरन्तनान् तीर्थङ्करान् प्रतीति तात्पर्यार्थः। 8देयमेतद् वन्दनादिकं तीर्थकृद्भ्यो भो देवाः!

* देवा य समणे भा० २। + नायं पाठः पा० ३। परंतु केनचिद् वाचकेन तत्प्रतिकर्णिकाया लिखितः।

×अत्र विवरणकारः 'देवाइ' इत्येवंरूपं मूलपाठं दृष्ट्वा "देवादियोगात् देवादिः" इति तद्व्याख्यानं करोति। अनेन विवरणेन 'देवादिः इति पद 'श्रमणो भगवान्' इत्यस्य विशेषणभूत जायते परतु 'देवादियोगात् देवादिः' इति व्याख्याय विवरणकारः भगवतो महावीरस्य कमभिनवं विशेषं ज्ञापयति इति न सम्यग् अवगम्यते। 'देवेषु आदिरूप' योगो यस्य अर्थात् सर्वेषु देवेषु आदिभूतो भगवान्' इत्यर्थोऽभिप्रेतस्तदा संगतिर्भवेत्। परतु नायमर्थः प्रासादिकः। मदभिप्रायेण तु 'देवा इ' इति पदद्वयम्। तस्यार्थस्तु 'देवा'–'हे देवाः' 'इ'–'इति' सबोध्य भगवान् तान् देवान् एवमुवाच। 'इ' शब्दः 'इति–इइ–इअ–इ' एतत्क्रमेण 'इति' शब्दस्य रूपान्तरम्। एवंप्रकारा वाक्यरचना अन्यत्रापि समायाता। यथा "गोयमा इ समणे भगवं महावीरे भगव गोयमं एव वयासी" [व्याख्याप्रज्ञप्ति द्वि० श० उ० १ स्कन्दक] अर्थात् "'गोयमा'—'गौतम!' 'इ'–'इति संबोध्य' श्रमणो भगवान् महावीरः भगवन्तं गौतमम् एवम् अवादीत्"। व्याख्याप्रज्ञप्तिटीकाकृता श्रीमता अभयदेवसूरिणाऽपि मदभिप्राय एव समर्थितः। तथाहि–"'गोयमा इ' त्ति गौतम! इति एवम्, आमन्त्र्य इति शेषः"। अतः 'देवा इ' इति पदद्वयमेव सुसंगतम्। 8 मूलपाठे 'पोराणमेयं देवा! इति पाठानन्तरम् 'जीयमेय देवा!' इति पाठः सर्वेषु अपि मूलप्रतिपुस्तकेषु लभ्यते परंतु टीकाप्रतिपुस्तकेषु क्वापि तत्पाठविवरण न लब्धम्। टीकाप्रतिपुस्तकेषु सर्वेष्वपि 'पोराण'–इत्यादिपाठविवरणानन्तरम् 'देयमेतद् वन्दनादिकम्' इत्येव पाठो लब्धः इति।

॥६०॥ 'करणिज्जमेयं देवा! आचिन्नमेयं देवा! अब्भणुण्णायमेयं देवा! जं णं भवणवइ-वाणमंतर-जोइसिय-वेमाणिया देवा अरहंते भगवंते वंदंति नमंसंति वंदित्ता नमंसित्ता तओ साइं साइं णामगोयाइं =साविंति तं पोराणमेयं देवा! जाव अब्भणुण्णायमेयं देवा!।

३ यतोऽभ्यनुज्ञातमेतत् सर्वैरपि तीर्थकृद्भिर्भो देवाः! ततः कर्त्तव्यमेतद् युष्मादृशां भो देवाः! एतदेव व्याचष्टे-१ करणीयमेतद् भो देवाः! २ आचीर्ण०मेतत् कल्पभूतमेतद् भो देवाः! किं तत्? इत्याह-४ 'जं णं' इत्यादि, यत् 'णं' इति पूर्ववत् ५ भवनपति-व्यन्तर-ज्योतिष्क-वैमानिका देवाः ६ अर्हतो भगवतो ७ वन्दन्ते नमस्यन्ति, वन्दित्वा नमस्यित्वा च पश्चात् ८ स्वानि स्वानि-आत्मीयानि आत्मीयानि नामगोत्राणि ९ कथयन्ति, ततो युष्माकमपि भो देवाः! १० पौराणमेतत् यावत्-आचीर्णमेतदिति।

= साविति पा० १-२। * अत्रापि मूलपाठ-विवरणकारलब्धमूलपाठयोर्भेदः। स च यथा-मूले 'किच्चमेय देवा! करणिज्जमेयं देवा! आचिन्नमेयं देवा। अब्भणुण्णायमेय देवा!' इति पाठक्रमः। विवरणे तु 'किच्चमेयं' इति पाठो न व्याख्यातः किन्तु 'करणिज्जमेय' इति पाठव्याख्यानात् पूर्वमेव 'अब्भणुण्णायमेय' इति पाठविवरणम्, तदनन्तर 'करणिज्जमेय' इत्यस्य विवरणम्। तदनन्तरं च 'आचिन्नमेयं' इत्यस्य विवरणम्। तात्पर्यं तु न भिद्यते। केवलं शब्दानुपूर्वी विभिन्ना। विवरणकारलब्धमूलपाठानुसारी पाठ एवं कल्पनीयः-पोराणमेयं देवा! देयमेयं देवा! अब्भणुण्णायमेय देवा! करणिज्जमेय देवा! आचिण्णमेय देवा!। ० -मेतत् भो देवाः-पा० ५-४। भा० १।

रायपसेणइयं।

[२१] ⊖तए णं ते आभिओगिया देवा समणेणं भगवया महावीरेणं एवं वुत्ता समाणा हट्ठ जाव हियया समणं भगवं महावीरं वन्दन्ति णमंसंति वन्दित्ता णमंसित्ता उत्तरपुरत्थिमं दिसीभागं अवक्कमंति अवक्कमित्ता वेउव्वियसमुग्घाएणं समोहण्णन्ति समोहणित्ता संखेज्जाइं जोयणाइं दण्डं निस्सिरंति। तं जहा–रयणाणं जाव [कण्डिका १९ पं० ५] रिट्ठाणं अहाबायरे पोग्गले परिसाडंति अहाबायरे परिसाडित्ता दोच्चं पि वेउव्वियसमुग्घाएणं समोहण्णन्ति समोहणित्ता संवट्टयवाए विउव्वन्ति । से[2] जहानामए[3] भइयदारए[4] सिया[5] तरुणे[6]

[२१] १ 'तए णं' इत्यादि सुगमम् २ स वक्ष्यमाणगुणो ३ यथानामकोऽनिर्दिष्टनामकः कश्चिद् ४ भृतिकदारकः–भृतिं करोति भृतिकः–कर्मकरः तस्य दारको भृतिकदारकः ५ स्यात् , किंविशिष्टः ? इत्याह–६तरुणः प्रवर्ध○मानवयाः आह–दारकः प्रवर्धमानवया एव भवति ततः किमनेन विशेषणेन ? न, आसन्नमृत्योः प्रवर्धमानवयस्त्वाभावात् , न ह्यासन्नमृत्युः प्रवर्धमानवया भवति, न च तस्य

⊖ ततः ते आभियोगिका देवाः श्रमणेन भगवता महावीरेण एवम् उक्ताः सन्तः हृष्ट यावत् हृदयाः। [पृ० ४३ टिप्पण १०] श्रमणं भगवन्तं महावीरं वन्दन्ते नमस्यन्ति वन्दित्वा नमस्यित्वा उत्तरपौरस्त्यं दिग्भागं अपक्रामन्ति अपक्रम्य वैकुर्विकसमुद्घातेन समवहन्यन्ते समवहत्य संख्येयानि योजनानि दण्ड निसृजन्ति। तद् यथा—रत्नानां यावत् रिष्टानाम् [कण्डिका १९ पं०५] यथाबादरान् पुद्गलान् परिशातयन्ति यथाबादरान् परिशात्य द्वितीयमपि वैकुर्विकसमुद्घातेन समवहन्यन्ते, समवहत्य संवर्तकवातान् विकुर्वन्ति।

8 सर्वेषु मूलपाठ–आदर्शेषु कम्मारदारए। परन्तु विवरणकारेण 'भइअदारए' पाठो लब्धः स एव च व्याख्यातः नात्र अर्थभेदः।

○मानवया एव–पा०४ भा०२। मानतया एव–भा० १।

आभियोगिका देवा श्रीमहावीरस्य सर्वतः समन्तात् स्थलं प्रमार्जयन्ति ॥६१॥

[1]बलवं [2]जुगवं [3]जुवाणे -अप्पायंके [5]थिरग्ग×हत्थे [6]दढपाणिपायपिट्ठन्तरो+रुपरिणए [7]घणनिचियवट्टवलियखंधे [8]चम्मेट्ठगदुघणमुट्ठियसमाहयगत्ते [9]उरस्सबलसमन्नागए

विशिष्टसामर्थ्यसम्भवः आसन्नमृत्युत्वादेव, विशिष्टसामर्थ्यप्रतिपादनार्थश्चैष आरम्भस्ततोऽर्थवद् विशेषणम्। अन्ये तु व्याचक्षते–"इह यद् द्रव्यं विशिष्टवर्णादिगुणोपेतमभिनवं च तत् तरुणमिति लोके प्रसिद्धम् यथा–'तरुणमिदमश्वत्थपत्रम्' इति। ततः स सूतिकदारकस्तरुण इति। किमुक्तं भवति ?–अभिनवो विशिष्टवर्णादिगुणोपेतश्च"इति १बलं–सामर्थ्यं तद् यस्यास्तीति बलवान्। तथा २युगं–सुषमदुष्षमादिकालः स स्वेन रूपेण यस्यास्ति न दोषदुष्टः स युगवान्, किमुक्तं भवति ?–कालोपद्रवोऽपि सामर्थ्यविघ्नहेतुः स चास्य नास्तीति प्रतिपत्त्यर्थमेतद् विशेषणम् ३ युवा–यौवनस्थः युवावस्थायां हि बलातिशय इत्येतदुपादानम्। ४ अल्पशब्दोऽभाववाची, अल्पः–सर्वथा अविद्यमान आतङ्को–ज्वरादिर्यस्य सोऽल्पातङ्कः। ५ स्थिरोऽग्रहस्तो यस्य स स्थिराग्रहस्तः। ६ दृढानि–अतिनिबिडचयापन्नानि पाणिपादपृष्ठान्तरोरूणि परिणतानि यस्य स दृढपाणिपादपृष्ठान्तरोरुपरिणतः–। तथा ७ घनम्–अतिशयेन निचितौ–निबिडतरचयमापन्नौ वलिताविव वलितौ वृत्तौ स्कन्धौ यस्य स घननिचितवलितवृत्तस्कन्धः। ८ चर्मेष्टकेन द्रुघणेन मुष्टिकया च–मुष्ट्या समाहत्य समाहत्य ये निचितीकृतगात्रास्ते चर्मेष्टकद्रुघणमुष्टिकसमाहतनिचितगात्राः तेषामिव गात्रं यस्य स चर्मेष्टकद्रुघणमुष्टिकसमाहतनिचितगात्रः। ९ उरसि भवं उरस्यं तच्च तद् बलं च उरस्यबलं तत् समन्वागतः–समनुप्राप्तः उरस्यबलसमन्वागतः आन्तरोत्साह-

– अप्पायके थिरसंघयणे थिर—वि० वा०। × –हत्थे पडिपुण्णपाणि–वि० वा०। + –रुसंघायपरिणए–वि० वा०।
– "सुखादिदर्शनात् पाक्षिकः क्तान्तस्य परनिपातः" राय०वि०। पृ० ४८ * टिप्पण

तलजं[1]मलजुयल*बाहू लंघण[2]पवणजवणपमद्दणसमत्थे [3]छेए [4]दक्खे [5]पट्ठे [6]कुसले [7]मेधावी [8]णिउणसिप्पोवगए [9]एगं [10]महं [11]सलागाहत्थगं वा [12]दण्डसंपुच्छणिं वा [13]वेणुसलागिगं वा [14]गहाय [15]रायङ्गणं वा [16]रायंतेपुरं वा [17]देवकुलं वा [18]सभं वा [19]पवं

वीर्ययुक्त इति भावः। १ तलौ–तालवृक्षौ तयोर्यमलयुगलं–समश्रेणीकं युगलं तलयमलयुगलं तद्वदतिसरलौ पीवरौ च बाहू यस्य स तलयमलयुगलबाहुः। २लङ्घने–अतिक्रमणे, प्लवने–मनाक् पृथुतरविक्रमवति गमने, जवने–अतिशीघ्रगतौ प्रमर्दने–कठिनस्यापि वस्तुनश्चूर्णकरणे समर्थः लङ्घन-प्लवन-जवन-प्रमर्दनसमर्थः। क्वचित् 'लंघणपवणजवणवायामणसमत्थे' इति पाठः, तत्र व्यायामने–व्यायामकरणे इति व्याख्येयम्। ३ छेको–द्वासप्ततिकलापण्डितः। ४ दक्षः–कार्याणामविलम्बितकारी। ५ प्रष्ठो–वाग्मी। ६ कुशलः सम्यक्क्रियापरिज्ञानवान्। ७ मेधावी परस्पराव्याहतपूर्वापरानुसन्धानदक्षः, अत एव ८ निपुणं यथा भवति एवं शिल्पं–क्रियासु कौशलं उपगतः–प्राप्तो निपुणशिल्पोपगतः। ९एकं १० महान्तं ११शलाकाह*स्तकं–सरि8त्पर्णादिशलाकासमु×दायं सरित्पर्णादिशलाकामयीं सम्मार्जनीमित्यर्थः। 'वा'शब्दो विकल्पार्थः। १२दण्डयुक्ता =सम्पुंसनी–सम्मार्जनी दण्डसम्पुंसनी तां वा। १३वेणुः–वंशस्तस्य शलाका वेणुशलाकास्ताभिर्निर्वृत्ता वेणुशलाकिकी–वेणुशलाकामयी सम्मार्जनी तां वा १४गृहीत्वा १५राजाङ्गणं वा १६ राजान्तःपुरं वा १७देवकुलं वा १८सभां वा सन्तो भान्त्यस्यामिति सभा–ग्रामप्रधानानां नगरप्रधानानां वा यथासुखमवस्थानहेतुर्मण्डपिका–तां वा १९प्रपां वा

* –लफलिहनिभत्रा–त्रि० बा०। *–स्तकं परित्पर्णादि–पा० ५।–स्तकं सूरित्पर्णादि–भा० २।–स्तकसूरित्पर्णादि–भा०१। 8 अत्र 'सरित्पर्ण' शब्दः कमर्थं गमयति इति नावगम्यते। 'सरित्पर्ण' स्थाने 'श्रीपर्णी संभवेत्?। ×दायं शरित्पर्णादि–पा० ५। = सम्पुच्छनी मु०पु०।

वा आरामं वा उज्जाणं वा अ[3]तुरियं अ[4]चवलं अ[5]संभन्तं निरं[6]तरं सुनिउणं[7] [8]सव्वतो [9]समन्ता संपमज्जेज्जा,[10] ए[11]वामेव तेऽवि सूरियाभस्स देवस्स आभिओगिया देवा संवट्टयवाए विउव्वंति, विउव्विता समणस्स भगवओ महावीरस्स सव्वतो समंता जोयणपरिमण्डलं जं किंचि तणं वा पत्तं वा तहेव सव्वं आहुणिय आहुणिय ए[12]गंते एडेंति एडित्ता खि[13]प्पामेव उ[14]वसमन्ति। [कण्डिका १८ पं० ५]

पानीयशालां वा १ आगत्यागत्य भोगपुरुषा वरतरुणीभिः सह यत्र रमन्ते–क्रीडन्ति स आरामो नगरान्नातिदूरवर्त्ती क्रीडाश्रयः तरुखण्डः तम् २ ऊर्ध्वं विलम्बितानि प्रयोजनाभावात् यानानि यत्र तद् उद्यानं–नगरात् प्रत्यासन्नवर्त्ती यानवाहनक्रीडागृहाद्याश्रयस्तरुखण्डः तद् वा। ३ अत्वरितम् ४ अचपलम् ५ असम्भ्रान्तम् त्वरायां चापल्ये सम्भ्रमे वा सम्यक्कचवराद्यपगमासम्भवात्। ६ निरन्तरं न त्वपान्तरालमोचनेन, ७ सुनिपुणं श्लक्ष्णस्याप्यचोक्षस्यापसारणेन ८ सर्वतः–सर्वासु दिक्षु ९समन्ततः–सामस्त्येन १०सम्प्रमार्जयेत्। ११ 'एवमेव' इत्यादि सुगमं यावत्–'खिप्पामेव पच्चुवसमंति' इत्यादि । १२ एकान्ते तृणकाष्ठाद्यपनीय १३ क्षिप्रमेव–शीघ्रमेव १४ ⊖ प्रत्युपशाम्यन्ति प्रत्येकं ते आभियोगिका देवाः उपशाम्यन्ति –संवर्त्तकवायुविकुर्वणान्निवर्त्तन्ते संवर्त्तकवातमुपसंहरन्तीति भावः।

⊖ मूले तु उवसमन्ति, टीकायाम् 'प्रति'अधिकः।

[२२] [1]दोच्चं पि [2]वेउव्वियसमुग्घाएणं समोहण्णन्ति, समोहणित्ता अब्भवद्दलए [3] [4]विउव्वन्ति। [5]से जहाणामए भइगदारगे सिया तरुणे [कण्डिका २१ पं० ५] जाव-सिप्पोवगए [6]एगं महं [7]दगवारगं वा [8]दगकुम्भगं वा दगथालगं वा [9]दगकलसगं वा गहाय आरामं वा जाव [पृ० ६३ पं० २] पवं वा अतुरियं जाव सव्वतो समंता [10]आवरिसेज्जा, एवामेव तेऽवि सूरियाभस्स देवस्स आभियोगिया देवा अब्भवद्दलए विउव्वंति विउव्वित्ता खिप्पामेव [11]पतणतणायन्ति पतणतणाइत्ता खिप्पामेव [12]विज्जुयायंति विज्जुयाइत्ता समणस्स भगवओ महावीरस्स सव्वओ समन्ता [कं०१८ पं०५] जोयणपरिमण्डलं णच्चोदगं णातिमट्टियं तं पविरलपप्फुसियं रयरेणुविणासणं दिव्वं सुरभिगन्धो-

[२२] १ संवर्त्तकनातविकुर्वणार्थं हि यद् वेलाद्वयमपि वैक्रियसमुद्घातेन समवहननं तत् किलैकम् इदं तु अब्भ्रवार्दलकविकुर्वणार्थं द्वितीयमत उक्तम्—द्वितीयमपि वारं २ वैक्रियसमुद्घातेन समवहन्यन्ते समवहत्य च ३ अभ्रवार्दलकानि विकुर्वन्ति वाः पानीयं तस्य दलानि वार्दलान्येव वार्दलकानि मेघा इत्यर्थः अपो बिभ्रतीति 8अब्भ्राणि—मेघाः—आकाशमित्यर्थः, अब्भ्रे वार्दलकानि अब्भ्रवार्दलकानि तानि ४विकुर्वन्ति—आकाशे मेघान् विकुर्वन्तीत्यर्थः। ५'से जहानामए भइगदारगे सिया' इत्यादि पूर्ववत् यावत् [कंडिका २१पं०५] 'निउणसिप्पोवगए एगं महं' इत्यादि—स यथानामको भृतिकदारकः ६एकं महान्तम् दकवारकं वा मृत्तिकामयभाजनविशेषम् ७ दकघटम् ८दकस्थालकं वा-कंसादिमयमुदकभृतं भाजनं ९ दककलशं वा—उदकभृतं भृङ्गारम् १० आवर्षेद् आ—समन्तात् सिञ्चेत्। ११ 'पतणतणायंति' अनुकरणवचनमेतत्—प्रकर्षेण स्तनितं कुर्वन्तीत्यर्थः, १२ प्रकर्षेण विद्युतं विदधति।

8 "अब्भ्राणि सन्ति अस्मिन् इति "अभ्रादिभ्यः" [७-२-४६ हैमश०] इति मत्वर्थीयः 'अ' प्रत्ययः"—राय० विव०।

आभियोगिकाः पुष्पवृष्टिं कुर्वन्ति

दगं वासं वासंति वासेत्ता णिहयरयं णट्ठरयं भट्ठरयं उवसंतरयं पसंतरयं करेंति, करित्ता खिप्पामेव उवसामन्ति ।

[२३] तच्चं पि वेउव्वियसमुग्घाएणं समोहण्णन्ति पुप्फवद्दलए[1] विउव्वन्ति । से जहाणामए मालागारदारए सिया तरुणे जाव [कण्डिका २१ पं०५]-सिप्पोवगए [2]एगं महं ×पुप्फछज्जियं[3] वा पुप्फपडलगं[4] वा =पुप्फचङ्गेरियं वा गहाय रायङ्गणं वा जाव [कण्डिका २१ पं० ९] सव्वतो समंता [5]कयग्गहगहियकरयलप÷भट्ठविप्पमुक्केणं दसद्धवण्णेणं कुसुमेणं मुक्कपुप्फपुंजोवयारकलितं करेज्जा, एवामेव ते सूरियाभस्स देवस्स आभिओगिया देवा पुप्फवद्दलए विउव्वन्ति खिप्पामेव पतणतणायन्ति जाव जोयणपरिमण्डलं जलयथलयभासुरप्पभूयस्स [कण्डिका

[२३] १ पुष्पवृष्टियोग्यानि वार्दलकानि पुष्पवार्दलकानि-पुष्पवर्षुकान् मेघान् विकुर्वन्तीति भावः । २ एकां महतीं ३ छाद्यते-उपरि स्थग्यते इति छाद्या छाद्यैव छाद्यिका पुष्पैर्भृता छाद्यिका पुष्पछाद्यिका तां वा । ४ पटलकानि-प्रतीतानि । ५ इह मैथुनसंरम्भे यद् युवतेः केशेषु ग्रहणं स कचग्रहस्तेन गृहीतं कचग्रहगृहीतम् तथा करत÷लाद् विप्रमुक्तं सत् प्रभ्रष्टं करतलप्र*भ्रष्टवि-O प्रमुक्तम् तेन ।

× पा० ३ प्रतौ नैष शब्दः । पुप्फठज्जियं पुप्फात्थियं इत्यधिकः पाठः पा० २ । पुप्फपत्थियं-पुष्पप्रस्थिकाम् पुष्पपात्रिकाम् इत्यर्थः सभाव्यते । = पा० १ प्रतौ नैष पाठः । ÷ लाद् विमु-पा० ५-४ भा० १ । *-भ्रष्टविमु-पा० ५-४ भा० १ । O "प्राकृतत्वात् = पदव्यत्ययः ततो विशेषणसमासः"-राय० विव० ।

='भ्रष्ट'-'विप्रमुक्त'पदयोर्व्यत्ययः ।

१८ पं० १०] थिदट्ठाइस्स दसद्धवन्नकुसुमस्स जाणुस्सेहपमाणमेत्तिं +ओहिं वासन्ति वासित्ता कालागुरुपवरकुन्दुरुक्कतुरुक्कधूवमघमघन्तगन्धुद्धुयाभिरामं [कण्डिका १८ पं० ११] सुगंधवरगन्धियं गन्धवट्टिभूतं दिव्वं सुरवराभिगमणजोग्गं करेंति य कारवेंति य करेत्ता य कारवेत्ता य खिप्पामेव उवसामन्ति।

[२४] जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव उवागच्छन्ति तेणेव उवागच्छित्ता समणं भगवं महावीरं तिक्खुत्तो जाव वन्दित्ता नमंसित्ता समणस्स भगवओ महावीरस्स अन्तियातो अम्बसालवणातो चेइयातो पडिनिक्खमन्ति पडिनिक्खमित्ता ताए उक्किट्ठाए [कण्डिका १९ पं० ९] जाव वीइवयमाणा वीइवयमाणा जेणेव सोहम्मे कप्पे जेणेव सूरियाभे विमाणे जेणेव सभा सुहम्मा जेणेव सूरियाभे देवे तेणेव उवागच्छन्ति सूरियाभं देवं करयलपरिग्गहियं सिरसावत्तं मत्थए अञ्जलिं कट्टु [1]जएणं विजएणं वद्धावेंति [2]वद्धावेत्ता [3]तमाणत्तियं [4]पच्चप्पिणन्ति।

[२४] शेषं सुगमं यावत् १ 'जएणं विजएणं वद्धावेंति'–जयेन विजयेन वर्धापयन्ति–जय त्वं देव! विजयस्व त्वं देव! इत्येवं वर्धापयन्ति–इत्यर्थः। तत्र जयः–परैरनभिभूयमानता प्रतापवृद्धिश्च विजयस्तु–परेषामसहमानानामभिभवोत्पादः, २ वर्द्धापयित्वा च ३ तां पूर्वोक्तामाज्ञप्तिकां ४ प्रत्यर्पयन्ति–आदिष्टकार्यसम्पादनेन निवेदयन्तीत्यर्थः।

+ विवरणकारेण 'ओहिं' शब्दस्य विवरणं 'ओघेन' इत्येवं कृतम् [पृ० ५४ पं० १२] तथापि 'ओहिं' इत्यस्य विवरणम् 'अवधिम्' इति समुचितं भाति।

सूर्याभस्य स्वपदात्यनीकाधिपतिं प्रति आदेशः

[२५] [1]तए णं [2]से सूरियाभे देवे तेसिं[3] आभियोगियाणं देवाणं अंतिए [4]एयमट्ठं सोच्चा निसम्म हट्ठतुट्ठ-जाव [कं० १३ पं० २]-हियए पायत्ताणियाहिवइं देवं सद्दावेति सद्दावेत्ता एवं वदासी-

'खिप्पामेव [10]भो! देवाणुप्पिया! सूरियाभे विमाणे सभाए सुहम्माए [12]मेघोघरसियगंभीरमहुरसद्दं जोयणप[13]रिमण्डलं =सूसरं[14] घंटं तिक्खुत्तो [15]उल्लालेमाणे उल्लालेमाणे [16]महया महया सद्देणं [17]उग्घोसेमाणे उग्घोसेमाणे एवं ×वयाहि-[19]'आणवेति णं [20]भो! सूरियाभे[21] देवे गच्छति[22] णं [23]भो! सूरियाभे[24] देवे जंबूद्दीवे[25] दीवे भारहे[26] वासे आमलक[27]-

[२५] १ततो 'णं' इति पूर्ववत् २स सूर्याभो देवः ३तेषाम् आ-समन्तादाभिमुख्येन युज्यन्ते-प्रेष्यकर्मसु व्यापार्यन्ते इत्याभियोग्याः-आभियोगिका इत्यर्थः तेषामाभियोग्यानां देवानाम् अन्तिके-समीपे ४ एनम्-अनन्तरोक्तमर्थं ५ श्रुत्वा श्रवणविषयं कृत्वा श्रवणानन्तरं च निशम्य-परिभाव्य ६ पदात्यनीकाधिपतिं देवं ७ शब्दयति, शब्दयित्वा ८ एवमवादीत्-९क्षिप्रमेव १०भो! देवानांप्रिय! ११सभायां सुधर्मायां-सुधर्माभिधानायाम् १२मेघानामोघः-संघातो मेघौघस्तस्य रसितं-गर्जितं तद्वद् गम्भीरो मधुरश्च शब्दो यस्याः सा मेघौघरसितगम्भीरमधुरशब्दा ताम् १३योजनं योजनप्रमाणं +परिमण्डलं पारिमाण्डल्यं यस्याः सा योजनपरिमण्डला ताम् १४सुस्वरां-सुस्वराभिधानां घण्टाम् १५उल्लालयन् उल्लालयन् ताडयन् ताडयन्नित्यर्थः, १६महता महता शब्देन १७उद्घोषयन्-उद्घोषणां कुर्वन् १८एवं४वद-१९'आज्ञापयति २०भोः! २१सूर्याभो देवः यथा २२गच्छति २३भोः! २४सूर्याभो देवो २५जम्बूद्वीपं २६भारतं वर्षं २७आ-

= सुस्सर पा० १। ×अयं पाठः भा० १ प्रतावेव लभ्यते तथापि अनेनैव च पाठेन मूलार्थसंगतिः। मुद्रित 'वयासी' इति पाठस्तु भूतकालसूचकः स चात्र न सगतिं गच्छति। अत्र तु आज्ञार्थसूचकस्यैव पाठस्योचितत्वम्। +"गुणप्रधानोऽय निर्देश." राय० वृ०। परिमण्डलम्-सर्वतः समन्तात् मण्डलाकारता-वृत्ताकारता। 8 वदति मु० पु०।

एयाए णयरीए अंबसालवणे चेतिते समणं[3] भगवं महावीरं ÷अभिवंदए,[3] तुब्भेऽवि णं भो ! देवाणुप्पिया ! *सव्विड्ढीएँ

मलकल्पां नगरीम् १आम्रशालवनं चैत्यं २श्रमणं भगवन्तं महावीरं ३वन्दितुम् तत् तस्मात् ४यूयमपि देवानांप्रियाः ! ५सर्वर्द्धया–परिवारादिकया सर्वद्युत्या यथाशक्तिविस्फारितेन समस्तेन शरीरतेजसा सर्वबलेन–समस्तेन हस्त्यादिसैन्येन सर्वसमुदायेन–स्वस्वाभियोग्यादिसमस्तपरिवारेण,सर्वादरेण–समस्तयावच्छक्ति○मूलेन सर्वविभूत्या–समस्तस्वाभ्यन्तरवैक्रियकरणादिबाह्यरत्नादिसम्पदा सर्वविभूषया यावच्छक्तिस्फारोदारशृङ्गारकरणेन 'सव्वसंभमेणं'ति सर्वोत्कृष्टेन संभ्रमेण–सर्वोत्कृष्टसम्भ्रमो नाम इह स्वनायकविषयबहुमानख्यापनपरा स्वनायकोपदिष्टकार्यसम्पादनाय यावच्छक्तित्वरितत्वरिता प्रवृत्तिः 'सव्वपुप्फवत्थगंधमल्लालंकारेणं' अत्र गन्धा वासाः माल्यानि–पुष्पदामानि अलङ्काराः–आभरणविशेषाः,= 'सव्वदिव्वतुडियसद्दसंनिनाएणं'इति सर्वाणि च तानि दिव्यतुडितानि च दिव्यतूर्याणि

–'अभिवंदए' इत्यस्य विवरणम् 'वन्दितुम्' इति कृत विवरणकारेण, अतः अभिवन्दए–अभिवन्दकः अत्र तुमर्थे 'णकच्' प्रत्ययो बोध्यः "क्रियायां क्रियार्थाया तुम् णकच् भविष्यन्ती" [५–३–१३ हैमश०] इति सूत्रं 'णकच्' प्रत्ययविधायकम् । *विवरणकारेण 'सव्विड्ढीए' पदं व्याख्याय 'सर्वद्युत्या' 'सर्वबलेन' 'सर्वसमुदायेन' 'सर्वादरेण' 'सर्वविभूत्या' 'सर्वविभूषया' 'सव्वसंभमेणं' 'सव्वपुप्फवत्थगंधमल्लालंकारेणं' 'सव्वदिव्वतुडियसद्दसंनिनाएण' 'महताए इड्ढीए' 'महताए जुईए' 'महता वरतुडितयमकसमकपटुपुरुषप्रवादितरवेण सङ्ख–पणव–पडह–भेरि–झल्लरि–खरमुहि–हुडुक्क–मुरज–मुइंग–दुदुभिनिग्घोसनाइतरवेण' एतान्यपि पदानि कानिचित् सप्रतीक व्याख्यातानि अतो ज्ञायते यत् विवरणकारप्राप्तमूलपाठे एतानि सर्वाण्यपि पदानि मूले एव अभूवन् । ○ –क्तितुलनेन–भा० २ । = "ततः समाहारो द्वन्द्व ततः सर्वशब्देन सह विशेषणसमासः" राय०विव० ।

रायपसेण-इयं।

जाव–नाइ[2]तरवेण णि[1]यगपरियालसद्धिं सं[3]परिवुडा साति साति जाणविमाणाइं दुरूढा समाणा अकालप[4]रिहीणं चेव सूरियाभस्स देवस्स अंतिएं[5] पाउब्भवह[6]’।

॥७०॥ सर्वदिव्यतुडितानि तेषां शब्दाः सर्वदिव्यतुडितशब्दाः तेषामेकत्र मीलनेन यः सङ्गतेन नितरां नादो–महान् घोषः =सर्वतुडितदिव्य-शब्दसन्निनादस्तेन। इह अल्पेष्वपि ‘सर्व’शब्दो दृष्टः यथा–‘अनेन सर्वं पीतं घृतम्’ इति तत आह–‘महताए इड्ढीए’ इत्यादि महत्या यावच्छक्तितुलितया ऋद्ध्या परिवारादिकया, एवं ‘महताए जुईए’ इत्याद्यपि भावनीयं, तथा महता–स्फूर्तिमता वराणां–प्रधानानां तुडितानाम्–आतोद्यानां यमकसमकम्–एककालं पटुभिः पुरुषैः प्रवादितानां यो रवस्तेन, एतदेव विशेषेणाचष्टे–१ ‘संख–पणव–पडह–भेरि–झल्लरि–खरमुहि–हुडुक्क–○मुरज–मुइंग–दुंदुभि–निग्घोसनाइतरवेण’ शङ्खः–प्रतीतः पणवो भाण्डानाम् पटहः प्रतीतः भेरी–ढक्का, झल्लरी–चर्मावनद्धा विस्तीर्णा वलयाकारा, खरमुही–काहला, हुडुक्का–प्रतीता, महाप्रमाणो मर्द्दलो मुरजः, स एव लघुर्मृदङ्गः दुन्दुभिः–भेर्याकारा सङ्कटमुखी8 तासां निर्घोषो–महान् ध्वानो नादितं च–घण्टायामिव वादनोत्तरकालभावी सततध्वनिः तल्लक्षणो यो रवस्तेन २ निजकः–आत्मीयः आत्मीयो यः परिवारस्तेन सार्द्धम्, ३ तत्र सहभावः परिवाररीतिमन्तरेणापि सम्भवति तत आह–‘संपरिवुडा’ सम्यक्–परिवाररीत्या परिवृताः सम्परिवृताः ४ परिहानिः–परिहीनं कालस्य परिहीनं कालविलम्ब इति भावः न विद्यते कालपरिहीनं यत्र प्रादुर्भवने तत् *अकालपरिहीनम्–५ अन्तिके–समीपे ६ प्रादुर्भवत समागच्छतेति भावः।

○–मुरवुमु–पा० ५। –मुरवमु–भा० २। –मुरवुमु–भा० १। 8 “एतेषां द्वन्द्वः”–राय० विव०। * “क्रियाविशेषणमेतत्”, राय०विव०।

[२६]तए णं से पायत्ताणियाहिवती देवे सूरियाभेणं देवेणं एवं वुत्ते समाणे हट्ठतुट्ठ जाव [कं०१३ पं० २]–हियए एवं देवो ! तहत्ति आणाए विणएणं वयणं पडिसुणेति [कं०१९ पं०२] पडिसुणित्ता जेणेव सूरियाभे विमाणे जेणेव सभा सुहम्मा जेणेव मेघोघरसियगम्भीरमहुरसद्दा जोयणपरिमण्डला सुस्सरा घंटा तेणेव उवागच्छति उवागच्छित्ता तं मेघोघरसितगम्भीरमहुरसद्दं जोयणपरिमंडलं सुसरं घंटं तिक्खुत्तो[1] उल्लालेति[2]। तए[3] णं तीसे[4] मेघोघरसितगंभीरमहुरसद्दाए[5] जोयणपरिमंडलाए[6] सुसराए घंटाए तिक्खुत्तो उल्लालियाए समाणीए से[12] सूरियाभे विमाणे पासाय[13]विमाणणिक्खुडावडियसद्दघंटापडिसुयासयसहस्ससंकुले[14] जाए[15] याऽवि[16] होत्था।

[२६] १ त्रिकृत्वः–त्रीन् वारान् २ उल्लालयति–ताडयति ३ ततः–४'णं' इति वाक्यालङ्कारे ४ तस्यां ५ मेघौघरसितगम्भीरमधुरशब्दायाम् ६ योजनपरिमण्डलायाम् ७ सुस्वराभिधानायाम् ८ घण्टायाम् ९ त्रिकृत्वः १० ताडितायाम् ११ सत्याम् १२ यत् सूर्याभं विमानं १३ तत्प्रासादनिष्कुटेषु च ये आपतिताः शब्दाः–शब्दवर्गणापुद्गलास्तेभ्यः समुच्छलितानि यानि घण्टाप्रतिश्रुतां शतसहस्राणि–घण्टाप्रतिशब्दलक्षाणि तैः–संकुलम् १५ अपि १४ जातम् १६ अभूत्–किमुक्तं भवति ?–घण्टायां महता प्रयत्नेन ताडितायां ये विनिर्गताः शब्दपुद्गलास्तत्प्रतिघातवशतः सर्वासु दिक्षु विदिक्षु च* दिव्यानुभावतः समुच्छलितैः प्रतिशब्दैः सकलमपि विमानमेकयोजनलक्षमानमपि बधिरितमुपजायत इति। एतेन 'द्वादशभ्यो योजनेभ्यः समागतः शब्दः श्रोत्रग्राह्यो भवति न परतः ततः कथमेकत्र ताडितायां घण्टायां सर्वत्र तच्छब्दश्रुतिरुपजायते ?' इति यच्चोद्यते तदपाकृतमवसेयम्, सर्वत्र दिव्यानुभावतः तथारू-

४ विवरणकारेण एतत् सूचनं बारवारं कृतम्, तच्च अस्माभिः सर्वत्र न न्यस्तम्। * च शब्दानु–पा० ५।

[१]तए णं तेसिं[२] सूरियाभविमाणवासिणं बहूणं वेमाणियाणं देवाण य देवीण य एगंतरइपसत्तनिच्चपमत्तविसयसुहमुच्छियाणं सुसर[३]घंटारवविउलबोलतुरियचवलपडिबोहणे कए समाणे [४]घोसणकोउहलदिन्नकन्नएगग्गचित्तउवउत्तमाणसाणं [५]से पायत्ताणीयाहिवई देवे तंसि घंटारवंसि णिसंतपसंतंसि

पमतिरूपप्रतिशब्दोच्छलने यथोक्तदोषासंभवात् ।

१ ततः २ तेषां सूर्याभविमानवासिनां बहूनां वैमानिकदेवानां देवीनां च एकान्तेन सर्वात्मना रतौ–रमणे प्रसक्ता एकान्तरतिप्रसक्ता अत एव नित्यं–सर्वकालं प्रमत्ता नित्यप्रमत्ताः, कस्मादिति चेत्? अत आह–विषयसुखेषु मूर्च्छिता–अध्युपपन्ना विषयसुखमूर्च्छिताः ततो नित्यप्रमत्ताः,⊖ तेषाम् ३ सुस्वराभिधानाया घण्टाया रवस्य यः सर्वासु दिक्षु विदिक्षु च प्रतिशब्दोच्छलनेन विपुलः–सकलविमानव्यापितया विस्तीर्णो बोलः–कोलाहलस्तेन त्वरितं–शीघ्रं चपलं–आकुलं प्रतिबोधने कृते सति ४ 'कीदृग् नाम घोषणं भविष्यति' इत्येवं घोषणे कुतूहलेन दत्तौ कर्णौ यैस्ते घोषणकुतूहलदत्तकर्णाः तथा एकाग्रं–घोषणाश्रवणैकविषयं चित्तं येषां ते एकाग्रचित्ताः एकाग्रचित्तत्वेऽपि कदाचिदनुपयोगः स्यात् अत आह–उपयुक्तमानसाः○ तेषाम् ५ पदात्यनीकाधिपतिर्देवः ६ तस्मिन् घण्टारवे नितरां शान्तो निशान्तः–अत्यन्तमन्दीभूतस्ततः प्रकर्षेण–सर्वात्मना शान्तः प्रशान्तः× तस्मिन्

⊖ "ततः पदत्रयस्य पदद्वयमीलनेन विशेषणसमास."–राय० वि०। ○ "ततः पूर्वपदेन विशेषणसमासः" राय० वि०। × "ततः

महया महया सद्देणं उग्घोसेमाणे उग्घोसेमाणे एवं वदासी–हंदं सुणंतु भवंतो सूरियाभविमाणवासिणो बहवे वेमाणिया देवा य देवीओ य सूरियाभविमाणवइणो वयणं हियसुहत्थं–'आणवेइ णं भो ! सूरियाभे[11] देवे, [12]गच्छइ णं भो ! सूरियाभे देवे [13]जंबूदीवं दीवं भारहं वासं आमलकप्पं नयरीं अंबसालवणं चेइयं समणं भगवं महावीरं अभिवंदए, तं तुब्भेऽवि णं देवाणुप्पिया ! सव्विड्ढीए अकालपरिहीणा चेव सूरियाभस्स देवस्स अन्तियं पाउब्भवह'।

१ महता महता शब्देन २ उद्घोषयन् ३ एवमवादीत्–४ ४'हन्त'इति हर्षे हर्षश्च स्वामिनाऽऽदिष्टत्वात् श्रीमन्महावीरपादवन्दनार्थं च= प्रस्थानसमारम्भात्, ५ शृण्वन्तु ६ भवन्तो बहवः सूर्याभविमानवासिनो वैमानिकदेवा देव्यश्च ७ सूर्याभविमानपतेः ८ वचनं हितसुखार्थं हितार्थं सुखार्थं चेत्यर्थः तत्र हितं जन्मान्तरेऽपि कल्याणावहम्–तथाविधकुशलम् सुखं तस्मिन् भवे निरुपद्रवता ९आज्ञापयति १० भोः ! देवानांप्रियाः ! ११ सूर्याभो देवो यथा १२ गच्छति भोः ! सूर्याभो देवो १३ 'जम्बूद्वीपं द्वीपम्' इत्यादि तदेव यावत् 'अन्तिके प्रादुर्भवत' । [पृ० ६८ पं० ५]

–'छिन्नप्ररूढः' इत्यादौ इव विशेषणसमास."–राय० विव० । ४ "उक्तं च "हन्त* हर्षेऽनुकम्पायाम्"इत्यादि "–राय० विव० । = च समारम्भात् पा० ५–४ । भा० १ ।

– पूर्वं छिन्नः पश्चात् प्ररूढ 'छिन्नप्ररूढ.' तद्वत् अत्र निशान्त–प्रशान्तपदयोः समासः । * "हन्त हर्षेऽनुकम्पायां वाक्यारम्भविषादयोः"–अमरकोशः नानार्थव० तृ० का० श्लो० २४३ ।

[२७]तए[१] णं ते[२] सूरियाभविमाणवासिणो बहवे वेमाणिया देवा देवीओ य[३] पायत्ताणियाहिवइस्स[४] देवस्स अंतिए[५] एयमट्ठं[६] सोच्चा णिसम्म हट्ठतुट्ठ जाव [कं० १३ पं० २]-हियया[७] अप्पे=गइया[८] वन्दणवत्तियाए[९] अप्पेगइया[१०] पूयणवत्तियाए अप्पेगइया[११] सक्कारवत्तियाए+ अप्पेगइया[१३] संमाणवत्तियाए[१४] अप्पेगइया[१५] [१६]कोऊहलजिणभत्तिरागेणं

[२७]१ ततः २ ते सूर्याभविमानवासिनो बहवो वैमानिका देवा देव्यश्च ३ पदात्यनीकाधिपतेर्देवस्य ४ समीपे ५ एनम्-अनन्तरोक्तमर्थं ६ श्रुत्वा ७ अपिः सम्भावनायाम् एककाः-केचन ८ वन्दनप्रत्ययम्-वन्दनम्-अभिवादनं प्रशस्तकायवाग्मनःप्रवृत्तिरूपं तत्प्रत्ययम्-तत् मया भगवतः श्री-मन्महावीरस्य कर्त्तव्यमित्येवंनिमित्तम्, ९ अप्येकका: १० पूजनप्रत्ययम्-पूजनं-गन्धमाल्यादिभिः समभ्यर्चनम् ११ अप्येककाः १२ सत्कारप्रत्ययम्-सत्कारः-स्तुत्यादिगुणोन्नतिकरणम् १३ अप्येककाः १४ सम्मानो-मानसः प्रीतिविशेषः, १५ अप्येककाः १६कु-तूहलजिनभक्तिरागेण-कुतूहलेन-कौतुकेन 'कीदृशो भगवान् सर्वज्ञः सर्वदर्शी श्रीमन्महा-

= अपि+एकका:-अप्येकका:-अप्पेगइआ। + -ए एवं संमाण-वि० बा०। ~ -मन्महावीरेण इत्येवं रूपेण यो जिने भगवति-भा० २। ~ लिखितप्रतिगते मूलसूत्रपाठे 'कोऊहलवत्तियाए'......'जिणभत्तिरागेण' इत्येवंरूपेण सुव्यवहितः पृथक् पृथक् निर्देशो लभ्यते। विवरणकारस्तु 'कुतूहलजिनभक्तिरागेण' इत्येवं समस्तमिव एकं पदं व्याख्याति, ततः विवरणकारप्राप्तपाठः प्रतिगतमूलपाठाद् भिन्नः प्रतिभाति। अत्र च विवरणानुसारी पाठक्रमो न्यस्तः।

अप्पेगईया सूरियाभस्स देवस्स वयण≈मणुयत्तेमाणा अप्पेगईया अस्सुयाइं सुणेस्सामो अप्पेगईया सुयाइं निस्संकियाइं करिस्सामो [पृ०४० पं० ४] अप्पेगतिया अन्नमन्नमणुयत्तमाणा अप्पेगइया जिणभत्तिरागेणं अप्पेगइया 'धम्मो'त्ति अप्पेगईया 'जीयमेयं'ति कट्टु संन्विड्ढीए [पृ० ६९ पं० १] जाव अकालपरिहीणा चेव सूरियाभस्स देवस्स अन्तियं पाउब्भवन्ति।

[२८]तए० णं से सूरियाभे देवे ते सूरियाभविमाणवासिणो बहवे वेमाणिया देवा य देवीओ य अकालपरिहीणा चेव अन्तियं पाउब्भवमाणे पासति पासित्ता हट्ठतुट्ठ [कं० १३ पं०२] जाव-हियए आभिओगियं देवं सद्दावेति

सूर्याभः आभियोगिकं विमानं रचयितुमादिशति

वीरः' इत्येवंरूपेण =यो जिने-भगवति वर्द्धमानस्वामिनि भक्ति8रागो-भक्तिपूर्वकोऽनुरागस्तेन १ अप्येके २ सूर्याभस्य देवस्य ३ वचनम्-आज्ञामनुवर्त्तमानाः ४ अप्येकका: ५ 'अश्रुतानि-पूर्वमनाकर्णितानि स्वर्गमोक्षप्रसाधनकानि वचांसि श्रोष्यामः' इति बुद्ध्या ६ अप्येकका: ७'श्रुतानि-पूर्वमाकर्णितानि यानि शङ्कितानि जातानि तानि इदानीं निःशङ्कितानि करिष्यामः' इति बुद्ध्या ८अप्येकका: ९ जीतमेतत्-कल्प एष इति कृत्वा। १० 'सन्निड्ढीए' इत्यादि प्राग्वत् [पृ० ६९ पं० ३]

≈ -मणुमन्नेमाणा-भा० १-२। ० ततः स सूर्याभो देवः तान् सूर्याभविमानवासिनः बहून् वैमानिकान् देवांश्च देवीश्च अकालपरिहीनान् चैव अन्तिकं प्रादुर्भवमानान् पश्यति दृष्ट्वा हृष्टतुष्ट-यावद्-हृदयः आभियोगिकं देवं शब्दापयति शब्दापयित्वा एवम् अवादीत्-क्षिप्रमेव भो! देवानुप्रिया:! = यो जने-पा० ५। यो भग-भा० १। यो जने 'भगवान्' रूपेण यो जने 'भगवान्' इति 'वर्धमानस्वामी' इनि भक्तिरा-पा० ४। 8 रागेण भक्ति-भा० १।

सद्दाविता एवं वयासी–खिप्पामेव भो! देवाणुप्पिया! अणेग[1]खम्भसयसंनिविट्ठं [2]लीलट्ठियसालभंजियागं [3]ईहामियउसभतुरगनरमगरविहगवालगकिंनररुरुसरभचमरकुञ्जरवणलयपउमलयभत्तिचित्तं [4]खंभुग्गय*वइरवेइयापरिगयाभिरामं [5]विज्जाहरजमलजुय⊖लजंतजुत्तं पिव [6]अच्चीसहस्समालणीयं [7]रूवगसहस्सकलियं [8]भिसमाणं [9]भिब्भिसमाणं [10]चक्खुल्लोयणलेसं [11]सुहफासं [12]सस्सिरीयरूवं [13]घण्टावलिचलियमहुरमणहरसरं

[२८]१अनेकेषु स्तम्भशतेषु सन्निविष्टं, २लीलया स्थिता लीलास्थिताः, अनेन तासां पुत्तलिकानां सौभाग्यमावेदयति, लीलास्थिताः शालभञ्जिकाः–पुत्तलिका यत्र तत् तथा ३ ईहामृगा–वृका व्यालाः–श्वापदभुजङ्गा ईहामृगऋषभतुरगनरमकरविहगव्यालकिन्नररुरुसरभचमरकुञ्जरवनलतापद्मलतानां भक्त्या–विच्छित्त्या चित्रम्–आलेखो यत्र तत् तथा ४ तथा स्तम्भोद्गतया–स्तम्भोपरिवर्त्तिन्या वज्ररत्नमय्या वेदिकया परिगतं सत् यदभिरामं तत् स्तम्भोद्गतवज्रवेदिकापरिगताभिरामम् ५ विद्याधरयोर्यद् यमलयुगलं–समश्रेणीकं द्वन्द्वं विद्याधरयमलयुगलं तच्च तद् यन्त्रं च–सञ्चरिष्णुपुरुषप्रतिमाद्वयरूपं तेन युक्तं तदिव ६ तथा अर्चिषां–किरणानां सहस्रैर्मालनीयं–परिवारणीयं○ अर्चिःसहस्रमालनीयम् तथा ७ रूपकसहस्रकलितं ८ दीप्यमानं ९ अतिशयेन देदीप्यमानं, १० चक्षुः–कर्तृ–लोकने लिसतीव–दर्शनीयत्वातिशयात् श्लिष्यतीव यत्र तत् तथा, ११ शुभः–कोमलः स्पर्शो यस्य तत् तथा १२ सश्रीकानि–सशोभकानि रूपाणि–रूपकाणि यत्र तत् सश्रीकरूपं १३ घण्टावलेः–घण्टापङ्क्तेर्वातवशेन ⊖चलितायाः–कम्पितायाः मधुरः–श्रोत्रप्रियो मनोहरो–मनो-

* –यत्ररवइ–भा० १। ⊖ –यल जंत–भा० २। ○ –यं अर्चिसहस्रकलितं दी–पा० ५–४। भा० १। ⊖ "चलितशब्दस्य विशेष्यात् परनिपातः प्राकृतत्वात्"–राय० विव०।

सुहं[1] कंतं[2] दरिसणिज्जं[3] णिउणओचिय[4]मिसिमिसिंत[5]मणिरयणघंटियाजालपरिक्खित्तं[6] जोयणसयसहस्सवित्थिण्णं[7] दिव्वं[8] गमणसज्जं सिग्घगमणं[9] णाम जाणविमाणं[10] वि○उव्वाहि, विउव्वित्ता खिप्पामेव एयमाणत्तियं पच्च=प्पिणाहि।

[२९] तए णं से आभिओगिए देवे सूरियाभेणं देवेणं एवं वुत्ते समाणे हट्ठे जाव–हियए करयलपरिग्गहियं जाव पडिसुणेइ जाव पडिसुणेत्ता उत्तरपुरत्थिमं दिसीभागं अवक्कमति [कं० १९ पं० ३] अवक्कमित्ता वेउव्वियसमुग्घाएणं समोहणइ समोहणित्ता संखेज्जाइं जोयणाइं जाव अहाबायरे पोग्गले परिसाडंति परिसाडित्ता अहासुहुमे पोग्गले परियाएइ परियाइत्ता दोच्चं पि वेउव्वियसमुग्घाएणं समोहणित्ता अणेगखम्भसयसन्निविट्ठं [पृ० ७६ पं० १] जाव दिव्वं जाणविमाणं ○विउव्विउं पवत्ते यावि होत्था।

निर्वृतिकरः स्वरो यत्र तत् तथा १ शुभं यथोदितवास्तुलक्षणोपेतत्वात् २ कान्तं कमनीयं, अत एव ३ दर्शनीयं, तथा ४ निपुणक्रियम्–५ उचितानि–खचितानि ६ देदीप्यमानानि मणिरत्नानि यत्र घण्टिकाजाले तत् तथा तेन घण्टिकाजालेन–क्षुद्रघण्टिकासमूहेन परि–सामस्त्येन क्षिप्तं–व्याप्तं यत् तत् तथा ७ योजनशतसहस्रविस्तीर्णं–योजनलक्षविस्तारं ८ दिव्यं प्रधानं गमनसज्जं गमनप्रवणं ९ शीघ्रगमननामधेयं १० यानरूपं–वाहनरूपं विमानं यानविमानम्। शेषं प्राग्वत्।

○ –उव्वह भा० २। = –प्पिणह भा० २।

[२९] ○ विकुर्वितु प्रवृत्तश्चापि अभूत्।

रायपसेणइयं।

॥७८॥

विमानरचना वर्णनम्

[३०] तए णं से आभिओगिए देवे [१]तस्स दिव्वस्स जाणविमाणस्स [२]तिदिसिं ४तिसो[३]वाणपडिरूवए विउव्वति, तंजहा–पुरत्थिमेणं दाहिणेणं उत्तरेणं, तेसिं[४] तिसोवाणपडिरूवगाणं [५]इमे एयारूवे व[६]ण्णावासे पण्णत्ते, [७]तंजहा– [८]वइरामया [९]णिम्मा [१०]रिट्ठामया [११]पतिट्ठाणा [१२]वेरुलियामया [१३]खंभा [१४]सुवण्णरुप्पमया [१५]फलगा [१६]लोहितक्खमइयाओ [१७]सूईओ [१८]वयरामया [१९]संधी [२०]णाणामणिमया [२१]अवलंबणा [२२]अवलंबणबाहाओ य [२३]पासादीया [पृ० १८ पं० १] जाव

[३०] १तस्य दिव्यस्य यानविमानस्य २तिस्रो दिशः समाहृतास्त्रिदिक् तस्मिन् त्रिदिशि ३त्रीणि एकैकस्यां दिशि एकैकस्य भावात् त्रिसोपानप्रतिरूपकाणि प्रतिविशिष्टं रूपं येषां तानि प्रतिरूपकाणि त्रयाणां सोपानानां समाहारस्त्रिसोपानं त्रिसोपानानि च तानि प्रतिरूपकाणि *च ४ तेषां च त्रिसोपानप्रतिरूपकाणाम् ५ अयमेतद्रूपो–वक्ष्यमाणस्वरूपो ६ वर्णावासो वर्णकनिवेशः प्रज्ञप्तः, ७ तद्यथा–८ वज्रमया वज्ररत्नमया ९ नेमाः–भूमिकातः ऊर्ध्वं निर्गच्छन्तः प्रदेशाः, १० रिष्टरत्नमयानि ११ प्रतिष्ठानानि त्रिसोपानमूलप्रदेशाः, १२ वैडूर्यमयाः १३ स्तम्भाः, १४ सुवर्णरूप्यमयानि १५ फलकानि–त्रिसोपानाङ्गभूतानि, १६ लोहिताक्षमय्यः १७ सूचयः–फलकद्वयसम्बन्धविघटनाभावहेतु○पादुकास्थानीयाः, १८ वज्रमया वज्ररत्नपूरिताः १९ सन्धयः फलकद्वयापान्तरालप्रदेशाः, २० नानामणिमयानि २१ अवलम्ब्यन्ते इति अवलम्बनानि–अवतरतामुत्तरतां चालम्बनहेतुभूता अवलम्बनबाहातो विनिर्गताः केचिदवयवाः, २२ अवलम्बनबाहाश्च नानामणिमय्यः, आलम्बनबाहा नाम उभयोः पार्श्वयोरवलम्बनाश्रयभूता भित्तयः २३ 'पासाइयाओ'इत्यादि

४ तिसोमाण–भा० १। * "इति विशेषणसमासः विशेषणस्यात्र परनिपात' प्राकृतत्वात्"–राय० वि०। ○ –पादका–मा० १–२। पा० ४–५।

पडिरूवा ।

[३१]तेसिं [1] णं तिसोवाणपडिरूवगाणं [2] पुरओ [3] पत्तेयं [4] पत्तेयं तोरणं [5] पण्णत्तं [6], तेसिं [7] णं तोरणाणं इमे एयारूवे वण्णावासे पण्णत्ते, [10] तंजहा– [11] तोरणा णाणामणिमया [12] णाणामणिमएसु [13] थंभेसु [14] उवनिविट्ठसंनिविट्ठा [15] [16] विविहमुत्तन्तरारूवोवचिया [17] [18] विविहतारारूवोवचिया [पृ० ७६ पं० २] जाव [19] पडिरूवा ।

पदचतुष्टयं प्राग्वत् ।

[३१]१ तेषां २ त्रिसोपानप्रतिरूपकाणां ३ पुरतः ४ प्रत्येकं प्रत्येकं ५ तोरणं ६ प्रज्ञप्तं, ७ तेषां च तोरणानाम् ८ अयमेतद्रूपो ९ वर्णव्यासो–वर्णकनिवेशः प्रज्ञप्तः, १० तद्यथा–११ तोरणा १२ नानामणिमया इत्यादि, क्वचिदेवं पाठः–'तेसि णं तिसोवाणपडिरूवगाणं पुरतो तोरणे विउव्वइ तोरणा नाणामणि=मया'इत्यादि । मणयः–चन्द्रकान्ताद्याः, विविधमणिमयानि तोरणानि १३ नानामणिमयेषु १४ स्तम्भेषु १५ उपनिविष्टानि–सामीप्येन स्थितानि, १६ तानि च कदाचिच्चलानि अथवा अपदपतितानि वाऽऽशङ्क्येरन् तत आह–सम्यक्–निश्चलतया अपदपरिहारेण च निविष्टानि, उपनिविष्टसन्निविष्टानि, १७ विविधा–विविधविच्छित्तिकलिता मुक्ता–मुक्ताफलानि 'अन्तरा' इति अन्तराशब्दोऽगृहीतवीप्सोऽपि सामर्थ्याद् वीप्सां गमयति, अन्तरा अन्तरा रूपोपचितानि यावता यत्र तानि तथा, १८ विविधैस्तारारूपैः–तारिकारूपैरुपचितानि, तोरणेषु हि शोभार्थं तारिका निबध्यन्ते इति प्रतीतं लोकेऽपि इति विविधतारारूपोपचितानि १९ 'जाव पडिरूवा'इति 'यावत्'करणात् 'ईहामिगउसभतुरगनरमगरविहगवालगकिंनररुरुसरभचमरकुञ्जरवणलयपउम-

= विवरणकारदर्शितं पाठान्तरम् । ✓ "ततो विशेषणसमासः"–राय० विव० ।

रायपसेणइय।

[३२] तेसि णं तोरणाणं उप्पिं अट्ठट्ठमङ्गलगा पण्णत्ता, तंजहा–सोत्थिय–सिरिवच्छ–णन्दियावत्त–वद्धमाणग–भद्दासण–कलस–मच्छ–दप्पणा जाव [पृ० १९ पं० ४–पृ० २० पं० १] पडिरूवा। तेसिं च णं तोरणाणं [3]उप्पिं [4]बहवे किण्हचामरज्झया [पृ० २० पं० २] जाव सुक्किल्लचामरज्झया [5]अच्छा [6]सण्हा [7]रुप्पपट्टा [8]वइरदण्डा [9]जलयामलगन्धिया [10]सुरम्मा पासादीया दरिसणिज्जा अभिरूवा पडिरूवा विउव्वति।

॥८०॥

लयभत्तिचित्ता खम्भुग्गयवइरवेइयापरिगयाभिरामा विज्जाहरजमलजुगलजंतजुत्ता विव' एवं नाम स्तम्भद्वयसन्निविष्टानि तोरणानि व्यवस्थितानि यथ' विद्याधरयमलयुगलयन्त्रयुक्तानीव प्रतिभासन्ते इति, 'अच्चीसहस्समालणीया रूवगसहस्सकलिया भिसमाणा भिब्भिसमाणा चक्खुल्लोयणलेसा सुहफासा सस्सिरीयरूवा [पृ० ७६ पं०१–४] पासाइया दरिसणिज्जा अभिरूवा' इति परिग्रहः, क्वचिदेतत् साक्षाल्लिखितमपि दृश्यते=।

[३२] १ तेषां तोरणानाम् २ उपरि ३ बहवः कृष्णचामरयुक्ता ध्वजाः कृष्णचामरध्वजाः[पृ० २० पं० ९] एवं बहवो नीलचामरध्वजाः, लोहितचामरध्वजाः, हारिद्रचामरध्वजाः, ४शुक्लचामरध्वजाः, कथम्भूता एते सर्वेऽपि? इत्यत आह–५अच्छा–आकाशस्फटिकवदतिनिर्मलाः ६श्लक्ष्णाः–श्लक्ष्णपुद्गलस्कन्धनिर्मापिताः ७ रूप्यो–रूप्यमयो वज्रमयस्य दण्डस्योपरि पट्टो येषां ते रूप्यपट्टाः ८वज्रो–वज्ररत्नमयो दण्डो रूप्यपट्टमध्यवर्त्ती येषां ते वज्रदण्डाः, ९ तथा जलजानामिव–जलजकुसुमानां पद्मादीनामिवामलो न तु कुद्रव्यगन्धसम्मिश्रो यो गन्धः स जलजामलगन्धः स विद्यते येषां ते जलजामलगन्धिकाः, अत एव १०सुरम्याः प्रासादीयाः–इत्यादि-

= विवरणकारदर्शितः पाठभेदः।

तेसिं[11] णं तोरणाणं उप्पिं बहवे[12] [पृ०२१ पं०१] छत्तातिछत्ते[13] पडागाइपडागे[14] घंटाजुगले[15] उप्पलहत्थए[16] कुमुद-णलिण[17]-सुभग-सोगंधिय-पोंडरीय-महापोंडरीय-सतपत्त सहस्सपत्तहत्थए सव्वरयणामए[18] अच्छे जाव[19] पडिरूवे विउव्वति।

[३३] तए णं से आभिओगिए देवे तस्स[1] दिव्वस्स जाणविमाणस्स अंतो[2] बहुसमरमणिज्जं[3] भूमिभागं विउव्वति। से[4] जहा[5] णामए[6][7] आलिंगपुक्खरे[8] ति[9]

विशेषणचतुष्टयं प्राग्वत् । [पृ०११ पं०१२–] ११तेषां तोरणानामुपरि १२बहूनि [पृ० २१ पं०१–८] १३छत्रातिच्छत्राणि–छत्रात्–लोकप्रसिद्धात् एकसंख्याकात् अतिशायीनि छत्राणि उपर्यधोभावेन द्विसंख्यानि त्रिसंख्यानि वा छत्रातिच्छत्राणि १४पताकाभ्यो लोकप्रसिद्धाभ्योऽतिशायिन्यो दीर्घत्वेन विस्तारेण च पताकाः, १५बहूनि घण्टायुगलानि, बहूनि चामरयुगलानि, १६बहव उत्पलहस्ताः–उत्पलाख्यजलजकुसुमसमूहविशेषाः, एव बहवः १७पद्महस्तकाः नलिनहस्तकाः सुभगहस्तकाः सौगन्धिकहस्तकाः पुण्डरीकहस्तकाः शतपत्रहस्तकाः सहस्रपत्रहस्तकाः, पद्मादिविभागव्याख्यानं प्राग्वत् [पृ०२१ पं० १०] एते च छत्रातिच्छत्रादयः १८सर्वरत्नमया अच्छा–आकाशस्फटिकवदतिनिर्मला १९'यावत्'करणात् 'सण्हा लण्हा अभिरूवा' [पृ० १९ पं० ५–पृ० २० पं० ?] इति परिग्रहः ।

[३३] १तस्य दिव्यस्य यानविमानस्य २अन्तः–मध्ये ३बहुसमः सन् रमणीयो बहुसम?रमणीयो भूमिभागः प्रज्ञप्तः, किंविशिष्टः ? इत्याह–४तत्–सकललोकप्रसिद्धं ५'यथा' इति दृष्टान्तोपदर्शने ६'नाम' इति शिष्यामन्त्रणे ७'ए' इति वाक्यालङ्कारे ८आलिङ्गो–मुरजनामा वाद्यविशेषः तस्य पुष्करं–+चर्मपुलकं तत् किलात्यन्तसममिति तेनोपमा क्रियते ९ 'इति' शब्दाः सर्वेऽपि स्वस्वोपमाभूतवस्तु-

+ चर्मपुटम् तत् भा० २ ।

वा मुइंग[11]पुक्खरे इ वा परिपुण्णे[12] सरतले इ वा करतले[13] इ वा चंदमंडले[14] इ वा सूरमण्डले इ वा आयंसमंडले इ वा उरब्भचम्मे[16] इ वा वसहचम्मे इ वा वराहचम्मे इ वा सीहचम्मे इ वा वग्घचम्मे इ ×वा छगलचम्मे इ वा दीवियचम्मे[18] इ वा अणेगसंकुकीलगसहस्सवितते[19] णाणाविहपंचवन्नेहिं मणीहिं उवसोभिते आवड[21]-पच्चावड[22]-सेढि[23]-पसेढि-

परिसमाप्तिद्योतकाः १०'वा'शब्दाः समुच्चये ११मृदङ्गो लोकप्रतीतो मर्दलस्तस्य पुष्करं मृदङ्गपुष्करं १२ परिपूर्ण-पानीयेन भृतं तडाकं सरस्तस्य तलम्-उपरितनो भागः सरस्तलं, १३करतलं प्रतीतं, १४चन्द्रमण्डलं सूर्यमण्डलं च यद्यपि तत्त्ववृत्त्या उत्तानीकृतार्द्धकपित्थाकारं पीठप्रासादापेक्षया वृत्तालेखमिति तद्गतो दृश्यमानो भागो न समतलस्तथापि प्रतिभासते समतल इति तदुपादानं १५ आदर्शमण्डलं सुप्रसिद्धं १६ 'उरब्भचम्मे इ वा' इत्यादि, अत्र सर्वत्रापि 'अणेगसंकुकीलगसहस्सवितते' इति विशेषणयोगः, उरभ्रः-ऊरणः १७ वृषभ-वराह-सिंह-व्याघ्र-छगलाः प्रतीताः १८ द्वीपी-चित्रकः एतेषां प्रत्येकं चर्म १९ अनेकैः शङ्कुप्रमाणैः कीलकसहस्रैः, महद्भिर्हि कीलकैस्ताडितं प्रायो मध्ये क्षामं भवति तथारूपताडासम्भवात् अतः शङ्कुग्रहणं, विततं विततीकृतं ताडितमिति भावः, यथाऽत्यन्तं बहुसमं भवति तथा तस्यापि यानविमानस्यान्तर्बहुसमो भूमिभागः । पुनः कथम्भूतः? इत्याह-२० नानाविधाः-जातिभेदान्नानाप्रकारा ये पञ्चवर्णा मणयस्तैरुपशोभितः, कथम्भूतैः? इत्याह-आवर्त्तादीनि मणीनां लक्षणानि-२१ तत्र आवर्त्तः प्रतीतः २२ एकस्यावर्त्तस्य प्रत्यभिमुख आवर्त्तः प्रत्यावर्त्तः २३ श्रेणिः-तथाविधविन्दुजातादेः पङ्क्तिः २४ तस्याश्च श्रेणेर्या च निर्गता अन्या श्रेणिः

× वा भिगचम्मे इ वा छ-वि० वा० ।

[25]सोत्थिय–[26]सोवत्थिय-पूस-माणव–[27]वद्धमाणग-[28]मच्छंडग–मगरंडग–[29]जार–मार–[30]फुल्लावलि–[31]पउमपत्त–[32]सागरतरंग–[33]वसंतलय–पउमलयभत्तिचित्तेहिं[34] सच्छाएहिं[35] सप्पभेहिं[36] समरीईएहिं[37] सउज्जोएहिं[38] णाणाविहपंचवण्णेहिं[39] मणीहिं उवसोभिए तंजहा[40]–किण्हेहिं णीलेहिं लोहिएहिं हालिद्देहिं सुक्किलेहिं।

[३४] तत्थ[1] णं जे[2] ते किण्हा मणी तेसिं[3] णं मणीणं इमे[4] एतारूवे वण्णावासे[5] पण्णत्ते, से[6] जहा नाम ए जीमूतए

सा प्रश्रेणिः २५स्वस्तिकः प्रतीतः २६सौवस्तिक–पुष्यमाणवौ लक्षणविशेषौ लोकात् प्रत्येतव्यौ २७वर्द्धमानकं–शरावसम्पुटं २८मत्स्यकाण्डक–मकरकाण्डके प्रतीते २९जार–मार इति लक्षणविशेषौ सम्यग्मणिलक्षणवेदिनो लोकाद्वेदितव्यौ ३०पुष्पावलि-३१पद्मपत्र-३२सागरतरङ्ग–३३वासन्तीलता-पद्मलताः सुप्रतीता तासां ३४भक्त्या–विच्छित्त्या चित्रम्–आलेखो येषु ते आवर्त्तप्रत्यावर्त्तश्रेणिप्रश्रेणिस्वस्तिकसौवस्तिकपुष्यमाणववर्द्धमानकमत्स्याण्डकमकराण्डकजारमारपुष्पावलिपद्मपत्रसागरतरङ्गवासन्तीलतापद्मलताभक्तिचित्रास्तैः, किमुक्तं भवति ?–आवर्त्तादिलक्षणोपेतैः तथा ३५सच्छायैः सती–शोभना छाया–निर्मलत्वरूपा येषां ते सच्छायाः, तथा ३६सती–शोभना प्रभा–कान्तिर्येषां ते सत्प्रभाः तैः ३७समरीचिकैः–बहिर्विनिर्गतकिरणजालसहितैः ३८सोद्योतैः–बहिर्व्यवस्थितप्रत्यासन्नवस्तुस्तोमप्रकाशकरोद्योतसहितैः ३९एवम्भूतैर्नानाजातीयैः पञ्चवर्णैर्मणिभिरुपशोभितः, तानेव पञ्चवर्णानाह–४०'तंजहा–किण्हेहिं' इत्यादि सुगमम्।

[३४] १ तत्र तेषां पञ्चवर्णानां मणीनां मध्ये २ ×ये ते कृष्णा मणयः, ३तेषां ४ अयम्–अनन्तरमुद्दिश्यमान एतद्रूपः–अनन्तरमेव वक्ष्यमाणस्वरूपो ५वर्णावासो–वर्णकनिवेशः प्रज्ञप्तः, तद्यथा–६ स यथा नाम ७ जीमूतो–बलाहकः, स चेह प्रावृट्प्रारम्भसमये जलभृतो

× " 'ये कृष्णमणयः' इत्येव सिद्धे 'ते' इति वचनं भाषाक्रमार्थम्"–राय० विव०।

ई वा अंजणे[10] इ वा खंजणे[11] इ वा कज्जले[12] इ वा मसी[13] इ वा मसीगुलिया[14] इ वा गवले[15] इ वा गवलगुलिया[16] इ वा भमरे[17] इ वा भमरावलिया[18] इ वा भमरपतंगसारे[19] ति वा जंबूफले[20] ति वा अद्दारिट्ठे[21] इ वा परपुट्ठे[22] इ वा गए[23] इ वा गयकलभे[24] इ वा किण्हसप्पे[25] इ वा किण्हकेसरे[26] इ वा आगासथिग्गले[27] इ वा किण्हासोए[28] इ वा किण्हकणवीरे[29] इ वा किण्हबंधुजीवे[30]

वेदितव्यः तस्यैव प्रायोऽतिकालिमसम्भवात्, ८ 'इति' शब्दः उपमाभूतवस्तुनामपरिसमाप्तिद्योतकः ९ 'वा'शब्दः उपमानान्तरापेक्षया समुच्चये एवं सर्वत्र १०अञ्जनं–सौवीराञ्जनम् रत्नविशेषो वा ११खञ्जनं–दीपमल्लिकामलः, १२कज्जलं–दीपशिखापतितं, १३मषी–तदेव कज्जलं ताम्रभाजनादिषु सामग्रीविशेषेण घोलितम् १४मसीगुलिका–घोलितकज्जलगुटिका, क्वचित् 8'मसी इति वा मसीगुलिया इति वा' न दृश्यते १५गवलं माहिषं शृङ्गं तदपि चोपरितनत्वग्भागापसारेण द्रष्टव्यं तत्रैव विशिष्टस्य कालिम्नः सम्भवात् १६तथा च तस्यैव माहिषशृङ्गनिबिडतरसारनिर्वर्तिता गुटिका गवलगुटिका १७ भ्रमरः–प्रतीतः १८ भ्रमरावली–भ्रमरपङ्क्तिः १९ भ्रमरपतङ्गसारः–भ्रमरपक्षान्तर्गतो विशिष्टकालिमोपचितप्रदेशः २० जम्बूफलं प्रतीतं २१आर्द्रा–ऽरिष्टकः–कोमलः काकः २२ परपुष्टः–कोकिलः २३गजो २४ गजकलभश्च प्रतीतः २५कृष्णसर्पः कृष्णवर्णसर्पजातिविशेषः २६ कृष्णकेसरः–कृष्णबकुलः २७ आकाशथिग्गलं शरदि मेघविनिर्मुक्तमाकाशखण्डं तद्धि कृष्णमतीव प्रतिभातीति तदुपादानं २८कृष्णाशोक–२९ कृष्णकणवीर–३०कृष्णबन्धुजीवाः अशोक–कणवीर–बन्धुजीववृक्षभेदाः अशोकादयो हि पञ्चवर्णा भवन्ति ततः शेषवर्णव्युदासार्थं कृष्णग्रहणम्। एतावत्युक्ते त्वरावानिव शिष्यः पृच्छति–

---

8 विवरणकारदर्शित पाठान्तरम्। –भाषायाम् 'कूणुं–लीलु अरीठुं'। "अरिष्टो लशुने निम्बे फेनिले कङ्क–काकयोः" [हैमअने० तृ० का० श्लो० १४२] इति वचनात् अत्र 'काकः' इति निर्देशः संभाव्यते ।

इ वा, [३१]भवे [३२]एयारूवे सिया ? [३३]णो इणट्ठे समट्ठे, [३४]ओवम्मं [३५]समणाउसो ! [३६]ते णं किण्हा मणी इत्तो [३८]इट्ठतराए चेव [३९]कंततराए चेव [४०]मणुण्णंतराए चेव [४१]मणामतराए चेव वण्णेणं पण्णत्ता ।

३१भवेत् मणीनां कृष्णो वर्णः ३२एतद्रूपो जीमूतादिरूपः ? सूरिराह–३३नायमर्थः समर्थः नायमर्थ उपपन्नः यदुत–एवम्भूतः कृष्णो वर्णो मणीनामिति, यद्येवं तर्हि किमर्थं जीमूतादीनां दृष्टान्तत्वेनोपादानम्? अत आह–३४औपम्यम्–उपमामात्रमेतत् उदितं हे ३५ श्रमण–आयुष्मन् ! ३६यावता पुनस्ते कृष्णा मणयः ३७ इतो जीमूतादेः ३८ इष्टतरका एव कृष्णेन वर्णेन अभीप्सिततरका एव, ३९ तत्र किञ्चिदकान्तमपि केषाञ्चिदिष्टतमं भवति ततोऽकान्तताव्यवच्छित्त्यर्थमाह–कान्ततरका एव अतिस्निग्धमनोहारिकालिमोपचिततया जीमूतादेः कमनीयतरकाः ४० अत एव मनोज्ञतरका एव–मनसा ज्ञायते–अनुकूलतया स्वप्रवृत्तिविषयीक्रियते इति *मनोज्ञं मनोऽनुकूलं ४१ तत्र मनोज्ञतरमपि किञ्चिद् मध्यमं भवेत् ततः सर्वोत्कर्षप्रतिपादनार्थमाह–+मनआपतरका एव द्रष्टॄणां मनांसि आप्नुवन्ति–आत्मवशतां नयन्तीति मनआपाः–।

* "ततः प्रकर्षविवक्षायां 'तरप्' प्रत्ययः"–राय० वि०। + नवाङ्गीवृत्तिकारः श्रीअभयदेवसूरिः व्याख्याप्रज्ञप्तिवृत्तौ 'मणाम'शब्द संस्कृत–'मनोऽम' (मनस्+अम्–'अम्' धातुः 'गम्' धातो: पर्याय) शब्देन सह तुलयति, "अमनोऽम्यतया चिन्तयाऽपि अमनोगम्यतया"—श० १ उ० १ राय०जिना० भा० १ पृ० ६२ । – "ततः प्रकर्षविवक्षायां 'तरप्'प्रत्ययः प्राकृतत्वाच्च 'प'कारस्य 'म'कारे 'मणामतरा' इति भवति"—राय० वि० ।

रायपसेण-इयं।

॥८६॥

[३५] तत्थ णं जे[2] ते नीला मणी तेसिं[3] णं मणीणं [4]इमे एयारूवे [5]वण्णावासे पण्णत्ते, से[6] जहा नाम ए [7]भिंगे इ वा [8]भिंगपत्ते इ वा [9]सुए इ वा [10]सुयपिच्छे इ वा [11]चासे इ वा [12]चासपिच्छे इ वा [13]णीली इ वा [14]णीलीभेदे इ वा [15]णीलीगुलिया इ वा [16]सामाए इ वा [17]उच्चन्तगे इ वा [18]वणराती इ वा [19]हलधरवसणे इ वा [20]मोरग्गीवा इ वा [21]पारेवयग्गीवा इ वा [22]अयसिकुसुमे इ वा [23]बाणकुसुमे इ वा [24]अंजणकेसियाकुसुमे इ वा [25]नीलुप्पले इ वा [26]णीलासोगे इ वा [27]णीलकणवीरे इ वा [28]णीलबंधुजीवे इ वा, [29]भवे एयारूवे सिया? णो इणट्ठे समट्ठे, ते णं णीला मणी एत्तो इट्ठतराए चेव

[३५] १ तत्र तेषां मणीनां मध्ये २ ये ते नीला मणयः ३तेषाम् ४ अयमेतद्रूपो ५ वर्णावासो–वर्णकनिवेशः प्रज्ञप्तः, तद्यथा ६ स यथा नाम ७ भृङ्गः–कीटविशेषः पक्ष्मलः ८भृङ्गपत्रं तस्यैव भृङ्गाभिधानस्य कीटविशेषस्य पक्ष्मः ९ शुकः–कीरः १० शुकपिच्छं–शुकस्य पत्रं ११चाषः–पक्षिविशेषः १२चाषपिच्छं चाषपक्षः १३नीली प्रतीता १४नीलीभेदो–नीलीच्छेदः १५नीलीगुलिका–गुलिका-द्रव्यगुटिका १६ श्यामाको–धान्यविशेषः १७ उच्चंतगो दन्तरागः १८ वनराजी प्रतीता १९ हलधरो–बलदेवस्तस्य वसनं हलधर-वसनं तच्च किल नीलं भवति सदैव तथास्वभावतया, हलधरस्य नीलवस्त्रपरिधानात् २० मयूरग्रीवा–२१ पारापतग्रीवा–२२–अतसी-कुसुम–२३ बाणवृक्षकुसुमानि प्रतीतानि, इत ऊर्ध्वं क्वचित् ='इंदनीले इ वा महानीले इ वा मरगते इ वा' इति दृश्यते तत्रेन्द्रनील–महानील–मरकता रत्नविशेषाः प्रतीताः, २४ अञ्जनकेशिका–वनस्पतिविशेषः तस्य कुसुममञ्जनकेशिकाकुसुमं २५ नीलोत्पलं–कुवलयं, २६ नीलाशोक–२७ नीलकणवीर–२८ नीलबन्धुजीवा अशोकादिवृक्षविशेषाः । २९ 'भवे एयारूवे' इत्यादि प्राग्वद् [पृ०

= विवरणकारनिर्दिष्ट पाठान्तरम् ।

जाव [पृ० ८५ पं० २] वण्णेणं पण्णत्ता ।

[३६] तत्थ[१] णं जे[२] ते लोहियगा मणी तेसिं[३] णं मणीणं इमे[४]यारूवे वण्णावासे[५] पण्णत्ते, से[६] जहा णाम ए सस[७]रुहिरे इ वा उरब्भ[८]रुहिरे इ वा* वराह[९]रुहिरे इ वा मणुस्स[१०]रुहिरे इ वा महिस[११]रुहिरे इ वा बालिंद[१२]गोवे इ वा बाल[१३]दिवाकरे इ वा संझब्भ[१४]रागे इ वा गुंजद्ध[१५]रागे इ वा जासुअण[१६]कुसुमे इ वा किंसुय[१७]कुसुमे इ वा पालि[१८]×यायकुसुमे इ वा जाई[१९]हिंगुलए ति वा सिल[२०]प्पवाले ति वा पवाल[२१]अंकुरे इ वा

---

८५ पं० ३] व्याख्येयम् ।

[३६] तथा १ तत्र तेषां मणीनां मध्ये २ये ते लोहिता मणयः ३तेषाम् ४ अयमेतद्रूपो ५वर्णावासः प्रज्ञप्तः, तद्यथा—६ तद्यथा नाम ७ शशकरुधिरं ८ उरभ्रः—ऊरणस्तस्य रुधिरं, ९ वराहः—शूकरस्तस्य रुधिरं, १० मनुष्यरुधिरं ११ महिषरुधिरं च प्रतीतं एतानि हि किल शेषरुधिरेभ्यो लोहितवर्णोत्कटानि भवन्ति तत एतेषामुपादानम् । १२ बालेन्द्रगोपकः—सद्योजातेन्द्रगोपकः स हि प्रवृद्धः सन्नीषत्पाण्डुरो रक्तो भवति ततो बालग्रहणं इन्द्रगोपकः—प्रथमप्रावृट्कालभावी कीटविशेषः १३ बालदिवाकरः—प्रथममुद्गच्छन् सूर्यः १४ सन्ध्याभ्ररागो—वर्षासु सन्ध्यासमयभावी अभ्ररागः १५ गुञ्जा—लोकप्रतीता तस्यार्द्धे रागो गुञ्जार्द्धरागः, गुञ्जाया हि अर्द्धमतिरक्तं भवति अर्द्धं चातिकृष्णमिति गुञ्जार्द्धग्रहणं १६ जपाकुसुम—१७ किंशुककुसुम—१८—पारिजातकुसुम—१९ जात्यहिङ्गुला लोकप्रसिद्धाः, २०शिलाप्रवालं—प्रवालनामा रत्नविशेषः २१ प्रवालाङ्कुरः—तस्यैव रत्नविशेषस्य प्रवालस्य अङ्कुरः, स हि तत्प्रथमोद्गतत्वेनात्य-

---

* वा नररुहिरे इ वा व—वि० बा० । × स० पारिजात-प्रा० पारिजाय, पारियाय मागधी—पालिजाय, पालियाय ।

रायपसेण-
इयं।

॥८८॥

लोहियक्खमणी[22] इ वा लक्खारसगे[23] ति वा किमिरागकंबले[24] ति वा चीणपिट्ठरासी[25] ति वा रत्तुप्पले[26] इ वा रत्तासोगे[27] ति वा रत्तकणवीरे[28] ति वा रत्तबंधुजीवे[29] ति वा, भवे[30] एयारूवे सिया? णो इणट्ठे समट्ठे, ते णं लोहिया मणी इत्तो इट्ठतराए चेव जाव [पृ० ८५ पं० २] वण्णेणं पण्णत्ता।

[३७] तत्थ[1] णं जे[2] ते हालिद्दा मणी तेसिं[3] णं मणीणं इमेयारूवे[4] वण्णावासे[5] पण्णत्ते-से[6] जहा णाम ए चंपए[7] ति वा चंपछल्ली[8] ति वा चंपगभेए[9] इ वा हलिद्दा[10] इ वा हलिद्दाभेदे[11] ति वा हलिद्दागुलिया[12] ति वा हरियालिया[13] वा हरियालभेदे[14] ति वा हरियालगुलिया[15] ति वा चिउरे[16] इ वा चिउरंगराते[17] ति

न्तरक्तो भवति ततस्तदुपादानं २२ लोहिताक्षमणिर्नाम रत्नविशेषः २३ लाक्षारस-२४ कृमिरागरक्तकम्बल-२५ चीनपिष्टराशि-२६रक्तोत्पल-२७ रक्ताशोक-२८रक्तकणवीर-२९ रक्तबन्धुजीवाः प्रतीताः। ३० 'भवे एयारूवे' इत्यादि [पृ०८५ पं०३] प्राग्वत्।

[३७]१ तत्र तेषां मणीनां मध्ये २ये हरिद्रा मणयः ३तेषाम् ४एतद्रूपो ५वर्णावासः प्रज्ञप्तः, तद्यथा-६स यथा नाम ७चम्पकः सामान्यतः सुवर्णचम्पको वृक्षः, ८ चम्पकच्छल्ली-सुवर्णचम्पकत्वक्, ९ चम्पकभेदः-सुवर्णचम्पकच्छेदः १० हरिद्रा प्रतीता ११ हरिद्राभेदो-हरिद्राच्छेदः १२ हरिद्रागुटिका हरिद्रासारनिर्वर्तिता गुटिका १३ हरितालिका-पृथिवीविकाररूपा प्रतीता १४ हरितालिकाभेदो-हरितालिकाच्छेदः १५हरितालिकागुटिका-हरितालिकासारनिर्वर्तिता गुलिका= १६ चि*कुरो-रागद्रव्यविशेषः १७ ×चिकुराङ्गरागः-

= का विकुरो-पा० ५। * -कुरो गन्धद्रव्य—भा० २। × 'अङ्गराग' स्थाने 'अंगराय' इति अर्वाचीनप्राकृतशब्दविकारापेक्षया जायते, परंतु प्राचीनप्राकृतशब्दविकारापेक्षया 'अंगरात' इति अत्र मूलपाठे उल्लिखितम्। अर्वाचीने हि प्राकृते स्वरात् परेषा असयुक्ताना क-ग-च-ज-त-

वा[४] [१८]वरकणगनिघसे इ वा [१९]वरपुरिसवसणे ति वा अल्लकी[२०]कुसुमे ति वा चंपा[२१]कुसुमे इ वा कुहंडिया[२२]कुसुमे इ वा कोरंटकमल्ल[२३]दामे ति वा तड[२४]वडाकुसुमे इ वा घोसेडिया[२५]कुसुमे इ वा सु[२६]वण्णजूहियाकुसुमे इ वा सुहिरण्ण[२७]कुसुमे ति वा [२८]बीययकुसुमे इ वा पीया[२९]सोगे ति वा पीय[३०]कणवीरे ति वा पीय[३१]बंधुजीवे ति वा, [३२]भवे एयारूवे सिया? णो इणट्ठे समट्ठे, ते णं हालिद्दा मणी एत्तो इट्ठतराए चेव जाव [पृ० ८५ पं० २] वण्णेणं पण्णत्ता।

चिकुरसंयोगनिमित्तो वस्त्रादौ रागः, १८वरकनकस्य–जात्यसुवर्णस्य यः कषपट्टके निवर्षः स वरकनकनिघर्षः १९वरपुरुषो–वासुदेवस्तस्य वसनं वरपुरुषवसनम् तच्च किल पीतमेव भवतीति तदुपादानं, २० अल्लकीकुसुमं लोकतोऽवसेयं, २१ चम्पककुसुमं–सुवर्णचम्पकपुष्पं २२कूष्माण्डीकुसुमं–पुष्पफलीकुसुमम् २३कोरण्टकः–पुष्पजातिविशेषः तस्य दाम कोरण्टकदाम २४ तडवडा–+आउली तस्याः कुसुमं तडवडाकुसुमं २५×घोशातकीकुसुमं २६सुवर्णयूथिकाकुसुमं च प्रतीतं २७सुहिरण्यका–वनस्पतिविशेषस्तस्याः कुसुमं सुहिरण्यकाकुसुमं २८ बीयको वृक्षः प्रतीतः तस्य कुसुमं बीयककुसुमं २९ पीताशोक–३० पीतकणवीर–३१ पीतबन्धुजीवाः प्रतीताः ३२ 'भवे एयारूवे' इत्यादि प्राग्वत्। [पृ० ८५ पं० ३]

द–प–य–वानां (८–१–१७७ हैमश०) विरलमुच्चारण भवति, प्राचीने तु प्राकृते तेषां तादृशा कादीना स्थाने 'त' कारोच्चारण जायमान दृश्यते–अत्र प्राचीनाः प्रयोगा एव प्रमाणम्। यद्वा तकारबहुले उच्चारणे "चर्मण्वती नदीपारे ये चार्बुदसमाश्रिताः। तकारबहुला नित्य तेषु भाषां प्रयोजयेत्॥" (भरतप्रणीत नाट्यशा० अ० १७ श्लो० ६२ नि०) इति वचनं समाधानम्। ४ वा वरकणगे इ वा व—वि० बा०। + भाषायाम्–आवळ। × "कोशातकी पटोलिका"—हैमअभिधानचिन्ता० ४ कां० श्लो० २५४। भाषाया 'पटोल' शाकं प्रतीतम्।

[३८] तत्थ[1] णं जे ते सुक्किल्ला मणी तेसिं[3] णं मणीणं इमे[4]*यारूवे वण्णावासे[5] पण्णत्ते। [6]से जहा नाम ए अंके[7] ति वा [8]संखे ति वा चन्दे[9] ति वा कुमुद[10]-उदक[11]-दयरय[12]-दहि[13]-घणक्खीर[14]-खीरपूरे[15] ति वा कोंचावली[16] ति वा हारावली[17] ति वा हंसावली[18] इ वा बलागावली[19] ति वा, चंदावली[20] ति वा सारतियबलाहए[21] ति वा धंतधोयरूप्पपट्टे[22] इ वा सालि[23]-पिट्ठरासी ति वा कुंदपुप्फरासी[24] ति वा कुमुदरासी[25] ति वा सुक्कछिवाडी[26] ति वा पिहुणमिंजिया[27] ति वा

[३८] १तत्र तेषां मणीनां मध्ये २ये शुक्ला मणयः ३तेषाम् ४ अयमेतद्रूपो ५ वर्णावासः प्रज्ञप्तः, तद्यथा ६ स यथा नाम ७ अङ्को रत्नविशेषः ८ शङ्ख-९ चन्द्र-१०कुमुद-११ उदक-१२ उदकरजो-१३ दधि-१४ घ○नक्षीर-१५ क्षीरपूर-१६ क्रौञ्चावलि-१७हारावलि-१८ हंसावलि-१९ बलाकावलयः प्रतीताः २० चन्द्रावली-तडागादिषु जलमध्यप्रतिबिम्बितचन्द्रपङ्क्तिः २१ शारदिकः-शरत्कालभावी बलाहको-मेघः २२ ध्मातः-अग्निसंपर्केण निर्मलीकृतो धौतः-भूति⁄खरण्टितहस्तसंमार्जनेन अतिनिशितीकृतो यो रूप्यपट्टो-रजतपत्रकं स ध्मातधौतरूप्यपट्टः, ○अन्ये तु व्याचक्षते-"ध्मातेन-अग्निसंयोगेन यो धौतः-शोधितो रूप्यपट्टः स ध्मातधौतरूप्यपट्टः"[ ] २३शालिपिष्टराशिः-शालिक्षोदपुञ्जः, २४कुन्दपुष्पराशिः २५कुमुदराशिश्च प्रतीतः २६ -छेवाडिनाम-वल्लादिफलिका सा च क्वचिद् देशविशेषे शुष्का सती अतीव शुक्ला भवति ततस्तदुपादानम् =पेहुणं-२७ मयूरपिच्छं तन्मध्यवर्त्तिनी पेहुणमिञ्जिका सा

* इमे+एयारूवे=इमेयारूवे। (हैम० ८-१-४०) ○ -नगोक्षीरपूर-मु० पु०। ⁄ -खरटित-पा० ४-५। ○ विवरणकारश्रीमलयगिरिसूरेः पुरातना विवरणकाराः। -'छेवाडी' शब्दो देश्यः। = 'पेहुण' शब्दो देश्यः-"पिच्छम्मि पेहुणं"-देशीना० व० ६ गा० ५८।

[28]भिसे ति वा [29]मुणालिया ति वा [30]गयदंते ति वा [31]लवङ्गदलए ति वा [32]पोंडरियदलए ति वा [33]सेयासोगे ति वा [34]सेयकणवीरे ति वा [35]सेयबन्धुजीवे ति वा, [36]भवे एयारूवे सिया? णो इणट्ठे समट्ठे, ते णं सुक्किला मणी एत्तो इट्ठतराए चेव जाव [पृ० ८५ पं० २] वन्नेणं पण्णत्ता ।

[३९] तेसिं [1] णं मणीणं [2]इमेयारूवे गन्धे पण्णत्ते, [3]से* जहा नाम ए [4]कोट्ठपुडाण [5]वा [6]तगरपुडाण वा [7]एलापुडाण वा [8]चोयपुडाण वा [9]चम्पापुडाण वा [10]दमणापुडाण वा [11]कुंकुमपुडाण वा [12]चंदणपुडाण वा [13]उसीरपुडाण वा [14]मरुआपुडाण वा [15]जातिपुडाण वा [16]जूहियापुडाण वा [17]मल्लियापुडाण वा [18]ण्हाणमल्लियापुडाण वा [19]केतगिपुडाण वा [20]पाडलिपुडाण

चातिशुक्लेति तदुपन्यासः २८ बिसं पद्मिनीकन्दः २९मृणालं पद्मतन्तुः ३० गजदन्त–३१ लवङ्गदल–३२ पुण्डरीकदल–३३ श्वेताशोक–३४श्वेतकणवीर–३५श्वेतबन्धुजीवाः प्रतीताः, ३६'भवे एयारूवे सिया' इत्यादि प्राग्वत्। [पृ० ८५ पं०३] तदेवमुक्तं वर्णस्वरूपम्।

[३९] सम्प्रति गन्धस्वरूपप्रतिपादनार्थमाह–१ तेषां मणीनाम् २अयमेतद्रूपो गन्धः प्रज्ञप्तः ३तद्यथा–ते यथा नाम गन्धा अभिनिर्गच्छन्तीति सम्बन्धः। ४ कोष्ठं–गन्धद्रव्यं तस्य पुटाः कोष्ठपुटास्तेषां ५ 'वा'शब्दः सर्वत्रापि समुच्चये, इह एकस्य पुटस्य प्रायो न तादृशो गन्ध आयाति द्रव्यस्याल्पत्वात् ततो बहुवचनम् ६ तगरमपि गन्धद्रव्यं ७ एलाः प्रतीताः ८ चोयं–गन्धद्रव्यं ९ चम्पक–१०दमनक–११कुङ्कुम–१२चन्दन–१३उशीर–१४मरुक–१५ जाती–१६ यूथिका–१७मल्लिका–१८स्नानमल्लिका–१९ केतकी–२०पाटली–

* "प्राकृतत्वात् 'से' इति बहुवचनार्थः प्रतिपत्तव्य."–राय० वि० ।

वा णोमालिया[21]पुडाण वा अगुरु[22]पुडाण वा लवंगपुडाण[23] वा वास[24]पुडाण वा कप्पूर[25]पुडाण वा अणुवायंसि[26] वा ओभिज्ज[27]माणाण वा[28] कुट्टिज्ज[29]माणाण वा भंजिज्ज[30]माणाण वा उक्किरिज्ज[31]माणाण वा विक्किरिज्ज[32]माणाण वा परिभुज्ज[33]माणाण वा परिभाइज्ज[34]माणाण ⁄ वा भण्डाओ[35] वा भण्डं साहरिज्जमाणाण वा ओराला[36] मणुण्णा[37] मणहरा[38] घाणमणनिव्वु[39]तिकरा

२१नवमालिका–२२अगुरु–२३लवङ्गकुसुम–२४वास–२५ कर्पूराणि प्रतीतानि, नवरम्–१३उशीरं–वीरणीमूलम् १८स्नानमल्लिका-स्नानयोग्यो मल्लिकाविशेषः एतेषां पुटानाम्–२६अनुवाते–आघ्रायकविवक्षितपुरुषाणामनुकूलं वाते वाति सति २७उद्भिद्यमानानामुद्घाट्यमानानाम् २८'वा'शब्दः सर्वत्रापि समुच्चये २९इह पुटैः परिमितानि यानि कोष्ठादीनि गन्धद्रव्याणि तान्यपि–परिमेये परिमाणोपचारात्–'कोष्ठपुटादीनि'इत्युच्यन्ते तेषां कुट्यमानानाम्–उदूखले कुटयमानानाम् ३० श्लक्ष्णखण्डीक्रियमाणानाम् एतच्च विशेषणद्वयं कोष्ठादिद्रव्याणामवसेयं तेषामेव प्रायः कुट्टन–श्लक्ष्णखण्डीकरणसम्भवात् न तु यूथिकादीनां ३१ क्षुरिकादिभिः कोष्ठादिपुटानां कोष्ठादिद्रव्याणां वा उत्कीर्यमाणानाम् ३२ विकीर्यमाणानाम्–इतस्ततो विप्रकीर्यमाणानाम् ३३ परिभोगाय उपयुज्यमानानाम् ३४ क्वचित् 'परिभाइज्जमाणाण वा'इति पाठस्तत्र परिभाज्यमानानां–पार्श्ववर्त्तिभ्यो मनाग् मनाग् दीयमानानाम् ३५ भाण्डात्–स्थानादेकस्मादन्यद् भाण्डं–भाजनान्तरं संह्रियमाणानाम्। ३६ उदाराः–स्फाराः ३७ ते चामनोज्ञा अपि स्युरत आह–मनोज्ञा–मनोऽनुकूलाः ३८ तच्च मनोज्ञत्वं कुतः ? इत्याह–मनोहराः–मनो हरन्ति–आत्मवशं नयन्तीति मनोहराः ३९ इतस्ततो विप्रकीर्यमाणानां मनोहरत्वं कुतः ?

⁄ विवरणकारदर्शितं पाठान्तरम्।

सव्वतो[40] समन्ता[41] गंधा[42] [43]अभिनिस्सरंति, [44]भवे एयारूवे सिया? [45]णो इणट्ठे समट्ठे, ते णं मणी एत्तो इट्ठतराए चेव [पृ० ८५ पं० २] गंधेणं पन्नत्ता।

[४०] ≈[1]तेसिं णं मणीणं [2]इमेयारूवे [3]फासे पण्णत्ते, [4]से जहा नाम ए [5]आइणे ति वा [6]रूए ति वा [7]बूरे इ वा णवणीए [8] इ वा [9]हंसगब्भतूलिया इ वा [10]सिरीसकुसुमनिचये इ वा [11]बालकुसुदपत्तरासी ति वा

इत्याह–घ्राण–मनोनिर्वृतिकराः एवंभूताः ४० सर्वतः–सर्वासु दिक्षु ४१ समन्ततः–सामस्त्येन ४२ गन्धा ४३ अभिनिस्सरन्ति–जिघ्रतामभिमुखं निस्सरन्ति, क्वचित् "'अभिनिस्सवन्ति'इति पाठः तत्रापि स एवार्थः नवरम् 'अभितः स्रवन्ति'इति शब्दसंस्कारः। एवमुक्ते शिष्यः पृच्छति–४४'भवे एयारूवे सिया?' स्यादेतत् यथा भवेद् एतद्रूपस्तेषां मणीनां गन्धः? सूरिराह–४५ 'नो इणट्ठे समट्ठे' इत्यादि प्राग्वत् [पृ० ८५ पं० १–२]।

[४०] १ तेषां मणीनाम् २ अयमेतद्रूपः ३ स्पर्शः प्रज्ञप्तः, ४तद्यथा–५ अजिनकं–चर्ममयं वस्त्रम् ६ रूतं–प्रतीतम् ७बूरो–वनस्पतिविशेषः ८ नवनीतं–म्रक्षणम् ९ हंसगर्भतूली–१०शिरीषकुसुमनिचयश्च प्रतीतः, ११ बालानि–अचिरकालजातानि यानि कुमुद-

≈ व्याकरणशास्त्रसिद्धं 'तेसिं' इति रूपम्, परंतु अत्र मूले क्वचित् 'तेसिं' इति रूपम् क्वचिच्च 'तेसि' पाठनियमेन परिशुद्धं प्रतिभाति। इति रूपं समुपलभ्यते। 'तेसिं णं' अत्र परवर्तिनि अनुनासिके णकारे पूर्ववर्ती अनुनासिकः–अनुस्वारो लुप्त इति 'तेसि ण' इत्यपि रूप वाग्व्या- ˇ "रूअ तूले"–देशीनाममाला वर्ग ७ गा० ९। भाषायाम् 'रू' इति प्रसिद्धम्। ˇ विवरणकारदर्शितः पाठभेदः।

[12]भवे एयारूवे सिया? णो इणट्ठे समट्ठे, ते णं मणी एत्तो इट्ठतराए चेव जाव [पृ० ८९ पं० २] फासेणं पन्नत्ता।

[४१][1]तए णं [2]से आभियोगिए देवे [3]तस्स दिव्वस्स जाणविमाणस्स [4]बहुमज्झदेसभागे एत्थ णं [5]महं पिच्छाघरमण्डवं [6]विउव्वइ= [7]अणेगखम्भसयसंनिविट्ठं [8]अब्भुग्गयसुकयवरवेइयातोरणवररइयसालभंजियागं सुसिलिट्ठविसिट्ठलट्ठसंठियपसत्थवेरुलियविमलखम्भं णाणा॰मणिखचियउज्जलबहुसमसुविभत्तभूमिभागं [11]ईहामिय-उसभ-

पत्राणि तेषां राशिर्बालकुमुदपत्रराशिः, क्वचिद् °'बालकुसुमपत्रराशिः' -इति पाठः १२ 'भवे एयारूवे' इत्यादि प्राग्वत्। [पृ० ८९ पं० १-२]

[४१] १ततः २स आभियोगिको देवः ३तस्य दिव्यस्य यानविमानस्य ४बहुमध्यदेशभागे अत्र ५महत् प्रेक्षागृहमण्डपं ६विकुर्वति, कथम्भूतम्? इत्याह-७अनेकस्तम्भशतसन्निविष्टम्। तथा ८अभ्युद्गता-अत्युत्कटा सुकृता-सुष्ठु निष्पादिता वरवेदिकाः तोरणानि वररचिताः शालभञ्जिकाश्च यत्र तद् अभ्युद्गतसुकृतवरवेदिकातोरणवररचितशालभञ्जिकाकम् तथा ९ सुश्लिष्टा विशिष्टा लष्टसंस्थिताः-मनोज्ञसंस्थानाः प्रशस्ताः-प्रशस्तवास्तुलक्षणोपेता वैडूर्यविमलस्तम्भा-वैडूर्यरत्नमया विमलाः स्तम्भा यत्र तत् सुश्लिष्टविशिष्टलष्टसंस्थितप्रशस्तवैडूर्यविमलस्तम्भम् तथा १० नाना मणयः खचिता यत्र भूमिभागे स नानामणिखचितः○ नानामणिखचित उज्ज्वलो बहुसमः-अत्यन्तसमः सुविभक्तो भूमिभागो यत्र तत् नानामणिखचितोज्ज्वलबहुसमसुविभक्तभूमिभागम् तथा ११ ईहामृगा-वृकाः

= मूलपाठे क्वचित् 'विउव्वइ' इति क्वचिच्च 'विउव्वंति' इति पाठो लभ्यते परन्तु नात्र अर्थभेदः। ○ -मणिकणगरयणख-वि० बा०।
° विवरणकारदर्शित पाठान्तरम्। -इति भावः-पा० ४-५ भा० १। ○ 'सुखादिदर्शनात् क्तान्तस्य पाक्षिकः परनिपातः" [पृ० ४८ *

तुरग–नर–मगर-विहग-वालग–किंनर–रुरु–सरभ–चमर–कुञ्जर–वणलय–पउमलयभत्तिचित्तं ○[12]खम्भुग्गयवइरवेइयापरिगयाभिरामं [13]विज्जाहरजमलजुयलजंतजुत्तं पिव [14]अच्चीसहस्समालणीयं [15]रूवगसहस्सकलियं भिसमाणं भिब्भिसमाणं चक्खुल्लोयणलेसं सुहफासं सस्सिरीयरूवं [पृ० ७६ पं० २–४] [16]कंचणमणिरयणथूभियागं [17]णाणाविहपञ्चवण्णघण्टापडागपरिमण्डियग्गसिहरं

ऋषभा–वृषभाः तुरग–नर–मकर–विहगाः प्रतीताः व्यालाः–श्वापदभुजगाः किंनरा–व्यन्तरविशेषाः रुरवो–मृगाः सरभाः–आटव्या महाकायाः पशवः चमरा–आटव्या गावः कुञ्जराः–दन्तिनः वनलता–अशोकादिलताः पद्मलताः–पद्मिन्यः एतासां भक्त्या–विच्छित्त्या चित्रम्–आलेखो यत्र तद् ईहामृग–ऋषभ–तुरग–नर–मकर–विहग–व्याल–किन्नर–रुरु–सरभ–चमर–कुञ्जर–वनलता–पद्मलताभक्तिचित्रम् तथा १२ स्तम्भोद्गतया–स्तम्भोपरिवर्त्तिन्या वज्ररत्नमय्या वेदिकया परिगतं सद् यदभिरामं तत् स्तम्भोद्गतवज्रवेदिकापरिगताभिरामम् १३ विद्या धरन्तीति विद्याधरा–विशिष्टविद्याशक्तिमन्तः तेषां यमलयुगलानि–समानशीलानि द्वन्द्वानि तेषां यन्त्राणि–प्रपञ्चविशेषास्तैर्युक्तमिव १४ अर्चिषां–मणिरत्नप्रभाज्वालानां सहस्रैर्मालनीयं–परिवारणीयम् किमुक्तं भवति ?–एवं नाम अत्यद्भुतैर्मणिरत्नप्रभाजालैराकलितमिव भाति यथा नूनमिदं न स्वाभाविकम् किन्तु विशिष्टविद्याशक्तिमत्पुरुषप्रपञ्चप्रभावितमिति, १५ 'रूवगसहस्सकलियं......सस्सिरीयरूवं' प्राग्वत् [पृ० ७६ पं०६–१२] १६ काञ्चनं च मणयश्च रत्नानि च काञ्चनमणिरत्नानि तेषां–तन्मयी स्तूपिका–शिखरं यस्य तत् तथा १७ नानाविधाभिः–नानाप्रकाराभिः पञ्चवर्णाभिर्घण्टाभिः पताकाभिश्च परि–सामस्त्येन मण्डितमग्र·

टिप्पण]–राय० वि०। ○ 'खभुगय' इत आरभ्य 'सस्सिरीयरूवं' इत्यन्त–"क्वचिद् एतन्न दृश्यते"–राय० वि०।

[१८]चवलं ÷मरीचिकवयं विणिम्मुयन्तं लाइय[२०]-उल्लोइय[२१]महियं [२२]गोसीससरसरत्तचंदणदद्दरदिन्नपंचंगुलितलं [२३]उवचियचन्दणकलसं [२४]चन्दणघडसुकयतोरणपडिदुवारदेसभागं [२५]आसत्तोसत्तविउलवट्टवग्घा[२६]रियमल्लदामकलावं [२७]पञ्चवण्णसरससुरभिमुक्कपुप्फपुंजोवयारकलियं [२८]कालागुरुपवरकुंदरुक्कतुरुक्कधूवमघमघंतगंधुद्धुयाभिरामं [पृ०७ पं०४–]

शिखरं यस्य तद् नानाविधपञ्चवर्णघण्टापताकापरिमण्डिताग्रशिखरम् १८ चपलं–चलं चिकचिकायमानत्वात् १९ मरीचिकवचं–किरणजालपरिक्षेपं विनिर्मुञ्चत् २० लाइयं नाम–यद् भूमेर्गोमयादिनोपलेपनम् २१ उल्लोइयं–कुडयानां मालस्य च सेटिकादिभिः सम्मृष्टीकरणम् लाइय–उल्लोइयाभ्यामिव महितं–पूजितं लाइय–उल्लोइयमहियं तथा २२ गोशीर्षेण–गोशीर्षनामकचन्दनेन सरसरक्तचन्दनेन च दर्दरेण–बहलेन चपेटाकारेण वा दत्ताः पञ्चाङ्गुलितला–हस्तका यत्र तद् गोशीर्षसरसरक्तचन्दनदर्दरदत्तपञ्चाङ्गुलितलम् तथा २३ उपचिता–निवेशिताः चन्दनकलशा–मङ्गलकलशा यत्र तद् उपचितचन्दनकलशम् २४ चन्दनघटैः–चन्दनकलशैः सुकृतानि–सुष्ठु कृतानि शोभितानीति तात्पर्यार्थः यानि तोरणानि तानि चन्दनघटसुकृतानि तानि तोरणानि प्रति द्वारदेशभागं–द्वारदेशभागे यत्र तत् चन्दनघटसुकृततोरणप्रतिद्वारदेशभागम् तथा २५आ–अवाङ्–अधोभूमौ सक्त आसक्तो–भूमौ लग्न इत्यर्थः ऊर्ध्वं सक्त उत्सक्तः–उल्लोचतले उपरि संबद्ध, इत्यर्थः विपुलो–विस्तीर्णः वृत्तो–वर्तुलः २६ 'वग्घारिय' इति–प्रलम्बितो माल्यदामकलापः–पुष्पमालासमूहो यत्र तद् आसक्तोत्सक्तविपुलवृत्तप्रलम्बितमाल्यदामकलापम् तथा २७ पञ्चवर्णेन सरसेन–सच्छायेन सुरभिणा मुक्तेन–क्षिप्तेन पुष्पपुञ्जलक्षणेनोपचारेण–पूजया कलितं पञ्चवर्णसरससुरभिमुक्तपुष्पपुञ्जोपचारकलितम् २८ 'कालागुरु...गंधवट्टिभूतं' इति

÷ 'मरीचि' स्थाने आर्षत्वात् 'मरीति' इति–पृ० ८८ × टिप्पण ।

सुगंधवरगन्धियं गन्धवट्टिभूतं अच्छरगण[29]संघसंविकिण्णं दिव्वतुडिय[30]सद्दसंपणाइयं अच्छं[31] [पृ० ११ पं० ५]जाव पडिरूवं। तस्स[32] णं पिच्छाघर[33]मण्डवस्स अंतो[34] बहुसम[35]रमणिज्जभूमिभागं विउव्वंति[36] [कंडिका० ३३-४०] जाव पडिरूवं। तस्स[37] णं पेच्छाघरमंडवस्स उल्लोयं[38] विउव्वंति[39] पउमलय[40]भत्तिचित्तं जाव[41] [पृ०१९ पं०५] पडिरूवं। मणीणं फासो। तस्स णं पेच्छाघरमंडवस्स उल्लोयं विउव्वंति पउमलयभत्तिचित्तं जाव पडिरूवं।

[४२] तस्स[1] णं बहुसमरमणिज्जस्स भूमिभागस्स बहुमज्झदेसभाए[2] एत्थ[3] णं एगं[4] महं वइरामयं अक्खाडगं[5] विउव्वंति[6]। तस्स[7] णं अक्खाडयस्स

[पृ० ७ पं० ४-] प्राग्वत्, तथा २९ अप्सरोगणानां सङ्घः-समुदायस्तेन सम्यग्-रमणीयतया विकीर्णं-व्याप्तम्-अप्सरोगणसङ्घसंविकीर्णम् तथा ३० दिव्यानां त्रटितानाम् आतोद्यानां-वेणुवीणामृदङ्गादीनां ये शब्दास्तैः सम्प्रणादितं-सम्यक्-श्रोत्र-मनोहारितया प्रकर्षेण नादितं-शब्दवद् दिव्यत्रुटितशब्दसम्प्रणादितम् ३१ 'अच्छं जाव पडिरूवं'इति 'यावत्' शब्दकरणात् 'सण्हं अभिरूवं पडिरूवं' इति द्रष्टव्यम् एतच्च प्राग्वद् [पृ० १९ पं० ८] व्याख्येयम्। ३२ तस्य ३३ प्रेक्षागृहमण्डपस्य ३४ अन्तः-मध्ये ३५ बहुसमरमणीयं भूमिभागं ३६ विकुर्वंति तद्यथा-'आलिङ्गपुष्करमिति वा' [कण्डिका ३३-४०-पृ० ८१ पं० १२-] इत्यादि तदेव तावद् वक्तव्यं यावद् मणिस्पर्शसूत्रपर्यन्तः, तथा चाह-'जाव मणीणं फासो' इति। ३७ तस्य प्रेक्षागृहमण्डपस्य ३८ उल्लोकम्-उपरिभागं ३९ विकुर्वंति ४० पद्मलताभक्तिचित्रम् ४१ 'जाव पडिरूवं' इति 'यावत्' शब्दकरणात् 'अच्छं सण्हं' [पृ० १९, पं० ८-] इत्यादिविशेषणकदम्बकपरिग्रहः।

[४२] १तस्य-बहुसमरमणीयस्य भूमिभागस्य २बहुमध्यदेशभागे ३अत्र ४एकं महान्तं वज्रमयम् ५अक्षपाटं ६विकुर्वंति, ७तस्य

[8]बहुमज्झदेसभागे [9]एत्थ णं [10]महेगं मणिपेढियं [11]विउव्वंति [12]अट्ठ जोयणाइं आयामविक्खम्भेणं [13]चत्तारि जोयणाइं बाहल्लेणं [14]सव्वमणिमयं [15]अच्छं सण्हं जाव [पृ० १९ पं० ५] पडिरूवं। [16]तीसे णं मणिपेढियाए [17]उवरिं [18]एत्थ णं [19]महेगं सीहासणं [20]विउव्वंइ, [21]तस्स णं सीहासणस्स [22]इमेयारूवे [23]वण्णावासे पण्णत्ते-[24]तवणिज्जमया चक्कला [25]रययामया सीहा [26]सोवण्णिया पाया [27]णाणामणिमयाइं पायसीसगाइं [28]जंबूणयमयाइं गत्ताइं [29]वइरामया संधी [30]णाणामणिमये वेच्चे, [31]से णं सीहासणे [32]ईहामिय-उसभ-तुरग-नर-मगर-विहग-वालग-किंनर-रुरु-सरभ-

---

चाक्षपाटकस्य ८ बहुमध्यदेशभागे ९अत्र १०एकां महतीं मणिपीठिकां ११विकुर्वंति १२ अष्टौ योजनानि आयाम-विष्कम्भाभ्याम् १३चत्वारि योजनानि बाहल्येन-उच्चैस्त्वेनेति भावः, कथम्भूतां तां विकुर्वंति? इत्यत आह-१४सर्वमणिमयीम्-सर्वात्मना मणिमयीं 'यावत्' करणात् १५ 'अच्छाम्' इत्यादिविशेषणसमूहपरिग्रहः [पृ० १९ पं० ८] १६ तस्याश्च मणिपीठकाया १७ उपरि १८ अत्र १९महदेकं सिंहासनं २० विकुर्वंति २१तस्य च सिंहासनस्य २२अयमेतद्रूपो २३वर्णावासः प्रज्ञप्तः, तद्यथा-२४तपनीयमयाः =चक्कला २५रजतमयाः सिंहा यैरुपशोभितं तत् सिंहासनमुच्यते २६सौवर्णिकाः-सुवर्णमयाः पादाः २७नानामणिमयानि पादशीर्षकाणि-पादानामुपरितना अवयवविशेषाः, २८ जाम्बूनदमयानि गात्राणि २९ वज्रमया-वज्ररत्नापूरिताः सन्धयो-गात्राणां सन्धिमेलाः ३० नाना मणि○मयं वेच्चं-व्युतम्। ३१ तत् सिंहासनम् ३२ ईहामृग-ऋषभ-तुरग-नर-मकर-व्यालक-किन्नर-रुरु-सरभ-चमर-वनलता-

---

= 'चक्कल' इत्ययं शब्दो देश्य -"कुण्डल-वट्टुल-दोलाफलय-विसालेसु चक्कलय'-चक्कलं कुण्डलम् वर्तुलम् दोलाफलकम् विशालं चेति चतुर्थं."-देशीनाम० व० ३ गा० २०। भाषायाम् 'चाकळा' इति प्रतिभाति। ○ -मयं वच्च-पा० ५ ।-मयं वद्दं पा० ४ ।- मय वेच्च

चमर-कुञ्जर-वणलय-पउमलयभत्ति [पृ० ७६ पं० २] चित्तं [33]ससारसारोवचियमणिरयणपायवीढे [34]अत्थरगमिउमसूरगणवतयकुसंतलिंबकेसरपचत्थुयाभिरामे [35]आईणग-रूय-बूर-णवणीय-तूलफासमउए [कण्डिका ४०] [36]सुविरइयरयत्ताणे [37]उवचियखोमदुगुल्लपट्टपडिच्छायणे [38]रत्तंसुअसंवुडे [39]सुरम्मे [40]पासाईए दरिसणिज्जे अभिरूवे पडिरूवे।

पद्मलताभक्ति [पृ० ७६ पं० ६] चित्रम्। ३३ सारसारैः-प्रधानैः ४मणिरत्नैरुपचितेन पादपीठेन सह यत् तत् तथा, ३४ आस्तरकम्-आच्छादकं मृदु यस्य ⊖मसूरकस्य तद् आस्तरकमृदु,+ नवा त्वक् येषां ते नवत्वचः कुशान्ताः-दर्भपर्यन्ता नवत्वचश्च ते कुशान्ताश्च नवत्वक्कुशान्ताः-प्रत्यग्रत्वग्दर्भपर्यन्तरूपाणि लिम्बानि-कोमलानि नमनशीलानि च केसराणि मध्ये यस्य मसूरकस्य तत् नवत्वक्कुशान्तलिम्बकेसरम् आस्तरकमृदुना मसूरकेण नवत्वक्कुशान्तलिम्बकेसरेण =प्रत्यवस्तृतम्-आच्छादितं सत् यदभिरामं तत् तथा, ३५ [कण्डिका ४०] पूर्ववत् तथा ३६सुविरचितं रजस्त्राणमुपरि यस्य तत् सुविरचितरजस्त्राणम् ३७ उपचितं-परिकर्मितं यत् क्षौमं दुकूलं-कार्पासिकं वस्त्रं परिच्छादनं रजस्त्राणस्योपरि द्वितीयमाच्छादनं यस्य तत् तथा, तत उपरि ३८रक्तांशुकेन-अतिरमणीयेन रक्तेन वस्त्रेण संवृतम्-आच्छादितम् अत एव ३९सुरम्यम् ४०'पासाइए दरिसणिज्जे अभिरूवे पडिरूवे' इति [पृ०७ पं०१ तथा पृ०९ पं०६] प्राग्वत्।

तत्-व्युतम्-भा० १। -मय वेट्ठ² भा० २। ४ "प्राकृतत्वाच्च * पदोपन्यासव्यत्ययः"—राय० वि०। ⊖ भाषायाम्-'गालमसूरियुं' इति प्रसिद्धम्। + "विशेषणपूर्वापरनिपातः यादृच्छिकः प्राकृतत्वात्"-राय० वि०। = "विशेषणस्य परनिपातः प्राकृतत्वात्"-राय० वि०।

* मूले 'उवचियमणिरयण' इति उपचित-मणिरत्न-पदयोर्व्यत्ययः। -'मणिरत्नोपचित'-इति उचितम्।

रायपसेणइयं ।

॥१००॥

[४३] तस्स[1] णं सीहासणस्स उवरिं[2] एत्थ[3] णं महेगं[4] विजयदूसं[5] विउव्वंति[6], संख[7]-कुंद-दगरय-अमयमहियफेणपुंजसंनिगासं सव्व[8]रयणामयं अच्छं[9] सण्हं पासादीयं दरिसणिज्जं अभिरूवं पडिरूवं। तस्स[10] णं सीहासणस्स उवरिं[11] विजयदूसस्स[12] य बहुमज्झ[13]देसभागे एत्थ णं महं[14] एगं वयरामयं[15] अंकुसं विउव्वंति[16], तंसि[17] च णं वयरामयंसि अंकुसंसि [18]कुंभिक्कं मुत्तादामं विउव्वंति[19]। से[20] णं कुंभिक्के मुत्तादामे अन्नेहिं[21] चउहिं अद्धकुंभिक्केहिं मुत्तादामेहिं—

सिंहासने विजयदूष्यम् तत्र च कुम्भपरिमाणानि मौक्तिकानि

[४३] १तस्य सिंहासनस्य २उपरि उल्लोके ३अत्र अस्मिन् स्थाने ४महदेकं ५विजयदूष्यं–वस्त्रविशेषः, आह च जीवाभिगममूलटीकाकृत्–"विजयदूष्यं वस्त्रविशेषः" [ ] इति। तं ६विकुर्वन्ति–स्वशक्त्या निष्पादयन्ति, कथम्भूतम्? इत्याह–७ शङ्ख–कुन्द–दकरजो–ऽमृतमथितफेनपुञ्जसन्निकाशम्–शङ्खः प्रतीतः, कुन्द इति–कुन्दकुसुमम् दकरजः–उदककणाः अमृतस्य–क्षीरोदधिजलस्य मथितस्य यः फेनपुञ्जो–डिण्डीरोत्करः तत्सन्निकाशं–तत्समप्रभम् पुनः कथम्भूतम्? इत्याह–८सर्वात्मना रत्नमयम् ९'अच्छं सण्हं पासाइयं'इत्यादिविशेषणजालं प्राग्वत् [पृ०१९ पं०८]। १० तस्य सिंहासनस्य–११ उपरि १२ तस्य विजयदूष्यस्य १३बहुमध्यदेशभागेऽत्र १४महान्तमेकं १५ वज्रमयं–वज्ररत्नमयमङ्कुशम्–अङ्कुशाकारं मुक्तादामावलम्बनाश्रयं १६ विकुर्वन्ति १७ तस्मिंश्च वज्ररत्नमयेऽङ्कुशे महदेकं १८ *कुम्भाग्रं–मगधदेशप्रसिद्धं कुम्भपरिमाणं मुक्तादाम १९ विकुर्वन्ति। २०तत् कुम्भाग्रं मुक्तादाम २१ अन्यैश्चतुर्भिः कुम्भाग्रैः–कुम्भ-

* "अग्र पुरस्तात्, उपरि, परिमाणे"–इति मेदिनी–[अमर० टी० पृ० ३२९] इति वचनात् अत्र 'अग्र' शब्दः परिमाणवाची बोध्यः–कुम्भाग्रम्––कुम्भपरिमाणम् ।

[22]तद्द्धुच्चत्तपमाणेहिं [23]सव्वओ [24]समंता [25]संपरिखित्ते। [26]ते णं दामा [27]तवणिज्जलंबूसगा* [28]णाणामणिरयणविविहहार-द्धहारउवसोभियसमुदाया [29]ईसिं अण्णमण्णमसंपत्ता [30]वाएहिं पुव्वावरदाहिणुत्तरागएहिं [31]मंदायं मंदायं =[32]एज्ज-माणाणि एज्जमाणाणि [33]पलंबमाणाणि× पलंबमाणाणि [34]वंदमाणाणि वदमाणाणि [35]उरालेणं [36]मणुन्नेणं [37]मणहरेणं

परिमाणैर्मुक्तादामभिः २२तदर्धोच्चत्वप्रमाणमात्रैः २३ सर्वतः सर्वासु दिक्षु २४ समन्ततः–सामस्त्येन २५ सम्परिक्षिप्तं–व्याप्तम्। २६ तानि पश्चापि दामानि २७ तपनीयमया लम्बूसगा–आभरणविशेषरूपा अग्रभागे येषां प्रलम्बमानानां तानि तथा २८ नानामणिरत्नैः नानामणिरत्नमयैर्विविधैः–विचित्रैर्हारैरर्धहारैश्चोपशोभितः–सामस्त्येन शोभितः समुदायो येषां तानि तथा २९ तथा ईषत् मनाक् अन्योऽन्यं–परस्परम् असंप्राप्तानि–असंलग्नानि ३० पूर्वापरदक्षिणोत्तरागतैः[8] ३१ 'मन्दायं मन्दायं' इति मन्दं मन्दं ३२ कम्पमानानि ३३ ईषत्कम्पनवशादेव प्रकर्षत इतस्ततो मनाक् चलनेन लम्बमानानि लम्बमानानि ततः ३४ परस्परं सम्पर्कवशतः शब्दायमानानि शब्दायमानानि ३५ उदारेण स्फारेण शब्देनेति योगः स च स्फारः शब्दो मनःप्रतिकूलोऽपि भवति तत आह–३६ मनोज्ञेन मनो-ऽनुकूलेन ३७ तच्च मनोऽनुकूलत्वं लेशतः स्यात् अत आह–मनोहरेण मनांसि श्रोतॄणां हरति–एकान्तेनात्मवशं नयतीति मनोहरः○

* –गा सुवण्णपयरगमंडियग्गा णा–वि० बा०। = "भृशाभीक्ष्ण्याऽविच्छेदे द्विः प्राक् तमबादेः"–[७–४–७३ हैमश०] इति अविच्छेदे द्विर्वचनम् यथा–'पचन्ति पचन्ति' इत्यत्र, एवमुत्तरत्राऽपि"–राय० वि०। × –गि वज्जमा–पा० १। –णि पझंझमा–भा० १।–णि पझझमा– पा० ३। –णि पडंडमा–पा० ५।–णि पब्भक्खमा–पा० २। 8 'वातैः' इति शेषः। ○ "लिहादेः आकृतिगणत्वाद् 'अच्' प्रत्ययः"–राय०वि०। "लिहादिभ्यः"–(५-१–५० हैमश०) अत्र 'हृ' धातोः 'अच्'प्रत्यये हरः–मनोहरः।

क[३९]ण्ण-मणणिव्वुतिकरेणं स[४०]द्देणं ते पएसे स[४१]व्वओ सम[४२]ंता आ[४३]पूरेमाणा आपूरेमाणा सिरीए[४४] अतीव अतीव उवसोभेमाणा उवसोभेमाणा [४५]चिट्ठंति।

[४४][१]तए णं से आभिओगिए देवे त[२]स्स सीहासणस्स अव[३]रुत्तरेणं उ[४]त्तरेण उत्तरपुरत्थिमेणं[५] एत्थ णं सूरिआभस्स[६] देवस्स चउ[७]ण्हं सामाणियसाहस्सीणं [८]चत्तारि भद्दासणसाहस्सीओ विउ[९]व्वइ, तस्स णं सीहासणस्स

तेन ३८ तदपि मनोहरत्वं कुतः ? इत्याह-कर्ण-मनोनिर्वृतिकरेण ○ ततोऽयमर्थः-प्रतिश्रोतृ कर्णयोर्मनसश्च निर्वृतिकरः-सुखोत्पादकस्ततो मनोहरस्तेनेत्थम्भूतेन ३९ शब्देन ४० तान् प्रत्यासन्नान् प्रदेशान् ४१ सर्वतो-दिक्षु ४२ समन्ततो-विदिक्षु ४३ आपूरयन्ति-आपूरयन्ति, अत एव ४४ श्रिया-शोभया अतीवोपशोभमानानि ४५ तिष्ठन्ति।

[४४] १ ततः स आभियोगिको देवः २तस्य सिंहासनस्य ३अपरोत्तरेण-वायव्ये कोणे इत्यर्थः, ४ उत्तरेण-उत्तरस्याम् ५ ऐशान्याम् अत्र एतासु तिसृषु दिक्षु ६ सूर्याभस्य देवस्य ७ चतुर्णाम् सामानिकसहस्राणां योग्यानि ८ चत्वारि भद्रासनसहस्राणि ९ वि-

○ "निमित्त-कारण-हेतुषु सर्वासां विभक्तीनां प्रायो दर्शनम्-(सर्वनाम्नस्तृतीया च २-३-७ काशिकावृत्तौ) इति वचनात् हेतौ तृतीया"-राय० वि०। ⁄ "शत्रन्तस्य ⁄'शौ' इदं रूपम्" पा० ४-५ भा० १। "शत्रन्तस्य स्यादू इद रूपम्"-भा० २। "शत्रन्तस्य स्यादौ इद रूपम्"-मु० पु०।

⁄ वर्तमानकालसूचकः 'शतृ' प्रत्ययः तेन आ+पूरय्+अत्-'आपूरयत्' इति प्रयोगे साधिते प्रथमाबहुवचने शौ 'आपूरयन्ति'।

[१०]पुरित्थमेणं एत्थ णं सूरियाभस्स देवस्स [११]चउण्हं अग्गमहिसीणं [१२]सपरिवाराणं [१३]चत्तारि भद्दासणसाहस्सीओ विउव्वइ, तस्स णं सीहासणस्स [१४]दाहिणपुरत्थिमेणं एत्थ णं सूरियाभस्स देवस्स [१५]अब्भितरपरिसाए [१६]अट्ठण्हं देवसाहस्सीणं [१७]अट्ठ भद्दासणसाहस्सीओ विउव्वइ, एवं [१८]दाहिणेणं [१९]मज्झिमपरिसाए [२०]दसण्हं देवसाहस्सीणं [२१]दस भद्दासणसाहस्सीओ विउव्वति [२२]दाहिणपच्चत्थिमेणं [२३]बाहिरपरिसाए [२४]बारसण्हं देवसाहस्सीणं [२५]बारस भद्दासणसाहस्सीओ विउव्वति [२६]पच्चत्थिमेणं [२७]सत्तण्हं अणियाहिवतीणं [२८]सत्त भद्दासणे विउव्वति, [२९]तस्स णं सीहासणस्स [३०]चउदिसिं एत्थ णं [३१]सूरियाभस्स देवस्स [३२]सोलसण्हं आयरक्खदेवसाहस्सीणं [३३]सोलस भद्दासणसाहस्सीओ विउव्वति, [३४]तंजहा–[३५]पुरत्थिमेणं चत्तारि साहस्सीओ [३६]दाहिणेणं चत्तारि साहस्सीओ [३७]पच्चत्थिमेणं चत्तारि साहस्सीओ [३८]उत्तरेण चत्तारि

कुर्वंति, १० पूर्वस्यां ११ चतसृणामग्रमहिषीणां १२सपरिवाराणां १३चत्वारि भद्रासनसहस्राणि, १४दक्षिणपूर्वस्याम् १५अभ्यन्तरपर्षदः १६ अष्टानां देवसहस्राणां योग्यानि १७ अष्टौ भद्रासनसहस्राणि, १८ दक्षिणस्यां १९ मध्यमपर्षदो २० दशानां देवसहस्राणां योग्यानि २१ दश भद्रासनसह ाणि २२ दक्षिणापरस्यां नैर्ऋतकोणे इत्यर्थः, २३ बाह्यपर्षदो २४ द्वादशानां देवसहस्राणां २५ द्वादश भद्रासनसहस्राणि २६ पश्चिमायां २७ सप्तानामनीकाधिपतीनां २८ सप्त भद्रासनानि विकुर्वंति। तदनन्तरं २९ तस्य सिंहासनस्य ३० चतसृषु दिक्षु अत्र सामानिकादिदेवभद्रासनानां पृष्ठतः ३१ सूर्याभस्य देवस्य सम्बन्धिनां ३२ षोडशानामात्मरक्षदेवसहस्राणां योग्यानि ३३ षोडश भद्रासनसहस्राणि विकुर्वंति, ३४ तद्यथा–३५चत्वारि भद्रासनसहस्राणि पूर्वस्याम् ३६चत्वारि दक्षिणतः ३७चत्वारि पश्चिमायाम् ३८चत्वारि उत्तरतः–सर्वसंख्यया सप्ताधिकानि चतुःपञ्चाशत्सहस्राणि–५४००७–भद्रासनानां विकुर्वंति।

॥१०४॥

यानविमानवर्णकनिवेशः

साहस्सीओ ।

[४५] तस्स दिव्वस्स[2] जाणविमाणस्स[8] इमेयारूवे[3] वण्णावासे[4] पण्णत्ते, से[5] जहा नाम ए अइरुग्गयस्स[6] वा हेमंतिय[7]-बालियसूरियस्स[8] वा खयरिंगालाण[9] वा रत्तिं[10] पज्जलियाण वा जवाकुसुमवणस्स[11] वा किंसुयवणस्स[12] वा पारियायवणस्स[13] वा सव्वतो[14] समंता संकुसुमियस्स[15], भवे[16] एयारूवे सिया ? णो[17] इणट्ठे समट्ठे, तस्स णं दिव्वस्स जाणविमाणस्स एत्तो इट्ठतराए चेव जाव वण्णेणं [पृ० ८५ पं० २] पण्णत्ते। गंधो[18] य फासो य जहा मणीणं [कण्डिका

[४५]१ तस्य २दिव्यस्य यानविमानस्य ३अयम्—अनन्तरं वक्ष्यमाणस्वरूपो ४वर्णावासो-वर्णकनिवेशः ५तद्यथा-स यथा नाम ६अचिरोद्गतस्य क्षणमात्रमुद्गतस्य ७हैमन्तिकस्य शिशिरकालभाविनो बालसूर्यस्य स ह्यत्यन्तमारक्तो भवति दीप्यमानश्चेत्युपादानम्, ८'वा'शब्दाः सर्वेऽपि समुच्चये, ९ खादिराङ्गाराणां वा १०रात्रौ प्रज्वलितानाम् ११ जपाकुसुमवनस्य वा १२ किंशुकवनस्य वा १३ पारिजातवनस्य वा १४ सर्वतः—सर्वासु दिक्षु समन्ततः—सामस्त्येन १५ संकुसुमितस्य सम्यक् कुसुमितस्य, अत्रान्तरे शिष्यः पृच्छति—यादृग्रूप एतेषां वर्णः १६ 'भवे एयारूवे सिया' इति स्यात्—कथञ्चिद् भवेद् एतद्रूपस्तस्य दिव्यस्य यानविमानस्य वर्णः ? सूरिराह—१७ 'नो इणट्ठे समट्ठे, तस्स णं दिव्वस्स ....मणामतरागे चेव वण्णे पण्णत्ते' इति प्राग्वत् [पृ० ८५ पं० तथा २-५] व्याख्येयम्, १८गन्धः स्पर्शः यथा प्राग् मणीनामुक्तस्तथा वक्तव्यः, स चैवं—'तस्स णं दिव्वस्स जाणविमाणस्स इमे एयारूवे गंधे पण्णत्ते, तंजहा—से जहा नाम ए कोट्ठपुडाण

८ इमे+एयारूवे=इमेयारूवे-पृ० ९० * टिप्पण । १० 'रत्तिं' इति सप्तम्यर्थे द्वितीया प्राकृतत्वात् ।

३९–४०] [१]तए णं से आभिओगिए देवे दिव्वं जाणविमाणं विउव्वइ विउव्वित्ता जेणेव सूरियाभे देवे तेणेव उवागच्छइ उवागच्छित्ता सूरियाभं देवं करयलपरिग्गहियं [पृ० ६७ पं० ८] जावं[२] पच्चप्पिणंति।

वा तगरपुडाण वा' [कं० ३९ पृ० ९१ पं० ४] इत्यादि। १९ 'तए णं से आभिओगिए देवे' इत्यादि २०'यावत्'करणात् 'करयल-परिग्गहियं दसनहं......वद्धावेइ वद्धावित्ता एयमाणत्तियं' इति [पृ० ५६ पं० १–२ तथा पृ० ६७ पं० ९] द्रष्टव्यम्।

यथा—"+उय विणय8तत्तिल्ले! ○पूरेमसि ? =सिरिद्दहे गए सूरे। कत्तो ⁄रत्तिं मुद्धे! पाणियसद्दा सउणयाणं○ ॥ [ ] इत्यत्र" –राय० विव०।

+'उय' इति 'पश्य' पदभावसूचको निपातः। "उअ पश्य"–(८–२–२१८ हैमश०) 8 'तत्तिल्ल' शब्दः तत्परवाची देश्यः। "तत्तिल्लो तल्लिच्छो य तप्परे"–देशीनाम० व० ५ गा० ३। ○ अस्य पदस्य भावः सम्यग् न अवगम्यते परंतु तात्पर्यानुसारी 'पूर्णे' इति अर्थः कल्प्यते। =अयं शब्दः खगपानभाजनवाचिना देश्य–'सिरिद्दही' [" 'सिरिद्दही' खगपानभाजनम् "–देशीना० व०८ गा० ३२] शब्देन समानः प्रतीयते ततः प्रस्तुत 'सिरिद्दह' पदस्यापि स एव अर्थो गम्यते। ⁄'रत्तिं' इति द्वितीयान्तमपि पदं सप्तम्यर्थसूचकं ज्ञेयम्। यथा च प्रस्तुतगाथायां 'रत्तिं' शब्दः सप्तम्यर्थं बोधयति तथा अत्र मूलसूत्रगत 'रत्तिं'पदमपि सप्तमीभावसूचकं बोध्यम्। एतदर्थस्पष्टनार्थं च विवरणकारेण इयं गाथा उदाहरणरूपेण दर्शिता। ○उत विनयतत्परे! पूरिमे ? श्रीद्रहे ? गते सूर्ये। कुतः रात्रौ मुग्धे! पानियशब्दाः शकुनकानाम्॥ इति शब्दसंस्कारः। समग्रगाथायाः भावस्तु इत्थ बोध्यः–हे विनयपरायणे! मुग्धे! सूर्यः अस्तंगतः रात्रिर्जाता अतः जलपूर्णे खगपानभाजने पक्षिणां पानीयशब्दाः कुत. कारणात् स्युः ? रात्रौ हि पक्षिणः शेरत एव न जलं पिबन्ति नापि किञ्चिद् भक्षयन्ति अतस्तेषा निवासे शान्तिरेव युक्ता तथापि अद्य रात्रौ पक्षिजलभाजने

॥१०६॥ [४६] तए णं से सूरियाभे देवे आभिओगस्स देवस्स अंतिए एयमट्ठं सोच्चा निसम्म हट्ठ–जाव [पृ० ४७ पं० ३–]–हियए दिव्वं[1] जिणिंदाभिगमणजोग्गं[2] उत्तरवेउव्वियरूवं[3] विउव्वति[4] विउव्वित्ता चउहिं अग्गमहिसीहिं सपरिवाराहिं दोहिं[6] अणीएहिं, तंजहा–गंधव्वाणीएण य णट्टाणीएण य सद्धिं संपरिवुडे तं दिव्वं जाणविमाणं अणुपयाहिणीकरेमाणे पुरत्थिमिल्लेणं[11]

सूर्याभः सपरिवारः यानविमानमारूढः

[४६] १दिव्यं–प्रधानं २जिनेन्द्रस्य–भगवतो वर्द्धमानस्वामिनोऽभिगमनाय–अभिमुखं गमनाय योग्यम्–उचितं जिनेन्द्राभिगमनयोग्यम् ३ उत्तरवैक्रियं रूपं ४ विकुर्वति, 8विकुर्वित्वा ५ चतसृभिरग्रमहिषीभिः सपरिवाराभिः६द्वाभ्यामनीकाभ्याम्–तद्यथा–गन्धर्वानीकेन नाट्यानीकेन च ७ सार्द्धम् ८ तत्र सहभावः स्वस्वामिभावमन्तरेणापि दृष्टः यथा समानगुण–विभवयोर्द्वयोर्मित्रयोः अतः स्वस्वामिभावप्रकटनार्थमाह–सम्यग् आराधकभावं विभ्राणैः परिवृतः–संपरिवृतः ९ तद् दिव्यं यानविमानम् १० अनुप्रदक्षिणीकुर्वन्–पूर्वतोरणानुकूल्येन प्रदक्षिणीकुर्वन् ○पूर्वेण तोरणेनानुप्रविशति*–प्रविशन् ११ पूर्वेण त्रिसोपानप्रतिरूपकेण प्रतिविशिष्टरूपेण त्रिसोपा-

8 'वि' पूर्वात् 'कुर्व' धातोः 'विकुर्व्य' इति पद साधु। 'विकुर्वित्वा' इति तु छान्दसमेतत्। ○ "पूर्वेण तोरणेन अनुप्रविशति" अस्य विवरणस्य मूल पञ्चस्वपि टीकापाठप्रतिषु नोपलब्धम्। * –ति स्वसिंहासनानुकूल प्रविशति प्र–भा० २।

पक्षिणां पानीयशब्दो जायते ततस्तस्यावश्य किमपि कारण भवेत्। अत्र "एकान्तनिर्जनस्थानं मत्वा आवा समागतौ तथापि नात्र एकान्तनिर्जनं प्रतिभाति" इत्येव स्वीयं भावं कश्चिद् वल्लभः मुग्धायै सूचयति–एष गाथाध्वनिः।

*तिसोमाणपडिरूवएणं दुरूहति[12] दुरूहित्ता जेणेव[13] [14]सीहासणे तेणेव[15] उवागच्छइ उवागच्छित्ता [16]सीहासणवरगए पुरत्थाभिमुहे[17] सण्णिसण्णे। तए[18] णं तस्स[19] सूरिआभस्स देवस्स [20]चत्तारि सामाणियसाहस्सीओ तं[21] दिव्वं जाणविमाणं अणुपयाहिणीकरेमाणा[22] उत्तरिल्लेणं[23] तिसोवाणपडिरूवएणं [24]दुरूहंति= दुरूहित्ता पत्तयं पत्तयं [25]पुव्वणत्थेहिं भद्दासणेहिं णिसीयंति, अवसेसा[27] देवा य देवीओ य तं दिव्वं जाणविमाणं जाव [28]दाहिणिल्लेणं तिसोवाणपडिरूवएणं [29]दुरूहंति दुरूहित्ता पत्तेयं पत्तेयं [30]पुव्वणत्थेहिं भद्दासणेहिं [31]निसीयंति। ९

नेन तद् यानविमानम् १२ आरोहति, आरुह्य च १३ यस्मिन्नेव देशे तस्या मणिपीठिकाया उपरि १४ सिंहासनं १५ तत्रोपागच्छति,
उपागत्य च १६ सिंहासनवरगतः सन् १७ पूर्वाभिमुखः सन्निषण्णः सम्यक्–सकलसेवकजनचमत्कारकारिण्या उपवेशनस्थित्योपविष्टः।
१८ ततः १९ तस्य सूर्याभस्य देवस्य २० चत्वारि सामानिकदेवसहस्राणि २१ तद् दिव्यं यानविमानम् २२ अनुप्रदक्षिणीकुर्वन्ति,
२३ उत्तरेण त्रिसोपानप्रतिरूपकेण २४ आरोहन्ति, २५ पूर्वन्यस्तेषु भद्रासनेषु २६ निषीदन्ति २७ अवशेषाः–अभ्यन्तरपर्षदादयो १०
देवा देव्यश्च २८ दक्षिणेन त्रिसोपानप्रतिरूपकेण २९ आरोहन्ति, आरुह्य च ३० स्वेषु भद्रासनेषु ३१ निषीदन्ति।

* 'त्रिसोपान–तिसोवाण–तिसोमाण' इति शब्दपरिवर्तनम्। = अत्र 'दुर्' उपसर्गपूर्वको 'रुह' धातुः प्रतीयते। 8 "अत्र सप्तम्यर्थे तृतीया"– राय० वि०।

[४७] तए[1] णं तस्स[2] सूरियाभस्स[3] देवस्स [4]तं दिव्वं जाणविमाणं दुरूढस्स[5] समाणस्स[6] अट्ठ अट्ठमङ्गलगा पुरतो अ[7]हाणुपुव्वीए संपत्थिता[8], तंजहा[9]–[10]सोत्थिय सिरिवच्छ[11] जाव [पृ० १९ पं०४] दप्पणा। तयणंतरं[12] च णं पुण्णकलस[13]-भिंगार दिव्वा[14] य छत्तपडागा सचामरा[15] दंसणरतिया[16] आलोयदरिसणिज्जा[17] वाउद्धुयविजयवेजयंतीपडागा[18] ऊसिया गगणतलमणुलिहन्ती[19] पुरतो[20] अहाणुपुव्वीए संपत्थिया[21]। तयणंतरं[22] च णं वेरुलिय[23]भिसंतविमलदण्डं पलम्बकोरंट[24]-मल्लदामोवसोभितं

[४७] १ ततः २तस्य ३ सूर्याभस्य देवस्य ४ तद् दिव्यं यानविमानम् ५ आरूढस्य ६ पुरतोऽष्टौ ⁄अष्टमङ्गलकानि ७ यथानुपूर्व्या–वक्ष्यमाणपाठक्रमेणेत्यर्थः, ८ संप्रस्थितानि ९ तद्यथा–पूर्वं १० स्वस्तिकः तदनन्तरं ११ =श्रीवत्सः–१२ तदनन्तरं १३ पूर्णकलश–भृङ्गार–१४दिव्याऽऽतपत्र–पताकाः १५ सचामराः, कथम्भूताः? इत्याह–१६दर्शनरतिका दर्शने–अवलोकने रतिर्यासु ता दर्शनरतिकाः, १७ इह दर्शनरतिकमपि किञ्चिदालोकदर्शनीयं न भवत्यमङ्गलत्वात् यथा गर्भवती युवतिः अत आह–आलोके–बहिःप्रस्थानसमयभाविनि दर्शनीया–द्रष्टुं योग्या मङ्गल्यत्वात्, अन्ये त्वाहुः–"आलोके दर्शनीया–न पुनरत्युच्चा–आलोकदर्शनीया" [ ] तथा १८ वातोद्धुता विजयसूचिका वैजयन्ती इति विजयवैजयन्ती च उत्सृता–ऊर्ध्वीकृता १९ गगनतलम्–अम्बरतलमनुलिखन्ती–अभिलङ्घयन्ती २० पुरतो यथानुपूर्व्या २१ संप्रस्थिता। २२ तदनन्तरं २३ वैडूर्यो वैडूर्यरत्नमयो ×भिसन्तो–दीप्यमानो विमलो–निर्मलो दण्डो यस्य तत् तथा २४ प्रलम्बते इति प्रलम्बः तेन–प्रलम्बमानेन कोरण्टमाल्यदाम्ना–कोरण्टपुष्पमालयोपशोभितं

⁄ पृ० १९ + टिप्पण। = पृ० १९ – टिप्पण। × प्राकृतोऽय प्रयोगः।

[२५]चंदमंडलनिभं [२६]समुस्सियं [२७]विमलमायवत्तं [२८]पवरसीहासणं च [२९]मणिरयणभत्तिचित्तं [३०]सपायपीढं [३१]सपाउयाजोयसमाउत्तं [३२]बहुकिंकरामरपरिग्गहियं [३३]पुरतो [३४]अहाणुपुव्वीए [३५]संपत्थियं। [३६]तयणंतरं च णं [३७]वइरामयवट्टलट्ठसंठियसुसिलिट्ठपरिघट्ठमट्ठसुपतिट्ठिए [३८]विसिट्ठे [३९]अणेगवरपंचवण्णकुडभीसहस्सुस्सिए ≡परिमंडियाभिरामे [४०]वाउद्धुयविजयवेजयंतीपडागच्छत्तातिच्छत्तकलिते तुंगे[४१]

प्रलम्बकोरण्टमाल्यदामोपशोभितं २५ चन्द्रमण्डलनिभं दीप्त्या शोभया वर्तुलतया च चन्द्रमण्डलाकारं २६ समुत्सृतं सम्यगूर्ध्वीकृतं २७ विमलमातपत्रं तथा २८ प्रवरं सिंहासनं २९ मणिरत्नैः भक्त्या–विच्छित्त्या चित्रं यत् तद् मणिरत्नभक्तिचित्रम् ३० सह पादपीठं यस्य तत् सपादपीठं तथा ३१ पादुकायोगः–पादुकाद्वितयं तस्य समायोजनसमायुक्तम् सह पादुकायोगसमायुक्तं यस्य तत् तथा ३२ बहुभिः किङ्करैः-किङ्करकल्पैरमरैः परिगृहीतं ३३ पुरतो ३४ यथानुपूर्व्या ३५ सम्प्रस्थितम्। ३६ तदनन्तरं ३७ वज्रमयो वज्ररत्नमयः तथा वृत्तं-वर्तुलं लष्टं-मनोज्ञं संस्थितं–संस्थानमाकारो यस्य स वृत्तलष्टसंस्थितः तथा सुश्लिष्टः–सुश्लेषापन्नावयवो मसृण इत्यर्थः परिघृष्ट इव परिघृष्टः+ खरशाणया पाषाणप्रतिमावद् मृष्ट इव मृष्टः सुकुमारशाणया पाषाणप्रतिमेव सुप्रतिष्ठितो न तु तिर्यक्पतिततया ≍वक्रः ३८ अत एव शेषध्वजेभ्यो विशिष्टः–अतिशायी, तथा ३९ अनेकानि–अनेकसङ्ख्याकानि वराणि–प्रधानानि पञ्चवर्णानि कुडभीसहस्राणि उत्सृतानि यत्र सोऽनेकवरपञ्चवर्णकुडभीसहस्रोत्सृतः= ४० वातोद्धूतविजयवैजयन्तीपताकाच्छत्रातिच्छत्रकलितः, ४१ तुङ्गः–अत्युच्चो योजनस-

≡ वि० बा०। + –ष्टः परशा–पा० ५। ≍ "ततः एतेषां पदानां पदद्वयमीलनेन कर्मधारयः"–राय० वि०। = "क्रान्तस्य परनिपातः सुखादिदर्शनात्"—राय० वि०–पृ० ४८ * टिप्पण।

रायपसेण-इयं।

॥११०॥

गगणतलमणुलिहं[42]तसिहरे जोअणसहस्समूसिए[43] महतिमहालए[44] महिंदज्झए[45] पुरतो[46] अहाणुपुव्वीए संपत्थिए। तयणंतरं[47] च णं सुरूवणेवत्थपरिकच्छिया[48] सुसज्जा[49] सव्वालंकारभूसिया[50] महया[51] भडचडगरपहगरेणं[52] पंच अणीया[53]हिवईणो पुरतो[54] अहाणुपुव्वीए संपत्थिया। ○[तयणंतरं च णं बहवे आभिओगिया देवा देवीओ य सएहिं सएहिं रूवेहिं, सएहिं सएहिं विसेसेहिं, सएहिं सएहिं विंदेहिं, सएहिं सएहिं णेज्जाएहिं, सएहिं सएहिं णेवत्थेहिं पुरतो अहाणुपुव्वीए संपत्थिया] तयणंतरं[55] च णं सूरियाभविमाणवासिणो[56] बहवे वेमाणिया देवा य देवीओ य सव्विड्ढीए[57] जाव [पृ० ६९ पं० २]-रवेणं सूरियाभं[58] देवं पुरतो[59] पासतो य ८मग्गतो य समणुगच्छंति।

सूर्याभः भगवन्त-मुपागतः

हस्तप्रमाणोच्छ्रायत्वात्, तथा ४२ गगनतलम्–अम्बरतलमनुलिखत् शिखरम्–अग्रभागो यस्य स तथा ४३ योजनसहस्रमृत्सृतः अत एव ४४ अतिशयेन महान् ४५ महेन्द्रध्वजः ४६ पुरतो यथानुपूर्व्या सम्प्रस्थितः।४७ तदनन्तरं ४८ सुरूपं नेपथ्यं परिकक्षितं–परिगृहीतं यैस्ते तथा, तथा ४९ सुष्ठु–अतिशयेन सज्जाः–परिपूर्णाः स्वसामग्रीसमायुक्ततया प्रगुणीभूताः–५०सर्वालङ्कारविभूषिताः ५१ महता–अतिशयेन ५२ भटचटकर[8]पहकरेण–चटकरप्रधानभटसमूहेन *पञ्चानीकानि ५३ पञ्चानीकाधिपतयः ५४ पुरतो यथाऽनुपूर्व्या संप्रस्थिताः। ५५ तदनन्तरं च ५६ सूर्याभविमानवासिनो बहवो वैमानिका देवा देव्यश्च–५७सर्वर्द्ध्या 'यावत्'करणात् 'सव्वजुईए सव्वबलेणं'इत्यादि [पृ० ६९ पं० २–३–] परिग्रहः–५८ सूर्याभं देवं ५९ पुरतः पार्श्वतो मार्गतः–पृष्ठतः समनुगच्छन्ति।

○[ ] इति चिह्नान्तर्गतः पाठः विवरणे नास्ति। ८ "मग्गा पश्चात्"–देशीना० व० १ गा० ४। "मग्गो पश्चात्"–देशीना० व०६ गा० १११। अधुनातनमहाराष्ट्रीभाषायाम् 'पश्चात्' इत्यर्थे 'मग' शब्दः प्रसिद्धः। 8 पृ० १६ पं० ५ * टिप्पण। * नैतत् पद मूलपाठे।

[४८] [1]तए णं [2]से सूरियाभे देवे तेणं [3]पञ्चाणीयपरिखित्तेणं [4]वइरामयवट्टलट्ठसंठिएण जाव [कं० ४७ पं० ७] जोयणसहस्समूसिएणं महतिमहालतेणं महिंदज्झएणं पुरतो कड्ढिज्जमाणेणं चउहिं[5] सामाणियसहस्सेहिं जाव [पृ० ४४ पं० २–] [6]सोलसहिं आयरक्खदेवसाहस्सीहिं [7]अन्नेहि य बहूहिं सूरियाभविमाणवासीहिं वेमाणिएहिं देवेहिं देवीहि य सद्धिं संपरिवुडे सव्विड्ढीए [9]जाव [पृ० ६९ पं० २] –रवेणं [11]सोधम्मस्स कप्पस्स मज्झंमज्झेणं [12]तं दिव्वं देविड्ढिं दिव्वं[13] देवजुतिं [14]दिव्वं देवाणुभावं उवलालेमाणे [15]उवलालेमाणे उवदंसेमाणे उवदंसेमाणे ○पडिजागरेमाणे पडिजागरेमाणे

[४८] १ततः २स सूर्याभो देवः ३तेन पञ्चानीकपरिक्षिप्तेन ४यथोक्तविशेषणविशिष्टेन [पृ०१०९पं०८–] महेन्द्रध्वजेन पुरतः प्रकृष्यमाणेन ५चतुर्भिः सामानिकसहस्रैः चतसृभिः सपरिवाराभिरग्रमहिषीभिः तिसृभिः पर्षद्भिः सप्तभिरनीकाधिपतिभिः ६षोडशभिरात्मरक्षदेवसहस्रैः ७अन्यैश्च बहुभिः सूर्याभविमानवासिभिर्वैमानिकैर्देवैर्देवीभिश्च ८सार्धं संपरिवृतः ९सर्वर्द्ध्या सर्वद्युत्या १०'यावत्' करणात् 'सव्वबलेणं सव्वसमुदएणं सव्वादरेण सव्वविभूसाए सव्वविभूईए सव्वसंभमेणं सव्वपुप्फवत्थगंधमल्लालङ्कारेणं सव्वदिव्वतुडियसद्दसंनिनाएणं महया इड्ढीए महया जुईए महया बलेणं महया समुदएणं महया वरतुडियजमगसमगपडुप्पवाइयरवेणं संख–पणव–पडह–भेरि–झल्लरि–खरमुहि–हुडुक्क–मुरय–मुइंग–दुन्दुभिनिग्घोसनाइयरवेणं' इति [पृ० ६९ पं० ३–] परिगृह्यते । ११ सौधर्मस्य कल्पस्य मध्येन १२ तां दिव्यां देवर्द्धिम् १३ दिव्यां देवद्युतिम् १४ दिव्यां देवानुभूतिम् उपदर्शयन् १५ उपलालयन् उपलालयन्–लीलया

○ त्रि० वा० ।

जेणेव[16] सोहम्मस्स कप्पस्स [17]उत्तरिल्ले णिज्जाणमग्गे तेणेव[18] उवागच्छति, [19]जोयणसयसाहस्सितेहिं विग्गहेहिं [20]ओवयमाणे [21]वीतीवयमाणे [22]ताए उक्किट्ठाए [पृ० ५८ पं० १] जाव तिरियं[23] [24]असंखिज्जाणं दीवसमुद्दाणं [25]मज्झंमज्झेणं वीइवयमाणे वीइवयमाणे जेणेव[26] नंदीस[27]रवरे दीवे जेणेव[28] दाहिणपुर[29]त्थिमिल्ले रतिकर[30]पव्वते तेणेव[31] उवागच्छति उवागच्छित्ता तं [32]दिव्वं देविड्ढिं जाव दिव्वं देवाणुभावं [33]पडिसाहरेमाणे पडिसाहरेमाणे [34]पडिसंखेवेमाणे पडिसंखेवेमाणे जेणेव[35] जम्बूद्दीवे दीवे जेणेव[36] भारहे वासे जेणेव[37] आमलकप्पा नयरी जेणेव[38] अम्बसालवणे चेइए जेणेव[39] समणे भगवं महावीरे

उपभुञ्जान इति भावः। १६येनैव सौधर्मस्य कल्पस्य १७उत्तराहो निर्याणमार्गः–निर्गमनमार्गः १८तेनैव पार्श्वेन उपागच्छति २२'ताए उक्किट्ठाए' इत्यादि पूर्ववत् [पृ० ५८ पं० ७] यावत् दिव्यया देवगत्या १९ योजनलक्षप्रमाणैर्विग्रहैः–क्रमैः २० अवपतन्–अधस्ताद् अवतरन् २१व्यतिव्रजंश्च–गच्छंश्च २३तिर्यग् २४असंख्येयानां द्वीप–समुद्राणां २५मध्यंमध्येन २६यस्मिन्नेव प्रदेशे २७नन्दीश्वरो द्वीपः २८यस्मिन्नेव च प्रदेशे तस्मिन् नन्दीश्वरे द्वीपे २९दक्षिणपूर्वः आग्नेयकोणवर्ती ३०रतिकरनामा पर्वतः ३१तस्मिन् उपागच्छति, उपागत्य च ३२ तां दिव्यां देवर्द्धिम् यावत् दिव्यं देवानुभावं ३३ शनैः शनैः प्रतिसंहरन् प्रतिसंहरन्–३४ एतदेव पर्यायेण व्याचष्टे–प्रतिसंक्षिपन् प्रतिसंक्षिपन् ३५ यस्मिन् प्रदेशे जम्बूद्वीपो नाम द्वीपः ३६ तत्र च जम्बूद्वीपे यस्मिन् प्रदेशे भारतवर्षम् ३७ तस्मिंश्च भारतवर्षे यस्मिन् प्रदेशे आमलकल्पा नगरी ३८ तस्याश्च आमलकल्पाया नगर्या बहिर् यस्मिन् प्रदेशे आम्रशालवनं चैत्यम् ३९ तस्मिंश्च

=[४०]तेणेव उवागच्छइ उवागच्छित्ता [४१]समणं भगवन्तं महावीरं [४२]तेणं दिव्वेणं जाणविमाणेणं [४३]तिक्खुत्तो [४४]आयाहिणं-पयाहिणं करेइ करित्ता [४५]समणस्स भगवतो महावीरस्स [४६]उत्तरपुरत्थिमे दिसिभागे तं [४७]दिव्वं जाणविमाणं [४८]ईसिं चउरंगुलमसंपत्तं [४९]धरणितलंसि ठवेइ ठवित्ता [५०]चउहिं अग्गमहिसीहिं सपरिवाराहिं [५१]दोहिं अणीयाहिं-तंजहा गधव्वाणिएण य णट्टाणिएण य-[५२]सद्धिं संपरिवुडे [५३]ताओ दिव्वाओ जाणविमाणाओ [५४]पुरत्थिमिल्लेणं तिसोवाणपडिरूवएणं [५५]पच्चोरुहति। तए णं तस्स सूरियाभस्स देवस्स [५६]चत्तारि सामाणियसाहस्सीओ ताओ दिव्वाओ जाणविमाणाओ उत्तरिल्लेणं तिसोवाणपडिरूवएणं पच्चोरुहति, [५७]अवसेसा देवा य देवीओ य ताओ दिव्वाओ जाणविमाणाओ दाहिणिल्लेणं तिसोवाणपडिरूवएणं पच्चोरुहन्ति।

चैत्ये यस्मिन् प्रदेशे श्रमणो भगवान् महावीरः ४० तत्र उपागच्छति उपागत्य च ४१श्रमणं भगवन्तं महावीरं ४२तेन प्रागुक्तस्वरूपेण दिव्येन यानविमानेन सह ४३ त्रिकृत्वः-त्रीन् वारान् ४४आदक्षिणप्रदक्षिणीकरोति आदक्षिणप्रदक्षिणीकृत्य च ४५श्रमणस्य भगवतो महावीरस्य अपेक्षया यः ४६उत्तरपूर्वो दिग्भागः तम् अपक्रामति-गच्छति अपक्रम्य च ४७तद् दिव्यं यानविमानम् ४८ईषद्-एतदेव प्रकटयति-चतुरङ्गुलम्-चतुर्भिः अङ्गुलैरित्यर्थः-असंप्राप्तं सत् ४९ धरणीतले स्थापयति स्थापयित्वा ५० चतसृभिरग्रमहिषीभिः सपरिवाराभिः ५१ द्वाभ्यामनीकाभ्याम्-तद्यथा-गन्धर्वानीकेन नाट्यानीकेन च ५२ सार्धं संपरिवृतः ५३ तस्माद् दिव्याद् यानविमानात् ५४ पूर्वेण त्रिसोपानप्रतिरूपकेण ५५ प्रत्यवतरति, ५६ चत्वारि सामानिकदेवसहस्राणि उत्तरेण, ५७ शेषा दक्षिणेन।

= "सर्वत्र तृतीया सप्तम्यर्थे द्रष्टव्या प्राकृतत्वात्"-राय० विव०-पृ० ३७+ टिप्पण।

भगवता सूर्याभस्य संभाषणम्

[४९] तए णं से सूरियाभे देवे चउहिं अग्गमहिसीहिं जाव [पृ० ४४ पं० २] सोलसहिं आयरक्खदेवसाहस्सीहिं अण्णेहि य बहूहिं सूरियाभविमाणवासीहिं वेमाणिएहिं देवेहिं देवीहि य सद्धिं संपरिवुडे सव्विड्ढीए [पृ० ६९ पं० २–] जाव–णादितरवेणं जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव उवागच्छति उवागच्छित्ता समणं भगवंतं महावीरं तिक्खुत्तो आयाहिणपयाहिणं करेति करित्ता वंदति नमंसति वंदित्ता नमंसित्ता एवं वयासी–'अहं णं भंते! सूरियाभे देवे देवाणुप्पियाणं [१]वन्दामि नमंसामि जाव पज्जुवासामि'।

[५०] [४]सूरिया[१]भाइ [२]समणे भगवं महावीरे सूरिया[३]भं देवं [४]एवं वयासी–'पोराणमेयं सूरियाभा! जीयमेयं सूरियाभा! किच्चमेयं सूरियाभा! करणिज्जमेयं सूरियाभा! आइण्णमेयं सूरियाभा! अब्भणुण्णायमेयं सूरियाभा! जं णं भवणवइ–वाणमंतर–जोइस–वेमाणिया देवा अरहंते भगवते वंदंति नमंसंति वंदित्ता नमंसित्ता तओ पच्छा

[४९] १ 'वंदामि नमंसामि जाव पज्जुवासामि' इत्यत्र 'यावत्' शब्दकरणात् 'सक्कारेमि सम्माणेमि कल्लाणं मंगलं देवयं चेइयं पज्जुवासेमि' इति [पृ० ५८ पं० ५–] परिग्रहः।

[५०] ततः १ *'सूरियाभाइ' इत्यादि, ⌐सूर्याभ आदिः मुख्यः पर्युपासकतया यस्य स सूर्याभादिः २ श्रमणो भगवान् महावीरः ३ तं सूर्याभं देवम् ४ एवम् अवादीत्–५ 'पोराणमेयं' इत्यादि प्राग्वत् [पृ० ५९–६०]

[४]सूरियाभा य स–भा० २। * अत्रापि 'सूरियाभा!' 'इ' इति पदद्वयमेव संगतम्–पृ० ५९×टिप्पण। ⌐ सूर्याभात् आदिः पा० ४–५। सूर्याभा आदि मुख्यः भा० १।

साइं साइं नाम-गोत्ताइं साहिंति तं पोराणमेयं सूरियाभा! जाव अब्भणुण्णायमेयं सूरियाभा!'। [पृ० ५९-६०-कंडिका २०] तए णं से सूरियाभे देवे समणेणं भगवया महावीरेणं एवं वुत्ते समाणे हट्ठ-[पृ० ४७ पं० ३] जाव समणं भगवंतं महावीरं वंदति नमंसति वंदित्ता नमंसित्ता [6]नच्चासण्णे [7]नातिदूरे [8]सुस्सूसमाणे णमंसमाणे [9]अभिमुहे [10]विणएणं [11]पंजलिउडे [12]पज्जुवासति।

[५१] [1]तए णं [2]समणे भगवं महावीरे [3]सूरियाभस्स देवस्स [4]तीसे य [5]महतिमहालिताए परिसाए जाव परिसा जामेव दिसिं पाउब्भूया तामेव दिसिं पडिगया।

६ नात्यासन्नः-नातिनिकटः अवग्रहपरिहारात् नात्यासन्ने वा स्थाने वर्तमान इति गम्यम् ७ न नैव अतिदूरः अतिविप्रकृष्टः अनौचित्यपरिहारात् नातिदूरे वा ८ भगवद्वचनानि श्रोतुमिच्छन् ९ अभि भगवन्तं लक्ष्यीकृत्य मुखमस्येति अभिमुखः-भगवतः सम्मुख इत्यर्थः १० विनयेन हेतुना ११ प्रकृष्टः प्रधानः-ललाटतटघटितत्वेन-अञ्जलिः-हस्तन्यासविशेषः-कृतः येन स प्राञ्जलिकृतः-१२ पर्युपास्ते-सेवते।

[५१] १ततः २श्रमणो भगवान् महावीरः ३सूर्याभस्य देवस्य श्वेतस्य राज्ञः धारणीप्रमुखानां च देवीनाम् ४तस्याश्च ५'महतिमहालिताए'इति-अतिशयेन महत्याः 'इसिपरिसाए'इति-ऋषयः त्रिकालदर्शनिनः तेषां पर्षत् तस्याः-अवध्यादिजिनपर्षद इत्यर्थः मुनिपर्षदः-

- "सुखादिदर्शनात् क्तान्तस्य परनिपातः" राय० वि०-पृ०-४८ * टिप्पण।

यथोक्तानुष्ठानानुष्ठायिसाधुपर्षदः 'जतिपरिसाए' इति यतन्ते उत्तरगुणेषु विशेषतः इति यतयः—विचित्रद्रव्याद्यभिग्रहाद्युपेताः साधवः तेषां पर्षदो यतिपर्षदः 'विदुपरिसाए' इति विद्वत्परिषदः—अनेकविद्वज्जनपर्षदः देवपर्षदः क्षत्रियपर्षदः इक्ष्वाकुपर्षदः कौरव्यपर्षदः कथंभूतायाः ? इत्याह—'अणेगसयाए' इति अनेकानि पुरुषाणां शतानि संख्यया यस्यां सा अनेकशता तस्याः 'अणेगवंदाए' इति अनेकानि वृन्दानि यस्याः सा तथा तस्याः 'अणेगसयवंदपरिवाराए' इति अनेकशतानि अनेकशतसंख्यानि वृन्दानि परिवारो यस्याः सा तथा तस्याः 'महतिमहालियाए परिसाए' अतिशयेन महत्याः पर्षदः । 'ओहबले' इति ओघेन प्रवाहेण बलं यस्य—न तु कथयतो बलहानिः उपजायते इति भावः । 'एवं जहा उववाइए तहा भाणियव्वं' इति—एवं यथा औपपातिके ग्रन्थे तथा वक्तव्यम् । तच्च एवम्—"=अइबले× महाबले अपरिमियबल—वीरिय—तेय—माहप्प—कंतिजुत्ते सारदनवथणियमहुरगंभीर—कुंचनिग्घोस—दुंदुभिस्सरे उरे वित्थडाए कंठे वट्टियाए सिरे समावत्ताए अगग्गयाए अमम्मणाए फुडविसयमहुरगंभीरगाहिगाए सव्वक्खरसन्निवाइयाए गिराए सव्वभासाणुगामिणीए सव्वसंसयविमोयणीए अपुणरुत्ताए सरस्सईए जोयणनीहारिणा सरेणं अद्धमागहाए भासाए अरिहा धम्मं परिकहेइ—

= अतः आरभ्य यावान् प्राकृतः पाठ. सूचितः तावान् भा० १ प्रतौ न प्रतिभाति । × अतिबलः महाबलः अपरिमितबल—वीर्य—तेजः—माहात्म्य—कान्तियुक्तः शारदनवस्तनितमधुरगम्भीर—क्रौञ्चनिर्घोष—दुन्दुभिस्वर' उरसि विस्तृतया कण्ठे वृत्तिकया—वर्तुलया शिरसि समावृत्तया अगदगदया अमन्मनया स्फुटविषयमधुरगम्भीरग्राहिकया सर्वाक्षरसन्निपातिकया गिरा सर्वभाषानुगामिन्या सर्वसंशयविमोचिन्या अपुनरुक्तया सरस्वत्या योजननिर्हारिणा स्वरेण अर्धमागध्या भाषया अर्हन् धर्मं परिकथयति । तद् यथा अस्ति लोकः अस्ति अलोकः अस्ति जीवः अस्ति अजीवः' । एष समग्र पाठः तस्य व्याख्याऽपि च औपपातिकग्रन्थतः (पृ० ७७) बोध्या ।

[५२] तए णं से सूरियाभे देवे समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतिए धम्मं सोच्चा निसम्म हट्ठतुट्ठ-[पृ०४७ पं० ३]जाव-हयहियए उट्ठाए उट्ठेति उट्ठित्ता समणं भगवंतं महावीरं वंदइ नमंसइ वंदित्ता नमंसित्ता एवं वयासी-

तंजहा-अत्थि लोए अत्थि अलोए अत्थि जीवे अत्थि अजीवे" [औपपातिक पृ० ७७ पं० १२-सू० ३४] इत्यादि तावत् यावत् "तए ण सा महइमहालिया परिसा समणस्स भगवतो महावीरस्स [कण्डिका ११] अंतिए धम्मं सोच्चा निसम्म हट्ठतुट्ठा समणं भगवंतं महावीरं तिक्खुत्तो आयाहिणपयाहिणं करेइ करित्ता वंदइ नमंसइ वंदित्ता नमंसित्ता एवं वयासी-'सुयक्खाए णं भंते! निग्गंथे पावयणे, नत्थि णं केइ समणे माहणे वा एरिसं धम्मं आइक्खित्तए' एवं वइत्ता जामेव दिसिं पाउब्भूता तामेव दिसिं पडिगया" [औपपातिक पृ० ८२ पं० १२ सू० ३५-३७] "तए णं से+ राया समणस्स भगवतो महावीरस्स अंतिए धम्मं सोच्चा निसम्म हट्ठतुट्ठचित्तमाणंदिए जाव [पृ० ४७ पं० ३ तथा १२-] हरिसवसविसप्पमाणहियए समणं भगवंतं महावीरं वंदइ नमंसइ वंदित्ता नमंसित्ता पसिणाइं पुच्छइ पुच्छित्ता =अट्ठाइं परियाएइ परियाइत्ता उट्ठाए उट्ठेइ उट्ठित्ता समणं भगवंतं महावीरं वंदइ नमंसइ वंदित्ता नमंसित्ता एवं वयासी-'सुयक्खाए ण भंते! निग्गंथे पावयणे जाव [पृ० ४३ पं० ३] एरिसं धम्मं आइक्खित्तए' एवं वइत्ता हत्थिं दुरूहइ दुरूहित्ता समणस्स भगवतो महावीरस्स अंतियाओ अंबसालवणाओ चेइयाओ पडिनिक्खमइ पडिनिक्खमित्ता जामेव दिसिं पाउब्भूए तामेव दिसिं पडिगते" इति। इदं च प्रायः सकलमपि सुगमम्। नवरम्-यामेव दिशमवलम्ब्य-किमुक्तं भवति?-यतो दिशः सकाशात् प्रादुर्भूतः-समवसरणे समागतः-तामेव दिशं प्रतिगतः।

+ से पएसी राया-भा० २। = अर्थान् पर्याददाति पर्यादाय।

सूर्याभः भगवन्तं पृच्छति

प्र०—अहं णं भंते ! सूरियाभे देवे किं [1]भवसिद्धिते अ[2]भवसिद्धिते ? स[3]म्मदिट्ठी मि[4]च्छादिट्ठी ? परित्त[5]संसारिते अ[6]णंतसंसारिते ? सुलभ[7]बोहिए दुल्लभ[8]बोहिए ? आ[9]राहते विरा[10]हंते ? [11]चरिमे [12]अचरिमे ?

[५२] सम्प्रति सूर्याभो देवो धर्मदेशनाश्रवणतो जातप्रभूततरसंसारविरागः स्वविषयं भव्यत्वादिकं पिपृच्छिषुः यत् करोति तद् आह–१ भवैः सिद्धिर्यस्य असौ भवसिद्धिकः–भव्य इत्यर्थः २तद्विपरीतः–अभवसिद्धिकः ?–अभव्य इत्यर्थः ३ भव्योऽपि कश्चिद् मिथ्यादृष्टिर्भवति कश्चित् सम्यग्दृष्टिः ततः आत्मनः सम्यग्दृष्टित्वनिश्चयाय पृच्छति–सम्यग्दृष्टिकः ४ मिथ्यादृष्टिकः ? ५ सम्यग्दृष्टिरपि कश्चित् परिमितसंसारो भवति कश्चिद् अपरिमितसंसारः उपशमश्रेणिशिरःप्राप्तानामपि केषांचिद् अनन्तसंसारभावात् अतः पृच्छति–परीत्तसंसारिकः ६ अनन्तसंसारिकः ? ५ परीत्तः परिमितः स चासौ संसारश्च परीत्तसंसारः सः अस्य अस्ति–इति परीत्तसंसारिकः× एवम् ६ अनन्तश्चासौ संसारश्च अनन्तसंसारः सः अस्य अस्ति–इति अनन्तसंसारिकः ७ परीत्तसंसारिकोऽपि कश्चित् सुलभबोधिको भवति यथा ○शालिभद्रादिकः कश्चिद् दुर्लभबोधिको यथा ○पुरोहितपुत्रजीवः ततः पृच्छति–सुलभा बोधिः भवान्तरे जिनधर्मप्राप्तिर्यस्य असौ सुलभबोधिकः एवं ८ दुर्लभबोधिकः ? ९ सुलभबोधिकोऽपि कश्चिद् बोधिं लब्ध्वा विराधयति ततः पृच्छति–आराधयति–सम्यक् पालयति बोधिम् इति आराधकः १० तद्विपरीतो विराधकः ? ११ आराधकोऽपि कश्चित् तद्भवमोक्षगामी न भवति ततः पृच्छति–चरमः अचरमो वा ? चरमः अनन्तरभावी भवो यस्य असौ =चरमः १२ तद्विपरीतः अचरमः।

× "अतोऽनेकस्वरात्" [७–२–६ हैमश०] 'इक' प्रत्ययः"—राय० वि० । ○ शालिभद्रकथा प्रसिद्धा। ○ पुरोहितपुत्रस्य विशेषसंज्ञा नावगता तथापि तस्य कथाऽपि प्रसिद्धा। सा च श्रीपुण्य० पञ्चकल्पभाष्ये लि० पृ० १८–१९ 'सारणी' प्रव्रज्योदाहरणे। = "अभ्रादिभ्यः"

भगवतः प्रतिवचः

[५३] उ०-×सूरियाभाइ समणे भगवं महावीरे सूरियाभं देवं एवं वदासी—

सूरियाभा! तुमं णं भवसिद्धिए नो अभवसिद्धिते जाँव [पृ० ११८ पं० १] चरिमे णो अचरिमे।

[५४] तए णं से सूरिआभे देवे समणेणं भगवया महावीरेणं एवं वुत्ते समाणे हट्ठतुट्ठचित्तमाणंदिए [पृ० ४७ पं० ३-] परमसोमणस्सिए समणं भगवंतं महावीरं वंदति नमंसति वंदित्ता नमंसित्ता एवं वदासी—

तुब्भे णं भंते! सव्वं जाणह सव्वं पासह, सव्वओ जाणह सव्वओ पासह, सव्वं कालं जाणह सव्वं

---

[५३] एवमुक्ते =१सूर्याभादिः श्रमणो भगवान् महावीरः २तं सूर्याभं देवम् ३एवम् अवादीत्-४भोः सूर्याभ! ५त्वं भवसिद्धिकः ६न अभवसिद्धिकः ७'यावत्' करणात् 'सम्मदिट्ठी नो मिच्छादिट्ठी, परित्तसंसारिए नो अणंतसंसारिए, सुलभबोहिए नो दुल्लभबोहिए, आराहए नो विराहए' इति [पृ० ११८ पं० १] परिग्रहः।

[५४] १यूयं २भदन्त! ३सर्वं केवलवेदसा जानीथ ४सर्वं केवलदर्शनेन पश्यथ-अनेन द्रव्यपरिग्रहः ५तत्र 'सर्व'शब्दो देशकार्त्स्न्येऽपि वर्तते यथा-'अस्य सर्वस्यापि ग्रामस्य अयमधिपतिः' इति सचराचरविषयज्ञान-दर्शनप्रतिपादनार्थमाह-सर्वतः-सर्वत्र दिक्षु विदिक्षु ऊर्ध्वम् अधो लोके अलोके च-इति भावः जानीथ पश्यथ च-अनेन क्षेत्रपरिग्रहः। ६तत्र सर्वद्रव्यसर्वक्षेत्रविषयं वार्तमानिक-

---

[७-२-४६ हैमश०] इति मत्वर्थीयः 'अ' प्रत्ययः"—राय० वि० । × सूरियाभा समणे-भा० २ । = पृ० ११४ * टिप्पण तथा पृ० ५९ × टिप्पण।

'दिव्यं नाट्यविधानं प्रदर्शयामि' इति सूर्याभस्य विज्ञप्तिः

कालं पासह, सव्वे[7] भावे जाणह सव्वे भावे पासह। जाणंति[8] णं देवाणुप्पिया! मम पुव्विं[9] वा पच्छा[10] वा मम[11]–एयरूवं दिव्वं देविड्ढिं दिव्वं देवजुइं दिव्वं देवाणुभावं लद्धं[12] पत्तं[13] अभिसमण्णागयं[14] ति, तं इच्छामि णं देवाणुप्पियाणं भत्तिपुव्वगं[15] गोयमातियाणं[16] समणाणं निग्गंथाणं दिव्वं देविड्ढिं दिव्वं देवजुइं दिव्वं देवाणुभावं दिव्वं

मात्रमपि ज्ञानं दर्शनं वा सम्भाव्येत ततः सकलकालविषयज्ञान–दर्शनप्रतिपादनार्थमाह–सर्वकालम्–अतीतम् अनागतं वर्तमानं च जानीथ पश्यथ–एतेन कालपरिग्रहः ७ तत्र कश्चित् सर्वद्रव्य–सर्वक्षेत्र–सर्वकालविषयमपि ज्ञानं सर्वपर्यायविषयं न संभावयेत् यथा ९
–मीमांसकादिः अत आह–सर्वान् भावान् पर्यायान् प्रतिद्रव्यमात्मीयान् परकीयांश्च केवलवेदसा जानीथ केवलदर्शनेन पश्यथ। अथ भावा दर्शनविषया न भवन्ति ततः कथमुक्तम् 'सव्वे भावे पासह' इति? नैष दोषः, उत्कलितरूपतया हि ते भावा दर्शनविषया न भवन्ति अनुत्कलितरूपतया तु ते भवन्त्येव। तथा चोक्तम्–"निर्विशेषं विशेषाणां ग्रहो दर्शनमुच्यते" [ ] ८ ततः 'जाणन्ति णं' इति पूर्ववत्। देवानांप्रियाः! ९ पूर्वमपि–अनन्तरम् उपदर्श्यमाननाट्यविधेः १० पश्चादपि च–उपदर्श्यमाननाट्यविधेः उत्तरकालम् ११ मम एतद्रूपां दिव्यां देवर्द्धिम् दिव्यां देवद्युतिम् दिव्यं देवानुभावम् १२ लब्धं देशान्तरगतमपि १०
किञ्चिद् भवति तत आह–प्राप्तम् १३ प्राप्तमपि किञ्चिद् अन्तरायवशाद् अनात्मवशं भवति तत आह–अभिसमन्वागतम्। १४ ततः इच्छामि देवानांप्रियाणां पुरतः १५ भक्तिपूर्वकम्–बहुमानपुरस्सरम् १६ गौतमादीनां श्रमणानां निर्ग्रन्थानां दिव्यां

– मीमासका हि सर्वद्रव्य–क्षेत्र–काल–भावविषयं ज्ञानं न मन्यन्ते। ते एवमाहुः–"सर्वज्ञो दृश्यते तावन्नेदानीमस्मदादिभिः। दृष्टो न चैकदेशोऽस्ति लिङ्गं वा योऽनुमापयेत्" ॥ [श्लो० वा० सू० २ श्लो० ११७] इत्यादि।

बत्तीसतिबद्धं[17] नट्टविहं उवदंसित्तए[18]।

[५५] तए[1] णं समणे[2] भगवं महावीरे सूरियाभेणं[3] देवेणं एवं[4] वुत्ते समाणे सूरियाभस्स[5] देवस्स एयमट्ठं[6] णो आढाति णो परियाणति–तुसिणीए[8] संचिट्ठति[10]।

[५६] तए णं से सूरियाभे देवे समणं भगवन्तं महावीरं दोच्चं[1] पि तच्चं[2] पि एवं वयासी—

'तुब्भे णं भंते! सव्वं जाणह [पृ० ११९ पं० ५] जाव उवदंसित्तए त्ति कट्टु[1] समणं भगवन्तं महावीरं तिक्खुत्तो आयाहिणपयाहिणं करेइ करित्ता वंदति नमंसति वंदित्ता नमंसित्ता उत्तरपुरत्थिमं दिसीभागं अवक्क-

---

देवर्द्धिम् दिव्यां देवद्युतिम् दिव्यं देवानुभावम् उपदर्शयितुम् १७ द्वात्रिंशद्विधम्–द्वात्रिंशत्प्रकारं नाट्यविधम्–नाटयविधानम् १८ उपदर्शयितुम्।

[५५] १ ततः २ श्रमणो भगवान् महावीरः ३ सूर्याभेण देवेन ४ एवमुक्तः सन् ५ सूर्याभस्य देवस्य ६ एनम्–अनन्तरोदितम्–अर्थं ७ न आद्रियते–न तदर्थकरणाय आदरपरो भवति ८ नापि परिजानाति अनुमन्यते स्वतो वीतरागत्वात् गौतमादीनां च नाटयविधेः स्वाध्यायादिविघातकारित्वात् ९ केवलं तूष्णीकः १० अवतिष्ठते।

[५६] एवं* १ द्वितीयमपि वारम् २ तृतीयमपि वारम् उक्तः सन् भगवान् एवमेव तिष्ठति। ततः पारिणामिक्या बुद्ध्या तत्त्वमवगम्य 'मौनमेव भगवतः उचितं न पुनः किमपि वक्तुम् केवलं मया भक्तिरात्मीया उपदर्शनीया' इति प्रमोदातिशयतः जातपुलकः

---

* अत्र विवरणकारलब्धपाठ–प्रतिगतमूलसूत्रपाठयोर्भेदः प्रतीयते।

मति अवक्कमित्ता वेउव्वियसमुग्घाएणं समोहणति समोहणित्ता संखिज्जाइं जोयणाइं दण्डं निस्सिरति अहाबायरे० [पृ०५६ पं०३-] अहासुहुमे०। दोच्चं पि विउव्वियसमुग्घाएणं जाव बहुसमरमणिज्जं भूमिभागं विउव्वति। से जहा नाम ए आलिंगपुक्खरे इ वा जाव मणीणं फासो [कं० ३३-४०] तस्स णं बहुसमरमणिज्जस्स भूमिभागस्स बहुमज्झदेसभागे पिच्छाघरमण्डवं विउव्वति अणेगखंभसयसंनिविट्ठं-वण्णओ-अन्तो बहुसमरमणिज्जं भूमिभागं उल्लोयं अक्खाडगं च मणिपेढियं च विउव्वति। तीसे णं मणिपेढियाए उवरि सीहासणं सपरिवारं जाव दामा चिट्ठन्ति [कं० ४१-४३]।

रायपसेणइयं।

॥१२२॥

दिव्यनाट्यप्रदर्शनाय सूर्याभस्य भक्तिपूर्वकः प्रयत्नः

[५७] [१]तए णं से [२]सूरियाभे देवे [३]समणस्स भगवतो महावीरस्स [४]आलोए [५]पणामं करेति करित्ता [६]'अणुजाणउ मे भगवं' ति कट्टु [७]सीहासणवरगए [८]तित्थयराभिमुहे [९]संणिसण्णे। तए णं से [१०]सूरियाभे देवे [११]तप्पढमयाए

सन् सूर्याभो देवः श्रमणं भगवन्तं महावीरं वन्दते-स्तौति नमस्यति कायेन वन्दित्वा नमस्यित्वा च 'उत्तरपुरत्थिमं'......इत्यादि [पृ० ५६ पं० ११-] सुगमम्। नवरम्-बहुसमभूमिवर्णनम् प्रेक्षागृहमण्डपवर्णनम् मणिपीठिका-सिंहासन-तदुपरि उल्लोच-अङ्कुश-मुक्तादामवर्णनानि प्राग्वत् [पृ० ९४ पं० ७-पृ० १०२ पं० ७] भावनीयानि

[५७] १ ततः २सूर्याभो देवः ३ तीर्थङ्करस्य भगवतः ४आलोके ५ प्रणामं करोति कृत्वा च ६ 'अनुजानातु भगवान् माम्' इति अनुज्ञापनां कृत्वा ७ सिंहासनवरगतः सन् ८ तीर्थकराभिमुखः सन्निषण्णः। ९ ततः १० सूर्याभो देवः ११ तत्प्रथमतया-तस्य ना-

[१२]नानामणि–कणग–रयणविमलमहरिहनिउणओवियमिसिमिसिंतविरतियमहाभरणकडग–तुडियवरभूसणुज्जलं पीवरं पलम्बं [१३]दाहिणं भुयं [१४]पसारेति [१५]तओ णं [१६]सरिसयाणं [१७]सरित्तयाणं [१८]सरिव्वयाणं [१९]सरिसलावण्ण–रूव–जोव्वणगुणोववेयाणं [२०]एगाभरण–वसणगहिअणिज्जोआणं

टयविधेः प्रथमतायाम् १३ दक्षिणं भुजं १४प्रसारयति कथंभूतम्? इत्याह–१२ नानाविधानि मणि–कनक–रत्नानि येषु तानि नानामणि–कनक–रत्नानि—मणयो नानाविधाश्चन्द्रकान्तादयः कनकानि नानाविधानि नानावर्णतया रत्नानि नानाविधानि कर्केतनादीनि तथा विमलानि–निर्मलानि तथा महान्तमुपभोक्तारमर्हन्ति यदि वा महम्–उत्सवम्–क्षणम् अर्हन्ति इति महार्हाणि तथा निपुणम् निपुणबुद्धिगम्यं यथा भवति एवं परिकर्मितानि दीप्यमानानि विरचितानि महाभरणानि यानि कटकानि–कलाचिकाभरणानि तुटितानि बाहुरक्षिकाः अन्यानि च यानि वरभूषणानि तैः उज्ज्वलं–भास्वरम् तथा पीवरं–स्थूलम् प्रलम्बं–दीर्घम्। १५ ततः तस्माद् दक्षिणभुजात् ३० अष्टशतं अष्टाधिकं शतं ३२ देवकुमाराणं ३३ निर्गच्छति कथंभूतानाम्? इत्याह–१६ सदृशानाम्–समानाकाराणाम् इत्यर्थः १७ तत्र आकारेण कस्यचित् सदृशोऽपि वर्णतः सदृशो न भवति ततः सदृग्वर्णत्वप्रतिपादनार्थमाह–सदृशी सदृग् वर्णत्वक् येषां ते तथा १८ सदृक्त्वग् अपि कश्चिद् वयसा विसदृशः संभाव्येत तत आह–सदृक् समानं वयो येषां ते तथा तेषाम् १९ सदृशेन लावण्येन–लवणिम्ना–अतिसुभगया शरीरकान्त्या इति भावः। रूपेण–आकृत्या यौवनेन–यौवनिकया गुणैः दक्षत्व–प्रियंवदत्वादिभिः उपपेताः सदृशलावण्य–रूप–यौवन–गुणोपपेताः तेषाम् २० एकः स×मानः आभरण–वसनलक्षणः गृहीतो

—मानः आभरणवसनानि आ–पा० ५ भा० १–२।

रायपसेण-
इय।

॥१२४॥

[21]दुहतो संवेल्लियग्गणियत्थाणं [22]उप्पीलियचित्तपट्टपरियर[23]सफेणकावत्तरइय[24]संगयपलंबवत्थंत[25]चित्त[26]चिल्ललग[27]नियंस-णाणं [28]एगावलिकण्ठरइयसोभंतवच्छ[29]परिहत्थभूसणाणं [30]अट्ठसयं [31]णट्टसज्जाणं [32]देवकुमाराणं [33]णिग्गच्छति।

[५८] [1]तयणंतरं च णं [2]नानामणि० [पृ० १२३ पं०१] जाव पीवरं पलंबं [3]वामं भुयं [4]पसारेति [5]तओ णं [6]सरिसयाणं

निर्योगः उपकरणम्–अर्थात् नाट्योपकरणं यैस्ते तथा तेषाम् २१ द्विधातो द्वयोः पार्श्वयोः संवेल्लितानि संवृतानि अग्राणि यस्य तद् द्विधातःसंवेल्लिताग्रं न्यस्तम्–सामर्थ्याद् उत्तरीयं यैस्ते तथा तेषाम् तथा २२ उत्पीडितः अत्यन्ताऽऽबद्धः चित्रपट्टो विचित्रवर्णपट्टरूपः परिकरो यैस्ते तथा २३ यस्मिन् आवर्तने फेनविनिर्गमो भवति स सफेनकावर्त उच्यते ततः २४ सफेनकावर्तेन रचिताः–संगताः–नाट्यविधौ उपपन्नाः प्रलम्बा वस्त्रान्ता यस्य निवसनस्य तत् तथा तत् २५ चित्रम्–चित्रवर्णम् २६ चिल्ललगं देदीप्यमानं २७ निवसनं परिधानं येषां ते तथा+ तेषाम् २८ एकावलिर्या कण्ठे रचिता तया शोभमानं वक्षो येषां ते तथा २९ 'परिहत्थ' शब्दो देश्यः परिपूर्णवाची पडिहत्थानि पूर्णानि भूषणानि येषां ते तथा⊖ तेषाम् ३१ नृत्ये सज्जाः प्रगुणीभूताः नृत्यसज्जाः तेषाम्।

[५८] १ तदनन्तरं च २ यथोक्तविशेषणविशिष्टं ३ वामं भुजं ४ प्रसारयति ५ तस्माद् वामभुजात् १०अष्टशतं ११देवकुमारिकाणां १२विनिर्गच्छति कथंभूतम्? इत्याह–६'सरिसयाणं सरित्तयाणं...वसणगहियनिज्जोईणं...संवेल्लियग्गनियत्थीणं' इति पूर्ववत्

+ "ततः पूर्वपदेन कर्मधारयः"–राय० वि०। – "पुण्णम्मि पडिहत्थ-पोणियया" "पडिहत्थो तथा पोणिओ पूर्णः"–देशीनाममाला व० ६ गा० २८। अत्र डकार–रकारयोः साम्येन 'पडिहत्थ'वत् 'परिहत्थ' शब्दोऽपि बोध्य'। ⊖ "ततः पूर्वपदेन कर्मधारयः"–राय० वि०।

सरित्तयाणं सरिव्वयाणं सरिसलावण्ण-रूव-जोव्वणगुणोववेयाणं एगाभरण० दुहतो संवेल्लियग्ग० [पृ० ४१२ पं० १] [7]आविद्धतिलयामेलाणं [8]पिणद्धगेवेज्जकंचुतीणं [9]नानामणि-रयणभूसणविराइयंगमंगाणं चंदाणणाणं चंदद्धसमनिलाडाणं चंदाहियसोमदंसणाणं उक्का इव उज्जोवेमाणीणं सिंगारा० हसिय-भणिय० [पृ० २९ पं० १] गहियाउज्जाणं [10]अट्ठसयं नट्टसज्जाणं [11]देवकुमारियाणं [12]णिग्गच्छइ।

[५९] [1]तए णं से [2]सूरियाभे देवे [3]अट्ठसयं संखाणं विउव्वति [4]अट्ठसयं संखवायाणं विउव्वइ, 4 [5]अ० सिंगाणं

[पृ० १२३ पं० ९] ७ आविद्धः तिलकः *आमेलश्च-शेखरको यकाभिस्ता आविद्धतिलकामेलाः तासाम् ८ पिनद्धं ग्रैवेयकं ग्रीवाभरणं कञ्चुकश्च यकाभिस्तास्तथा तासाम् ९ नानाविधानि मणि-कनक-रत्नानि येषु भूषणेषु तानि नानामणि-कनक-रत्नानि तैर्नानामणि-कनक-रत्नैर्भूषणैर्विराजितानि अङ्गमङ्गानि अङ्गप्रत्यङ्गानि यासां तास्तथा तासाम् ○'चंदाणणाणं...उक्का इव उज्जोवेमाणीणं' इति सुगमम्। सिंगारा० हसिय-भणिय० [पृ० २९ पं० ४] ='गहियाउज्जाणं नट्टसज्जाणं' इति पूर्ववत् [पृ० १२४ पं० ९]।

[५९] १ ततः २ सूर्याभो देवः ३ अष्टशतं शङ्खानां विकुर्वति ४ अष्टशतं शङ्खवादकानाम्, ५ ⊖अ० भृङ्गाणाम्

---

4 'अ' पदेन 'अट्ठसय' अवगन्तव्यम्। * 'आमेल' शब्दः प्राकृतभाषाया व्यवह्रियते, सस्कृते तु तदर्थवाची 'आपीड' शब्दः प्रसिद्धः। आचार्यहेमचन्द्रः प्राकृतम् 'आमेल' शब्द सस्कृत 'आपीड' शब्दस्य विकृतोच्चारणं सूचयति। [८-१-२३४ हैमश०] 'आपीड-आवीड-आवेड-आमेल' इति च तत्परिवर्तनक्रमः प्रतिभाति। ○चन्द्राननानाम् चन्द्रार्धसमललाटानाम् चन्द्राधिकसोमदर्शनानाम् उल्का इव उद्द्योतमानानाम्। = गृहीतातोद्यानाम्। ⊖ 'अ' पदेन 'अष्टशतम्'।

○ वि० [6]अ० सिंगवायाणं वि०, [7]अ० संखियाणं वि० [8]अ० संखियवायाणं वि०, [9]अ० खरमुहीणं वि० [10]अ० खरमुहि-वायाणं वि०, [11]अ० पेयाणं वि० [12]अ० पेयावायगाणं वि०, [13]अ० पीरिपीरियाणं वि० [14]अ० पीरिपीरियावायगाणं

६ अ० शृङ्गवादकानाम् , ७ अ० शङ्खिकानाम् ८अ० शङ्खिकावादकानाम् ह्रस्वः शङ्खो जात्यन्तरात्मकः शङ्खिका तस्या हि स्वरो मनाक् तीक्ष्णो भवति न तु शङ्खवद् अतिगम्भीरः तथा ९ अ० खरमुखीनाम्–काहलानाम् १० अ० खरमुखीवादकानाम् ११ अ० पेयानाम् 'पेया' नाम महती काहला १२अ० पेयावादकानाम् , १३ अ० 8पिरिपिरिकाणाम्–कोलिकपुटावनद्धमुखवाद्यविशेषरूपाणाम् १४ अ० पिरिपिरिका ϴ वा०, अ० पणवानाम् पणवो भाण्डपटहः लघुपटहो वा अ० पणववा०, अ० पटहानाम् अ० पटहवा०, अ० भम्भानाम् भम्भा ढक्का अ० भम्भावा०, अ० होरम्भाणाम् होरम्भा महाढक्का अ० होरम्भावा०, अ० भेरीणाम्–ढक्काकृतिवाद्यविशेषरूपाणाम् अ० भेरीवा०, अ० झल्लरीणाम् 'झल्लरी' नाम चर्मावनद्धा विस्तीर्णवलयाकारा अ० झल्लरीवा०, अ० दुन्दुभीनाम् अ० दुन्दुभिवा० दुन्दुभिः–भेर्याकारा संकटमुखी देवातोद्यविशेषः, अ० मुरुजानाम् महाप्रमाणो मर्दलो मुरुजः अ० मुरुजवा०, अ० मृदङ्गानाम् लघु-मर्दलो मृदङ्गः अ० मृदङ्गवा०, अ० नन्दीमृदङ्गानाम्–नन्दीमृदङ्गो नाम एकतः संकीर्णः अन्यत्र विस्तृतो मुरजविशेषः अ० नन्दी-मृदङ्गवा०, अ० आलिङ्गानाम् आलिङ्गो मुरजवाद्यविशेष एव अ० आलिङ्गवा०, अ० कुस्तुम्बानाम् कुस्तुम्बः–चर्मावनद्धपुटो वाद्यवि-शेषः अ० कुस्तुम्बवा०, अ० गोमुखीनाम् गोमुखी लोकतोऽवसेया अ० गोमुखीवा०, अ० मर्दलानाम् मर्दलः–उभयतः समः अ०

○ 'वि' पदेन 'विउव्वति' संबोध्यम्। 8 प्रस्तुते मूलपाठे 'पिरिपिरिका' पर्यन्तं वाद्यनामानि दृश्यन्ते, अन्यानि–यानि विवरणकारेण सूचितानि तानि अग्रतने मूलपाठे लभ्यन्ते। ϴ 'वा' पदेन 'वादकानाम्' ज्ञेयम्।

मर्दलवा०, अ० विपञ्चीनाम् विपञ्ची त्रितन्त्री वीणा अ० विपञ्चीवा०, अ० वल्लकीनाम् वल्लकी सामान्यतो वीणा अ० वल्लकीवा०, अ० भ्रामरीणाम् अ० भ्रामरीवा०, अ० षड्भ्रामरीणाम् अ० षड्भ्रामरीवा०, अ० परवादनीनाम् परवादनी सप्ततन्त्री वीणा अ० परवादनीवा०, अ० बव्वीसानाम् अ० बव्वीसावा०, अ० सुघोषाणाम् अ० सुघोषावा०, अ० नन्दिघोषाणाम् अ० नन्दिघोषवा०, अ० महतीनाम् महती-शततन्त्रिका वीणा अ० महतीवा०, अ० कच्छभीनाम् अ० कच्छभीवा०, अ० चित्रवीणानाम् अ० चित्रवीणावा०, अ० आमोदानाम् अ० आमोदवा०, *अ० झञ्झानाम् अ० झञ्झावा०, अ० नकुलानाम् अ० नकुलवा०, अ० तूणानाम् अ० तूणावा०, अ० तुम्बवीणानाम्-तुम्बयुक्ता वीणा या अद्यकल्ये प्रसिद्धा अ० तुम्बवीणावा०, अ० मुकुन्दानाम् मुकुन्दो मुरजवाद्यविशेषो यः अतिलीनं प्रायो वाद्यते अ० मुकुन्दवा०, अ० हुडुक्कानाम् अ० हुडुक्कावा०, हुडुक्का प्रतीता, अ० =विचिकीनाम् अ० विचिकीवा०, अ० करटीनाम् अ० करटीवा० करटी प्रतीता, अ० डिण्डिमानाम् अ० डिण्डिमवा० प्रथमं प्रस्तावनासूचकः पणवविशेषः डिण्डिमः, अ० किणितानाम् अ० किणितवा०, अ० +कडवानाम् अ० कडवावा०, कडवा करटिका, अ० दर्दरकाणाम् अ० दर्दरवा० दर्दरकः प्रतीतः, अ० दर्दरिकाणाम् अ० दर्दरिकावा० लघुदर्दरको दर्दरिका, अ० कुस्तुम्बराणाम् अ० कुस्तुम्बरवा०, अ० कलशिकानाम् अ० कलशिकावा०, अ० तालानाम् अ० तालवा०, अ० कांस्यतालानाम् अ० कांस्यतालवा०, अ० रिंगिसिकानाम् अ० रिंगिसिकावा०,

---

* अ० डण्डानाम् अ० डण्डावा०-पा० ४-५। अ० दण्डानाम् अ० दण्डावा०-भा० १। =विविक्कीनाम् अ० विवकीवा०-भा० १। विचिकीनाम् अ० विचिकीना०-पा० ४। + अ० कडकानाम् अ० कंडकावा० अ० कंडवानाम् अ० कंडकानाम् कंडवां करटिका-भा० २।

वि० =एवमाइयाइं एगूणपण्णं आउज्जविहाणाइं विउव्वइ।

[६०] तए णं [1]ते बहवे देवकुमारा य देवकुमारियाओ य [2]सद्दावेति। तए णं ते बहवे देवकुमारा य देवकुमारीओ य सूरियाभेणं देवेणं [3]सद्दाविया समाणा हट्ठ जाव-[पृ० ४७ पं० ३] जेणेव सूरियाभे देवे तेणेव उवागच्छंति तेणेव उवागच्छित्ता सूरियाभं देवं [4]करयलपरिग्गहियं [पृ० ६७ पं० ८] जाव वद्धावित्ता

~अ० मगरिकाणाम् अ० मगरिकावा०, ○अ० शिशुमारिकाणाम् अ० शिशुमारिकावा०, अ० वंशानाम् अ० वंशवा०, अ० वालीनाम् अ० वालीवा०, वाली तूणविशेषः, स हि मुखे दत्त्वा वाद्यते, अ० वेणूनाम् अ० वेणुवा०, अ० परिलीनाम् अ० परिलीवा०, अ० बद्धकानाम् अ० बद्धकवा० बद्धकः ⊖तूणविशेषः। अव्याख्यातास्तु भेदा लोकतः प्रत्येतव्याः १५ एवमादीनि बहूनि आतोद्यानि आतोद्यवादकांश्च विकुर्वति, सर्वसंख्यया तु मूल-भेदापेक्षया आतोद्यभेदा एकोनपञ्चाशत् शेषास्तु भेदा एतेषु एव अन्तर्भवन्ति यथा वंशातोद्यविधाने वाली-वेणु-पिरली-बद्धगा इति।

[६०] विकुर्वित्वा च १तान् स्वयंविकुर्वितान् देवकुमारान् देवकुमारिकाश्च २शब्दयति ते च ३शब्दिता हृष्टतुष्टानन्दितचित्ताः सूर्याभसमीपम् आगच्छन्ति आगत्य च ४करतलपरिगृहीतं दशनखं शिरसावर्तं च मस्तके अञ्जलिं कृत्वा जयेन विजयेन वर्धापयित्वा

= एवमादिकानि एकोनपञ्चाशद् आतोद्यविधानानि विकुर्वेति। ~अ० अगरिकाणाम् अ० अगरिकावा०-भा० २। ○ अ० सिसुकुमारिकानाम् अ० शिसुकुमारिकवा०-भा० २। अ० शुशुमारिकानाम् शुशुमारिकावा०- पा० ५। ⊖तूणवि०-मु० पु०। अत्र वाद्यविशेषनाम्ना प्रस्तावे बहूनि वाद्यनामानि अप्रतीतानि अत एव च तेषां नामसु अनेकविधः पाठभेदो दृश्यते।

[5]एवं वयासी– '[6]संदिसंतु णं देवाणुप्पिया ! जं अम्हेहिं कायव्वं' ।

[६१] [1]तए णं [2]से सूरियाभे देवे [3]ते बहवे देवकुमारा य देवकुमारीओ य [4]एवं वयासी–[5]'गच्छह णं तुब्भे देवाणुप्पिया ! [6]समणं भगवंतं महावीरं [7]तिक्खुत्तो आयाहिणपयाहिणं करेह करित्ता वंदह नमंसह वंदित्ता नमंसित्ता [8]गोयमाइयाणं समणाणं निग्गंथाणं [9]तं दिव्वं देविड्ढिं दिव्वं देवजुतिं दिव्वं देवाणुभावं [10]दिव्वं बत्तीसइबद्धं णट्टविहिं उवदंसेह उवदंसित्ता खिप्पामेव एयमाणत्तियं [11]पच्चप्पिणह ।

[६२] [1]तए णं [2]ते बहवे देवकुमारा देवकुमारीयो य [3]सूरियाभेणं देवेणं एवं वुत्ता समाणा हट्ठ जाव [पृ०४७

---

५ एवमवादिषुः–६ संदिशन्तु देवानांप्रियाः ! यद् अस्माभिः कर्तव्यम्' ।

[६१] १ ततः २ स सूर्याभो देवः ३ तान् देवकुमारान् देवकुमारिकाश्च ४ एवमवादीत्–५ गच्छत यूयं देवानांप्रियाः ! ६ श्रमणं भगवन्तं महावीरम् ७ त्रिकृत्वः आदक्षिणप्रदक्षिणं कुरुत कृत्वा च वन्दध्वम् नमस्यत वन्दित्वा नमस्यित्वा ८ गौतमादीनां श्रमणानां निर्ग्रन्थानां ९ तां देवजनप्रसिद्धां दिव्यां देवर्द्धिं दिव्यां देवद्युतिं दिव्यं देवानुभावम् १० दिव्यं द्वात्रिंशद्विधं नाट्यविधिमुपदर्शयत उपदर्श्य च ११ एतामाज्ञप्तिकां क्षिप्रमेव १२ प्रत्यर्पयत ।

[६२] १ ततः २ ते बहवो देवकुमारा देवकुमारिकाश्च ३ सूर्याभेण देवेन एवमुक्ताः सन्तो हृष्टा 'यावत्'–[पृ०४७ पं० १२]

पं०३] करयल० जाव [पृ०६७ पं० ८] [४]पडिसुणंति पडिसुणित्ता [५]जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव उवागच्छंति उवागच्छित्ता समणं भगवंतं महावीरं जाव [पृ० १२९ पं०३] नमंसित्ता [६]जेणेव गोयमादिया समणा निग्गंथा तेणेव उवागच्छंति। तए णं ते बहवे देवकुमारा देवकुमारीयो य [७]समामेव समोसरणं करेंति करित्ता- [८]समामेव अवणमंति अवणमित्ता [९]समामेव उन्नमंति [१०]एवं सहितामेव ओनमंति एवं सहितामेव उन्नमंति सहियामेव उण्णमित्ता [११]संगयामेव ओनमंति संगयामेव उन्नमंति उन्नमित्ता [१२]थिमियामेव ओणमंति थिमियामेव उन्नमंति [१३]समामेव पसरंति पसरित्ता [१४]समामेव आउज्जविहाणाइं गेण्हंति [१५]समामेव पवाएंसु [१६]पगाइंसु [१७]पणच्चिंसु।

देवैः वादनम् गानम् नर्तनं च प्रारब्धम्

४प्रतिशृण्वन्ति–अभ्युपगच्छन्ति–इत्यर्थः। प्रतिश्रुत्य च ५यत्र श्रमणो भगवान् महावीरः तत्रोपागच्छन्ति उपागत्य च श्रमणं भगवन्तं महावीरं त्रिकृत्व आदक्षिणप्रदक्षिणीकुर्वन्ति कृत्वा च वन्दन्ते नमस्यन्ति वन्दित्वा नमस्यित्वा च ६ यस्मिन् प्रदेशे गौतमादयः श्रमणाः तत्र ७ समकालमेव–एककालमेव समवसरन्ति–मिलन्ति–इत्यर्थः समवसृत्य च ८ समकमेव–एककालमेव अवनमन्ति–अधो नीचा भवन्ति अवनम्य च ९ समकमेव उन्नमन्ति–ऊर्ध्वमवतिष्ठन्ते–इति भावः तदनन्तरं च १० एवंक्रमेण सहितम् ११ संगतम् १२ स्तिमितं च अवनमनम् उन्नमनं च वाच्यम् अमीषां च सहितादीनां भेदः सम्यक्कौशलोपेतनाट्योपाध्यायाद् एव अवगन्तव्यः ततः स्तिमितं समकमुन्नम्य १३ समकमेव प्रसरन्ति प्रसृत्य च १४ समकमेव यथायोगम् आतोद्यविधानानि गृह्णन्ति गृहीत्वा च १५ समकमेव प्रवादितवन्तः १६ समकमेव प्रगीतवन्तः १७ समकमेव प्रनर्तितवन्तः।

– –त्ता समामेव पतिओ बधति बंधित्ता समामेव पतिओ नमसंति नमसित्ता समामेव–वि० बा०।

[६३] -किं [1]ते? [2]उरेणं*मंदं [3]सिरेण तारं [4]कंठेण वितारं [5]तिविहं तिसमयरेयगरइयं *गुंजाऽवंककुहरोवगूढं रत्तं तिठाणकरणसुद्धं

[६३]किञ्च १ ते देवकुमारा देवकुमारिकाश्च एवं प्रगीता अप्यभवन् इति योगः कथम्? इत्याह—२ उरसि मन्दं यथा भवति एवं प्रगीताः ३ शिरसि तारम् ४ कण्ठे च वितारम्—अतिशयेन यथावल्लक्षणोपपेतम् किमुक्तं भवति? २ उरसि प्रथमतो गीतमुत्क्षिप्यते उत्क्षेपकाले च गीतं मन्दं भवति +"आदिमिउं आरभन्ता" [ ] इति वचनात् अन्यथा गीतगुणक्षतेः तत उक्तम्—'उरसि मन्दम्' इति ३ ततो गायतां मूर्धानमभिघ्नन् स्वर उच्चैस्तरो भवति स्थानकं च द्वितीयम् तृतीयं वा समधिरोहति ततः 'शिरसि तारम्' इत्युक्तम् ४ शिरसश्च प्रतिनिवृत्तः सन् स्वरः कण्ठे घुलति घुलंश्च अतिमधुरः भवति ततः 'कण्ठे वितारम्' इत्युक्तम्—५ ×'तिविहं तिमसयरेयगरइयं' इति ६ गुञ्जनं गुञ्जा गुञ्जाप्रधानानि यानि अवक्राणि—शब्दमार्गाप्रतिकूलानि कुहराणि तेषु उपगूढम्—गुञ्जाऽवक्रकुहरोपगूढम् किमुक्तं भवति? तेषां देवकुमाराणां देवकुमारिकाणां च तस्मिन् प्रेक्षागृहमण्डपे गायतां गीतं तेषु प्रेक्षागृहमण्डपसत्केषु अन्येषु च कुहरेषु स्वानुरूपाणि प्रतिशब्दसहस्राणि उत्थापयद् वर्तते इति। ७ रक्तम्—इह यद् गेयरागानुरक्तेन गीतं गीयते तद् 'रक्तम्' इति तद्विदां प्रसिद्धम्' ८त्रीणि 8स्थानानि उरःप्रभृतीनि तेषु○ करणेन क्रियया शुद्धम्—त्रिस्थानकरणशुद्धम् तद्यथा—उरःशुद्धम्

— इयं कण्डिका प्रायोऽत्ररशः—जीवा० मू० पृ० १८६ प० १—३। [1] "सर्वत्र सप्तम्यर्थे तृतीया"—राय० विव०। * गुंजतवसकुहरोपगूढं—जीवा० मू० प्र० पृ० १८६ पं० १४। + "आदिमृदुम् आरभमाणाः"। इद वचन कस्य इति न ज्ञायते, मूलपाठे तु नैतत् प्रतिभाति। × 'त्रिविधं त्रिसमयरेचकरचितम्' इति शब्दसस्कारः। मूलस्थमपि एतत् पद न विवृत विवरणकारेण। 8 इदं समग्रमपि विवरणम्—जीवा० वि० प्र० पृ० १९५ पं० ३—। —○षु करणेषु क्रि—पा० ५—४ भा० १।

रायपसेणइयं ।

॥१३२॥

सकुहरगुंजंतवंस-तंती-[10]तल-[11]ताल-[12]लय-[13]गहसुसंपउत्तं [14]महुरं [15]समं [16]सललियं [17]मणोहरं [18]मिउ-

कण्ठशुद्धम् शिरोविशुद्धं च तत्र यदि उरसि स्वरः स्वभूमिकानुसारेण विशालो भवति तत उरोविशुद्धम् स एव यदि कण्ठे वर्तितो भवति अस्फुटितश्च ततः कण्ठविशुद्धम् यदि पुनः शिरःप्राप्तः सन् सानुनासिको भवति ततः शिरोविशुद्धम् यदि वा यत उरः-कण्ठ-शिरोभिः श्लेष्मणा अव्याकुलितैर्विशुद्धैर्गीयते तत उरः-कण्ठ-शिरोविशुद्धत्वात् त्रिस्थानकरणविशुद्धम् तथा ९ सकुहरो गुञ्जन् यो वंशो ये च तन्त्री-तल-ताल-लयग्रहाः तेषु सुष्ठु अतिशयेन संप्रयुक्तम्-सकुहरगुञ्जद्वंश-तन्त्री-तल-ताल-लय-ग्रहसंप्रयुक्तम् किमुक्तं भवति ? सकुहरे वंशे गुञ्जति तन्त्र्यां च वाद्यमानायाम् यद् वंश-तन्त्रीस्वरेण अविरुद्धं तत् सकुहरगुञ्जद्वंश-तन्त्रीसुसंप्रयुक्तम् तथा १० परस्परहतहस्ततलस्वरानुवर्ति यत् तत् तलसंप्रयुक्तम् ११ यद् मुरज-कंशिकादीनामातोद्यानाम् आहतानां यो *ध्वनिः =पादोत्क्षेपो (?) यश्च नृत्यन्त्या नर्तक्याः पादोत्क्षेपः तेन समं तत् तालसुसंप्रयुक्तम् तथा १२ शृङ्गमयो दारुमयो दन्तमयो वा यः-अङ्गुलिकोशिकः तेन आहतायास्तन्त्र्याः स्वरप्रकारो लयः तम् अनुसरद् गेयलयसुसंप्रयुक्तम् तथा १३ यः प्रथमं वंश-तन्त्र्यादिभिः स्वरो गृहीतः तन्मार्गानुसारि ग्रहसुसंप्रयुक्तम् तथा १४ मधुरस्वरेण गीयमानं मधुरं कोकिलारुतवत् तथा १५ तल-वंशस्वरादिसमनुगतं समम् १६ यत् स्वरघोलनाप्रकारेण ललतीव तत् सह ललितेन ललनेन वर्तते इति सललितम् यदि वा यत् श्रोत्रेन्द्रियस्य शब्दस्पर्शनमतीव सूक्ष्ममुत्पादयति सुकुमारमिव च प्रतिभासते तत् सललितम्-इति १७ अत एव मनोहरम् पुनः कथंभूतम् ? इत्याह-१८ तत्र मृदुर्मृदुना स्वरेण

* "ध्वनिः यश्च नृत्यन्त्या नर्तक्याः पादोत्क्षेपः तेन" इत्यादि-जीवा० वि०प्र० पृ० १९५ पं० ९। =पादूक्षेपो-पा० ४ भा० १ । पाङ्क्षेपो-पा० ५ । पदूक्षेपो-भा० २ ।

रि[19]भियपयसंचारं सु[20]रइ सुणइ[21] व[22]रचारुरूवं दि[23]व्वं ण[24]ट्टसज्जं गेयं प[25]गीया वि[26] होत्था

[६४] किं[1] ते ? ×उद्धु[2]मंताणं संखाणं सिंगाणं संखियाणं खरमुहीणं पेयाणं पिरिपिरियाणं, आ[3]हम्मंताणं पणवाणं पडहाणं, ○अ[5]प्फालिज्जमाणाणं भंभाणं होरंभाणं, तालिज्जंताणं भेरीणं झल्लरीणं दुंदुहीणं, आ[6]लवंताणं मुरयाणं मुइंगाणं नंदीमुइंगाणं, उ[7]त्तालिज्जंताणं आलिंगाणं

युक्तो न निष्ठुरेण तथा १९ यत्र स्वरोऽक्षरेषु घोलनास्वरविशेषेषु च संचरन् रङ्गतीव प्रतिभासते स पदसंचारो रिभित उच्यते मृदुः रिभितः पदेषु गेयनिबद्धेषु संचारो यत्र गेये तद् मृदुरिभितपदसंचारम् तथा २० शोभना रतिर्यस्मिन् श्रोतॄणां तत् सुरति तथा २१ शोभना नतिर्-नामः-अवसानो यस्मिन् तत् सुनति तथा २२ वरं-प्रधानम् चारु-विशिष्टचङ्गिमोपेतम् रूपं स्वरूपं यस्य तद् वरचारुरूपम् २३ दिव्यं-प्रधानम् २४ नृत्तसज्जं गेयं २५ प्रगीताः २६ अप्यभवन् ।

[६४] १किंच ते देवकुमारा देवकुमारिकाश्च प्रगीतवन्तः प्रनर्तितवन्तश्च ? ततोऽयमर्थः-यथायोगम् उद्ध्मायमानादिषु शङ्खादिषु इह २ शङ्ख-शृङ्ग-शङ्खिका-खरमुही-पेया-पिरिपिरिकाणां वादनम्-'उद्ध्मानम्'-इति प्रसिद्धम् । ३पणव-पटहानाम् =आमोटनम् ४ भम्भा-होरम्भाणाम् आस्फालनम् ५ भेरी-झल्लरी-दुन्दुभीनाम् ताडनम् ६ मुरज-मृदङ्ग-नन्दीमृदङ्गानाम् आलपनम् ७ आलिङ्ग-

---

× "अत्र सर्वत्रापि षष्ठी सप्तम्यर्थे"—राय० वित्र० । ○अप्फालिज्जमाणाणं वीणाणं वीयधीणं तालि-वि० बा० । =मूले 'आहननम्' ।

कुंतुंबाणं गोमुहीणं मद्दलाणं, मुच्छिज्जंताणं वीणाणं विपंचीणं वल्लकीणं, कुट्टिज्जंताणं महंतीणं कच्छभीणं चित्तवीणाणं, [10]सारिज्जंताणं बद्धीसाणं सुघोसाणं नंदिघोसाणं, [11]फुट्टिज्जंतीणं भामरीणं छब्भामरीणं परिवायणीणं, [12]छिप्पंतीणं तूणाणं तुंबवीणाणं, [13]आमोडिज्जंताणं आमोताणं झंझाणं नउलाणं, [14]अच्छिज्जंतीणं मुगुंदाणं हुडुक्कीणं विचिक्कीणं, [15]वाइज्जंताणं करडाणं डिंडिमाणं किणियाणं कडम्बाणं, [16]ताडिज्जंताणं दद्दरिगाणं दद्दरगाणं कुतुंबाणं कलसियाणं मड्डुयाणं, [17]आताडिज्जंताणं तलाणं तालाणं कंसतालाणं, [18]घट्टिज्जंताणं रिंगिरिसियाणं लत्तियाणं मगरियाणं सुंसुमारियाणं, [19]फूमिज्जंताणं वंसाणं वेलूणं वालीणं परिल्लीणं बद्धगाणं। [कं० ५९]

कुस्तुम्ब–गोमुखी–मर्दलानाम् उत्ताडनम् ८ वीणा–विपञ्ची–वल्लकीनाम् मूर्च्छनम्, ११ भ्रामरी–षड्भ्रामरी–परिवादिनीनाम् *स्पन्दनम् १० ○वध्वीसा–सुघोषा–नन्दिघोषाणां सारणम्, ९ महती–कच्छपी–चित्रवीणानाम् कुट्टनम् १३ आमोट–+झञ्झा–नकुलानाम् आमोटनम् १२ तूण–तुम्बवीणानाम् स्पर्शनम् १४ मुकुन्द–हुडुका–विचिक्कीनाम् मूर्छनम्× १५ करटा–डिण्डिम–किणिक–⌐कडम्बानाम् वादनम् १६ दर्दर–दर्दरिका–कुस्तुम्बरु–कलसिका–मड्डकानाम् ⊖उत्ताडनम् १७ तल–ताल–कंसतालानाम् आताडनम् १८ रिङ्गिसिका–लत्तिका–मकरिका–शिशुमारिकाणाम्× घट्टनम् १९ वंश–वेणु–वाली–=पिरली–बद्धगा? नाम् ○फुङ्कनम् अत उक्तम्–'उद्धुमंताणं संखाणं' इत्यादि। [पृ० १२९ पं० १०]

---

*मूलपाठानुसारेण अत्र 'स्फोटनम्' इति उचित स्यात्। स्यन्दनम्–पा० ५। ○ वच्चीसा–भा० २। + –झण्डा–न–पा० ४। × मूले 'आच्छेदनम्'। –नम् मरटा–पा० ४। ⌐कडावानाम्–पा० ५। ⊖ मूले 'ताडनम्'। ×–णामतीव घ–भा० २। = –पिवली–ब–भा० २। ○अत्र कण्डि–

[६५] तए णं [2]से दिव्वे गीए दि[3]व्वे वाइए दि[4]व्वे नट्टे एवं अ[5]ब्भुए सिं[6]गारे उरा[7]ले म[8]णुन्ने म[9]णहरे गीते मणहरे नट्टे मणहरे वातिए उ[10]प्पिंजलभूते क[11]हकहभूते दि[12]व्वे देवरमणे प[13]वत्ते या वि होत्था[14]।

[६६] [1]तए णं [2]ते बहवे देवकुमारा य देवकुमारीओ य [3]समणस्स भगवओ महावीरस्स [4]सोत्थिय–सिरिवच्छ–

[६५] यत एवं प्रगीतवन्त इत्यादि १ ततः २ तद् दिव्यं गीतम् ३ दिव्यं वादितम् ४ दिव्यं नृत्तमभवत् इति योगः। ४ दिव्यं नाम प्रधानम् ५ अद्भुतम्–आश्चर्यकारि ६ शृङ्गारं शृङ्गाररसोपेतत्वात् अथवा शृङ्गारं नाम अलंकृतमुच्यते तत्र यद् अन्यान्यविशेषकरणेन अलंकृतमिव गीतं वादनं नृत्तं वा तत् शृङ्गारम्–इति। ७ उदारम्–स्फारं परिपूर्णगुणोपेतत्वात् न तु क्वचिदपि हीनम् ८ मनोज्ञम् मनोनुकूलं द्रष्टॄणां श्रोतॄणां च मनोनिर्वृतिकरम्–इति भावः ९ तच्च मनोनिर्वृतिकरत्वं सामान्यतोऽपि स्यात् अतः प्रकर्षविशेषप्रतिपादनार्थमाह–मनो हरति आत्मवशं नयति तद्विदामपि अतिचमत्कारकारितया इति मनोहरम् १० उत्पिञ्जलम्–आकुलकम् उत्पिञ्जलभूते आकुलके भूते किमुक्तं भवति? महर्धिकदेवानामपि अतिशायितया परमक्षोभोत्पादकत्वेन सकलदेव–असुर–मनुजसमूहचित्ताक्षेपकारि–इति ११ 'कहकह' इत्यनुकरणम् 'कहकह' इति भूतं प्राप्तम्–कहकहभूतम् किमुक्तं भवति? निरन्तरं तत्तद्विशेषदर्शनतः समुच्छलितप्रमोदभरवशसकलदिक्चक्रवालवर्तिप्रेक्षकजनकृतप्रशंसावचनबोलकोलाहलव्याकुलीभूतम्–इति अत एव १२ दिव्यं देवरमणमपि–देवानामपि रमणं क्रीडनम्–१३ प्रवृत्तम् १४ अभूत्।

[६६] १ ततः २ ते बहवो देवकुमारा देवकुमारिकाश्च ३ श्रमणस्य भगवतो महावीरस्य पुरतो गौतमादिश्रमणानां ४ स्वस्तिक–

कायां मूले विवरणे च पदानां व्युत्क्रमः प्रतिभाति।

नाट्यस्य नामग्राहं द्वात्रिंशत् प्रकाराः

-नंदियावत्त-वद्धमाणग-भद्दासण-कलस-मच्छ-दप्पण-मंगलभत्तिचित्तं णामं दिव्वं [५]णट्टविधिं उव[६]दंसेंति [१]

[६७] [१]तए णं ते बहवे देवकुमारा य देवकुमारीओ य [२]समामेव समोसरणं करेंति करित्ता तं चेव भाणियव्वं जाव [कं०६२ पं०४ कं०६३-६५] दिव्वे देवरमणे पवत्ते या वि होत्था। [३]तए णं [४]ते बहवे देवकुमारा य देवकुमारीओ य [५]समणस्स भगवओ महावीरस्स आ[६]वड-पँच्चावड-सेढि -

-श्रीवत्स-नन्द्यावर्त-वर्धमानक-भद्रासन-कलश-मत्स्य-दर्पणरूपाणाम् अष्टानां मङ्गलानां भक्त्या विच्छित्त्या चित्रम्-आलेखनम् [=]आकाराभिधानं वा यस्मिन् स स्वस्तिक-श्रीवत्स-नन्द्यावर्त-वर्धमानक-भद्रासन-कलश-मत्स्य-दर्पणमङ्गलभक्तिचित्रः-एवं सर्वत्रापि व्युत्पत्तिमात्रं यथायोगं परिभावनीयम् सम्यग्भावना कर्तुं न शक्यते यतः अमीषां नाट्यविधीनां सम्यक् स्वरूपप्रतिपादनं पूर्वान्तर्गते नाट्यविधिप्राभृते तच्च इदानीं व्यवच्छिन्नम् इति-तं प्रथमं ५ नाट्यविधिम् ६ उपदर्शयन्ति। [१]

[६७] १ततो द्वितीयं नाट्यविधिमुपदर्शयितुकामा भूयोऽपि प्रागुक्तप्रकारेण [पृ०१३०पं०९-पृ०१३५ पं०१२]२समकं समवसरणादिकं कुर्वन्ति तथा चाह-'तए णं ते...समोसरणं करेंति' इत्यादि प्रागुक्तं तदेव तावद् वक्तव्यं यावत्-'दिव्वे देवरमणे...होत्था' इति। ३ततः ४ते बहवो देवकुमारा देवकुमारिकाश्च ५श्रमणस्य भगवतो महावीरस्य पुरतो गौतमादीनां श्रमणानां ६ *आवर्त-७प्रत्यावर्त-८श्रेणि-

= ते देवा देवकुमार्यश्च स्वस्तिकाकारेण, श्रीवत्साकारेण, नन्द्यावर्ताकारेण, वर्धमानकाकारेण, भद्रासनाकारेण, कलशाकारेण, मत्स्याकारेण, दर्पणाकारेण च भूत्वा नृत्यन्ति स्म अर्थात् अन्योन्यं सयोगेन तादृशान् आकारान् निष्पाद्य नृत्यमकार्षुः-इति प्रतिभाति।

* एतेषां शब्दानां व्याख्या पृ० ८२ पं०-१२-पृ० ८३ पं० ६।

पंसेढि- [10]सोत्थिय-[11]सोवत्थिय-[12]पूस-[13]माणव-[14]वद्धमाणग-[15]मच्छण्ड [पृ० ८२ पं० ३-]-[16]मगरंड-[17]जार-[18]मार-[19]फुल्लावलि-[20]पउमपत्त-[21]सागरतरंग-[22]वसंतलता-[23]पउमलयभत्तिचित्तं [24]णाम दिव्वं णट्टविहिं [25]उवदंसेंति [२]

[६८] एवं च [1]एक्किक्कियाए णट्टविहीए समोसरणादिया एसा [कं० ६२-कं०६५] वत्तव्वया जाव दिव्वे देवरमणे पवत्ते या वि होत्था। [3]तए णं ते बहवे देवकुमारा देवकुमारियाओ य समणस्स भगवतो महावीरस्स ईहामिअ-उसभ-तुरग-नर-मगर-विहग-[पृ० ७६ पं० २] वालग-किन्नर-रुरु-सरभ-चमर-कुंजर-वणलय-पउमलयभत्तिचित्तं [5]णामं दिव्वं णट्टविहिं उवदंसेंति। [३]

९प्रश्रेणि-१०स्वस्तिक-११सौवस्तिक-१२पुष्य-१३ माणवक-१४वर्धमानक-१५मत्स्याण्डक-[पृ० ८२ पं० १२]-१६ मकराण्डक-१७जार-१८मार-१९पुष्पावलि-२०पद्मपत्र-२१सागरतरङ्ग-२२वासन्तीलता-२३पद्मलताभक्तिचित्रं २४नाम द्वितीयं नाट्यविधिम् २५उपदर्शयन्ति [२]

[६८] तदनन्तरं तृतीयं नाट्यविधिमुपदर्शयितुं भूयस्तथैव समवसरणादिकं कुर्वन्ति [पृ०१३० पं० ९-पृ० १३५ पं० १२] १एवं समवसरणादिकरणविधिः २ एकैकस्मिन् नाट्यविधौ प्रत्येकं प्रत्येकं तावद् वक्तव्यः यावत्-'देवरमणे...होत्था' इति। ३ ततः ४ ईहामृग-ऋषभ-तुरग-नर-मकर-विहग-व्याल-किन्नर-रुरु-सर4भ-चमर-कुञ्जर-वनलता-पद्मलताभक्तिचित्रं [पृ० ७६ पं० ६] ५ नाम तृतीयं दिव्यं नाट्यविधिम् उपदर्शयन्ति [३]

4 भ-भमर-पा० ४-५।

[६९] एगतो= वंकं एगओ चक्कवालं दुहओ चक्कवालं चक्कद्धचक्कवालं णामं दिव्वं णट्टविहिं उवदंसेंति [४]

[७०] चंदावलिपविभत्तिं च सूरावलिपविभत्तिं च वलियावलिपविभत्तिं च हंसावलिप०○ च एगावलिप० च तारावलिप० च मुत्तावलिप० च कणगावलिप० च रयणावलिप० च णामं दिव्वं णट्टविहं उवदंसेंति [५]

[७१] चंदुग्गमणप० च सूरुग्गमणप० च उग्गमणुग्गमणप० च णामं दिव्वं णट्टविहं उवदंसेंति [६]

---

[६९] तदनन्तरं भूयोऽपि समवसरणादिकविधिकरणानन्तरम् १ एकतो वक्रम् २ एकतः चक्रवालम् ३ द्विधातः चक्रवालम् ४ चक्रार्धं चक्रवालं ५ नाम चतुर्थं दिव्यं नाट्यविधिम् उपदर्शयन्ति [४]

[७०] तदनन्तरम् उक्तविधिपुरस्सरं १ चन्द्रावलिप्रविभक्ति–२ सूर्यावलिप्रविभक्ति–३ वलयावलिप्रविभक्ति–४हंसावलिप्रविभक्ति–५एकावलिप्रविभक्ति–६तारावलिप्रविभक्ति–७मुक्तावलिप्रविभक्ति–८कनकावलिप्रविभक्ति–९रत्नावलिप्रविभक्त्यभिनयात्मकम् आवलिप्रविभक्ति १० नाम पञ्चमं नाट्यविधिम् ११ उपदर्शयन्ति [५]

[७१] तदनन्तरम् उक्तक्रमेण १चन्द्रोद्गमप्रविभक्ति–२सूर्योद्गमप्रविभक्तियुक्तम् ३उद्गमनोद्गमनप्रविभक्ति ४नाम षष्ठं नाट्यविधिम् ५उपदर्शयन्ति [६]

= –तो वक्क दुहओ वंकं एगतो खहं दुहओ खह एगओ चक्कवालं वि० बा०। ○ 'प०' अक्षरेण 'पविभत्तिं च' इति सर्वत्र बोध्यम्।

[७२) चंदा[१]गमणप० च सूरा[२]गमणप० च आगमणा[३]गमणप० च =णामं...[४]उवदंसेंति [७]

[७३] चंदा[१]वरणप० सूरा[२]वरणप० च आ[३]वरणावरणप० णामं...उवदंसेंति [८]

[७४] चंद[१]त्थमणप० च सूर[२]त्थमणप० अत्थमण[३]त्थमणप० नामं...उवदंसेंति [९]

[७५] चंद[१]मंडलप० च सूर[२]मंडलप० च ना[३]गमंडलप० च जक्ख[४]मंडलप० च भूत[५]मंडलप० च [⊖रक्खस–महोरग–गन्धव्वमंडलप० च] मंडल[६]मंडलप० नामं...उवदंसेंति [१०] ९

[७२] तत उक्तप्रकारेण १चन्द्रागमनप्रविभक्ति–२सूर्यागमनप्रविभक्तियुक्तम् ३आगमनप्रविभक्ति ४ नाम सप्तमं नाटयविधिम् ५उपदर्शयन्ति [७]

[७३] तदनन्तरम् उक्तक्रमेण १चन्द्रावरणप्रविभक्ति–२सूर्यावरणप्रविभक्तियुक्तम् ३आवरणावरणप्रविभक्तिनामकम् अष्टमं नाटयविधिम् [८]

१० [७४] तत उक्तक्रमेणैव १चन्द्रास्तमयनप्रविभक्ति–२सूर्यास्तमयनप्रविभक्तियुक्तम् ३अस्तमयनप्रविभक्तिनामकं नवमं नाटयविधिम् [९]

[७५] तत उक्तप्रकारेण १चन्द्रमण्डलप्रविभक्ति–२सूर्यमण्डलप्रविभक्ति–३नागमण्डलप्रविभक्ति–४यक्षमण्डलप्रविभक्ति–५भूतमण्डलप्रविभक्तियुक्तं ६मण्डलप्रविभक्तिनामकं दशमं दिव्यं नाटयविधिम् [१०]

= 'णाम' शब्देन सर्वत्र 'णामं दिव्व णट्टविहं' एतानि पदानि बोध्यानि। ⊖ [ ] एतच्चिह्नान्तर्गत पाठः वि० बा०।

[७६] –उसभमंडलप० च सीहमंडलप० च हयविलंबियं गयवि०○ हयविलसियं गयविलसियं मत्तहय-विलसियं मत्तगजविलसियं मत्तहयवि० मत्तगयवि० दुयविलम्बियं णामं...णट्टविहं उवदंसेंति [११]

[७७] सागरपविभत्तिं च नागरप० च सागर–नागरप० च णाम....उवदंसेंति [१२]

[७८] णंदाप० च चंपाप० च नन्दा–चंपाप० च णामं...उवदंसेंति [१३]

[७९] मच्छंडाप० च मयरंडाप० च जारप० च मारप० च मच्छंडा–मयरंडा–जारा–माराप० च...णामं

---

[७६] तदनन्तरम् उक्तक्रमेण १ऋषभमण्डलप्रविभक्ति–२सिंहमण्डलप्रविभक्ति–३हयविलम्बित–४गजविलम्बित–५हयविलसित––६गजविलसित–७मत्तहयविलसित–८मत्तगजविलसित–९मत्तहयविलम्बित–१०मत्तगजविलम्बितं विलम्बिताभिनयं ११द्रुतविलम्बितं नाम एकादशं नाट्यविधिम् [११]

[७७] तदनन्तरम् १सागरप्रविभक्ति–२नागरप्रविभक्तिअभिनयात्मकं ३सागर–नागरप्रविभक्तिनाम द्वादशं नाट्यविधिम् [१२]

[७८]ततो १ नन्दाप्रविभक्ति–२ चम्पाप्रविभक्त्यात्मकं नन्दा–३ चम्पाप्रविभक्तिनाम त्रयोदशं नाट्यविधिम् [१३]

[७९] ततो १ =मत्स्याण्डकप्रविभक्ति–२ मकराण्डकप्रविभक्ति–३ जारप्रविभक्ति–४ मारप्रविभक्तियुक्तं ५ =मत्स्याण्डक–मकरा-

---

- अत्र मूलपाठसर्वप्रतिषु विवरणयुक्तमूलपाठादर्शे च 'उसभललियविक्कत सीहललियविक्कत हयविलंबिय' एवं पाठो लभ्यते परन्तु अत्र मूले तु विवरणानुसारी पाठक्रमो रक्षितः। ○ 'वि' पदेन 'विलम्बितम्' अवगन्तव्यम्। = पृ० ८३ पं० ५–६।

उवदंसेंति [१४]

[८०] * 'कं' त्ति ककारप० च 'खं' त्ति खकारप० च 'गं' त्ति गकारप० च 'घ' त्ति घकारप० च 'ङं' त्ति ङकारप० च ककार-खकार-गकार-घकार-ङकारप० च णामं...उवदंसेंति [१५] एवं चकारवग्गो पि [१६] टकारवग्गो वि [१७] तकारवग्गो वि [१८] पकारवग्गो वि [१९]

ण्डक-जार-मारप्रविभक्तिनाम चतुर्दशं नाट्यविधिम् [१४]

[८०] तदनन्तरम् क्रमेण १ 'क' इति ककारप्रविभक्तिः २ 'ख' इति खकारप्रविभक्तिः ३ 'ग' इति गकारप्रविभक्तिः ४ 'घ' इति घकारप्रविभक्तिः ५ 'ङ' इति ङकारप्रविभक्तिः इत्येवं ६क्रमभाविककारादिप्रविभक्तिअभिनयात्मकं ७ ककार-खकार-गकार-घकार-ङकारप्रविभक्तिनामकं पञ्चदशं दिव्यं नाट्यविधिम् [१५] एवं ८चकार-छकार-जकार-झकार-ञकारप्रविभक्तिनामकं षोडशं दिव्यं नाट्यविधिम् [१६] ९ टकार-ठकार-डकार-ढकार-णकारप्रविभक्तिनामकं सप्तदशं दिव्यं नाट्यविधिम् [१७] १० तकार-थकार-दकार-धकार-नकारप्रविभक्तिनामकम् अष्टादशं नाट्यविधिम् [१८] ११पकार-फकार-बकार-भकार-मकारप्रविभक्तिनामकम् एकोन-

* ब्राह्मीलिपिगतः ककारः + एवंसस्थितः, अत्र च नर्तका देवादयः तेन 'क' सत्काकारेण स्थित्वा नृत्य कृतवन्त इत्यभिप्रायो गम्यते । एवं सर्वत्र 'ख' आदिष्वपि वाच्यम् । अत्र नर्तनप्रकारे 'अ'कार-'इ'कार-इत्यादयः स्वरा नोल्लिखिताः तथा व्यञ्जनाक्षरेष्वपि वर्गीया एव वर्णा दर्शिताः, 'य'कार-'र'कार-'ल'कार-'व'कार-'स'कार-'ह'कारादयो वर्णा न दर्शिताः तत्र किमपि ऐतिहासिकं कारणं वा न इति चिन्तनीयम् । अथवा देवानां लिपौ ये वर्णाः ते एव अत्र दर्शिताः इत्यपि चिन्तनीयम् ।

[८१] असोयपल्लवप० च अंबपल्लवप० च जंबूपल्लवप० च कोसंबपल्लवप० च -पल्लवप० च णामं...उवदंसेंति [२०]

[८२]पउमलयाप० जाव [पृ० १८ पं० २-३] सामलयाप० च ⊖लयाप० च णामं...उवदंसेंति [२१]

[८३] दुयणामं...उवदंसेंति [२२] विलंबियं णामं...उव० [२३] दुयविलंबियं णामं...उव० [२४] अंचियं [२५] रिभियं [२६] अंचियरिभियं [२७]

विंशतितमं दिव्यं नाट्यविधिम् [१९]

[८१] ततः १अशोकपल्लवप्रविभक्ति-२ आम्रपल्लवप्रविभक्ति-३ जम्बूपल्लवप्रविभक्ति-४ कोशम्बपल्लवप्रविभक्तिअभिनयात्मकं ५ पल्लवप्रविभक्तिनामकं विंशतितमं दिव्यं नाट्यविधिम् [२०]

[८२] तदनन्तरम् १ पद्मलताप्रविभक्ति-+नागलताप्रविभक्ति-अशोकलताप्रविभक्ति-चम्पकलताप्रविभक्ति-चूतलताप्रविभक्ति-वनलताप्रविभक्ति-वासन्तीलताप्रविभक्ति-कुन्दलताप्रविभक्ति-अतिमुक्तकलताप्रविभक्ति-२श्यामलताप्रविभक्तिअभिनयात्मकं ३ लताप्रविभक्तिनामकम् एकविंशतितमं दिव्यं नाट्यविधिम् [२१]

[८३] तदनन्तरम् १द्रुतं नाम द्वाविंशति8तमं नाट्यविधिम् [२२] ततो २विलम्बितं नाम त्रयोविंशतितमम् [२३] ३ द्रुतविलम्बितं नाम चतुर्विंशतितमम् [२४] ४ अञ्चितं नाम पञ्चविंशतितमम् [२५] ५रिभितं नाम षड्विंशतितमम् [२६] ६अञ्चितरिभितं

-पल्लवपल्लवप०-वि० बा० । ⊖लयालयाप०-वि० बा० । + पृ० १८ पं० १० । 8 -तमं वाद्यविधिम्-पा० ४-५ ।

आरभडं [२८] भसोलं [२९] आरभडभसोलं [३०] उप्पयनिवयपवत्तं[१०] 8 संकुचियं[११] पसा=रियं ०रयारइयं [१२]भंतं संभंतं णामं दिव्वं णट्टविहिं उवदंसेंति [३१]

[८४] तए णं ते बहवे देवकुमारा य देवकुमारीओ य समामेव समोसरणं करेंति जाव [पृ० पं०] दिव्वे देवरमणे पवत्ते यावि होत्था। [१]तए णं ते बहवे देवकुमारा य देवकुमारीओ य समणस्स[२] भगवओ महावीरस्स [३]पुव्वभवचरियणिबद्धं च चवण[४]चरियणिबद्धं च संहरण[५]चरियनिबद्धं च जम्मण[६]चरियनिबद्धं च अभिसेअचरियनिबद्धं च बाल[८]भावचरियनिबद्धं च जोव्वणचरियनिबद्धं च कामभोग[१०]चरियनिबद्धं च निक्खमण[११]चरियनिबद्धं च तव[१२]चरणचरियनिबद्धं च

नाम सप्तविंशतितमम् [२७] ७ आरभटं नाम अष्टाविंशतित॰मम् [२८] ८ भसोलं नाम एकोनत्रिंशत्तमम् [२९] ९ आरभटभसोलं नाम त्रिंशत्तमम् [३०] तदनन्तरम् १० उत्पातनिपातप्रसक्तं ११ संकुचितप्रसा*रित ÷ रेचका ! रचितं १२ भ्रान्तसंभ्रान्तं नाम एकत्रिंशत्तमं दिव्यं नाट्यविधिम् उपदर्शयन्ति [३१]

[८४] १तदनन्तरम् च २ श्रमणस्य भगवतो महावीरस्य ३ चरमपूर्वमनुष्यभव-४ चरमच्यवन-५चरमगर्भसंहरण-६चरमभरतक्षेत्रावसर्पिणीतीर्थंकरजन्म-७ अभिषेक-८ चरमबालभाव-९चरमयौवन-१० चरमकामभोग-११चरमनिष्क्रमण-१२ चरमतप-

8-सकुचिय अपसारिय-पा० ३। =-रियं भन्तं णाम-भा० २।-रियं रयारतियत णाम—पा० १। ० इद पद न स्पष्ट प्रतिभाति ततः तदर्थोऽपि नावगम्यते। ॰ -मम् शोभन नाम-भा० २। *-रितखेकरभ्रान्त सं-भा०१।-रितं रेवकरचितं भ्रान्तं-भा० २। ÷ अस्यार्थोऽपि

नाट्यस्य उपसंहारः

=णाणुप्पा[13]यचरियनिबद्धं च तित्थपवत्त[14]णचरिय-परिनिव्वाण[15]चरियनिबद्धं च चरिमचं[16]रियनिबद्धं च णा[17]मं दिव्वं णट्टविहिं उवदंसेंति [३२]

[८५] त[1]ए णं ते ब[2]हवे देवकुमारा य देवकुमारीओ य चउव्वि[3]हं वाइत्तं[4] वा[5]एंति-तं[6] जहा-त[7]तं वि[8]ततं घणं झुंसिरं+।

[८६] तए[1] णं ते बहवे देवकुमारा य देवकुमारियाओ य चउव्वि[2]हं गेयं[3] गायंति[4] तंजहा[5]-उक्खित्तं[6] पा[7]यंतं मंदा[8]यं रोइयावसाणं[9] च।

श्वरण-१३ चरमज्ञानोत्पाद- १४ चरमतीर्थप्रवर्तन-१५ चरमपरिनिर्वाणनिबद्धं १६ चरमनिबद्धं १७ नाम द्वात्रिंशत्तमं दिव्यं नाट्यविधिम् उपदर्शयन्ति। [३२]

[८५] १ तदनन्तरम् २ बहवो देवकुमारा देवकुमारिकाश्च नाट्यविधिपरिसमाप्तिमङ्गलभूतं ३ चतुर्विधं ४ वादित्रं ५ वादयन्ति-६ तद्यथा-७ ततम्-मृदङ्ग-पटहादि ८ विततम्-वीणादि ९ घनम्-कंसिकादि १० शुषिरम्-शङ्ख-काहलादि।

[८६] १ तदनन्तरम् २ चतुर्विधं ३ गीतं ४ गायन्ति-५ तद्यथा-६ ×उत्क्षिप्तं प्रथमतः समारभ्यमाणम् ७ पादान्तम्-पादवृद्धम्-वृद्धादि-चतुर्भागरूपपादबद्धम्-इति भावः। ८ मध्यभागे मूर्छनादिगुणोपेततया मन्दं मन्दं घोलनात्मकम् ९ रोचितावसानम्-

---

न सबुद्धः। =मूलपाठ्युक्तेषु आदर्शेषु पा० २ आदर्शे एव 'णाणुप्पायचरियनिबद्ध च' पद दृश्यते परन्तु विवरणानुसारित्वेन अत्र न्यस्तम्।

+'शुषिर' शब्दे आद्य 'श'कारस्य 'झ' कारोच्चारणेन झुसिर। अत्र 'श' कार-झकारयोः 'तालुस्थानीयत्वेन 'श'कारः 'झ'रूपेण परिणत इति कल्पना योग्या [2] शुषिर-सुसिर-सोसरं। × उत्क्षिप्य प्र-पा० ४-५ भा० १।

[८७] तएं णं ते बहवे देवकुमारा य देवकुमारियाओ य चउव्विहं[2] णट्टविहिं[3] उवदंसंति[4]-तंजहा[5]-अंचियं[6] रिभियं आरभडं भसोलं च।

[८८] तएं णं ते बहवे देवकुमारा य देवकुमारियाओ य चउव्विहं[2] अभिणयं[3] अभिणयेंति[4]-तंजहा[5]-दिट्ठंतियं[6] =पाँडितियं सामन्नोविणिवाइयं अंतोमज्झावसाणियं च।

[८९] तए णं ते बहवे देवकुमारा य देवकुमारियाओ य गोयमादियाणं समणाणं निग्गंथाणं दिव्वं देविड्ढिं दिव्व देवजुतिं दिव्वं देवाणुभावं दिव्वं बत्तीसइबद्धं नाडयं उवदंसित्ता समणं भगवंतं महावीरं तिक्खुत्तो आयाहिणपयाहिणं करेंति करित्ता वंदंति नमंसंति वंदित्ता नमंसित्ता जेणेव सूरियाभे देवे तेणेव उवागच्छंति उवासित्ता सूरियाभं देवं करयलपरिग्गहियं सिरसावत्तं [पृ०६७ पं० ८] मत्थए अंजलिं कट्टु जएणं विजएणं वद्धावेंति

इति-रोचितं यथोचितलक्षणोपेततया भावितम्-सत्यापितम् इति यावत् अवसानं यस्य तद् रोचितावसानम्।

[८७] १ ततः २ चतुर्विधं ३ नर्तनविधिम् ४ उपदर्शयन्ति-५ तद्यथा-६ अञ्चितम् इत्यादि।

[८८] १ ततः २ चतुर्विधम् ३ अभिनयम् ४ अभिनयन्ति-५ तद्यथा-६ दार्ष्टान्तिकम् ७ प्रात्यन्तिकम् ८ सामान्यतो विनिपातम् ९ लोकमध्यावसानिकम्-इति। एते नर्तनविधयः अभिनयविधयश्च नाट्यकुशलेभ्यो वेदितव्याः।

=पाडियतिय-भा० २ पा० १-२। पाडिय-पा० ३।

सूर्याभः स्वस्थान गतः

वद्धावित्ता एवं आणत्तियं पच्चप्पिणंति।

तए णं से सूरियाभे देवे तं दिव्वं देविड्ढिं दिव्वं देवजुइं दिव्वं देवाणुभावं Oपडिसाहरइ पडिसाहरेत्ता खणेणं जाते एगे एगभूए। तए णं से सूरियाभे देवे समणं भगवंतं महावीरं तिक्खुत्तो आयाहिणपयाहिणं करेइ वंदति नमंसति वंदित्ता नमंसित्ता [2]नियगपरिवालसद्धिं संपरिवुडे तमेव दिव्वं जाणविमाणं दुरूहति दुरूहित्ता जामेव दिसिं पाउब्भूए तामेव दिसिं पडिगए।

[९०] 'भंते'[1] त्ति[2] भयवं[3] गोयमे समणं[4] भगवंतं महावीरं वंदति[5] नमंसति वंदित्ता नमंसित्ता एवं[6] वयासी—

[८९] तए णं ते...इत्यादि उपसंहारसूत्रं सुगमम्। नवरम्–१ एकभूतः–अनेकीभूय एकत्वं प्राप्त इत्यर्थः। २निजकपरिवारेण सार्धं संपरिवृतः।

[९०] १ 'भदन्त'। २ इति आमन्त्रणपुरस्सरं ३ भगवान् गौतमः ४ श्रमणं भगवन्तं महावीरं ५ वन्दते नमस्यति वन्दित्वा नमस्यित्वा ६ एवम्–वक्ष्यमाणप्रकारेण अवादीत्—

[पुस्तकान्तरे तु इदं वाचनान्तरं दृश्यते–+'तेणं कालेणं तेणं समएणं समणस्स भगवओ महावीरस्स जिट्ठे अन्तेवासी'–इत्यादि–'इंदभूई =नामं अणगारे गोयमसगोत्ते सत्तुस्सेहे समचउरंससंठाणसंठिए वज्जरिसहनारायसंघयणे कणगपुलगनिघसपम्हगोरे उग्गतवे दित्ततवे

O प्रतिसंहरति–प्रतिसंक्षिपति इत्यर्थः। + विवरणकारदर्शितो वाचनाभेदः। = "'नाम' इति प्राकृतत्वात् विभक्तिपरिणामेन 'नाम्ना' इति द्रष्टव्यम् एवमन्यत्रापि यथायोगं भावनीयम्"–राय० विव०।

तत्ततवे महातवे उराले घोरे घोरगुणे घोरतवस्सी घोरबंभचेरवासी उच्छूढसरीरे संखित्तविपुलतेयलेस्से चउदसपुव्वी चउनाणोवगए सव्वक्खरसन्निवाई समणस्स भगवतो महावीरस्स अदूरसामंते उड्ढंजाणू अहोसिरे झाणकोट्ठोवगए संजमेण तवसा अप्पाणं भावेमाणे विहरइ, तए णं से भगवं गोयमे जायसड्ढे जायसंसए जायकोउहल्ले उप्पन्नसड्ढे उप्पन्नसंसए उप्पन्नकोउहल्ले संजायसड्ढे संजायसंसए संजायकोउहल्ले समुप्पण्णसड्ढे समुप्पण्णसंसए समुप्पण्णकोउहल्ले उट्ठाए उट्ठेइ उट्ठाए उट्ठित्ता जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव उवागच्छति तेणेव उवागच्छित्ता समणं भगवंतं महावीरं तिक्खुत्तो आयाहिणपयाहिणं करेति तिक्खुत्तो आयाहिणपयाहिणं करेत्ता वंदति नमसति वंदित्ता नमंसित्ता एवं वयासी'—

अस्य व्याख्या—तस्मिन् काले तस्मिन् समये श्रमणस्य भगवतो महावीरस्य ज्येष्ठ इति प्रथम अन्तेवासी-शिष्यः। अनेन पदद्वयेन तस्य सकलसङ्घाधिपतित्वम्-आवेदयति। 'इन्द्रभूतिः' इति मातापितृकृतं नामधेयम्। अन्तेवासी च किल विवक्षायां श्रावकोऽपि स्यात् अतः तदाशङ्काव्यवच्छेदार्थम् आह—अनगारः-न विद्यते अगारं गृहम् अस्य इति अनगारः अयं च विगीतगोत्रोऽपि संभाव्येत अत आह-गौतमः गोत्रेण गौतमाह्वयगोत्रसमन्वित इत्यर्थः अयं च तत्कालोचितदेहपरिमाणापेक्षया न्यूनाधिकदेहोऽपि स्यात् अत आह-सप्तोत्सेध-सप्तहस्तप्रमाणशरीरोच्छ्रायः अयं च इत्थंभूतो लक्षणहीनोऽपि शङ्क्येत, अतः तदाशङ्कापनोदार्थमाह-समाः शरीरलक्षणशास्त्रोक्तप्रमाणाविसंवादिन्य चतस्रः अस्रयः यस्य तत् समचतुरस्रम्-अस्रयस्त्विह चतुर्दिग्विभागोपलक्षिताः शरीरावयवा द्रष्टव्याः। अन्ये त्वाहुः-"समा अन्यूनाधिकाः चतस्रोऽपि अस्रयो यत्र तत् समचतुरस्रम् तच्च तत् संस्थानं च, संस्थानम् आकारः तच्च वाम-दक्षिणजान्वोः अन्तरम् आसनस्य ललाटोपरिभागस्य चान्तरम् वामस्कन्धस्य दक्षिणजानुनश्च अन्तरम्" इति। अपरे त्वाहुः-"विस्तारोत्सेधयोः समत्वात् समचतुरस्रम् तच्च तत् संस्थानं च-संस्थानम् आकारः तेन संस्थितो व्यवस्थितो यः स तथा।-तत्र नाराचम् उभयतो मर्कटबन्धः ऋषभः तदुपरि वेष्टनपट्टः कीलिका अस्थित्रयस्यापि भेदकम् अस्थि एवंरूपं संहननं यस्य स तथा। तथा कनकस्य-सुवर्णस्य यः पुलकः-लवः तस्य यो निकषः-कषपट्टके रेखारूपः तथा 'पद्म'ग्रहणेन 'पद्मकेसराणि' उच्यन्ते अवयवे समुदायोपचारात् यथा-देवदत्तस्य हस्ताग्ररूपोऽवयवोऽपि देवदत्तः तथा च देवदत्तस्य हस्ताग्रं स्पृष्ट्वा लोको वदति-'स्पृष्टो मया देवदत्तः' इति, कनकपुलकनिकषवत् पद्म-

वच्च यो गौरः स कनकपुलकनिकषपद्मगौर' अथवा कनकस्य यः पुलको द्रवत्वे सति बिन्दुः तस्य निकषो वर्णतः सदृशः कनकपुलकनिकषः तथा पद्मवत्-पद्मकेसरवत् यो गौरः स O पद्मगौरः। अय च विशिष्टचरणरहितोऽपि शङ्कयेत तत आह-उग्रम् अधृष्यं तपः अनशनादि यस्य स तथा यद् अन्येन प्राकृतेन पुंसा न शक्यते चिन्तयितुमपि मनसा तद्विधेन तपसा युक्त इत्यर्थः तथा दीप्तं जाज्वल्यमानदहन इव कर्मवनगहनदहनसमर्थतया ज्वलितं तपो धर्मध्यानादि यस्य स तथा, तप्तं तपो येन स तप्ततपाः एवं हि तेन तपः तप्तं येन सर्वाण्यपि अशुभानि कर्माणि भस्मसात्कृतानि इति महत् प्रशस्तम्-आशंसादोषरहितत्वात्-तपो यस्य स महातपाः तथा उदारः प्रधानः अथवा + उरालो भीष्मः उग्रादिविशिष्टतपःकरणतः पार्श्वस्थानाम्-अल्पसत्त्वानाम् अतिभयानक इति भावः तथा घोरो निर्घृणः परीषहेन्द्रियादिरिपुगणविनाशनमधिकृत्य निर्दय इति यावत् तथा घोरा अन्यैर्दुरनुचरा गुणा मूलगुणादयो यस्य स घोरगुणः तथा घोरैस्तपोभिः तपस्वी घोरतपस्वी घोरं दारुणम् अल्पसत्त्वैर्दुरनुचरत्वात् ब्रह्मचर्यं यत् तत्र वस्तुं शीलं यस्य स तथा 8 उच्छूढम्-उज्झितमिव उज्झितं संस्कारपरित्यागात्-शरीरं येन स उच्छूढशरीरः संक्षिप्ता शरीरान्तर्गतत्वेन ह्रस्वतां गता विपुला विस्तीर्णा अनेकयोजनप्रमाणक्षेत्राश्रितवस्तुदहनसमर्थत्वात् तेजोलेश्या विशिष्टतपोजन्यलब्धिविशेषप्रभवा तेजोज्वाला यस्य स तथा चतुर्दश पूर्वाणि विद्यन्ते यस्य-तेनैव तेषां रचितत्वात्-असौ चतुर्दशपूर्वी अनेन तस्य श्रुतकेवलित्वमाह स च अवधिज्ञानादिविकलोऽपि स्यात् अत आह-मति-श्रुत-अवधि-मनःपर्यायज्ञानचतुष्टयसमन्वित. उक्तविशेषणद्वययुक्तोऽपि कश्चिद् न समग्रश्रुतविषयव्यापिज्ञानो भवति चतुर्दशपूर्वविदामपि षट्स्थानपतितत्वेन श्रवणात् अत आह सर्वाक्षरसंनिपाती अक्षराणां संनिपाता. संयोगाः अक्षरसन्निपाताः सर्वे च ते अक्षरसन्निपाताश्च सर्वाक्षरसन्निपाताः ते यस्य ज्ञेयाः स तथा किमुक्तं भवति? या काचिद् जगति पदानुपूर्वी वाक्यानुपूर्वी वा संभवति ताः सर्वा अपि जानातीति एवगुणविशिष्टो भगवान् विनयराशिरिव साक्षात् इति कृत्वा शिष्याचारत्वाच्च श्रमणस्य भगवतो महावीरस्य अदूरसामन्ते विहरति-इति योगः तत्र दूरं विप्रकृष्टम् तत्प्रतिषेधाद् अदूरसामन्तम्-ततो नातिदूरे नातिनिकटे इत्यर्थः किं-

O "ततः पदद्वयस्य कर्मधारयसमासः"-राय० विव०। + 'उरालो' अयं प्राकृतः प्रयोगः। 8 'उच्छढम्' इदमपि प्राकृत पदम्।

विशिष्टः सन् तत्र विहरति ? इत्यत आह–ऊर्ध्वे जानुनी यस्य असौ ऊर्ध्वजानुः अधःशिराः–नोर्ध्वं तिर्यग् वा विक्षिप्तदृष्टिः किन्तु नियतभूभागनियमितदृष्टिः इत्यर्थः ध्यानं धर्मध्यानं शुक्लध्यानं च तदेव कोष्ठः कुशूलो ध्यानकोष्ठः तम् उपगतो ध्यानकोष्ठोपगतः यथा हि कोष्ठके धान्य प्रक्षिप्तम् अविप्रसृतं भवति एवं भगवानपि ध्यानतोऽविप्रकीर्णेन्द्रियान्त करणवृत्तिः इत्यर्थः संयमेन पञ्चाश्रवनिरोधादिलक्षणेन तपसा अनशनादिना 'च'शब्दोऽत्र समुच्चयार्थो लुप्तो द्रष्टव्यः संयम–तपोग्रहणम् अनयोः प्रधानमोक्षाङ्गताख्यापनार्थम् प्राधान्यं च नवकर्मानुपादानहेतुत्वेन तपसश्च पुराणकर्मनिर्जराहेतुत्वेन तथाहि–अभिनवकर्मानुपादानात् पुराणकर्मक्षपणाच्च जायते सकलकर्मक्षयलक्षणो मोक्ष ततो भवति संयम-तपसोर्मोक्षं प्रति प्राधान्यम् इति। आत्मानं वासयन् तिष्ठति। ततो ध्यानकोष्ठोपगतविहरणाद् अनन्तरं भगवान् गौतमो जातश्रद्धादिविशेषणविशिष्टः सन् उत्तिष्ठति–इति योगः तत्र जाता प्रवृत्ता श्रद्धा इच्छा वक्ष्यमाणार्थतत्त्वावगमं प्रति यस्य असौ जातश्रद्धः तथा जातः संशयो यस्य स जातसंशयः संशयो नाम अनवधारितार्थज्ञानम् स चैवम्–'इत्थं नाम अस्य दिव्या देवर्धिर्विस्तृता अभवत् इदानीं सा क्व गता ?' इति तथा जातं कुतूहलं यस्य स जातकुतूहलः जातौत्सुक्य इत्यर्थः यथा–'कथममुमर्थं भगवान् प्ररूपयिष्यति' इति तथा उत्पन्ना प्राग् अभूता सती भूता श्रद्धा यस्य असौ उत्पन्नश्रद्धः अथ 'जातश्रद्धः' इत्येतदेव अस्तु किमर्थम् 'उत्पन्नश्रद्धः' इति प्रवृत्तश्रद्धत्वेनैव उत्पन्नश्रद्धत्वस्य लब्धत्वात् नहि अनुत्पन्ना श्रद्धा प्रवर्तते ? इति, अत्रोच्यते; हेतुत्वप्रदर्शनार्थम् तथाहि–कथं प्रवृत्तश्रद्धः उच्यते यतः उत्पन्नश्रद्धः इति हेतुत्वदर्शनं चोपपन्नम् तस्य काव्यालंकारत्वात् यथा "प्रवृत्तदीपामप्रवृत्तभास्कराम् प्रकाशचन्द्रां वुवुधे विभावरीम्" [ ] इत्यत्र, अत्र हि यद्यपि प्रवृत्तदीपादित्यादेव अप्रवृत्तभास्करत्वम् अवगतम् तथापि अप्रवृत्तभास्करत्वं प्रवृत्तदीपादेर्हेतुतया उपन्यस्तमिति सम्यक्। 'उप्पन्नसड्ढे' 'उप्पन्नसंसए' इति प्राग्वत् तथा 'संजायसड्ढे' इत्यादि पदषट्कं प्राग्वत् नवरम्–इह 'सम्'शब्दः प्रकर्षादिवचनो वेदितव्यः उत्थानम् उत्था–ऊर्ध्ववर्तनम्–तया उत्तिष्ठति। इह 'उट्ठेइ' इत्युक्ते क्रियारम्भमात्रमपि प्रतीयेत यथा 'वक्तु+मुत्तिष्ठति' ततः तद्व्यवच्छेदार्थम् 'उट्ठाए' इत्युक्तम्–उत्थया उत्थाय यस्मिन् दिग्भागे श्रमणो भगवान्

+–मुत्तिष्ठते ततः–पा० ४। –मुपतिष्ठते ततः–पा० ५।

जातसंशयस्य श्रीगौतमस्य प्रश्नः

[९१] प्र०–सूरियाभस्स णं भंते! देवस्स एसा दिव्वा देविड्ढी दिव्वा देवज्जुती दिव्वे देवाणुभावे कहिं[1] गते कहिं[2] अणुप्पविट्ठे ?

[९२] उ०–गोयमा[1]! स[2]रीरं गते [3]सरीरं अणुप्पविट्ठे।

[९३] प्र०–[1]से केणट्ठेणं [2]भंते! [3]एवं वुच्चइ[4] सरीरं[5] गते सरीरं अणुप्पविट्ठे ?

[९४] उ०–गोयमा[1]! से जहा नाम ए कूडा[2]गारसाला

महावीरो वर्तते तस्मिन्नेव दिग्भागे उपागच्छति उपागत्य च श्रमणं त्रिकृत्वः–त्रीन् वारान् आदक्षिणप्रदक्षिणीकरोति आदक्षिणप्रदक्षिणीकृत्य वन्दते नमस्यति वन्दित्वा नमस्यित्वा एवम् अवादीत्]—

[९१] प्र०–१ क्व गतः ? २ तत्र गमनम् अन्तरमनुप्रवेशाभावेऽपि दृष्टम् यथा 'भित्तौ गता धूलिः' इति, एषोऽपि दिव्योऽनुभावः यद्येवं क्वचित् प्रत्यासन्ने प्रदेशे गतः स्यात् ततो दृश्येत न चासौ दृश्यते ततो भूयः पृच्छति–क्व अनुप्रविष्टः–क्व अन्तर्लीनः ? इति भावः

[९२] उ०–भगवान् आह–१ गौतम! २ शरीरं गतः–३ शरीरम् अनुप्रविष्टः।

[९३] प्र०–पुनः पृच्छति–१ अथ केन अर्थेन–केन हेतुना २ भदन्त! ३ एवम् ४ उच्यते ५ 'शरीरं गतः–शरीरम् अनुप्रविष्टः' ?

[९४] उ०–भगवान् आह–१ गौतम! २कूटस्येव–पर्वतशिखरस्येव आकारो यस्याः सा कूटाकारा–यस्या उपरि आच्छादनं शिखराकारं सा कूटाकारा इति भावः कूटाकारा चासौ शाला च कूटाकारशाला यदि वा कूटाकारेण शिखराकृत्या उपलक्षिता शाला

सिया[३] दुहतो लित्ता गुत्ता[६] गुत्तदुवारा[७] णिवाया णिवायगंभीरा, [१०]तीसे णं कूडागारसालाते [११]अदूरसामंते एत्थ णं [१२]महेगे जणसमूहे चिट्ठति, तए णं [१३]से जणसमूहे एगं[१४] महं अब्भवद्दलगं[१५] वा वासवद्दलगं[१६] वा महावायं[१७] वा एज्जमाणं[१८] वा पासंति[१९], पासित्ता तं[२०] ४कूडागारसालं अंतो[२१] अणुप्पविसित्ता[२२] णं चिट्ठइ[२३], से तेणट्ठेणं[२४] गोयमा[२५]! एवं वुच्चति–'सरीरं अणुप्पविट्ठे'।

[९५] प्र०–कहिं[१] णं भंते! सूरियाभस्स[३] देवस्स सूरियाभे[३] नामं विमाणे पन्नत्ते[४]?

कूटाकारशाला ३ स्यात् ४बहिर् अन्तश्च ५ गोमयादिना लिप्ता ६ गुप्ता बहिः प्राकारावृता ७ गुप्तद्वारा द्वारस्थगनात् यदि वा गुप्तद्वारा केषांचिद् द्वाराणां स्थगितत्वात् केषांचिद् वा अस्थगितत्वात् इति। ८ निवाता वायोरप्रवेशात् ९ किल महद् गृहं निवातं प्रायो न भवति तत आह–निवातगम्भीरा–निवाता सती विशाला इत्यर्थः ततः १० तस्याः कूटाकारशालायाः ११ अदूरसामन्ते–न अतिदूरे निकटे वा प्रदेशे १२ महान् एकः–अन्यतरः जनसमूहः तिष्ठति १३ स च १४ एकं महत् १५ अभ्ररूपं वार्दलम्–अभ्रवार्दलम्–धारानिपातरहितं संभाव्यवर्षं वार्दलम् इत्यर्थः १६ वर्षप्रधानं वार्दलकम्–वर्षवार्दलकम्–वर्षं कुर्वत् वार्दलकम् १७ महावातं वा १८ आयान्तम्–आगच्छन्तम् १९पश्यति दृष्ट्वा २०तस्याः कूटाकारशालायाः २१अन्तरम् ततः २२अनुप्रविश्य २३तिष्ठति एवं सूर्याभस्यापि देवस्य सा तथा विशाला दिव्या देवद्युतिः दिव्यो देवानुभावः शरीरम् अनुप्रविष्टः। २४अनेन कारणेन २५गौतम! एवम् उच्यते।

[९५] प्र०–भूयो गौतमः पृच्छति–१ क्व २ सूर्याभस्य देवस्य सूर्याभं विमानं ४प्रज्ञप्तम्?

---

४ "द्वितीया षष्ठ्यर्थे"–राय० विव०।

[९६] उ०–[1]गोयमा ! [2]जंबुद्दीवे दीवे [3]मंदरस्स पव्वयस्स [4]दाहिणेणं [5]इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए [6]बहुसमरम-णिज्जातो भूमिभागातो [7]उड्ढं [8]चंदिम-सूरिय-गहगण-नक्खत्त-तारारूवाणं [9]बहूइं जोअणसयाइं एवं-[10]सहस्साइं-[11]सयसहस्साइं ×[12]बहुईओ जोअणकोडीओ जोअणसयकोडीओ जोअणसहस्सकोडीओ बहुईओ जोअणसयसहस्स-कोडीओ [13]बहुईओ जोअणकोडाकोडीओ [14]उड्ढं दूरं [15]वीतीवइत्ता [16]एत्थ णं [17]सोहम्मे नामं कप्पे पन्नत्ते पाईण[18]पडीणायते उदीणदाहिणवित्थिण्णे [19]अद्धचंदसंठाणसंठिते [20]अच्चिमालिभासरासिवण्णाभे [21]

[९६] प्र०–भगवान् आह–१ गौतम ! अस्मिन् २ जम्बूद्वीपे यो ३ मन्दरपर्वतः तस्य ४ दक्षिणतः ५ अस्या रत्नप्रभायाः पृथिव्याः ६ बहुसमरमणीयात् भूमिभागात् ७ ऊर्ध्वं ८ चन्द्र-सूर्य-ग्रह-नक्षत्र-तारारूपाणामपि पुरतः ९ बहूनि योजनशतानि ततो बुद्धया बहुबहुतरोल्लङ्घनेन १०बहूनि योजनसहस्राणि एवमेव ११बहूनि योजनशतसहस्राणि एवमेव च १२ बह्वीर्योजनकोटीः एवमेव च १३बह्वीर्योजनकोटीकोटीः १४ ऊर्ध्वम् १५ उत्प्लुत्य १६ अत्र सार्धरज्जुप्रमाणे प्रदेशे १७ सौधर्मो नाम कल्पः प्रज्ञप्तः स च १८ =प्राचीनाऽपाचीनायतः पूर्वापरायत इत्यर्थः १९ उदग्दक्षिणविस्तीर्णः २० अर्धचन्द्रसंस्थानसंस्थितः द्वौ हि सौधर्म-ईशानौ देवलोकौ समुदितौ परिपूर्णचन्द्रमण्डलसंस्थानसंस्थितौ तयोश्च मेरोर्दक्षिणवर्ती सौधर्मकल्पः उत्तरवर्ती ईशानकल्पः ततो भवति सौधर्मकल्पः अर्धचन्द्रसंस्थानसंस्थितः २१ *अर्चीनि किरणानि तेषां माला अर्चिमाला सा अस्य अस्ति-इति अर्चिमाली-किरणमालासंकुल इत्यर्थः ।

'सूर्याभस्य विमानं क्व ?' इति श्रीगौतम प्रश्नस्य उत्तरम्

× बहुगीतो जो-भा० १। =प्राचीनोपाचीना-पा० ४-५। * अर्चींषि-भा० २। "अर्चिस्-अर्ची सन्तेदन्तौ"-शब्दरत्नाकर० का० ४ श्लो० ११५।

असंखेज्जाओ[22] जोअणकोडाकोडीओ[23] आयामविक्खंभेणं[24] असंखेज्जाओ[25] जोअणकोडाकोडीओ परिक्खेवेणं[26] एत्थ णं सोहम्माणं देवाणं बत्तीसं[27] विमाणवाससयसहस्साइं भवंति[28] इति[29] ÷ मक्खायं[30]। ते[31] णं विमाणा सव्वरयणामया[32] अच्छा जाव[33] पडिरूवा। तेसिं[34] णं विमाणाणं बहुमज्झदेसभाए[35] पंच[36] वडिंसया[37] पन्नत्ता तंजहा–असोगवडिंसए[38] सत्तवण्णवडिंसए[39]

२२ असंख्येयाः २३यो≈जनकोटीकोटीः २४ आयामश्च विष्कम्भश्च ०आयामविष्कम्भम्–तेन आयामेन च विष्कम्भेन चेत्यर्थः २५ असंख्येया योजनकोटीकोटीः २६ परिक्षेपेण–परिधिना। सर्वात्मना रत्नमयः 'यावत्' करणात् 'अच्छे सण्हे घट्ठे' [पृ०१९ पं०५ तथा ८] इत्यादिविशेषणकदम्बकपरिग्रहः तत्र सौधर्मे कल्पे २७ द्वात्रिंशद्विमानशतसहस्राणि २८भवन्ति २९इति ३० आख्यात मया शेषैश्च तीर्थकृद्भिः। ३१तानि च विमानानि ३२सर्वरत्नमयानि–सामस्त्येन रत्नमयानि अच्छानि आकाशस्फटिकवत् अतिनिर्मलानि अत्रापि ३३ 'यावत्' करणात् 'सण्हा लण्हा घट्ठा नीरया' [पृ० १९ पं० ८] इत्यादि विशेषणजातं द्रष्टव्यम् तच्च प्रागेव अनेकशो व्याख्यातम्। ३४ तेषां विमानानां ३५ बहुमध्यदेशभागे त्रयोदशप्रस्तटे सर्वत्रापि विमानावतंसकानां स्वस्वकल्पचरमप्रस्तटवर्तित्वात् ३६ पञ्च ३७ विमानावतंसकाः प्रज्ञप्ताः तद्यथा–३८ अशोकावतंसकः–अशोकावतंसकनामा स च पूर्वस्यां दिशि ततो दक्षिणस्यां ३९ सप्तपर्णाव-

÷–मे+अक्खायं=मक्खाय। ˘ "सूत्रे ○ पुस्त्व प्राकृतत्वात्"–राय० विव०। ≈–जनकोटीः–पा० ५–४ भा० १। ०"समाहारो द्वन्द्वः"–राय० विव०।

○ विमानशब्दस्य पुस्त्वम्।

रायपसेणइयं।

॥१५४॥

चंपगवडिंसए[40]* चूतवडिंसए[41] मज्झे सोधम्मवडिंसए[42] ते[43] णं वडिंसगा सव्वरयणामया[44] अच्छा जाव[45] पडिरूवा। तस्स[46] णं सोधम्मवडिंसगस्स महाविमाणस्स पुरत्थिमेणं[47] तिरियं[48] असंखेज्जाइं[49] जोयणसयसहस्साइं वीइवइत्ता[50] एत्थ[51] णं सूरियाभस्स[52] देवस्स सूरियाभे[53] विमाणे पण्णत्ते +अद्धतेरस[54] जोयणसयसहस्सा आयाम[55]विक्खंभेणं ○अउणयालीसं[56] च सयसहस्साइं बावन्नं[57] च सहस्साइं अट्ठ[58] य अडयालजोयणसते परिक्खेवेणं[59]।

तंसकः पश्चिमायां ४० चम्पकावतंसकः उत्तरस्यां ४१ चूतावतंसकः मध्ये ४२ सौधर्मावतंसकः ४३ तेऽपि पञ्चापि विमानावतंसकाः ४४ सर्वरत्नमयाः 'अच्छा जाव पडिरूवा' इति ४५ 'यावत्' करणात् अत्रापि 'सण्हा घट्ठा मट्ठा' इत्यादि [पृ० १९ पं० ५–८] विशेषणजातम् अवगन्तव्यम्। ४६तस्यैव सौधर्मावतंसकस्य ४७पूर्वस्यां दिशि ४८तिर्यक् ४९ असंख्येयानि योजनशतसहस्राणि ५०व्यतिव्रज्य–अतिक्रम्य ५१ अत्र ५२सूर्याभस्य देवस्य ५३ सूर्याभं नाम विमानं प्रज्ञप्तम् ५४ अर्धं त्रयोदशं येषां तानि अर्धत्रयोदशानि–सार्धानि द्वादश–इत्यर्थः–योजनशतसहस्राणि ५५ आयामविष्कम्भेन च ५६ ×एकोनचत्वारिंशत् योजनशतसहस्राणि ५७ द्विपञ्चाशत् सहस्राणि ५८ अष्टौ च योजनशतानि अष्टचत्वारिंशानि–अष्टाचत्वारिंशदधिकानि–३९५२८४८ ≡किञ्चिद्विशेषाधिकानि ५९ परिक्षेपेण

*–ए भूतवडेंसए–भा० १। –ए भूयगवडिसते–भा० २। + अतो तेरसयसहस्साइं आयामविक्खंभेण बायालीसं च सयसहस्साइं अट्ठ य अड–पा० १। ○अउणयालीसं च सयसहस्साइं अट्ठ य अडयालजोयणसते–भा० २। ×एकोनचत्वारिंशत् योजनशतसहस्राणि अष्टौ च योजन–पा० ४–५। ≡अयमर्थो मूले न प्रतिभाति।

[९७] से[1] णं [2]एगेणं पागारेणं सव्वओ[3] समंतो संपरिक्खित्ते [6]से णं पागारे तिण्णि जोयणसयाइं उड्ढं[8]-उच्चत्तेणं, [9]मूले एगं जोयणसयं विक्खंभेणं, [11]मज्झे [12]पन्नासं जोयणाइं विक्खंभेणं उप्पिं[13] [14]पणवीसं जोयणाइं विक्खंभेणं। [16]मूले वित्थिण्णे [17]मज्झे संखित्ते [18]उप्पिं तणुए-[19]गोपुच्छसंठाणसंठिए [20]सव्वरयणामए अच्छे जाव पडिरूवे [21]से णं पागारे

परिधिना "ͽ विक्खम्भवग्ग दहगुण करणी वट्टस्स परिरओ =होइ" [ ] इति करणवशात् स्वयम् आनेतव्यं सुगमत्वात्।

[९७] १ तद् विमानम् २ एकेन प्राकारेण ३ सर्वतः सर्वासु दिक्षु ४ समन्ततः सामस्त्येन ५ परिक्षिप्तम्। ६ स प्राकारः ७ त्रीणि योजनशतानि ८ ऊर्ध्वम्-उच्चैस्त्वेन, ९ मूले एकं योजनशतं १० विष्कम्भेन, ११ मध्यभागे १२ +पञ्चाशत्, मूलाद् आरभ्य मध्यभागं यावत् योजने योजने *योजनत्रिभागस्य विष्कम्भतः त्रुटितत्वात् १३ उपरि मस्तके १४ पञ्चविंशतिर्योजनानि १५ विष्कम्भेण मध्यभागाद् आरभ्य उपरितनमस्तकं यावत् योजने योजने योजनषड्भागस्य विष्कम्भतो हीयमानतया लभ्यमानत्वात् अत एव १६ मूले विस्तीर्णः १७ मध्ये संक्षिप्तः पञ्चाशतो योजनानां त्रुटितत्वात् १८उपरि तनुकः पञ्चविंशतियोजनमात्रविस्तारात्मकत्वात् अत एव १९ गोपुच्छसंस्थानसंस्थितः २० 'सव्वरयणामए' इत्यादि विशेषणजातं प्राग्वत् [पृ० १९ पं० ५-८] स २१ प्राकारः

ͽ "विक्खभ पायगुणिओ परिरओ तस्स गणियपय" इति सम्पूर्णगाथा। =विष्कम्भवर्गः दशगुणः करणी वृत्तस्य परिरयो भवति। विष्कम्भः पादगुणितः परिरयः तस्य गणितपदम्" इति शब्दसंस्कारः। जम्बूद्वीपप्रज्ञप्तिवृत्तौ [पृ० १९ प० ८ वक्ष० १] "परिध्यानयनोपायस्त्वय चूर्णिकारोक्त." इति उल्लिख्य इय गाथा दर्शिता। उपयुक्तगाथार्थस्तु-विष्कम्भस्य वर्गो विधेय स च दशगुणः कार्यः ततः करणीक्रियया गणितं विधेयम् एवरीत्या वृत्तस्य परिरयो ज्ञातु शक्यः। +'विष्कम्भेन' इति शेषः। *-जनविभागस्य वि-भा० २।

[22]णाणाविहपंचवण्णेहिं कविसीसएहिं उपसोभिते तं जहा–[23]कण्हेहिं य नीलेहिं य लोहितेहिं हालिद्देहिं सुक्किल्लेहिं कविसीसएहिं। [24]ते णं कविसीसगा [25]एगं जोयणं [26]आयामेणं [27]अद्धजोयणं विक्खंभेणं [28]देसूणं जोयणं [29]उड्ढं उच्चत्तेणं *[30]सव्वरयणामया अच्छा जाव पडिरूवा।

[९८] सूरियाभस्स णं विमाणस्स [1]एगमेगाए बाहाए [2]दारसहस्सं दारसहस्सं भवतीति =मक्खायं, [3]ते णं दारा पंच [4]जोयणसयाइं उड्ढं उच्चत्तेणं [5]अड्ढाइज्जाइं जोयणसयाइं विक्खंभेणं [6]तावइयं चेव पवेसेणं सेया [7] वर[8]कणगथूभियागा [9]ईहामियउसभतुरगणरमगरविहगवालगकिन्नररुरुसरभचमरकुंजरवणलयपउमलयभत्तिचित्ता खंभुग्गय-

२२नानाविधानि च तानि पञ्चवर्णानि च नानाविधपञ्चवर्णानि तैः नानाविधत्वं च पञ्चवर्णापेक्षया द्रष्टव्यम् कृष्णादिवर्णतारतम्यापेक्षया वा २३ पञ्चवर्णत्वमेव प्रकटयति–'कण्हेहिं' इत्यादि। २४ तानि कपिशीर्षकाणि प्रत्येकं २५ योजनमेकम् २६ आयामतो दैर्घ्येण २७ अर्धं योजनं विष्कम्भेण २८ देशोनयोजनम्–२९ उच्चैस्त्वेन ३०'सव्वरयणामया' इत्यादि विशेषणजातं प्राग्वत् [पृ०१९ पं० ५–८]।

[९८] १ एकैकस्यां बाहायां २ द्वारसहस्रमिति सर्वसङ्ख्यया चत्वारि §द्वारसहस्राणि, ३ तानि च द्वाराणि प्रत्येकं ४ पञ्च योजनशतानि ऊर्ध्वम्–उच्चैस्त्वेन ५ अर्धतृतीयानि योजनशतानि विष्कम्भतः ६ अर्धतृतीयान्येव योजनशतानि प्रवेशतः तानि च द्वाराणि ≈सर्वाण्यपि ७श्वेतानि–श्वेतवर्णोपेतानि बाहुल्येन अङ्करत्नमयत्वात्। ८ वरकनका–वरकनकमयी स्तूपिका–शिखरं येषां तानि तथा, ९ 'ईहामिग...सस्सिरीयरूवा' इति विशेषणजातं यानविमानवद् भावनीयम् [पृ० ७६ पं० २–४ तथा पं० ६–१२]

* सव्वमणिमया–भा० १–२ वि० बा०। = पृ० १५३ – टिप्पण। § द्वादश–पा० ५। ≈ सर्वाण्युपरि श्वे–भा० २।

वरवयरवेइया परिगयाभिरामा विज्जाहरजमलजुयलजंतजुत्ता विव अच्चीसहस्समालणीया रूवगसहस्सकलिया भिसमाणा भिब्भिसमाणा चक्खुल्लोयणलेसा सुहफासा ससिरीयरूवा। वंन्नो दाराणं तेसिं होइ–तंजहा–वइ[11]○रामया णिम्मा रिट्ठामया[12] पइट्ठाणा वेरुलियमया[13] खंभा जायरूवोवचियपवरपंचवन्नमणिरयणकोट्टिमतला हंसग[14]ब्भमया एलुया गोमेज्जमया[15] इंदकीला लोहियक्खमतीतो[16] चेडाओ जोइरसमया[17] उत्तरंगा लोहियक्खमईओ[18]

१० तेषां द्वाराणां वर्णः–स्वरूपव्यावर्णनम्–अयं भवति, तमेव कथयति–तद्यथा–इति ११नेमा नाम द्वाराणां भूमिभागाद् ऊर्ध्वं निष्क्रामन्तः प्रदेशाः ते सर्वे वज्रमया–वज्ररत्नमयाः, १२ रिष्टमयानि–रिष्टरत्नमयानि प्रतिष्ठानानि–मूलपादाः १३ वैडूर्यरत्नमयाः स्तम्भाः जातरूपेण–सुवर्णेन उपचितैः–युक्तैः प्रवरैः–प्रधानैः पञ्चवर्णैर्मणिभिः–चन्द्रकान्तादिभिः रत्नैः–कर्केतनादिभिः कुट्टिमतलं–बद्धभूमितलं येषां ते तथा १४ हंसगर्भमया–हंसगर्भाख्यरत्नमया एलुका–= देहल्यः इति १५ गोमेज्जकरत्नमया इन्द्रकीलाः १६ * लोहिताक्षररत्नमय्यो +द्वारशाखाः १७ द्वारस्योपरि तिर्यग्व्यवस्थितमङ्गम्–उत्तरङ्गं= तानि ज्योतीरसमयानि–ज्योतीरसाख्यरत्नात्मकानि १८लोहि-

○ 'वज्र' इत्यस्य 'वजिर'–'वइर' इति प्राकृतम् उच्चारणम् 'वइरमया' इति वक्तव्ये 'वइरामया' इति "'वज्र' शब्दस्य दीर्घत्वं प्राकृतत्वात्" एवम् अन्यत्रापि द्रष्टव्यम्" –राय० वि०। – भाषायाम् 'डेलि' इति प्रसिद्धम्। ज्ञाताधर्मकथासूत्रे मूलपाठे 'देहवलि' शब्दः समागत.–"देहंबलियाए"–पृ० १९९ प्र० प० ११। एतस्य वृत्तौ "देह बलिम्' इति एतस्य आख्यान देहवल्किा ××× अनुस्वारो नैपातिक." पृ० २०० प्र० प० १०। अनयोः देहलि–देहबलिकाशब्दयोः साम्य प्रतिभाति। यत्र स्थित्वा 'देह बलिम्' इति कथ्यते तत् स्थान 'देहबलिका–देहली' इति उचित व्युत्पादनम्। * लोहिताख्यर–विवरणसर्वप्रतिषु। +भाषायाम् 'बारसाख' इति। = 'ओतरग' इति भाषाप्रतीतम्।

सूईओ [19]वयरामया संधी [20]णाणामणिमया समुग्गया [21]वयरामया अग्गला [22]अग्गलपासाया [23]रययामयाओ [23]आवत्तणपेढियाओ [24]अंकुत्तरपासगा [25]निरंतरियघणकवाडा [26]भित्तीसु चेव भित्तिगुलिता छपन्ना तिण्णि होंति [27]गोमाणसिया [28]तत्तिया

ताक्षमय्यो लोहिताक्षरत्नात्मिकाः सूचयः–फलकद्वयसम्बन्धविघटनाऽभावहेतुः पादुकास्थानीयाः १९ वज्रमयाः सन्धयः सन्धिमेलाः फलकानाम्–किमुक्तं भवति?–वज्ररत्नपूरिताः फलकानां सन्धयः, २० समुद्गका इव समुद्गकाः–०सूचिकागृहाणि तानि नानामणिमयानि २१ +अर्गलाः–प्रतीताः २२ अर्गलाप्रासादा यत्रार्गला नियम्यन्ते, आह च *जीवाभिगममूलटीकाकारः–"अर्गलाप्रासादा यत्रार्गला नियम्यन्ते" [ ] इति। एतौ द्वौ अपि वज्ररत्नमयौ २३ आवर्त्तनपीठिका नाम यत्रेन्द्रकीलको भवति, उक्तं च विजयद्वारचिन्तायां ×जीवाभिगममूलटीकाकारेण–"आवर्त्तनपीठिका यत्रेन्द्रकीलको भवति" [ ] इति। २४ अङ्का–अङ्करत्नमया उत्तरपार्श्वा येषां द्वाराणां तानि अङ्कोत्तरपार्श्वकानि २५ निर्गता अन्तरिका लघ्वन्तररूपा येषां ते निरन्तरिका अत एव घना–निरन्तरिका घनाः कपाटा येषां द्वाराणां तानि निरन्तरिकघन–कपाटानि २६ तेषां द्वाराणां प्रत्येकमुभयोः पार्श्वयोः भित्तिषु –भित्तिगताः भित्तिगुलिकाः–पीठकस्थानीयाः Oतिस्रः षट्पञ्चाशत्प्रमाणा भवन्ति २७ गोमनस्यः शय्याः २८ तावन्मात्राः षट्पञ्चा-

२३ रजतमय्यः। ० 'शूतिकागृहाणि' विवरणसर्वप्रतिषु। + 'आगळियो' भाषा। * प्रस्तुतविवरणकारेणैव श्रीमलयगिरिसूरिणा जीवाजीवाभिगमसूत्रस्य विवरण कृतम् स तत्रापि एवमेव उल्लिखति–"आह च मूलटीकाकारः अर्गलाप्रासादा यत्रार्गला नियम्यन्ते"–जीवा० वि० पृ० २०४ प० ६। × जीवा० वि० पृ० २०४ पं० ७। O –ति ष पञ्चाशत् त्रिकप्रमाणा–पा० ५। त्रिषट्पञ्चाशत्–त्रिकप्रमाणा–भा० १।

[३१]णाणामणिरयणवालरूवगलीलट्ठिअसालभंजियागा [३०]वयरामया कूडा [३१]रययामया उस्सेहा [३२]सव्वतवणिज्जमया उल्लोया णाणामणिरयणजालपंजरमणिवंसगलोहियक्खपडिवंसगरययभोमा [३४]अंकामया पक्खा पक्खबाहाओ [३५]जोईरसामया वंसा वंसकवेल्लुयाओ

शत्रिकसंख्याका इत्यर्थः इदं द्वारविशेषणमेव, २९ नानामणिरत्नानि–नानामणिरत्नमयानि व्यालरूपकाणि लीलास्थितशालभञ्जिकाश्च लीलास्थितपुत्रिका येषु तानि तथा ३०कूटो४–माडभाग उच्छ्रयः–शिखरम्। आह च जीवाभिगममूलटीकाकृत्–"-कूटो माडभागः उच्छ्रयः शिखरम्" [ ] इति, नवरमत्र शिखराणि तेषामेव माडभागानां सम्बन्धीनि वेदितव्यानि, द्वारशिखराणामुक्तत्वात् वक्ष्यमाणत्वाच्च, ३२ उल्लोका–उपरिभागाः सर्वतपनीयमयाः–सर्वात्मना तपनीयरूपसुवर्णविशेषमयाः ३३ मणयो–मणिमया वंशा येषु तानि मणिमयवंशकानि लोहिताक्षाणि–लोहिताक्षमयाः प्रतिवंशा येषु तानि लोहिताक्षप्रतिवंशकानि रजता–रजतमयी भूमिर्येषां तानि रजतभूमानि× मणिवंशकानि लोहिताक्षप्रतिवंशकानि रजतभूमानि नानामणिरत्नानि–नानामणिरत्नमयानि जालपञ्जराणि–गवाक्षापरपर्यायाणि येषु *तानि तथा, ३४अङ्को–रत्नविशेषस्तन्मयाः पक्षास्तदेकदेशभूताः पक्षबाहवोऽपि तदेकदेशभूता एवाङ्कमय्यः, आह च –जीवाभिगममूलटीकाकृत्–"अङ्कमयाः पक्षास्तदेकदेशभूता एवं पक्षबाहवोऽपि द्रष्टव्याः" [ ] इति, ३५

४ "वज्रमयः...कूडो माडभागः ३१ रजतमयः उत्सेधः–शिखरम्" -जीवा० वि० पृ० २०४ पं० १३। -जीवा० वि० पृ० २०४ प०१४।
× "प्राकृतत्वात् समासान्तः"–राय० वि०। *"पदानामनन्वयोपनिपातः प्राकृतत्वात्"–राय० वि०। -जीवा० वि० पृ० १८० पं० ८।

रयया[३६]मईओ पट्टियाओ जाय[३७]रूवमईओ ओहाडणीओ वइरा[३८]मईओ उवरिपुञ्छणीओ सव्व[३९]सेयरययामये छायणे अंक[४०]मयकणगकूडतवणिज्जथूभियागा सेया[४१] संख[४२]तलविमलनिम्मलदधिघणगोखीरफेणरययणिगरप्पगासा तिल[४३]गरयणद्धचंदचित्ता

ज्योतीरसं नाम रत्नं तन्मया वंशाः–महान्तः पृष्ठवंशाः महतां पृष्ठवंशानामुभयतस्तिर्यक् स्थाप्यमाना वंशाः ○कवेल्लुकानि प्रतीतानि ३६ रजतमय्यः पट्टिकाः–वंशानामुपरि कम्बास्थानीयाः ३७ जातरूपं–सुवर्णविशेषस्तन्मय्यः अवघाटिन्यः आच्छादनहेतुकम्बोपरिस्थाप्यमानमहाप्रमाणकिलिञ्चस्थानीयाः ३८ वज्रमय्यो–वज्ररत्नात्मिका अवघाटनीनामुपरि पुञ्छन्यो–निबिडतराच्छादनहेतुश्लक्ष्णतरतृणविशेषस्थानीयाः, उक्तं च +जीवाभिगममूलटीकाकारेण–"ओहाडणी हारग्रहणं ? महत् क्षुल्लकं च पुञ्छनी" [ ] इति। ३९ सर्वश्वेतं रजतमयं पुञ्छनीनामुपरि –कवेल्लुकानामध आच्छादनम् ४० अङ्कमयानि बाहुल्येनाङ्करत्नमयानि पक्ष–पक्षबाह्वादीनामङ्करत्नात्मकत्वात् कनकानि कनकमयानि कूटानि–महान्ति शिखराणि येषां तानि कनककूटानि तपनीयाः–तपनीयस्तूपिकानि४ एतेन यत् प्राक् सामान्येन उत्क्षिप्तम्–'सेया वरकणगथूभियागा' [पृ० १५६ पं० ५] इति तदेव प्रपञ्चतो भावितमिति। सम्प्रति तदेव श्वेतत्वमुपसंहारव्याजेन भूय उपदर्शयति–४१ श्वेतानि, ४२ श्वेतत्वमेवोपमया द्रढयति–विमलं विगतमलं यत् शङ्खतलं–शङ्खस्योपरितनो भागो यश्च निर्मलो दधिघनः घनीभूतं दधि गोक्षीरफेनो रजतनिकरश्च तद्वत् प्रकाशः–प्रतिभासो येषां तानि तथा ४३ तिलकरत्नानि

○हिन्दीभाषायाम् 'कवलु' शब्देन प्रतीतानि गुजरातीभाषायाम् 'नलिया' शब्दवाच्यानि। +जीवा० वि० पृ० १८० पं० १४। तत्र 'हार' 'स्थाने' हीरशब्दः। अस्य 'हार' इत्यशस्य सम्पूर्णो भावो नावगतः। – कवेल्लुका–भा० २। ४ततः पदत्रयस्यापि कर्मधारयः"–राय०वि०।

रायपसेण-
इयं।

नाणा[४४]मणिदामालंकिया अंतो[४५] बहिं च सण्हा तवणिज्ज[४६]वालुयापत्थडा सुहफासा[४७] सस्सिरीयरूवा[४८] पासाईया[४९] दरिसणिज्जा अभिरूवा पडिरूवा।

[९९] तेसिं णं दाराणं उभओ[२] पासे दुहओ[३] निसीहियाए सोलस[४] सोलस चंदणकलसपरिवाडीओ पन्नत्ताओ, ते[५] णं चंदणकलसा वरकमलपइट्ठाणा[६] सुरभिवरवारि[७]पडिपुण्णा चंदणकयचच्चागा[८] आविद्ध[९]कंठेगुणा

पुण्ड्रविशेषास्तैरर्द्धचन्द्रैश्च चित्राणि–नानारूपाणि तिलकरत्नार्द्धचन्द्रचित्राणि, क्वचित् ≈'सण्हतलविमलनिम्मलदहिघणगोखीरफेणरययनियरप्पगासद्धचंदचित्ताइं' इति पाठः, तत्र पूर्ववत् पृथक् पृथक् व्युत्पत्तिं कृत्वा पश्चात् पदद्वयस्य कर्मधारयः, ४४ नानामणयो–नानामणिमयानि दामानि–मालास्तैरलङ्कृतानि नानामणिदामालङ्कृतानि ४५ अन्तर्बहिश्च श्लक्ष्णानि–श्लक्ष्णपुद्गलस्कन्धनिर्मापितानि ४६ तपनीयाः–तपनीयमय्यो या *वालुकाः–सिकतास्तासां प्रस्तटः–प्रस्तरो येषु तानि तथा ४७ सुखः–सुखहेतुः स्पर्शो येषु तानि सुखस्पर्शानि ४८ सश्रीकरूपाणि ४९ प्रासादीयानि [पृ० ११ पं० १२] इत्यादि प्राग्वत्।

[९९] १ तेषां द्वाराणां प्रत्येकम्–२उभयोः पार्श्वयोरेकैकनैषेधिकीभावेन ३द्विधातो द्विप्रकारायां नैषेधिक्याम्, नैषेधिकी–निषीदनस्थानम्। आह च [४]जीवाभिगमसूलटीकाकृत्–"नैषेधिकी निषीदनस्थानम्" [ ] इति, प्रत्येकं ४ षोडश षोडश चन्दनकलशपरिपाट्यः प्रज्ञप्ताः, ५ ते च चन्दनकलशा ६ वरं–प्रधानं यत् कमलं तत् प्रतिष्ठानम्–आधारो येषां ते वरकमलप्रतिष्ठानाः, तथा ७सुरभिवरवारिप्रतिपूर्णाः ८ चन्दनकृतचर्चाकाः–चन्दनकृतोपरागाः ९ आविद्धः–आरोपितः कण्ठे गुणो–रक्तसूत्ररूपो येषां ते आवि-

≈विवरणकारदर्शितं पाठान्तरम्। * भाषायाम् 'वाळ' वा 'वेळू' इति। [४] जीवा० वि० पृ० २०५ पं० ४।

[10]पंउमुप्पलपिहाणा सव्वरयणा[11]मया अच्छा जाव पडिरूवगा मह[12]या मह[13]याइंदकुंभसमाणा प[14]न्नत्ता स[15]मणाउसो!।

[१००] तेसिं[1] णं दाराणं उभ[2]ओ पासे दु[3]हओ णिसीहियाए सो[4]लस सोलस णाग[5]दन्तपरिवाडीओ पन्नत्ताओ, ते णं णागदंता मुत्ता[6]जालंतरुसियहेमजालगवक्खजाल[7]खिंखिणीघंटाजालपरिक्खित्ता अब्भु[8]ग्गया अभि[9]णिसिट्ठा तिरि[10]यंसुसंपरिग्गहिया

द्ध*कण्ठेगुणाः, १० पद्ममुत्पलं च यथायोगं पिधानं येषां ते पद्मोत्पलपिधानाः ११ 'सव्वरयणामया' यावत् 'पडिरूवगा' इति विशेषणकदम्बकं प्राग्वत् [पृ० १९ पं० ८] १२ अतिशयेन महान्तः १३ महेन्द्रकुम्भसमानाः–कुम्भानामिन्द्र =इन्द्रकुम्भः महांश्चासौ इन्द्रकुम्भश्च तस्य समाना महेन्द्रकुम्भसमानाः–महाकलशप्रमाणाः १४ प्रज्ञप्ताः हे १५ श्रमण! हे आयुष्मन्।

[१००] १ तेषां द्वाराणां प्रत्येकम्–२उभयोः पार्श्वयोरेकैकनैषेधिकीभावेन या ३ द्विधा नैषेधिकी तस्यां प्रत्येकं ४ षोडश षोडश ५ नागदन्तपरिपाट्यः प्रज्ञप्ताः, =नागदन्ता–अंकुटकाः, ६ ते च नागदन्ता ७ मुक्ताजालानामन्तरेषु यानि उत्सृतानि–लम्बमानानि हेमजालानि–सुवर्णमयदामसमूहा यानि च गवाक्षजालानि–गवाक्षाकृतिरत्नविशेषमालासमूहा यानि च किङ्किणीघण्टाजालानि–क्षुद्रघण्टासमूहास्तै परिक्षिप्ताः सर्वतो व्याप्ताः ८अभिमुखमुद्गताः अभ्युद्गताः–अग्रिमभागे मनाक् उन्नता इति भावः ९अभिमुखं–बहिर्भागाभिमुखं निसृष्टा–निर्गता अभिनिसृष्टाः १०तिर्यक् भित्तिप्रदेशैः सुष्ठु अतिशयेन सम्यक्–मनागप्यचलनेन परिगृहीताः सुसंपरिगृहीताः,

* " 'कण्ठेकाल'वत् सप्तम्या अलुक्"–राय० वि०। – "राजदन्तादिदर्शनाद् 'इन्द्र' शब्दस्य पूर्वनिपातः"–राय० वि० [पृ०५३ टिप्पण०]

= "नागदन्तकौ नर्कुटकौ अंकुटकौ इत्यर्थः"–जीवा० वि० पृ० २०५ पं० ११। भाषाप्रतीत 'नकूचा' शब्देन 'नर्कुटक' शब्दस्य साम्यं

[11]अहेपन्नगद्धरूवा [12]पन्नगद्धसंठाणसंठिया [13]सव्ववयरामया अच्छा जाव [पृ० १९ पं० ५] पडिरूवा [14]महया महया [15]गयदंतसमाणा [16]पन्नत्ता सम[17]णाउसो!। [18]तेसु णं णागदंतएसु [19]बहवे किण्हसुत्तबद्धा [20]वग्घारितमल्लदामकलावा [21]णीलं० लोहित० हालिद्द० सुकिलसुत्तबद्धा वग्घारितमल्लदामकलावा, [22]ते णं दामा [23]तवणिज्जलंबूसगा [24]सुवण्णपयरगमंडिया [25]णाणाविहमणिरयणविविहहारउवसोभियसमुदया [26]जाव सिरीए अईव अईव उवसोभेमाणा

११अधः-अधस्तनं यत् पन्नगस्य सर्पस्यार्धं तस्येव रूपम्-आकारो येषां ते अधःपन्नगार्धरूपाः-अधःपन्नगार्द्धवदतिसरला दीर्घाश्चेति भावः, एतदेव व्याचष्टे-१२पन्नगार्द्धसंस्थानसंस्थिताः अधःपन्नगार्द्धसंस्थानाः १३ सर्वात्मना वज्रमयाः 'अच्छा' इत्यारभ्य 'जाव-पडिरूवा' इति विशेषणजातं प्राग्वत् [पृ० १९ पं० ८] १४ अतिशयेन महान्तो १५ गजदन्तसमानाः-गजदन्ताकाराः १६ प्रज्ञप्ताः हे १७ श्रमण! हे आयुष्मन्!। १८ तेषु नागदन्तेषु १९ बहवः कृष्णसूत्रबद्धाः २० 'वग्घारिय' इति अवलम्बिता माल्यदामकलापाः-पुष्पमालासमूहाः २१ बहवो नीलसूत्रावलम्बितमाल्यदामकलापाः एवं लोहित-हारिद्र-शुक्लसूत्रबद्धा अपि वाच्याः। २२ तानि दामानि २३ तपनीयः-तपनीयमयो लम्बूसगो-दाम्नामग्रिमभागे मण्डनविशेषो येषां तानि तपनीयलम्बूसकानि, पार्श्वतः सामस्त्येन २४ सुवर्ण-प्रतरेण-सुवर्णपत्रकेण मण्डितानि सुवर्णप्रतरमण्डितानि २५ नानारूपाणां मणीनां रत्नानां च ये विविधा-विचित्रवर्णा हाराः-अष्टादशसरिकाः अर्द्धहारा-नव-सरिकास्तैरुपशोभितः समुदायो येषां तानि तथा। २६ 'जाव सिरीए अईव अईव उवसोभेमाणा चिट्ठंति' इति अत्र 'यावत्' करणादेवं परिपूर्णः पाठो द्रष्टव्यः-'ईसिं अण्णमण्णमसंपत्ता......[पृ० १०१ पं० २] सव्वओ समंता आपूरेमाणा आपू-

प्रतिभाति [1]। 'अकोडा' इति भाषायाम्। ÷ भाषायाम् 'पतरूं' इति। = भाषायाम् 'नवसरो हार' इति।

चिट्ठंति। तेसिं[27] णं णागदंताणं उवरिं अन्नाओ[28] सोलस सोलस नागदंतपरिवाडीओ पन्नत्ता[29] ते णं णागदंता तं चेव जाव गयदंतसमाणा पन्नत्ता समणाउसो[30]! तेसु[31] णं णागदंतएसु बहवे[32] रययामया सिक्कगा[33] पन्नत्ता, तेसुं[34] णं रययामएसु सिक्कएसु बहवे[35] वेरुलियामईओ धूवघडीओ[36] पं० ताओ णं धूवघडीओ कालागुरुपवरकुंदुरुक्कतुरुक्कधूवमघमघंतगंधुद्धुयाभिरामाओ सुगंधवरगंधियातो गंधवट्टिभूयाओ ओरालेणं मणुण्णेणं मणहरेणं घाणमणणिव्वुइकरेणं[37] गंधेणं ते पदेसे सव्वओ समंता आपूरेमाणा आपूरेमाणा [पृ० १०२ पं० १-२] जाव चिट्ठंति।

[१०१]तेसिं[1] णं दाराणं उभओ[2] पासे दुहओ[3] णिसीहियाए सोलस[4] सोलस सालभंजियापरिवाडिओ पन्नत्ताओ,

रेमाणा सिरीए अईव अईव उवसोभेमाणा चिट्ठंति' एतच्च प्रागेव [पृ० १०१ पं० ६] यानविमानवर्णने व्याख्यातमिति न भूयो व्याख्यायते। २७ तेषां नागदन्तकानामुपरि प्रत्येकम्-२८अन्याः षोडश षोडश नागदन्तपरिपाट्यः प्रज्ञप्ताः २९ ते च नागदन्ताः 'यावत्' करणात् 'मुत्ताजालंतरुसियहेमजाल...इत्यादि [पृ० १६२ पं० ३] प्रागुक्तं सर्वं द्रष्टव्यं यावत्-गजदन्तसमानाः प्रज्ञप्ताः हे ३०श्रमण! हे आयुष्मन्!। ३१ तेषु नागदन्तेषु ३२ बहूनि रजतमयानि ३३ सिक्क[4]कानि प्रज्ञप्तानि, ३४ तेषु च रजतमयेषु सिक्ककेषु ३५ बह्वयो वैडूर्यमय्यो-वैडूर्यरत्नात्मिका ३६ धूपघटिकाः 'कालागुरु'......इत्यादि प्राग्वत् [पृ० ८ पं० २] नवरम्-३७घ्राणेन्द्रिय-मनोनिर्वृतिकरेण।

[१०१] १ तेषां द्वाराणां प्रत्येकम्-२ उभयोः पार्श्वयोरेकैकनैषेधिकीभावेन ३ द्विधातो-द्विप्रकारायां नैषेधिक्यां ४ षोडश

४ यस्योपरि दध्यादिभाण्डानि स्थाप्यन्ते तद् भाषायाम् 'शीकुं वा छीकुं' इति प्रसिद्धम्।

ताओ णं सालभंजियाओ [6]लीलट्ठियाओ [7]सुपइट्ठियाओ [8]सुअलंकियाओ [9]णाणाविहरागवसणाओ [10]णाणामल्लपिणद्धाओ [11]मुट्ठिगिज्झसुमज्झाओ [12]आमेलगजमलजुयलवट्टियअब्भुन्नयपीणरइयसंठियपीवरपओहराओ [13]रत्तावंगाओ [14]असियकेसीओ [15]मिउविसयपसत्थलक्खणसंवेल्लियग्गसिरयाओ ईसिं[16] असोगवरपायवसमुट्ठियाओ [17]वामहत्थ-

षोडश शालभञ्जिकापरिपाटयः प्रज्ञप्ताः, ५ ताश्च शालभञ्जिका ६ लीलया–ललिताङ्गनिवेशरूपया स्थिताः लीलास्थिताः, ७ सुष्ठु–मनोज्ञतया प्रतिष्ठिताः सुप्रतिष्ठिताः ८सुष्ठु–अतिशयेन रमणीयतया अलङ्कृताः स्वलङ्कृताः ९नानाविधो–नानाप्रकारो रागो येषां तानि नानाविधरागाणि तानि वसनानि–वस्त्राणि यासां तास्तथा १० नानारूपाणि माल्यानि–पुष्पाणि पिनद्धानि–आविद्धानि यासां ता नानामाल्यपिनद्धाः,* ११ मुष्टिग्राह्यं सुष्ठु–शोभनं मध्यं मध्यभागो यासां तास्तथा, १२पीनं–पीवरं रचितं संस्थितं–संस्थानं यकाभ्यां तौ पीनरचितसंस्थानौ आमेलकः–आपीडः–शेखरकः इत्यर्थः तस्य यमलयुगलं–समश्रेणिकं यद् युगलं तद्वत् वर्त्तितौ बद्धस्वभावौ–उपचितकठिनभावाविति भावः–अभ्युन्नतौ पीनरचितसंस्थानौ च पयोधरौ यासां तास्तथा, १३ रक्तोऽपाङ्गो–नयनोपान्तरूपो यासां तास्तथा, १४ असिताः–कृष्णाः केशा यासां ता असितकेश्यः, एतदेव सविशेषमाचष्टे–१५ मृदवः–कोमलाः विशदा निर्मलाः प्रशस्तानि–शोभनानि अस्फुटिताग्रत्वप्रभृतीनि लक्षणानि येषां ते प्रशस्तलक्षणाः संवेल्लितं–संवृतम् अग्रं येषां ते संवेल्लिताग्राः शिरोजाः–केशा यासां ता मृदुविशदप्रशस्तलक्षणसंवेल्लिताग्रशिरोजाः, १६ ईषत्–मनाक् अशोकवरपादपे समुपस्थिताः–आश्रिता ईषदशोकवरपादपसमुपस्थिताः तथा १७ वामहस्तेन गृहीतमग्रं शालायाः–शाखायाः अर्थादशोकपादपस्य यकाभिस्ता वामहस्तगृहीताग्रशालाः

* "क्तान्तस्य परिनिपातः सुखादिदर्शनात्"–राय० वि० [पृ०४८ टिप्पण १।

रायपसेणइयं । ॥१६६॥

ग्गहियग्गसालाओ ईसिं[१८] अद्धच्छिकडक्खचिट्ठिएणं लूसमाणीओ[१९] विव चक्खुल्लोयणलेसेहि[२०] य अन्नमन्नं खिज्जमाणीओ विव पुढविपरिणामाओ[२१] सासयभावमुवगयाओ[२२] चन्दाणणाओ[२३] चंदविलासिणीओ[२४] चंदद्धसमणिडालाओ[२५] चंदाहियसोमदंसणाओ[२६] उक्का[२७] विव उज्जोवेमाणाओ विज्जुघणमिरियसूरदिप्पंततेयअहिययरसन्निकासाओ[२८] सिंगारागाररचारुवेसाओ[२९] पासाइयाओ जाव [पृ० ११ पं० १२] चिट्ठंति ।

[१०२] तेसिं[१] णं दाराणं उभओ[२] पासे[३] दुहओ णिसीहियाए[४] सोलस[५] सोलस

१८ईषत्–मनाक् अर्धं–तिर्यग् वलितम् अक्षि येषु कटाक्षरूपेषु चेष्टितेषु तैः १९मुष्णन्त्य इव सुरजनानां मनांसि २०अन्योऽन्यं परस्परम् चक्षुषां लोकनेन–आलोकनेन ये लेशाः–संश्लेषास्तैः खिद्यमाना इव किमुक्तं भवति ? एवं नाम तास्तिर्यग्वलिताक्षिकटाक्षैः परस्परमवलोकमाना अवतिष्ठन्ति यथा नूनं परस्परं सौभाग्यासहनतस्तिर्यग्वलिताक्षिकटाक्षैः परस्परं खिद्यन्ति इवेति, २१ पृथिवीपरिणामरूपाः २२ शाश्वतभावमुपगता विमानवत् २३ चन्द्र इवाननं मुखं–यासां तास्तथा २४ चन्द्रवत् मनोहरं विलसन्तीत्येवंशीलाश्चन्द्रविलासिन्यः २५ चन्द्रार्द्धसमम्–अष्टमीचन्द्रसमानं ललाटं यासां तास्तथा २६ चन्द्रादपि अधिकं सोमं–सुभगकान्तिमत् दर्शनम्–आकारो यासां तास्तथा २७ उल्का इव उद्द्योतमानाः २८ विद्युतो ये घनाः–बहलतरा मरीचयस्तेभ्यो यच्च सूर्यस्य दीप्यमानं दसं–तेजस्तस्मादपि अधिकतरः सन्निकाशः–प्रकाशो यासां तास्तथा, '२९ सिंगारागारचारुवेसाओ...अभिरूवाओ चिट्ठंति' इति प्राग्वत् [पृ० ११ पं० १२]।

[१०२] १ तेषां द्वाराणां प्रत्येकम्–२ उभयोः ३ पार्श्वयोरेकैकनैषेधिकीभावेन या ४ द्विधा नैषेधिकी तस्यां ५ षोडश षोडश

जालकडगपरिवाडीओ पन्नत्ता, ते णं जालकडगा सव्वरयणामया अच्छा जाव [पृ० १९ पं० ५] पडिरूवा ।

[१०३] तेसिं णं दाराणं उभओ पासे[3] दुहओ[4] निसीहियाए सोलस[5] सोलस घंटापरिवाडीओ[6] पन्नत्ता, तासिं[7] णं घंटाणं इमेयारूवे वन्नावासे पन्नत्ते, तंजहा-जंबूणयामईओ[8] घंटाओ वयरामयाओ[9] लालाओ णाणामणिमया[10] घंटापासा तवणिज्जामइयाओ[11] संखलाओ रययामयाओ[12] रज्जूतो। ताओ[13] णं घंटाओ ओहस्सराओ[14] मेहस्सराओ[15] हंसस्सराओ[16] कुंचस्सराओ[17] सीहस्सराओ[18] दुंदुहिस्सराओ[19] णंदिस्सराओ[20] णंदिघोसाओ[21] मंजुस्सराओ[22] मंजुघोसाओ[23]

---

६ जालकटकाः प्रज्ञप्ताः, जालकटको–जालकाकीर्णो रम्यसंस्थानः प्रदेशविशेषः, ७ ते च जालकटकाः 'सव्वरयणामया...जाव पडिरूवा' इति [पृ० १९ पं० ८] प्राग्वत् ।

[१०३] १तेषां द्वाराणां प्रत्येकम्–२उभयोः ३ पार्श्वयोः ४द्विधातो नैषेधिक्यां ५षोडश षोडश ६घण्टापरिपाट्यः प्रज्ञप्ताः, ७तासां च घण्टानामयमेतद्रूपो वर्णावासो–वर्णकनिवेशः प्रज्ञप्तः, तद्यथा–८ जम्बूनदमय्यो घण्टाः ९ वज्रमय्यो लालाः १० नानामणिमया घण्टापार्श्वाः ११ तपनीयमय्यः शृङ्खलाः यासु ता अवलम्बितास्तिष्ठन्ति १२ रजतमय्यो रज्जवः १३ ताश्च घण्टाः १४ओघेन–प्रवाहेण स्वरो यासां ता ओघस्वराः १५ मेघस्येव अतिदीर्घः स्वरो यासां ता मेघस्वराः १६ हंसस्येव मधुरः स्वरो यासां ता हंसस्वराः, एवं १७ क्रौञ्चस्वराः १८ सिंहस्येव च प्रभूतदेशव्यापी स्वरो यासां ताः सिंहस्वराः एवं १९ दुन्दुभिस्वराः २० नन्दिस्वराः द्वादशविधतूर्यसङ्घातो नन्दिः २१ नन्दिवत् घोषो–ह्रादो यासां ता नन्दिघोषाः २२ मञ्जुः–प्रियः स्वरो यासां ता मञ्जुस्वराः, एवं २३मञ्जुघोषाः,

सुस्सराओ सुस्सरघोसाओ उरालेणं मणुन्नेणं मणहरेणं कन्नमणनिव्वुइकरेणं सद्देणं ते पदेसे सव्वओ समंता आपूरेमाणाओ आपूरेमाणाओ जाव चिट्ठंति ।

[१०४]तेसिं[1] णं दाराणं उभओ पासे दुहओ[2] णिसीहियाए सोलस[3] सोलस वणमालापरिवाडीओ[4] पन्नत्ताओ, ताओ[5] णं वणमालाओ णाणा[6]मणिमयदुमलयकिसलयपल्लवसमाउलाओ छप्पय[7]परिभुज्जमाणसोहंतसस्सिरीयाओ पासाईयाओ...[पृ० ११ पं० १२] ।

[१०५] तेसिं[1] णं दाराणं उभओ पासे दुहओ[2] णिसीहियाए सोलस[3] सोलस पगंठगा[4] पन्नत्ता, ते[5] णं पगंठगा

निव्वुइना ? २४ सुस्वराः २५सुस्वरघोषाः, 'उरालेणं' इत्यादि [पृ० १०१ पं० ३ तथा ९] प्राग्वत् ।

[१०४] १ तेषां द्वाराणां प्रत्येकमुभयोः पार्श्वयोः २ द्विधातो नैषेधिक्यां ३ षोडश षोडश ४ वनमालापरिपाट्यः प्रज्ञप्ताः, ५ ताश्च वनमालाः ६नानाद्रुमाणां नानालतानां च यानि किशलयानि ये च पल्लवास्तैः समाकुलाः—सम्मिश्राः ७ षट्पदैः परिभुज्यमानाः सत्यः शोभमानाः षट्पदपरिभुज्यमानशोभमानाः अत एव सश्रीकाः ८'पासाईयाओ'इत्यादि पदचतुष्टयं प्राग्वत् [पृ० ११ पं० १२]

[१०५] १ तेषां द्वाराणां प्रत्येकमुभयोः पार्श्वयोरेकैकनैषेधिकीभावेन या २ द्विधा नैषेधिकी तस्यां ३ षोडश षोडश ४ प्रकण्ठकाः प्रज्ञप्ताः, प्रकण्ठको नाम पीठविशेषः, आह च जीवाभिगममूलटीकाकार०ः—"प्रकण्ठौ पीठविशेषौ [ ] इति, ५ ते च

---

० जीवा० वि० प्र०पृ० २०९ पं० ४ । "चूर्णिकारस्तु एवमाह—"आदर्शवृत्तौ पर्यन्तावनतप्रदेशौ पीठौ प्रकण्ठौ" इति"—जीवा० वि० प्र० पृ० २०९ प० ४ ।

अड्ढाइ[6]ज्जाइं जोयणसयाइं आयामविक्खंभेणं पण[7]वीसं जोयणसयं बाहल्ले[8]णं सव्ववयरा[9]मया अच्छा [पृ० १९ पं० ५] जाव पडिरूवा। तेसिं णं पगंठगाणं उवरिं पत्तेयं पत्तेयं पासा[10]यवडेंसगा पन्नत्ता, [11]तेणं पासायवडेंसगा अड्ढाइ[12]ज्जाइं जोयणसयाइं उड्ढं उच्चत्तेणं [13]पणवीसं जोयणसयं विक्खंभेणं अब्भुग्ग[14]यमूसिअपहसिया विव [15]विविहमणिरयणभत्तिचित्ता वाउद्धुयविजय[16]वेजयंतपडागच्छत्ताइच्छत्तकलिया

प्रकण्ठकाः प्रत्येकम्–६ अर्द्धतृतीयानि योजनशतान्यायामविष्कम्भाभ्याम् ७ पञ्चविंशं–पञ्चविंशत्यधिकं योजनशतं बाहल्येन पिण्डभावेन ८ सर्वात्मना ते प्रकण्ठकाः वज्रमया–वज्ररत्नमयाः 'अच्छा सण्हा' इत्यादि विशेषणजातं [पृ० १९ पं० ८] प्राग्वत्। ९ तेषां प्रकण्ठकानां उपरि प्रत्येकं ○प्रत्येकं १० प्रासादावतंसकाः प्रज्ञप्ताः, प्रासादावतंसका नाम प्रासादविशेषाः, उक्तं च जीवाभिगममूलटीकायाम्–"=प्रासादावतंसकौ–प्रासादविशेषौ" [ ] इति, ११ ते च प्रासादावतंसकाः– १२ अर्धतृतीयानि योजनशतानि ऊर्ध्वम् उच्चैस्त्वेन १३ पञ्चविंशं योजनशतं विष्कम्भेन, १४ अभ्युद्गता–आभिमुख्येन सर्वतो विनिर्गता उत्सृताः–प्रबलतया सर्वासु दिक्षु प्रसृता या प्रभा तया सिता इव–बद्धा इव तिष्ठन्तीति गम्यते, अन्यथा कथमिव ते अत्युच्चा निरालम्बाः तिष्ठन्तीति भावः, १५ विविधाः–अनेकप्रकारा ये मणयः–चन्द्रकान्तादयो यानि च रत्नानि–कर्केतनादीनि तेषां भक्तिभिः–विच्छित्तिविशेषैश्चित्रा–नानारूपाः आश्चर्यवन्तो वा नानाविधमणिरत्नभक्तिचित्राः, १६ वातोद्धूता–वायुकम्पिताः विजयः–अभ्युदयस्तत्सूचिका वैजय-

○ "इह एकं प्रति 'प्रत्येकम्' इति आभिमुख्ये वर्तमानः 'प्रति' शब्दः समस्यते ततो वीप्साविवक्षाया द्विर्वचनम्"–राय० वि०। = जीवा० वि० प्र० पृ० २०९ प० ७। ÷ का इति तृती-पा० ४–५।

तुंगा[17] गगणतल[18]मणुलिहंतसिहरा जालंतर[19]रयण= पंजरु[20]म्मिलिय व्व मणिकणग[21]थूभियागा वियसियसय[22]-वत्तपोंडरीयतिलगरयणद्धचंदचित्ता [23]णाणामणिदामालंकिया [24]अंतो बहिं च सण्हा तवणिज्ज[25]वालुयापत्थडा

न्त्यभिधाना याः पताका अथवा विजया इति वैजयन्तीनां पार्श्वकर्णिका उच्यन्ते तत्प्रधाना वैजयन्त्यो विजयवैजयन्त्यः पताकास्ता एव विजयवर्जिता वैजयन्त्यः, छत्रातिच्छत्राणि–उपर्युपरि स्थितान्यातपत्राणि तैः कलिता वातोद्धूतविजयवैजयन्तीपताकाच्छत्रातिच्छत्र कलिताः १७तुङ्गा–उच्चा उच्चैस्त्वेन–अर्द्धतृतीययोजनशतप्रमाणत्वात् अत एव १८गगनतलं–अम्बरतलम् +अनुलिखन्ति–अभिलङ्घयन्ति शिखराणि येषां ते तथा, १९ जालानि–जालकानि तानि च भवनभित्तिषु लोके प्रतीतानि, तदन्तरेषु विशिष्टशोभानिमित्तं रत्नानि येषु ते जालान्तर–रत्नाः, तथा २० ×पञ्जरात् उन्मीलिता इव–बहिष्कृता इव पञ्जरोन्मीलिता इव, यथा हि किल किमपि वस्तु पञ्जरात्–वंशादिमयाच्छादनविशेषात् बहिष्कृतम्–अत्यन्तमविनष्टच्छायत्वात् शोभते एवं तेऽपि प्रासादावतंसका इति भावः, तथा २१ मणि-कनकानि–मणिकनकमय्यः स्तूपिकाः–शिखराणि येषां ते मणिकनकस्तूपिकाः, तथा २२ विकसितानि यानि शतपत्राणि पुण्डरीकाणि च द्वारादौ 8 प्रतिकृतित्वेन स्थितानि तिलकरत्नानि–भित्त्यादिषु पुण्ड्रविशेषा अर्द्धचन्द्राश्च द्वारादिषु तैश्चित्राः–नानारूपा आश्चर्यभूता वा विकसितशतपत्रपुण्डरीकतिलकरत्नार्द्धचन्द्रचित्राः, तथा २३ नाना अनेकरूपाणि यानि मणिदामानि–मणिमयपुष्पमालाः तैः अलं-कृतानि शोभितानि नानामणिदामालंकृतानि≋ तथा २४ अन्तर्बहिश्च श्लक्ष्णा–मसृणाः, तथा २५ तपनीयं–सुवर्णविशेषस्तन्मय्या

="सूत्रे विभक्तिलोपः प्राकृतत्वात्"–राय०वि० । सत्या विभक्तौ 'जालतररयणा' इति युक्तम् । + 'शतृ' प्रत्ययान्त कृदन्त प्रथमाबहुबचनम्। × भाषायाम् 'पाजरू' इति । 8 प्रकृति–पा० ४ भा० १। प्रकृतत्वे–पा० ५। प्राकृतत्वे–भा० २। ≋ एतच्च विशेषणं मुद्रित एव पुस्तके।

सुह[२६]फासा सस्सिरीयरूवा [पृ० १९ पं० ५] पासादीया दरिसणिज्जा जाव दामा [पृ० १०१ पं० १]।

[१०६] तेसिं णं दाराणं उभओ पासे सोलस सोलस तोरणा पन्नत्ता, णाणामणिमया णाणामणिमएसु खंभेसु उवणिविट्ठसन्निविट्ठा जाव पउमहत्थगा। तेसिं णं तोरणाणं पत्तेयं पुरओ दो दो सालभंजियाओ पन्नत्ताओ, जहा हेट्ठा तहेव। तेसिं णं तोरणाणं पुरओ नागदंता पन्नत्ता जहा हेट्ठा जाव दामा।

वालुकायाः प्रस्तटः–प्रस्तरो येषु ते तपनीयवालुकाप्रस्तटाः, २६ 'सुहफासा. . . पासाईया' इत्यादि प्राग्वत् [पृ० १९ पं० ८] तेषां च *प्रासादवतंसकानामन्तर्भूमिवर्णनम् [पृ० ९७ पं० २] उपर्युल्लोकवर्णनम् [पृ० ९७ पं० ३] सिंहासनवर्णनम् [पृ० ९८ पं० ३] उपरि = विजयदूष्यवर्णनम् [पृ० १०० पं० १—] वज्रांकुशवर्णनम् मुक्तादामवर्णनं च यथा प्राक् [पृ० १०० पं० ३–४] यानविमाने भावितं तथा भावनीयम्।

[१०६] १ तेषां द्वाराणां प्रत्येकम् २उभयोः पार्श्वयोरेकैकनैषेधिकीभावेन या द्विधा नैषेधिकी तस्यां षोडश षोडश तोरणानि प्रज्ञप्तानि, तानि च तोरणानि ३ 'नानामणिमयानि' इत्यादि [पृ० ७९ पं० ३ तथा पं० ७] तोरणवर्णनं यानविमानमिव निरवशेषं भावनीयम्। ४ तेषां तोरणानां पुरतः प्रत्येकं ५ द्वे द्वे शालभञ्जिके, शालभञ्जिकावर्णनं प्राग्वत् [पृ० १६५ पं० १] ६ तेषां तोरणानां पुरतो द्वौ द्वौ नागदन्तकौ प्रज्ञप्तौ, तेषां च नागदन्तकानां वर्णनं यथाऽधस्तादनन्तरमुक्तं तथा वक्तव्यम् [पृ० १६२ पं० ३]

---

* 'अवतसक'–वत् 'वसतक'शब्दोऽपि साधुः–[३–२–१५६ हैमश०] = जीवा० वि० पृ० २१० पं० ६।

तेसिं णं तोरणाणं पुरओ दो दो हयसंघाडा गयसंघाडा नरसंघाडा किन्नरसंघाडा किंपुरिससंघाडा महोरगसंघाडा गंधव्वसंघाडा उसभसंघाडा सव्वरयणामया अच्छा [पृ० १९ पं० ५] जाव पडिरूवा, एवं पंतीओ वीही मिहुणाइं । तेसिं[11] णं तोरणाणं दो [12]दो पउमलयाओ जाव [पृ० १८ पं० २-३] सामलयाओ णिच्चं

नवरमत्रोपरि नागदन्तका न वक्तव्या अभावात् । ७ तेषां तोरणानां पुरतो ८ द्वौ द्वौ हयसङ्घाटौ, ○सङ्घाटशब्दो युग्मवाची यथा 'साधुसङ्घाटः' इत्यत्र, ततो द्वे द्वे हययुग्मे इत्यर्थः, एवं ९ गज-नर-किन्नर-किंपुरुष-महोरग-गन्धर्व-वृषभसङ्घाटा अपि वाच्याः, एते च कथम्भूताः ? इत्याह-'सव्वरयणामया अच्छा...'इत्यादि [पृ० १९ प०८] प्राग्वत् । यथा चामीषां हयादीनामष्टानां सङ्घाटा उक्ताः १० तथा पङ्क्तयोऽपि वीथयोऽपि मिथुनकानि च वाच्यानि, तत्र सङ्घाटाः-समानलिङ्गयुग्म रूपाः पुष्पावकीर्णकाश्च, एकदिग्व्यवस्थिता श्रेणिः-पङ्क्तिः, उभयोः पार्श्वयोः एकैकश्रेणिभावेन यत् श्रेणिद्वयं सा वीथिः, स्त्रीपुरुषयुग्मं मिथुनकम् । ११ तेषां तोरणानां पुरतो १२ द्वे द्वे पद्मलते 'यावत्' करणात् 'द्वे द्वे नागलते द्वे द्वे अशोकलते द्वे द्वे चम्पकलते द्वे द्वे चूतलते द्वे द्वे वासन्तीलते द्वे द्वे कुन्दलते द्वे द्वे अतिमुक्तकलते' [पृ० १८ पं० २-] इति परिगृह्यते, द्वे द्वे श्यामलते, एताश्च कथम्भूताः ? इत्याह-'णिच्चं कुसुमियाओ' इत्यादि 'यावत्' करणात् 'निच्चं मउलियाओ [पृ० १८ पं० ४-] मञ्जरिवडिंसगधरीओ' इति परिगृह्यते, अस्य व्या-

○ हेमअनेकार्थकोशे 'सघाटिका' शब्दो युग्मवाची प्राप्यते-"सघाटिका तु कुट्टन्यां घ्राणे युग्मेऽम्बुकण्टके" का० ४ श्लो० ३८ । "सघाडी जुयले"इति देशीनाममालावचनात् [व० ८ गा० ७] 'संघाडी' शब्दोऽपि युग्मपर्यायी बोध्य । भाषायां तु 'सघाडो'इति । संस्कृते तु 'समूह'वाची 'संघात'शब्द. प्रतीतः ।

विमानद्वारतोरणवर्णनम्।

॥१७३॥

कुसुमियाओ [पृ० १८ पं० ४] सव्वरयणामया अच्छा जाव [पृ० १९ पं० ५] पडिरूवा। तेसिं[13] णं तोरणाणं पुरओ [14]दो दो दिसासोवत्थिया पन्नत्ता सव्व[15]रयणामया अच्छा जाव [पृ० १९ पं० ५] पडिरूवा। तेसि णं तोरणाणं पुरओ [16]दो दो चंदणकलसा पन्नत्ता, ते णं चंदणकलसा वरकमलपइट्ठाणा तहेव [पृ० १६१ पं० ४-]। तेसि णं तोरणाणं पुरतो [17]दो दो भिंगारा पन्नत्ता, ते णं भिंगारा वरकमलपइट्ठाणा जाव [पृ० १६१ पं० ४] म[18]हया मत्तगयमुहागितिसमाणा पन्नत्ता समणाउसो!। तेसिं[19] णं तोरणाणं पुरओ [20]दो दो आयंसा पन्नत्ता, तेसिं[21] णं आयंसाणं इमेयारूवे वन्नावासे पन्नत्ते, तंजहा-

ख्यानं प्राग्वत् [पृ० १८ पं० १०] पुनः कथम्भूताः? इत्याह-'सव्वरयणामया जाव' अत्रापि 'यावत्' करणात् 'अच्छा सण्हा' इत्यादिविशेषणसमूहपरिग्रहः, स च प्राग्वदेव [पृ० १९ पं० ८] भावनीयः, १३ तेषां तोरणानां पुरतः प्रत्येकं १४ द्वौ द्वौ दिक्सौवस्तिकौ-दिक्प्रोक्षकौ ते च सर्वे ○'जाम्बूनदमया' क्वचित् पाठः। १५'सव्वरयणामया...अच्छा' इत्यादि प्राग्वत् [पृ०१९ पं० ८] १६द्वौ द्वौ चन्दनकलशौ प्रज्ञप्तौ, वर्णकः-चन्दनकलशानां 'वरकमलपइट्ठाणा' इत्यादिरूपः [पृ०१६१ पं०१२] सर्वः प्राक्तनो वक्तव्यः, १७द्वौ द्वौ भृङ्गारौ, तेषामपि कलशानामिव वर्णको वक्तव्यः, [पृ० १६१ पं० १२] नवरं पर्यन्ते १८ 'महया मत्तगयमहामुहागिइसमाणा पन्नत्ता समणाउसो!' इति वक्तव्यम् मत्तो यो गजस्तस्य महत्-अतिविशालं यत् मुखं तस्याकृतिः-आकारस्तत्समानाः-तत्सदृशाः प्रज्ञप्ताः। १९ तेषां तोरणानां पुरतो २० द्वौ द्वावादर्शकौ प्रज्ञप्तौ, तेषां २१ चादर्शकानामयमेतद्रूपो वर्णावासो-वर्णकनिवेशः प्रज्ञप्तः तद्यथा-

○ विवरणकारदर्शित पाठान्तरम्।

॥१७४॥

तवणिज्जमया[22] पगंठगा○–अंकमया[23] मंडला अणुग्घसितनिम्मलाते[24] छायाते समणुबद्धा चंदमंडलपडिणिकासा[25] महया[26] महया अद्धकायसमाणा[27] पन्नत्ता समणाउसो ! । तेसि[28] णं तोरणाणं पुरओ दो दो[29] वइरनाभथाला पन्नत्ता अच्छतिच्छडियसालितंदुलणहसंदिट्ठपडिपुन्ना[30] इव चिट्ठंति सव्वजंबूणयमया[31] जाव पडिरूवा महया[32] महया रहचक्कवालसमाणा[33] पन्नत्ता समणाउसो ! ।

२२ तपनीयमयाः प्रकण्ठकाः–पीठविशेषाः, २३ अङ्कमयानि–अङ्करत्नमयानि मण्डलानि यत्र प्रतिबिम्बसम्भूतिः २४ अवघर्षणमव–घर्षितम् भूत्यादिना निर्मार्जनमित्यर्थः अवघर्षितस्याऽभावोऽनवघर्षितं तेन निर्मला अनवघर्षितनिर्मला तया छायया समनुबद्धा–युक्ताः २५ चन्द्रमण्डलसदृशाः २६ अतिशयेन महान्तः–२७ अर्द्धकायसमानाः–कायार्द्धप्रमाणाः प्रज्ञप्ता हे श्रमण ! हे आयुष्मन् ! । २८ तेषां तोरणानां पुरतो २९ द्वे द्वे वज्रनाभे वज्रमयो नाभिर्ययोस्ते वज्रनाभे स्थाले प्रज्ञप्ते–तानि च स्थालानि तिष्ठन्ति, ३० अच्छा निर्मलाः शुद्धस्फटिकवत् त्रिच्छटिताः त्रीन् वारान् ⊖छटिताः अत एव नखसन्दष्टाः नखाः–नखिकाः सन्दष्टा मुशलादिभिः त्रुटिता येषां ते तथा अच्छैस्त्रिच्छटितैः शालितन्दुलैर्नखसन्दष्टैः परि=पूर्णानीव ×पृथ्वीपरिणामरूपाणि तानि तथा केवलमेवमाकाराणी-त्युपमा, तथा चाह–३१ सर्वात्मना जम्बूनदमयानि 'अच्छा...सण्हा' इत्यादि प्राग्वत् [पृ० १९ पं०८] ३२ अतिशयेन महान्ति ३३ रथ-

○–गा वेरुलियमया सुरया वइरामया दोवारगा नानामणिमया मडला–वि० बा० । – "भावे 'क्त' प्रत्ययः"–राय० वि० । ⊖ "सुखादि–दर्शनात् क्तान्तस्य परनिपातः"–राय० वि० । पृ० ४८ टिप्पण: । भाषायाम्–'छडेला चोखा' । = पूर्णानव पृथिवी–पा० ४–५ । भा० १ । × पृथिवीव पृथिवीप–भा० २ ।

तेसिं[34] णं तोरणाणं पुरओ [35]दो दो पातीओ, ताओ[36] णं पाईओ [37]सच्छोदगपरिहत्थाओ ⊖[38]णाणाविहस्स फलह-रियगस्स⌐ बहु पडिपुन्नाओ विव चिट्ठंति सव्वरयणामईओ अच्छा जाव [पृ० १९ पं० ५] पडिरूवाओ [39]महया महया [40]गोकलिंजरचक्कसमाणीओ पन्नत्ताओ समणाउसो!। तेसिं[41] णं तोरणाणं पुरओ [42]दो दो सुपइट्ठा पन्नत्ता [43]णाणा+विहभंडविरइया इव चिट्ठंति

चक्रसमानानि प्रज्ञप्तानि हे श्रमण! हे आयुष्मन्!। ३४ तेषां तोरणानां पुरतो ३५ द्वे द्वे पात्र्यौ प्रज्ञप्ते, ३६ ताश्च पात्र्यः ३७ स्वच्छपानीयपरिपूर्णाः ३८§नानाविधैः फलहरितैर्हरितफलैर्बहु-प्रभूतं प्रतिपूर्णा इव तिष्ठन्ति न खलु तानि फलानि किंतु तथारूपाः शाश्वतभावमुपागताः पृथ्वीपरिणामाः ततः उपमानमिति। 'सव्वरयणामईओ' इत्यादि प्राग्वत् [पृ० १९ पं० ८] ३९ अतिशयेन महत्यो ४० गोकलिञ्जरचक्रसमानाः प्रज्ञप्ताः हे श्रमण! हे आयुष्मन्!। ४१ तेषां तोरणानां पुरतो ४२ द्वौ सुप्रतिष्ठकौ-आधारविशेषौ प्रज्ञप्तौ, ते च सुप्रतिष्ठकाः सुसर्वौषधिप्रतिपूर्णाः [प्र० पृ० +टिप्पण] ४३नानाविधैः पञ्चवर्णैः प्रसाधनभाण्डैश्च बहुपरिपूर्णा इव तिष्ठन्ति, उपमाभावना

⊖ णाणामणिपचवन्नस्स फल-वि० वा०। ⌐ "अत्र षष्ठी तृतीयार्थे ⌐बहुवचने च एकवचनं प्राकृतत्वात्"-राय० विव०। + अत्र मूलपाठ-विवरणकारलब्धपाठयोर्भेदः। अत्रैव स्थले जीवाजीवाभिगमसूत्रे "णाणाविधपसाहणगभंडविरचिया सव्वोसधिपडिपुण्णा" इति पाठो लभ्यते-पृ० २११ पं० ९। पाठश्चाय प्रस्तुतसूत्रविवरणानुसारी। § अस्य विवरणस्य मूलपाठः सर्वप्रतिषु मुद्रितपुस्तके च 'णाणाविहस्स फलहरियगस्स⌐ बहुपडिपुन्नाओ विव' इत्येव दृश्यते तथापि मुद्रितपुस्तके विवरणे 'बहुपडिपुन्नेति चैकवचन प्राकृतत्वात्' इति विलक्षणः पाठश्चिन्तनीयः।

⌐'णाणाविहाणं फलहरियगाणं' इति बहुवचन समुचितम् तथापि एतद् एकवचन बहुवचनार्थे बोध्यम्।

सव्वरयणामया अच्छा [पृ० १९ पं० ५] जाव पडिरूवा। तेसिं[45] णं तोरणाणं पुरओ [46]दो दो मणोगुलियाओ पन्नत्ताओ, तासुं[47] णं मणोगुलियासु बहवे सुवन्न[48]-रूप्पमया फलगा पन्नत्ता, तेसुं[49] णं सुवन्नरूप्पमएसु फलगेसु बहवे वयरा[50]मया नागदंतया पन्नत्ता, तेसुं[51] णं वयरामएसु णागदंतएसु [52]बहवे वयरामया सिक्कगा पन्नत्ता, तेसुं[53] णं वयरामएसु सिक्कगेसु किण्हसुत्त[54]सिक्कगवच्छिता णीलसुत्त[55]सिक्कगवच्छिया लोहियसुत्तसिक्कगवच्छिया हालिद्द-सुत्तसिक्कगवच्छिया सुक्किलसुत्तसिक्कगवच्छिया बहवे [56]वायकरगा

प्राग्वत्, [पृ० १७५ पं० ६] ४४ 'सव्वरयणामया' इत्यादि तथैव [पृ० १९ पं० ५ तथा ८] ४५ तेषां तोरणानां पुरतो ४६ द्वे द्वे मनोगुलिके प्रज्ञप्ते मनोगुलिका नाम पीठिका, उक्तं च ⁄जीवाभिगममूलटीकायाम्–"मनोगुलिका नाम पीठिका" [ ] इति। ८ताश्च मनोगुलिकाः सर्वात्मना वैडूर्यमय्यः 'अच्छा' इत्यादि प्राग्वत् [पृ० १९ पं० ५]। ४७ तासु मनोगुलिकासु ४८ सुवर्णमयानि रूप्यमयानि च फलकानि प्रज्ञप्तानि, ४९ तेषु सुवर्णरूप्यमयेषु फलकेषु बहवो ५० वज्रमया नागदन्तकाः–अङ्कुटकाः ५१ तेषु च नागदन्तकेषु ५२बहूनि =रजतमयानि सिक्ककानि प्रज्ञप्तानि, ५३तेषु च रजतमयेषु सिक्ककेषु ५६बहवो वातकरका–जलशून्याः करकाः–इत्यर्थः–प्रज्ञप्ताः, तद्यथा–५४ ○गवच्छः–आच्छादनम् गवच्छाः सञ्जाता एष्विति गवच्छिताः कृष्णसूत्रैः–कृष्णसूत्रमयैर्गवच्छैरिति गम्यते, सिक्ककेषु गवच्छिताः कृष्णसूत्रसिक्ककगवच्छिता एवं ५५ नीलसूत्रसिक्ककगवच्छिताः' इत्याद्यपि भावनीयम्, ते च वातकरकाः

⁄ जीवा० वि० पृ० २१३ प० १२। ८ प्राप्तप्रतिमूलपाठे अस्य वाक्यस्य मूलपाठो न दृश्यते। अत्र स्थले मुद्रितजीवाजीवाभिगमसूत्रेऽपि एवमेव पृ० २११ प० १०। = मूलपाठे वयरामय-वज्रमय-इति। ○ जीवाजीवाभिगमविवरणे 'गवस्थ' शब्दो लभ्यते–प्र० पृ० २१४ पं० ३।

पन्नत्ता [57]सव्ववेरुलियमया अच्छा [पृ०१९ पं० ५] जाव पडिरूवा। तेसिं[58] णं तोरणाणं पुरओ [59]दो दो चित्ता रयण[60]-करंडगा पन्नत्ता, से [61]जहा णाम ए [62]रन्नो चाउरंतचक्कवट्टिस्स चित्ते[63] रयणकरंडए वेरुलिय[64]मणिफलिह[65]पडलपच्चोयडे [66]साते* पहाते [67]ते पतेसे [68]सव्वतो समंता[69] ओभासंति[70] उज्जोवेति[71] तवंति[72] पभासति[73] एवमेव[74] ते वि चित्ता रयण-करंडगा साते पभाते ते पएसे सव्वओ समंता ओभासंति उज्जोवेंति तवंति पभासंति। तेसिं[75] णं तोरणाणं पुरओ [76]दो दो हयकंठा गय[77]कंठा नरकंठा किन्नरकंठा किंपुरिसकंठा महोरगकंठा गंधव्वकंठा उसभकंठा ॥१७७॥

५७ सर्वात्मना वैडूर्यमयाः 'अच्छा' इत्यादि प्राग्वत् [पृ० १९ पं० ८]। ५८ तेषां तोरणानां पुरतो ५९ द्वौ द्वौ चित्रौ–आश्चर्यभूतौ ६० रत्नकरण्डकौ प्रज्ञप्तौ, ६१ स यथा नाम ६२ राज्ञश्चतुरन्तचक्रवर्तिनः–चतुर्षु पूर्वापरदक्षिणोत्तररूपेषु अन्तेषु–पृथिवीपर्यन्तेषु चक्रेण वर्त्तितुं शीलं यस्य तस्य ६३ चित्रः–आश्चर्यभूतो नानामणिमयत्वेन नानावर्णो वा बाहुल्येन ६४ वैडूर्यमणिमयः ६५ स्फाटिकपटला-वच्छादितः ६६ स्वकया प्रभया ६७ तान् प्रत्यासन्नान् प्रदेशान् ६८सर्वतः सर्वासु दिक्षु ६९ समन्ततः–सामस्त्येन ७० अवभासयति एतदेव पर्यायत्रयेण व्याचष्टे–७१ उद्द्योतयति–७२ तापयति–७३ प्रभासयति ७४ 'एवमेव' इत्यादि सुगमम्। ७५ तेषां तोरणानां पुरतो ७६ द्वौ द्वौ हयकण्ठौ हयकण्ठप्रमाणौ रत्नविशेषौ एवं ७७ गज–नर–किन्नर–किम्पुरुष–महोरग–गन्धर्व–वृषभकण्ठा अपि वाच्याः, उक्तं च +जीवाभिगममूलटीकाकारेण–"हयकण्ठौ–हयकण्ठप्रमाणौ रत्नविशेषौ" [ ] एवं सर्वेऽपि कण्ठा वाच्या

* स्वया प्रभया। 'साते पहाते पतेसे' अत्र तकारबाहुल्य पूर्वागतटिप्पणतः सगमनीयम् पृ० ८८ टिप्पण ×। + जीवा० वि० प्र० पृ० २१४ पं० ११।

[७८]सव्वरयणामया अच्छा जाव [पृ० १९ पं० ५] पडिरूवा। ❀तेसिं[७९] णं तोरणाणं पुरओ [८०]दो दो पुप्फचंगेरीओ [८१]मल्लचंगेरीओ चुन्नचंगेरीओ गंधचंगेरीओ वत्थचंगेरीओ आभरणचंगेरीओ सिद्धत्थचंगेरीओ लोमहत्थचंगेरीओ पन्नत्ताओ [८२]सव्वरयणामयाओ अच्छाओ जाव [पृ० १९ पं० ५] पडिरूवाओ । ○तेसि णं तोरणाणं पुरओ दो दो पुप्फ[८३]पडलगाइं [प्र० पृ० पं० २] जाव लोमहत्थपडलगाइं सव्वरयणामयाइं अच्छाइं जाव [पृ० १९ पं० ५] पडिरूवाइं । तेसिं[८४] णं तोरणाणं पुरओ दो दो सीहासणा पण्णत्ता। तेसिं[८५] णं सीहासणाणं वण्णओ जाव [पृ० ९८ पं० ३–पृ० १०२ पं० २] दामा। तेसिं[८६] णं तोरणाणं पुरओ [८७]दो दो रूप्पमया छत्ता पन्नत्ता, ते[८८] णं छत्ता वेरुलियविमल[८९]दंडा

इति, तथा चाह–७८ सर्वे रत्नमया–रत्नविशेषरूपाः 'अच्छा' इत्यादि [पृ० १९ पं० ८] प्राग्वत्। ७९ तेषां तोरणानां पुरतो ८० द्वे =द्वे पुष्पचङ्गेर्यौ प्रज्ञप्ते एवं ८१ माल्य–चूर्ण–गन्ध–वस्त्र–आभरण–सिद्धार्थक–लोमहस्तचङ्गेर्योऽपि वक्तव्याः, एताश्च सर्वा अपि ८२ सर्वात्मना रत्नमय्यः । 'अच्छा' इत्यादि [पृ० १९ पं० ५] प्राग्वत् , एवं ८३ पुष्पादीनामष्टानां पटलकान्यपि द्विद्विसंख्याकानि वाच्यानि। ८४ तेषां तोरणानां पुरतो द्वे द्वे सिंहासने प्रज्ञप्ते, ८५ तेषां च सिंहासनानां वर्णकः प्रागुक्तो [पृ० ९८ पं० ३ तथा ९–पृ० १०२ पं० २] निरवशेषो वक्तव्यः, ८६ तेषां तोरणानां पुरतो ८७ द्वे द्वे छत्रे रूप्यमये प्रज्ञप्ते, ८८ तानि च छत्राणि ८९ वैडूर्य-

* तेसु णं हयकंठएसु जाव उसभकंठएसु दो–वि० वा०। ○ तासु णं पुप्फचंगेरिआसु जाव लोमहत्थचंगेरीसु दो–वि० वा०। =द्वे चङ्गेर्यौ–पा० ४–५।

जंबूणयकन्निया[90] वइरसंधी[91] मुत्ताजालपरिगया[92] अट्ठसहस्सवरकंचणसलागा[93] दद्दरमलयसुगंधिसव्वोउयसुरभिसीयलच्छाया[94] मंगलभत्तिचित्ता[95] चंदागारोवमा[96]। तेसिं[97] णं तोरणाणं पुरओ दो[98] दो चामराओ पन्नत्ताओ, ताओ[99] णं चामरा+ओ चंदप्पभवेरुलियवयरनानामणिरयणखचियचित्तदण्डाओ[100] सुहुमरययदीहवालाओ[101] संखंककुंददगरयअमयमहियफेणपुंजसंन्निगासातो[102] सव्वरयणामयाओ अच्छाओ [पृ० १९ पं ५] जाव पडिरूवाओ।

रत्नमयविमलदण्डानि ९० जाम्बूनदकर्णिकानि ९१ वज्रसन्धीनि–वज्ररत्नापूरितदण्डशलाकासन्धीनि ९२ मुक्ताजालपरिगतानि ९३ अष्टौ सहस्राणि–अष्टसहस्रसंख्या वरकाञ्चनशलाका–वरकाञ्चनमय्यः शलाका येषु तानि, तथा ९४दर्दरः–चीवरावनद्धं कुण्डिकादिभाजनमुखं तेन गलितास्तत्र पक्वा वा ये मलया इति–मलयोद्भवं श्रीखण्डं तत्सम्बन्धिनः सुगन्धा ये गन्धवासास्तद्वत् सर्वेषु ऋतुषु सुरभिः शीतला च छाया येषां तानि तथा, ९५ अष्टानां स्वस्तिकादीनां मङ्गलानां भक्त्या–विच्छित्त्या चित्रम्–आलेखो येषां तानि तथा ९६ चन्द्राकारः–चन्द्राकृतिः सा उपमा येषां तानि तथा–चन्द्रमण्डलवत् वृत्तानीति भावः। ९७तेषां तोरणानां पुरतो ९८द्वे द्वे चामरे प्रज्ञप्ते, ९९ तानि च चामराणि १०० चन्द्रप्रभः–चन्द्रकान्तः वज्रं वैडूर्यं च प्रतीतं चन्द्रप्रभ–वज्र–वैडूर्याणि शेषाणि च नानामणिरत्नानि खचितानि येषु ते तथा एवंरूपाश्चित्रा–नानाकारा दण्डा येषां चामराणां तानि तथा, १०१ सूक्ष्मा रजतमया दीर्घा वाला येषां तानि तथा, १०२ शङ्खः प्रतीतः अङ्को–रत्नविशेषः कुन्द इति कुन्दपुष्पम् दकरज–उदककणाः अमृतमथितफेनपुञ्जः–क्षीरोदजलमथनसमुत्थः

+ –ओ णाणामणिकणगरयणविमलमहरिहतवणिज्जुज्जलविचित्तदंडाओ चिल्लियाओ सु–वि० बा०।

तेसिं[103] णं तोरणाणं पुरओ [104]दो दो तेल्लसमुग्गा कोट्ठसमुग्गा[105] पत्तसमुग्गा चोयगसमुग्गा तगरसमुग्गा एलासमुग्गा हरियालसमुग्गा हिंगुलयसमुग्गा मणोसिलासमुग्गा अंजणसमुग्गा सव्वरयणामया[106] अच्छा जाव [पृ० १९ पं० ५] पडिरूवा।

[१०७] सूरियाभे[1] णं विमाणे एगमेगे[2] दारे अट्ठसयं[3] चक्कज्झयाणं[4] अट्ठसयं मिगज्झयाणं[5] गरुडज्झयाणं[6] छत्तज्झयाणं[7] पिंच्छज्झयाणं[8] सउणिज्झयाणं[9] सीहज्झयाणं[10] उसभज्झयाणं[11] अट्ठसयं सेयाणं चउविसाणाणं[12] नागवरकेऊणं

फेनपुञ्जस्तेषामिव सन्निकाशः–प्रभा येषां तानि तथा, 'अच्छा' इत्यादि प्राग्वत् [पृ० १९ पं० ८] १०३ तेषां तोरणानां पुरतो १०४ द्वौ द्वौ तैलसमुद्गकौ–सुगन्धितैलाधारविशेषौ, उक्तं च जीवाभिगममूल*टीकायाम्–"=तैलसमुद्गकौ सुगन्धितैलाधारौ" [ ] एवं १०५ कोष्ठादिसमुद्गका अपि वाच्याः, अत्र संग्रहणिगाथा–तेल्ले कोट्ठसमुग्गा पत्ते चोए य तगर एला य। हरियाले हिंगुलए मणोसिला अंजणसमुग्गा≈ ॥ एते सर्वेऽपि १०६ सर्वात्मना रत्नमयाः 'अच्छा' इत्यादि प्राग्वत् [पृ० १९ पं० ८]।

[१०७] १ तस्मिन् सूर्याभे विमाने २ एकैकस्मिन् द्वारे ३ अष्टाधिकं शतं ४चक्रध्वजानां–चक्रलेखरूपचिह्नोपेतानां ध्वजानाम् एवं ५ मृग–६ गरुड–७ रुद्रछत्र–८ पिच्छ–९ शकुनि–१० सिंह–११ वृषभ–१२ चतुर्दन्तहस्तिध्वजानामपि प्रत्येकमष्टशतमष्टशतं वक्त-

* –लटीकाकारः–भा० २। = जीवा० वि० पृ० २१४ पं० १४। ≈ एषा गाथाऽपि जीवा० वि० प्र० पृ० २१५ पं० १।

[13]एवमेव [14]संपुव्वावरेणं [15]सूरियाभे विमाणे [16]एगमेगे दारे [17]असीयं असीयं [18]केउसहस्सं [19]भवति [20]इति 8[21]मक्खायं* । [22]तेसिं णं दाराणं [23]एगमेगे दारे [24]पण्णट्ठिं पण्णट्ठिं [25]भोमा [26]पन्नत्ता, [27]तेसिं णं भोमाणं [28]भूमिभागा [29]उल्लोया य भाणियव्वा, [30]तेसिं णं भोमाणं च [31]बहुमज्झदेसभागे [32]पत्तेयं पत्तेयं [33]सीहासणे, [34]सीहासणवज्जतो सपरिवारो, [35]अवसेसेसु भोमेसु [36]पत्तेयं पत्तेयं भद्दासणा पन्नत्ता। [37]तेसिं णं दाराणं [38]उत्तमागारा [39]सोलसविहेहिं रयणेहिं उवसोभिया, [40]तंजहा–

व्यम् १३ एवमेव–अनेनैव प्रकारेण १४ सपूर्वापरेण–सह पूर्वैः अपरैश्च वर्त्तते इति सपूर्वापरं–संख्यानं तेन १५ सूर्याभे विमाने १६ एकैकस्मिन् द्वारे १७ अशीतमशीतं–अशीत्यधिकं अशीत्यधिकं १८ केतुसहस्रं १९ भवति २०इति २१ आख्यातं मया अन्यैश्च तीर्थकृद्भिः। २२तेषां द्वाराणां सम्बन्धीनि २३ प्रत्येकं २४ पञ्चषष्टिः पञ्चषष्टिः २५भौमानि–विशिष्टानि स्थानानि २६प्रज्ञप्तानि, २७तेषां च भौमानां २८ भूमिभागा २९ उल्लोकाश्च यानविमानवद् वक्तव्याः, [पृ०८१ तथा ९७ पं० ३]३० तेषां च भौमानां ३१ बहुमध्यदेशभागे यानि त्रयस्त्रिंशत्तमानि भौमानि तेषां बहुमध्यदेशभागे ३२प्रत्येकं प्रत्येकं सूर्याभदेवयोग्यं ३३सिंहासनम् ३४तेषां च सिंहासनानां वर्णकोऽपरोत्तरपूर्वादिषु सामानिकादिदेवयोग्यानि भद्रासनानि च क्रमेण यानविमानवद् वक्तव्यानि [पृ० १०२ पं० ३] ३५ शेषेषु च भौमेषु ३६ प्रत्येकमेकैकं सिंहासनं परिवाररहितम्। ३७तेषां द्वाराणां ३८आकारा–उपरितना आकारा +उत्तरङ्गादिरूपाः क्वचित् O'उवरिमागारा' इत्येव पाठः, ३९ षोडशविधैः रत्नैरुपशोभिताः ४० तद्यथा–रत्नैः–सामान्यतः कर्केतनादिभिः 'यावत्'

8 मे+अक्खाय=मक्खाय [८–१–१० हैम०]। * –यं सूरियाभे विमाणे पण्णट्ठि–वि० बा०। +भाषायाम् 'ओतरग' इति प्रसिद्धम्।

O विवरणकारदर्शितं पाठान्तरम्।

रयणेहिं जाव [पृ० ५७ पं० १-२] रिट्ठेहिं[41], तेसिं[42] णं दाराणं उप्पिं[43] अट्ठट्ठ[44] मंगलगा[45] सज्झया जाव छत्तातिछत्ता [पृ० ८० पं० १-२] ०एवमेव[46] सपुव्वावरेणं सूरियाभे विमाणे चत्तारि दारसहस्सा भवंतीति ⁰मक्खायं।

[१०८] सूरियाभस्स[1] विमाणस्स चउद्दिसिं[2] पंच जोयणसयाइं[3] अबाहाए[4] चत्तारि[5] वणसंडा पन्नत्ता, तंजहा–असोगवणे[6], सत्तिवणे[7] चंपगवणे[8], चूयगवणे[9] पुरत्थिमेणं असोगवणे दाहिणेणं सत्तवन्नवणे पच्चत्थिमेणं चंपगवणे उत्तरेणं

करणात् वज्रैः वैडूर्यैः लोहिताक्षैः मसारगल्लैः हंसगर्भैः पुलकैः सौगन्धिकैः ज्योतीरसैः अङ्कैः अञ्जनैः रजतैः अञ्जनपुलकैः जातरूपैः स्फटिकैरिति परिग्रहः षोडशैः ४१ रिष्टैः। ४२ तेषां द्वाराणां प्रत्येकम् ४३ उपरि ४४ अष्टौ अष्टौ स्वस्तिकादीनि ४५ मङ्गलकानि इत्यादि यानविमानतोरणवद् तावद् वाच्यं यावद् बहवः 'सहस्रपत्रहस्तकाः' [पृ० ७९-८० पं०२-] इति। अत ऊर्ध्वं केषुचित् पुस्तकान्तरेष्वेवं पाठः ४६ ०'एवमेव सपुव्वावरेणं सूरियाभे विमाणे चत्तारि दारसहस्सा भवन्तीति मक्खायं' इति सुगमम्।

[१०८] १ सूर्याभस्य विमानस्य २ चतुर्दिशं–चतस्रो दिशः समाहृताश्चतुर्दिक् तस्मिन् चतुर्दिशि चतसृषु दिक्षु ३ पञ्च पञ्च योजनशतानि ४ बाधनं बाधा आक्रमणमित्यर्थः न बाधा अबाधा–अनाक्रमणं तस्यामबाधायां कृत्वेति गम्यते–अपान्तरालं मुक्त्वेति भावः ५ चत्वारो वनखण्डाः प्रज्ञप्ताः, अनेकजातीयानामुत्तमानां महीरुहाणां समूहो वनखण्डः उक्तं च ०जीवाभिगमचूर्णौ–"अणेगजाईएहिं उत्तमेहिं रुक्खेहिं वणसंडे' [ ] इति, तानेव वनखण्डान् नामतो दिग्भेदतश्च दर्शयति ६ अशोकवृक्षप्रधानं वनमशोकवनं एवं ७ सप्तपर्णवनम् ८ चम्पकवनम् ९ चूतवनमपि भावनीयम्। 'पुरत्थिमेणं' इत्यादि पाठसिद्धं, अत्र

---

० विवरणकारदर्शितं पाठान्तरम्।० "एगजाईएहिं रुक्खेहिं वणं अणेगजाईएहि उत्तमेहि रुक्खेहि वणसण्डे" [जीवाजीवा० वृ०पृ०१८६ पं०७]

चूयगवणे । [10]ते णं वणखंडा [11]साइरेगाइं अद्धतेरस जोयणसयसहस्साइं आयामेणं [12]पंचे जोयणसयाइं विक्खंभेणं [13]पत्तेयं पत्तेयं पागारपरिखित्ता [14]किण्हा [15]किण्होभासा [16]नीला [17]नीलोभासा [18]हरिया [19]हरियोभासा [20]सीया [21]सीयोभासा

संग्रहणिगाथा–"पुव्वेण असोगवणं दाहिणतो होइ सत्तिवण्णवणं। अवरेणं चम्पकवणं चूयवणं उत्तरे पासे" ॥ १० ते च वनखण्डाः ११ सातिरेकानि अर्द्धत्रयोदशानि–सार्द्धानि द्वादश योजनशतसहस्राणि आयामतः १२ पञ्च योजनशतानि विष्कम्भतः १३ प्रत्येकं प्रत्येकं प्राकारपरिक्षिप्ताः, पुनः कथंभूतास्ते वनखण्डाः? इत्याह–'किण्हा किण्होभासा जाव पडिमोयणा सुरम्मा' इति 'यावत्' करणादेवं परिपूर्णः पाठः *सूचितः। अस्य व्याख्या–१४ इह प्रायो वृक्षाणां मध्यमे वयसि वर्त्तमानानि पत्राणि कृष्णानि भवन्ति ततस्तद्योगात् वनखण्डा अपि कृष्णाः, १५ न चोपचारमात्रात् ते कृष्णा इति व्यपदिश्यन्ते किन्तु तथाप्रतिभासनात्, तथा चाह–कृष्णावभासा यावति भागे कृष्णावभासपत्राणि सन्ति तावति भागे ते वनखण्डाः कृष्णा अवभासन्ते, ततः कृष्णोऽवभासो येषां ते कृष्णावभासा इति, १६ तथा हरितत्वमतिक्रान्तानि कृष्णत्वमसंप्राप्तानि पत्राणि नीलानि तद्योगाद् वनखण्डा अपि नीलाः, १७ न चैतदुपचारमात्रेणोच्यते किन्तु तथावभासात्, तथा चाह–-नीलावभासाः, १८ यौवने तान्येव पत्राणि किसलयत्वं रक्तत्वं चातिक्रान्तानि ईषत्–हरितालाऽऽभानि पाण्डूनि =सन्ति 'हरितानि'इति व्यपदिश्यन्ते, ततस्तद्योगात् वनखण्डा अपि हरिताः, १९ न चैतदुपचारमात्रादुच्यते, किन्तु तथाप्रतिभासात्, तथा चाह–हरितावभासाः, तथा २० बाल्यादतिक्रान्तानि वृक्षाणां पत्राणि शीतानि भवन्ति ततस्तद्योगाद् वनखण्डा अपि शीता इत्युक्ताः, २१ न च न ते गुणतस्तथा किन्तु तथैव, तथा चाह–शीता-

* अस्य सूचितस्य पाठस्य मूले एव स्थलनिर्देशः कृतः। - "समासः प्राग्वत्" राय० वि०। = कृदन्तम्–प्रथमाबहुवचनम्।

निद्धा[22] निद्धोभासा[23] तिव्वा[23] तिव्वोभासा[23] किण्हा[24] किण्हच्छाया[25] नीला[26] नीलच्छाया हरिया हरियच्छाया सीया[27] सीयच्छाया निद्धा निद्धच्छाया घणकडितडियच्छाया[28]

वभासाः–अधोभागवर्त्तिनां वैमानिकदेवानां देवीनां तद्योगशीतवातसंस्पर्शतः ते शीता वनखण्डा अवभासन्ते इति, तथा २२ एते कृष्णनीलहरितवर्णा यथा स्वस्मिन् स्वरूपे अत्यक्ते स्निग्धा भण्यन्ते तीव्राश्च ततः तद्योगात् वनखण्डा अपि स्निग्धाः २२ तीव्राश्च इत्युक्ताः, २३ न चैतदुपचारमात्रं किन्तु तथाऽवभासोप्यस्ति तत उक्तम्–स्निग्धावभासाः २३ तीव्रावभासाः इति, २४इहावभासो भ्रान्तोऽपि भवति यथा मरुमरीचिकासु जलावभासस्ततो नावभासमात्रोपदर्शनेन यथावस्थितं वस्तुस्वरूपं वर्णितं भवति किन्तु तथास्वरूपप्रतिपादनेन, ततः कृष्णत्वादीनां तथास्वरूपप्रतिपादनार्थमनुवादपुरस्सरं विशेषणान्तरमाह–'किण्हा किण्हच्छाया' इत्यादि, कृष्णा वनखण्डाः, कुत इत्याह–२५कृष्णच्छायाः≈–ततोऽयमर्थः–यस्मात् कृष्णा छाया–आकारः सर्वाविसंवादितया तेषां तस्मात् कृष्णाः एतदुक्तं भवति–सर्वाविसंवादितया तत्र कृष्ण आकार उपलभ्यते, न च भ्रान्तावभाससंपादितसत्ताकः सर्वाविसंवादी भवति, ततस्तत्त्ववृत्त्या ते कृष्णाः न भ्रान्तावभासमात्रव्यवस्थापिता इति, एवं २६ नीला नीलच्छाया इत्याद्यपि भावनीयम् नवरं २७ शीताः शीतच्छायाः इत्यत्र छायाशब्द आतपप्रतिपक्षवस्तुवाची द्रष्टव्यः, २८ 'घन×कडितडियच्छाया' इति इह शरीरस्य मध्यभागे कटिस्ततोऽन्यस्यापि मध्यभागः

≈ "निमित्तकारणहेतुषु सर्वासा विभक्तीनां प्रायो दर्शनम्" पृ० १०२ टिप्पण ०। × " 'घनकडियकडच्छाए'–तत्रायमर्थः–कटः संजातः अस्य इति कटितः कटान्तरेण उपरि आवृत इत्यर्थः कटितश्चासौ कटश्च कटितकटः घना निविडा कटितकटस्य इव अधोभूमौ छाया यस्य स घनकटितकटच्छाय. "–[जीवाजीवा० प्र० पृ० १८७ पं० ११] पृ० ९ पं० ४।

रम्मा[२९] महामेहनिकुरुंबभूया[३०] [३१]ते णं पायवा मूलमंतो वणखंडवन्नओ [पृ० ९ पं० १–पृ० १७ पं० ३]

[१०९] तेसिं[१] णं वणसंडाणं अंतो[२] बहुसमरमणिज्जा[३] भूमिभागा पण्णत्ता से जहा❋ नामए आलिंगपुक्खरे ति वा [कं० ३३–३८] जाव णाणाविहपंचवण्णेहिं मणीहि य तणेहि य उवसोभिया, तेसिं णं गंधो फासो णेयव्वो जहक्कमं [कं० ३९–४०]

कटिरिव कटिरित्युच्यते, कटिस्तटमिव कटितटं घना–अन्योऽन्यशाखाप्रशाखानुप्रवेशतो निविडा कटितटे–मध्यभागे छाया येषां ते तथा–मध्यभागे निविडतरच्छाया इत्यर्थः, अत एव २९ रम्यो–रमणीयः तथा ३० महान् जलभारावनतप्रावृट्कालभावी यो मेघनिकुरुम्बो–मेघसमूहस्तं भूता–गुणैः प्राप्ता महामेघनिकुरुम्बभूताः, महामेघवृन्दोपमा इत्यर्थः। ३१ 'ते णं पायवा' इत्यादि, अशोकवरपादपपरिवारभूतप्रागुक्ततिलकादिवृक्षवर्णनवत् [पृ० १२ पं० ४] परिभावनीयम् नवरं 'सुयवरहिणमयणसलागा' इत्यादि विशेषणम् [पृ० १५ पं० ४] अत्रोपमया भावनीयम् 'अणेगसगडरहजाण' इत्यादि [पृ० १७ पं० ३] तदाकारभावतः।

[१०९] १तेषां =वनखण्डानाम् २अन्तः–मध्ये ३ बहुसमरमणीया भूमिभागाः प्रज्ञप्ताः, ४तेषां च भूमिभागानां 'आलिंगपुक्खरे इ वा' इत्यादि वर्णनं प्रागुक्तं [कं० ३३–४०] तावद्वाच्यं यावन्मणीनां स्पर्शः नवरम् अत्र तृणान्यपि वक्तव्यानि, तानि चैवं ५ 'णाणाविहपंचवण्णाहिं मणीहि य तणेहि य उवसोभिया [पृ० ८३ पं० २–३ तथा कं० ३४ प्रभृति]

❋ इयं कण्डिका अक्षरशः जीवाजीवाभिगमसूत्रे [पृ० १८३ प० १२] वर्तते = "अनेकजातीयानामुत्तमाना महिरुहाणा समूहो वनखण्डः"–जीवा० वि० पृ० १८६ पं० ५।

[११०] प्र०–तेसिं[1] णं भंते[2] ! तणाण य मणीण य पुव्वावरदाहिणुत्तरागतेहिं[3] वातेहिं मंदायं[4] मंदायं एइयाणं[5] वेइयाणं[6] कंपियाणं[7] चालियाणं[8] फंदियाणं[9] घंट्टियाणं[10] खोभियाणं[11] उदीरियाणं[12] केरिसए[13] सद्दे भवति ?

उ०–गोयमा[14] ! से[15] जहानामए[16] सीयाए[17] वा संदमाणीए[18] वा रहस्स[19] वा सच्छत्तस्स[20]

---

[११०] प्र०–सम्प्रति १ तेषां मणीनां तृणानां च वातेरितानां शब्दस्वरूपप्रतिपादनार्थमाह–२ भदन्त ! =परमकल्याणयोगिन् ! तृणानां ३ पूर्वापरदक्षिणोत्तरगतैर्वातैः ४ मन्दं मन्दं ५ एजितानां–कम्पितानां–६ व्येजितानां–विशेषतः कम्पितानां, एतदेव पर्यायशब्देन व्याचष्टे ७ कम्पितानां तथा ८ चालितानां–इतस्ततो मनाक् विक्षिप्तानां, एतदेव पर्यायेण व्याचष्टे–९स्पन्दितानां तथा १० घट्टितानां परस्परं संघर्षयुक्तानां तथा कथं घट्टितानाम् इत्याह–११क्षोभितानां, स्वथानाच्चालनमपि कुत इत्याह–१२उदीरितानाम् उत्–प्राबल्येन प्रेरितानाम्, १३ कीदृशः शब्दः प्रज्ञप्तः ?

उ०–भगवानाह–१४गौतम ! १५ स १६ यथानामकः १७शिबिकाया वा १८स्पन्दमानिकाया वा १९रथस्य वा, तत्र १७ शिबिका जम्पानविशेषरूपा उपरिच्छादिता कोष्ठाकारा, तथा १८ दीर्घो जम्पानविशेषः पुरुषस्य स्वप्रमाणावकाशदायी स्पन्दमानिका–अनयोश्च शब्दः पुरुषोत्पाटितयोः क्षुद्रहेमघण्टिकादिचलनवशतो वेदितव्यः १९ रथश्चेह संग्रामरथः प्रत्येयः अग्रेतनविशेषणानामन्यथाऽसंभवात्, तस्य च फलवेदिका यस्मिन् काले ये पुरुषास्तदपेक्षयाऽ कटिप्रमाणाऽवसेया, तस्य च रथस्य विशेषणान्यभिधत्ते–२० सच्छत्रस्य

⁄ इमा अपि प्रश्नोत्तररूपाः सर्वाः कण्डिकाः जीवा० मू० पृ० १८५ पं० १०–पृ० १८६ पं० ३ । = इदं शब्दवर्णनरूपं समग्र विवरणं जीवा० विवरणमिव अक्षरशः प्रतिभाति–जीवा० वि० प्र० पृ० १९२ पं० २३–पृ० १९५ पं० ३। ऽ या कतिप्र–पा० ४–५ भा० १।–या

[21]संज्झयस्स [22]संघंटस्स सपडागस्स[23] सतोरणवरस्स[24] सनंदिघोसस्स[25] [26]सखिंखिणिहेमजालपरिखित्तस्स हेमवय[27]चित्त-तिणिसकणगणिज्जुत्तदारुयायस्स×[28]सुसंपिनद्धचक्कमंडलधुरागस्स [29]कालायससुकयणेमिजंतकम्मस्स +[30]आइण्णवर-तुरगसुसंपउत्तस्स○

२१सध्वजस्य २२सघण्टाकस्य–उभयपार्श्वावलम्बिमहाप्रमाणघण्टोपेतस्य २३सपताकस्य २४सह तोरणवरं–प्रधानतोरणं यस्य स सतोरणवरस्तस्य, २५ सह नन्दिघोषो–द्वादशतूर्यनिनादो यस्य स सनन्दिघोषस्तस्य, तथा २६ सह किङ्किण्यः–क्षुद्रघण्टा येषामिति सकिङ्किणीकानि, हेमजालानि–हेममयदामसमूहास्तैः सर्वासु दिक्षु पर्यन्तेषु–बहिःप्रदेशेषु परिक्षिप्तो–व्याप्तस्तस्य, तथा २७ हैमवतं–हिमवत्पर्वतभावि चित्रं–विचित्रमनोहारिचित्रोपेतं तिनिशं–तिनिशतरुसंबन्धि कनकनिर्युक्तं कनकविच्छुरितं दारु–काष्ठं यस्य स हैमवतचित्रतैनिशकनकनिर्युक्तदारुकस्तस्य, तथा २८ सुष्ठु–अतिशयेन सम्यक् पिनद्धं–बद्धं –अरकमण्डलं धूश्च यस्य स सुसंपिनद्धारकमण्डलधूष्कस्तस्य, तथा २९ कालायसेन–लोहेन सुष्ठु–अतिशयेन कृतं नेमेः–बाह्यपरिधेर्यन्त्रस्य च–अरकोपरिफलकचक्रवालस्य कर्म यस्मिन् स कालायससुकृतनेमियन्त्रकर्मा तस्य, तथा ३० आकीर्णा–गुणैर्व्याप्ता ये वराः–प्रधानास्तुरगास्ते सुष्ठु–अतिशयेन सम्यक्

ततिप्र–मु० पु०। × "सूत्रे च द्वितीयः 'क' कारः+ स्वार्थिकः पूर्वस्य च दीर्घत्व प्राकृतत्वात्"–राय० वि०। +आजन्य–आजण्ण–आयण्ण–आइण्ण। 'आजन्य' शब्दः 'सर्वोत्तम'पर्यायः। विवरणकारः 'आइण्ण' शब्दं 'आकीर्ण' शब्देन संस्करोति। ○ "प्राकृतत्वात् बहुव्रीहौ अपि ※क्तान्तस्य परनिपातः"–राय० वि०। – मूलपाठे–'चक्कमण्डल' इति।

+ दारु+क–दारुकक–दारुकाक–दारुयाय। ※ 'सुसपउत्त' पदस्य।

[31]कुसलणरच्छेयसारहिसुसंपरिग्गहियस्स [32]सरसयबत्तीसतोणपरिमंडियस्स [33]सकंकडावयंसगस्स [34]सचावसर-पहरणं-[35]आवरण[36]भरियजोध[37]जुज्झसज्जस्स [38]रायंगणंसि वा [39]रायंतेउरंसि वा [40]रम्मंसि वा मणिकुट्टिमतलंसि अभि-[41]क्खणं अभिक्खणं अभिघट्टिज्ज[42]माणस्स वा नियट्टिज्जमाणस्स वा [43]ओराला [44]मणोण्णा मणोहरा [45]कण्ण-मणनिव्वुइकरा सद्दा सव्वओ समंता अभिणिस्सवंति, भवेयारूवे सिया ? णो इणट्ठे समट्ठे ।

प्रयुक्ता-योजिता यस्मिन् स आकीर्णवरतुरगसुसंप्रयुक्तः तस्य, तथा ३१ सारथिकर्मणि ये कुशला नरास्तेषां मध्ये अतिशयेन छेको-दक्षः सारथिस्तेन सुष्ठु सम्यक् परिगृहीतस्य, तथा ३२ शराणां शतं प्रत्येकं येषु तानि शरशतानि तानि च तानि द्वात्रिंशत् तूणानि च बाणाश्रयाः तैर्मण्डितः शरशतद्वात्रिंशत्तूणमण्डितः, किमुक्तं भवति ?-एवं नाम तानि द्वात्रिंशत् शरशतभृतानि तूणानि रथस्य सर्वतः पर्यन्तेष्ववलम्बितानि यथा तानि संग्रामायोपकल्पितस्यातीव मण्डनाय भवन्तीति, तथा ३३ कङ्कटः-कवचं सह कङ्कटो यस्य स सकङ्कटः सकङ्कटोऽवतंसः-शेखरो यस्य स सकङ्कटावतंसस्तस्य, तथा ३४ सह चापं येषां ते सचापाः सचापाः ये शरा यानि च कुन्त-≡भल्लि-मुसण्ढिप्रभृतीनि नानाप्रकाराणि ३५ प्रहरणानि यानि च कवच-खेटकप्रमुखानि ३६ आवरणानि तैर्भृतः-परिपूर्णः, तथा योधानां युद्धं तन्निमित्तं सज्जः-प्रगुणीभूतो यः स ३७ योधयुद्ध×सज्जः तस्य, इत्थंभूतस्य ३८ राजाङ्गणे वा ३९ अन्तःपुरे वा ४० रम्ये वा मणिकुट्टिमतले-मणिबद्धभूमितले ४१ अभीक्ष्णमभीक्ष्णं मणिकोट्टिमतलप्रदेशे राजाङ्गणादिप्रदेशे वा ४२अभिघट्यमानस्य वेगेन गच्छतो ये ४३ उदारा ४४ मनोज्ञाः ४५ कर्णमनोनिर्वृतिकराः सर्वतः समन्तात् ।

≡ -भिल्लि-मुखण्ठि-पा० ५। × "-ततः पूर्वपदेन सह विशेषणसमासः"-राय० वि० ।

उ०–से× जहा णाम ए वेयालियवीणाए उत्तरमंदामुच्छियाए अंके सुपइट्ठियाए कुसलनरनारिसुसंपरिग्गहियाते चंदणसारनिम्मियकोणपरिघट्टियाए पुव्वरत्तावरत्तकालसमयंमि मंदायं मंदायं वेइयाए पवेइयाए चालियाए घट्टियाए खोभियाए उदीरियाए ओराला मणुण्णा मणहरा कण्ण–मणनिव्वुइकरा सद्दा सव्वओ समंता अभिनिस्सवंति, भवेयारूवे सिया? णो इणट्ठे समट्ठे।

उ०—से जहा नाम ए किन्नराण वा किंपुरिसाण वा महोरगाण वा गंधव्वाण वा भद्दसालवणगयाणं वा नंदणवणगयाणं वा सोमणसवणगयाणं वा पंडगवणगयाणं वा हिमवंतमलयमंदरगिरिगुहासमन्नागयाण वा एगओ सन्निहियाणं समागयाणं सन्निसन्नाणं समुवविट्ठाणं पमुइयपक्कीलियाणं गीयरइगंधव्वहसियमणाणं गज्जं पज्जं कत्थं गेयं पयवद्धं पायबद्धं उक्खित्तं पायंतं मंदायं [पृ० १४४ पं० ४] रोइयावसाणं सत्तसरसमन्नागयं= छद्दोस[४८]विप्पमुक्कं एक्कारसालंकारं अट्ठगुणोववेयं,

⊖ जीवाभिगममूलटीकायामपि ४६ "० उप्पित्थं श्वासयुक्तम्" [ ] इति, तथा उत्–प्राबल्येन अतितालमस्थानतालं वा उत्तालं, श्लक्ष्णस्वरेण काकस्वरं, सानुनासिकं–सानुनासम्–नासिकाविनिर्गच्छत्स्वरानुगतमिति भावः, तथा ४७ अष्टाभिर्गुणैरु-

× अस्याः समग्रायाः अपि कण्डिकायाः विवरणम्–[जीवा० सू० वृ० पृ० १९३–१९४] =–यं अट्ठरससपउत्तं भा० २। ⊖ जीवा० वि० पृ० १९४ पं० ९। अत्र मूलविवरणयोर्भेदः। ०"उप्पित्थं तट्ठ–कुविय–विहुरेसु"–"उप्पित्थ त्रस्तम् कुपितम् विधुर चेति त्र्यर्थम्"–देशीनाम० व० १ गा० १२९।

गुंजाऽवंककुहरोवगूढं [48]रत्तं तिट्ठाणकरणसुद्धं [कं० ६३] पगीयाणं, भवेयारूवे ?

उ०–हंता सिया।

[१११] तेसिं[1] णं वणसंडाणं तत्थ[2] तत्थ तहिं देसे देसे [3]बहूईओ [4]खुड्डा खुड्डियातो

वनखण्डे वापीकूपप्रभृतीनिदिव्यसुखसाधनानि।

पेतमष्टगुणोपेतं ते चाष्टौ अमी गुणाः–पूर्णम् रक्तम् अलंकृतम् व्यक्तम् अविघुष्टम् मधुरम् समम् सललितं च। तथा चोक्तम्–"पुण्णं रत्तं च अलंकियं च वत्तं तहेव अविघुट्ठं। महुरं समं सललियं अट्ठ गुणा होंति गेयस्स" [ ] तत्र यत् स्वरकलाभिः परिपूर्णं गीयते तत् पूर्णम्, गेयरागानुरक्तेन यद् गीयते तद् रक्तम्, अन्योन्यस्वरविशेषकरणेन यद् अलंकृतमिव गीयते तद् अलङ्कृतम्, अक्षरस्वरस्फुटकरणतो व्यक्तम्, विस्वरं क्रोशतीव विघुष्टं न तथा अविघुष्टम्, मधुरस्वरेण गीयमानं मधुरं कोकिलारुतवत्, तालवंशस्वरादिसमनुगतं समम्, तथा यत् स्वरघोलनाप्रकारेण ललतीव तत् सह ललितेन–ललनेन वर्त्तत इति सललितम् यदि वा यत् श्रोत्रेन्द्रियस्य शब्दस्पर्शनमतीव सूक्ष्ममुत्पादयति सुकुमारमिव च प्रतिभासते तत् ○ सललितम्। इदानीमेतेषामेवाष्टानां मध्ये कियतो गुणान् अन्यच्च प्रतिपिपादयिषुरिदमाह–'४८रत्तं तिट्ठाणकरणसुद्धं'......[पृ० १३१ पं० ११] तत् यथा प्राक् नाट्यविधौ व्याख्यातं तथा भावनीयम् '*जारिसए सद्दे हवइ' प्रगीतानां–गातुमारब्धवतां यादृशः शब्दोऽतिमनोहरो भवति–स्यात्–कथंचिद् भवेद् एतद्रूपस्तेषां तृणानां मणीनां च शब्दः ? एवमुक्ते भगवानाह–गौतम! स्यादेवंभूतः शब्दः।

[१११] १ तेषां वनखण्डानां मध्ये २तत्र तत्र देशे 'तत्र तत्र' इति तस्यैव देशस्य तत्र तत्र एकदेशे ३बह्वयः ४क्षुल्लिकाः क्षुल्लिका

○ इद समस्त संगीतस्वरूप जीवा० वृ० [पृ० १९४–१९५] सविस्तरं चर्चितम्। * मूलपाठे नैतद् वाक्यं प्रतिभाति।

[5]वावीयाओ [6]पुक्खरिणीओ [7]दीहियाओ [8]गुंजालियाओ [9]सरपंतियाओ [10]सरसरपंतियाओ [11]बिलपंतिओ [12]अच्छाओ [13]सण्हाओ [14]रययामयकूलाओ [15]समतीरातो [16]वयरामयपासाणातो [17]तवणिज्जतलाओ [18]सुवण्णसुज्झरययवालुयाओ [19]वेरुलियमणिफालियपडलपच्चोयडाओ [20]सुहोयारसुउत्ताराओ [21]णाणामणितित्थसुबद्धाओ

लघवो लघवो इत्यर्थः, ५ वाप्यश्चतुरस्राः ६ पुष्करिण्यो वृत्ताकारा अथवा पुष्कराणि विद्यन्ते यासु ताः पुष्करिण्यः ७दीर्घिका ऋज्व्यो नद्यः ८ वक्रा नद्यो गुञ्जालिकाः, ९ बहूनि केवलकेवलानि पुष्पावकीर्णकानि सरांसि एकपङ्क्त्या व्यवस्थितानि सरःपङ्क्तिः–बह्वयः सरःपङ्क्तयः तथा १० येषु सरःसु पङ्क्त्या व्यवस्थितेषु कूपोदकं प्रणालिकया संचरति सा सरःसरःपङ्क्तिः ताः–बह्वयः सरःसरःपङ्क्तयः, तथा ११ बिलानीव *बिलानि–कूपास्तेषां पङ्क्तयः बिलपङ्क्तयः एताश्च सर्वा अपि कथंभूताः ? इत्याह–१२ अच्छाः–स्फटिकवद् बहिर्निर्मलप्रदेशाः १३ श्लक्ष्णाः–श्लक्ष्णपुद्गलनिष्पादितबहिःप्रदेशाः श्लक्ष्णदलनिष्पन्नपटवत्, तथा १४ रजतमयं–रूप्यमयं कूलं यासां ता रजतमयकूलाः, तथा १५ समं–न गर्ताभावात् विषमम्–तीरं–तीरवर्तिजलापूरितं स्थानं यासां ताः समतीराः, तथा १६ वज्रमयाः पाषाणा यासां ता वज्रमयपाषाणाः, तथा १७ तपनीयं–हेमविशेषः तपनीयमयं तलं यासां तास्तपनीयतलाः, तथा १८ सुवर्णं–पीतकान्ति हेम सुज्झं–रूप्यविशेषः रजतं प्रतीतं तन्मय्यो वालुका यासु ताः सुवर्णसुज्झरजतवालुकाः, १९ वैडूर्यमणिमयानि स्फटिकपटलमयानि च प्रत्यवतटानि–तटसमीपवर्त्तिनः अत्युन्नतप्रदेशा यासां ता वैडूर्यमणिस्फटिकपटलप्रत्यवतटाः, २० सुखेनावतारो जलमध्ये प्रवेशनं यासु ताः सुखावताराः तथा सुखेन उत्तारो–जलमध्याद् बहिर्निर्गमनं यासु ताः +सुखोत्ताराः २१ नानामणिभिः–नानाप्रका-

* मारवाडीभाषायाम् 'कूप' पर्यायः 'बेरा' शब्दः श्रूयते। + "ततः पूर्वपदेन विशेषणसमासः"–राय० वि०।

[२२]चउक्कोणाओ [२३]आणुपुव्वसुजातवप्पगंभीरसीयलजलाओ [२४]संछन्नपत्तभिसमुणालाओ [२५]बहुउप्पलकुमुयनलिणसुभगसोगंधियपोंडरीयसयवत्तसहस्सपत्तकेसरफुल्लोवचियाओ [२६]छप्पयपरिभुज्जमाणकमलाओ [२७]अच्छविमलसलिलपुण्णाओ [२८]पडिहत्थभमंतमच्छकच्छभ-

रैर्मणिभिस्तीर्थानि सुबद्धानि यासां ता नानामणितीर्थसुबद्धाः=, २२चत्वारः कोणा यासां ताश्चतुष्कोणाः, एतच्च विशेषणं वापीः कूपांश्च प्रति द्रष्टव्यम् तेषामेव चतुष्कोणत्वसम्भवात् न शेषाणाम्, तथा २३ आनुपूर्व्येण–क्रमेण नीचैर्नीचैस्तरभावरूपेण सुष्ठु–अतिशयेन यो जातो वप्रः–केदारो जलस्थानं तत्र गम्भीरं–अलब्धस्तागं शीतलं जलं यासु ता आनुपूर्व्यसुजातवप्रगम्भीरशीतलजलाः, २४संछन्नानि–जलेनान्तरितानि पत्रबिसमृणालानि यासु ताः संछन्नपत्रबिसमृणालाः, इह बिसमृणालसाहचर्यात् पत्राणि पद्मिनीपत्राणि द्रष्टव्यानि, बिसानि–कन्दाः मृणालानि–पद्मनालाः, तथा २५ बहुभिरुत्पलकुमुदनलिनसुभगसौगन्धिकपुण्डरीकशतपत्रसहस्रपत्रैः केसरैः–केसरप्रधानैः फुल्लैः–विकसितैरुपचिता बहूत्पलकुमुदनलिनसुभगसौगन्धिकपुण्डरीकशतपत्रसहस्रपत्रकेसरफुल्लोपचिताः, [पृ०२१ पं० १०] तथा २६ षट्पदैः–भ्रमरैः परिभुज्यमानानि कमलानि–उपलक्षणमेतत्–कुमुदानि च यासु ताः षट्पदपरिभुज्यमानकमलाः, तथा २७ अच्छेन–स्वरूपतः स्फटिकवत् शुद्धेन विमलेन–आगन्तुकमलरहितेन सलिलेन पूर्णा अच्छविमलसलिलपूर्णाः, तथा २८*पडिहत्था–अति-

= "अत्र बहुव्रीहावपि 'सुबद्ध' पदस्य क्तान्तस्य परनिपातः सुखादिदर्शनाद् प्राकृतशैलीवशाद्वा"–राय० वि०। * "पडिहत्थं उद्धुमायं =अइरेयय जाणम्–8आउण्ण" [ ] इति ÷वचनात्, उदाहरणं चात्र–"घणपडिहत्थं गयण सराइं नवसलिलउद्धुमायाइं ।

= अतिरियय व जा–भा० २ । 8 आपूर्णम्। ÷ एतद् वचनं नोपलभ्यते मुद्रितदेशीशब्दकोशेषु तत्समानं वचनं तु प्राप्यते पाइअलच्छीनाममाला-

अणेगसउणमिहुणगपविचरिताओ [30]पत्तेयं पत्तेयं [31]पउमवरवेदियापरिक्खित्ताओ [32]पत्तेयं पत्तेयं [33]वणसंडपरिक्खित्ताओ [34]अप्पेगइयाओ [35]आसवोयगाओ [36]अप्पेगइयाओ [37]वारुणोयगाओ

रेकिता अतिप्रभूता इत्यर्थः भ्रमन्तो मत्स्यकच्छपा यत्र ताः परिहत्थभ्रमन्मत्स्यकच्छपाः, तथा २९ अनेकैः शकुनिमिथुनैः प्रविचरिता इतस्ततो गमनेन सर्वतो व्याप्ताः अनेकशकुनिमिथुनकप्रविचरिताः,* एता वाप्यादयः सरस्सरःपङ्क्तिपर्यन्ताः ३० प्रत्येकं प्रत्येकं ३१ पद्मवरवेदिकया परिक्षिप्ताः, ३२ प्रत्येकं प्रत्येकं ३३ वनखण्डपरिक्षिप्ताः, ३४ अपिर्बाढार्थे बाढमेकका:–काश्चन वाप्यादयः ३५ आसवमिव–चन्द्रहासादिपरमासवमिव उदकं यासां ता आसवोदकाः, ३६ अप्येकका ३७ वारुणस्य–वारुणसमुद्रस्येव उदकं यासां ता

○अइरेइय मह उण चिन्ताए मण तुह ○ विरहे"। 'पडिहत्थ' शब्दः पूर्णार्थवाची देश्यः"–राय० वि०। * "ततः पूर्वपदेन विशेषणसमासः"—राय०वि०, ✓ "प्रति प्रति एकम्–अत्र आभिमुख्ये 'प्रति' शब्दः ततो वीप्साविवक्षाया पश्चात् 'प्रत्येक'–शब्दस्य द्विर्वचनम्–इति"–राय० वि०।

याम्–"पडिहत्थ उद्धुमाय अहिरेमइयं च अप्फुण्णं"–अंक–१४२। देशीनाममालायामपि पूर्णपर्यायः "पडिहत्थ" शब्दो निबद्धः व० ६ गा०२८। पृ०१२४ टिप्पण–। अस्मिन् मुद्रिते वचने 'पडिहत्थ–'उद्धुमाय'–'अइरेइय'–'अप्फुण्ण'–["क्तेन अप्फुण्णादयः" ८–४–२५८] शब्दाः 'पूर्ण' पर्यायतया निर्दिष्टाः। परन्तु पूर्वोक्तकोशप्रामाण्याद् हैमव्याकरणप्रामाण्यात् ["पूरेः अग्घाड–अग्घव–उद्धुमा–अगुम–अहिरेमाः" ८–४–१६९] श्रीजीवाजीवाभिगमवृत्तिप्रामाण्याच्च [पृ०१९८ प्र०पं०९–११] 'अइरेइय' स्थाने 'अइ(हि)रेमइय' शब्दो युक्तः। संस्कृत 'अतिरेकित'शब्दप्रकृतिकत्वेन 'अइरेइय' शब्दस्य नैव देशीत्वम्। ○ अइमयइयं भा० २। ○ गाथाया भावार्थः–घनप्रतिपूर्णं गगन सरासि नवसलिलप्रतिपूर्णानि प्रतिपूर्णं मम पुनश्चिन्तया मनः तव विरहे ॥ पूर्णपर्यायरूपाणां पडिहत्थ–उद्धुमाय–अइरेमइय–शब्दाना प्रयोगान् दर्शयितुं इय गाथा दर्शिता।

[38]अप्पेगइयाओ [39]खीरोयगाओ [40]अप्पेगइयाओ [41]घओयगाओ [42]अप्पेगइयाओ× [43]खोदोयगाओ [44]अप्पेगतियातो [45]पगतीए [46]उयगरसेणं [47]पण्णत्ताओ [48]पासादीयाओ दरिसणिज्जाओ अभिरूवाओ पडिरूवाओ। [48]तासि णं [49]वावीणं जाव [कं०१११] [50]बिलपंतीणं [51]पत्तेयं पत्तेयं [52]चउद्दिसिं [53]चत्तारि [54]तिसोपाणपडिरूवगा पण्णत्ता, तेसिं[55] णं तिसोपाणपडिरूवगाणं [56]अयमेयारूवे वण्णावासे पण्णत्ते तंजहा—[57]वइरामया नेमा... [पृ० ७८ पं० २] तोरणाणं झया छत्ताइछत्ता य णेयव्वा।

वारुणोदकाः, ३८ अप्येकका ३९ क्षीरमिव उदकं यासां ताः क्षीरोदकाः, ४० अप्येकका ४१ घृतमिव उदकं यासां ता घृतोदकाः, ४२ अप्येककाः ४३ क्षोद इव—इक्षुरस इव उदकं यासां ता क्षोदोदकाः, ४४ अप्येककाः ४५ स्वाभाविकेन ४६ उदकरसेन ४७ प्रज्ञप्ताः, 'पासादीयाओ' इत्यादि विशेषणचतुष्टयं प्राग्वत् [पृ०९ पं०६]। ४८ तासां क्षुल्लिकानां ४९ वापीनां यावद् [पृ०१९१ पं० ४–] ५० बिलपङ्क्तीनामिति' 'यावत्' शब्दात् पुष्करिण्यादिपरिग्रहः, ५१ प्रत्येकं ५२ चतुर्दिशि ५३ चत्वारि एकैकस्यां दिशि एकैकस्य भावात् ५४ त्रिसोपानप्रतिरूपकाणि—प्रतिविशिष्टरूपाणि ≈त्रिसोपानानि प्रज्ञप्तानि, ५५ तेषां च त्रिसोपानप्रतिरूपकाणाम् ५६ अयं—वक्ष्यमाणः एतद्रूपः—अनन्तरं वक्ष्यमाणस्वरूपो वर्णकनिवेशः प्रज्ञप्तस्तद्यथा ५७ वज्ररत्नमया+ नेमा इत्यादि प्राग्वत् [पृ० ७८ पं० २]। तेषां त्रिसोपानप्रतिरूपकाणां प्रत्येकं तोरणानि प्रज्ञप्तानि, तोरणवर्णकस्तु निरवशेषो यानविमानवद् भावनीयो यावत् बहवः

× ओ अप्पेगइआओ खारोयगाओ—मु० पु०, वि० वा०। ≈ "त्रयाणां सोपानानां समाहारः त्रिसोपानम्—तानि"—राय० वि०। + या वगाइ—मु० पु०।

[११२] [१]तासिं णं खुड्डाखुड्डियाणं वावीणं [कं० १११] जाव विलपंतियाणं [२]तत्थ तत्थ देसे तहिं तहिं [३]बहवे [४]उप्पायपव्वयगा [५]नियइपव्वयगा [६]जगईपव्वयगा [७]दारुइज्जपव्वयगा [८]दगमंडवा [९]दगमंचगा [१०]दगमालगा [११]दगपासायगा [१२]उसड्डा [१३]खुड्डखुड्डगा [१४]अंदोलगा [१५]पक्खंदोलगा

सहस्रपत्रहस्तकाः [पृ० ७८ पं० १] इति।

[११२] १तासां क्षुल्लिकाक्षुल्लिकानां यावद् [पृ०१९१ पं०४–] बिलपङ्क्तीनाम्, अत्रापि 'यावत्' शब्दात् पुष्करिण्यादिपरिग्रहः, २तत्र तत्र देशे तस्यैव देशस्य तत्र तत्र एकदेशे ३बहवः ४उत्पातपर्वता यत्रागत्य बहवः सूर्याभविमानवासिनो वैमानिका देवा देव्यश्च विचित्रक्रीडानिमित्तं वैक्रियशरीरमारचयन्ति, ५ नियत्या–नैयत्येन व्यवस्थिताः पर्वता नियतिपर्वताः, क्वचित् *'नियय पव्वया' इति पाठः, तत्र नियताः–सदा भोग्यत्वेनावस्थिताः पर्वता नियतपर्वताः–यत्र सूर्याभविमानवासिनो वैमानिका देवा देव्यश्च भवधारणीयेनैव वैक्रियशरीरेण सदा रममाणा अवतिष्ठन्ते इति भावः, ६ जगतीपर्वतकाः पर्वतविशेषाः ७ दारुपर्वतका–दारुनिर्मापिता इव पर्वतकाः, ८ दकमण्डपाः–स्फाटिकाः मण्डपाः, उक्तं च ॅजीवाभिगममूलटीकायाम्–"दगमण्डपाः–स्फाटिका मण्डपाः" [ ] इति। एवं ९ दकमञ्चकाः १० दकमालकाः ११ दकप्रासादाः, एते च दकमण्डपादयः केचित् १२ उत्सृता उच्चा इत्यर्थः, केचित् १३ क्षुल्लकाः क्षुल्लका इति, तथा १४अन्दोलकाः १५ पक्ष्यन्दोलकाश्च, इह १४यत्रागत्य मनुष्या आत्मानमन्दोलयन्ति ते 'अन्दोलकाः' इति लोके प्रसिद्धाः, १५ यत्र तु पक्षिण आगत्यात्मानमन्दोलयन्ति ते पक्ष्यन्दोलकाः, तत्र अन्दोलकाः पक्ष्यन्दोलकाश्च तेषु वनखण्डेषु तत्र

* विवरणकारदर्शितं पाठान्तरम्। ॅजीवा० वृ० प्र० पृ० २०० प० ४।

[१६]सव्वरयणामया अच्छा जाव पडिरूवा ।

[११३] तेसु[१] णं उप्पायपव्वएसु [कं ११२] पक्खंदोलएसु बहूइं[२] हंसासणाइं[३] कोंचासणाइं[४] गरुलासणाइं[५] उण्णयासणाइं[६] पणयासणाइं[७] दीहासणाइं[८] भद्दासणाइं[९] पक्खासणाइं[१०] मगरासणाइं[११] उसभासणाइं* सीहासणाइं[१२] पउमासणाइं[१३] दिसासोवत्थियाइं[१४] सव्वरयणामयाइं[१५] अच्छाइं जाव पडिरूवाइं ।

तत्र प्रदेशे देवक्रीडायोग्या बहवः सन्ति, एते च उत्पातपर्वतादयः कथंभूताः ? इत्याह–१६ सर्वरत्नमयाः, 'अच्छा सण्हा' इत्यादि विशेषणकदम्बकं प्राग्वत् [पृ० १९ पं० ५] ।

[११३] १तेषु उत्पातपर्वतेषु यावद् पक्ष्यन्दोलकेषु 'यावत्' करणात् नियतिपर्वतकादिपरिग्रहः, [पृ०१९५ पं०६]२ बहूनि ३हंसासनादीनि आसनानि, तत्र येषामासनानामधो भागे हंसा व्यवस्थिताः–यथा सिंहासने सिंहाः–तानि हंसासनानि, एवं ४ क्रौञ्चासनानि ५ गरुडासनानि च भावनीयानि, ६ उन्नतासनानि–उच्चासनानि ७ प्रणतासनानि–निम्नासनानि ८ दीर्घासनानि–शय्यारूपाणि ९ भद्रासनानि येषामधोभागे पीठिकाबन्धः १० पक्ष्यासनानि येषामधोभागे नानास्वरूपाः पक्षिणः, एवं ११ मकरासनानि १२ सिंहासनानि च भावनीयानि, १३ पद्मासनानि–पद्माकाराणि आसनानि, १४ येषामधोभागे दिक्सौवस्तिका आलिखिताः सन्ति, अत्र यथाक्रममासनानां संग्रहणिगाथा–"हंसे कोंचे गरुडे उण्णय पणए य दीह भद्दे य। पक्खे मयरे पउमे सीह दिसासोत्थि बारसमे" ॥ इति तानि सर्वाण्यपि कथंभूतानि ? इत्यत आह–१५'सव्वरयणामयाइं'इत्यादि प्राग्वत् [पृ० १९ पं० ५]।

---

* वि० बा०। – जीवा० वि० प्र० पृ० २०० प० १४।

[११४] तेसु[1] णं वणसंडेसु तत्थ[2] तत्थ तहिं तहिं देसे देसे बहवे[3] आलियघरगा[4] मालियघरगा[5] कयलिघरगा[6] लयाघरगा[7] अच्छणघरगा[8] पिच्छणघरगा[9] मज्जणघरगा[10] पसाहणघरगा[11] गब्भघरगा[12] मोहणघरगा[13] सालघरगा[14] जालघरगा[15] कुसुमघरगा[16] चित्तघरगा[17] गंधव्वघरगा[18] आयंसघरगा[19] सव्वरयणामया[20] अच्छा जाव पडिरूवा। तेसु[21] णं आलियघरगेसु जाव [प्र० पृ० पं० १-] आयंसघरगेसु तहिं तहिं घरएसु बहूइं[22] हंसासणाइं जाव दिसासोव-

---

[११४] १तेषु वनखण्डेषु मध्ये २तत्र तत्र प्रदेशे तस्यैव देशस्य तत्र तत्र एकदेशे ३ बहूनि ४आलिगृहकाणि–आलिः–वनस्पतिविशेषः तन्मयानि गृहकाणि आलिगृहकाणि, ५मालिरपि वनस्पतिविशेषः तन्मयानि गृहकाणि मालिगृहकाणि, ६ कदलीगृहकाणि ७ लतागृहकाणि च प्रतीतानि, ८ अवस्थानगृहकाणि–येषु यदा तदा वा आगत्य सुखासिकया अवतिष्ठन्ति, ९ प्रेक्षकगृहकाणि यत्रागत्य प्रेक्षणकानि विदधति निरीक्षन्ते च, १० मज्जनगृहकाणि यत्रागत्य स्वेच्छया मज्जनं कुर्वन्ति, ११ प्रसाधनगृहकाणि यत्रागत्य स्वं परं च मण्डयन्ति, १२ गर्भगृहकाणि गर्भगृहाकाराणि १३ मोहनं–मैथुनसेवा "रमियं मोहण–रयाइं" [ ] इति नाममालावचनात् तत्प्रधानानि गृहकाणि मोहनगृहकाणि–वासभवनानि–इति भावः, १४ शालागृहकाणि–पट्टशालाप्रधानानि, १५ जालगृहकाणि–गवाक्षयुक्तानि गृहकाणि, १६कुसुमगृहकाणि–कुसुमप्रकरोपचितानि गृहकाणि, १७ चित्रगृहकाणि–चित्रप्रधानानि गृहकाणि १८ गन्धर्वगृहकाणि–गीतनृत्ययोग्यानि गृहकाणि १९ आदर्शगृहकाणि–आदर्शमयानीव गृहकाणि, एतानि च कथंभूतानि? इत्यत आह–२० 'सव्वरयणामया' इत्यादि विशेषणकदम्बकं प्राग्वत् [पृ० १९ पं० ५]। २१ तेषु आलिगृहकेषु यावत् आदर्शगृहकेषु, अत्र 'यावत्' शब्दात् [प्र० पृ० पं० ५] मालिगृहकादिपरिग्रहः, २२ बहूनि हंसासनानि इत्यादि प्राग्वत् [पृ० १९६ पं० ७]।

त्थिआसणाइं [कं० ११३] सव्वरयणामयाइं जाव पडिरूवाइं।

[११५] तेसु[1] णं वणसंडेसु तत्थ तत्थ[2] देसे तहिं तहिं बहवे[3] जातिमंडवगा[4] जूहियामंडवगा[5] मल्लियामंडवगा[6] णवमालियामंडवगा[7] वासंतिमंडवगा[8] दहिवासुयमंडवगा[9] सूरिल्लियमंडवगा[10] तंबोलिमंडवगा[11] मुद्दियामंडवगा* णागलयामंडवगा[12] अतिमुत्तयलयामंडवगा[13] अप्फोयामंडगा[14] मालुयामंडवगा[15] अच्छा सव्वरयणामया[16] जाव पडिरूवा।

[११५] १ तेषु वनखण्डेषु २ तत्र तत्र देशे तस्यैव देशस्य तत्र तत्र एकदेशे ३ बहवो ४ जातिमण्डपकाः ५ यूथिकामण्डपकाः ६ मल्लिकामण्डपकाः ७ नवमालिकामण्डपकाः ८ वासन्तीमण्डपकाः ९ दधिवासुकामण्डपकाः, दधिवासुका–वनस्पतिविशेषस्तन्मया मण्डपका दधिवासुकामण्डपकाः, १० 'सूरिल्लिः'○ अपि वनस्पतिविशेषः तन्मया मण्डपका सूरिल्लिमण्डपकाः। ११ ताम्बूली–नागवल्ली तन्मया मण्डपकास्ताम्बूलीमण्डपकाः, १२ नागो द्रुमविशेषः, स एव लता नागलता, इह यस्य तिर्यक् तथाविधा शाखा प्रशाखा वा न प्रसृता सा 'लता' इत्यभिधीयते नागलतामया मण्डपका नागलतामण्डपकाः, १३ अतिमुक्तमण्डपकाः, १४ 'अप्फोया' इति वनस्पतिविशेषस्तन्मया मण्डपका अप्फोयामण्डपकाः, १५ मालुका–एकास्थिकफला वृक्षविशेषास्तद्युक्ता मण्डपका मालुकामण्डपकाः, एते च कथंभूताः? इत्याह–१६'सव्वरयणामया' इत्यादि प्राग्वत् [पृ० १९ पं० ५]।

* वि० वा०। ○ सूरल्लि–पा० ५। सूरमल्लि–भा० १।

[११६] तेसु णं जातिमण्डवएसु जाव [पृ० १९८ पं० १-] मालुयामंडवएसु बहवे पुढविसिलापट्टगा हंसासणसंठिया जाव [पृ० १९६ पं० २-] दिसासोवत्थियासणसंठिया अण्णे य बहवे वरसयणासणविसिट्ठसंठाणसंठिया पुढविसिलापट्टगा पण्णत्ता समणाउसो! आईणगरूयबूरणवणीयतूलफासा सव्वरयणामया अच्छा जाव पडिरूवा। तत्थ णं बहवे वेमाणिया देवा य देवीओ य आसयंति सयंति

[११६] १ तेषु जातिमण्डपकेषु यावत् मालुकामण्डपकेषु 'यावत्' शब्दात् अप्येकका २ दिक्सौवस्तिकासनसंस्थिताः, 'यावत्' करणात् 'अप्पेगइया कोंचासणसंठिया अप्पेगइया गरुडासणसंठिया अप्पेगइया उण्णयासणसंठिया अप्पेगइया पणयासणसंठिया अप्पेगइया दीहासणसंठिया अप्पेगइया भद्दासणसंठिया अप्पेगइया पक्खासणसंठिया अप्पेगइया मगरासणसंठिया अप्पेगइया उसभासणसंठिया अप्पेगइया सिंहासणसंठिया अप्पेगइया पउमासणसंठिया' इति [पृ०१९६ पं०७] परिग्रहः, ३अन्ये च बहवः शिलापट्टका यानि ४ विशिष्टचिह्नानि विशिष्टनामानि च वराणि–प्रधानानि शयनानि आसनानि च तद्वत् संस्थिताः वरशयनासनविशिष्टसंस्थानसंस्थिताः, क्वचिद् 'मांसलसुघट्ठविसिट्ठसंठाणसंठिया'+ इति पाठः, तत्रान्ये च बहवः शिलापट्टकाः मांसलाः अकठिना इत्यर्थः सुघृष्टा अतिशयेन मसृणा इति भावः विशिष्टसंस्थानसंस्थिताश्चेति ५ 'आईणगरूयबूरनवणीयतुलफासमउया [पृ० ९९ पं० २] 'सव्वरयणामया अच्छा जाव पडिरूवा' इति प्राग्वत् [पृ० १९ पं० ५]। तत्र ६ तेषु उत्पातपर्वतादिगतहंसासनादिषु यावत् [पृ०१९६ पं०७] नानारूपसंस्थानसंस्थितपृथ्वीशिलापट्टकेषु ७ बहवः सूर्याभविमानवासिनो देवा देव्यश्च यथासुखम् ८ आसते ९ शेरते–दीर्घकाय-

+ विवरणकारदर्शितः पाठभेदः।

चिट्ठंति[10] निसीयंति [11]तुयट्टंति [12]रमंति [13]ललंति [14]कीलंति [15]किट्टंति [16]मोहेंति पुरा[17] पोराणाणं[18] सुचिण्णाण[19] सुपरिक्कंताण[20] सुभाण[21] कडाण[22] कम्माण कल्लाणाण[23] कल्लाणं[24] फलविवागं[25] पच्चणुब्भवमाणा[26] विहरंति[27]।

देवानां क्रीडनादीनि

प्रसारणेन वर्त्तन्ते न तु निद्रां कुर्वन्ति तेषां देवयोनिकत्वेन निद्राया अभावात्, १० तिष्ठन्ति–ऊर्ध्वस्थानेन वर्त्तन्ते ११ निषीदन्ति–उपविशन्ति १२ तुयट्टंति–त्वग्वर्त्तनं कुर्वन्ति, वामपार्श्वतः परावृत्त्य दक्षिणपार्श्वेनावतिष्ठन्ति दक्षिणपार्श्वतो वा परावृत्त्य वामपार्श्वेनेति भावः, १३ रमन्ते–रतिमाबध्नन्ति १४ ललन्ति–मनईप्सितं यथा भवति तथा वर्त्तन्ते इति भावः, १५ क्रीडन्ति यथासुखमितस्ततो गमनविनोदेन गीतनृत्यादिविनोदेन वा तिष्ठन्ति १६ मोहन्ति–मैथुनसेवां कुर्वन्ति इत्येवं १७पुरा–पूर्वं प्राग्भवे इति भावः २२कृतानां कर्मणामिति योगः, अत एव १८ पौराणानां १९सुचीर्णानां–सुचरितानां, इह सुचरितजनितं कर्मापि कार्ये कारणोपचारात् सुचरितं, ततोऽयं भावार्थः–विशिष्टतथाविधधर्मानुष्ठानविषयाप्रमादकरणक्षान्त्यादिसुचरितजनितानामिति, तथा २० सुपराक्रान्तानां, अत्रापि कार्ये कारणोपचारात् सुपराक्रान्तिजनितानि सुपराक्रान्तानि इत्युक्तम्, किमुक्तं भवति ? सकलसत्त्वमैत्री–सत्यभाषण–परद्रव्यानपहार–सुशीलादिरूपसुपराक्रमजनितानामिति, अत एव २१ शुभानां शुभफलानां, इह किञ्चिदशुभफलमपि इन्द्रियमतिविपर्यासात् शुभफलं प्रतिभासते ततस्तात्त्विकशुभत्वप्रतिपत्त्यर्थमस्यैव पर्यायशब्दमाह–२३ कल्याणानां, तत्त्ववृत्त्या तथाविधविशिष्टफलदायिनां, अथवा कल्याणानां अनर्थोपशमकारिणां २४ कल्याणरूपं २५ फलविपाकं २६ प्रत्येकमनुभवन्तो २७ विहरन्ति–आसते।

– वि० वा०।

[११७] तेसिं[1] णं वणसंडाणं [2]बहुमज्झदेसभाए [3]पत्तेयं पत्तेयं [4]पासायवडेंसगा पण्णत्ता, [5]ते णं पासायवडेंसगा [6]पंच जोयणसयाइं उड्ढं उच्चत्तेणं [7]अड्ढाइज्जाइं जोयणसयाइं विक्खंभेणं [8]अब्भुग्गयमूसियपहसिया [पृ० १६९ पं० ३]इव तहेव [9]बहुसमरमणिज्जभूमिभागो उल्लोओ सीहासणं सपरिवारं [पृ०८१, ९७ पं० ३ तथा पृ०१०२ पं० ३] [10]तत्थ णं [11]चत्तारि देवा महिड्ढिया जाव [12]पलिओवमट्ठितीया [13]परिवसंति, तंजहा-[14]असोए [15]सत्तपण्णे [16]चंपए [17]चूए।

[११७] १ तेषां वनखण्डानां २ बहुमध्यदेशभागे ३ प्रत्येकं प्रत्येकं ४ प्रासादावतंसका इति, अवतंसक इव-शेखरक इवावतंसकः प्रासादानामवतंसक इव प्रासादावतंसकः प्रासादविशेष इति भावः, ५ ते च प्रासादावतंसकाः ६ पञ्च योजनशतान्यूर्ध्वमुच्चैस्त्वेन ७ अर्द्धतृतीयानि योजनशतानि विष्कम्भतः, तेषां च ८ 'अब्भुग्गयमूसियपहसिया विव' इत्यादिविशेषणजातं प्राग्वत् [पृ० १६९ पं० ३-९]। ९ भूमिवर्णनं उल्लोकवर्णनं सिंहासनवर्णनं सपरिवारं च प्राग्वत् [पृ० ८१-९७ पं० ३ तथा पृ० १०२ पं० ३]। १० तत्र-तेषु वनखण्डेषु प्रत्येकमेकैक[1]देवभावे ११ चत्वारो देवा महर्द्धिका 'यावत्' करणात् 'महज्जुइया महाबला महासुक्खा महाणुभावा' इति परिग्रहः, १२ पल्योपमस्थितिकाः १३ परिवसन्ति, तद्यथा-१४ अशोकवने अशोकः १५ सप्तपर्णवने सप्तपर्णः १६ चम्पकवने चम्पकः १७ चूतवने चूतः ○ 'ते णं' इत्यादि, ते अशोकादयो देवाः स्वकीयस्य वनखण्डस्य स्वकीयस्य प्रासादावतंसकस्य, सूत्रे बहुवचनं प्राकृतत्वात्, प्राकृते वचनव्यत्ययोऽपि भवतीति, स्वकीयानां सामानिकदेवानां स्वासां स्वासामग्रमहिषीणां सपरिवाराणां

१ -कद्दिग्भावेन च-भा० २ । ○ अस्य विवरणस्य मूलपाठः, प्रस्तुतसपादनोपयुक्ताना सप्तानामपि प्रतीनाम्-एकस्यामपि प्रतौ नोपलब्धः अतः ज्ञायते यत् विवरणकारदृष्टिसमक्ष प्रस्तुतमुद्रितमूलतः अन्यदेव मूलसूत्रपुस्तकम् आसीत् यदनुसारि एतद्विवरणम् ।

'उवगारिया लयनम्।

[११८] [1]सूरियाभस्स णं देवविमाणस्स [2]अंतो बहुसमरमणिज्जे भूमिभागे पण्णत्ते, तंजहा–वणसंडविहूणे जाव बहवे वेमाणिया देवा देवीओ य आसयंति जाव [कं० ११६] विहरंति, [3]तस्स णं बहुसमरमणिज्जस्स भूमिभागस्स [4]बहुमज्झदेसे एत्थ णं [5]महेगे [6]उवगारियालयणे पण्णत्ते,

स्वासां स्वासां परिषदां स्वेषां स्वेषामनींकानां स्वेषां स्वेषामनीकाधिपतीनां स्वेषां स्वेषामात्मरक्षाणां 'आहेवच्चं पोरेवच्चं'इत्यादि *प्राग्वत्।

[११८] १ सूर्याभस्य विमानस्य २ अन्तः–मध्यभागे बहुसमरमणीयो भूमिभागः प्रज्ञप्तः, तस्य 'से जहा नाम ए आलिंगपुक्खरे इ वा'इत्यादि यानविमान इव वर्णनं तावद् वाच्यं यावद् मणीनां स्पर्शः [कं० ३३–४०] ३ तस्य च बहुसमरमणीयस्य भूमिभागस्य ४ बहुमध्यदेशभागे अत्र ५ सुमहत् ६ उपकारिकालयनं प्रज्ञप्तं, विमानाधिपतिसत्कप्रासादावतंसकादीन् उपकरोति–उपष्टभ्नात्युपकारिका–विमानाधिपतिसत्कप्रासादावतंसकादीनां पीठिका, अन्यत्र त्वियम्–'उपकार्योपकारिका' इति प्रसिद्धा, उक्तं च–"गृह-

*" 'आहेवच्चं पोरेवच्च' इत्यादि प्राग्वत्" अनेन अतिदेशवाक्येन विवरणकारः सूचयति यत् 'आहेवच्चं' इत्यादिपदावलिः पूर्वपाठे समागता परंतु एतावत्पर्यन्त मुद्रितासु सर्वासु कण्डिकासु विवरणकारेण अतिदिष्टा पदावलिर्न क्वापि समायाता अतः प्रस्तुतमुद्रितमूलपाठाद् विवरणकारलब्धमूलपाठे भेदः स्पष्ट एव। अतिदिष्टा पदावलिः [औप० पृ० ७४ पं० १३ गतपाठेन] इत्थं पूरणीया–"पोरेवच्चं सामित्तं भट्टित्त महत्तरगत्तं आणाईसरसेणावच्चं कारेमाणे पालेमाणे महया" अहयनट्ट.....[पृ० ४६ प० १–] विहरति। आहेवच्चं–आधिपत्यम्। पोरेवच्च–पुरोवर्तित्वम्–अग्रेसरत्वम्। भट्टित्त–भर्तृत्वम्। सामित्त–स्वामित्वम्। महत्तरगत्त–महत्तरत्वम्। आणाईसरसेणावच्चं–आज्ञेश्वरसेनापत्यम्। कारेमाणे–कारयन्। पालेमाणे–पालयन्"।

[७]एगं जोयणसयसहस्सं आयामविक्खंभेणं [८]तिण्णि जोयणसयसहस्साइं सोलस सहस्साइं दोण्णि य सत्तावीसं जोयणसए तिन्नि य कोसे अट्ठावीसं च धणुसयं तेरस य अंगुलाइं अद्धंगुलं च किंचिविसेसूणं परिक्खेवेणं, [९]जोयणं बाहल्लेणं, [१०]सव्वजंबूणयामए अच्छे जाव पडिरूवे।

[११९] [१]से णं [२]एगाए पउमवरवेइयाए [३]एगेण य वणसंडेण य [४]सव्वतो [५]समंता संपरिखित्ते, सा[६]= णं पउमवरवेइया [७]अद्धजोयणं उड्ढं उच्चत्तेणं [८]पंच धणुसयाइं विक्खंभेणं [९]उवकारियलेणसमा परिक्खेवेणं,

स्थानं स्मृतं राज्ञामुपकार्योपकारिका" × [ ] इति, उपकारिका लयनमिव उपकारिकालयनं, ७ तद् एकं योजनशतसहस्रमायाम–विष्कम्भाभ्यां ८ त्रीणि योजनशतसहस्राणि + षोडश सहस्राणि द्वे योजनशते सप्तविंशत्यधिके अष्टाविंशं धनुःशतं त्रयोदश अङ्गुलान्यर्द्धाङ्गुलं परिक्षेपतः, इदं च परिक्षेपप्रमाणं जम्बूद्वीपपरिक्षेपपरिमाणवत् क्षेत्रसमासटीकातः परिभावनीयम्। ९ एकं योजनं बाहल्येन पिण्डेन १० सर्वात्मना जाम्बूनदमयम् 'अच्छे' इत्यादि विशेषणजातं प्राग्वत् [पृ० १९ पं० ५]।

[११९] १ तच्च= २ एकया पद्मवरवेदिकया ३ एकेन वनखण्डेन ४ सर्वतः–सर्वासु दिक्षु ५ समन्ततः–सामस्त्येन सम्यक् परिक्षिप्तम्, ६ सा पद्मवरवेदिका ७ अर्द्धं योजनमूर्ध्वमुच्चैस्त्वेन ८ पञ्च धनुःशतानि विष्कम्भतः परिक्षेपेण–९ उपकारिकालयनसमाना–

= अयमेव सम्पूर्णः कण्डिकापाठः अक्षरशो विद्यते जीवा० सू० पृ० १७९ प्र० प० १–पृ० १८० प्र० पं० ८। × "सौधोऽस्त्री राजसदनम् उपकार्योपकारिका"–[अमर० द्वि० का० पुरवर्ग श्लो० १०। हैमअभिधान० का० ४ श्लो० ५९] +–णि द्वयो योजनशते–भा० १।
= अयमेव च संपूर्णः टीकाकण्डिकापाठः अक्षरशो विद्यते जीवा० वृ० पृ० १८० प्र० प० ९–पृ० १८३ प० ७। विशेषस्तु–अत्र यः टीकापाठः

[10]तीसे णं पउमवरवेइयाए [11]इमेयारूवे वण्णावासे पण्णत्ते, तंजहा–[12]वयरामया [पृ० ७८ तथा पृ० १५७ पं० ३–पृ० १५९ पं० २] सुवण्णरूप्पमया फलया नाणामणिमया [13]कलेवरा णाणामणिमया [14]कलेवरसंघाडगा णाणामणिमया [15]रूवा णाणामणिमया [16]रूवसंघाडगा अंकामया [पृ० १५९ पं० २–] उवरिपुञ्छणी सव्वरयणामए अच्छायणे, [17]सा णं पउमवरवेइया [18]एगमेगेणं हेमजालेणं ×[19]एं० गवक्खजालेणं एं० [20]खिंखिणीजालेणं [21]एं० घंटाजालेणं

उपकारिकालयनपरिक्षेपपरिमाणा प्रज्ञप्ता, १० तस्याः–पद्मवरवेदिकायाः ११ अयमेतद्रूपो वर्णावासो वर्णः–श्लाघा यथावस्थितस्वरूपकीर्तनम् तस्यावासो–निवासो ग्रन्थपद्धतिरूपो वर्णावासः–वर्णकनिवेश इत्यर्थः, प्रज्ञप्तो मया शेषतीर्थकरैश्च 'तद्यथा' इत्यादिना तमेव दर्शयति, इह सूत्रपुस्तकेष्वन्यथाऽतिदेशबहुलः पाठो दृश्यते ततो मा भूद् मतिसंमोह इति विनेयजनानुग्रहाय पाठ उपदर्श्यते–१२ 'वयरामया [पृ० ७८ पं० ८ तथा पृ० १५७ पं० ५, पृ० १६१ पं० ९] सुवन्नरुप्पमया फलया नानामणिमया कडेवरा णाणामणिमया कलेवरसंघाडगा नानामणिमया रूवा नानामणिमया रूवसंघाडगा अंकामया [पृ० १५९ पं० १०] उवरिपुंछणी सव्वरयणामए अच्छायणे' एतत् सर्वं द्वारवत् भावनीयं, नवरम्–१३ कलेवराणि–मनुष्यशरीराणि १४ कलेवरसंघाटाः–मनुष्यशरीरयुग्मानि १५ रूपाणि–रूपकाणि १६ रूपसंघाटाः–रूपकयुग्मानि, १७ सा एवंस्वरूपा पद्मवरवेदिका तत्र तत्र प्रदेशे १८ एकैकेन हेमजालेन–सर्वात्मना हेममयेन लम्बमानेन दामसमूहेन १९ एकैकेन गवाक्षजालेन गवाक्षाकृतिरत्नविशेषदामसमूहेन २० एकैकेन किङ्किणीजालेन, किङ्किण्यः–क्षुद्रघण्टिकाः, २१ एकैकेन घण्टाजालकेन–किङ्किण्यपेक्षया किंचिन्महत्यो घण्टाः घण्टाः,

---

स्थूलाक्षरैर्मुद्रितः स तत्र न विद्यते । × 'ए' अक्षरेण 'एगमेगेणं' पद बोध्यम् ।

[22]एँ० मुत्ताजालेणं [23]एँ० मणिजालेणं [24]एँ० कणगजालेणं [25]एँ० रयणजालेणं [26]एँ० पउमजालेणं [27]सव्वतो [28]समंता [29]संपरिक्खित्ता, [30]ते णं जाला+ तवणिज्जलंबूसगा जाव [पृ० १०१ पं० ५–पृ० १०२ पं० ७] चिट्ठंति। तीसे णं पउमवरवेइयाए तत्थ तत्थ देसे तहिं तहिं बहवे [31]हयसंघाडा [पृ० १७२ पं० १] जाव उसभसंघाडा सव्वरयणामया अच्छा जाव [पृ० १९ पं० ५] पडिरूवा पासादीया जाव वीहीतो पंतीतो मिहुणाणि [32]लयाओ [पृ० १७२ पं० २–पृ० १७३ पं० १]

[33]से केणट्ठेणं [34]भंते! [35]एवं वुच्चति–[36]पउमवरवेइया [37]'पउमवरवेइया'?

तथा २२ एकैकेन मुक्ताजालेन–मुक्ताफलमयेन दामसमूहेन २३ एकैकेन मणिजालेन–मणिमयेन दामसमूहेन २४ एकैकेन कनकजालेन–कनकः–पीतरूपः सुवर्णविशेषः तन्मयेन दामसमूहेन एवम्–२५ एकैकेन रत्नजालेन २६ एकैकेन पद्मजालेन सर्वरत्नमयपद्मात्मकेन दामसमूहेन २७सर्वतः सर्वासु दिक्षु २८समन्ततः–सर्वासु विदिक्षु २९परिक्षिप्ताः–व्याप्ताः। एतानि च दामसमूहरूपाणि हेमजालादीनि जालानि लम्बमानानि वेदितव्यानि, तथा चाह–३० तानि हेमजालादीनि जालानि, क्वचित् ='दामा' इति पाठः, तत्र तावत् हेमजालादिरूपा दामान इति, 'तवणिज्जलंबूसगा' इत्यादि [पृ० १०१ पं० ५–पृ० १०२ पं० ७ तथा पृ० १६३ पं० ३, १०] ३१ हयसंघाटादिसूत्रम् [पृ० १७२ पं० ४] ३२ लतासूत्रं च प्राग्वत् [पृ० १८ पं० १० तथा पृ० १४ पं० १३]। ३३ 'से' शब्दः 'अथ' शब्दार्थे, अथ ३४ केनार्थेन–केन कारणेन ३५ भदन्त! ३६ एवमुच्यते–३७पद्मवरवेदिका ३८ 'पद्मवरवेदिका' इति–किमुक्तं भवति?–'पद्मवरवेदिका' इत्येवंरूपस्य शब्दस्य तत्र प्रवृत्तौ सम्प्रति पद्मवरवेदिकाशब्दप्रवृत्तिनिमित्तं जिज्ञासुः पृच्छति–

+ 'जालाणि' इति वक्तव्ये 'जाला' इति "सूत्रे पुस्त्वनिर्देशः प्राकृतत्वात् प्राकृते हि लिङ्गमनियतम्"–राय० वि०।

रायपसेणइयं। ॥२०६॥

'पद्मवरवेदिका' शब्दसार्थः

गोयमा[39]! [40]पउमवरवेइयाए णं [41]तत्थ तत्थ देसे [42]तहिं तहिं [43]वेइयासु [44]वेइयावाहासु य वे×इयफलतेसु य [45]वेइयपुडंतरेसु य [46]खंभेसु [47]खंभवाहासु [48]खंभसीसेसु [49]खंभपुडंतरेसु [50]सूईसु [51]सूईमुहेसु [52]सूईफलएसु [53]सूईपुडंतरेसु [54]पक्खेसु [55]पक्खवाहासु ○पक्खपेरंतेसु ○पक्खपुडंतरेसु [56]बहुयाइं [57]उप्पलाइं [58]पउमाइं [59]कुमुयाइं [60]णलिणाति [61]सुभगाइं [62]सोगंधियाइं [63]पुंडरीयाइं [64]महापुंडरीयाणि [65]सयवत्ताइं [66]सहस्सवत्ताइं

किं निमित्तम्? इति, एवमुक्ते भगवानाह—३९ गौतम! ४०पद्मवरवेदिकायां ४१तत्र तत्र एकदेशे तस्यैव देशस्य ४२तत्र तत्र एकदेशे ४३ वेदिकासु—उपवेशनयोग्यमत्तवारणरूपासु ४४वेदिकावाहासु—वेदिकापार्श्वेषु ४५द्वे वेदिके वेदिकापुटं तेषामन्तराणि—अपान्तरालानि तानि वेदिकापुटान्तराणि तेषु, तथा ४६ स्तम्भेषु सामान्यतः ४७स्तम्भवाहासु—स्तम्भपार्श्वेषु ४८स्तम्भशीर्षेषु ४९ द्वौ स्तम्भौ स्तम्भपुटं तेषामन्तराणि स्तम्भपुटान्तराणि तेषु ५० सूचीषु—फलकसम्बन्धविघटनाभावहेतुपादुकास्थानीयासु तासामुपरि इति तात्पर्यार्थः, ५१यत्र प्रदेशे सूची फलकं भित्त्वा मध्ये प्रविशति तत्प्रत्यासन्नो देशः सूचीमुखं तेषु, तथा ५२ सूचीफलकेषु सूचीभिः सम्बन्धिनो ये फलकप्रदेशास्तेष्युपचारात् सूचिफलकानि तेषु सूचीनामधउपरिवर्त्तमानेषु, ५३ द्वे सूच्यौ सूचीपुटं तदन्तरेषु, ५४ पक्षाः ५५पक्षवाहाः वेदिकैकदेशविशेपास्तेषु, ५६ बहूनि ५७ उत्पलानि गर्दभकानि [पृ०२१ पं० १०] ५८ पद्मानि—सूर्यविकासीनि ५९ कुमुदानि—चन्द्रविकासीनि ६० नलिनानि—ईषद्रक्तानि पद्मानि ६१ सुभगानि—पद्मविशेपरूपाणि ६२ सौगन्धिकानि—कल्हाराणि ६३ पुण्डरीकाणि—सिताम्बुजानि ६४ तान्येव महान्ति महापुण्डरीकाणि ६५ शतपत्राणि—पत्रशतकलितानि ६६ सहस्रपत्राणि—पत्रसहस्रोपेतानि, शतपत्र—

× वि० त्रा०। ○ वि० त्रा०।

[67]सव्वरयणामयाइं अच्छाइं पडिरूवाइं [68]महया [69]वासिकछत्तसमाणाइं पण्ण[70]त्ताइं [71]समणाउसो! [72]से ए[73]एणं अट्ठेणं गोय[74]मा![75]एवं वुच्चइ-पउ[76]मवरवेइया 'पउमवरवेइया'।

पउ[77]मवरवेइया णं भंते! किं[78] [79]सासया [80]असासया? गो[81]यमा! सि[82]य सासया सि[83]य असासया। [84]से केणट्ठेणं भंते! एवं वुच्चइ-सिय *सासया सिय असासया? गो[85]यमा! द[86]व्वट्ठयाए सासया, व[87]न्नपज्जवेहिं गंधपज्जवेहिं रस-

सहस्रपत्रे च पद्मविशेषौ पत्रसंख्याविशेषाच्च पृथगुपात्ते, एतानि ६७ सर्वरत्नमयानि 'अच्छाइं' इत्यादि विशेषणजातं प्राग्वत् [पृ० १९ पं० ५]६८ महान्ति-महाप्रमाणानि ६९वार्षिकाणि-वर्षाकाले पानीयरक्षार्थं यानि कृतानि वार्षिकाणि तानि च तानि छत्राणि च तत्समानानि ७० प्रज्ञप्तानि हे ७१ श्रमण! हे आयुष्मन्! ७२ तद् ७३ एतेन अर्थेन-अन्वर्थेन ७४ गौतम! ७५एवमुच्यते-७६ 'पद्मवरवेदिका' इति, तेषु तेषु यथोक्तरूपेषु प्रदेशेषु यथोक्तरूपाणि पद्मानि पद्मवरवेदिकाशब्दस्य प्रवृत्तिनिमित्तमिति भावः, व्युत्पत्तिश्चैवं-पद्मवरा-पद्मप्रधाना वेदिका पद्मवरवेदिका-इति। ७७पद्मवरवेदिका ७८किं ७९ शाश्वती उत ८० अशाश्वती-किं नित्या उत अनित्या? इति भावः, भगवानाह-८१गौतम! ८२ =स्यात् शाश्वती ८३ स्यात्-अशाश्वती-कथंचिन्नित्या कथञ्चिदनित्या इत्यर्थः, ८४ प्रश्नसूत्रं सुगमम्। भगवानाह-८५ गौतम! ८६ द्रव्यार्थतया-द्रव्यास्तिकनयमतेन शाश्वती, द्रव्यास्तिकनयो हि द्रव्यमेव तात्त्विकमभिमन्यते न पर्यायान्, द्रव्यं चान्वयि परिणामित्वात् अन्वयित्वाच्च सकलकालभावि इति भवति द्रव्यार्थतया शाश्वती, ८७वर्णपर्यायैः-

* "'सासया' इति +आदन्ततया सूत्रे निर्देशः प्राकृत्वात्"-राय० वि०। = "'स्यात्' शब्दो निपातः-'कथंचित्'इति एतदर्थवाची"-राय०वि०।

+ आवन्त-भा०।

पद्मवरवेदिकाया नित्यानित्यत्वम्

पज्जवेहिं फासपज्जवेहिं [88]असासया, [89]से एएणट्ठेणं गोयमा! एवं वुच्चति सिय सासया सिय असासया। [90]पउमवरवेइया णं [91]भंते! [92]कालओ [93]केवच्चिरं होइ[94]? गोयमा[95]! [96]ण कयावि णासि [97]ण कयावि णत्थि [98]ण कयावि न भविस्सइ, [99]भुविं च [100]हवइ य भविस्सइ[101] य,

---

तत्तदन्यसमुत्पद्यमानवर्णविशेषरूपैः, एवं गन्धपर्यायैः रसपर्यायैः स्पर्शपर्यायैः उपलक्षणमेतत् तत्तदन्यपुद्गलविचटनोच्चटनैश्च ८८ अशाश्वती किमुक्तं भवति?–पर्यायास्तिकनयमतेन पर्यायप्राधान्यविवक्षायाम्–अशाश्वती, पर्यायाणां प्रतिक्षणभावितया कियत्कालभावितया विनाशित्वात्, ८९ 'से एएणट्ठेणं' इत्याद्युपसंहारवाक्यं सुगमम्।

इह द्रव्यास्तिकनयवादी स्वमतप्रतिष्ठापनार्थमेवमाह–नात्यन्तासत उत्पादः नापि सतो नाशः "नासतो विद्यते भावो नाभावो विद्यते सतः" [भग० गी० अ० २ श्लो०१६] इति वचनात्, यौ तु दृश्येते प्रतिवस्तु उत्पाद–विनाशौ तद् आविर्भावतिरोभावमात्रम् यथा सर्पस्य उत्फणत्व–विफणत्वे, तस्मात् सर्वं वस्तु नित्यमिति, एवं च तन्मतचिन्तायां संशयः–किं घटादिवत् द्रव्यार्थतया शाश्वती उत सकलकालमेकरूपा–इति? ततः संशयापनोदार्थं भगवन्तं भूयः पृच्छति–९०पद्मवरवेदिका प्राग्वत् [पृ० २०६ पं० ५] ९१भदन्त! ९२ कालतः ९३ कियच्चिरं–कियन्तं कालं यावद् ९४ भवति–एवंरूपा हि कियन्तं कालमवतिष्ठति इति? भगवानाह–९५ गौतम! ९६ न कदाचिन्नासीत् सर्वदैवासीदिति भावः अनादित्वात्, तथा ९७ न कदाचिन्न भवति, सर्वदैव वर्तमानकालचिन्तायां भवतीति भावः सदैव भावात्, तथा ९८न कदाचिन्न भविष्यति, किन्तु भविष्यच्चिन्तायां सर्वदैव भविष्यतीति प्रतिपत्तव्यं, अपर्यवसितत्वात्, तदेवं कालत्रयचिन्तायां नास्तित्वप्रतिषेधं विधाय सम्प्रत्यस्तित्वं प्रतिपादयति–९९ अभूच्च १०० भवति च १०१ भविष्यति चेति,

धुवा[१०२] णियया[१०३] सासया[१०४] अक्खया[१०५] अव्वया[१०६] अवट्ठिया[१०७] णिच्चा[१०८] पउमवरवेइया।

[१२०] [१]सा णं पउमवरवेइया [२]एगेणं वणसंडेणं [३]सव्वओ समंता संपरिक्खित्ता। [४]से णं वणसंडे [५]देसूणाइं दो जोयणाइं [६]चक्कवालविक्खंभेणं [७]उवयारियालेणसमे परिक्खेवेणं [८]वणसंडवण्णतो+ भाणितव्वो जाव [पृ० १८३ पं० २–कं० ११६] विहरंति।

एवं त्रिकालावस्थायित्वात् १०२ ध्रुवा मेर्वादिवत् १०३ ध्रुवत्वादेव सदैव स्वस्वरूपनियता १०४नियतत्वादेव च शाश्वती–शश्वद्भवनस्वभावा १०५ शाश्वतत्वादेव च सततं गङ्गासिन्धुप्रवाहप्रवृत्तावपि पौण्डरीकह्रद इवानेकपुद्गलविचटनेऽपि तावन्मात्रान्यपुद्गलोच्चटनसंभवादक्षया, न विद्यते क्षयो–यथोक्तस्वरूपाकारपरिभ्रंशो यस्याः सा अक्षया, १०६ अक्षयत्वादेव अव्यया–अव्ययशब्दवाच्या मनागपि स्वरूपचलनस्य जातुचिदप्यभावात्, १०७ अव्ययत्वादेव सदैव स्वप्रमाणेऽवस्थिता मानुषोत्तराद् बहिः समुद्रवत्, १०८ एवं च स्वप्रमाणे सदावस्थानेन चिन्त्यमाना नित्या धर्मास्तिकायादिवत्।

[१२०] १ सा पद्मवरवेदिका २ एकेन वनखण्डेन ३ सर्वतः समन्तात् परिक्षिप्ता, ४ स च वनखण्डो ५ देशोने द्वे योजने ६ चक्रवालविष्कम्भतः–७परिक्षेपतः उपकारिकालयनपरिक्षेपपरिमाणो, ८वनखण्डवर्णकः 'किण्हे किण्होभासे'...इत्यादिरूपः समस्तोऽपि प्राग्वत् [पृ० ९ पं० २ तथा पृ० १८३ पं० २] यावद् विहरन्ति।

+ वनखण्डवर्णकविषयः सविस्तरः पाठः जीवा० सू० पृ० १८३–१९७।

[१२१] [1]तस्स× णं उवयारियालेणस्स [2]चउद्दिसिं चत्तारि [3]तिसोवाणपडिरूवगा पण्णत्ता. वण्णओ. तोरणा झया छत्ताइच्छत्ता [पृ० ७८ पं० २]। [4]तस्स णं उवयारियालयणस्स उवरिं बहुसमरमणिज्जे भूमिभागे पण्णत्ते जाव मणीणं फासो [कं० ३३–४०]।

[१२२] [1]तस्स णं बहुसमरमणिज्जस्स भूमिभागस्स [2]बहुमज्झदेसभाए एत्थ णं [3]महेगे [4]मूलपासायवडेंसए पण्णत्ते, [5]से णं मूलपासायवडिंसते [6]पंच जोयणसयाइं उड्ढं उच्चत्तेणं [7]अड्ढाइज्जाइं जोयणसयाइं विक्खंभेणं [8]अब्भुग्गयमूसिय–वण्णतो [पृ० १६९ पं० ३] भूमिभागो [पृ० ८१ पं० ३] उल्लोओ [पृ० ९७ पं० ३] सीहासणं सपरिवारं

[१२१] १ तस्य–उपकारिकालयनस्य २ चतुर्दिशि–चतसृषु दिक्षु एकैकस्यां दिशि एकैकभावेन चत्वारि ३ त्रिसोपानप्रतिरूपकाणि–प्रतिविशिष्टरूपकाणि त्रिसोपानानि प्रज्ञप्तानि, त्रिसोपानवर्णको यानविमानवत् वक्तव्यः [पृ० ७८ पं ७–] तेषां च त्रिसोपानप्रतिरूपकाणां पुरतः प्रत्येकमेकैकं तोरणं, तोरणवर्णकोऽपि तथैव [पृ० ७९ पं० ३,६] ४ तस्य उपकारिकालयनस्य 'बहुसमरमणिज्जे भूमिभागे' इत्यादिना भूमिभागवर्णनकं यानविमानवर्णनवत् तावद् वाच्य यावद् मणीनां स्पर्शः [पृ० ८१ पं० ११–पृ० ९४ पं० ५]।

[१२२] १ तस्य च बहुसमरमणीयस्य भूमिभागस्य २ बहुमध्यदेशभागे अत्र ३ महानेको ४ मूलप्रासादावतंसकः प्रज्ञप्तः, ५स च ६ पञ्च योजनशतान्यूर्ध्वमुच्चैस्त्वेन ७ अर्द्धतृतीयानि योजनशतानि विष्कम्भतः ८ तस्य वर्णनम् मध्येभूमिभागवर्णनम् उल्लोकव-

× इदमपि सविस्तर मूलं जीवा० सू० पृ० २२१ प्र० पं० ५।

भाणियव्वं [पृ० १०२ पं० ४–] अट्ठट्ठ मंगलगा झया छत्ताइच्छत्ता। [9]से णं मूलपासायवडेंसगे [10]अंण्णेहिं चउहिं पासायवडेंसएहिं तयद्धुच्चत्तप्पमाणमेत्तेहिं सव्वतो समंता संपरिखित्ता, ते णं पासायवडेंसगा [11]अड्ढाइज्जाइं जोयणसयाइं उड्ढं उच्चत्तेणं [12]पणवीसं जोयणसयं विक्खंभेणं जाव वण्णओ [पृ०१६९ पं० ३–] [13]ते णं पासायवडिंसया

र्णनं द्वारबहिःस्थितप्रासादवद् भावनीयम् [पृ० १६९ पं० ९.] तस्य* च मूलप्रासादावतंसकस्य बहुमध्यदेशभागेऽत्र महती एका मणिपीठिका प्रज्ञप्ता, अष्टौ योजनान्यायामविष्कम्भाभ्यां चत्वारि योजनानि बाहल्यतः सर्वात्मना मणिमयी 'अच्छा' इत्यादि विशेषणकदम्बकं प्राग्वत् [पृ० १९ पं० ५]। 8'तीसे णं' इत्यादि, तस्याश्च मणिपीठिकाया उपरि महदेकं सिंहासनं प्रज्ञप्तं, तस्य सिंहासनस्य वर्णनं, परिवारभूतानि शेषाणि भद्रासनानि प्राग्वद् वक्तव्यानि [पृ० १०२ पं० ९] ९ स मूलप्रासादावतंसकः १० अन्यैश्चतुर्भिः प्रासादावतंसकैस्तदर्द्धोच्चत्वप्रमाणैः सर्वतः समन्ततः परिक्षिप्तः, तदर्द्धोच्चत्वप्रमाणमेव दर्शयति–११ अर्द्धतृतीयानि योजनशतान्यूर्ध्वमुच्चैस्त्वेन, १२ पञ्चविंशं योजनशतं विष्कम्भेन, तेषामपि स्वरूपवर्णनं मध्यभूमिभागवर्णनमुल्लोकवर्णनं च प्राग्वत् [पृ० १६९ पं० ३ पृ० ८१ पं० ३–पृ० ९७ पं० ३–] तेषां च प्रासादावतंसकानां बहुमध्यदेशभागे प्रत्येकं प्रत्येकं सिंहासनं प्रज्ञप्तं, तेषां च सिंहासनानां वर्णनं प्राग्वत् [पृ० १०२ पं० ९ पृ० ९८ पं० ३] नवरमत्र शेषाणि परिवारभूतानि– वक्तव्यानि, १३ ते प्रासादावतंसका

*'तस्य' इत्यादिकस्य मणिपीठिकासम्बन्धिनः विवरणस्य मूलं न प्रतिभाति। 8" 'तीसे णं' इत्यादि " प्रतीकदर्शनाद् अत्र प्रस्तुतमूलपाठ–विवरणकारलब्धमूलपाठयोर्भेदः प्रतीयते। –नि भद्रासनानि व०–भा० २।

[14]अण्णेहिं चउहिं पासायवडिंसएहिं तयद्धुच्चत्तप्पमाणमेत्तेहिं सव्वओ समंता संपरिखित्ता, [15]ते णं पासायवडेंसया [16]पणवीसं जोयणसयं उड्ढं उच्चत्तेणं [17]बासट्ठिं जोयणाइं अद्धजोयणं च विक्खंभेणं अब्भुग्गयमूसिय-[पृ० १६९ पं० ३] वण्णओ भूमिभागो [पृ० ८१ पं ३]। उल्लोओ [पृ० ९७ पं० ३] सीहासणं [18]सपरिवारं भाणियव्वं [पृ० १०२ पं० ४-] अट्ठट्ठ मंगलगा झया छत्तातिच्छत्ता. [19]ते णं पासायवडेंसगा [20]अण्णेहिं चउहिं पासायवडेंसएहिं तदद्धुच्चत्तपमाणमेत्तेहिं सव्वतो समंता संपरिक्खित्ता, [21]ते णं पासायवडेंसगा [22]बासट्ठिं जोयणाइं अद्धजोयणं च उड्ढं उच्चत्तेणं [23]एक्कतीसं जोयणाइं कोसं च विक्खंभेणं वण्णओ उल्लोओ सीहासणं○ सपरिवारं

१४ अन्यैश्चतुर्भिः प्रासादावतंसकैः तेषां मूलप्रासादावतंसकानां यदर्द्धं तदुच्चत्वप्रमाणमात्रैः—मूलप्रासादावतंसकापेक्षया चतुर्भागमात्रप्रमाणैः सर्वतः समन्तात् संपरिक्षिप्ताः, तदर्द्धोच्चत्वप्रमाणमेव दर्शयति—१५ ते प्रासादावतंसकाः १६ पञ्चविंशं योजनशतमूर्ध्वमुच्चैस्त्वेन १७द्वाषष्टिर्योजनानि अर्द्धयोजनं च विष्कम्भतः, तेषामपि स्वरूपवर्णनम् मध्यभागभूमिवर्णनम्—उल्लोकवर्णनम् सिंहासनवर्णनं— च सर्वं प्राग्वत् [पृ० १६९ पं० ३ पृ० ८१ पं० ३—पृ० ९७ पं० ३ पृ० ९८ पं० ३] केवलमत्रापि सिंहासनं १८ सपरिवारं वक्तव्यम्। १९ ते च प्रासादावतंसका २० अन्यैश्चतुर्भिः प्रासादावतंसकैस्तदर्द्धोच्चत्वप्रमाणैः अनन्तरोक्तप्रासादावतंसकार्द्धोच्चत्वप्रमाणैर्मूलप्रासादावतंसकापेक्षया अष्टभागप्रमाणैः सर्वतः समन्तात् संपरिक्षिप्ताः, तदर्द्धोच्चत्वप्रमाणमेव दर्शयति—२१ ते च प्रासादावतंसका २२ द्वाषष्टिर्योजनानि अर्धयोजनं च ऊर्ध्वमुच्चैस्त्वेन २३ एकत्रिंशतं योजनानि क्रोशं च विष्कम्भतः, एषामपि स्वरूपवर्णनम् मध्यभागभूमिवर्णनम् उल्लोक-

○-ण अपरि-भा० १। —नम् परिवाररहितं प्राग्वत् ते च-भा० १।

पासाय०उवरिं अट्ठट्ठ मंगलगा झया छत्तातिछत्ता।

वर्णनम् सिंहासनवर्णनं च परिवाररहितं प्राग्वत् [पृ० १६९ पं० ३ पृ० ८१ पं० ३–पृ० ९७ पं० ३ पृ० ९८ पं० ३ पृ० १०२ पं ९] ते+ऽपि प्रासादावतंसका अन्यैश्चतुर्भिः प्रासादावतंसकैस्तदर्द्धोच्चत्वप्रमाणैः–अनन्तरोक्तप्रासादावतंसकार्द्धोच्चत्वप्रमाणैर्मूलप्रासादावतंसकापेक्षया षोडशभागप्रमाणैः सर्वतः समंतात् संपरिक्षिप्ताः, तदर्द्धोच्चत्वप्रमाणमेव दर्शयति–एकत्रिंशतं योजनानि क्रोशं च ऊर्ध्वमुच्चैस्त्वेन पञ्चदश योजनानि अर्द्धतृतीयांश्चैव क्रोशान् विष्कम्भतः। एतेषामपि स्वरूपादिवर्णनमनन्तरोक्तम् [प्र० पृ० पं० २] तेऽपि च प्रासादावतंसका अन्यैश्चतुर्भिः प्रासादावतंसकैस्तदर्द्धोच्चत्वप्रमाणैः–अनन्तरोक्तप्रासादावतंसकार्द्धोच्चत्वप्रमाणैः सर्वतः समन्तात् संपरिक्षिप्ताः, तदर्द्धोच्चत्वप्रमाणमेव दर्शयति–पञ्चदश योजनानि अर्द्धतृतीयांश्च क्रोशान् ऊर्ध्वमुच्चैस्त्वेन देशोनान्यष्टौ योजनानि विष्कम्भेन, एषामेव स्वरूपव्यावर्णनं भूमिभागवर्णनम् उल्लोकवर्णनं सिंहासनवर्णनं च परिवारवर्जितं प्राग्वत् [प्र० पृ० पं० २]

+ प्रस्तुतसंपादनोपयुक्तेषु एकस्मिन्नपि लिखितादर्शे अतः आरम्य कण्डिकासमाप्तिपर्यन्तस्य विवरणस्य मूलपाठो न लभ्यते एवमेव च मु० पुस्तकेऽपि, अत एवात्र विवरणकारलब्धमूलपाठ–प्राप्तादर्शमूलपाठयोर्भेदः। स च अलभ्यमानो मूलपाठः श्रीजीवाजीवाभिगमसूत्रे प्रस्तुतान्यप्रसङ्गेऽपि एवमुपलभ्यते–"ते ण पासायवडिसगा एक्कतीसं जोयणाइ कोसं च उड्ढं उच्चत्तेण, अद्धसोलसजोयणाइ अद्धकोस च आयामविक्खभेण...ते ण पासायवडिसगा अद्धसोलस जोयणाइ अद्धकोस च उड्ढ उच्चत्तेण देसूणाइं अट्ठ जोयणाइं आयामविक्खभेणं...पृ० २२१ प० २–८। तद्विवरण चैवम्–"तदर्धोच्चत्वप्रमाणमेव दर्शयति–एकत्रिशतं योजनानि क्रोश चैकमूर्ध्वमुच्चैस्त्वेन, पञ्चदश योजनानि अर्धतृतीयाश्च क्रोशान् आयाम–विष्कम्भाभ्याम्......तदर्धोच्चत्वप्रमाणमेव दर्शयति–पञ्चदश योजनानि अर्धतृतीयाश्च क्रोशान् ऊर्ध्वमुच्चैस्त्वेन देशोनानि अष्टौ योजनानि आयाम–विष्कम्भाभ्याम्"–जीवा० वृ० पृ० २२३ प्र० प० ११–पृ० २२३ पं० ४।

सुधर्मासभावर्णकः

[१२३]—[1]तस्स णं मूलपासायवडेंसयस्स [2]उत्तरपुरत्थिमेणं एत्थ णं [3]सभा सुहम्मा पण्णत्ता, [4]एगं जोयणसयं आयामेणं [5]पण्णासं जोयणाइं विक्खम्भेणं [6]बावत्तरिं जोयणाइं उड्ढं उच्चत्तेणं [7]अणेगखम्भ...जाव अच्छरगण... पासादीया [पृ० ९४ पं० ३–पृ० ९७ पं० १] [8]सभाए णं सुहम्माए [9]तिदिसिं [10]तओ दारा पण्णत्ता, [11]तंजहा–[12]पुरत्थिमेणं [13]दाहिणेणं [14]उत्तरेणं. [15]ते णं दारा [16]सोलस जोयणाइं उड्ढं उच्चत्तेणं [17]अट्ठ जोयणाइं विक्खम्भेणं [18]तावतियं चेव पवेसेणं [19]सेया वरकणगथूभियागा जाव वणमालाओ, [तेसि* णं दाराणं उवरिं अट्ठट्ठ मङ्गलगा झया छत्ताइच्छत्ता] [20]तेसि णं दाराणं पुरओ

[१२३] १ तस्य मूलप्रासादावतंसकस्य २ उत्तरपूर्वस्यामीशानकोणे इत्यर्थः, अत्र ३ सभा सुधर्मा प्रज्ञप्ता, सुधर्मा नाम विशिष्टच्छन्दकोपेता, सा ४ एकं योजनशतमायामतः ५ पञ्चाशत् योजनानि विष्कम्भतः ६ द्वासप्ततिर्योजनानि ऊर्ध्वमुच्चैस्त्वेन, कथंभूता सा? इत्याह–७अनेक....कञ्चणमणिरयणथूभियागा नानाविहपञ्चवण्णघण्टापडागपरिमण्डियग्गसिहरा [पृ० ९४ पं० ८–पृ०९७ पं० ९] अच्छा जाव पडिरूवा' इति प्राग्वत्। ८ सभायाश्च सुधर्मायाः ९ त्रिदिशि तिसृषु दिक्षु एकैकस्यां दिशि एकैकद्वारभावेन १० त्रीणि द्वाराणि प्रज्ञप्तानि, ११तद्यथा–एकं १२ पूर्वस्याम् एकं १३ दक्षिणस्याम् एकम् १४उत्तरस्याम् १५तानि च द्वाराणि प्रत्येकं १६षोडश षोडश योजनान्यूर्ध्वमुच्चैस्त्वेन १७ अष्टौ योजनानि विष्कम्भतः १८ तावन्त्येवाष्टौ योजनानीति भावः प्रवेशेन, १९ 'सेया वरकणगथूभियागा' इत्यादि प्रागुक्तद्वारवर्णनं तदेव तावद् वक्तव्यं यावत् वनमालाः [पृ० १६६ पं० ५–पृ० १६८ पं० ३] इति, २० तेषां

* अस्यां कण्डिकायाम्–[ ] एतच्चिह्नान्तर्गतः पाठ. त्रि० बा०।

[21]पत्तेयं पत्तेयं मुहमंण्डवे[22] पण्णत्ते, [23]ते णं मुहमण्डवा एगं[24] जोयणसयं आयामेणं पंण्णासं[25] जोयणाइं विक्खंभेणं साइरेगाइं[26] सोलस जोयणाइं उड्ढं उच्चत्तेणं वण्णओ[27] सभाए सरिसो, [तेसि* णं मुहमण्डवाणं तिदिसिं ततो दारा पण्णत्ता, तंजहा–पुरत्थिमेणं दाहिणेणं उत्तरेणं, ते णं दारा सोलस जोयणाइं उड्ढं उच्चत्तेणं अट्ठ जोयणाइं विक्खंभेणं तावइयं चेव पवेसेणं सेया वरकणगथूभियागा जाव वणमालाओ। तेसि णं मुहमंडवाणं भूमिभागा उल्लोया, तेसि णं मुहमंडवाणं उवरिं अट्ठट्ठ मङ्गलगा झया छत्ताइच्छत्ता।] तेसिं[28] णं मुहमंडवाणं पुरतो पत्तेयं[29] पत्तेयं पेच्छाघरमंडवे[30] पण्णत्ते, मुहमंडववत्तव्वया जाव दारा भूमिभागा उल्लोया।

[१२४] तेसिं[1] णं बहुसमरमणिज्जाणं भूमिभागाणं बहुमज्झदेसभाए[2] पत्तेयं[3] पत्तेयं वइरामए[4] अक्खाडए

च द्वाराणां पुरतः २१ प्रत्येकं प्रत्येकं २२ मुखमण्डपः प्रज्ञप्तः, २३ ते च मुखमण्डपा २४ एकं योजनशतमायामतः २५ पञ्चाशत् योजनानि विष्कम्भतः २६ सातिरेकाणि षोडश योजनानि ऊर्ध्वमुच्चैस्त्वेन, एतेषामपि 'अणेगखम्भसयमन्निविट्ठा' इत्यादि २७ वर्णनं सुधर्मसभाया इव निरवशेषं द्रष्टव्यम् [कं० १२३] २८ तेषां च मुखमण्डपानां पुरतः २९ प्रत्येकं प्रत्येकं ३० प्रेक्षागृहमण्डपः प्रज्ञप्तः, ते च प्रेक्षागृहमण्डपा आयाम–विष्कम्भ–उच्चैस्त्वैः प्राग्वत् [पृ० पं०] प्रेक्षागृहमण्डपानां च भूमिभागवर्णनं प्राग्वत् तावद् वाच्यं यावद् मणीनां स्पर्शः [कं० ३३–४० तथा पृ० ९४ पं० ७–]

[१२४] १ तेषां च बहुसमरमणीयानां भूमिभागानां २बहुमध्यदेशभागे ३प्रत्येकं प्रत्येकं ४वज्रमयोऽक्षपाटकः प्रज्ञप्तः [पृ० ९७

पण्णत्ते, तेसिं णं वयरामयाणं अक्खाडगाणं बहु[6]मज्झदेसभागे [7]पत्तेयं पत्तेयं [8]मणिपेढिया पण्णत्ता, [9]ताओ णं मणिपेढियातो [10]अट्ठ जोयणाइं आयामविक्खंभेणं [11]चत्तारि जोयणाइं बाहल्लेणं सव्वमणि[12]मईओ अच्छाओ[13] जाव पडिरूवाओ, [14]तासि णं मणिपेढियाणं उवरिं [15]पत्तेयं पत्तेयं सीहा[16]सणे पण्णत्ते, सीहासण[17]वण्णओ सपरिवारो, तेसिं[18] णं पेच्छाघरमंडवाणं उवरिं अट्ठ[19] मंगलगा झया छत्तातिछत्ता, तेसिं[20] णं पेच्छाघरमंडवाणं पुरओ [21]पत्तेयं पत्तेयं मणिपेढि[22]याओ पण्णत्ताओ, [23]ताओ णं मणिपेढियातो सोल[24]स सोलस जोयणाइं आयामविक्खंभेणं [25]अट्ठ जोयणाइं बाहल्लेणं स[26]व्वमणिमईओ अच्छाओ पडिरूवाओ, [27]तासि णं उवरिं

पं० १४–] ५ तेषां च वज्रमयानामक्षपाटकानां ६ बहुमध्यदेशभागे ७ प्रत्येकं प्रत्येकं ८ मणिपीठिका प्रज्ञप्ता ९ ताश्च मणिपीठिकाः १० अष्ट योजनान्यायाम–विष्कम्भाभ्यां ११ चत्वारि योजनानि बाहल्येन–पिण्डभावेन १२ सर्वात्मना मणिमय्यः १३ 'अच्छाओ' इत्यादि विशेषणजातं प्रागिव [पृ० ९८ पं० ६]। १४ तासां च मणिपीठिकानामुपरि १५ प्रत्येकं प्रत्येकं १६ सिंहासनं प्रज्ञप्तं, १७ तेषां च सिंहासनानां वर्णनं परिवारश्च प्राग्वद् वक्तव्यः [पृ० ९८ पं० ८] १८ तेषां च प्रेक्षागृहमण्डपानामुपरि १९ अष्टावष्टौ मङ्गलकानि, बहवः कृष्णचामरध्वजा इत्यादि प्राग्वत् [पृ० १९ पं० ६–पृ० २० पं० ९] २० तेषां प्रेक्षागृहमण्डपानां पुरतः २१ प्रत्येकं प्रत्येकं २२ मणिपीठिकाः प्रज्ञप्ताः, २३ ताश्च मणिपीठिकाः प्रत्येकं प्रत्येकं २४ षोडश योजनान्यायाम–विष्कम्भाभ्याम् २५ अष्टौ योजनानि बाहल्येन २६ सर्वात्मना मणिमय्यः 'अच्छा' इत्यादि विशेषणकदम्बकं प्राग्वत् [पृ० ९८ पं० ६] २७ तासां

[28]पत्तेयं पत्तेयं *[29]थूभे पण्णत्ते, [30]ते णं *थूभा [31]सोलस सोलस जोयणाइं आयामविक्खंभेणं [32]साइरेगाइं सोलस सोलस जोयणाइं उड्ढं उच्चत्तेणं, सेया संखंक. . .[पृ० १७९ पं० ३] सव्वरयणामया अच्छा जाव पडिरूवा, [33]तेसि णं थूभाणं उवरिं [34]अट्ठट्ठ मंगलगा झया छत्तातिछत्ता जाव सहस्सपत्तहत्थया। तेसिं[35] णं थूभाणं [36]पत्तेयं पत्तेयं [37]चउद्दिसिं [38]मणिपेढियातो पण्णत्ताओ, ताओ णं मणिपेढियातो [39]अट्ठ जोयणाइं आयामविक्खंभेणं [40]चत्तारि जोयणाइं बाहल्लेणं [41]सव्वमणिमईओ अच्छाओ जाव पडिरूवातो, [42]तासि णं मणिपेढियाणं उवरिं

च मणिपीठिकानामुपरि २८ प्रत्येकं प्रत्येकं २९ चैत्यस्तूपः प्रज्ञप्तः, ३० ते च चैत्यस्तूपाः ३१ षोडश योजनान्यायाम–विष्कम्भाभ्यां ३२ सातिरेकाणि षोडश योजनान्यूर्ध्वमुच्चैस्त्वेन 'संखंक'–इत्यादि तद्वर्णनं सुगमम्, [पृ० १७९ पं० १२] ३३ तेषां च चैत्यस्तूपानामुपरि ३४ अष्टावष्टौ स्वस्तिकादीनि मङ्गलकानि 'जाव सहस्सपत्तहत्थया' इति 'यावत्' करणात्' तेसिं चेइयथूभाणं उप्पिं बहवे किण्हचामरज्झया [पृ० २५ पं० २ तथा पं० ९] तेसिं चेइयथूभाणं उप्पिं बहवे छत्ताइच्छत्ता ...[पृ० २१ पं० १ तथा ५] इति, एतच्च समस्तं प्राग्वत्। ३५ तेषां चैत्यस्तूपानां ३६ प्रत्येकं प्रत्येकं ३७ चतुर्दिशि–चतसृषु दिक्षु एकैकस्यां दिशि एकैकमणिपीठिकाभावेन चतस्रो ३८ मणिपीठिकाः प्रज्ञप्ताः ३९ अष्टौ योजनान्यायामविष्कम्भाभ्यां ४० चत्वारि योजनानि बाहल्येन ४१ सर्वात्मना मणिमय्यः 'अच्छा' इत्यादि प्राग्वत् [पृ० ९८ पं० ६] ४२ तासां च ० मणिपीठिकानामुपरि एकैकप्रतिमाभावेन

* "चेइयथूभा"–जीवा० पृ० २२४ पं० १४। ० मणिपीठिकानामुपरि एकैकस्या अपि मणिपीठिकाया उपरि एकैक–पा० ४–५।

[43]चत्तारि [44]जिणपडिमातो [45]जिणुस्सेहपमाणमेत्ताओ+ [46]संपलियंकनिसन्नाओ [47]थूभाभिमुहीओ [48]संनिखित्ताओ चिट्ठंति, तंजहा–[49]उसभा [50]वद्धमाणा [51]चंदाणणा [52]वारिसेणा [53]।

[१२५] तेसिं णं [1]थूभाणं पुरतो [2]पत्तेयं पत्तेयं [3]मणिपेढियातो पण्णत्ताओ, [4]ताओ णं मणिपेढियातो [5]सोलस जोयणाइं आयामविक्खंभेणं [6]अट्ठ जोयणाइं बाहल्लेणं [7]सव्वमणिमईओ जाव पडिरूवातो, [8]तासिं णं मणिपेढियाणं उवरिं [9]पत्तेयं पत्तेयं [10]चेइयरुक्खे पण्णत्ते, ते णं चेइयरुक्खा [11]अट्ठ जोयणाइं उड्ढं उच्चत्तेणं [12]अद्ध×जोयणं उव्वेहेणं, [13]दो जोयणाइं [14]खंधा [15]अद्धजोयणं विक्खंभेणं [16]छ जोयणाइं [17]विडिमा [18]बहुमज्झदेसभाए

४३ चतस्रो ४४ जिनप्रतिमाः ४५ जिनोत्सेधप्रमाणमात्राः जिनोत्सेध उत्कर्षतः पञ्च धनुःशतानि जघन्यतः सप्त हस्ताः, इह तु पञ्च धनुःशतानि सम्भाव्यन्ते, ४६ पर्यङ्कासनसन्निपण्णाः, ४७ स्तूपाभिमुख्यः ४८ सन्निक्षिप्ताः, तथा जगत्स्थितिस्वाभाव्येन सम्यग्निवेशितास्तिष्ठन्ति, ४९ तद्यथा–५० ऋषभाः ५१ वर्द्धमानाः ५२ चन्द्राननाः ५३ वारिषेणाः–इति।

[१२५] १ तेषां चैत्यस्तूपानां पुरतः २ प्रत्येकं प्रत्येकं ३ मणिपीठिकाः प्रज्ञप्ताः, ४ ताश्च मणिपीठिकाः ५ षोडश योजनान्यायामविष्कम्भाभ्याम् ६ अष्टौ योजनानि बाहल्यतः ७ 'सव्वमणिमईओ' इत्यादि प्राग्वत्, [पृ० ९८ पं० ६] ८ तासां च मणिपीठिकानामुपरि ९ प्रत्येकं प्रत्येकं १० चैत्यवृक्षाः ११ अष्टौ योजनान्यूर्ध्वमुच्चैस्त्वेन १२ अर्द्धयोजनमुद्वेधेन–उण्डत्वेन, १३ द्वे योजने उच्चैस्त्वेन १४ स्कन्धः स एव १५ अर्धं योजनं विष्कम्भतया १८ बहुमध्यदेशभागे १७ विडिमा–ऊर्ध्वं विनिर्गता शाखा सा

+ ओपलियंक–भा० १। × अट्ठ जोयणाइं–मु० पु० पाठः स च विवरणविरोधी।

[19]अट्ठ जोयणाइं -आयामवि[20]क्खंभेणं साइरे[21]गाइं अट्ठ जोयणाइं [22]सव्वग्गेणं पण्णत्ता, तेसिं[23] णं चेइयरुक्खाणं इमे[24]यारूवे वण्णावासे पण्णत्ते, तं[25]जहा-व[26]यरामयमूलरययसुपइट्ठियविडिमा रि[27]ट्ठामयविउलकंदवेरुलियरुइलखंधा [28]सुजायवरजायरूवपढमगविसालसाला नाणा[29]मणिमयरयणविविहसाहप्पसाहवेरुलियपत्ततवणिज्जपत्तबिंटा जं[30]बूणयरत्तमउयसुकुमालपवालपल्लववरंकुरधरा विचित्त[31]मणिरयणसुरभिकुसुमफलभरनमियसाला

ऊर्ध्वमुच्चैस्त्वेन १६ षड् योजनानि १९ अष्टौ योजनानि २० विष्कम्भेन २२ सर्वाग्रेण २१ सातिरेकेणाष्टौ योजनानि प्रज्ञप्ताः २३तेषां च चैत्यवृक्षाणाम् २४अयमेतद्रूपो वर्णावासः प्रज्ञप्तः २५तद्यथा-२६वज्राणि-वज्रमयानि मूलानि येषां ते वज्रमयमूला रजते सुप्रतिष्ठिता विडिमा-बहुमध्यदेशभागे ऊर्ध्वं विनिर्गता शाखा येषां ते रजतसुप्रतिष्ठितविडिमाः* २७ रिष्टमयो-रिष्टरत्नमयः कन्दो येषां ते रिष्टमयकन्दाः, तथा वैडूर्यरत्नमयो रुचिरः स्कन्धो येषां ते *तथा, २८ सुजातं-मूलद्रव्यशुद्धं वरं-प्रधानं यत् जातरूपं तदात्मकाः प्रथमका-मूलभूता विशालाः शालाः शाखा येषां ते सुजातवरजातरूपप्रथमकविशालशालाः २९ नानामणिरत्नात्मिका विविधाः शाखाः प्रशाखा येषां ते तथा वैडूर्याणि-वैडूर्यमयाणि पत्राणि येषां ते तथा तपनीयमयानि पत्रवृन्तानि येषां ते ○तथा, ३० जाम्बूनदा-जाम्बूनदसुवर्णविशेषमया रक्ता-रक्तवर्णा मृदवः-मनोज्ञाः सुकुमाराः-सुकुमारस्पर्शाः प्रवालाः-ईषदुन्मीलितपत्रभावाः पल्लवाः-संजातपरिपूर्णप्रथमपत्रभावरूपा वराङ्कुराः-प्रथममुद्भिद्यमाना अङ्कुरास्तान् धरन्तीति जाम्बूनदरक्तमृदुसुकुमारप्रवालपल्लवाङ्कुरधराः ३१ विचि- ॥११९॥

– नैतत् पद विवरणे । * "ततः पूर्वपदेन कर्मधारयः समासः"-राय० वि० । ○ "ततः पूर्ववत् पदद्वयमीलनेन कर्मधारयः" -राय० वि० ।

[32]सच्छाया [33]सप्पभा [34]सस्सिरीया [35]सउज्जोया [36]अहियं नयण-मणणिव्वुइकरा [37]अमयरससमरसफला पासाईया[38]...। तेसिं[39] णं चेइयरुक्खाणं उवरिं [40]अट्ठट्ठ मंगलगा झया छत्ताइछत्ता। तेसिं[41] णं चेइयरुक्खाणं पुरतो [42]पत्तेयं पत्तेयं [43]मणिपेढियाओ पण्णत्ताओ, [44]ताओ णं मणिपेढियाओ [45]अट्ठ जोयणाइं आयामविक्खंभेणं [46]चत्तारि जोयणाइं बाहल्लेणं

त्रमणिरत्नमयानि यानि सुरभीनि कुसुमानि फलानि च तेषां भरेण नमिताः शालाः-शाखा येषां ते तथा, तथा ३२ सती-शोभना छाया येषां ते सच्छायाः, ३३ सती-शोभना-प्रभा-कान्तिर्येषां ते सत्प्रभाः, अत एव ३४ सश्रीकाः, तथा ३५ सह उद्द्योतेन वर्त्तन्ते मणिरत्नानामुद्द्योतभावात् सोद्द्योताः, ३६ अधिकं नयन-मनोनिर्वृतिकराः ३७अमृतरससमरसानि फलानि येषां ते तथा, ३८'पासाईया' इत्यादिविशेषणचतुष्टयं प्राग्वत् [पृ०७ पं०१] एते× च चैत्यवृक्षा अन्यैर्बहुभिस्तिलक-लवक-च्छत्रौपग-शिरीष-सप्तपर्ण-दधिपर्ण-लुब्धक-धवल-चन्दन-नीप-कुटज-पनस-ताल-तमाल-प्रियाल-प्रियङ्गु-पारापत-राजवृक्ष-नन्दिवृक्षैः सर्वतः समन्तात् सम्परिक्षिप्ताः, ते च तिलका यावन्नन्दिवृक्षा मूलमन्तः कन्दमन्त इत्यादि सर्वमशोकपादपवर्णनामिव [पृ० १२ पं० २] तावद् वक्तव्यं यावत् परिपूर्णं लतावर्णनम् [पृ० १२पं० ४] ३९तेषां चैत्यवृक्षाणामुपरि ४०अष्टावष्टौ मङ्गलकानि बहवः कृष्णचामरध्वजा इत्यादि चैत्यस्तूप इव तावद् वक्तव्यं यावद् बहवः सहस्रपत्रहस्तकाः, सर्वरत्नमया यावत् प्रतिरूपका इति [पृ०८७ पं०७]४१ तेषां च चैत्यवृक्षाणां पुरतः ४२ प्रत्येकं ४३ मणिपीठिकाः प्रज्ञप्ताः, ४४ ताश्च मणिपीठिका ४५ अष्टौ योजनान्यायामविष्कम्भाभ्यां ४६ चत्वारि योजनानि बाह-

× अत आरभ्य 'यावत् प्रतिरूपकाः' [पं० ११] इत्यन्तस्य विवरणस्य मूलपाठो मूले न दृश्यते।

[47]सव्वमणिमईओ अच्छाओ जाव पडिरूवाओ, [48]तासि णं मणिपेढियाणं उवरिं [49]पत्तेयं पत्तेयं [50]महिंदज्झए पण्णत्ते, [51]ते णं महिंदज्झया [52]सट्ठिं जोयणाइं उड्ढं उच्चत्तेणं ○[53]अद्धकोसं उव्वेहेणं [54]अद्धकोसं विक्खंभेणं वइरामय[55]- [पृ०१०९ पं०२]-सिहरा पासादीया। तेसिं[56] णं महिंदज्झयाणं उवरि [57]अट्ठट्ठ मंगलगा [58]झया छत्तातिछत्ता [पृ० ८० पं० ३] तेसिं[59] णं महिंदज्झयाणं पुरतो [60]पत्तेयं पत्तेयं नंदा[61] पुक्खरिणीओ पण्णत्ताओ, ताओ णं पुक्खरिणीओ =एगं जोयणसयं[62] आयामेणं [63]पण्णासं जोयणाइं विक्खंभेणं दस[64] जोयणाइं उव्वेहेणं

ल्यतः ४७ 'सव्व-रयणामईओ' इत्यादि प्राग्वत् [पृ० ९८ पं ६] ४८ तासां च मणिपीठिकानामुपरि ४९ प्रत्येकं ५० महेन्द्रध्वजः प्रज्ञप्तः, ५१ते च महेन्द्रध्वजाः ५२षष्टियोजनान्यूर्ध्वमुच्चैस्त्वेन ५३अर्द्धक्रोशम्-अर्द्धगव्यूतमुद्वेधेन-उण्डत्वेन ५४अर्द्धक्रोशं विष्कम्भतः ५५ 'वइरा'...[पृ० १०९, पं० २-८] ५६तेषां महेन्द्रध्वजानामुपरि ५७ अष्टावष्टौ मङ्गलकानि ५८ बहवः कृष्णचामरध्वजा इत्यादि तोरणवत् सर्वं वक्तव्यम् [पृ० ८० पं० ९] ५९ तेषां च महेन्द्रध्वजानां पुरतः ६० प्रत्येकं ६१ नन्दा नन्दाभिधाना पुष्करिणी प्रज्ञप्ता, ६२एकं योजनशतमायामतः ६३पञ्चाशत् योजनानि विष्कम्भतः ६४ ○दश योजनान्युद्वेधेन-उण्डत्वेन, तासां च नन्दापुष्करिणीनां

○ अत्र सर्वप्रतिषु मु० पुस्तके च 'जोयण उव्वेहेण जोयण विक्खंभेणं' इति-एव पाठ उपलभ्यते, केवलम् भा० २ प्रतौ 'सट्ठि जोयणाइं उड्ढं उच्चत्तेण अद्धकोस उव्वेहेण, अद्धकोसं विक्खभेण' इति लभ्यते परतु भा० २ प्रतावपि मूलतस्तु 'जोयण' इत्यादिक एव पाठो दृश्यते, अनन्तर केनचित् शोधकेन मूल-विवरणयोर्वैषम्य परिहर्तुकामेन 'जोयणं' स्थाने 'अद्धकोसं' इति परिवर्तितं प्रतिभाति, अस्माभिस्तु मूल-विवरणयोः संवादाय विवरणानुसारी स शोधित एव पाठोऽत्र मूले न्यस्तः। = एग जोयणाइ विक्खभेण दस जोयणाइं उव्वेहेणं पा० १। ⁄ मूल-विवरणयोः पाठभेदः। ○ मु० पु० विवरणे तथा पा० ४-५, भा० १ प्रतौ च विवरणे 'द्वासप्ततियोजनानि' इत्येव पाठो लभ्यते किन्तु केवलं

[65]अच्छाओ-जाव वण्णओ-एगइयाओ उदगरसेणं पण्णत्ताओ, पत्तेयं पत्तेयं [66]पउमवरवेइयापरिखित्ताओ पत्तेयं पत्तेयं वणसंड[67]परिक्खित्ताओ [पृ० १९१ पं० २] [68]तासि णं णंदाणं पुक्खरिणीणं तिदिसिं[69] [70]तिसोवाणपडिरूवगा पण्णत्ता, तिसोवाणपडिरूवगाणं वण्णओ, तोरणा झया छत्तातिछत्ता। [71]सभाए णं सुहम्माए [72]अडयालीसं मणोगुलियासाहस्सीओ पण्णत्ताओ, [73]तंजहा-[74]पुरत्थिमेणं सोलससाहस्सीओ [75]पच्चत्थिमेणं सोलससाहस्सीओ [76]दाहिणेणं अट्ठसाहस्सीओ [77]उत्तरेणं [78]अट्ठसाहस्सीओ, [79]तासु णं मणोगुलियासु बहवे सुवण्णरुप्पमया फलगा पण्णत्ता, तेसु णं सुवन्नरुप्पमएसु फलगेसु बहवे वइरामया णागदंता पण्णत्ता, तेसु णं वइरामएसु णागदंतएसु किण्ह-सुत्तवट्टवग्घारियमल्लदामकलावा चिट्ठंति,

६५ 'अच्छाओ सण्हाओ रययामय'... इत्यादि वर्णनं प्राग्वत् [पृ० १९१ पं० २-७] ताश्च नन्दापुष्करिण्यः प्रत्येकं प्रत्येकं ६६ पद्मवरवेदिकया प्रत्येकं प्रत्येकं ६७ वनखण्डेन परिक्षिप्ताः, ६८ तासां च नन्दापुष्करिणीनां प्रत्येकं ६९ त्रिदिशि ७० त्रिसोपानप्रतिरूपक-तोरणवर्णनं प्राग्वत् [पृ० ७८ पं० ६-पृ० ८१ पं० १०] ७१ सभायां सुधर्म्मायाम् ७२ अष्टचत्वारिंशन्मनोगुलिकासहस्राणि-पीठिकासहस्राणि प्रज्ञप्तानि, ७३ तद्यथा-७४ पूर्वस्यां दिशि षोडश मनोगुलिकासहस्राणि, ७५ षोडश सहस्राणि पश्चिमायाम् ७६ अष्टौ सहस्राणि दक्षिणतः ७७ अष्टौ सहस्राणि उत्तरतः, ७९ एतासु च फलक-नागदन्तक-माल्यदामवर्णनं प्राग्वत् [पृ० १७६ पं० २-] सिक्कगवर्णनं

भा० २ प्रतावेव 'दश योजनानि' पाठः प्राप्तः स एव च पाठः मूलपाठानुसारी अत एव अत्र स्वीकृतः । विवरणे निर्दिष्टः 'द्वासप्ततियोजनानि' पाठोऽपि विशेषेण विचारणीयोऽस्ति नहि अविमृश्यैव विवरणकारेण एव निर्देशः कृतो भवेत् ।

संभाए णं सुहम्माए अडयालीसं गोमाणसियासाहस्सीओ पन्नत्ताओ, जह मणोगुलिया जाव णागदंतगा, तेसु
णं णागदंतएसु बहवे रययामया सिक्कगा पण्णत्ता, तेसु णं रययामएसु सिक्कगेसु बहवे वेरुलियामइओ धूवघ-
डियाओ पण्णत्ताओ, ताओ णं धूवघडियाओ कालागुरुपवर-जाव [पृ० १६४ पं ३] चिट्ठंति।

[१२६] सभाए णं सुहम्माए अंतो बहुसमरमणिज्जे भूमिभागे पण्णत्ते जाव मणीहिं उवसोभिए मणिफासो
य उल्लोयो य, तस्स णं बहुसमरमणिज्जस्स भूमिभागस्स बहुमज्झदेसभाए एत्थ णं महेगा मणिपेढिया पण्णत्ता
सोलस जोयणाइं आयामविक्खंभेणं अट्ठ जोयणाइं बाहल्लेणं सव्वमणिमयी जाव पडिरूवा। तीसे णं मणिपेढि-
याए उवरिं एत्थ णं माणवए चेइयखंभे पण्णत्ते,

८०सभायां सुधर्मायां ८१ अष्टाचत्वारिंशत् ८२गोमानसिकाः-शय्यारूपाः स्थानविशे-
षास्तेषां सहस्राणि प्रज्ञप्तानि, ८३तद्यथा-षोडश सहस्राणि पूर्वतः षोडश सहस्राणि पश्चिमायाम् अष्टौ सहस्राणि दक्षिणतः अष्टौ सहस्राणि
उत्तरतः, तास्वपि फलकवर्णनम् नागदन्तवर्णनम् सिक्ककगवर्णनम् धूपघटिकावर्णनं च द्वारवत् [पृ० १७६ पं० २, पृ०१६४ पं० २-३]
धूपघटिकावर्णनं द्वारवत् [पृ०१६४ पं० २-३]

[१२६] १ 'सभाए णं सुहम्माए' इत्यादिना भूमिभाग×वर्णनं उल्लोकवर्णनं च प्राग्वत् [पृ०८१, ९७ पं०३] २ तस्य बहुसमरम-
णीयस्य भूमिभागस्य ३ बहुमध्यदेशभागेऽत्र ४ महती एका मणिपीठिका प्रज्ञप्ता, ५ षोडश योजनान्यायाम-विष्कम्भाभ्याम् ६ अष्टौ
योजनानि बाहल्यतः ७ सर्वरत्नमयी इत्यादि प्राग्वत् [पृ० पं०] ८ तस्याश्च मणिपीठिकाया उपरि महानेको ९ माणवकनामा चैत्य-

---

× -वर्णन 'सभाए णं सुहम्माए इत्यादिना उल्लोकवर्णनं च प्रा-पा० ४-५ भा० २।

रायपसेणइयं।

सट्ठिं[10] जोयणाइं उड्ढं उच्चत्तेणं, जोयणं[11] उव्वेहेणं, जोयणं[12] विक्खंभेणं अडयालीसंअंसिए[13] अडयालीसइ[14]○कोडीए अडयालीसइविग्गहिए[15] सेसं जहा महिंदज्झयस्स[16] [पृ० पं०] माणवगस्स[17] णं चेइयखंभस्स उवरिं बारस[18] जोयणाइं ओगाहेत्ता हेट्ठावि[19] बारस जोयणाइं वज्जेत्ता *मज्झे[20] छत्तीसाए[21] जोयणेसु एत्थ णं बहवे[22] सुवण्णरूप्पमया फलगा पण्णत्ता, तेसु णं सुवण्णरुप्पामएसु फलएसु बहवे वइरामया णागदंता पण्णत्ता, तेसु णं वइरामएसु नागदंतेसु बहवे रययामया सिक्कगा पण्णत्ता, तेसु[23] णं रययामएसु सिक्कएसु बहवे वइरामया[24] गोलवट्टसमुग्गया[25] पण्णत्ता, तेसु[26] णं वयरामएसु गोलवट्टसमुग्गएसु बहवे[27] जिणसकहातो[28] संनिक्खित्ताओ चिट्ठंति। तातो णं सूरियाभस्स[29] ॥१२४॥

सिक्कोपरिस्थितसमुद्गकेषु देवपूज्यानि जिनसक्थीनि

स्तम्भः प्रज्ञप्तः, १० षष्टियोजनान्यूर्ध्वमुच्चैस्त्वेन ११ योजनमुद्वेधेन १२ योजनं विष्कम्भेण १३ अष्टाचत्वारिंशदस्रिकः १४ 'अडयालीसइकोडीए १५ अडयालीसइविग्गहिए' इत्यादि सम्प्रदायगम्यम्। 'वइरामयवट्ट' इत्यादि १६ महेन्द्रध्वजवत् वर्णनं निरवशेषं तावद् वक्तव्यं यावत् 'सहस्सपत्तहत्थगा सव्वरयणामया जाव पडिरूवा' इति [पृ०१०९ पं०२] तस्य च १७ माणवकस्य चैत्यस्तम्भस्य उपरि १८द्वादश योजनानि ○अवगाह्य-उपरितनभागात् द्वादश योजनानि वर्जयित्वेति भावः, १९अधस्तादपि द्वादश योजनानि वर्जयित्वा २० मध्ये २१ षट्त्रिंशति योजनेषु २२ 'बहवे सुवण्णरुप्पामया फलगा' इत्यादि फलकवर्णनम् नागदन्तवर्णनम् सिक्ककवर्णनं च प्राग्वत् [पृ० १७६ पं० २-९] २३ तेषु च रजतमयेषु सिक्ककेषु बहवो २४ वज्रमया २५ गोलवृत्ताः-गोलवद् वृत्ताः समुद्गकाः प्रज्ञप्ताः, २६ तेषु च वज्रमयेषु समुद्गकेषु २७ बहूनि २८ जिनसक्थीनि सन्निक्षिप्तानि तिष्ठन्ति, यानि २९ सूर्याभस्य देवस्य

○-कोडाकोडीए-भा० १। * मज्झे बत्तीसाए-मु० पु० पाठः, स च विवरण नानुसरति। ○ अवगम्य उ-भा० १।

देवस्स [30]अन्नेसिं च बहूणं देवाण य देवीण य [31]अच्चणिज्जाओ जाव [32]पज्जुवासणिज्जातो। माणवगस्स [33]चेइयखंभस्स उवरिं अट्ठट्ठ मंगलगा झया छत्ताइच्छत्ता।

[१२७] तस्स [1]माणवगस्स [2]चेइयखंभस्स [3]पुरत्थिमेणं एत्थ णं [4]महेगा [5]मणिपेढिया पण्णत्ता, [6]अट्ठ जोयणाइं आयामविक्खंभेणं [7]चत्तारि जोअणाइं बाहल्लेणं [8]सव्वमणिमई अच्छा जाव पडिरूवा, तीसे णं मणिपेढियाए उवरिं एत्थ णं महेगे [9]सीहासणे पण्णत्ते सीहासणवण्णतो सपरिवारो [पृ० ९८ पं० ३–] तस्स [10]णं माणवगस्स [11]चेइयखंभस्स [12]पच्चत्थिमेणं एत्थ णं [13]महेगा [14]मणिपेढिया पण्णत्ता [15]अट्ठ जोयणाइं आयामविक्खंभेणं

---

३० अन्येषां च बहूनां वैमानिकानां देवानां देवीनां च ३१ अर्चनीयानि चन्दनैः, वन्दनीयानि स्तुत्यादिना, पूजनीयानि पुष्पादिना, माननीयानि बहुमानतः, सत्करणीयानि वस्त्रादिना, कल्याणं मङ्गलं दैवतं चैत्यमितिबुद्ध्या ३२ पर्युपासनीयानि। ३३ 'तस्स णं चेइयखंभस्स उवरि बहवे अट्ठट्ठ मंगलगा' इत्यादि प्राग्वत् [पृ० १९ पं० ४–]

[१२७] १ तस्य माणवकस्य २ चैत्यस्तम्भस्य ३ पूर्वस्यां दिशि अत्र ४ महत्येका ५ मणिपीठिका प्रज्ञप्ता, सा च ६ अष्टौ योजनान्यायाम-विष्कम्भाभ्यां ७ चत्वारि योजनानि बाहल्येन ८ 'सव्वमणिमई' इत्यादि प्राग्वत् [पृ० १९ पं० ५] [९ –सिंहासनं प्रज्ञप्तम् सिंहासनवर्णनम् [पृ० ९८ पं० ३] शेषाणि च भद्रासनानि तत्परिवारभूतानि प्राग्वत् [कं० ४४]। १० तस्य माणवकनाम्नः ११ चैत्यस्तम्भस्य १२ पश्चिमायां दिशि अत्र १३ महती एका १४ मणिपीठिका प्रज्ञप्ता साऽपि १५ अष्टौ योजनानि आयाम–विष्क-

–[ ] एतच्चिह्नान्तर्गतः पाठः केवलं भा० १–२ प्रतावेव तथापि मूलानुसारित्वेन अत्र न्यस्तः।

देवशयनीयस्यवर्णकः

[16]चत्तारि जोयणाइं बाहल्लेणं सव्वमणिमया अच्छा जाव पडिरूवा, [17]तीसे णं मणिपेढियाए उवरिं एत्थ णं [18]महेगे देवसयणिज्जे पण्णत्ते, तस्सं णं देवसयणिज्जस्स इमेयारूवे वण्णावासे पण्णत्ते, तंजहा–णाणामणिमया पडिपाया[23] सोवण्णिया[24] पाया[25] णाणामणिमयाइं[26] पायसीसगाइं[27] जंबूणयामयाइं[28] गत्तगाइं[29] वइरामया[30] [31]संधी णाणामणिमए[32] ○विच्चे[33] रययामई[34] तूली[35] लोहियक्खमया[36] बिब्बोयणा[37] तवणिज्जमया[38] गंडोवहाणया[39] [40]से णं सयणिज्जे सालिंगणवट्टिए[41]

म्भाभ्यां १६ चत्वारि योजनानि बाहल्येन । 'सव्वमणिमया'इत्यादि प्राग्वत् ।] [पृ० ९८ पं० २ तथा पृ०१०२ पं० १] १७ तस्याश्च मणिपीठिकाया उपरि अत्र १८ महदेकं १९देवशयनीयं प्रज्ञप्तम्, २० तस्य च देवशयनीयस्य २१ अयमेतद्रूपो वर्णावासो–वर्णकनिवेशः प्रज्ञप्तः, तद्यथा–२२नानामणिमयाः २३+प्रतिपादा–मूलपादानां प्रतिविशिष्टोपष्टम्भकरणाय पादाः प्रतिपादाः, २४ सौवर्णिकाः–सुवर्णमयाः २५ पादाः–मूलपादाः, २६ नानामणिमयानि २७ पादशीर्षकाणि २८ जाम्बूनदमयानि २९ गात्राणि–×ईषा–आदीनि ३० वज्रमया–वज्ररत्नापूरिताः ३१ सन्धयः ३२ नानामणिमयं ३३ व्यूतं–विशिष्टवानम् ३४ रजतमयी ३५ तूली ३६ लोहिताक्षमयाणि ३७ 'बिब्बोयणा' इति उपधानकानि, आह च ○जीवाभिगममूलटीकाकारः–"बिब्बोयणा–उपधानकान्युच्यन्ते" [ ] इति, ३८ तपनीयमय्यो ३९ गण्डोपधानिकाः, ४० तद् देवशयनीयं ४१ सालिङ्गनवर्तिकम्–सह आलिङ्गनवर्त्या–शरीर-

○ पृ०९८ प०५ तथा १२। "वेञ्चं व्यूतं वानम् इत्यर्थः"–जीवा० वृ० प्र०पृ० २१० पं०६ । 'वान' शब्दस्य पर्यायः भाषायाम् 'वाण'–'खाटलानुं वाण'–इति । + भाषायाम्–पडवाया । × भाषायाम् ईषा–'ईस–खाटलानी ईस' इति प्रसिद्धम्। ○ जीवा० वृ०पृ० २३१ पं०१४।

[४२]उभओ बिब्बोयणं दु[४३]हतोउण्णते [४४]मज्झे णयगंभीरे गंगापुलिणवालुयाउ[४५]द्दालसालिसए सुविरइयरयत्ताणे [४६]उवचियखोमदुगुल्लपट्टपडिच्छायणे आईणग-रूय-बूर-णवणीय-तूलफासमउते [पृ० ९९ पं० २] रत्तं[४७]सुयसंवुए [४८]सुरम्मे पासादीये...पडिरूवे।

[१२८] त[१]स्स णं देवसयणिज्जस्स उत्त[२]रपुरत्थिमेणं महे[३]गा म[४]णिपेढिया पण्णत्ता, अ[५]ट्ठ जोयणाइं आयामविक्खंभेणं [६]चत्तारि जोअणाइं बाहल्लेणं सव्वमणि[७]मयी जाव पडिरूवा, [८]तीसे णं मणिपेढियाए

प्रमाणेनोपधानेन यत् तत् तथा, ४२ उभयतः–उभौ–शिरोऽन्त–पादान्तावाश्रित्य बिब्बोयणम्–उपधानं यत्र तत् उभयतोबिब्बोयणं ४३ उभयतउन्नतं ४४ मध्ये नतं च तत् निम्नत्वात् गम्भीरं च–महत्त्वान्नतगम्भीरं ४५ गङ्गापुलिनवालुकाया अवदालो–विदलनं पादादिन्यासे अधोगमनमिति भावः तेन 'सालिसए' इति सदृशकम् गङ्गापुलिनवालुकावदालसदृशकं, दृश्यते चायं प्रकारो हंसतूल्यादिष्विति, तथा ४६ 'उपचित'इति विशिष्टं परिकर्मितं क्षौमं–कार्पासिकं दुकूलं–वस्त्रं तदेव पट्टः उपचितक्षौमदुकूलपट्टः स प्रतिच्छदनं–आच्छादनं यस्य तत् तथा प्राग्वत् [पृ० ९९ पं० ९] ४७ रक्तांशुकेन संवृतं रक्तांशुकसंवृतम्–अत एव ४८ सुरम्यम् 'पासादीये' इत्यादिपदचतुष्टयं प्राग्वत् [पृ० ७ पं० ५]।

[१२८] १ तस्य देवशयनीयस्य २ उत्तरपूर्वस्यां दिशि अत्र ३ महत्येका ४ मणिपीठिका प्रज्ञप्ता, सा च ५ अष्टौ योजनान्यायाम–विष्कम्भाभ्यां ६ चत्वारि योजनानि बाहल्यतः ७ 'सव्वमणिमयी' इत्यादि प्राग्वत् [पृ० १९ पं० ८] ८ तस्याश्च मणिपीठिकाया

सूर्याभस्य प्रहरण-कोशः

उवरिं एत्थ णं महेगे खुड्डएं[10] महिंदज्झए पण्णत्ते सट्ठिं जोयणाइं उड्ढं उच्चत्तेणं जोयणं विक्खंभेणं वइरामया वट्ट-लट्ठसंठियसुसिलिट्ठ-जाव-पडिरूवा, [पृ० १०९ पं० २] उवरिं अट्ठट्ठ मंगलगा झया छत्तातिच्छत्ता, तस्स[11] णं खुड्डागमहिंदज्झयस्स पच्चत्थिमेणं[12] एत्थ णं सूरियाभस्स[13] देवस्स चोप्पाले[14] नाम पहरणकोसे[15] पन्नत्ते सव्ववइरामए अच्छे जाव पडिरूवे, तत्थ[16] णं सूरियाभस्स देवस्स फलिहरयण[17]-खग्ग[18]-गया[19]-धणुप्पमुहा[20] बहवे पहरणरयणा[21] संनिखित्ता[22] चिट्ठंति, उज्जला[23] निसिया[24] सुतिक्खधारा[25] पासादीया...। सभाए[26] णं सुहम्माए उवरिं अट्ठट्ठ[27] मंग-लगा झया छत्तातिच्छत्ता।

[१२९] सभाए[1] णं सुहम्माए उत्तरपुरत्थिमेणं[2] एत्थ णं महेगे[3] सिद्धायतणे[4] पण्णत्ते एगं[5] जोयणसयं आयामेणं पन्नासं

९ उपरि १० क्षुल्लको महेन्द्रध्वजः प्रज्ञप्तः, तस्य प्रमाणं वर्णकश्च महेन्द्रध्वजवद् वक्तव्यम् [पृ० २२१ पं० २] ११ तस्य क्षुल्लकमहेन्द्रध्वजस्य १२ पश्चिमायामत्र १३ सूर्याभस्य देवस्य महानेकः १४ चोप्पालो नाम १५ प्रहरणकोशः-प्रहरणस्थानं प्रज्ञप्तम्, किंविशिष्टः? इत्याह-जाव पडिरूवे' इति प्राग्वत् [पृ० १९ पं० ८] १६ तत्र चोप्पालकाभिधाने प्रहरणकोशे बहूनि १७ परिघरत्न-१८ खड्ग-१९ गदा-२० धनुःप्रमुखादीनि २१ प्रहरणरत्नानि २२ सन्निक्षिप्तानि तिष्ठन्ति, कथंभूतानि ? इत्यत आह-२३ उज्ज्व-लानि-निर्मलानि २४निशितानि-अतितेजितानि अत एव २५ तीक्ष्णधाराणि प्रासादीयानि इत्यादि प्राग्वत् [पृ० ७ पं० ९] तस्याश्च २६ सभायाः सुधर्माया उपरि बहूनि २७ अष्टावष्टौ मङ्गलकानि-इत्यादि सर्वं प्राग्वत् [पृ० १९ पं० ४] वक्तव्यम् ।

[१२९] १ सभायाः सुधर्मायाः २ उत्तरपूर्वस्यां दिशि ३ महदेकं ४ सिद्धायतनं प्रज्ञप्तम्, ५ एकं योजनशतमायामतः ६ पञ्चा-

जोयणाइं विक्खंभेणं बावँत्तरिं जोयणाइं उड्ढं उच्चत्तेणं सभागमएणं जाव गोमाणसियाओ भूमिंभागा उल्लोया तहेव। तस्सं णं सिद्धायतणस्स बहुमज्झदेसभाए एत्थ णं[11] महेगा मणिपेढिया पण्णत्ता, सोलसं[12] जोयणाइं आयामविक्खंभेणं[13] अट्ठ जोयणाइं बाहल्लेणं, [14]तीसे णं मणिपेढियाए उवरिं एत्थ णं[15] महेगे देवच्छंदए[16] पण्णत्ते, सोलस जोयणाइं आयामविक्खंभेणं साइरेगाइं[18] सोलस जोयणाइं उड्ढं उच्चत्तेणं

शत् विष्कम्भतः ७ द्वासप्ततिर्योजनान्यूर्ध्वमुच्चैस्त्वेन–इत्यादि ८सर्वं सुधर्मावत् वक्तव्यं यावत् गोमानसीवक्तव्यता [पृ० २१४ पं० १–पृ० २२३ पं० १] तथा चाह–'सभागमएणं जाव गोमाणसियाओ' इति, किमुक्तं भवति ?–यथा सुधर्मायाः सभायाः पूर्वदक्षिणोत्तरवर्त्तीनि त्रीणि द्वाराणि तेषां च द्वाराणां पुरतो मुखमण्डपाः तेषां च मुखमण्डपानां पुरतः प्रेक्षागृहमण्डपाः तेषां च प्रेक्षागृहमण्डपानां पुरतश्चैत्यस्तूपाः सप्रतिमाः तेषां च चैत्यस्तूपानां पुरतः चैत्यवृक्षाः तेषां च चैत्यवृक्षाणां पुरतो महेन्द्रध्वजाः तेषामपि पुरतो नन्दापुष्करिण्यस्तदनन्तरं गुलिका गोमानस्यश्चोक्ताः तथाऽत्रापि सर्वमनेनैव क्रमेण निरवशेषं वक्तव्यम्, ९ उल्लोकवर्णनं भूमिभागवर्णनं च प्राग्वत् [पृ० ८१, ९७ पं० ३] १० तस्य सिद्धायतनस्यान्तर्बहुमध्यदेशभागेऽत्र ११ महत्येका मणिपीठिका प्रज्ञप्ता, सा १२ षोडश योजनान्यायामविष्कम्भाभ्याम् १३ अष्टौ योजनानि बाहल्यतः '⊖ सव्वमणिमयी' इत्यादि प्राग्वत् [पृ० २१८ पं० ३] १४ तस्याश्च मणिपीठिकाया उपरि अत्र १५ महानेको १६ देवच्छन्दकः प्रज्ञप्तः स च १७ षोडश योजनान्यायामविष्कम्भाभ्यां १८ सातिरेकाणि षोडश

⊖ नैतत् पद मूलपाठे।

॥२३०॥ सव्वरयणामए[१९] जाव पडिरूवे ४एत्थं[२०] णं अट्ठसयं[२१] जिणपडिमाणं[२२] जिणुस्सेहप्पमाणमित्ताणं[२३] संनिखित्तं[२४] संचिट्ठति[२५], [२६]तासि णं जिणपडिमाणं[२७] इमेयारूवे[२८] वण्णावासे पण्णत्ते, तंजहा–[३०]तवणिज्जमया हत्थतल–पायतला[३१], अंकामयाइं[३२] [३३]नक्खाइं [३४]अंतोलोहियक्खपडिसेगाइं, कणगामईओ[३५] जंघाओ[३६], कणगामया[३७] जाणू[३८], कणगामया[३९] ऊरू[४०], कणगामईओ[४१] गायलट्ठीओ[४२], तवणिज्जमयाओ[४३] नाभीओ[४४], रिट्ठामइओ[४५] रोमराईओ[४६], तवणिज्जमया[४७] चुचुया[४८], तवणिज्जमया[४९] सिरिवच्छा[५०], सिलप्पवालमया[५१] ओट्ठा[५२], फालियामया[५३] दंता[५४], तवणिज्जमईओ[५५] जीहाओ[५६], तवणिज्जमया[५७] तालुया[५८], कणगामईओ[५९] नासिगाओ[६०] अंतोलोहियक्खपडिसेगाओ[६१], अंकामयाणि[६२]

जिनप्रतिमाः तासां वर्णकश्च

योजनान्यूर्ध्वमुच्चैस्त्वेन १९ 'सव्वरयणामए' इत्यादि प्राग्वत् [पृ० १९ पं० ५] २० तत्र च देवच्छन्दके २१ अष्टशतं अष्टाधिकं शतं २२जिनप्रतिमानां २३जिनोत्सेधप्रमाणमात्राणाम्–पञ्चधनुःशतप्रमाणानामिति भावः, २४सन्निक्षिप्तं २५तिष्ठति। २६ तासां २७जिनप्रतिमानाम् २८अयमेतद्रूपो २९ वर्णावासो वर्णकनिवेशः प्रज्ञप्तः, ३० तपनीयमयानि ३१ हस्ततल–पादतलानि ३२ अङ्करत्नमया ३४ अन्तः–मध्ये लोहिताक्षरत्नप्रतिसेका ३३ नखाः ३५ कनकमय्यो ३६ जङ्घाः ३७ कनकमयानि ३८ जानूनि ३९ कनकमया ४० ऊरवः ४१कनकमय्यो ४२गात्रयष्टयः ४३ तपनीयमय्यो ४४ नाभयः ४५रिष्टमय्यो ४६ रोमराजयः ४७तपनीयमयाः ४८ चुचुकाः–स्तनाग्रभागाः ४९ तपनीयमयाः ५० श्रीवृक्षाः ५१ शिलाप्रवालमया–विद्रुममया ५२ ओष्ठाः ५३ स्फटिकमया ५४ दन्ताः ५५ तपनीयमय्यो ५६ जिह्वाः ५७ तपनीयमयानि ५८ तालुकानि ५९ कनकमय्यो ६० नासिकाः ६१ अन्तर्लोहिताक्षप्रतिसेकाः, ६२ अङ्क-

४ अत आरभ्य सपूर्णा कण्डिका जीवा० मू० पृ० २२२ प० ९।

अ[63]च्छीणि अंतोलो[64]हियक्खपडिसेगाणि [×रिट्ठामईओ ताराओ] रिट्ठा[65]मयाणि अच्छिपत्ता[66]णि, रिट्ठा[67]मईओ भमुहा[68]-ओ कण[69]गामया कवोला[70], कण[71]गामया सव[72]णा, कण[73]गामईओ णिडाल[74]पट्टियातो, वइरा[75]मईओ सीस[76]घडीओ तव[77]णि-ज्जमईओ केसंत[78]केसभूमीओ रिट्ठा[79]मया उव[80]रि मुद्धया।

[१३०] ○तासिं[1] णं जिणपडि[2]माणं पिट्ठतो[3] पत्तेयं पत्तेयं छत्तधार[4]गपडिमाओ पण्णत्ताओ, ताओ णं छत्तधारगपडिमाओ हिमरय[5]यकुंदेंदुप्पगासाइं सकोरंट[6]मल्लदामधवलाइं आय[7]वत्ताइं सलीलं[8] धारेमाणीओ[9] धारेमाणीओ [10]चिट्ठंति, [11]तासि णं जिणप[12]डिमाणं उभ[13]ओ पासे प[14]त्तेयं पत्तेयं

मयानि ६३ अक्षीणि ६४अन्तर्लोहिताक्षप्रतिसेकानि, ६५रिष्टरत्नमयानि ६६अक्षिपत्राणि ६७रिष्टरत्नमय्यो ६८ भ्रुवः ६९ कनकमयाः ७० कपोलाः ७१ कनकमयाः ७२ श्रवणाः ७३ कनकमय्यो ७४ ललाटपट्टिकाः ७५ वज्रमय्यः ७६ शीर्षघटिकाः ७७ तपनीयमय्यः ७८ केशान्तकेशभूमयः, केशान्तभूमयः केशभूमयश्चेति भावः, ७९ रिष्टमया ८० उपरि मूर्द्धजाः–केशाः।

[१३०] १ तासां २ जिनप्रतिमानां ३ पृष्ठत एकैका ४ * छत्रधराणां प्रतिमा ५ हिमरजतकुन्देन्दुप्रकाशं ६ सकोरण्टमाल्यदामधवलम् ७ आतपत्रं गृहीत्वा ८ सलीलं ९ धरन्ती १० तिष्ठति, तथा ११ तासां १२ जिनप्रतिमानां १४ प्रत्येकम् १३ उभयोः पार्श्वयोः

× [ ] एतच्चिह्नान्तर्गतः पाठः वि० बा०। जीवा० मू० प्र० पृ० २३२ प० १। ○ इयं संपूर्णाऽपि कण्डिका जीवा० मू० प्र० पृ० २३२ पं० ५। * छत्रधरा प्र–पा० ४–५ भा० १।

जिनप्रतिमानां पुरतः नागयक्ष–भूतादिप्रतिमाः तथा घण्टादिपदार्थाश्च

चामर[15]धारपडिमाओ पण्णत्ताओ, [16]ताओ णं चामरधारपडिमातो चंद[17]प्पहवयरवेरुलियनानामणिरयणखचियचित्तदं[18]डाओ सुहुम[19]रयतदीहवालाओ संखंककुंददगरयअमतमहियफेणपुंजसन्निकासाओ धवलाओ चामराओ [पृ० १७९ पं०२–] सलीलं धारेमाणीओ धारेमाणीओ चिट्ठंति, [20]तासि णं जिण[21]पडिमाणं पुर[22]तो [23]दो दो नागपडिमा[24]तो जक्ख[25]पडिमाओ भूय[26]पडिमातो कुंडधार[27]पडिमाओ सव्वरयणामईओ अच्छाओ जाव चिट्ठंति, [28]तासि णं जिण[29]पडिमाणं पुर[30]तो अट्ठ[31]सयं घंटा[32]णं अट्ठ[33]सयं चंदणक[34]लसाणं अट्ठ[35]सयं भिंगा[36]राणं एवं आयं[37]साणं

द्वे द्वे १५ चामरधरे प्रतिमे प्रज्ञप्ते, १६ = ते च १७ चन्द्रप्रभः–चन्द्रकान्तो वज्रं वैडूर्यं च प्रतीतं चन्द्रप्रभवज्रवैडूर्याणि, शेषाणि च नानामणिरत्नानि खचितानि येषु दण्डेषु ते तथा, एवंरूपाः १८ चित्रा–नानाप्रकारा दण्डा येषां तानि तथा १९ सूक्ष्मा रजतमया दीर्घा वाला येषां तानि तथा [पृ० १७९ अंक–१०२] १९ प्रतीतम् चामराणि गृहीत्वा सलीलं वीजयन्त्यस्तिष्ठन्ति, ताश्च 'सव्वरयणामईओ अच्छाओ'इत्यादि प्राग्वत् [पृ० १७९ पं० ८–] २० तासां २१ जिनप्रतिमानां २२ पुरतो २३ द्वे द्वे २४ नागप्रतिमे द्वे द्वे २५ यक्षप्रतिमे द्वे द्वे २६ भूतप्रतिमे द्वे द्वे २७ कुण्डधरे प्रतिमे सन्निक्षिप्ते तिष्ठतः, तस्मिंश्च देवच्छन्दके २८ तासां २९ जिनप्रतिमानां ३० पुरतः ३१ अष्टशतं ३२ घण्टानाम् ३३ अष्टशतं ३४ चन्दनकल≈शानाम् ३५ अष्टशतं ३६ भृङ्गाराणाम् अष्टशतम्–३७ आदर्शा-

= "सूत्रे क्लीव+ प्राकृतत्वात्"–राय० विव०। ≈ –शानाम् अष्टशतं मङ्गल्यकलशानाम् अ–भा०२।

+ 'चामर' शब्दस्य

[38]थालाणं [39]पाईणं [40]सुपइट्ठाणं [41]मणोगुलियाणं [42]वायकरगाणं [43]चित्तगराणं [44]रयणकरंडगाणं [45]हयकंठाणं जाव [पृ० १७७ पं० ५] [46]उसभकंठाणं [47]पुप्फचंगेरीणं जाव [पृ० १७८ पं० १] [48]लोमहत्थचंगेरीणं [49]पुप्फपडलगाणं [50]तेल्लसमुग्गाणं जाव [पृ० १८० पं० १] [51]अंजणसमुग्गाणं अट्ठसयं [52]झयाणं अट्ठसयं

नाम् अष्टशतं ३८ स्थालानाम् अष्टशतं ३९ पात्रीणाम् अष्टशतं ४० सुप्रतिष्ठानानाम् अष्टशतं ४१ मनोगुलिकानां–पीठिकाविशेषाणाम् अष्टशतं ४२ वातकरकाणाम् अष्टशतं ४३ चित्राणां ४४ रत्नकरण्डकानाम् अष्टशतं ४५ हयकण्ठानाम् अष्टशतं गजकण्ठानाम् अष्टशतं नरकण्ठानाम् अष्टशतं किन्नरकण्ठानाम् अष्टशतं किंपुरुषकण्ठानाम् अष्टशतं महोरगकण्ठानाम् अष्टशतं ४६ वृषभकण्ठानाम् अष्टशतं ४७ पुष्पचङ्गेरीणाम् अष्टशतं माल्यचङ्गेरीणाम् , मुकुलानि पुष्पाणि, ग्रथितानि माल्यानि, अष्टशतं चूर्णचङ्गेरीणाम् अष्टशतं गन्धचङ्गेरीणाम् अष्टशतं वस्त्रचङ्गेरीणाम् अष्टशतमाभरणचङ्गेरीणाम् अष्टशतं सिद्धार्थकचङ्गेरीणाम् अष्टशतं ४८ लोमहस्तकचङ्गेरीणाम्, लोमहस्तकं च मयूरपुच्छपुञ्जनिका, अष्टशतं ४९ पुष्पपटलकानाम् एवं माल्य–चूर्ण–गन्ध–वस्त्राभरण–सिद्धार्थक–लोमहस्तक–पटलकानामपि प्रत्येकं प्रत्येकं अष्टशतं वक्तव्यम् अष्टशतं सिंहासनानाम् अष्टशतं छत्राणाम् अष्टशतं चामराणाम् अष्टशतं ५० तैलसमुद्गकानाम् अष्टशतं कोष्ठसमुद्गकानाम् अष्टशतं पत्रसमुद्गकानाम् अष्टशतं चोयकसमुद्गकानाम् अष्टशतं तगरसमुद्गकानाम् अष्टशतम्–एलासमुद्गकानाम् अष्टशतं हरितालसमुद्गकानाम् अष्टशतं हिंगुलकसमुद्गकानाम् अष्टशतं मनःशिलासमुद्गकानाम् अष्टशतम्–५१ अञ्जनसमुद्गकानाम् सर्वाण्यपि अमूनि तैलादीनि परमसुरभिगन्धोपेतानि, अष्टशतं ५२ ध्वजानाम्। अत्र सङ्ग्रहणिगाथा–

"चंदणकलसा भिंगारगा य आयंसया य थाला य। पातीउ सुपइट्ठा मणगुलिका वायकरगा य ॥१॥

धूव[53]कडुच्छुयाणं[54] संनिखित्तं [55]चिट्ठति, सिद्धायतण[56]स्स णं उव[57]रिं [58]अट्ठट्ठ मंगल[59]गा [60]झया छत्तातिच्छत्ता[61]।

[१३१] [1]तस्स णं सिद्धा[2]यतणस्स [3]उत्तरपुरत्थिमे णं एत्थ णं [4]महेगा उव[5]वायसभा पण्णत्ता, जहा सभाए सुहम्माए तहेव जाव मणिपेढिया अट्ठ जोयणाइं देवसयणिज्जं तहेव सयणिज्जवण्णओ अट्ठट्ठ मंगलगा झया छत्तातिछत्ता। तीसे णं उव[10]वायसभाए उत्तरपुरत्थिमेणं[11] एत्थ णं महेगे[12] हरए[13] पण्णत्ते

चित्ता रयणकरंडा हय-गय-नरकंठगा य चंगेरी। पडलग-सीहासण-छत्त-चामरा समुग्गय-झया य ॥२॥

अष्टशतं ५३ धूप*कडुच्छुकानां ५४ सन्निक्षिप्तं ५५ तिष्ठति, तस्य च ५६ सिद्धायतनस्य ५७ उपरि ५८ अष्टावष्टौ ५९ मङ्गलकानि ६० ध्वज-६१ छत्रातिच्छत्रादीनि तु प्राग्वत् [पृ० १९ पं० ४]।

[१३१] १तस्य च २सिद्धायतनस्य ३उत्तरपूर्वस्यामत्र ४ महत्येका ५उपपातसभा प्रज्ञप्ता, ६ तस्याश्च सुधर्मागमेन स्वरूपवर्णन-पूर्वादिद्वारत्रयवर्णन-मुखमण्डप-प्रेक्षागृहमण्डपादिवर्णनादिप्रकाररूपेण तावद् वक्तव्यं यावत् उल्लोकवर्णनम् [पृ० २१४ पं० ३-] तस्याश्च बहुसमरमणीयभूमिभागस्य बहुमध्यदेशभागेऽत्र महत्येका ७ मणिपीठिका प्रज्ञप्ता, सा च ८ अष्टौ योजनान्यायाम-विष्कम्भाभ्यां चत्वारि योजनानि बाहल्येन 'सव्वमणिमयी' इत्यादि प्राग्वत् [पृ०२१७ पं० ४] तस्याश्च मणिपीठिकाया उपरि अत्र महदेकं देवशयनीयं प्रज्ञप्तम्, तस्य स्वरूपं यथा सुधर्मायां सभायां देवशयनीयस्य [पृ० २२६ पं० २] तस्या अप्युपपातसभाया उपरि अष्टाष्ट मङ्गलकादीनि प्राग्वत् [पृ० १९ पं० ४] ९ तस्या १० उपपातसभाया ११ उत्तरपूर्वस्यां दिशि १२ महानेको १३ ह्रदः प्रज्ञप्तः, स च

---

* -कडुच्छ्का—पा० ४।-कडुछा-भा० १। भाषायाम् 'कडछो' 'कडछी'।

[14]एगं जोयणसयं आयामेणं [15]पण्णासं जोयणाइं विक्खंभेणं [16]दसं जोयणाइं उव्वेहेणं तहेव [17]से णं हरए [18]एगाए पउमवरवेइयाए [19]एगेणं वणसंडेण [20]सव्वओ समंता संपरिक्खित्ते। तस्स णं हरयस्स तिदिसं तिसोवाणपडिरूवगा पन्नत्ता। [21]तस्स णं हरयस्स [22]उत्तरपुरत्थिमे णं [23]एत्थ णं [24]महेगा [25]अभिसेगसभा पण्णत्ता, [26]सुहम्मागमएणं जाव [27]गोमाणसियाओ [28]मणिपेढिया [29]सीहासणं [30]सपरिवारं जाव दामा चिट्ठंति, [31]तत्थ णं [32]सूरियाभस्स देवस्स

१४एकं योजनशतमायामतः १५ पञ्चाशत् योजनानि विष्कम्भतः १६ दश योजनान्युद्वेधेन 'अच्छे रययामयकूले'इत्यादि नन्दापुष्करिण्या इव वर्णनं निरवशेषं वक्तव्यम् [पृ० १९१ पं०२] १७ स ह्रद १८ एकया पद्मवरवेदिकया १९ एकेन च वनखण्डेन २० सर्वतः समन्तात् संपरिक्षिप्तः, पद्मवरवेदिकावर्णनं [पृ० २०४ पं० १] वनखण्डवर्णनं च प्राग्वत् [पृ० १८३ पं० १] २१तस्य च ह्रदस्य÷ २२ उत्तरपूर्वस्यां दिशि २३ अत्र २४ महत्येका २५ अभिषेकसभा प्रज्ञप्ता, सा च २६ सुधर्मासभावत् प्रमाण–स्वरूप–द्वारत्रय–मुखमण्डपादिप्रकारेण तावद् वक्तव्या यावद् २७ गोमानसीवक्तव्यता [पृ० २१४ पं० १–पृ० २२३ पं० १] तदनन्तरं तथैव उल्लोकवर्णनम् भूमिभागवर्णनं च तावत् यावन्मणीनां स्पर्शः [पृ० ९७, ८१ पं० ३ कं० ४०] तस्या अभिषेकसभाया बहुसमरमणीयस्य भूमिभागस्य बहुमध्यदेशभागे महत्येका २८ मणिपीठिका प्रज्ञप्ता, साऽप्यष्टौ योजनान्यायाम–विष्कम्भाभ्यां चत्वारि योजनानि बाहल्यतः 'सव्वरयणामयी' इत्यादि प्राग्वत् [पृ० २१७ पं० ४] तस्या मणिपीठिकाया उपरि अत्र महदेकं २९ सिंहासनम् सिंहासनवर्णकः प्राग्वत् [पृ० ९८ पं० ३] नवरमत्र ३० परिवारभूतानि भद्रासनानि च वक्तव्यानि [कं० ४४] ३१ तस्मिंश्च सिंहासने ३२ सूर्याभस्य

÷ –स्य पूर्वस्यां दि–पा० ५।

सुबहु[33] अभिसेयभंडे[34] संनिखित्ते चिट्ठइ, अट्ठट्ठ मंगलगा तहेव। [35]तीसे णं अभिसेगसभाए उत्तरपुरत्थिमेणं[36] एत्थ णं अलंकारियसभा[37] पण्णत्ता जहा[38] सभा सुधम्मा, मणिपेढिया अट्ठ जोयणाइं सीहासणं सपरिवारं, तत्थ[39] णं सूरियाभस्स देवस्स सुबहु अलंकारियभंडे[40] संनिखित्ते चिट्ठति, सेसं तहेव, [41]तीसे णं अलंकारियसभाए उत्तरपु[42]रत्थिमे णं तत्थ णं महेगा[43] ववसायसभा[44] पण्णत्ता, जहा[45] उववायसभा जाव सीहा-सणं सपरिवारं मणिपेढिया अट्ठट्ठ मंगलगा०, तत्थ[46] णं सूरियाभस्स देवस्स एत्थ महेगे[47] पोत्थयरयणे[48] सन्निखित्ते चिट्ठइ, तस्स[49] णं पोत्थयरयणस्स इमेयारूवे[50]

देवस्य ३३ सुबहु ३४ अभिषेकभाण्डम्–अभिषेकयोग्य उपस्करः सन्निक्षिप्तः तिष्ठति, 'तीसे णं अभिसेयसभाए अट्ठट्ठ मंगलका' इत्यादि प्राग्वत् [पृ० १९ पं० ४] ३५ तस्याश्च अभिषेकसभाया ३६ उत्तरपूर्वस्यां दिशि अत्र महत्येका ३७ अलंकारसभा प्रज्ञप्ता, सा ३८ चाभिषेक+सभावत् प्रमाण–स्वरूप–द्वारत्रय–मुखमण्डप–प्रेक्षागृहमण्डपादिवर्णकप्रकारेण तावद् वक्तव्या यावत् परिवारसिंहासनम् [पृ० २१४ पं० १] ३९ तत्र सूर्याभस्य देवस्य ४० आलङ्कारिकम्–अलङ्कारयोग्यं भाण्डं संनिक्षिप्तमस्ति, शेषं प्राग्वत् [प्र० पृ० पं० १] ४१ तस्याश्च अलङ्कारसभाया ४२ उत्तरपूर्वस्यां दिशि अत्र ४३ महत्येका ४४ व्यवसायसभा प्रज्ञप्ता, सा च ४५ =अभिषेकसभावत् प्रमाण–स्वरूप–द्वारत्रय–मुखमण्डपादिवर्णनप्रकारेण तावद् वक्तव्या यावत् सिंहासनं सपरिवारम् [पृ० २१४ पं०१ पृ० २१६ पं० ३] ४६ तत्र ४७ महदेकं ४८ पुस्तकरत्नं सन्निक्षिप्तमस्ति, ४९ तस्य च पुस्तकरत्नस्य ५० अयमेतद्रूपो

– –सण अपरि–भा० १। + मूल–विवरणपाठयोर्भेदः। = मूले तु 'जहा उववायसभा' इत्युक्तम्। जीवा० पृ० २३५ पं० ८–"ववसातसभा

वण्णावासे[५१] पण्णत्ते, +तंजहा रिट्ठा[५२]ϴमईयो कंबिआओ[५३] *[तवणिज्जमए] [५४]दोरे≡ नाणामणिमए[५५] गंठी[५६] रयणा[५७]मयाइं पत्तगाइं[५८] वेरुलियमए[५९] लिप्पासणे[६०] रिट्ठामए[६१] छंदणे[६२] तवणिज्जमई[६३] संकला[६४] रिट्ठामई[६५] मसी[६६] वइरामई[६७] लेहणी[६८] रिट्ठामयाइं[६९] अक्खराइं धम्मिए[७१] लेक्खे। ववसायसभाए णं उवरिं अट्ठट्ठ मंगलगा, [७२]तीसे णं ववसायसभाए

५१ वर्णावासो वर्णकनिवेशः प्रज्ञप्तः, ५२ रिष्टमय्यौ–रिष्टरत्नमय्यौ ५३ ○कम्बिके○ पृष्ठके इति भावः, रत्नमयो ५४ *दवरको यत्र पत्राणि प्रोतानि सन्ति, ५५ नानामणिमयो ५६ ग्रन्थिः दवरकस्यादौ येन पत्राणि न निर्गच्छन्ति, ५७ अङ्कमयानि–अङ्करत्नमयानि ५८ पत्राणि, ५९ नानामणिमयं ६० लिप्यासनम्–मषीभाजनमित्यर्थः, ६३ तपनीयमयी ६४ शृङ्खला मषीभाजनसत्का, ६१ रिष्टरत्नमयं उपरितनं तस्य ६२ छादनं ६५ रिष्टमयी–रिष्टरत्नमयी ६६ मषी, ६७ वज्रमयी ६८ लेखनी, ६९ रिष्टमयानि ७० अक्षराणि, ७१ धार्मिकं लेख्यं, ×क्वचित्–'धम्मिए 8सत्थे'इति पाठः तत्र 'धार्मिकं शास्त्रम्'इति व्याख्येयम् ७२ तस्याश्च ≈उप-

पण्णत्ता अभिसेयसभावत्तव्वया जाव सीहासणं अपरिवार" इत्यादि। + इदं समस्तं पुस्तकवर्णनं जीवा० मू० पृ० २३५ पं० ९। ϴ –मयाइं उक्कंठियाइं त–भा० १। * वि० बा०। अत्र पुस्तकवर्णने मूल–विवरणयोर्भेदः मूलपाठव्युत्क्रमश्च भासते। ≡ "देशीनाममालायां 'दार–दोर' शब्दौ कटीसूत्रापरपर्यायकाञ्चीवाचकौ लभ्येते–"कंचीई दार–दोरा य"–व० ५ गा० ३८। अत्र तु 'दोर' शब्दः पत्रबन्धनसाधनं सूत्रापरपर्यायं केवलं गुणरूपमर्थं सूचयति–इति। 'दोर' शब्दश्च भाषायाम् 'दोरो' नाम्ना प्रतीतः। 'दवरक' इति तु अस्यैव संस्कृतमुच्चारणम्। ○ कण्ठिके–पा० ५, भा० १। ○–के प्रष्ठके भा० २–के पुष्टके–जीवा० वि० पृ० २३७। * दवको–पा० ५-४। × क्वचित् 'धंमि' इति पाठः–भा० २। 8 विवरणकारदर्शितं पाठान्तरम्। ≈ मूले तु 'ववसायसभाए' इति भेदः।

उत्पन्नमात्रस्य सूर्याभस्य कर्तव्यविचारणा

उत्तरपुरत्थिमेणं एत्थ णं नंदा पुक्खरिणी पण्णत्ता हरयसरिसा, तीसे णं णंदाए पुक्खरिणीए उत्तरपुरत्थिमेणं मँहेगे बँलिपीढे पण्णत्ते सव्वरयणाँमए अँच्छे जाव पडिरूवे।

[१३२] तेणं कालेणं तेणं समएणं सूरियाभे देवे अहुणोववण्णमित्तए चेव समाणे पंचविहाए पज्जत्तीए पज्जत्तीभावं गच्छइ, तंजहा—आहारपज्जत्तीए सरीरपज्जत्तीए इंदियपज्जत्तीए आणपाणपज्जत्तीए भासा-मणपज्जत्तीए, तएँ णं तस्स सूरियाभस्स देवस्स पंचविहाएँ पज्जत्तीए

पातसभाया ७३ उत्तरपूर्वस्यां दिशि ७४ महदेकं ७५ बलिपीठं प्रज्ञप्तम्, तच्चाष्टौ योजनानि आयामविष्कम्भतः चत्वारि योजनानि बाहल्यतः ७६ सर्वरत्नमयम् ७७ 'अच्छे' इत्यादि प्राग्वत् [पृ० १९ पं० ५]। तस्य च ○बलिपीठस्य उत्तरपूर्वस्यां दिशि अत्र महत्येका नन्दा पुष्करिणी प्रज्ञप्ता, सा च ह्रदप्रमाणा, ह्रदस्येव च तस्या अपि त्रिसोपानवर्णनं तोरणवर्णनं च प्राग्वत् [पृ० ७८ पं० १, पृ० ७९ पं० १]। तदेवं यत्र यादृग्रूपं च सूर्याभस्य देवस्य विमानं तत्र तादृग्रूपं चोपवर्णितम्।

[१३२] सम्प्रति सूर्याभो देवः उत्पन्नः सन् यदकरोत् यथा च तस्याऽभिषेकोऽभवत् तद् उपदर्शयति—१ तस्मिन् काले २ तस्मिन् समये ३ सूर्याभो देवः सूर्याभे विमाने उपपात⊙सभायां देवशयनीये देवदूष्यान्तरिते प्रथमतोऽङ्गुलासंख्येयभा⁄गमात्रयाऽवगाहनया समुत्पन्नः ४ 'तए णं' इत्यादि सुगमम् नवरम् इह भाषा-मनःपर्याप्त्योः समाप्तिकालान्तरस्य प्रायः शेषपर्याप्तिसमाप्तिकालान्तरापेक्षया स्तोकत्वादेकत्वेन विवक्षणमिति 'पंचविहाए पज्जत्तीए पज्जत्तीभावं गच्छइ' इत्युक्तम्, ततः ५ तस्य सूर्याभस्य देवस्य ६ पञ्च-

---

○ मूले पूर्वं पुष्करिणीनिर्देशः पश्चात् बलिपीठनिर्देशः, विवरणे तु व्युत्क्रमः। ⊙ -तशय्यायां-भा० २। ⁄ --गद्वया अव-भा० २।

पज्जत्तीभावं गयस्स समाणस्स इमेयारूवे अज्झत्थिए चिंतिए पत्थिए मणोगए संकप्पे समुप्पज्जित्था-किं[11] मे पुव्विं करणिज्जं? किं[12] मे पच्छा करणिज्जं? किं मे[13] पुव्विं सेयं? किं मे[14] पच्छा सेयं? किं[15] मे पुव्विं पि पच्छा वि हियाए[16] सुहाए[17] खमाए[18] णिस्सेयसाए[19] आणुगामियत्ताए[20] भविस्सइ[21]?।

[१३३]तए णं तस्स सूरियाभस्स देवस्स सामाणियपरिसोववन्नगा देवा सूरियाभस्स देवस्स इमेयारूवमज्झत्थियं जाव [पृ० ५१ पं०१] समुप्पन्नं समभिजाणित्ता जेणेव सूरियाभे देवे तेणेव उवागच्छंति, सूरियाभं देवं करयलपरिग्गहियं सिरसावत्तं मत्थए अंजलिं कट्टु जएणं विजएणं वद्धाविन्ति वद्धावित्ता एवं वयासी-एवं खलु देवाणुप्पियाणं सूरियाभे विमाणे सिद्धायतणंसि जिणपडिमाणं जिणुस्सेहपमाणमित्ताणं अट्ठसयं संनिखित्तं चि-

विधया पर्याप्तया ७ पर्याप्तभावमुपगतस्य सतः ८ अयमेतद्रूपः ९ संकल्पः १० समुदपद्यत-'अज्झत्थिए' इत्यादि पदव्याख्यानं पूर्ववत् [पृ० ५१ पं० १ तथा ७] ११किं मे मम पूर्वं करणीयम्? १२किं मे पश्चात्करणीयम्? १३ किं मे पूर्वं कर्त्तुं श्रेयः? १४ किं मे पश्चात् कर्तुं श्रेयः? तथा १५ किं मे पूर्वमपि च पश्चादपि च १६ हिताय-भावप्रधानोऽयं निर्देशो-हितत्वाय--परिणामसुन्दरतायै १७ सुखाय शर्मणे १८ क्षमाय-अयमपि भावप्रधानो निर्देशः-संगतत्वाय १९ निःश्रेयसाय-निश्चितकल्याणाय २० अनुगामिकतायै-परम्परशुभानुबन्धसुखाय २१ भविष्यति-इति। इह प्राक्तनो ग्रन्थः प्रायोऽपूर्वः भूयानपि च पुस्तकेषु वाचनाभेदस्ततो माऽभूत् शिष्याणां सम्मोह इति क्वापि सुगमोऽपि यथावस्थितवाचनाक्रमप्रदर्शनार्थं लिखितः, इत ऊर्ध्वं तु प्रायः सुगमः प्राग्व्याख्यातस्वरूपश्च न च वाचनाभेदोऽप्यतिबादर इति स्वयं परिभावनीयः, विषमपदव्याख्या तु विधास्यते इति।

ट्ठति, सभाए णं सुहम्माए माणवए चेइए खंभे वइरामएसु गोलवट्टसमुग्गएसु बहूओ जिणसकहाओ संनिखित्ताओ चिट्ठंति, ताओ णं देवाणुप्पियाणं अण्णेसिं च बहूणं वेमाणियाणं देवाण य देवीण य अच्चणिज्जाओ जाव पज्जुवासणिज्जाओ, तं एयं णं देवाणुप्पियाणं पुव्विं करणिज्जं, तं एयं णं देवाणुप्पियाणं पच्छा करणिज्जं, तं एयं णं देवाणुप्पियाणं पुव्विं सेयं, तं एयं णं देवाणुप्पियाणं पच्छा सेयं, तं एयं णं देवाणुप्पियाणं पुव्विं पि पच्छा वि हियाए सुहाए खमाए निस्सेयसाए आणुगामियत्ताए भविस्सति ।

सामानिकैः कर्तव्यनिर्देशः—तदनुसारेण सूर्याभस्य स्नानादि प्रवृत्तिः

[१३४] तए णं से सूरियाभे देवे तेसिं सामाणियपरिसोववन्नगाणं देवाणं अंतिए एयमट्ठं सोचा निसम्म हट्ठतुट्ठ–जाव [पृ० ४७ पं० ३–]–हयहियए सयणिज्जाओ अब्भुट्ठेति सयणिज्जाओ अब्भुट्ठेत्ता उववायसभाओ पुरत्थिमिल्लेणं दारेणं निग्गच्छइ, जेणेव हरए तेणेव उवागच्छति, उवागच्छित्ता हरयं अणुपयाहिणीकरेमाणे अणुपयाहिणीकरेमाणे पुरत्थिमिल्लेणं तोरणेणं अणुपविसइ अणुपविसित्ता पुरत्थिमिल्लेणं तिसोवाणपडिरूवएणं पच्चोरुहइ पच्चोरुहित्ता जलावगाहं जलमज्जणं करेइ करित्ता जलकिड्डं करेइ करित्ता जलाभिसेयं करेइ करित्ता आयंते[1] चोक्खे[2]* परमसुईभूए[3] हरयाओ पच्चोत्तरइ पच्चोत्तरित्ता जेणेव अभिसेयसभा तेणेव उवागच्छति तेणेव

[१३४] १ नवानामपि श्रोतसां शुद्धोदकप्रक्षालनेन आचान्तो–गृहीताचमनः–२ चोक्षः–स्वल्पस्यापि शङ्कितमलस्यापनयनात् अत एव ३ परमशुचिभूतः ।

* भाषायाम् 'चोक्खु' ।

उवागच्छित्ता अभिसेयसभं अणुपयाहिणीकरेमाणे अणुपयाहिणीकरेमाणे पुरत्थिमिल्लेणं दारेणं अणुपविसइ अणुपविसित्ता जेणेव सीहासणे तेणेव उवागच्छइ उवागच्छित्ता सीहासणवरगए पुरत्थाभिमुहे सन्निसन्ने।

[१३५] तए णं सूरियाभस्स देवस्स सामाणियपरिसोववन्नगा देवा आभिओगिए देवे सद्दावेंति सद्दावित्ता एवं वयासी–खिप्पामेव भो! देवाणुप्पिया! सूरियाभस्स देवस्स महत्थं[1] महग्घं[2] महरिहं[3] विउलं[4] इंदाभिसेयं उवट्ठवेह[5]। तए णं ते आभिओगिआ देवा सामाणियपरिसोववन्नेहिं देवेहिं एवं वुत्ता समाणा हट्ठा जाव–हियया [पृ०४७ पं०३–] करयलपरिग्गहियं सिरसावत्तं मत्थए अंजलिं कट्टु 'एवं देवो! तह' त्ति आणाए विणएणं वयणं पडिसुणंति, पडिसुणित्ता उत्तरपुरत्थिमं दिसीभागं अवक्कमंति, उत्तरपुरत्थिमं दिसीभागं अवक्कमित्ता वेउव्वियसमुग्घाएणं समोहणंति, समोहणित्ता संखेज्जाइं जोयणाइं जाव दोच्चं पि वेउव्वियसमुग्घाएणं समोहणित्ता [कण्डिका १९] अट्ठसहस्सं[6] सोवन्नियाणं कलसाणं अट्ठसहस्सं रुप्पमयाणं कलसाणं अट्ठसहस्सं[10] मणिमयाणं कलसाणं अट्ठसहस्सं[11] सुवण्णरुप्पमयाणं कलसाणं

[१३५] १ महान् अर्थो–मणिकनकरत्नादिक उपयुज्यमानो यस्मिन् स महार्थः तं, तथा २ महान् अर्घः–पूजा यत्र स महार्घः तं, ३ महम्–उत्सवमर्हतीति महार्हस्तं, ४ विपुलं–विस्तीर्णं शक्राभिषेकवत् ५ इन्द्राभिषेकम्–उपस्थापयत। 'अट्ठसहस्सं सोवण्णियाण कलसाणं विउव्वंति' इत्यादि, अत्र भूयान् वाचनाभेदः इति यथावस्थितवाचनाप्रदर्शनाय लिख्यते, ६ अष्टसहस्रं–अष्टाधिकं सहस्रं ७ सौवर्णिकानां ८ कलशानाम् ९ अष्टसहस्रं रूप्यमयानाम् १० अष्टसहस्रं मणिमयानाम् ११ अष्टसहस्रं सुवर्णरूप्यम-

सूर्याभस्य अभिषेकोपस्थापना तदर्थं च जल-मृत्तिकादिग्रहणायदेवानां मनुष्यक्षेत्रे आगमनम्

॥२४२॥

[12]अट्ठसहस्सं सुवन्नमणिमयाणं कलसाणं [13]अट्ठसहस्सं रुप्पमणिमयाणं कलसाणं [14]अट्ठसहस्सं सुवण्णरुप्पमणिमयाणं कलसाणं [15]अट्ठसहस्सं भोमिज्जाणं कलसाणं एवं [16]भिंगाराणं [17]आयंसाणं [18]थालाणं [19]पाईणं [20]सुपतिट्ठाणं [21]वायकरगाणं [22]रयणकरंडगाणं [23]पुप्फचंगेरीणं जाव लोमहत्थचंगेरीणं पुप्फपडलगाणं जाव [24]लोमहत्थपडलगाणं [25]सीहासणाणं [26]छत्ताणं [27]चामराणं [28]तेल्लसमुग्गाणं जाव अंजणसमुग्गाणं [29]झयाणं अट्ठसहस्सं [30]धूवकडुच्छुयाणं [31]विउव्वंति, विउव्वित्ता ते साभाविए य वेउव्विए य कलसे य जाव कडुच्छुए य गिण्हंति गिण्हित्ता सूरियाभाओ विमाणाओ पडिनिक्खमंति पडिनिक्खमित्ता [32]ताए उक्किट्ठाए चवलाए जाव [पृ० ५८ पं १] तिरियमसंखेज्जाणं जाव [पृ० ५८ पं० १] वीतिवयमाणे वीतिवयमाणे जेणेव खीरोदयसमुद्दे तेणेव उवागच्छंति उवागच्छित्ता [33]खीरोयगं गिण्हंति जाइं तत्थुप्पलाइं ताइं गेण्हंति जाव [पृ० २१ पं० १०] सयसहस्सपत्ताइं गिण्हंति गिण्हित्ता

यानाम् १२ अष्टसहस्रं सुवर्णमणिमयानाम् १३अष्टसहस्रं रूप्यमणिमयानाम् १४अष्टसहस्रं सुवर्णरूप्यमणिमयानाम् १५अष्टसहस्रं भौमेयानां कलशानाम् अष्टसहस्रं १६ भृङ्गाराणाम् एवम् १७ आदर्श–१८ स्थाल–१९ पात्री–२० सुप्रतिष्ठ–२१ वातकरक–२२ चित्ररत्नकरण्डक–२३ पुष्पचङ्गेरी–यावत् २४ लोमहस्तकपटलक–२५ सिंहासन–२६ च्छत्र–२७ चामर–२८ समुद्गक–२९ ध्वज–३० धूपकडुच्छुकानां प्रत्येकं प्रत्येकम् अष्टसहस्रम् अष्टसहस्रं ३१ विकुर्वन्ति =विकुर्व्वित्वा ३२ 'ताए उक्किट्ठाए' इत्यादि व्याख्यातार्थम् [पृ० ५८ पं० ७] ४६ सर्वान् तूवरान्–कषायान् ४७ सर्वाणि पुष्पाणि ४८ सर्वान् गन्धान्–गन्धवासादीन् ४९ सर्वाणि माल्यानि ग्रथितादिभेदभिन्नानि ५० सर्वौषधीन् ५१ सिद्धार्थकान्–सर्षपकान् ५२ गृह्णन्ति। इहैवं क्रमः–३३ पूर्वं क्षीरसमुद्रे उपागच्छन्ति

='विकुर्व्य' इति शुद्धम्।

जेणेव पुक्खरोदए[34] समुद्दे तेणेव उवागच्छंति उवागच्छित्ता पुक्खरोदयं गेण्हंति गिण्हित्ता जाइं तत्थुप्पलाइं सयसहस्सपत्ताइं ताइं जाव गिण्हंति गिण्हित्ता जेणेव समयखेत्ते[35] जेणेव भरहेरवयाइं[36] वासाइं जेणेव मागहव[37]रदामपभासाइं तित्थाइं तेणेव उवागच्छंति तेणेव उवागच्छित्ता तित्थोदगं[38] गेण्हंति गेण्हेत्ता तित्थमट्टियं[39] गेण्हंति गेण्हित्ता जेणेव गंगा[40]-सिंधु[41]-रत्ता[42]-रत्तवईओ[43] महानईओ तेणेव उवागच्छंति उवागच्छित्ता सलिलोदगं[44] गेण्हंति सलिलोदगं गेण्हित्ता उभओकूलमट्टियं गेण्हंति मट्टियं गेण्हित्ता जेणेव चुल्लहिमवंत[45]सिहरीवासहरपव्वया तेणेव उवागच्छंति तेणेव उवागच्छित्ता दगं गेण्हंति सव्वतूयरे[46] सव्वपुप्फे[47] सव्वगंधे[48] सव्वमल्ले[49] सव्वोसहि[50]सिद्धत्थए[51] गिण्हंति[52] गिण्हित्ता जेणेव पउमपुंडरीयदहे[53] तेणेव उवागच्छंति उवागच्छित्ता दहोदगं[54] गेण्हंति गेण्हित्ता जाइं तत्थ उप्पलाइं जाव [पृ० २१ पं० १०] सयसहस्सपत्ताइं ताइं गेण्हंति गेण्हित्ता जेणेव हेमवएरवयाइं[55] वासाइं जेणेव रोहियं[56]-

तत्रोदकमुत्पलादीनि च गृह्णन्ति, ततः ३४ पुष्करोदे समुद्रे तत्रापि तथैव, ततो ३५ मनुष्यक्षेत्रे ३६ भरतैरावतवर्षेषु ३७ मागधादिषु तीर्थेषु ३८ तीर्थोदकं ३९ तीर्थमृत्तिकां च गृह्णन्ति, ततो ४० गङ्गा-४१ सिन्धु-४२ रक्ता-४३ रक्तवतीषु नदीषु ४४ सलिलोदकं-नद्युदकमुभयतटमृत्तिकां च गृह्णन्ति त×तः ४५ चुल्लहिमवत्शिखरेषु ४६ सर्वतूवर-४७ सर्वपुष्प-४९ सर्वमाल्य-५० सर्वौषधि-५१ सिद्धार्थकान्, ततस्तत्रैव ५३ पद्महृदपौण्डरीकहृदेषु ५४ हृदोदकमुत्पलादीनि च ततो ५५ हैमवतैरण्यवतवर्षेषु ५६ रोहिता-

× -तः क्षुल्ल-पा० ४।

रोहियंसा[57]–सुवण्णकूल[58]–रुप्पकूलाओ[59] महाणईओ तेणेव उवागच्छंति, सलिलोदगं[60] गेण्हंति गेण्हित्ता उभओकूलमट्टियं गिण्हंति गिण्हित्ता जेणेव सद्दावति[61]वियडाव[62]○तिपरियागा वट्टवेयड्ढपव्वया[63] तेणेव उवागच्छन्ति उवागच्छित्ता सव्वतूयरे[64] तहेव [पृ०२४३ पं०६–] जेणेव महाहिमवंत[65]रुप्पिवासहरपव्वया तेणेव उवागच्छन्ति तहेव जेणेव महापउम[66]महापुंडरीयद्दहा तेणेव उवागच्छंति उवागच्छित्ता दहोदगं गिण्हन्ति तहेव जेणेव हरिवासर[67]म्मगवासाइं जेणेव हरिकंत[68]–नारिकंताओ[69] महाणईओ तेणेव उवागच्छंति तहेव जेणेव गंधावइ[70]मालवंतपरि[71]याया वट्टवेयड्ढपव्वया[72] तेणेव तहेव जेणेव णिसढ[73]णीलवंत[74]वासधरपव्वया तहेव जेणेव तिगिच्छि[75]केसरि[76]द्दहाओ तेणेव उवागच्छंति उवागच्छित्ता तहेव जेणेव महाविदेहे[77] वासे जेणेव सीता[78]सीतोदाओ[79] महाणदीओ तेणेव तहेव जेणेव

५७रोहितांशा–५८ सुवर्णकूला–५९ रूप्यकूलासु महानदीषु ६०सलिलोदकमुभयतटमृत्तिकां, तदनन्तरं ६१ शब्दापाति६२विकटापाति-६३वृत्तवैताढ्येषु ६४ सर्वतूवरादीन्, ततो ६५ महाहिमव*द्रूप्पिवर्षधरपर्वतेषु सर्वतूवरादीन्, ततो ६६ महापद्मपुण्ड रीकह्रदेषु ह्रदोदकादीनि, तदनन्तरं ६७ हरिवर्षरम्यकवर्षेषु ६८ +हरिकान्ता–६९नरनारीकान्तासु महानदीषु सलिलोदकमुभयतटमृत्तिकां च ततो ७० गन्धापाति७१माल्यवत्पर्याय७२वृत्तवैताढ्येषु तूवरादीन्, ततो ७३ निषध७४नीलवद्वर्षधरपर्वतेषु सर्वतूवरादीन्, तदनन्तरं तद्गतेषु ७५ तिगिञ्छि७६केसरिमहाह्रदेषु ह्रदोदकादीनि, ततः ७७ पूर्वविदेहापरविदेहेषु ७८ ०सीता–७९सीतोदानदीषु सलिलोदक-

○–वतिवट्टवेय–भा० १ । * –वन्तरूप्यव–भा० २ । + हरिहरिकान्तासु म–भा० २ । ० सीतोदान–भा० २ ।

सव्वचक्क[80]वट्टिविजया जेणेव सव्व[81]मागहवरदामपभासाइं तित्थाइं तेणेव उवागच्छंति तेणेव उवागच्छित्ता तित्थोदगं[82] गेण्हंति गेण्हित्ता [83]सव्वंतरणईओ जेणेव सव्ववक्ख[84]ारपव्वया तेणेव उवागच्छंति [85]सव्वतूयरे तहेव जेणेव मंदरे[86] पव्वते जेणेव भद्द[87]सालवणे तेणेव उवागच्छंति [88]सव्वतूयरे सव्वपुप्फे सव्वमल्ले सव्वोसहिसिद्धत्थए य गेण्हंति गेण्हित्ता जेणेव णंद[89]णवणे तेणेव उवागच्छंति उवागच्छित्ता [90]सव्वतूयरे जाव सव्वोसहिसिद्धत्थए य [91]सरसगोसीसचंदणं गिण्हंति गिण्हित्ता जेणेव सोम[92]णसवणे तेणेव उवागच्छंति [93]सव्वतूयरे जाव सव्वोसहिसिद्धत्थए य [94]सरसगोसीसचंदणं च दिव्वं[95] च सुमणदामं गिण्हंति गिण्हित्ता जेणेव पंडग[96]वणे तेणेव उवागच्छंति उवागच्छित्ता [97]सव्वतूयरे जाव सव्वोसहिसिद्धत्थए च सरसं च गोसीसचंदणं च दिव्वं च सुमणदामं दद्दर[98]मलयसुगंधियगन्धे

मुभयतटमृत्तिकां च, ○ततः सर्वेषु ८० चक्रवर्त्तिविजेतव्येषु ८१ मागधादिषु तीर्थेषु ८२ तीर्थोदकं तीर्थमृत्तिकां च, ततः ८३सर्वासु अन्तरनदीषु सलिलोदकमुभयतटमृत्तिकां च, तदनन्तरं ८४ सर्वेषु वक्षस्कारपर्वतेषु ८५ सर्वतूवरादीन्, तदनन्तरं ८६ मन्दरपर्वते ८७ भद्रशालवने ८८ तूवरादीन् ततो ८९ नन्दनवने ९० तूवरादीन् ९१ सरसं च गोशीर्षचन्दनम्, तदनन्तरं ९२ सौमनसवने ९३ सर्वतूवरादीन् ९४ सरसं च गोशीर्षचन्दनं ९५ दिव्यं च सुमनोदाम गृह्णन्ति, ततः ९६ पण्डकवने ९७ तूवर–पुष्प–गन्ध–माल्य–सरसगोशीर्षचन्दन–दिव्यसुमनोदामानि, ९८ दर्दरः–चीवरावनद्धं कुण्डिकादिभाजनमुखं तेन गालितं तत्र पक्वं वा यत्

○ ततः सर्वेषु वक्षस्का–भा० २।

गिण्हंन्ति गिण्हित्ता एगतो मिलायंति मिलाइत्ता ताए उक्किट्ठाए जाव [पृ० ५८ पं० १] जेणेव सोहम्मे कप्पे जेणेव सूरियाभे विमाणे जेणेव अभिसेयसभा जेणेव सूरियाभे देवे तेणेव उवागच्छंति उवागच्छित्ता सूरियाभं देवं करयलपरिग्गहियं सिरसावत्तं मत्थए अंजलिं कट्टु जएणं विजएणं वद्धाविंति वद्धावित्ता तं महत्थं महग्घं महरिहं विउलं इंदाभिसेयं उवट्ठवेंति।

॥२४६॥ तए णं तं सूरियाभं देवं चत्तारि सामाणियसाहस्सीओ चत्तारि अग्गमहिसीओ सपरिवारातो तिन्नि परिसाओ सत्त अणियाहिवइणो जाव अन्नेवि बहवे सूरियाभविमाणवासिणो देवा य देवीओ य तेहिं साभाविएहि य वेउव्विएहि य वरकमलपइट्ठाणेहि य सुरभिवरवारिपडिपुन्नेहिं चंदणकयचच्चिएहिं आविद्ध-कंठेगुणेहि पउमुप्पलपिहाणेहिं सुकुमालकोमलपरिग्गहिएहिं अट्ठसहस्सेणं सोवन्नियाणं कलसाणं जाव [पृ० २४१ पं० ९] अट्ठसहस्सेणं भोमिज्जाणं कलसाणं सव्वोदएहिं सव्वमट्टियाहिं सव्वतूयरेहिं जाव सव्वोसहिसि-द्धत्थएहि य सव्विड्ढीए जाव-वाइएणं महया महया इंदाभिसेएणं अभिसिंचंति।

[१३६] तए णं तस्स सूरियाभस्स देवस्स महया महया इंदाभिसेए वट्टमाणे अप्पेगतिया देवा सूरियाभं विमाणं नच्चोययं नातिमट्टियं पविरलफुसियरेणुविणासणं दिव्वं सुरभिगन्धोदगं वासं वासंति, अप्पेगतिया देवा

मलयोद्भवतया प्रसिद्धत्वात् मलयजं-श्रीखण्डं येषु तान् सुगन्धिकान्-परमगन्धोपेतान् गन्धान् ९९ गृह्णन्ति।

अभिषेके देवानां परमोल्लासेन स्वच्छन्दं विहरणम्

हयरयं नट्ठरयं भट्ठरयं उवसंतरयं पसंतरयं करेंति, अप्पेगतिया देवा सूरियाभं विमाणं आ[1]सियसं[2]मज्जिओव[3]लित्तं [4]सुइसंमट्ठ[5]रत्थं[6]तरावण[7]वीहियं [8]करेंति, अप्पेगतिया देवा सूरियाभं विमाणं मंचाइमंचकलियं करेंति, अप्पेगइया देवा सूरियाभं विमाणं णाणाविहरागोसियं झयपडागाइपडागमंडियं करेंति, अप्पेगतिया देवा सूरियाभं विमाणं लाउल्लोइयमहियं [पृ० ७+टिप्पण] गोसीससरसरत्तचंदणदद्दरदिण्णपंचंगुलितलं करेंति, अप्पेगतिया देवा सूरियाभं विमाणं उवचियचंदणकलसं चंदणघडसुकयतोरणपडिदुवारदेसभागं करेंति, अप्पेगतिया देवा सूरियाभं ॥२४७॥
विमाणं आसत्तोसत्तविउलवट्टवग्घारियमल्लदामकलावं करेंति, अप्पेगतिया देवा सूरियाभं विमाणं पंचवण्णसुरभिमुक्कपुप्फपुंजोवयारकलियं करेंति, अप्पेगतिया देवा सूरियाभं विमाणं कालागुरुपवरकुंदुरुक्कतुरुक्कधूवमघमघंतगंधुद्धूयाभिरामं करेंति, अप्पेगइया देवा सूरियाभं विमाणं सुगंधगंधियं गंधवट्टिभूतं करेंति, अप्पेगतिया देवा हिरण्णवासं वासंति, सुवण्णवासं वासंति, रययवासं वासंति, वइरवासं० पुप्फवासं० फलवासं० मल्लवासं० गंधवासं०चुण्णवासं०आभरणवासं वासंति, अप्पे[9]गतिया देवा हिरण्ण[10]विहिं [11]भाएंति, एवं

[१३६] १आसिक्तम्–उदकच्छटकेन २सम्मार्जितं–संभाव्यमानकचवरशोधनेन ३उपलिप्तमिव गोमयादिना उपलिप्तं तथा सिक्तानि जलेन अत एव ४ शुचीनि–पवित्राणि ५ संमृष्टानि–कचवरापनयनेन ६ रथ्यान्तराणि ७ आपणवीथय इव–हट्टमार्गा इवापणवीथयो–रथ्याविशेषा यस्मिन् तत् तथा ८ कुर्वन्ति, ९ अप्येकका:–केचन देवा १० हिरण्यविधिं–हिरण्यरूपं मङ्गलभूतं प्रकारं ११ भाजयन्ति–

[१२]सुवन्नविहिं भाएंति, रयण[१३]विहिं पुप्फ[१४]विहिं फल[१५]विहिं मल्ल[१६]विहिं चुण्ण[१७]विहिं वत्थविहिं गंधविहिं०, तत्थ अप्पेगतिया देवा [१८]आभरणविहिं भाएंति, अप्पेगतिया चउव्विहं वाइत्तं वाइंति–ततं विततं घणं [पृ० १४४ पं० ३] झुसिरं, अप्पेगइया देवा चउव्विहं गेयं गायंति, तं०–उक्खित्तायं पायत्तायं मंदायं [पृ० १४४ पं० ४] रोइतावसाणं, अप्पेगतिया देवा दुयं नट्टविहिं उवदंसिंति अप्पेगतिया विलंबियणट्टविहिं उवदंसेंति अप्पेगतिया देवा दुतविलंबियं णट्टविहिं उवदंसेंति, एवं अप्पेगतिया अंचियं नट्टविहिं उवदंसेंति, अप्पेगतिया देवा आरभडं भसोलं आर[१९]भडभसोलं [२०]उप्पायनिवायपवत्तं संकुचिय[२१]पसारियं रियारियं [२२]भंतसंभंतणामं [कं० ८३–८७] दिव्वं णट्टविहिं उवदंसेंति, अप्पेगतिया देवा चउव्विहं अभिणयं अभिणयंति, तंजहा–दिट्ठंतियं पाडंतियं सामंतोवणिवाइयं [कं०८८] लोगअंतोमज्झावसाणियं, अप्पेगतिया देवा बु[२३]क्कारेंति, अप्पेगतिया देवा पीणेंति[२४], अप्पेगतिया [२५]लासेंति अप्पेगतिया हक्कारेंति, अप्पेगतिया विणंति, [२६]तंडवेंति, अप्पेगइया वग्गंति [२७]अप्फोडेंति, अप्पेगतिया अप्फोडेंति वग्गंति, अप्पे० तिवइं छिंदंति, अप्पेगतिया हयहेसियं करेंति, अप्पेगतिया हत्थिगुलगुलाइयं करेंति,

---

विश्राणयन्ति–शेपदेवेभ्यो ददतीति भावः, एवं १२ सुवर्ण–१३ रत्न–१४ पुष्प–१५ फल–१६ माल्य–गन्ध–१७ चूर्ण–१८ आभरणविधिभाजनमपि भावनीयम्। २० उत्पातपूर्वो निपातो यस्मिन् स उत्पातनिपातस्तं, एवं निपातोत्पातं २१ संकुचितप्रसारितं २२ भ्रान्तसंभ्रान्तं नाम १९ आरभटभसोलं दिव्यं नाट्यविधिमुपदर्शयन्ति, अप्येकका देवा २३ बुक्काशब्दं कुर्वन्ति, २४ पीनयन्ति–पीनमात्मानं कुर्वन्ति–स्थूला भवन्तीत्यर्थः, २५ लासयन्ति लास्यरूपं नृत्यं कुर्वन्ति, २६ ताण्डवयन्ति–ताण्डवरूपं नृत्यं कुर्वन्ति २७ आ-

अप्पेगतिया रहघणघणाइयं करेंति, अप्पेगतिया हयहेसिय-हत्थिगुलगुलाइय-रहघणघणाइयं करेंति, अप्पेगतिया उच्छलेंति[28], अप्पेगतिया पोच्छलेंति[29], अप्पेगतिया उक्किट्ठियं करेंति, अ० उच्छलेंति पोच्छलेंति, अप्पेगतिया तिन्नि वि, अप्पेगतिया उवयंति[30], अप्पेगतिया उप्पयंति[31], अप्पेगतिया परिवयंति[32], अप्पेगइया तिन्निवि, अप्पेगइया सीहनायंति, अप्पेगतिया दद्दरयं करेंति, अप्पेगतिया भूमिचवेडं दलयंति, अप्पे० तिन्नि वि, अप्पेगतिया गज्जंति, अप्पेगतिया विज्जुयायंति, अप्पेगइया वासं वासंति, अप्पेगतिया तिन्निवि करेंति, अप्पेगतिया जलंति[33], अप्पेगतिया तवंति[34], अप्पेगतिया पतवेंति[35], अप्पेगतिया तिन्नि वि, अप्पेगतिया हक्कारेंति, अप्पेगतिया थुक्कारेंति[36], अप्पेगतिया धक्कारेंति, अप्पेगतिया साइं साइं नामाइं साहेंति, अप्पेगतिया चत्तारि वि, अप्पेगइया देवा देवसन्निवायं करेंति, अप्पेगतिया देवुज्जोयं करेंति, अप्पेगइया देवुक्कलियं[37] करेंति, अप्पेगइया देवा कहकहगं[38] करेंति, अप्पेगतिया देवा दुहदुहगं[39] करेंति, अप्पेगतिया चेलुक्खेवं करेंति, अप्पेगइया देवसन्निवायं देवुज्जोयं देवुक्कलियं देवकहकहगं देवदुहदुहगं चेलुक्खेवं करेंति, अप्पेगतिया उप्पलहत्थगया जाव सयसहस्सपत्तहत्थ-

---

स्फोटयन्ति भूम्यादिकमिति गम्यते, २८ उच्छलयन्ति २९ प्रोच्छलयन्ति ३० अवपतन्ति ३१ उत्पतन्ति ३२ परिपतन्ति-तिर्यक् निपतन्तीत्यर्थः ३३ ज्वालामालाकुला भवन्ति ३४ तप्ता भवन्ति ३५ प्रतप्ता भवन्ति ३६ महता शब्देन थूत्कुर्वन्ति ३७ देवानां वातस्येवोत्कलिका देवोत्कलिका तां कुर्वन्ति, ३८ प्राकृतानां देवानां प्रमोदभरवशतः स्वेच्छावचनैर्बोलकोलाहलो देवकहकहस्तं कुर्वन्ति। ३९ 'दुहदुहगम्' इत्यनुकरणमेतत्।

देवानामाशीर्वचनम्

गया, अप्पेगतिया कलसहत्थगया जाव धूवकडुच्छुयहत्थगया हट्ठतुट्ठ जाव-हियया [पृ० ४७ पं० ३] सव्वतो समंता आहावंति परिधावंति। तए णं तं सूरियाभं देवं चत्तारि सामाणियसाहस्सीओ जाव [पृ० ४४ पं० २] सोलस आयरक्खदेवसाहस्सीओ अण्णे य बहवे सूरियाभरायहाणिवत्थव्वा देवा य देवीओ य महया महया इंदाभिसेगेणं अभिसिंचंति अभिसिंचित्ता पत्तेयं पत्तेयं करयलपरिग्गहियं सिरसावत्तं मत्थए अंजलिं कट्टु एवं वयासी-जय जय नंदा! जय जय भद्दा! जय जय नंदा! भद्दं ते, अजियं जिणाहि, जियं च पालेहि, जियमज्झे वसाहि इंदो इव देवाणं चंदो इव ताराणं चमरो इव असुराणं धरणो इव नागाणं भरहो इव मणुयाणं बहूइं पलिओवमाइं बहूइं सागरोवमाइं बहूइं पलिओवमसागरोवमाइं चउण्हं सामाणियसाहस्सीणं जाव [पृ० ४४ पं० २] आयरक्खदेवसाहस्सीणं सूरियाभस्स विमाणस्स अन्नेसिं च बहूणं सूरियाभविमाणवासीणं देवाण य देवीण य आहेवच्चं जाव [पृ० २०२ * टिप्पण] महया महया कारेमाणे पालेमाणे विहराहि त्ति कट्टु जय जय सद्दं पउंजंति।

[१३७] तए णं से सूरियाभे देवे महया महया इंदाभिसेगेणं अभिसित्ते समाणे अभिसेयसभाओ पुरत्थिमिल्लेणं दारेणं निग्गच्छति निग्गच्छित्ता जेणेव अलंकारियसभा तेणेव उवागच्छति उवागच्छित्ता अलंकारियसभं अणुप्पयाहिणीकरेमाणे २ अलंकारियसभं पुरत्थिमिल्लेणं दारेणं अणुपविसति अणुपविसित्ता जेणेव सीहासणे तेणेव उवागच्छति सीहासणवरगते पुरत्थाभिमुहे सन्निसन्ने।

तए णं तस्स सूरियाभस्स देवस्स सामाणियपरिसोववन्नगा अलंकारियभंडं उवट्ठवेंति, तए णं से सूरियाभे देवे तप्पढमयाए[1] पम्हलसूमालाए[2] सुरभीए[3] गंधकासाईए[4] गायाइं[5] लूहेति[6] लूहित्ता सरसेणं गोसीसचंदणेणं गायाइं अणुलिंपति अणुलिंपित्ता नासानीसासवायवोज्झं[7] चक्खुहरं[8] वन्नफरिसजुत्तं[9] हयलालापेलवातिरेगं[10] धवलं[11] कणगखचियन्तकम्मं[12] आगासफालियसमप्पभं[13] दिव्वं[14] देवदूसजुयलं[15] नियंसेति[16] नियंसेत्ता हारं[17] पिणद्धेति पिणद्धित्ता अद्धहारं[18] पिणद्धेइ एगावलिं[19] पिणद्धेति पिणद्धित्ता मुत्तावलिं[20] पिणद्धेति पिणद्धित्ता रयणावलिं[21] पिणद्धेइ पिणद्धि-

[१३७] १ तत्प्रथमतया–तस्यामलङ्कारसभायां प्रथमतया २ पक्ष्मला च सा सुकुमारा च पक्ष्मलसुकुमारा तया ३ सुरभ्या ४ गन्धकाषायिक्या–सुरभिगन्धकषायद्रव्यपरिकर्मितया लघुशाटिकया ५ गात्राणि ६ रूक्षयति ७ 'नासिकानिःश्वासवाह्यम्' अनेन तच्छलक्ष्णतामाह, ८चक्षुर्हरति–आत्मवशं नयति विशिष्टरूपातिशयकलितत्वात् इति चक्षुर्हरं ९वर्णेन स्पर्शेन च–अतिशायिनेति गम्यते-युक्तं वर्णस्पर्शयुक्तं, १० हयलाला–अश्वलाला तस्या अपि पेलवमतिरेकेण हयलालापेलवा*तिरेकम्–अतिविशिष्टमृदुत्वलघुत्वगुणोपेत-मिति भावः, ११ धवलं श्वेतं, तथा १२ कनकेन खचितानि–विच्छुरितानि अन्तकर्माणि–अञ्चलयोर्वानलक्षणानि यस्य तत् कनकख-चितान्तकर्म १३ आकाशस्फटिकं नामातिस्वच्छः स्फटिकविशेषस्तत्समप्रभं १४ दिव्यं १५ देवदूष्ययुगलं १६ परिधत्ते परिधाय हारादीन्याभरणानि पिनह्यति, तत्र १७ हारः–अष्टादशसरिकः १८ अर्द्धहारो–नवसरिकः १९ एकावली–विचित्रमणिका २० मुक्तावली–मुक्ताफलमयी २१ रत्नावली–रत्नमय‐मणिकात्मिका

* "नाम नाम्ना ऐकार्थ्ये समासो बहुलम्–[३।१।१८ हैमश०] इति समासः"–राय० विव० ‐ अय 'मणिक' शब्दः भाषाप्रसिद्धं

त्ता एवं अंगयाइं[२२] केयूराइं[२३] कडगाइं तुडियाइं[२४] कडिसुत्तगं दसमुद्दाणंतगं[२५]ग वच्छसुत्तगं मुरविं कंठमुरविं पालंबं[२६] कुंडलाइं चूडामणिं[२८] मउडं पिणद्धेइ गंथिमं[३०]-वेढिमं[३१]-पूरिमं[३२]-संघाइमेणं[३३] चउव्विहेणं मल्लेणं कप्परुक्खगं पिव अप्पाणं अलंकियविभूसियं करेइ करित्ता दद्दरमलयसुगंधगंधिएहिं गा×याइं भुखंडेइ दिव्वं च सुमणदामं[२९] पिणद्धेइ ।

[१३८] तए णं से सूरियाभे देवे केसालंकारेणं मल्लालंकारेणं आभरणालंकारेणं वत्थालंकारेण चउव्विहेण

---

२६ प्रालम्बः-तपनीयमयो विचित्रमणिरत्नभक्तिचित्र आत्मनः प्रमाणेन सुप्रमाण आभरणविशेषः, २३ कटकानि-कलाचिकाभरणानि २४ त्रुटितानि-बाहुरक्षिकाः २२अङ्गदानि बाह्याभरणविशेषाः २५ दशमुद्रिकानन्तकं हस्ताङ्गुलिसम्बन्धि मुद्रिकादशकं २७ कुण्डले-कर्णाभरणे २८ चूडामणिर्नाम सकलपार्थिवरत्नसर्वसारो देवेन्द्रमनुष्येन्द्रमूर्द्धकृतनिवासो निःशेषामङ्गलाशान्तिरोगप्रमुखदोषापहारकारी प्रवरलक्षणोपेतः परममङ्गलभूत आभरणविशेषः चित्राणि-नानाप्रकाराणि यानि रत्नानि तैः संकटश्चित्ररत्नसङ्कटः-प्रभूतरत्ननिचयोपेत इति भावः-तम्-२९ पुष्पमालाम् ३० ग्रन्थिमं-ग्रन्थनं ग्रन्थस्तेन निर्वृत्तं ≈ग्रन्थिमम्-यत्सूत्रादिना ग्रथ्यते तद् ग्रन्थिमम्-इति भावः, ३१=पूरिमं यत् ग्रथितं तत् वेष्ट्य×ते यथा पुष्पलम्बू+सगो गेन्दुक इत्यर्थः, ३२ पूरिमं येन वंशशलाकामयं पञ्जरादि पूर्यते, ३३ संघातिमं यत् परस्परतो नालसंघातेन संघात्यते ।

'मणका' शब्द सूचयति । ग-ग विकच्छसु-भा० १ । ×-याइं भक्खडेइ-भा० १ । ≈ "भावादिमः" [६-४-२१] प्रत्यय "-रा० वि० । = सर्वप्रतिषु अयमेव पाठ. परतु अत्र 'पूरिम' शब्दस्थाने 'वेष्टिम' शब्दः उचितो भाति । × -ते तथा पुष्पलंपूसको गन्दुक-पा०४-५ । +-सको गडुक-भा०१ ।

सूर्याभस्य पुस्तकवाचनम्

अलंकारेण अलंकियविभूसिए समाणे पडिपुण्णलंकारे सीहासणाओ अब्भुट्ठेति अब्भुट्ठित्ता अलंकारियसभाओ पुरत्थिमिल्लेणं दारेणं पडिणिक्खमइ पडिणिक्खमित्ता जेणेव [1]ववसायसभा तेणेव उवागच्छति ववसायसभं अणुपयाहिणीकरेमाणे अणुपयाहिणीकरेमाणे पुरत्थिमिल्लेणं दारेणं अणुपविसति, जेणेव सीहासणवरगए जाव सन्निसन्ने। तए णं तस्स सूरियाभस्स देवस्स सामाणियपरिसोववन्नगा देवा पोत्थयरयणं उ○वणेंति, ततेणं से सूरियाभे देवे पोत्थयरयणं गिण्हति गिण्हित्ता पोत्थयरयणं मुयइ[2] मुइत्ता पोत्थयरयणं विहाडेइ[3] विहाडित्ता पोत्थयरयणं वाएति पोत्थयरयणं वाएत्ता [4]धम्मियं ववसायं ववसइ ववसइत्ता पोत्थयरयणं पडिनिक्खिवइ सीहासणातो अब्भुट्ठेति अब्भुट्ठेत्ता ववसायसभातो पुरत्थिमिल्लेणं दारेणं पडिनिक्खमित्ता जेणेव नंदा पुक्खरिणी तेणेव उवागच्छति उवागच्छित्ता णंदापुक्खरिणिं पुरत्थिमिल्लेणं तोरणेणं तिसोवाणपडिरूवएणं पच्चोरुहइ ॥२५३॥

[१३८] १ व्यवसायसभा नाम व्यवसायनिबन्धनभूता सभा, क्षेत्रादेरपि कर्मोदयादिनिमित्तत्वात्, उक्तं च—

○"उदय-क्खय-क्खओवसम-उवसमा जं च कम्मुणो भणिया। दव्वं खेत्तं कालं भावं च भवं च संपप्प ॥ [ ] इति, २उत्सङ्गे स्थानविशेषे वा उत्तमे इति द्रष्टव्यम्, ३उद्घाटयति, ४धार्मिकम्—धर्मानुगतं व्यवसायं व्यवस्यति—कर्त्तुमभिलषतीति भावः।

○ –वणमंति–भा० १। – साय गिण्हति गिण्हित्ता–भा० १।

○उदय-क्षय-क्षयोपशम-उपशमा यच्च कर्मणो भणिताः। द्रव्यं क्षेत्रं कालं भावं च भव च सप्राप्य ॥

सूर्याभः सिद्धायतनं गत्वा जिनप्रतिमानां प्रमार्जनादिकं करोति

पच्चोरुहित्ता हत्थपादं पक्खालेति पक्खालित्ता आयंते चोक्खे परमसूइभूए एगं महं सेयं रययामयं विमलं सलिलपुण्णं मत्तगयमुहागितिकुंभसमाणं भिंगारं पगेण्हति पगेण्हित्ता जाइं तत्थ उप्पलाइं जाव [पृ० २१ पं० १०] सतसहस्सपत्ताइं ताइं गेण्हति गेण्हित्ता णंदातो पुक्खरिणीतो पच्चुत्तरति पच्चुत्तरित्ता जेणेव सिद्धायतणे तेणेव पहारेत्थ गमणाए।

[१३९] तए णं तं सूरियाभं देवं चत्तारि य सामाणियसाहस्सीओ जाव [पृ० ४४ पं० २] सोलस आयरक्खदेवसाहस्सीओ अन्ने य बहवे सूरियाभविमाणवासिणो जाव देवीओ य अप्पेगतिया देवा उप्पलहत्थगा जाव सयसहस्सपत्तहत्थगा सूरियाभं देवं पिट्ठतो पिट्ठतो समणुगच्छंति। तए णं तं सूरियाभं देवे बहवे आभिओगिया देवा य देवीओ य अप्पेगतिआ कलसहत्थगा जाव अप्पेगतिया धूवकडुच्छुयहत्थगता हट्ठतुट्ठ जाव [पृ० ४७ पं० ३] सूरियाभं देवं पिट्ठतो समणुगच्छंति। तए णं से सूरियाभे देवे चउहिं सामाणिगसाहस्सीहिं जाव अन्नेहि य बहूहि य जाव देवेहि य देवीहि य सद्धिं संपरिवुडे सव्विड्ढीए जाव [पृ० ६९ पं० २]–णातियरवेणं जेणेव सिद्धायतणे तेणेव उवागच्छति उवागच्छित्ता सिद्धायतणं पुरत्थिमिल्लेणं दारेणं अणुपविसति अणुपविसित्ता जेणेव देवच्छंदए जेणेव जिणपडिमाओ तेणेव उवागच्छति उवागच्छित्ता जिणपडिमाणं आलोए पणामं करेति करित्ता लोमहत्थगं गिण्हति गिण्हित्ता जिणपडिमाणं लोमहत्थएणं पमज्जइ पमज्जित्ता जिणपडिमाओ सुरभिणा गंधोदएणं ण्हाणेइ ण्हाणित्ता सरसेणं गोसीसचंदणेणं गायाइं अणुलिंपइ अणुलिंपइत्ता सुरभिगंधका-

साइएणं गायाइं लूहेति लूहित्ता जिणपडिमाणं अहयाइं देवदूसजुयलाइं नियंसेइ नियंसित्ता पुप्फारुहणं मल्लारुहणं गंधारुहणं चुण्णारुहणं वन्नारुहणं वत्थारुहणं आभरणारुहणं करेइ करित्ता आसत्तोसत्तविउलवट्टवग्घारियमल्लदामकलावं करेइ मल्लदामकलावं करेत्ता कयग्गहगहियकरयलपब्भट्ठविप्पमुक्केणं दसवद्धवन्नेणं कुसुमेणं मुक्कपुप्फपुंजोवयारकलियं करेति करित्ता जिणपडिमाणं पुरतो अच्छेहिं सण्हेहिं रययामएहिं [1]अच्छरसातंदुलेहिं अट्ठट्ठ मंगले आलिहइ, तंजहा–सोत्थिय जाव [पृ० १९ पं० ४] दप्पणं। तयाणंतरं च णं [2]चंदप्पभवइरवेरुलियविमलदंडं [3]कंचणमणिरयणभत्तिचित्तं [4]कालागुरुपवरकुंदुरुक्कतुरुक्कधूवमघमघंतगंधुत्तमाणुविद्धं च [5]धूववट्टिं [6]विणिम्मुयंतं [7]वेरुलियमयं [8]कडुच्छुयं [9]पग्गहिय [10]पयत्तेणं [11]धूवं दाऊण [12]जिणवराणं [13]अट्ठसयविसुद्धगन्थजुत्तेहिं [14]अत्थजुत्तेहिं अपुण-

[१३९] १ अच्छो रसो येषु ते अच्छरसाः, प्रत्यासन्नवस्तुप्रतिबिम्बाधारभूता इवातिनिर्मला इत्यर्थः, अच्छरसाश्च ते तन्दुलाश्च तैः–दिव्यतन्दुलैरिति भावः, २ चन्द्रप्रभवज्रवैडूर्यमयो विमलो दण्डो यस्य स तथा तम्, ३ काञ्चनमणिरत्नभक्तिचित्रम् ४कालागुरुप्रवरकुन्दरुक्कतुरुक्कसत्केन धूपेन उत्तमगन्धिनाऽनुविद्धाम्–कालागुरुप्रवरकुन्दरुक्कतुरुक्कधूपगन्धो ⊖ त्तमानुविद्धां ५ धूपवर्त्तिं ६ विनिर्मुञ्चन्तं ७ वैडूर्यमयं ८ धूपकडुच्छुयं ९ प्रगृह्य १० प्रयत्नतो ११ धूपं दत्त्वा १२ जिनवरे⪢भ्यः, १६ सप्ताष्टानि पदानि १७ पश्चादपसृत्य १९ दशाङ्गुलिमञ्जलिं मस्तके रचयित्वा प्रयत्नतः १३ विशुद्धो–निर्मलो लक्षणदोषरहित इति भावः यो ग्रन्थः–शब्दसंदर्भस्तेन युक्तानि, अष्टशतं च तानि विशुद्धग्रन्थयुक्तानि च तैः १४ अर्थयुक्तैः–अर्थसारैरपुनरुक्तैर्महावृत्तैः, तथाविधदेवलब्धिप्रभाव एषः,

⊖ "प्राकृतत्वात् पदव्यत्ययः"–राय० वि०। ⪢"सूत्रे षष्ठी प्राकृतत्वात्"–राय० वि०।

रूत्तेहिं महावित्तेहिं संथुणेइ[१५] संथुणित्ता सत्तट्ठ[१६] पयाइं पच्चोसक्कइ पच्चोसक्कित्ता[१७] वामं जाणुं[१८] अंचेइ अंचित्ता दाहिणं जाणुं धरणितलंसि निहट्टु तिक्खुत्तो मुद्धाणं धरणितलंसि निवाडेइ निवाडित्ता ईसिं पच्चुण्णमइ पच्चुण्णमित्ता करयलपरिग्गहियं[१९] सिरसावत्तं मत्थए अंजलिं कट्टु एवं वयासी[२०]—नमोऽत्थु[२१] णं अरिहंताणं[२२] भगवंताणं[२३] आदिगराणं[२४] तित्थगराणं[२५] सयंसंबुद्धाणं[२६] पुरिसुत्तमाणं[२७] पुरिससीहाणं[२८] पुरिसवरपुण्डरीआणं[२९] पुरिसवरगंधहत्थीणं[३०]

१५संस्तौति संस्तुत्य १८ वामं जानुं अञ्चति इत्यादिना विधिना प्रणामं कुर्वन् २० प्रणिपातदण्डकं पठति, तद्यथा—२१ नमोऽस्तु २२ देवादिभ्योऽतिशयपूजामर्हन्तीत्यर्हन्तस्तेभ्यः,=२३ते चार्हन्तो नामादिरूपा अपि सन्ति ततो भावार्हत्प्रतिपत्त्यर्थमाह—'भगवद्भ्यः' भगः—समग्रैश्वर्यादिलक्षणः स एषामस्तीति भगवन्तस्तेभ्यः, २४ आदिः—धर्मस्य प्रथमा प्रवृत्तिस्तत्करणशीलाः आदिकरास्तेभ्यः २५ तीर्यते संसारसमुद्रोऽनेनेति तीर्थं—प्रवचनं तत्करणशीलास्तीर्थंकराः तेभ्यः, २६ स्वयम्—अपरोपदेशेन सम्यग् वरबोधिप्राप्त्या बुद्धा—मिथ्यात्वनिद्रापगमसंबोधेन स्वयंसंबुद्धास्तेभ्यः, तथा २७पुरुषाणामुत्तमाः पुरुषोत्तमाः, भगवन्तो हि संसारमप्यावसन्तः सदा परार्थव्यसनिन उपसर्जनीकृतस्वार्था उचितक्रियावन्तोऽदीनभावाः कृतज्ञतापतयोऽनुपहतचित्ता देवगुरुबहुमानिन इति भवन्ति पुरुषोत्तमास्तेभ्यः, तथा २८ पुरुषाः सिंहा इव कर्मगजान् प्रति पुरुषसिंहास्तेभ्यः, तथा २९ पुरुषवरपुण्डरीकाणीव संसारजलासङ्गादिना च कर्ममलव्यपेताः पुरुषवरपुण्डरीकाः तेभ्यः तथा ३० पुरुषवरगन्धहस्तिन इव परचक्रदुर्भिक्षमारिप्रभृतिक्षुद्रगजनिराकरणेनेति पुरुषवरगन्धहस्तिनस्तेभ्यः

= "सूत्रे षष्ठी 'छट्ठीविभत्तीए भन्नइ चउत्थी' [ ] इति प्राकृतलक्षणवशात्—राय० वि०।

लोगु[31]त्तमाणं लोग[32]नाहाणं लोग[33]हिआणं लोगपई[34]वाणं लोगपज्जो[35]अगराणं अ[36]भयदयाणं च[37]क्खुदयाणं मग्गद[38]याणं स[39]रणदयाणं बोहिद[40]याणं ध[41]म्मदयाणं धम्म[42]देसयाणं

तथा ३१लोको–भव्यसत्त्वलोकः तस्य सकलकल्याणैकनिबन्धनतया भव्यत्वभावेनोत्तमा लोकोत्तमास्तेभ्यः, तथा ३२ लोकस्य नाथा–योगक्षेमकृतो लोकनाथास्तेभ्यः, तत्र योगो बीजाधानोद्भेदपोषणकरणम्–क्षेमम् च तत्तदुपद्रवाद्यभावापादनं, तथा ३३ लोकस्य–प्राणिलोकस्य पञ्चास्तिकायात्मकस्य वा हिताहितोपदेशेन सम्यक्प्ररूपणया वा लोकहितास्तेभ्यः, तथा ३४लोकस्य–देशनायोग्यस्य प्रदीपा देशनांशुभिर्यथावस्थितवस्तुप्रकाशका लोकप्रदीपास्तेभ्यः, तथा ३५ लोकस्य–उत्कृष्टमतेर्भव्यसत्त्वलोकस्य प्रद्योतनं प्रद्योतकत्व-विशिष्टा ज्ञानशक्तिस्तत्करणशीला लोकप्रद्योतकराः–तथा च भवन्ति भगवत्प्रसादात् तत्क्षणमेव भगवन्तो गणभृतो विशिष्टज्ञानसंपत्-समन्विता यद्वशाद् द्वादशाङ्गमारचयन्तीति–तेभ्यः, तथा ३६ अभयं–विशिष्टमात्मनः स्वास्थ्यं, निःश्रेयसधर्मभूमिकानिबन्धनभूता परमा धृतिरिति भावः, ततः अभयं ददतीत्यभयदा+स्तेभ्यः, तथा ३७ चक्षुरिव चक्षुः–विशिष्ट आत्मधर्मः तत्त्वावबोधनिबन्धनः श्रद्धा-स्वभावः, श्रद्धाविहीनस्य अचक्षुष्मत इव रूपतत्त्वदर्शनायोगात् तद् ददतीति चक्षुर्दास्तेभ्यः, तथा ३८ मार्गो–विशिष्टगुणस्थानावाप्ति-प्रगुणः स्वरसवाही क्षयोपशमविशेषस्तं ददतीति मार्गदाः, तथा ३९शरणं–संसारकान्तारगतानामतिप्रबलरागादिपीडितानां समाश्वासन-स्थानकल्पं तत्त्वचिन्तारूपमध्यवसानं तद् ददतीति शरणदास्तेभ्यः, तथा ४०बोधिः–जिनप्रणीतधर्मप्राप्तिस्तत्त्वार्थश्रद्धानलक्षणसम्यग्द-र्शनरूपा तां ददतीति बोधिदास्तेभ्यः, तथा ४१ धर्म–चारित्ररूपं ददतीति धर्मदास्तेभ्यः, कथं धर्मदाः ? इत्याह–४२ धर्मं दिशन्तीति

+ 'अभयद' स्थाने 'अभयदय' इत्यत्र "सूत्रे च 'क' प्रत्ययः स्वार्थिकः प्राकृतलक्षणवशात्–एवमन्यत्रापि"–राय०वि० ।

[४३]धम्मनायगाणं [४४]धम्मसारहीणं [४५]धम्मवरचाउरंतचक्कवट्टीणं [४६]अप्पडिहयवरनाणदंसणधराणं [४७]विअट्टछउमाणं जि[४८]णाणं [४९]जावयाणं [५०]तिन्नाणं [५१]तारयाणं [५२]बुद्धाणं [५३]बोहयाणं [५४]मुत्ताणं [५५]मोअगाणं [५६]सव्वन्नूणं [५७]सव्वदरिसीणं [५८]सिवं [५९]अयलं अरुअं[६०] [६१]अणंतं [६२]अक्खयं-[६३]अव्वाबाहं [६४]अपुणराविति [६५]सिद्धिगइनामधेयं [६६]ठाणं

धर्मदेशकास्तेभ्यः, तथा ४३ धर्मस्य नायकाः-स्वामिनस्तद्वशीकरणभावात् तत्फलपरिभोगाच्च धर्मनायकाः तेभ्यः, ४४ धर्मस्य सारथय इव सम्यक् प्रवर्त्तनयोगेन धर्मसारथयस्तेभ्यः, तथा ४५धर्म एव वरं-प्रधानं चतुरन्तहेतुत्वात् चतुरन्तं चक्रमिव चतुरन्तचक्रं तेन वर्त्तितुं शीलं येषां ते तथा तेभ्यः, तथा ४६अप्रतिहते अप्रतिस्खलिते क्षायिकत्वात् वरे-प्रधाने ज्ञानदर्शने धरन्तीति अप्रतिहतवरज्ञानदर्शनधरास्तेभ्यः, तथा ४७ छादयन्तीमि छद्म-घातिकर्मचतुष्टयं व्यावृत्तम्-अपगतं छद्म येभ्यस्ते व्यावृत्तच्छद्मानस्तेभ्यः, तथा ४८ रागद्वेषकषायेन्द्रियपरीषहोपसर्गघातिकर्मशत्रून् स्वयं जितवन्तोऽन्यांश्च जापयन्तीति जिनाः ४९ जापकास्तेभ्यो जिनेभ्यो जापकेभ्यः, तथा ५० भवार्णवं स्वयं तीर्णवन्तोऽन्याँश्च तारयन्तीति ५१ तीर्णास्तारकास्तेभ्यः, तथा केवलवेदसा अवगततत्त्वा ५२ बुद्धा अन्यॉश्च बोधयन्तीति ५३ बोधकास्तेभ्यः, ५४ मुक्ताः कृतकृत्याः-निष्ठितार्था इति भावः-तेभ्योऽन्यॉश्च मोचयन्तीति ५५ मोचकास्तेभ्यः, ५६ सर्वज्ञेभ्यः ५७ सर्वदर्शिभ्यः, ५८ शिवं सर्वोपद्रवरहितत्वात् ५९ अचलं स्वाभाविकप्रायोगिकचलनक्रियाऽपोहात् ६० अरुजं शरीरमनसोरभावेन आधिव्याध्यसम्भवात् ६१ अनन्तं केवलात्मनाऽनन्तत्वात् ६२ अक्षयं विनाशकारणाभावात् ६३ अव्याबाधं केनापि बाधयितुमशक्यममूर्त्तत्वात् ६४ न पुनरावृत्तिर्यस्मात् तदपुनरावृत्ति ६५ सिध्यन्ति-निष्ठितार्था भवन्त्यस्यामिति सिद्धिः-लोकान्तक्षेत्रलक्षणा सैव गम्यमानत्वात् गतिः सिद्धिगतिरेष नामधेयं यस्य तत् सिद्धिगतिनामधेयम् ६६तिष्ठन्ति अस्मिन् इति स्थानं-व्यवहारतः

संपत्ताणं[६७] वंदइ[६८] नमंसइ[६९] वंदित्ता नमंसित्ता जेणेव○ देवच्छंदए जेणेव सिद्धायतणस्स बहुमज्झदेसभाए तेणेव उवागच्छइ लोमहत्थगं परामुसइ सिद्धायतणस्स बहुमज्झदेसभागं लोमहत्थेणं[७०] पमज्जति[७१], दिव्वाए दगधाराए[७२] अब्भुक्खेइ[७३], सरसेणं गोसीसचंदणेणं[७४] पंचंगुलितलं[७५] *मंडलगं आलिहइ कयग्गहगहिय[७६]–जाव [पृ० ६६ पं० ४] पुंजोवयारकलियं करेइ करेत्ता धूवं दलयइ, जेणेव सिद्धायतणस्स दाहिणिल्ले[७७] दारे तेणेव उवागच्छति लोमहत्थगं[७८] परामुसइ दारचेडीओ[७९] य सालभंजियाओ[८०] य वालरूवए[८१] य लोमहत्थएणं पमज्जइ[८२] दिव्वाए[८३] दगधाराए अब्भुक्खेइ

सिद्धिक्षेत्रं निश्चयतो यथावस्थितं स्वस्वरूपं स्थानस्थानिनोरभेदोपचारात् तत् सिद्धिगतिनामधेयं स्थानं ६७तत् संप्राप्तेभ्यः, एवं प्रणिपातदण्डकं पठित्वा ततो "वन्दते[६८] ताः प्रतिमाश्चैत्यवन्दनविधिना प्रसिद्धेन, नमस्करोति[६९] पश्चात्प्रणिधानादियोगेन" इत्येके,अन्ये त्वभिदधति–"विरतिमतामेव प्रसिद्धश्चैत्यवन्दनविधिः अन्येषां तथाऽभ्युपगमपुरस्सरकायव्युत्सर्गासिद्धेः–इति[६८] वन्दते सामान्येन नमस्करोति आशयवृद्धेरभ्युत्थाननमस्कारेण'इति, तत्त्वमत्र भगवन्तः परमर्षयः केवलिनो विदन्ति, अत ऊर्ध्वं सूत्रं सुगमं केवलं भूयान् विधिविषयो वाचनाभेद इति यथावस्थितवाचनाप्रदर्शनार्थं विधिमात्रमुपदर्श्यते तदनन्तरं ७०लोमहस्तकेन देवच्छन्दकं ७१प्रमार्जयति ७२पानीयधारया ७३अभ्युक्षति,अभिमुखं सिञ्चतीत्यर्थः, तदनन्तरं ७४गोशीर्षचन्दनेन ७५पञ्चाङ्गुलितलं ददाति, ततः ७६पुष्पा×रोहणादि धूपदहनं च करोति, तदनन्तरं सिद्धायतनबहुमध्यदेशभागे उदकधाराभ्युक्षणचन्दनपञ्चाङ्गुलितलप्रदानपुष्पपुञ्जोपचारधूपदानादि करोति, ततः ७७ सिद्धायतनदक्षिणद्वारे समागत्य

○–व सिद्धाय-भा० १–२। * मूल-विवरणयोर्भेदः। × –प्पायारो-भा० १।

रायपसेणइयं।

॥२६०॥

सूर्याभः स्वविमानस्थानां शालभञ्जिकादीनामपि प्रमार्जनादिकं करोति

सरसेणं गोसीस[85]चंदणेणं चच्चए दलयइ दलइत्ता पुप्फा[86]रुहणं मल्ला० जाव [पृ०२५५ पं० १–२] आभरणारुहणं करेइ करेत्ता आसत्तोसत्त० जाव [पृ० २५५ पं० २] धूवं[87] दलयइ जेणेव दाहिणिल्ले दारे मुहमंडवे जेणेव दाहिणिल्लस्स[88] मुहमंडवस्स बहुमज्झदेसभाए[89] तेणेव उवागच्छइ लोमहत्थगं परामुसइ बहुमज्झदेसभागं लोमहत्थेणं[90] पमज्जइ दिव्वाए दग[91]धाराए अब्भुक्खेइ सरसेणं गोसीस[92]चंदणेणं पंचंगुलितलं मंडलगं आलिहइ कयग्गाह[93]गहिय–जाव धूवं[94] दलयइ जेणेव दाहिणिल्लस्स मुहमंडवस्स पच्चत्थिमिल्ले[95] दारे तेणेव उवागच्छइ लोमहत्थगं परामुसइ दारचेडीओ य सालभंजियाओ य वालरूवए य लोमहत्थेणं पमज्जइ दिव्वाए दगधाराए० सरसेणं गोसीसचंदणेणं चच्चए दलयइ पुप्फारुहणं जाव आभरणारुहणं करेइ आसत्तोसत्त० कयगाहग्गहिय० धूवं दलयइ जेणेव दाहिणिल्लमुहमंडवस्स उत्तरिल्ला[96] खंभपंती तेणेव उवागच्छइ लोमहत्थं परामुसइ थंभे य सालभंजियाओ य वाल-

७८ लोमहस्तकं गृहीत्वा तेन ७९ द्वारशाखे ८० शालिभञ्जिकाः ८१ व्यालरूपाणि च ८२ प्रमार्जयति, तत ८४ उदकधारयाऽभ्युक्षणं ८५ गोशीर्षचन्दनचर्चा–८६पुष्पाद्यारोहणं ८७ धूपदानं करोति। ततो दक्षिणद्वारेण निर्गत्य ८८ दाक्षिणात्यस्य मुखमण्डपस्य ८९ बहुमध्यदेशभागे ९० लोमहस्तकेन प्रमार्ज्य ९१ उदक*धाराभ्युक्षणं ९२ चन्दनपञ्चाङ्गुलितलप्रदान९३पुष्पपुञ्जोपचार ९४धूपदानादि करोति, कृत्वा ९५ पश्चिमद्वारे समागत्य पूर्व○वत् द्वारार्चनिकां करोति कृत्वा च तस्यैव दाक्षिणात्यस्य मुखमण्डपस्य ९६उत्तरस्यां स्तम्भपङ्क्तौ समागत्य पूर्ववत् तदर्चनिकां विधत्ते, इह यस्यां दिशि सिद्धायतनादिद्वारं तत्रेतरस्य मुखमण्डपस्य स्तम्भपङ्क्तिः, ततस्तस्यैव

* –कधारासिञ्चनपुष्पपुञ्जो–भा० २। ○–वत् पूजा च विधाय–पा० ४–५।

रूवए य लोहमत्थएणं पमज्जइ जहा चेव पच्चत्थिमिल्लस्स दारस्स जाव धूवं दलयइ जेणेव दाहिणिल्लस्स मुहमंडवस्स पुरत्थिमिल्ले दारे तेणेव उवागच्छइ लोमहत्थगं परामुसति दारचेडीओ तं चेव सव्वं जेणेव दाहिणिल्लस्स मुहमंडवस्स दाहिणिल्ले दारे तेणेव उवागच्छइ दारचेडीओ य तं चेव सव्वं जेणेव दाहिणिल्ले पेच्छाघरमंडवे जेणेव दाहिणिल्लस्स पेच्छाघरमंडवस्स[99] बहुमज्झदेसभागे[100] जेणेव वइरामए अक्खाडए जेणेव मणिपेढिया जेणेव सीहासणे तेणेव उवागच्छइ लोमहत्थगं परामुसइ अक्खाडगं[101] च[102] मणिपेढियं च सीहासणं[103] च लोमहत्थएणं[104] पमज्जइ दिव्वाए दगधाराए[105] सरसेणं गोसीसचंदणेणं[106] चच्चए दलयइ, पुप्फारुहणं[107] आसत्तोसत्त–जाव धूवं[108] दलेइ जेणेव दाहिणिल्लस्स पेच्छाघरमंडवस्स[109] पच्चत्थिमिल्ले दारे उत्तरिल्ले दारे तं चेव जं चेव पुरत्थिमिल्ले दारे तं चेव, दाहिणे दारे तं चेव, जेणेव दाहिणिल्ले चेईयथूभे तेणेव उवागच्छइ थूभं[110] मणिपेढियं[111] च दिव्वाए[112] दगधाराए सरसेण गोसीसचंदणेण[113] चच्चए[114] दलेइ

दाक्षिणात्यस्य मुखमण्डपस्य ९७ पूर्वद्वारे समागत्य तत्पूजां करोति कृत्वा तस्य दाक्षिणात्यस्य मुखमण्डपस्य ९८ दक्षिणद्वारे समागत्य पूर्ववत् पूजां विधाय तेन द्वारेण विनिर्गत्य ९९ प्रेक्षागृहमण्डपस्य १०० बहुमध्यदेशभागे समागत्य १०१ अक्षपाटकं १०२ मणिपीठिकां १०३ सिंहासनं च १०४ लोमहस्तकेन प्रमार्ज्य १०५ उदकधारयाऽभ्युक्ष्य १०६ चन्दनचर्चा १०७ पुष्पपूजा १०८ धूपदानानि कृत्वा तस्यैव १०९ प्रेक्षागृहमण्डपस्य क्रमेण पश्चिमोत्तरपूर्वदक्षिणद्वाराणामर्चनिकां कृत्वा दक्षिणद्वारेण विनिर्गत्य ११० चैत्यस्तूपं १११ मणिपीठिकां च लोमहस्तकेन प्रमार्ज्य ११२ उदकधारयाऽभ्युक्ष्य सरसेन ११३ गोशीर्षचन्दनकेन ११४ पश्चाङ्-

[115] पुप्फारु० आसत्तो० जाव [116] धूवं दलेइ, जेणेव पच्चत्थिमिल्ला [117] मणिपेढिया [118] जेणेव पच्चत्थिमिल्ला जिणपडिमा तं चेव, जेणेव उत्तरिल्ला [119] जिणपडिमा तं चेव सव्वं, जेणेव पुरत्थिमिल्ला मणिपेढिया जेणेव पुरत्थिमिल्ला जिणपडिमा तेणेव उवागच्छइ तं चेव, दाहिणिल्ला मणिपेढिया दाहिणिल्ला जिणपडिमा तं चेव, जेणेव दाहिणिल्ले [120] चेइयरु[121]क्खे तेणेव उवागच्छइ तं चेव, जेणेव महिंदज्झए [122] जेणेव दाहिणिल्ला [123] नंदापुक्खरिणी [124] तेणेव उवागच्छति [125] लोमहत्थगं परामुसति तोरणे य तिसोवाणपडिरूवए [126] सालभंजियाओ य वालरूवए य लोमहत्थएणं [127] पमज्जइ दिव्वाए [128] दगधाराए सरसेणं गोसीसचंदणेणं [129] पुप्फारुहणं [130] आसत्तोसत्त० धूवं [131] दलयति,

लितलं दत्त्वा ११५ पुष्पाद्यारोहणं च विधाय ११६ धूपं ददाति, ततो यत्र ११७ पाश्चात्या ११८ मणिपीठिका तत्रागच्छति, तत्रागत्य आलोके प्रणामं करोति, कृत्वा लोमहस्तकेन प्रमार्जनं सुरभिगन्धोदकेन स्नानं सरसेन गोशीर्षचन्दनेन गात्रानुलेपनं देवदूष्ययुगलपरिधानं पुष्पाद्यारोहणं पुरतः पुष्प-पुञ्जोपचारं धूपदानं पुरतो दिव्यतन्दुलैरष्टमङ्गलकालेखनमष्टोत्तरशतवृत्तैः स्तुतिं प्रणिपातदण्डकपाठं च कृत्वा वन्दते नमस्यति, तत एवमेव क्रमेण ११९ उत्तरपूर्वदक्षिणप्रतिमानामप्यर्चनिकां कृत्वा दक्षिणद्वारेण विनिर्गत्य १२० दक्षिणस्यां दिशि यत्र १२१ चैत्यवृक्षः तत्र समागत्य चैत्यवृक्षस्य द्वारवदर्चनिकां करोति, ततो १२२ महेन्द्रध्वजस्य ततो यत्र १२३ दाक्षिणात्या १२४ नन्दा पुष्करिणी तत्र १२५ समागच्छति, समागत्य १२६ तोरणत्रिसोपानप्रतिरूपकगतशालभञ्जिका-व्यालकरूपाणां १२७ लोमहस्तकेन प्रमार्जनं १२८ जलधारयाऽभ्युक्षणं १२९ चन्दनचर्चा १३० पुष्पाद्यारोहणं १३१ धूपदानं

१ –प्पपूजोप–भा० १ ।

सिद्धायतणं[132] अणुपयाहिणीकरेमाणे[133] जेणेव उत्तरिल्ला[134] णंदापुक्खरिणी तेणेव उवागच्छति तं चेवं[135], जेणेव उत्तरिल्ले[136] चेइयरुक्खे तेणेव उवागच्छति, जेणेव उत्तरिल्ले चेइयथूभे[137] तहेव, जेणेव पच्चत्थिमिल्ला[138] पेढिया जेणेव पच्चत्थिमिल्ला जिणपडिमा तं चेव, उत्तरिल्ले[139] पेच्छाघरमंडवे तेणेव उवागच्छति आ चेव दाहिणिल्ल[140]वत्तव्वया सा चेव सव्वा पुरत्थिमिल्ले दारे, दाहिणिल्ला[141] खंभपंती तं चेव सव्वं, जेणेव उत्तरिल्ले मुहमंडवे[142] जेणेव उत्तरिल्लस्स मुहमंडवस्स बहुमज्झदेसभाए तं चेव सव्वं, पच्चत्थिमिल्ले[143] दारे तेणेव० उत्तरिल्ले दारे दाहिणिल्ला[144] खंभपंती सेसं तं चेव सव्वं, जेणेव सिद्धायतणस्स[145] उत्तरिल्ले दारे तं चेवं[146], जेणेव सिद्धायतणस्स पुरत्थिमिल्ले[147] दारे तेणेव उवागच्छइ तं चेवं[148], जेणेव पुरत्थिमिल्ले मुहमंडवे जेणेव पुरत्थिमिल्लस्स मुहमंडवस्स बहुमज्झदेसभाए तेणेव उवागच्छइ तं चेव, पुरत्थिमिल्लस्स[149] मुहमंडवस्स दाहिणिल्ले[150] दारे पच्चत्थिमिल्ला[151] खंभपंती उत्तरिल्ले[152] दारे तं चेव

च कृत्वा १३२ सिद्धायतनम् १३३ अनुप्रदक्षिणीकृत्य १३४ उत्तरस्यां नन्दापुष्करिण्यां समागत्य १३५ पूर्ववत् तस्या अर्चनिकां करोति, तत उत्तराहे महेन्द्रध्वजे तदनन्तरमुत्तराहे १३६ चैत्यवृक्षे तत उत्तराहे १३७ चैत्यस्तूपे ततः १३८ पश्चिमोत्तरपूर्वदक्षिणजिनप्रतिमानां पूर्ववत् पूजां विधाय १३९ उत्तराहे प्रेक्षागृहमण्डपे समागच्छति, तत्र १४० दाक्षिणात्यप्रेक्षागृहमण्डपवत् सर्वा वक्तव्यता वक्तव्या, ततो १४१ दक्षिणस्तम्भपङ्क्त्या विनिर्गत्योत्तराहे १४२ मुखमण्डपे समागच्छति, तत्रापि दाक्षिणात्यमुखमण्डपवत् सर्वं १४३ पश्चिमोत्तरपूर्वद्वार-क्रमेण कृत्वा १४४ दक्षिणस्तम्भपङ्क्त्या विनिर्गत्य १४५ सिद्धायतनस्योत्तरद्वारे समागत्य १४६ पूर्ववदर्चनिकां कृत्वा १४७ पूर्वद्वारेण समागच्छति, तत्रार्चनिकां १४८ पूर्ववत् कृत्वा पूर्वस्य १४९ मुखमण्डपस्य १५० दक्षिणद्वारे १५१ पश्चिमस्तम्भपङ्क्त्या १५२ उत्तरपूर्वद्वारेषु

॥२६४॥

पुरत्थिमिल्ले दारे तं चेव[153], जेणेव पुरत्थिमिल्ले [154]पेच्छाघरमंडवे, एवं [155]थूभे जिणपडिमाओ[156] चेइयरुक्खा[157] महिंद-[158]ज्झया [159]णंदा पुक्खरिणी तं चेव जाव धूवं दलइ जेणेव सभा सुहम्मा तेणेव उवागच्छति [160]सभं सुहम्मं [161]पुरत्थिमिल्लेणं दारेणं [162]अणुपविसइ जेणेव [163]माणवए चेइयखंभे जेणेव [164]वइरामए [165]गोलवट्टसमुग्गे तेणेव उवागच्छइ उवागच्छइत्ता [166]लोमहत्थगं परामुसइ वइरामए गोलवट्टसमुग्गए लोमहत्थेणं पमज्जइ वइरामए गोलवट्टसमुग्गए [167]विहाडेइ जिणसगहाओ लोमहत्थेणं पमज्जइ सुरभिणा [168]गंधोदएणं पक्खालेइ पक्खालित्ता [169]अग्गेहिं वरेहिं गंधेहि य मल्लेहि य अच्चेइ [170]धूवं दलयइ *जिणसकहाओ [171]वइरामएसु गोलवट्टसमुग्गएसु [172]पडिनिक्खिवइ [173]माणवगं चेइयखंभं

१५३ क्रमेणोक्तरूपां पूजां विधाय पूर्वद्वारेण विनिर्गत्य÷ १५४ पूर्वप्रेक्षागृहमण्डपे समागत्य पूर्ववत् द्वारमध्यभागदक्षिणद्वारपश्चिमस्तम्भपङ्क्त्या उत्तरपूर्वद्वारेषु पूर्ववदर्चनिकां करोति, ततः पूर्वप्रकारेणैव क्रमेण १५५ चैत्यस्तूप१५६जिनप्रतिमा१५७चैत्यवृक्ष१५८महेन्द्रध्वज१५९नन्दापुष्करिणीनाम्, ततः १६०सभायां सुधर्मायां १६१पूर्वद्वारेण १६२प्रविशति, प्रविश्य यत्रैव मणिपीठिका तत्राऽऽगच्छति, आलोके च जिनप्रतिमानां प्रणामं करोति, कृत्वा यत्र १६३ माणवकचैत्यस्तम्भो यत्र १६४ वज्रमयाः १६५गोलवृत्ताः समुद्गकाः तत्रागत्य समुद्गकान् गृह्णाति, गृहीत्वा १६७ विघाटयति विघाट्य च १६६ लोमहस्तकं परामृश्य तेन प्रमार्ज्य १६८ उदकधारया अभ्युक्ष्य गोशीर्षचन्दनेनानुलिम्पति, ततः १६९ प्रधानैर्गन्धमाल्यैरर्चयति १७०धूपं दहति, तदनन्तरं भूयोऽपि १७१ वज्रमयेषु गोलवृत्तसमुद्गेषु १७२ प्रतिनिक्षिपति, प्रतिनिक्षि०प्य तेषु पुष्पगन्धमाल्यवस्त्राभरणानि चारोपयति, ततो लोमहस्तकेन १७३ माणवक-

* विवरणे नैतत् पद विवृतं प्रतिभाति। ÷ -त्य पूर्ववत् मध्यभागद-पा० ४-५। ० -प्य तान् वज्रमयान् गोलवृत्तसमुद्गकान् स्वस्थाने

रायपसेण-
इयं।

लोमहत्थएणं पमज्जइ दिव्वाए दगधाराए सरसेणं गोसीसचंदणेणं चच्चए दलयइ, पुप्फारुहणं जाव [174]धूवं दलयइ, जेणेव सीहासणे[175] तं चेव[176], जेणेव देवसयणिज्जे[177] तं चेव[178], जेणेव खुड्डागमहिंदज्झए[179] तं चेवं[180], जेणेव पहरणकोसे चोप्पालए[181] तेणेव उवागच्छइ लोमहत्थगं परामुसइ पहरणकोसं[182] चोप्पालं लोमहत्थएणं[183] पमज्जइ[184] दिव्वाए दगधाराए[185] सरसेणं[186] गोसीसचंदणेणं दलेइ पुप्फारुहणं[187] आसत्तोसत्त० [पृ० २५५ पं० २] धूवं[188] दलयइ, जेणेव सभाए[189] सुहम्माए बहुमज्झदेसभाए[190] जेणेव मणिपेढिया जेणेव देवसयणिज्जे तेणेव उवागच्छइ लोमहत्थगं परामुसइ देवसयणिज्जं च मणिपेढियं च लोमहत्थएणं पमज्जइ जाव धूवं दलयइ[191] जेणेव

चैत्यस्तम्भं प्रमार्ज्य उदकधारयाऽभ्युक्षणचन्दनचर्चापुष्पाद्यारोपणं १७४ धूपदानं च करोति, कृत्वा च १७५ सिंहासनप्रदेशमागत्य मणिपीठिकायाः सिंहासनस्य च १७६ लोमहस्तकेन प्रमार्जनादिरूपां पूर्ववदर्चनिकां करोति, कृत्वा यत्र मणिपीठिका यत्र च १७७ देवशयनीयं तत्रोपागत्य मणिपीठिकाया देवशयनीयस्य च १७८ द्वारवदर्चनिकां करोति, तत उक्तप्रकारेणैव १७९ ○क्षुल्लकेन्द्रध्वजे १८० पूजां करोति, ततो यत्र १८१ चोप्पालको नाम प्रहरणकोशस्तत्र समागत्य १८३ लोमहस्तकेन १८२ परिघरत्नप्रमुखाणि प्रहरणरत्नानि १८४ प्रमार्जयति प्रमार्ज्य १८५ उदकधारयाऽभ्युक्षणं १८६ चन्दनचर्चाम् १८७ पुष्पाद्यारोपणं १८८ धूपदानं च करोति, ततः १८९ सभायाः सुधर्माया १९० बहुमध्यदेशभागेऽर्चनिकां १९१ पूर्ववत् करोति, कृत्वा सुधर्मायाः सभाया दक्षिणद्वारे समागत्य तस्य अर्चनिकां पूर्ववत् कुरुते, ततो दक्षिणद्वारेण विनिर्गच्छति, इत ऊर्ध्वं यथैव सिद्धायतनान्निष्क्रामतो दक्षिणद्वारादिका

प्रतिनिक्षिप्य–भा० २ । ○ मूल सूत्रे 'खुड्डागमहिंदज्झए' इति पाठः ।

उववायसभाए[192] [193]दाहिणिल्ले दारे तहेव अभिसेयसभासरिसं जाव पुरत्थिमिल्ला[194] णंदा पुक्खरिणी जेणेव हरए[195] तेणेव उवागच्छइ तोरणे[196] य तिसोवाणे य सालभंजियाओ य वालरूवए य तहेव, जेणेव अभिसेयसभा[197] तेणेव उवागच्छइ तहेव सीहासणं[198] च मणिपेढियं च सेसं तहेव [199]आययणसरिसं जाव [200]पुरत्थिमिल्ला णंदा पुक्खरिणी जेणेव अलंकारियसभा[201] तेणेव उवागच्छइ जहा अभिसेयसभा तहेव सव्वं, जेणेव ववसायसभा[202] तेणेव उवा-

दक्षिणनन्दापुष्करिणीपर्यवसाना पुनरपि प्रविशतः उत्तरनन्दापुष्करिण्यादिका उत्तरद्वारान्ता ततो द्वितीयद्वारान्निष्क्रामतः पूर्वद्वारादिका पूर्वनन्दापुष्करिणीपर्यवसाना अर्चनिकावक्तव्यता सैव सुधर्मायां सभायामप्यन्यूनातिरिक्ता वक्तव्या, ततः पूर्वनन्दापुष्करिण्या अर्चनिकां कृत्वा १९२ उपपातसभां पूर्वद्वारेण प्रविशति, प्रविश्य च मणिपीठिकाया देवशयनीयस्य तदनन्तरं बहुमध्यदेशभागे प्राग्वदर्चनिकां विदधाति, ततो १९३ दक्षिणद्वारे समागत्य तस्यार्चनिकां कुरुते, अत ऊर्ध्वमत्रापि सिद्धायतनवत् दक्षिणद्वारादिका १९४ पूर्वनन्दापुष्करिणीपर्यवसानाऽर्चनिका वक्तव्या, ततः पूर्वनन्दापुष्करि-णीतोऽपक्रम्य १९५ ह्रदे समागत्य पूर्ववत् १९६ तोरणार्चनिकां करोति, कृत्वा १९७ पूर्वद्वारेणाभिषेकसभां प्रविशति, प्रविश्य मणिपीठिकायाः १९८ सिंहासनस्याभिषेकभाण्डस्य बहुमध्यदेशभागस्य च क्रमेण पूर्ववदर्चनिकां करोति,ततोऽत्रापि १९९ सिद्धायतनवत् दक्षिणद्वारादिका २०० पूर्वनन्दापुष्करिणीपर्यवसाना अर्चनिका वक्तव्या ततः पूर्वनन्दापुष्करिणीतः २०१ पूर्वद्वारेणालङ्कारिकसभां प्रविशति, प्रविश्य मणिपीठिकायाः सिंहासनस्य अलंकारभाण्डस्य बहुमध्यदेशभागस्य च क्रमेण पूर्ववदर्चनिकां करोति, तत्रापि क्रमेण सिद्धायतनवत् दक्षिणद्वारादिका पूर्वनन्दापुष्करिणीपर्यवसाना अर्चनिका

– णीतः पूर्वद्वारेण अलकारिकसभां प्र–पा० ४–५।

सूर्याभः स्वविमानस्थानां शालभञ्जिकादीनामर्चनिकां कारयति

गच्छइ तहेव लोमहत्थयं परामुसति पोत्थयरयणं[२०३] लोमहत्थएणं[२०४] पमज्जइ पमज्जित्ता दिव्वाए[२०५] दगधाराए अग्गेहिं [२०६]वरेहि य गंधेहिं मल्लेहि य अचेति [२०७]मणिपेढियं सीहासणं[२०८] च सेसं तं चेवं[२०९] पुरत्थिमिल्ला[२१०] नंदा पुक्खरिणी जेणेव हरए तेणेव उवागच्छइ तोरणे य तिसोवाणे य सालभंजियाओ य वालरूवए य तहेव। जेणेव [२११]बलिपीढं तेणेव उवागच्छइ बलिविसज्जणं[२१२] करेइ, [२१३]आभिओगिए देवे सद्दावेइ सद्दावित्ता [२१४]एवं वयासी–खिप्पामेव[२१५] भो देवाणुप्पिया सूरियाभे विमाणे सिंघाडएसु[२१६] तिएसु[२१७] चउक्केसु[२१८] चच्चरेसु[२१९] चउम्मुहेसु[२२०] महापहेसु[२२१] पागारेसु[२२२] अट्टालएसु[२२३]

वक्तव्या, ततः पूर्वनन्दापुष्करिणीतः पूर्वद्वारेण २०२ व्यवसायसभां प्रविशति, प्रविश्य २०३ पुस्तकरत्नं २०४ लोमहस्तकेन प्रमृज्य २०५ उदकधारया अभ्युक्ष्य चन्दनेन चर्चयित्वा २०६ वरगन्धमाल्यैरर्चयित्वा पुष्पाद्यारोपणं धूपदानं च करोति, तदनन्तरं २०७ मणिपीठिकायाः २०८ सिंहासनस्य बहुमध्यदेशभागस्य च क्रमेण २०९ पूर्ववदर्चनिकां करोति, तदनन्तरमत्रापि सिद्धायतनवत् दक्षिणद्वारादिका २१० पूर्वनन्दापुष्करिणीपर्यवसाना अर्चनिका वक्तव्या, ततः पूर्वनन्दापुष्करिणीतो २११ बलिपीठे समागत्य तस्य बहुमध्यदेशभागवत् अर्चनिकां करोति, कृत्वा च २१३ आभियोगिकदेवान् शब्दापयति, शब्दापयित्वा २१४ एवमवादीत्–२१५ 'खिप्पामेव' इत्यादि सुगमं यावत् २३५ 'तमाणत्तियं पच्चप्पिणंति'। तत्र २१६ शृङ्गाटकः–शृङ्गाटकाऽऽकृतिपथयुक्तं त्रिकोणं स्थानम् २१७ त्रिकं–यत्र रथ्यात्रयं मिलति, २१८ चतुष्कं–चतुष्पथयुक्तं, २१९ चत्वरं–बहुरथ्यापातस्थानं, २२० चतुर्मुखं–यस्माच्चतसृष्वपि दिक्षु पन्थानो निस्सरन्ति, २२१ महापथः–राजपथः शेषः सामान्यः पन्थाः २२२ प्राकारः प्रतीतः, २२३ अट्टालकाः–प्राकारस्योपरि

चरियासु[२२४] दारेसु[२२५] गोपुरेसु[२२६] तोरणेसु[२२७] आरामेसु[२२८] उज्जाणेसु[२२९] वणेसु[२३०] वणराईसु[२३१] काणणेसु[२३२] वणसंडेसु[२३३] अच्चणियं करेह अच्चणियं करेत्ता एवमाणत्तियं खिप्पामेव[२३४] पच्चप्पिणह, तए णं ते आभिओगिया देवा सूरियाभेणं देवेणं एवं वुत्ता समाणा जाव पडिसुणित्ता सूरियाभे विमाणे सिंघाडएसु तिएसु चउक्कएसु चच्चरेसु चउम्मुहेसु महापहेसु पागारेसु अट्टालएसु चरियासु दारेसु गोपुरेसु तोरणेसु आरामेसु उज्जाणेसु वणेसु वणरातीसु काणणेसु वणसंडेसु अच्चणियं करेन्ति जेणेव सूरियाभे देवे जाव पच्चप्पिणंति[२३५], तते[२३६] णं से सूरियाभे देवे जेणेव नंदा पुक्खरिणी[२३७] तेणेव उवागच्छइ नंदापुक्खरिणिं पुरत्थिमिल्लेणं[२३८] तिसोमाणपडिरूवएणं पच्चोरुहति हत्थपाए[२३९] पक्खालेइ णंदाओ पुक्खरिणीओ पच्चुत्तरेइ[२४०] जेणेव सभा सुधम्मा तेणेव पहारित्थ गमणाए। तए णं से सूरियाभे देवे चउहिं सामाणियसाहस्सीहिं जाव [पृ० ४४ पं० २] सोलसहिं आयरक्खदेवसाहस्सीहिं अन्नेहि य बहूहिं

भृत्याश्रयविशेषाः, २२४ चरिका–अष्टहस्तप्रमाणो नगरप्राकारान्तरालमार्गः २२५ द्वाराणि–प्रासादादीनां २२६ गोपुराणि–प्राकारद्वार णि २२७ तोरणानि–द्वारादिसम्बन्धीनि २२८ आरमन्ते यत्र माधवीलतागृहादिषु दम्पत्यादीनि–इत्यसावारामः, २२९ पुष्पादिमयवृक्षसंकुलमुत्सवादौ वहुजनोपभोग्यमुद्यानं, २३२ सामान्यवृक्षवृन्दनगरासन्नं काननं, २३० नगरविप्रकृष्टं वनम्, २३३ एकाऽनेकजातीयोत्तमवृक्षसमूहो वनखण्डः, २३१ एकजातीयोत्तमवृक्षसमूहो वनराजी, २३६ ततः सूर्याभदेवो वलिपीठे २१२ बलिविसर्जनं करोति, कृत्वा चोत्तरपूर्वां २३७ नन्दापुष्करिणीमनुप्रदक्षिणीकुर्वन् २३८ पूर्वतोरणेनानुप्रविशति, अनुप्रविश्य च २३९ हस्तौ पादौ प्रक्षालयति प्रक्षाल्य नन्दापुष्करिण्याः २४० प्रत्यवतीर्य सामानिकादिपरिवारसहितः सर्वर्द्ध्या यावद् दुन्दुभिनिर्घोषनादितरवेण सूर्याभविमाने मध्यं-

सूरियाभविमाणवासीहिं वेमाणिएहिं देवेहिं देवीहि य सद्धिं संपरिवुडे सव्विड्ढीए जाव-नाइयरवेणं [पृ० ६९ पं० २] जेणेव सभा सुहम्मा[२४१] तेणेव उवागच्छइ सभं सुधम्मं पुरत्थिमिल्लेणं[२४२] दारेणं अणुपविसति अणुपविसित्ता जेणेव सीहासणे[२४३] तेणेव उवागच्छइ सीहासणवरगए पुरत्थाभिमुहे[२४४] सण्णिसण्णे[२४५]।

[१४०] तए णं तस्स सूरियाभस्स देवस्स अवरुत्तरेणं उत्तरपुरत्थिमेणं दिसिभाएणं चत्तारि य सामाणिय[१]-साहस्सीओ चउसु भद्दासणसाहस्सीसु निसीयंति, तए णं तस्स सूरियाभस्स देवस्स पुरत्थिमिल्लेणं चत्तारि अ-ग्गमहिसीओ चउसु भद्दासणेसु निसीयंति, तए णं तस्स सूरियाभस्स देवस्स दाहिणपुरत्थिमेणं अब्भिंतरियपरिसाए अट्ठ देवसाहस्सीओ अट्ठसु भद्दासणसाहस्सीसु निसीयंति, तए णं तस्स सूरियाभस्स देवस्स दाहिणेणं मज्झिमाए परिसाए दस देवसाहस्सीओ दससु भद्दासणसाहस्सीसु निसीयंति, तए णं तस्स सूरियाभस्स देवस्स दाहिणपच्चत्थिमेणं बाहिरियाए परिसाए बारस देवसाहस्सीतो बारससु भद्दासणसाहस्सीसु निसीयंति, तए णं तस्स सूरियाभस्स देवस्स पच्चत्थिमेणं सत्त अणियाहिवइणो सत्तहिं भद्दासणेहिं णिसीयंति, तए णं तस्स सूरियाभस्स देवस्स चउद्दिसिं सोलस आयरक्खदेवसाहस्सीओ सोलसहिं भद्दासणसाहस्सीहिं णिसीयंति, तंजहा–

मध्येन समागच्छन् २४१ यत्र सुधर्मा सभा तत्रागत्य तां २४२ पूर्वद्वारेण प्रविशति, प्रविश्य मणिपीठिकाया उपरि २४३ सिंहासने २४४ पूर्वाभिमुखो २४५ निषीदति

[१४०] ततः [पृ० १०२ पं० ३] प्रागुपदर्शितसिंहासनक्रमेण १ सामानिकादय उपविशन्ति,

॥२७०॥ पुरत्थिमिल्लेणं चत्तारि साहस्सीओ, ते[2] णं आयरक्खा सन्नद्ध[3]बद्धवम्मियकवया उप्पी[4]लियसरासणपट्टिया पिण[5]द्धगेविज्जा आविद्ध[6]विमलवरचिंधपट्टा गहिया[7]उहपहरणा तिणयाणि[8] तिसंधियाइं[9] वयरामय[10]कोडीणि धणूइं[11] पगि[12]ज्झ पडियाइयकंडकलावा[13] णील[14]पाणिणो पीत[15]पाणिणो रत्त[16]पाणिणो चाव[17]पाणिणो चारु[18]पाणिणो चम्म[19]पाणिणो दंड[20]पाणिणो खग्ग[21]पाणिणो पास[22]पाणिणो नील[23]पीयरत्तचावचारुचम्मदंडखग्गपासधरा आयरक्खा[24] रक्खोवगा[25] गुत्ता[26] गुत्त[27]पालिया जुत्ता[28] जुत्त[29]पालिया पत्तेयं पत्तेयं समय[30]ओ विणय[31]ओ किंकर[32]भूया चिट्ठन्ति[33]।

२ते आत्मरक्षाः ३सन्नद्धबद्धवर्मितकवचा ४उत्पीडितशरासनपट्टिकाः ५पिनद्धग्रैवेयाः–पिनद्धग्रैवेयकाभरणाः ६आविद्धविमलवरचिह्नपट्टा ७ गृहीताऽऽयुधप्रहरणाः ८त्रिनतानि आदिमध्यावसानेषु नमनभावात् ९ त्रिसन्धीनि आदिमध्यावसानेषु संधिभावात् १० वज्रमयकोटीनि ११ धनूंपि १२ अभिगृह्य १३ पर्यात्तकाण्डकलापा विचित्रकाण्डकलापयोगात्, केऽपि १४ नीलः 'काण्डकलापः' इति गम्यते पाणौ येषां ते नीलपाणयः, एवं १५ पीतपाणयः १६ रक्तपाणयः १७ चापं पाणौ येषां ते चापपाणयः १८ चारुः–प्रहरणविशेषः पाणौ येषां ते चारुपाणयः १९ चर्म अङ्गुष्ठाङ्गुल्योराच्छादनरूपं येषां ते चर्मपाणयः, एवं २० दण्डपाणयः २१ खड्गपाणयः २२ पाशपाणयः, एतदेव व्याचष्टे–यथायोगं २३ नील–पीत–रक्त–चाप–चारु–चर्म–दण्ड–खड्ग–पाश–धरा २४ आत्मरक्षाः २५ रक्षामुपगच्छन्ति तदेकचित्ततया तत्परायणा वर्त्तन्ते इति रक्षोपगाः २६ गुप्ता न स्वामिभेदकारिणः, तथा २७गुप्ता–परामवेश्या पालिः–सेतुर्येषां ते गुप्तपालिकाः, तथा २८ युक्ताः–सेवकगुणोपेततया उचितास्तथा २९ युक्ताः–परस्परसंबद्धा नतु बृहदन्तरा पालिर्येषां ते युक्तपालिकाः, ३० समयतः–आचारतः–आचारेणेत्यर्थः ३१ विनयतश्च ३२ किंकरभूता इव ३३ तिष्ठन्ति, न खलु ते किंकराः, किन्तु तेऽपि

रायपसेण-
इयं।

प्र०-सूरियाभस्स णं भंते! देवस्स केवइयं कालं ठिती पण्णत्ता?

उ०-गोयमा! चत्तारि पलिओवमाइं ठिती पण्णत्ता।

प्र०-सूरियाभस्स णं भंते! देवस्स सामाणियपरिसोववण्णगाणं देवाणं केवइयं कालं ठिती पण्णत्ता?

उ०-गोयमा! चत्तारि पलिओवमाइं ठिती पण्णत्ता, महिड्ढीए महज्जुत्तीए महब्बले महायसे महासोक्खे महाणुभागे सूरियाभे देवे, अहो णं भंते! सूरियाभे देवे महिड्ढीए जाव महाणुभागे।

[१४१] प्र०-सूरियाभेणं भंते! देवेणं सा दिव्वा देविड्ढी सा दिव्वा देवज्जुई से दिव्वे देवाणुभागे किण्णा लद्धे किण्णा पत्ते किण्णा अभिसमन्नागए? पुव्वभवे के आसी? किंनामए वा? को वा गुत्तेणं? कयरंसि वा गामंसि[1] वा नगरंसि वा निगमंसि[3] वा रायहाणीए[4] वा खेडंसि[5] वा कब्बडंसि[6] वा मडंबंसि[7] वा पट्टणंसि[8] वा

सूर्याभः पुरा क आसीत्? स्वर्गे च तस्य कियती स्थितिः? इत्यादि प्रश्नोत्तराणि

मान्याः, तेषामपि पृथगासननिपातनात्, केवलं ते तदानीं निजाचारपरिपालनतो विनीतत्वेन च तथाभूता इव तिष्ठन्ति, तत उक्तं किंकरभूता इवेति, तेहिं * चउहिं सामाणियसाहस्सीहिं, इत्यादि सुगमं, यावत् 'दिव्वाइं भोगभोगाइं भुंजमाणे विहरति' इति ॥२७१॥

[१४१] १ग्रसते बुद्ध्यादीन् गुणान् यदि वा गम्यः शास्त्रप्रसिद्धानामष्टादशानां कराणामिति ग्रामस्तस्मिन्, २न विद्यते करो यस्मिन् तन्नगरं तस्मिन्, ३ निगमः-प्रभूततरवणिग्वर्गावासः ४ राजाधिष्ठानं नगरं राजधानी ५ प्रांशुप्राकारनिबद्धं खेटम् ६ क्षुल्लकप्राकारवेष्टितं कर्बटम् ७ अर्धगव्यूततृतीयान्तर्ग्रामान्तररहितं मडम्बम् ८ पट्टनं-जलस्थलनिर्गमप्रवेशः, उक्तं चः-"पट्टनं शकटैर्गम्यं, घोटकै-

* अस्य विवरणस्य मूलपाठो न दृश्यते।

रायपसेण-इयं।

दोणमुहंसि वा [10]आगरंसि वा [11]आसमंसि वा [12]संबाहंसि वा [13]सन्निवेसंसि वा? किं वा द[14]च्चा किं वा [15]भोच्चा किं वा कि[16]च्चा किं वा स[17]मायरित्ता कस्स वा तहारूवस्स समणस्स वा माहणस्स वा अंतिए एगमवि आरियं धम्मयं सुवयणं सुच्चा निसम्म जं णं सूरियाभेणं देवेणं सा दिव्वा देविड्ढी जाव देवाणुभागे लद्धे पत्ते अभिसमन्नागए?

॥२७२॥ उ०-'गोयमा!'त्ति[८] समणे भगवं महावीरे भगवं गोयमं आमंतेत्ता एवं वयासी-

सूरियाभो समत्तो

नौभिरेव च। नौभिरेव तु यद् गम्यं, पत्तनं तत् प्रचक्षते"। [ ] ९ द्रोणमुखं-जलनिर्गमप्रवेशम्-पत्तनमित्यर्थः, १० आकरो-हिरण्याकरादिः ११आश्रमः-तापसावसथोपलक्षित आश्रयविशेषः १२संबाधो-यात्रासमागतप्रभूतजननिवेशः १३सन्निवेशः तथाविधप्राकृतलोकनिवासः, १४ दत्त्वा अशनादि, १५भुक्त्वा अन्तप्रान्तादि, १६कृत्वा तपः-शुभध्यानादि, १७समाचर्य प्रत्युप्रेक्षाप्रमार्जनादि।

८ पृ० ५९ टिप्पण ×।

पएसिकहा

[१४२] एवं खलु गोयमा! तेणं कालेणं तेणं समएणं इहेव जंबुद्दीवे दीवे भारहे वासे केयइअद्धे[1] नामे जणवए होत्था, रिद्धत्थिमियसमिद्धे सव्वोउय[2]फलसमिद्धे रम्मे[3] नंदणवण[4]प्पगासे पासाईए [पृ० ९ पं० ४] जाव पडिरूवे।

[१४२] १ ○केकया नाम अर्द्धम्–अर्धमात्रमार्यत्वेनेति गम्यते, स हि परिपूर्णो जनपदः, केवलमर्द्धमार्यम् अर्द्धं चानार्यम् आर्येण चेह प्रयोजनमिति 'अर्धम्' इत्युक्तम् जनपद आसीत्, सर्वर्तुकैः–२ सर्वर्तुभाविभिः पुष्पैः फलैश्च समृद्धिमत्, एवं ३ रम्यम्–रमणीयं ४ नन्दनवनप्रकाशम्–नन्दनवनप्रतिमं शुभसुरभिशीतलया छायया सर्वतः समनुबद्धं 'पासाईए' इत्यादि पदचतुष्टयं पूर्ववत्

○ किकया नाम–भा० १।

सेयविया नगरी पएसी राया

तत्थ णं केइयअद्धे जणवए सेयविया णामं नगरी होत्था, रिद्धत्थिमियसमिद्धा जाव [पृ० ३ पं० १–] पडिरूवा। तीसे णं सेयवियाए नगरीए बहिया उत्तरपुरत्थिमे दिसीभागे एत्थ णं मिगवणे णाम उज्जाणे होत्था–रम्मे नंदणवणप्पगासे सव्वोउयफलसमिद्धे सुभसुरभिसीयलाए छायाए सव्वओ चेव समणुबद्धे पासादीए जाव [पृ० ९ पं० ४] पडिरूवे। तत्थ णं सेयवियाए णगरीए पएसी णामं राया होत्था, महया[5]हिमवंत [पृ० २३ पं० ३–] जाव विहरइ। अधम्मिए[6] अधम्मिट्ठे[7] अधम्मक्खाई[8] अधम्माणुए[9] अधम्मपलोई[10] अधम्मपजणणे[11] अधम्मसीलसमुयायारे[12]–अधम्मेण[13] चेव वित्तिं कप्पेमाणे 'हण'[14]–'छिंद'[15]–'भिंद'[16]–पवत्तए[17] लोहियपाणी[18] पावे[19] चंडे[20] रुद्दे[21] खुद्दे

[पृ० ११ पं० १२] ५ 'महया हिमवंत'–इत्यादि राजवर्णनं प्राग्वत् [पृ० २३ पं० ३–] ६ धर्मेण चरति धार्मिको न धार्मिकः अधार्मिकः, ७ सामान्यतोऽप्यधार्मिकः स्यात् अत आह–अधर्मिष्ठः–अतिशयेन–अधर्मवान् अत एव ८ अधर्मेण ख्यातिर्यस्यासावधर्मख्यातिः ९ अधर्ममनुगच्छति अधर्मानुगः तथा १० अधर्ममेव प्रलोकते–परिभावयतीत्येवंशीलोऽधर्मप्रलोकी ११ अधर्मं प्रकर्षेण जनयति–उत्पादयति लोकानामपीत्यधर्मप्रजननः १२ अधर्मशीलसमुदाचारो–न धर्मात् किमपि भवति तस्यैवाभावादित्येवम्–१३ अधर्मेणैव वृत्तिम्–सर्वजन्तूनाम्–यापनां कल्पयन् १४ 'जहि' १५ 'छिन्द्धि' १६ 'भिन्द्धि' इत्येवं १७ प्रवर्त्तकः अत एव १८ लोहितपाणिः–मारयित्वा हस्तयोरप्यप्रक्षालनात् अत एव १९पापः पापकर्मकारित्वात् २०चण्डः तीव्रकोपावेशात् २१रौद्रो +निस्तृंशकर्मकारि-

+ 'क्रूरे नृशस-निस्त्रिंश-पापा.''–[हैम अभि० कां० ३ श्लो० ४०] इति वचनात् 'निस्त्रिंश' इति उचितम्।

[22]साहस्सीए [23]उक्कंचण-[24]वंचण-[25]माया-[26]नियडि-[27]कूड-[28]कवड-[29]साइसंपओग[30]बहुले [31]निस्सीले [32]निव्वए [33]निग्गुणे [34]निम्मेरे [35]निप्पच्चक्खाणपोसहोववासे [36]बहूणं [37]दुप्पयचउप्पयमियपसुपक्खीसिरिसवाण [38]घायाए [39]वहाए [40]उच्छायणयाए [41]अधम्मकेऊ [42]समुट्ठिए, [43]गुरूणं णो

त्वात् २२ साहसिकः परलोकभयाभावात् २३ ऊर्ध्वं कञ्चनमुत्कञ्चनं-हीनगुणस्य गुणोत्कर्षप्रतिपादनम् २४ वञ्चनं-प्रतारणं २५ माया परवञ्चनबुद्धिः २६निकृतिः-बकवृत्त्या गलकर्त्तकानामिवावस्थानम् २७ कूटम्-अनेकेषां मृगादीनां ग्रहणाय नानाविधप्रयोगकरणम् २८ कपटं-नेपथ्य-भाषाविपर्ययकरणम् एभिः उत्कञ्चनादिभिः २९सहातिशयेन यः संप्रयोगो योगस्तेन बहुलः, अथवा २९सातिसंप्रयोगो नाम यः सातिशयेन द्रव्येण कस्तूरिकादिना अपरस्य संप्रयोगः-उक्तं च सूत्रकृताङ्गचूर्णिकृता-"सो होइ साइजोगो दव्वं जं छुहिय अन्नदव्वेसुं। दोसगुणा वयणेसु य अत्थविसंवायणं कुणइ"। [सूत्रकृ० द्वितीयश्रु० द्वितीयाध्य० सू० ३५ टीका] इति तत्संप्रयोगे ३० बहुलः, अपरे व्याख्यानयन्ति-२३"उत्कञ्चनं नाम उत्कोचा, २६ निकृतिः-वचनप्रच्छादनकर्म २९ सातिः-विश्रम्भः, एनत्संप्रयोगबहुलः"। शेषं तथैव, ३१ निःशीलो-ब्रह्मचर्यपरिणामाभावात् ३२ निर्व्रतो-हिंसादिविरत्यभावात् ३३ निर्गुणः-क्षान्त्यादिगुणाभावात् ३४ निर्मर्यादः-परस्त्रीपरिहारादिमर्यादाविलोपित्वात् ३५ निष्प्रत्याख्यानपौषधोपवासः-प्रत्याख्यानपरिणाम-पर्वदिवसोपवासपरिणामाभावात्, ३६ बहूनां ३७ द्विपदचतुष्पदमृगपशुपक्षिसरिसृपाणां ३८ घाताय-विनाशनाय ३९ वधाय-ताडनाय ४० उच्छादनाय-निर्मूलाभावीकरणाय ४१ अधर्मरूपः केतुरिव-ग्रहविशेष इव ४२ समुत्थितः, न च ४३ गुरूणां-पित्रादीनामागच्छ-

- वञ्चन-भा० १ पा० ५।

[४४]अब्भुट्ठेति [४५]णो विणयं पउंजइ, [४६]सयस्स वि य णं जणवयस्स णो [४७]सम्मं [४८]करभरवित्तिं [४९]पवत्तेइ।

[१४३] तस्स णं पएसिस्स रन्नो सूरियकंता नाम देवी होत्था, [१]सुकुमालपाणिपाया धारिणीवण्णओ [पृ० २७ पं० ३] [२]पएसिणा रन्ना [३]सद्धिं अणुरत्ता अविरत्ता इट्ठे सद्दे रूवे जाव विहरइ।

[१४४] तस्स णं पएसिस्स रण्णो जेट्ठे पुत्ते सूरियकंताए देवीए अत्तए सूरियकंते नामं कुमारे होत्था, [१]सुकुमालपाणिपाए जाव [पृ० २७ पं० ३–] पडिरूवे। [२]से णं सूरियकंते कुमारे [३]जुवराया वि होत्था, [४]पएसिस्स रन्नो [५]रज्जं च [६]रट्ठं च [७]बलं च [८]वाहणं च [९]कोसं च [१०]कोट्ठागारं च [११]पुरं च [१२]अंतेउरं च [१३]सयमेव [१४]पच्चुवेक्खमाणे पच्चुवेक्खमाणे

ताम् ४४ अभ्युत्तिष्ठति–अभिमुखमूर्ध्वं तिष्ठति, ४५ न च विनयं प्रयुङ्क्ते, नापि श्रमणब्राह्मणभिक्षुकाणामभ्युत्तिष्ठति, न च विनयं प्रयुङ्क्ते, ४६ नापि स्वकस्यापि–आत्मीयस्यापि जनपदस्यापि ४७ सम्यक् ४८ करभरवृत्तिं ४९ प्रवर्त्तयति।

[१४३] १ 'सुकुमालपाणिपाया' इत्यादि देवीवर्णनं प्राग्वत् [पृ० २७ पं० ३]। २ प्रदेशिना राज्ञा ३ सार्द्धमनुरक्ता अविरक्ता–कथञ्चिद्विप्रियकरणेऽपि विरागाभावात्।

[१४४] कुमारवर्णनं १ 'सुकुमालपाणिपाए' इत्यादि जाव 'सुन्दरे' इति, अत्र 'यावत्'करणात् 'अहीणपञ्चेंदियसरीरे पियदरिसणे सुरूवे' इति द्रष्टव्यम्, एतच्च देवीवर्णकवत् [पृ० २७ पं० ११] स्वयं परिभावनीयम्। २ स च सूर्यकान्तो नाम कुमारो ३ युवराजा अभूत्, ४ प्रदेशिनो राज्ञो ५ राज्यं–राष्ट्रादिसमुदायात्मकं ६ राष्ट्रं च–जनपदं च ७ बलं च–हस्त्यादिसैन्यं ८ वाहनं च–वेगसरादिकं ९ कोशं च–भाण्डागारं १० कोष्ठागारं च–धान्यगृहं ११ पुरं च १२ अवरोधं च १३ आत्मनैव–स्वयमेव १४ समुत्प्रेक्षमाणो

रायपसेणइयं।

चित्तो सारथिः

विहरइ।

[१४५] तस्स णं पएसिस्स रन्नो जेट्ठे भाउयवयंसए चित्ते णामं सारही होत्था अड्ढे[1] जाव [पृ० २५ पं० २] बहुजणस्स[2] अपरिभूए साम[3]-दंड-भेय-उवप्पयाण-अत्थसत्थ[4]ईहा[5]मइविसारए उप्पत्तियाए[6] वेणतियाए[7] कम्मयाए[8] पारिणामियाए[9] चउव्विहाए[10] बुद्धीए उववेए[11], पएसिस्स[12] रण्णो बहुसु[13] कज्जेसु य कारणेसु[14] य कुडुंबेसु[15] य मंतेसु[16] य गुज्झेसु[17] य रहस्सेसु[18] य निच्छएसु[19] च ववहारेसु[20] य आपुच्छणिज्जे[21]

-निरूपयन् समुत्प्रेक्षमाणो वा व्यापारयन्।

[१४५] १ आढ्यः-समृद्धो दीप्तः-कान्तिमान् वित्तः प्रतीतो 'यावत्'करणात् 'विउलभवण...विच्छड्डियउरभत्तपाणे' इति परिग्रहः, अस्य व्याख्या राजवर्णकवत् [पृ० २५ पं० ११] परिभावनीया, २ राज्यमान्यत्वात् स्वयं च जात्यक्षत्रियत्वात्, ३ साम-भेद-दण्ड-उपप्रदानलक्षणानां नीतीनाम् ४ अर्थशास्त्रस्य-अर्थोपायव्युत्पादनग्रन्थस्य ५ ईहा-विमर्शस्तत्प्रधाना मतिरीहामतिस्तया विशारदो-विचक्षणः -सामभेददण्डोपप्रदानार्थशास्त्रेहामतिविशारदः ६औत्पत्तिक्या-अदृष्टाश्रुताननुभूतविषयाकस्माद्भवनशीलया ७ वैनयिक्या-विनयलभ्यशास्त्रार्थसंस्कारजन्यया ८कर्मजया-कृषिवाणिज्यादिकर्मभ्यः सप्रभावया ९पारिणामिक्या-प्रायोवयोविपाकजन्यया१० एवंरूपया चतुर्विधया बुद्ध्या ११ उपपेतः १२ प्रदेशिनो राज्ञो १३ बहुषु कार्येषु-कर्त्तव्येषु १४ कारणेषु-कर्त्तव्योपायेषु १५ कुटुम्बेषु स्वकीयपरकीयेषु विषयभूतेषु १६ मन्त्रेषु-राज्यादिचिन्तारूपेषु १७ गुह्येषु-बहिर्जनाप्रकाशनीयेषु १८ रहस्येषु-तेष्वेव अपडक्षीणेषु १९ निश्चयेषु निश्चीयन्ते इति निश्चयाः-अवश्यकरणीयाः कर्त्तव्यविशेषास्तेषु २० व्यवहारेषु-आवाहनविसर्जनादिरूपेषु २१ आप्रच्छ-

कुणाला जनपदः—सावत्थी नगरी

पडिपुच्छ[२२]णिज्जे मेढी[२३] पमाणं[२४] आहारे[२५] आलंबणं[२६] चक्खू[२७] मेढिभूए[२८] पमाणभूए आहारभूए आलंबणभूए चक्खुभूए स[२९]व्वट्ठाणस[३०]व्वभूमियासु लद्धपच्चए विदिण्ण[३१]विचारे रज्जधुरा[३२]चिंतए आवि होत्था[३३]।

[१४६] तेणं कालेणं तेणं समयेणं कुणाला नामं जणवए होत्था, रिद्धत्थिमियसमिद्धे [पृ० २७२ पं० ६] तत्थ णं कुणालाए जणवए सावत्थी नाम नयरी होत्था रिद्धत्थिमियसमिद्धा [पृ० ३ पं० १] जाव पडिरूवा। तीसे णं सावत्थीए णगरीए बहिया उत्तरपुरत्थिमे दिसीभाए कोट्ठए नाम चेइए होत्था, पोराणे [पृ० ७ पं० ३-] जाव

नीयः—सकृत् प्रच्छनीयः २२ प्रतिप्रच्छनीयः—असकृत् प्रच्छनीयः, किमिति ?, यतोऽसौ २३ मेढी—खलकमध्यवर्तिनी स्थूणा यस्यां नियमिता गोपङ्क्तिर्धान्यं ग्राहयति तद्वद् यमालम्ब्य सकलं मन्त्रिमण्डलं मन्त्रणीयान् अर्थान् धान्यमिव विवेचयति स मेढिः, तथा २४ प्रमाणं—प्रत्यक्षादि तद्वत् यः—तद्दृष्टानामर्थानामव्यभिचारित्वेन तत्रैव मन्त्रिणां प्रवृत्तिनिवृत्तिभावात्—स प्रमाणम्, २५ आधारः आधेयस्येव सर्वकार्येषु लोकानामुपकारित्वात्, तथा २६ आलम्बनं रज्ज्वादि तद्वत् आपद्गर्त्तादिनिस्तारकत्वात् आलम्बनं, तथा २७ चक्षुः—लोचनं तद्वल्लोकस्य यो विविधकार्येषु प्रवृत्तिनिवृत्तिविषयदर्शकः स चक्षुः, एतदेव प्रपञ्चयति—२८ 'मेढिभूए' इत्यादि, अत्र भूतशब्द औपम्यार्थः, मेढिसदृश इत्यर्थः, २९ सर्वेषु स्थानेषु—कार्येषु संधिविग्रहादिषु ३० सर्वासु भूमिकासु—मन्त्र्यमात्यादिस्थानरूपासु लब्धः—उपलब्धः प्रत्ययः—प्रतीतिः अविसंवादवचनतया यस्य स तथा, ३१ वितीर्णो—राज्ञाऽनुज्ञातो विचारः—अवकाशो यस्य विश्वसनीयत्वात् स वितीर्णविचारः सर्वकार्यादिष्विति प्रकृतं, किं बहुना ?—३२ राज्यधुराचिन्तकश्चापि—राज्यनिर्वाहकश्चापि ३३अभूत् ।

पासादीए। तत्थ णं सावत्थीए नयरीए पएसिस्स रन्नो अंतेवासी जियसत्तू नामं राया होत्था, महयाहिमवंत जाव [पृ० २३ पं० ३-] विहरइ। तए णं से पएसी राया अन्नया कयाइ महत्थं महग्घं महरिहं विउलं रायारिहं पाहुडं सज्जावेइ, सज्जावित्ता चित्तं सारहिं सद्दावेइ, सद्दावित्ता एवं वयासी-गच्छ णं चित्ता! तुमं सावत्थिं नगरिं जियसत्तुस्स रण्णो इमं महत्थं जाव पाहुडं उवणेहि, जाइं तत्थ रायकज्जाणि य रायकिच्चाणि य रायनीतीओ य रायववहारा य ताइं जियसत्तुणा सद्धिं सयमेव पच्चुवेक्खमाणे विहराहि त्ति कट्टु विसज्जिए। तए णं से चित्ते सारही पएसिणा रण्णा एवं वुत्ते समाणे हट्ठ-जाव [पृ० ४७ पं० ३-] पडिसुणेत्ता तं महत्थं जाव पाहुडं गेण्हइ, पएसिस्स रण्णो जाव पडिणिक्खमइ सेयवियं नगरिं मज्झंमज्झेणं जेणेव सए गिहे तेणेव उवागच्छति उवागच्छित्ता तं महत्थं जाव [प्र० पृ० पं० २] पाहुडं ठवेइ, कोडुंबियपुरिसे सद्दावेइ सद्दावेत्ता एवं वयासी-खिप्पामेव भो! देवाणुप्पिया! सच्छत्तं जाव [पृ० १८७ पं० १-] चाउग्घंटं आसरहं जुत्तामेव उवट्ठवेह जाव पच्चप्पिणह। तए णं ते कोडुंबियपुरिसा तहेव पडिसुणित्ता खिप्पामेव सच्छत्तं जाव जुद्धसज्जं चाउग्घंटं आसरहं जुत्तामेव उवट्ठवेन्ति, तमाणत्तियं पच्चप्पिणंति, तए णं से चित्ते सारही कोडुंबियपुरिसाण अंतिए एयमट्ठं

[१४६] १ अन्ते-समीपे वसतीत्येवंशीलोऽन्तेवासी-शिष्यः, अन्तेवासीव सम्यगाज्ञाविधायी इति भावः। २ कवचं-तनुत्राणं वर्म्म-लोहमय×कसूलकादिरूपं संजातमस्येति वर्मितम्, सन्नद्धं शरीरारोपणात् बद्धं गाढतरबन्धनेन बन्धनात् वर्मितं कवचं येन स

×-कत्तलियादि-भा० १।

चित्तो सावत्थीं गच्छति

जाव–हियए ण्हाए कयबलिकम्मे कयकोउयमंगलपायच्छित्ते [2]सन्नद्धबद्धवम्मियकवए [3]उप्पीलियसरासणपट्टिए पिंणद्धगेविज्जविमलवरचिंधपट्टे गहियाउहपहरणे तं महत्थं जाव पाहुडं गेण्हइ, जेणेव चाउग्घंटे आसरहे तेणेव उवागच्छइ चाउग्घंटं आसरहं दुरूहेति, बहुहिं पुरिसेहिं सन्नद्ध–जाव [प्र० पृ० पं० १] गहियाउहपहरणेहिं सद्धिं संपरिवुडे सकोरिंटमल्लदामेणं छत्तेणं धरेज्जमाणेणं महया भडचडगररहपहकरविंदपरिक्खित्ते साओ गिहाओ णिग्गच्छइ सेयवियं नगरिं मज्झंमज्झेणं णिग्गच्छइ सुहेहिं वासेहिं पायरासेहिं नाइविकिट्ठेहिं अंतरा वासेहिं वसमाणे वसमाणे केइयअद्धस्स जणवयस्स मज्झंमज्झेणं जेणेव कुणालाजणवए जेणेव सावत्थी नयरी तेणेव उवागच्छइ सावत्थीए नयरीए मज्झंमज्झेणं अणुपविसइ, जेणेव जियसत्तुस्स रण्णो गिहे जेणेव बाहिरिया उवट्ठाणसाला तेणेव उवागच्छइ तुरए निगिण्हइ, रहं ठवेति, रहाओ पच्चोरुहइ, तं महत्थं जाव पाहुडं गिण्हइ जेणेव अब्भिंतरिया उवट्ठाणसाला जेणेव जियसत्तू राया तेणेव उवागच्छइ, जियसत्तुं रायं करयलपरिग्गहियं [पृ० ५६ पं० २–] जाव कट्टु जएणं विजएणं वद्धावेइ, तं महत्थं जाव पाहुडं उवणेइ । तए णं से जियसत्तू राया चित्तस्स सारहिस्स तं महत्थं जाव पाहुडं पडिच्छइ चित्तं सारहिं सक्कारेइ सम्माणेति

सन्नद्धबद्धवर्म्मितकवचः, ३ उत्पीडिता–गाढीकृता शरा अस्यन्ते–क्षिप्यन्ते अस्मिन्निति शरासनं–इषुधिस्तस्य–पट्टिका येन स उत्पीडितशरासनपट्टिकः ४ पिनद्धं ग्रैवेयकं–ग्रीवाऽऽभरणं विमलवरचिह्नपट्टश्च येन स पिनद्धग्रैवेयकविमलवरचिह्नपट्टः ५आयुध्यतेऽनेनेत्यायुधं–खेटकादि प्रहरणम्–असिकुन्तादि गृहीतान्यायुधानि प्रहरणानि च येन स गृहीतायुधप्रहरणः ।

पडिविसज्जेइ रायमग्गमोगाढं च से आवासं दलयइ । तए णं से चित्ते सारही विसज्जिते समाणे जियसत्तुस्स रन्नो अंतियाओ पडिनिक्खमइ, जेणेव बाहिरिया उवट्ठाणसाला जेणेव चाउग्घंटे आसरहे तेणेव उवागच्छइ, चाउग्घंटं आसरहं दुरूहइ, सावत्थिं नगरिं मज्झंमज्झेणं जेणेव रायमग्गमोगाढे आवासे तेणेव उवागच्छइ, तुरए निगिण्हइ, रहं ठवेइ, रहाओ पच्चोरुहइ, ण्हाए कयबलिकम्मे कयकोउयमंगलपायच्छित्ते सुद्धप्पावेसाइं मंगल्लाइं वत्थाइं पवरपरिहिते अप्पमहग्घाभरणालंकियसरीरे जिमियभुत्तुत्तरागए वि य णं समाणे पुव्वावरण्हकालसमयंसि गंधव्वेहि य णाडगेहि य उवनच्चिज्जमाणे उवनच्चिज्जमाणे उवगाइज्जमाणे उवगाइज्जमाणे उवलालिज्जमाणे इट्ठे सद्द-फरिस-रस-रूव-गंधे पंचविहे माणुस्सए कामभोए पच्चणुभवमाणे विहरइ।

[१४७] तेणं कालेणं तेणं समएणं पासावच्चिज्जे केसी नाम कुमारसमणे [२]जातिसंपण्णे [३]कुलसंपण्णे बलसंपण्णे [४]रूवसंपण्णे [५]विणयसंपण्णे नाणसंपण्णे दंसणसंपन्ने चरित्तसंपण्णे लज्जासंपण्णे [६]लाघवसंपण्णे लज्जालाघवसंपन्ने +ओयंसी तेयंसी वचंसी

[१४७] १ जातिसंपन्नः-उत्तममातृपक्षयुक्त इति प्रतिपत्तव्यम्, अन्यथा मातृपितृपक्षसंपन्नत्वं पुरुषमात्रस्यापीति नास्योत्कर्षः कश्चिदुक्तो भवति, उत्कर्षाभिधानार्थं चास्य विशेषणकलापोपादानं चिकीर्षितमिति, एवं २ कुलसंपन्नोऽपि नवरं कुलं-पितृपक्षः ३ बलं -संहननविशेषसमुत्थः प्राणः ४ रूपम्-अनुपमं शरीरसौन्दर्यं ५ विनयादीनि प्रतीतानि, नवरं ६ लाघवं-द्रव्यतोऽल्पोपधित्वम् भावतो गौरवत्रयत्यागः मनोवाक्कायसंयमः ७ ओजो-मानसोऽवष्टम्भस्तद्वान् ओजस्वी ८ तेजः-शरीरप्रभा तद्वान् तेजस्वी ९ वचो वचनं सौ-

+ 'ओयसी' इत्यादि-"इह च विशेषणचतुष्टयेऽपि अनुस्वारः प्राकृतत्वात्"-राय० विव०।

[10]जंसंसी जिय[11]कोहे जियमाणे जियमाए जियलोहे जियणिद्दे जितिंदिए जियपरीसहे जीविया[12]समरणभयविप्पमुक्के तव[13]प्पहाणे गुण[14]प्पहाणे करण[15]प्पहाणे चरण[16]प्पहाणे निग्गह[17]प्पहाणे निच्छय[18]प्पहाणे अज्जव[19]प्पहाणे मद्दवप्पहाणे लाघव[20]प्पहाणे खंति[21]प्पहाणे गुत्ति[22]प्पहाणे मुत्ति[23]प्पहाणे विज्ज[24]प्पहाणे मंत[25]प्पहाणे

भाग्याद्युपेतं यस्यास्ति स वचस्वी अथवा वर्चः–तेजः प्रभाव इत्यर्थस्तद्वान् वर्चस्वी १० यशस्वी–ख्यातिमान्, ११ 'जितक्रोधः' इत्यादि तु विशेषणसप्तकं प्रतीतम्, नवरं क्रोधादिजय उदयप्राप्तक्रोधादिविफलीकरणतोऽवसेयः, तथा १२ जीवितस्य–प्राणधारणस्य आशा–वाञ्छा मरणाद् भयं ताभ्यां विप्रमुक्तो जीविताशामरणभयविप्रमुक्तः, तदुभयोपेक्षक इत्यर्थः, तथा १३ तपसा प्रधानः–उत्तमः शेषमुनिजनापेक्षया तपो वा प्रधानं यस्य स तपःप्रधानः, एवं १४गुणप्रधानः नवरं गुणाः–संयमगुणाः, एतेन च विशेषणद्वयेन तपः–संयमौ पूर्वबद्धाऽभिनवयोः कर्मणोर्निर्जराऽनुपादानहेतू मोक्षसाधने मुमुक्षूणामुपादेयौ प्रदर्शितौ, गुणप्राधान्यप्रपञ्चनार्थमेवाह–१५करणं –पिण्डविशुद्ध्यादि, उक्तं च–"पिंडविसोही समिई भावण पडिमा य इन्दियनिरोहो। पडिलेहण गुत्तीओ अभिग्गहा चेव करणं तु"॥ [ ] १६ चरणं–महाव्रतादि, उक्तं च–"वय समणधम्म संजम वेयावच्चं च बम्भगुत्तीओ। णाणाइतियं तवं कोहनिग्गहाई चरणमेयं"॥ [ ] १७ निग्रहः–अनाचारप्रवृत्तेर्निषेधनम्। १८ निश्चयः–तत्त्वानां निर्णयः विहितानुष्ठानेष्ववश्यमभ्युपगमो वा १९ आर्जवं–मायानिग्रहः २० लाघवं–क्रियासु दक्षत्वं २१ क्षान्तिः–क्रोधनिग्रहः २२ गुप्तिः–मनोगुप्त्यादिका २३ मुक्तिः–निर्लोभता २४ २४ विद्याः–प्रज्ञप्त्यादिदेवताऽधिष्ठिता वर्णानुपूर्व्यः २५ मन्त्रा–हरिणेगमेष्यादिदेवताऽधिष्ठिताः अथवा ससाधना विद्या साधनरहिता

वं[26]भं[27]प्पहाणे वेयप्पहाणे न[28]यप्पहाणे नियमं[29]प्पहाणे सच्चं[30]प्पहाणे सोयं[31]प्पहाणे नाणं[32]प्पहाणे दंसणप्पहाणे[33] चरित्त[34]प्पहाणे [35]ओराले...[पृ० १४७ पं० १–] चउदसपुव्वी [36]चउणाणोवगए पंचहिं अणगारसएहिं सद्धिं संपरिवुडे पुव्वाणुपुव्विं चरमाणे गामाणुगामं दूइज्जमाणे सुहंसुहेणं विहरमाणे जेणेव सावत्थी नयरी जेणेव कोट्ठए चेइए तेणेव उवागच्छइ, सावत्थी-नयरीए बहिया कोट्ठए चेइए अहापडिरूवं उग्गहं उग्गिण्हइ उग्गिण्हित्ता संजमेणं तवसा अप्पाणं भावेमाणे विहरइ।

मन्त्राः, २६ब्रह्म ⊖ चर्यं-बस्तिनिरोधः सर्वमेव वा कुशलानुष्ठानम् २७वेदः-आगमो लौकिक-लोकोत्तरिक-कुप्रावचनिकभेदभिन्नः २८ नया नैगमादयः सप्त प्रत्येकं शतविधाः, २९नियमा-विचित्रा अभिग्रहविशेषाः ३० सत्यं-भूतहितं वचः ३१ शौचं-द्रव्यतो निर्लेपता भावतोऽनवद्यसमाचारता ३२ ज्ञानं-मत्यादि ३३ दर्शनं-सम्यक्त्वं ३४ चारित्रं-बाह्यं सदनुष्ठानं, यच्चेह चरणकरणग्रहणेऽपि आर्जवादिग्रहणं तत् आर्जवादीनां प्राधान्यख्यापनार्थम्, ननु जितक्रोधत्वादीनामार्जवादीनां च कः प्रतिविशेषः? उच्यते, जितक्रोधादिविशेषणेषु तदुदयविफलकरणम् मार्दवप्रधानादिषु उदयनिरोधः, अथवा यत एव जितक्रोधादिः अत एव क्षमादिप्रधान इत्येवं हेतुहेतुमद्भावाद् विशेषः, तथा 'ज्ञानसम्पन्नः' इत्यादौ ज्ञानादिमत्त्वमात्रमुक्तम् 'ज्ञानप्रधानः' इत्यादौ तद्वतां मध्ये तस्य प्राधान्यमित्येवमन्यत्राप्यपौनरुक्त्यं भावनीयम्, तथा ३५ उदारः-स्फाराकारः 'घोरे...३६ चउनाणोवगए' इति पूर्ववत् [पृ० १४७ पं० १ तथा पृ० १४८ पं० ७-१२] 'पंचहिं अणगारसएहिं' इत्यादिकं वाच्यम्।

⊖-चर्यं सर्वमेव -पा० ४-५ भा० १।

रायपसेण
इयं।

॥२८४॥

[१४८] तए णं सावत्थीए नयरीए सिंघाडग-तिय-चउक्क-चच्चर-चउमुह-महापहेसु मह[1]या जणसद्दे इ=वा○ [2]जेण-वूहे इ वा जण[3]बोले इ वा जण[4]कलकले इ वा जण[5]उम्मी इ वा जणउक्कलिया इ वा जणसन्नि[6]वाए इ वा जाव परिसा पज्जुवासइ। तए णं तस्स सारहिस्स तं महाजणसद्दं च जणकलकलं च सुणेत्ता य पासेत्ता य इमेयारूवे अज्झत्थिए जाव समुप्पज्जित्था, किं णं अज्ज जाव सावत्थीए णयरीए इं[7]दमहे इ वा [8]खंदमहे इ वा [9]रुद्दमहे इ वा [10]मुकुंदमहे इ वा सिव[11]महे इ वा वे[12]समणमहे इ वा नाग[13]महे इ वा [14]जक्खमहे इ वा भूय[14]महे इ वा थूभ[15]महे इ वा चेइ[16]यमहे इ वा रु[17]क्खमहे इ वा गिरि[18]महे इ वा दरिमहे इ वा अ[19]गडमहे इ वा नईमहे इ वा सरमहे इ वा सागरमहे

[१४८] महान् जनशब्दः परस्परालापादिरूपः, २ जनव्यूहो—जनसमुदायः, ३ बोलः—अव्यक्तवर्णो ध्वनिः, ४ कलकलः स एवोपलभ्यमानवचनविभागः ५ ऊर्मिः—संबाधः ६ लघुतरसमुदायः सन्निपातः—अपरापरस्थानेभ्यो जनानामेकत्र मीलनम्, 'जाव परिसा पज्जुवासइ' इति, 'यावत्' करणात् 'बहुजणो...[पृ० ३८ पं० ४] पन्नवेइ पासावच्चिज्जे केसी नामं कुमारसमणे जाइसम्पण्णे जाव [पृ० ११८ पं० ९] गामणुगामं दुइज्जमाणे इहमागए इह संपत्ते इह समोसढे इहेव सावत्थीए नयरीए [पृ० ११८ [पं० ३], तं महप्फलं खलु [पृ० ३९ पं० २] इत्यादि प्रागुक्तसमस्तपरिग्रहः, ७ इन्द्रमहः—इन्द्रोत्सवः इन्द्रः—शक्रः, ८ स्कन्दः—कार्त्तिकेयः ९ रुद्रः प्रतीतः १० मुकुन्दो—बलदेवः ११ शिवो—देवताविशेषः १२ वैश्रमणो—यक्षराट् १३ नागो—भवनपतिविशेषः १४ यक्षोभूतश्च व्यन्तरविशेषौ १५स्तूपः—चैत्यस्तूपः १६ चैत्यं—प्रतिमा १७ वृक्षः १८ दरि—गिरी १९अवट—नदी—सरः—सागराः प्रतीताः,

= " 'इ' कारो वाक्यालकारार्थे. "—राय० वि०। ○ " 'वा' शब्दः पदान्तरापेक्षया समुच्चयार्थः "—राय० वि०।

इ वा जं णं इमे बहवे× उग्गा[20] उग्गपुत्ता[21] भोगा[22] राइन्ना[23] इक्खागा ≈ णाया कोरव्वा जाव इब्भा इब्भपुत्ता अण्णे य बहवे राया[24]-ईसर[25]-तलवर[26]-माडंबिय[27]-कोडुंबिय[28]-इब्भ[29]-सेट्ठि[30]-सेणावइ[31]-सत्थवाह[32]प्पभितयो[33] ण्हाया[34]

२०उग्राः आदिदेवावस्थापिता इक्षुवंशजाताः २१उग्रपुत्राः त एव कुमाराद्यवस्थाः, एवं २२ भोगाः-आदिदेवेनैवावस्थापितगुरुवंशजाता २३ राजन्याः-भगवद्वयस्यवंशजाः 'यावत्'करणात् 'खत्तिया माहणा भडा [पृ० ४० पं०१-] जोहा मल्लई मल्लइपुत्ता लेच्छई लेच्छइ-पुत्ता' इति परिग्रहः, तत्र क्षत्रियाः-सामान्यराज्यकुलीना भटाः-शौर्यवन्तः योधाः-तेभ्यो विशिष्टतराः, मल्लकिनो लेच्छकिनश्च राजविशेषाः, यथा चेटकराजस्य श्रूयन्ते अष्टादश गणराजा नव मल्लकिनो नव लेच्छकिनः, २४ राजानो-माण्डलिका २५ ईश्वरा-युवराजानः २६तलवराः-परितुष्टनरपतिप्रदत्तपट्टबन्धविभूपिता राजस्थानीयाः २७माडम्बिकाः २९ इभ्याः-महाधनिनः ३०श्रेष्ठिनः-श्रीदेवताध्यासितसौवर्णपट्टविभूपितोत्तमाङ्गाः ३१ सेनापतयो-नृपतिनिरूपिताश्चतुरङ्गसैन्यनायकाः ३२ सार्थवाहाः-सार्थनायकाः ३३ प्रभृतिग्रहणात् मन्त्रि-महामन्त्रि-गणक-दौवारिक-पीठमर्दादिपरिग्रहः, तत्र मन्त्रिणः प्रतीताः महामन्त्रिणो मन्त्रिमण्डलप्रधानाः "हस्तिसाधनोपरिकाः" इति वृद्धाः गण.का-गणितज्ञाः "भाण्डागारिकाः" इति वृद्धाः "ज्योतिषिकाः" इत्यपरे दौवारिकाः-प्रतीहारा राजद्वारिका वा पीठमर्दाः -आस्थाने आसन्नप्रत्यासन्नसेवका वयस्या इति भावः 'जाव अंबरतलमिव फोडेमाणा' इति 'यावत्' करणात् 'अप्पेगतिया' वंदणवत्तियं ...सत्त सिक्खावयाइं...[पृ० ४० पं० ३-पृ० ४१ पं० ६] समुद्दरवभूयं पिव करेमाणा अंबरतलं पिव फोडेमाणा'इति परिग्रहः, एतच्च प्रायः सुगमम्, नवरम् गुणव्रतानामपि निरन्तरमभ्यस्यमानतया शिक्षाव्रतत्वेन विवक्षणात् 'सत्त सिक्खावयाइं' इत्युक्तम् ३४ स्नाताः

× पृ० ४० प० १, टिप्पण ३। ≈ वि० वा०।

[३५]कयबलिकम्मा कय[३६]कोउयमंगलपायच्छित्ता सिर[३७]साकंठेमालकडा [३८]आविद्धमणिसुवण्णा कप्पिय[३९]हार-अद्धहार-तिसर-पालंब[४०]पलंबमाण-[४१]कडिसुत्तयकयसोहाहरणा [४२]चंदणोलित्तगायसरीरा...पुरिस[४३]वग्गुरापरिखित्ता [४४]महया उक्किट्ठसीहणायबोलकलकलरवेणं . एग[४५]दिसाए जहा उववाइए जाव [उववाइअ सू० पृ० ५७ पं० ११-] अप्पे-

कृतस्नानाः अनन्तरं ३५ कृतं बलिकर्म-स्वगृहदेवताभ्यो यैस्ते कृतबलिकर्माणः, तथा ३६ कृतानि कौतुकमङ्गलान्येव प्रायश्चित्तानि दुःस्वप्नादिविघातार्थं यैस्ते कृतकौतुकमङ्गलप्रायश्चित्ताः, तत्र कौतुकानि-मषीतिलकादीनि मङ्गलानि-सिद्धार्थकदध्यक्षतदूर्वादीनि, तथा ३७ शिरसा कण्ठे च कृता माला ⁄यैस्ते, शिरसाकण्ठेमालाकृताः, तथा ३८ आविद्धानि-परिहितानि मणिसुवर्णानि यैस्ते तथा, ३९ कल्पितो-विन्यस्तो हारः-अष्टादशसरिकः अर्द्धहारो-नवसरिकः त्रिसरिकम्-प्रतीतमेव-यैस्ते तथा, तथा ४० प्रलम्बो-○झुंबनकं लम्बमानो येषां ते तथा, ४१ कटिसूत्रेण अन्यान्यपि सुकृतशोभान्याभरणानि येषां ते कटिसूत्रसुकृतशोभा×भरणाः, ४२ चन्दनावलिप्तानि गात्राणि यत्र तत् तथाविधं शरीरं येषां ते चन्दनावलिप्तगात्रशरीराः, ४३ पुरुषाणां वागुरेव वागुरा-परिकरस्तया परिक्षिप्ताः-व्याप्ताः, ४४ महता उत्कृष्टिश्च-आनन्दमहाध्वनिः सिंहनादश्च-सिंहस्येव नादः बोलश्च-वर्णव्यक्तिवर्जितो ध्वनिः, कलकलश्च-व्यक्तवचनः स एव एतल्लक्षणो यो रवस्तेन समुद्ररवभूतमिव-समुद्रमहाघोषप्राप्तमिव श्रावस्तीं नगरीमिति गम्यते कुर्वाणाः अम्बरतलमिव-आकाशतलमिव स्फोटयन्तः, ४५ एकया दिशा पूर्वोत्तरलक्षणया एकाभिमुखा-एकं भगवन्तं प्रति अभिमुखाः ।

⁄ "प्राकृतत्वात् पदव्यत्ययः विभक्तिव्यत्ययश्च इति"-राय० वि० । ○ भाषायाम्-'झूमणु' इति । × "ततः पदत्रयस्यापि पदद्वयमीलनेन कर्मधारयः"-राय० वि० ।

गतिया हयगया जाव अप्पेगतिया गयगया पायचारविहारेणं [पृ० ४१ पं० ४] महया महया वंदावंदएहिं
निग्गच्छंति, एवं संपेहेइ संपेहित्ता कंचुइज्जपुरिसं सद्दावेइ सद्दावित्ता एवं वयासी–किं णं देवाणुप्पिया ! अज्ज
सावत्थीए नगरीए इंदमहे इ वा जाव सागरमहे इ वा जेणं इमे बहवे उग्गा भोगा० णिग्गच्छंति ?

तए णं से कंचुईपुरिसे केसिस्स कुमारसमणस्स आगमणगहियविणिच्छए चित्तं सारहिं करयलपरिग्गहियं
जाव वद्धावेत्ता एवं वयासी–णो खलु देवाणुप्पिया ! अज्ज सावत्थीए णयरीए इंदमहे इ वा जाव सागरमहे इ
वा जे णं इमे बहवे जाव विंदाविंदएहिं निग्गच्छंति, एवं खलु भो ! देवाणुप्पिया ! पासावच्चिज्जे केसी नामं कुमार-
समणे जाइसम्पन्ने [पृ० २८१ पं० ८] जाव दुइज्जमाणे इहमागए जाव विहरइ, तेणं अज्ज सावत्थीए नयरीए
बहवे उग्गा जाव इब्भा इब्भपुत्ता अप्पेगतिया वंदणवत्तियाए जाव महया वंदावंदएहि णिग्गच्छन्ति ।

[१४९] तए णं से चित्ते सारही कंचुइपुरिसस्स अंतिए एयमट्ठं सोच्चा निसम्म हट्ठतुट्ठ–जाव–हियए कोडुंबि-
यपुरिसे सद्दावेइ सद्दावित्ता एवं वयासी–खिप्पामेव भो ! देवाणुप्पिया ! चाउग्घंटं[1] आसरहं[2] जुत्तामेव[3] उवट्ठवेह
जाव सच्छत्तं उवट्ठवेंति, तए णं से चित्ते सारही ण्हाए कयबलिकम्मे कयकोउयमंगलपायच्छित्ते सुद्धप्पावेसाइं
मंगल्लाइं वत्थाइं पवरपरिहिते अप्पमहग्घाभरणालंकियसरीरे जेणेव चाउग्घंटे आसरहे तेणेव उवागच्छइ
उवागच्छित्ता चाउग्घंटं आसरहं दुरूहइ सकोरिंटमल्लदामेणं छत्तेणं धरिज्जमाणेणं महया भडचडगरेण विंदप-

[१४९] १ चतस्रो घण्टा अवलम्बमाना यस्मिन् स तथा, २ अश्वप्रधानो रथोऽश्वरथः तं, ३ युक्तमेव अश्वादिभिरिति गम्यते,

रिच्चित्ते सावत्थीनगरीए मज्झंमज्झेणं निग्गच्छइ निग्गच्छित्ता जेणेव कोट्ठए चेइए जेणेव केसिकुमारसमणे तेणेव उवागच्छइ उवागच्छित्ता केसिकुमारसमणस्स अदूरसामंते तुरए णिगिण्हइ रहं ठवेइ य, ठवित्ता पच्चोरुहति पच्चोरुहित्ता जेणेव केसिकुमारसमणे तेणेव उवागच्छइ उवागच्छित्ता केसिकुमारसमणं तिक्खुत्तो आयाहिणं-पयाहिणं करेइ करित्ता वंदइ नमंसइ नमंसित्ता णच्चासण्णे णातिदूरे सुस्सूसमाणे णमंसमाणे अभिमुहे पंजलिउडे विणएणं पज्जुवासइ। तए णं से केसिकुमारसमणे चित्तस्स सारहिस्स तीसे महतिमहालियाए महच्चपरिसाए चाउज्जामं धम्मं परिकहेइ, तं०–सव्वाओ पाणाइवायाओ वेरमणं, सव्वाओ मुसावायाओ वेरमणं, सव्वाओ अदिण्णादाणाओ वेरमणं, सव्वाओ बहिद्धादाणाओ वेरमणं। तए णं सा महतिमहालिया महच्चपरिसा केसिस्स कुमारसमणस्स अंतिए धम्मं सोच्चा निसम्म जामेव दिसिं पाउब्भूया तामेव दिसिं पडिगया।

[१५०] तए णं से चित्ते सारही केसिस्स कुमारसमणस्स अंतिए धम्मं सोच्चा निसम्म हट्ठ–जाव–हियए उट्ठाए उट्ठेइ उट्ठेत्ता केसिं कुमारसमणं तिक्खुत्तो आयाहिणपयाहिणं करेइ वंदइ नमंसइ नमंसित्ता एवं

शेषं प्राग् व्याख्यातार्थम् ४ 'जहा जीवा *बज्झन्ति' इत्यादिरूपा धर्मकथा औपपातिकग्रन्थादवसेया [औप० सू० पृ० ७८ पं० ७–] लेशतस्तु प्रागेव दर्शिता।

---

* मूल–विवरणयोः पाठभेदः।

वयासी–सद्दहामि[1] णं भंते ! निग्गंथं[2] पावयणं, पत्तियामि[3] णं भंते ! निग्गंथं पावयणं, रोएमि[4] णं भंते ! निग्गंथं पावयणं, अब्भुट्ठेमि[5] णं भंते ! निग्गंथं पावयणं, एवमेयं[6] निग्गंथं पावयणं, तहमेयं[7] भंते ! ०, अवितहमेयं[8] भंते ! ०, असंदिद्धमेयं[9]०, इच्छियपडिच्छियमेयं[10] भंते ! जं णं तुब्भे[11] वदह त्ति कट्टु वंदइ नमंसइ नमंसित्ता एवं वयासी-जहा णं देवाणुप्पियाणं अंतिए बहवे उग्गा भोगा जाव इब्भा इब्भपुत्ता चिच्चा हिरण्णं[12] चिच्चा सुवण्णं एवं धणं[13] धन्नं[14] बलं वाहणं कोसं कोट्ठागारं पुरं अंतेउरं चिच्चा विउलं धणकणग[15]रयणमणिमोत्तियसंखसिलप्पवाल[16][17]-संतसारसावएज्जं[18] विच्छड्डित्ता[19] विगोवइत्ता[20] दाणं[21] दाइयाणं परिभाइत्ता[22] मुंडे भवित्ता अगाराओ अणगारियं पव्व-

[१५०] १ श्रद्दधे–अस्तीत्येवं प्रतिपद्ये २ नैर्ग्रन्थं प्रवचनं–जैनशासनम् , ३ एवम्–इति प्रत्ययं करोम्यत्रेति भावः, ४रोचयामि–करणरुचिविषयीकरोमि–चिकीर्षामि–इति तात्पर्यार्थः, किमुक्तं भवति?–५ अभ्युत्तिष्ठामि–अभ्युपगच्छामीत्यर्थः, ६ एवमेतत् यद् भवद्भिः प्रतिपादितं ७ तत् तथैव भदन्त ! तथैवैतद् भदन्त ! याथात्म्यवृत्त्या ८ वस्तु अवितथमेतत् भदन्त ! सत्यमित्यर्थः, ९ असंदिग्धमेतत् भदन्त ! सम्यक् तथ्यमेतदिति भावः, १० इष्टम्–अभिलषितम् प्रतीष्टम्–आभिमुख्येन सम्यक् प्रतिपन्नमेतत् ११ यथा यूयं वदथ, १२ हिरण्यम्–अघटितं सुवर्णम् १३ धनं–रूप्यादि १४ धान्य–बल–वाहन–कोश–कोष्ठागार–पुर–अन्तःपुराणि व्याख्यातानि प्रतीतानि च, १५ धनम्–रूप्यादि १६ कनकरत्नमणिमौक्तिकशङ्खाः प्रतीताः १७ शिलाप्रवालं–विद्रुमम् १८ सत्–विद्यमानं सारं–प्रधानं यत् स्वापतेयं–द्रव्यं १९ 'विच्छर्दयित्वा' भावतः परित्यज्य २० प्रकटीकृत्य, तदनन्तरं २१ दानं–दीनानाथादिभ्यः २२–अत्र पुत्रादिषु विभज्य ।

यंति, णो खलु अहं ता संचाएमि चिच्चा हिरण्णं तं चेव जाव पव्वइत्तए, अहं णं देवाणुप्पियाणं अंतिए पंचाणुव्वइयं सत्तसिक्खावइयं दुवालसविहं गिहिधम्मं पडिवज्जित्तए, अहासुहं देवाणुप्पिया ! मा पडिबंधं करेहि, तए णं से चित्ते सारही केसिकुमारसमणस्स अंतिए पंचाणुव्वतियं जाव गिहिधम्मं उवसंपज्जित्ताणं विहरति, तए णं से चित्ते सारही केसिकुमारसमणं वंदइ नमंसइ नमंसित्ता जेणेव चाउग्घंटे आसरहे तेणेव पहारेत्थ गमणाए चाउग्घंटं आसरहं दुरूहइ जामेव दिसिं पाउब्भूए तामेव दिसिं पडिगए।

[१५१] तए णं से चित्ते सारही समणोवासए जाए [1]अहिगयजीवाजीवे [2]उवलद्धपुण्णपावे [3]आसव[4]संवर[5]निज्जर-[6]किरिया[7]हिगरण[8]बंध[9]मोक्ख[10]कुसले [11]असहिज्जे [12]देवासुरणागसुवण्णजक्खरक्खसकिन्नरकिंपुरिसगरुलगंधव्वमहोरगाईहिं देवगणेहिं निग्गंथाओ पावयणाओ अणइक्कमणिज्जे, [13]निग्गंथे पावयणे णिस्संकिए [14]णिक्कंखिए

---

[१५१] १ अभिगतौ–सम्यग् विज्ञातौ जीवाजीवौ येन स तथा, २ उपलब्धे यथावस्थितस्वस्वरूपेण विज्ञाते पुण्यपापे येन स उपलब्धपुण्यपापः, ३ आश्रवाणां–प्राणातिपातादीनाम् ४ संवरस्य–प्राणातिपातादिप्रत्याख्यानरूपस्य ५ निर्जरायाः–कर्मणां देशतो निर्जरणस्य ६ क्रियाणां–कायिक्यादीनाम् ७ अधिकरणानाम्–खड्गादीनां ८ बन्धस्य–कर्मपुद्गलजीवप्रदेशान्योऽन्यानुगमरूपस्य ९ मोक्षस्य सर्वात्मना कर्मापगमरूपस्य १० कुशलः–सम्यक् परिज्ञाता आश्रव–संवर–निर्जरा–क्रिया–ऽधिकरण–बन्ध–मोक्षकुशलः ११ अविद्यमानसाहाय्यः, कुतीर्थिकप्रेरितः सम्यक्त्वाविचलनं प्रति न परसाहाय्यमपेक्षते इति भावः, तथा चाह–१२ 'देवासुरनाग...अणइक्कमणिज्जे' सुगमम्, नवरं गरुडाः–सुवर्णकुमाराः, एवं चैतत् यतो १३ नैर्ग्रन्थे प्रावचने निःसंशयः दर्शनान्तराकाङ्क्षारहितः १४ फलं

णिव्वि[15]तिगिच्छे लद्धट्ठे[16] गहियट्ठे पुच्छियट्ठे अहिगयट्ठे विणिच्छियट्ठे अट्ठिमिंज[17]पेम्माणुरागरत्ते–'अयं[18]माउसो ! निग्गंथे पावयणे अट्ठे अयं परमट्ठे सेसे[19] अणट्ठे' ऊसियफलिहे[20] अवंगुयदुवारे[21] चियंत्तंतेउरघरप्पवेसे[22]

प्रति निःशङ्कः अर्थश्रवणतः १५अर्थावधारणतः संशये सति सम्यगुत्तरश्रवणतो विमलबोधात्, १६ पदार्थोपलम्भात् १७ अस्थीनि प्रसिद्धानि तानि च ○मिञ्जा च–तन्मध्यवर्त्ती मज्जा अस्थिमिञ्जानः ते प्रेमानुरागेण–सर्वज्ञप्रवचनप्रीतिलक्षणकुसुम्भादिरागेण रक्ता इव रक्ता यस्य स तथा, केनोल्लेखेनेत्यत आह–१८ 'अयमाउसो ! निग्गंथे पावयणे अट्ठे परमट्ठे सेसे अणट्ठे' इति 'आउसो' आयुष्मन्!, एतच्च सामर्थ्यात् पुत्रादेरामन्त्रणं, १९ शेषमिति–धनधान्यपुत्रदारराज्यकुप्रवचनादि, २० "उच्छ्रितं स्फटिकमिव स्फाटिकम्–अन्तःकरणं यस्य स तथा–मौनीन्द्रप्रवचनावाप्त्या परितुष्टमना इत्यर्थः" एषा वृद्धव्याख्या। अपरे त्वाहुः–"उच्छ्रितः–अर्गलास्थानादपनीय ऊर्ध्वीकृतो न तिरश्चीनः, कपाटपश्चाद्भागादपनीत इत्यर्थः, उत्सृतो वा–अपगतः परिघः–अर्गला गृहद्वारे यस्यासौ उच्छ्रितपरिघः उत्सृतपरिघो वा–औदार्यातिरेकतोऽतिशयदानदायित्वेन भिक्षुकप्रवेशार्थमनर्गलितगृहद्वार इत्यर्थः", २१ अप्रावृतद्वारः भिक्षुकप्रवेशार्थं कपाटानामपि पश्चात्–करणात्, वृद्धानां तु भावनावाक्यमेवम्–२१ "सम्यग्दर्शनलाभे सति न कस्माच्चित् पाखण्डिकाद् बिभेति–शोभनमार्गपरिग्रहेण उद्घाटितशिरास्तिष्ठतीति भावः", २२ 'चियत्त' इति नाप्रीतिकरः अन्तःपुरगृहे प्रवेशः–शिष्टजनप्रवेशनं यस्य स तथा, अनेनानीर्ष्यालुत्वमस्योक्तम्, अथवा २२ चियत्तः–प्रीतिकरो लोकानामन्तःपुरे गृहे वा प्रवेशो यस्यातिधा-

○ भाषायाम् 'मींज' शब्दः 'मिञ्जा' समानः।

रायपसेणइयं। ॥२९२॥

चाउ[23]द्दसट्ठमुद्दिट्ठपुण्णमासिणीसु पडि[24]पुण्णं पोस[25]हं स[26]म्मं अणुपालेमाणे समणे णिग्गंथे फासुएसणिज्जेणं असणपाणखाइमसाइमेणं पीढ[27]फल[28]गसेज्जा[29]संथा[30]रेणं व[31]त्थपडि[32]ग्गहकंबलपा[33]यपुंछणेणं ओस[34]हभेस[35]ज्जेणं पडिलाभेमाणे अहा[36]परिग्गहेहिं तवोकम्मेहिं अप्पाणं भावेमाणे जाइं तत्थ रायकज्जाणि य जाव [पृ० २७९ पं० ४] रायववहाराणि य ताइं जियसत्तुणा रण्णा सद्धिं सयमेव पच्चुवेक्खमाणे पच्चुवेक्खमाणे विहरइ।

[१५२] तए णं से जियसत्तुराया अण्णया कयाइ महत्थं जाव पाहुडं सज्जेइ, चित्तं सारहिं सद्दावेइ सद्दावित्ता एवं वयासी–गच्छाहि णं तुमं चित्ता! सेयवियं णगरिं, पएसिस्स रन्नो इमं महत्थं जाव पाहुडं उवणेहि, मम पाउग्गं च णं जहाभणियं अवितहमसंदिद्धं वयणं विन्नवेहि त्ति कट्टु विसज्जिए। तए णं से चित्ते सारही जिय-

मिकतया सर्वत्रानाशङ्कनीयत्वात् स तथा, २३ चतुर्दश्याम् अष्टम्याम् 'उद्दिष्टे' इति अमावस्यायां पौर्णमास्यां च २४ प्रतिपूर्णम्–अहोरात्रं यावत् २५ पौषधम्–आहारादिपौषधं २६ सम्यक् अनुपालयन्, २७ पीठम्–आसनं २८ फलकम्–अवष्टम्भार्थम् २९ वसतिः शयनं वा यत्र प्रसारितपादैः सुप्यते ३० संस्तारको लघुतरः ३१ वस्त्रं प्रतीतम् ३२ पतत् भक्तं पानं वा गृह्णातीति ~पतद्ग्रहः–पात्रम् ३३ पादप्रोञ्छनकं–रजोहरणम् ३४ ओषधं प्रतीतम् ३५ भेषजं–पथ्यम् ३६ 'अहापरिग्गहेहिं तवोकम्मेहि...' सुगमम्, क्वचित् पाठः–ˊ'बहूहिं सीलव्वयगुणवेरमणपोसहोववासेहिं अप्पाणं भावेमाणे विहरइ' इति, तत्र शीलव्रतानि–स्थूलप्राणातिपातविरमणादीनि गुणव्रतानि–दिग्व्रतादीनि पौषधोपवासाः–चतुर्दश्यादिपर्वतिथ्युपवासादिः तैरात्मानं भावयन् विहरति–आस्ते।

~ "लिहादित्वाद् 'अच्' प्रत्ययः"–राय० वि०। ˊ– विवरणकारदर्शित पाठान्तरम्।

सत्तुणा रन्ना विसज्जिए समाणे तं महत्थं जाव गिण्हइ जाव जियसत्तुस्स रण्णो अंतियाओ पडिनिक्खमइ सावत्थीनयरीए मज्झंमज्झेणं निग्गच्छइ जेणेव रायमग्गमोगाढे आवासे तेणेव उवागच्छइ तं महत्थं जाव ठवइ, ण्हाए जाव-सरीरे सकोरंट० महया० पायचारविहारेण महया पुरिसवग्गुरापरिक्खित्ते रायमग्गमोगाढाओ आवासाओ निग्गच्छइ सावत्थीनगरीए मज्झंमज्झेणं निग्गच्छति जेणेव कोट्ठए चेइए [1]जेणेव केसी कुमारसमणे तेणेव उवागच्छति केसिकुमारसमणस्स अन्तिए धम्मं सोचा जाव हट्ठ० उट्ठाए जाव एवं वयासी-एवं खलु अहं भंते! जियसत्तुणा रन्ना पएसिस्स रन्नो इमं महत्थं जाव उवणेहि त्ति कट्टु विसज्जिए, तं गच्छामि णं अहं भंते! सेयवियं नगरिं, पासादीया णं भंते! सेयविया णगरी, एवं दरिसणिज्जा णं भंते! सेयविया णगरी, अभिरूवा

सेयवियं समागन्तुं चित्तो विज्ञपयति केसि कुमार-श्रमणम्।

॥२९३॥

[१५२] १×'जेणेव केसी कुमारसमणे तेणेव उवागच्छित्ता केसीकुमारसमणं पंचविहेणं अभिगमेणं अभिगच्छइ, तंजहा-सचित्तानां द्रव्याणां पुष्पताम्बूलादीनां 'विउसरणयाए' इति व्यवसरणेन-व्युत्सर्जनेन, अचित्तानां द्रव्याणाम्-अलङ्कार-वस्त्रादीनामव्यवसरणेन-अव्युत्सर्गेण, क्वचित् 'विउसरणयाए'इति पाठः, तत्र अचित्तानां द्रव्याणां-छत्रादीनां व्युत्सर्जनेन-परिहारेण, उक्तं च-"अवणेइ पंच ककुहाणि रायवरचिंधभूयाणि। छत्तं खग्गो वाणह मउडं तओ चामराओ य"॥ [ ] इति, एका शाटिका यस्मिन् तत् तथा तत् उत्तरासङ्गकरणं च-उत्तरीयस्य न्यासविशेषरूप तेन, चक्षुस्स्पर्शे दर्शने 'अंजलिपग्गहेण' हस्तजोटनेन, मनस एकत्वीकरणेन-एकत्वविधानेन।

× मूल-विवरणयोः पाठभेदः।

णं भंते ! सेयविया नगरी, पडिरूवा णं भंते ! सेतविया नगरी, समोसरह णं भंते ! तुब्भे सेयवियं नगरिं ।

[१५३] तए णं से केसी कुमारसमणे चित्तेणं सारहिणा एवं वुत्ते समाणे चित्तस्स सारहिस्स एयमट्ठं णो आढाइ णो परिजाणाइ तुसिणीए संचिट्ठइ, तए णं से चित्ते सारही केसीकुमारसमणं दोच्चं पि तच्चं पि एवं वयासी–एवं खलु अहं भंते ! जियसत्तुणा रन्ना पएसिस्स रण्णो इमं महत्थं जाव विसज्जिए तं चेव जाव समोसरह णं भंते ! तुब्भे सेयवियं नगरिं । तए णं केसीकुमारसमणे चित्तेण सारहिणा दोच्चं पि तच्चं पि एवं वुत्ते समाणे चित्तं सारहिं एवं वयासी–चित्ता ! से जहानामए वणसंडे सिया किण्हे किण्होभासे जाव पडिरूवे, से णूणं चित्ता ! से वणसंडे बहूणं दुपयचउप्पयमियपसुपक्खीसिरीसिवाणं अभिगमणिज्जे ?, हंता अभिगमणिज्जे, तंसि च णं चित्ता ! वणसंडंसि बहवे भिलुंगा नाम पावसउणा परिवसंति, जे णं तेसिं बहूणं दुपयचउप्पयमियपसुपक्खीसिरीसिवाण ठियाणं चेव मंससोणियं आहारेंति, से णूणं चित्ता ! से वणसंडे तेसि णं बहूणं दुपय–जाव–सिरीसिवाणं अभिगमणिज्जे ? णो ति०, कम्हा णं ? भंते ! सोवसग्गे, एवामेव चित्ता ! तुब्भं पि सेवियाए णयरीए पएसी नामं राया परिवसइ अहम्मिए जाव [पृ० २७४ पं० ५]णो सम्मं करभरवित्तिं पवत्तइ, तं कहं णं अहं चित्ता ! सेयवियाए नगरीए समोसरिस्सामि ?

[१५४] तए णं से चित्ते सारही केसिं कुमारसमणं एवं वयासी–किं णं भंते ! तुब्भं पएसिणा रन्ना कायव्वं ? अत्थि णं भंते ! सेयवियाए नगरीए अन्ने बहवे ईसरतलवर-जाव-सत्थवाहपभिइयो जे णं देवाणुप्पियं वंदिस्संति

एसि नृपस्य अधार्मिकत्वेन केसिकुमारश्रमणः तां विज्ञप्तिं न स्वीकरोति

रायपसेणइयं।

केसिकुमारश्रमणस्य आदराय चित्तेन उद्यानपालकाः प्रेरिताः

॥२९५॥

नमंसिस्संति जाव पज्जुवासिस्संति विउलं असणं पाणं खाइमं साइमं पडिलाभिस्संति, पाडिहारिएण पीढफलगसेज्जासंथारेणं उवनिमंतिस्संति, तए णं से केसी कुमारसमणे चित्तं सारहिं एवं वयासी–अवि या इं चित्ता! जाणिस्सामो।

[१५५] तए णं से चित्ते सारही केसिकुमारसमणं वंदइ नमंसइ केसिस्स कुमारसमणस्स अंतियाओ कोट्ठयाओ चेइयाओ पडिणिक्खमइ जेणेव सावत्थी णगरी जेणेव रायमग्गमोगाढे आवासे तेणेव उवागच्छइ कोडुंबियपुरिसे सद्दावेइ सद्दावित्ता एवं वयासी–खिप्पामेव भो देवाणुप्पिया! चाउग्घंटं आसरहं जुत्तामेव उवट्ठवेह जहा सेयवियाए नगरीए निग्गच्छइ तहेव जाव [पृ० २८० प०५] वसमाणे कुणालाजणवयस्स मज्झंमज्झेणं जेणेव केइयअद्धे जेणेव सेयविया नगरी जेणेव मियवणे उज्जाणे तेणेव उवागच्छइ उज्जाणपालए सद्दावेइ एवं वयासी–जया णं देवाणुप्पिया! पासावच्चिज्जे केसी नाम कुमारसमणे पुव्वाणुपुव्विं चरमाणे गामाणुगामं दूइज्जमाणे इहमागच्छिज्जा तया णं तुब्भे देवाणुप्पिया! केसिकुमारसमणं वंदिज्जाह नमंसिज्जाह वंदित्ता नमंसित्ता अहाप-

[१५४] १ 'पाडिहारिएण पीढफलगसेज्जासंथारगेणं निमंतेहिंति' प्रातिहारिकेण–पुनः समर्पणीयेन। २ 'अवि या इं चित्ता! जाणिस्सामो' इति 'अवि या इं' इति अपि च चित्र! परिभा०वयामो 'लग्नाः' इति भावः, क्वचित् पाठः *'अवि या इं चित्ता! समोसरिस्सामो' इति, तत्र अपि च–एतदपि च परिभाव्य समवसरिष्यामी वर्तमानयोगेन।

०–वयामो नो लग्ना इ–भा० २। * विवरणकारदर्शित पाठान्तरम्।

डिरूवं उग्गहं अणुजाणेज्जाह पडिहारिएणं पीढफलग–जाव उवनिमंतिज्जाह, एयमाणत्तियं खिप्पामेव पच्चप्पिणेज्जाह, तए णं ते उज्जाणपालगा चित्तेणं सारहिणा एवं वुत्ता समाणा हट्ठतुट्ठ–जाव–हियया करयलपरिग्गहियं जाव एवं वयासी–तहत्ति आणाए विणएणं वयणं पडिसुणंति।

[१५६] तए णं चित्ते सारही जेणेव सेयविया णगरी तेणेव उवागच्छइ सेयवियं नगरिं मज्झंमज्झेणं अणुपविसइ जेणेव पएसिस्स रण्णो गिहे जेणेव बाहिरिया उवट्ठाणसाला तेणेव उवागच्छइ तुरए णिगिण्हइ रहं ठवेइ रहाओ पच्चोरूहइ तं महत्थं जाव गेण्हइ जेणेव पएसी राया तेणेव उवागच्छइ पएसिं रायं करयल–जाव वद्धावेत्ता तं महत्थं जाव उवणेइ। तए णं से पएसी राया चित्तस्स सारहिस्स तं महत्थं जाव पडिच्छइ चित्तं सारहिं सक्कारेइ सम्माणेइ पडिविसज्जेइ। तए णं से चित्ते सारही पएसिणा रण्णा विसज्जिए समाणे हट्ठ–जाव–हियए पएसिस्स रन्नो अंतियाओ पडिनिक्खमइ जेणेव चाउग्घंटे आसरहे तेणेव उवागच्छइ चाउग्घंटं आसरहं दुरूहइ सेयवियं नगरिं मज्झंमज्झेणं जेणेव सए गिहे तेणेव उवागच्छइ तुरए णिगिण्हइ रह ठवेइ रहाओ पच्चोरुहइ ण्हाए जाव उप्पिं पासायवरगए फुट्टमाणेहिं[1] मुइंगमत्थएहिं[2] बत्तीसइबद्धएहिं[3] णाडएहिं वरतरु-

[१५६] १ स्फुटद्भिरतिरभसास्फालनात् २ मर्दलमुखपुटैः ३ द्वात्रिंशद्विधैः द्वात्रिंशत्पात्र ४ नाटकैर्वर○तरुणी५संप्रयुक्तैरुपनृत्य–

○ –तरुणयु–पा० ५ ।

णीसंपउत्तेहिं उवणच्चिज्जमाणे उवगाइज्जमाणे उवलालिज्जमाणे इट्ठे सद्दफरिस–जाव [पृ० २८१ पं० ७] विहरइ।

[१५७] तए णं केसी कुमारसमणे अण्णया कयाइ पाडिहारियं पीढफलगसेज्जासंथारगं पच्चप्पिणइ सावत्थीओ नगरीओ कोट्ठगाओ चेइयाओ पडिनिक्खमइ पंचहिं अणगारसएहिं जाव विहरमाणे जेणेव केयइअद्धे जणवए जेणेव सेयविया नगरी जेणेव मियवणे उज्जाणे तेणेव उवागच्छइ अहापडिरूवं उग्गहं उग्गिण्हित्ता संजमेणं तवसा अप्पाणं भावेमाणे विहरति। तए णं सेयवियाए नगरीए सिंघाडग–महया जणसद्दे वा० [पृ० २८४ पं० १] परिसा णिग्गच्छइ तए णं ते उज्जाणपालगा इमीसे कहाए लद्धट्ठा समाणा हट्ठतुट्ठ–जाव–हियया जेणेव केसी कुमारसमणे तेणेव उवागच्छन्ति केसिं कुमारसमणं वंदंति नमंसंति अहापडिरूवं उग्गहं अणुजाणंति पाडिहारिएणं जाव संथारएणं उवनिमंतंति णामं गोयं पुच्छंति ओधारेंति एगंतं अवक्कमंति अन्नमन्नं एवं वयासी–जस्स णं देवाणुप्पिया! चित्ते सारही दंसणं कंखइ[1] दंसणं पत्थेइ[2] दंसणं पीहेइ[3] दंसणं अभिलसइ[4] जस्स णं णामगोयस्स वि सवणयाए हट्ठतुट्ठ–जाव–हियए भवति से णं एस केसी कुमारसमणे पुव्वाणुपुव्विं चरमाणे गामाणुगामं दूइज्जमाणे इहमागए इह संपत्ते इह समोसढे इहेव सेयवियाए णगरीए बहिया मियवणे उज्जाणे अहापडिरूवं जाव विहरइ, तं गच्छामो णं देवाणुप्पिया! चित्तस्स सारहिस्स एयमट्ठं पियं निवे-

मानः ६ तदभिनयपुरस्सरं नर्त्तनात् ७ उपगीयमानः तद्गुणानां गानात्।

[१५७] १ काङ्क्षति २ प्रार्थयते ३ स्पृहयते ४ अभिलषति चत्वारोऽप्येकार्थाः।

केसिकुमारश्रमणं चित्तो वन्दते

एमो पियं से भवउ, अण्णमण्णस्स अंतिए एयमट्ठं पडिसुणेंति जेणेव सेयविया णगरी जेणेव चित्तस्स सारहिस्स गिहे जेणेव चित्तसारही तेणेव उवागच्छंति चित्तं सारहिं करयल–जाव वद्धावेंति एवं वयासी–जस्स णं देवाणुप्पिया! दंसणं कंखंति जाव अभिलसंति जस्स णं णामगोयस्स वि सवणयाए हट्ठ–जाव भवह, से णं अयं केसी कुमारसमणे पुव्वाणुपुव्विं चरमाणे समोसढे जाव विहरइ।

||२९८|| [१५८] तए णं से चित्ते सारही तेसिं उज्जाणपालगाणं अंतिए एयमट्ठं सोचा णिसम्म हट्ठतुट्ठ–जाव आसणाओ अब्भुट्ठेति पायपीढाओ पच्चोरुहइ पाउयाओ ओमुयइ एगसाडियं उत्तरासंगं करेइ, अंजलिमउलियग्गहत्थे केसिकुमारसमणाभिमुहे सत्तट्ठ पयाइं अणुगच्छइ करयलपरिग्गहियं सिरसावत्तं मत्थए अंजलिं कट्टु एवं वयासी–नमोऽत्थु णं अरहंताणं जाव [पृ० २५६ पं० ३] संपत्ताणं, नमोऽत्थु णं केसियस्स कुमारसमणस्स मम धम्मायरियस्स धम्मोवदेसगस्स, वंदामि णं भगवंतं तत्थगयं इहगए पासउ मे त्ति कट्टु वंदइ नमंसइ, ते उज्जाणपालए विउलेणं वत्थगंधमल्लालंकारेणं सक्कारेइ सम्माणेइ विउलं जीवियारिहं पीइदाणं दलयइ पडिविसज्जेइ कोडुंबियपुरिसे सद्दावेइ एवं वयासी–खिप्पामेव भो! देवाणुप्पिया चाउग्घंटं आसरहं जुत्तामेव उवट्ठवेह जाव पच्चप्पिणह। तए णं ते कोडुंबियपुरिसा जाव खिप्पामेव सच्छत्तं सज्झयं जाव उवट्ठवित्ता तमाणत्तियं पच्चप्पिणंति, तए णं से चित्ते सारही कोडुंबियपुरिसाणं अंतिए एयमट्ठं सोचा निसम्म हट्ठतुट्ठ–जाव–हियए ण्हाए कयबलिकम्मे जाव–सरीरे जेणेव चाउग्घंटे जाव दुरूहित्ता सकोरंट० महया भडचडगरेणं तं चेव जाव पज्जुवासइ धम्मकहाए [कंडिका १५० पं० १] जाव।

[१५९] तए णं से चित्ते सारही केसिस्स कुमारसमणस्स अंतिए धम्मं सोच्चा निसम्म हट्ठतुट्ठे तहेव एवं वयासी–एवं खलु भंते! अम्हं पएसी राया अधम्मिए जाव सयस्स वि णं जणवयस्स नो सम्मं करभरवित्तिं पवत्तेइ, तं जइ णं देवाणुप्पिया! पएसिस्स रण्णो धम्ममाइक्खेज्जा बहुगुणतरं खलु होज्जा पएसिस्स रण्णो तेसिं च बहूणं दुपयचउप्पयमियपसुपक्खीसिरीसवाणं, तेसिं च बहूणं समणमाहणभिक्खुयाणं तं जइ णं देवाणुप्पिया! पएसिस्स बहुगुणतरं होज्जा सयस्स वि य णं जणवयस्स।

तए णं केसी कुमारसमणे चित्तं सारहिं एवं वयासी–एवं खलु चउहिं ठाणेहिं चित्ता! जीवा केवलिपन्नत्तं धम्मं नो लभेज्जा सवणयाए, तं०–[१] आरामगयं वा उज्जाणगयं वा समणं वा माहणं वा णो अभिगच्छइ णो वंदइ णो णमंसइ णो सक्कारेइ णो सम्माणेइ णो कल्लाणं मंगलं देवयं चेइयं पज्जुवासेइ नो अट्ठाइं हेऊइं पसिणाइं कारणाइं वागरणाइं पुच्छइ, एएणं ठाणेणं चित्ता! जीवा केवलिपन्नत्तं धम्मं नो लभंति सवणयाए [२] उवस्सयगयं समणं वा तं चेव जाव एतेण वि ठाणेणं चित्ता! जीवा केवलिपन्नत्तं धम्मं नो लभंति सवणयाए [३] गोयरग्गगयं समणं वा माहणं वा जाव नो पज्जुवासइ, णो विउलेणं असणपाणखाइमसाइमेणं पडिलाभइ०

[१५९] १ आरामादिगतं श्रमणादिकं नाभिगच्छतीत्यादिकं प्रथमं कारणम्, २ उपाश्रयगतं नाभिगच्छतीत्यादि द्वितीयम्, प्रातिहारेण पीठफलकादिना नामन्त्रयतीत्यादि तृतीयम्, ३ गोचरगतं ४ न ५ अशनादिना ६ प्रतिलाभयति–इत्यादि ≡चतुर्थम्।

≡ विवरणकारदर्शितं चतुर्थं कारण मूलपाठे तृतीयकारणे एव अन्तर्भावितम् चतुर्थं तु कारणं पृथग् निर्दिष्टमिति मूल–विवरणयोरर्थभेदः।

पएसिनृपं प्रतिबोधयितुं चित्तस्य विज्ञप्तिः

चतुर्भिः कारणैः नरो धर्मं श्रोतुं न लभते लभते च

णो अट्ठाइं जाव पुच्छइ, एएणं ठाणेणं चित्ता! केवलिपन्नत्तं० नो लभइ सवणयाए [४] जत्थ वि णं समणेण वा माहणेण वा सद्धिं अभिसमागच्छइ तत्थ वि णं हत्थेण वा वत्थेण वा छत्तेण वा अप्पाणं आवरित्ता चिट्ठइ, नो अट्ठाइं जाव पुच्छइ, एएण वि ठाणेणं चित्ता! जीवे केवलिपन्नत्तं धम्मं णो लभइ सवणयाए–एएहिं च णं चित्ता! चउहिं ठाणेहिं जीवे णो लभइ केवलिपन्नत्तं धम्मं सवणयाए। चउहिं ठाणेहिं चित्ता! जीवे केवलिपन्नत्तं धम्मं लभइ सवणयाए, तं०–[१] आरामगयं वा उज्जाणगयं वा समणं वा माहणं वा वंदइ नमंसइ जाव पज्जुवासइ अट्ठाइं जाव पुच्छइ, एएण वि जाव लभइ सवणयाए, एवं [२] उवस्सयगयं [३] गोयरग्गगयं समणं वा जाव पज्जुवासइ विउलेणं जाव पडिलाभेइ अट्ठाइं जाव पुच्छइ, एएण वि० [४] जत्थ वि य णं समणेण वा अभिसमागच्छइ तत्थवि य णं णो हत्थेण वा जाव आवरेत्ताणं चिट्ठइ, एएण वि ठाणेणं चित्ता! जीवे केवलिपन्नत्तं धम्मं लभइ सवणयाए तुज्झं च णं चित्ता! पएसी राया आरामगयं वा तं चेव सव्वं भाणियव्वं आइल्लएणं गमएणं

७एतैरेव चतुर्भिः स्थानैः केवलिप्रज्ञप्तं धर्मं लभते श्रवणतया–श्रवणेनेति भावः, ८यत्रापि श्रमणः–साधुः माहनः–परमगीतार्थः श्रावकोऽभ्यागच्छति तत्रापि हस्तेन वस्त्राञ्चलेन छत्रेण वाऽऽत्मानमावृत्य न तिष्ठति इदं ≈प्रथमं कारणम्, एवं शेषाण्यपि कारणानि प्रत्येकमेवं भावनीयानि, ९ 'तुज्झं च णं चित्ता! पएसी राया आरामगतं वा तं चेव सव्वं भाणियव्वं' 'आइल्लगमएणं' ति प्रथमगमकेन, तद्यथा–युष्माकं प्रदेशी राजा हे चित्र! आरामादिगतं न वन्दते, यत्रापि च श्रमणोऽभ्यागच्छति तत्रापि हस्तादिनाऽऽत्मानमावृत्य

≈ मूलपाठे एतत् चतुर्थं कारणम्।

जाव अप्पाणं आवरेत्ता चिट्ठइ, तं कहं णं चित्ता! पयसिस्स रन्नो धम्ममाइक्खिस्सामो ?

[१६०] तए णं से चित्ते सारही केसिकुमारसमणं एवं वयासी–एवं खलु भंते! अण्णया कयाइं कंबोएहिं चत्तारि आसा उवणयं उवणीया ते मए पएसिस्स रण्णो अन्नया चेव उवणीया, तं एएणं खलु भंते! कारणेणं अहं पएसिं रायं देवाणुप्पियाणं अंतिए हव्वमाणेस्सामो, तं मा णं देवाणुप्पिया! तुब्भे पएसिस्स रन्नो धम्ममाइक्खमाणा गिलाएज्जाह, अगिलाए णं भंते! तुब्भे पएसिस्स रण्णो धम्ममाइक्खेज्जाह, छंदेणं भंते! तुब्भे पएसिस्स रण्णो धम्ममाइक्खेज्जाह, तए णं से केसी कुमारसमणे चित्तं सारहिं एवं वयासी–अवि या इं चित्ता! जाणिस्सामो। तए णं से चित्ते सारही केसिं कुमारसमणं वंदइ नमंसइ जेणेव चाउग्घंटे आसरहे तेणेव उवागच्छइ चाउग्घंटं आसरहं दुरूहइ जामेव दिसिं पाउब्भूए तामेव दिसिं पडिगए।

[१६१] तए णं से चित्ते सारही कल्लं पाउप्पभायाए रयणीए फुल्लुप्पलकमलकोमलुम्मिलियंमि अहापंडुरे पभाए कयनियमावस्सए सहस्सरस्सिम्मि दिणयरे तेयसा जलंते साओ गिहाओ णिग्गच्छइ जेणेव पएसिस्स रन्नो गिहे जेणेव पएसी राया तेणेव उवागच्छइ पएसिं रायं करयल–जाव ति कट्टु जएणं विजएणं वद्धावेइ, एवं वयासी–एवं खलु देवाणुप्पियाणं कंबोएहिं चत्तारि आसा उवणयं उवणीया, ते य मए देवाणुप्पियाणं

कम्बोजदेशीयअश्वचेष्टापरीक्षणमिषात् चित्तो राजान पएसिं केसिकुमारनिकटंसमानीतवान्

॥३०१॥

तिष्ठति, 'तं कहं णं चित्ता!' इत्यादि सुगमम्।

अण्णया चेव विणइया। तं एह णं सामी! ते आसे चिट्ठं पासह, तए णं से पएसी राया चित्तं सारहिं एवं वयासी-गच्छाहि णं तुमं चित्ता! तेहिं चेव चउहिं आसेहिं आसरहं जुत्तामेव उवट्ठवेहि जाव पच्चप्पिणाहि, तए णं से चित्ते सारही पएसिणा रन्ना एवं वुत्ते समाणे हट्ठतुट्ठ-जाव-हियए उवट्ठवेइ एयमाणत्तियं पच्चप्पिणइ। तए णं से पएसी राया चित्तस्स सारहिस्स अंतिए एयमट्ठं सोच्चा णिसम्म हट्ठतुट्ठ-जाव अप्पमहग्घाभरणालंकियसरीरे साओ गिहाओ निग्गच्छइ जेणामेव चाउग्घंटे आसरहे तेणेव उवागच्छइ चाउग्घंटं आसरहं दुरूहइ, सेयवियाए नगरीए मज्झंमज्झेणं णिग्गच्छइ, तए णं से चित्ते सारही तं रहं णेगाइं जोयणाइं उब्भामेइ, तए णं से पएसी राया उण्हेण य तण्हाए य रहवाएणं परिकिलंते समाणे चित्तं सारहिं एवं वयासी-चित्ता! परिकिलंते मे सरीरे परावत्तेहि रहं, तए णं से चित्ते सारही रहं परावत्तेइ, जेणेव मियवणे उज्जाणे तेणेव उवागच्छइ, पएसिं रायं एवं वयासी-एस णं सामी! मियवणे उज्जाणे एत्थ णं आसाणं समं किलामं सम्मं [3]अवणेमो, तए णं से पएसी राया चित्तं सारहिं एवं वदासी-एवं होउ चित्ता!।

[१६२] तए णं से चित्ते सारही जेणेव मियवणे उज्जाणे जेणेव केसिस्स कुमारसमणस्स अदूरसामंते तेणेव उवागच्छइ तुरए णिगिण्हेइ रहं ठवेइ रहाओ पच्चोरूहइ तुरए मोएति पएसिं रायं एवं वयासी-एह णं सामी!

[१६१] १ अश्वानां समं-श्रमम्-खेदं २ कलमं-ग्लानिं सम्यक् ३ अपनयामः-स्फेटयामः।

आसाणं समं किलामं सम्मं अवणेमो, तए णं से पएसी राया रहाओ पच्चोरुहइ, चित्तेण सारहिणा सद्धिं आसाणं समं किलामं सम्मं अवणेमाणे पासइ जत्थ केसीकुमारसमणं महइमहालियाए महच्चपरिसाए मज्झगए महया सद्देणं धम्ममाइक्खमाणं, पासइत्ता इमेयारूवे अज्झत्थिए जाव समुप्पज्जित्था–जड्डा[1] खलु भो! जड्डं पज्जुवासंति, मुंडा खलु भो! मुंडं पज्जुवासंति, मूढा[2] खलु भो! मूढं पज्जुवासंति, अपंडिया[3] खलु भो! अपंडियं पज्जुवासंति निव्विण्णाणा[4] खलु भो! निव्विण्णाणं पज्जुवासंति, से केस णं एस पुरिसे जड्डे मुंडे मूढे अपंडिए निव्विण्णाणे सिरीए[5] हिरीए[6] उवगए[7] उत्तप्पसरीरे[8], एस[9] णं पुरिसे किमाहारमाहारेइ? किं परिणामेइ[10]? किं खाइ[11] किं पियइ किं दलेइ[12] किं पयच्छइ[13] जं[14] णं एसे[15] एमहालियाए मणुस्सपरिसाए मज्झगए महया सद्देणं बूयाए? एवं

> केसिकुमारं दृष्ट्वा पएसी चिन्तयति एषः कः मूढः
>
> ॥२०३॥

[१६२] १ जड– २ मूढ– ३ अपण्डित– ४ निर्विज्ञानशब्दा एकार्थिका मौर्ख्यप्रकर्षप्रतिपादनार्थं चोक्ताः, ५ श्रिया–शोभया ६ ह्रिया–लज्जया ७ उपगतो–युक्तः, परमपरिषदादिशोभया गुप्तशरीरचेष्टाकतया चोपलम्भात्, ८ उत्तप्तशरीरो–देदीप्यमानशरीरः, कण्डूत्यादि-अत्रैव कारणं विमृशति–९ एष किमाहारयति–किमाहारं गृह्णाति? न खलु कदन्नभक्षणे एवंरूपायाः शरीरकान्तेरुपपत्तिः, न खलु शोभनाहाराभ्यवहारेऽपि मन्दा-सद्भावतो विच्छायत्वप्रसक्तेः, तथा किं १० परिणामयति–कीदृशोऽस्य गृहीताहारपरिणामः? न खलु शोभनाहाराभ्यवहारेऽपि मन्दा-ग्नित्वेन यथारूपा कान्तिर्भवति, एतदेव सविशेषमाचष्टे–११ किं खाइ किं पियइ? तथा किं १२ दलयति–ददाति, एतदेव व्याचष्टे–किं १३ प्रयच्छति? १४ येन एतावान् लोकः पर्युपास्ते–एतदेवाह–'जं णं एस १५ एमहालियाए माणुसपरिसाए महया महया सद्देण

रायपसेण इयं ।

॥३०४॥

संपेहेइ[16] चित्तं सारहिं एवं वयासी–चित्ता[17]! जड्डा खलु भो! जड्डुं पज्जुवासंति जाव बूयाइ, [18]सीए वि णं [19]उज्जाणभूमीए नो संचाएं[20]मि सम्मं[21] पकामं [22]पवियरित्तए?।

चित्तसारथिः पएसिनृपं केसिकुमारं प्रत्यभिज्ञापयति

[१६३] तए णं से चित्ते सारही पएसीरायं एवं वयासी–एस णं सामी! पासावच्चिज्जे केसी नामं कुमारसमणे जाइसंपण्णे जाव चउनाणोवगए अधो[1]ऽवहिए अ[2]ण्णजीविए। तए णं से पएसी राया चित्तं सारहिं एवं वयासी–आहोहिअं णं वयामि०, अभि- आहोहियं णं वदासि चित्ता! अण्णजीवियत्तं णं वदासि चित्ता!? हंता, सामी! आहोहिअं णं वयामि०, अभिगमणिज्जे णं चित्ता! एस पुरिसे? हंता! सामी! अभिगमणिज्जे, अभिगच्छामो णं चित्ता! अम्हे एयं पुरिसं? हंता सामी! अभिगच्छामो।

[१६४] तए णं से पएसी राया चित्तेण सारहिणा सद्धिं जेणेव केसीकुमारसमणे तेणेव उवागच्छइ केसिस्स कुमारसमणस्स अदूरसामंते ठिच्चा एवं वयासी–तुब्भे णं भंते! आहोहिया अण्णजीविया?, तए णं केसी

बूयाए' इति ब्रूते, यस्मिंश्चेत्थं चेष्टमाने १८ स्वकीयायामपि १९ उद्यानभूमौ न २० संचाएमो–न शक्नुमः २१ सम्यक्–प्रकामं स्वेच्छया २२ प्रविचरितुम्, एवं १६ ःसंप्रेक्षते–स्वचेतसि परिभावयति, संप्रेक्ष्य चित्रं सारथिमेवमवादीत्–१७ 'चित्ता' इत्यादि।

[१६३] १ अधोऽवधिकः–परमावधेरधोवर्त्त्यवधियुक्तः, २ अन्नेन जीवितं–प्राणधारणं यस्यासावन्नजीवितः।

– अत्र मूले विवरणे च वाक्यस्य क्रमभेदः।

कुमारसमणे पएसिं रायं एवं वदासी–पएसी! से जहा णामए [1]अंकवाणिया इ= वा [2]संखवाणिया इ वा दंतवाणिया इ वा [3]सुंकं [4]भंसिउंकामा [5]णो सम्मं पंथं [6]पुच्छइ, [7]एवामेव पएसी तुब्भे वि विणयं भंसेउकामो नो सम्मं पुच्छसि, से णूणं तव पएसी ममं पासित्ता अयमेयारूवे अज्झत्थिए जाव समुप्पज्जित्था–जड्डा खलु भो! जड्डं पज्जुवासंति, जाव पवियरित्तए, से णूणं पएसी अट्ठे समत्थे? हंता! अत्थि।

ज्ञानप्ररूपणायां नन्दिसूत्रस्य निर्देशः

[१६५] तए णं से पएसी राया केसिं कुमारसमणं एवं वदासी–से केणट्ठेणं भंते! तुज्झं नाणे वा दंसणे वा जेणं तुज्झे मम एयारूवं अज्झत्थियं जाव संकप्पं समुप्पण्णं जाणह पासह? तए णं से केसीकुमारसमणे पएसिं रायं एवं वयासी–एवं खलु पएसी अम्हं समणाणं निग्गंथाणं पंचविहे नाणे पण्णत्ते, तंजहा–आभिणिबोहियनाणे सुयनाणे ओहिणाणे मणपज्जवणाणे केवलणाणे। से किं तं आभिणिबोहियनाणे? आभिणिबोहियनाणे चउव्विहे पण्णत्ते, तंजहा–उग्गहो[1] ईहा[2] अवाए[3] धारणा[4]। से किं[5] तं उग्गहे? उग्गहे दुविहे पण्णत्ते, जहा[6] नंदीए ॥३०५॥

[१६४] ते यथा नाम १ अङ्करत्नवणिजः २ शङ्खवणिजो मणिवणिजो वा ३ शुल्कं–राजदेयं भागं ४ भ्रंशयितुकामाः शङ्कातो ५ न सम्यग् ६ पन्थानं पृच्छति, ७ 'एवमेव तुमं' इत्यादिदार्ष्टान्तिकयोजना सुगमा।

[१६५] १ 'उग्गहो' इत्यादि, तत्र १ अविवक्षिताशेषविशेषस्य सामान्यरूपस्यानिर्देश्यस्य रूपादेरवग्रहणमवग्रहः २ तदर्थगता–सद्भूतविशेषालोचनम् ईहा ३ प्रक्रान्तार्थविशेषनिश्चयोऽपायः ४ अवगतार्थविशेषधारणं धारणा, ५ 'से किं तं उग्गहे' इत्यादि, ६ यथा

= "'इति' वाक्यालंकारे"–राय० वि०।

जाव से तं धारणा, से तं आभिणिबोहियणाणे। से किं तं सुयनाणे? सुयनाणे दुविहे पण्णत्ते, तंजहा–अंगपविट्ठं च अंगबाहिरं च, सव्वं भाणियव्वं जाव दिट्ठिवाओ। ओहिणाणं भवपच्चइयं खओवसमियं जहा णंदीए [नन्दिसू० पृ० १६८ पं० ४–] मणपज्जवनाणे दुविहे पण्णत्ते, तंजहा–उज्जुमई य विउलमई य, तहेव केवलनाणं सव्वं भाणियव्वं। तत्थ णं जे से आभिणिबोहियनाणे से णं ममं अत्थि, तत्थ णं जे से सुयणाणे से वि य ममं अत्थि, तत्थ णं जे से ओहिणाणे से वि य ममं अत्थि, तत्थ णं जे से मणपज्जवनाणे से वि य ममं अत्थि, तत्थ णं जे से केवलनाणे से णं ममं नत्थि, से णं अरिहंताणं भगवंताणं, इच्चेएणं पएसी अहं तव चउव्विहेणं छउमत्थेणं णाणेणं इमेयारूवं अज्झत्थियं जाव समुप्पण्णं जाणामि पासामि।

[१६६] तए णं से पएसी राया केसिं कुमारसमणं एवं वयासी–अह णं भंते! इहं उवविसामि? पएसी! एसाए उज्जाणभूमीए तुमंसि चेव जाणए, तए णं से पएसी राया चित्तेणं सारहिणा सद्धिं केसिस्स कुमारसमणस्स अदूरसामंते उवविसइ, केसिकुमारसमणं एवं वदासी–तुब्भे णं भंते! समणाणं णिग्गंथाणं एसा सण्णा[1] एसा[2] पइण्णा एसा[3] दिट्ठी

नन्दौ [नन्दिसूत्र पृ० १६८ पं० ४–] ज्ञानप्ररूपणा कृता तथाऽत्रापि परिपूर्णा कर्त्तव्या, ग्रन्थगौरवभयाच्च न लिख्यते, केवलं तट्टीकैवावलोकनीया, तस्यां सप्रपञ्चमस्माभिरभिधानात्।

[१६६] १ संज्ञानं– संज्ञा सम्यग्ज्ञानमित्यर्थः २ एषैव प्रतिज्ञा निश्चयरूपोऽभ्युपगमः ३ एषा–दृष्टिः दर्शनम् स्वतत्त्वमिति

ऍसा रुई ऍस हेऊ एस उवएसे ऍस संकप्पे ऍसा तुला ऍस माणे ऍस पमाणे ऍस समोसरणे जहा अण्णो जीवो अण्णं सरीरं, णो तं जीवो तं सरीरं ? तए णं केसी कुमारसमणे पएसिं रायं एवं वयासी–पएसी ! अम्हं समणाणं णिग्गंथाणं एसा सण्णा जाव एस समोसरणे जहा अण्णो जीवो अण्णं सरीरं, णो तं जीवो णो तं सरीरं।

'अन्यो जीवः अन्यत् शरीरम्' इति केशिमतम्.

[१६७] तए णं से पएसी राया केसिं कुमारसमणं एवं वयासी–+जति णं भंते ! तुब्भं समणाणं णिग्गंथाणं एसा सण्णा जाव समोसरणे जहा अण्णो जीवो अण्णं सरीरं णो तं जीवो तं सरीरं, एवं खलु ममं अज्जए होत्था, इहेव जंबूदीवे दीवे सेयवियाए णगरीए अधम्मिए जाव सगस्स वि य णं जणवयस्स नो सम्मं करभरवित्तिं पवत्तेति, से णं तुब्भं वत्तव्वयाए सुबहुं पावं कम्मं कलिकलुसं समज्जिणित्ता कालमासे कालं किच्चा अण्णयरेसु ॥३०७॥

भावः, ४ एषा रुचिः–परमश्रद्धानुगतोऽभिप्रायः, ५ एष हेतुः समस्ताया अपि दर्शनवक्तव्यतायाः–एतन्मूलं युष्मद्दर्शनमिति भावः, ६ एष संकल्पः–एष सदैव भवतां तात्त्विकोऽध्यवसायः, ७ एषा तुला यथा तुलायां तोलितं सम्यगित्यवधार्यते तथा अनेनाप्यभ्युपगमेनाङ्गीकृतेन च यद्विचार्यमाणं संगतिमुपैति तत् सम्यगित्यवधार्यते न शेषमिति तुलेव तुला तया, ८ एवमेतन्मानमित्यपि भावनीयं, नवरं मानं–प्रस्थादि, ९ एतत् प्रमाणं, यथा प्रमाणं प्रत्यक्षाद्यविसंवादि एवमेषोऽप्यभ्युपगमोऽविसंवादीति भावः, १० एतत् समवसरणं–बहूनामेकत्र मीलनं, सर्वेषामपि तत्त्वानामस्मिन्नभ्युपगमे ○ संतुलनमिति भावः इत्यादि।

+ 'यदि' शब्दस्य 'जइ' वा 'जदि' इति प्राकृतम्–उच्चारणम्, 'जति' इति तु पैशाचीभाषोच्चारणम् अथवा पृष्ठ ८८ गतं × टिप्पण द्रष्टव्यम्।

○ संतुल–भा० १–२।

नरएसु णेरइयत्ताए उववण्णे। तस्स णं अज्जगस्स णं अहं णत्तुए होत्था इट्ठे[१] कंते[२] पिए[३] मणुण्णे[४] मणामे[५] थेज्जे[६] वेसासिए[७] संमए[८] बहुमए[९] अणुमए[×] रयणकरंडगसमाणे[११] जीविउस्सविए[१२] हिययणंदिजणणे[१३] उंबरपुप्फं[१४] पिव दुल्लभे सवणयाए, किमंग पुण पासणयाए? तं जति णं से अज्जए ममं आगंतुं वएज्जा–एवं खलु नत्तुया! अहं तव अज्जए होत्था, इहेव सेयवियाए नयरीए अधम्मिए जाव नो सम्मं करभरवित्तिं पवत्तेमि, तए णं अहं सुबहुं पावं कम्मं कलिकलुसं समज्जिणित्ता नरएसु उववण्णे तं मा णं नत्तुया! तुमं पि भवाहि अधम्मिए जाव नो सम्मं करभरवित्तिं पवत्तेहि, मा णं तुमं पि एवं चेव सुबहुं पावकम्मं जाव उववज्जिहिसि, तं जइ णं से अज्जए ममं आगंतु वएज्जा तो णं अहं सद्दहेज्जा पत्तिएज्जा रोएज्जा जहा अन्नो जीवो अन्नं सरीरं णो तं जीवो तं सरीरं, जम्हा णं से अज्जए ममं आगंतुं नो एवं वयासी तम्हा सुपइट्ठिया मम पइन्ना समणाउसो! जहा तज्जीवो तं सरीरं।

पएसिनृपस्य पितामहः पापित्वेन श्रमणमतेन नरकं गतोऽपि स्वकीयं प्रियं नप्तृकं पापस्याकरणाय नरकादागत्य न संबोधयति अतः 'स जीवः तदेव शरीरम्' इति पएसिमतम्

[१६७] १ इष्टः इच्छाविषयत्वात् २ कान्तः कमनीयतमत्वात् ३ प्रियः प्रेमनिबन्धनत्वात् ४ मनोज्ञो मनसा सम्यगुपादेयतया ज्ञातत्वात् ५ मनसा अम्यते–गम्यते इति × मनोऽमः ६ स्थैर्यगुणयोगात् स्थैर्यो ७विश्वासको विश्वासस्थानं ८ संमतः कार्यकरणेन ९ बहुमतो बहुत्वेन–अनल्पतया मतो बहुमतः १० कार्यविघातस्य पश्चादपि मतो ≈ बहुमतः ११ रत्नकरण्डसमानो रत्नकरण्डवदेकान्तेनोपादेय इति भावः, १२ जीवितस्योत्सवः इव जीवितोत्सवः स एव जीवितोत्सविकः, १३ हृदयनन्दिजननः, १४ उदुम्बरपुष्पं

× पृ० ८५ पं० ८ तथा टिप्पण। ≈ सर्वेष्वपि आदर्शेषु 'बहुमत' पदम् तथापि इद विवरणं यदि 'अनुमत' शब्दस्य तदा अत्र 'अनुमत' इति समुचितम्। 'बहुमत' शब्दस्य विवरण पुरैव आगतम् अत एतद् विवरणम् 'अनुमत' शब्दस्य प्रतिभाति।

[१६८] तए णं केसी कुमारसमणे पएसिं रायं एवं वदासी–अत्थि णं पएसी! तव सूरियकंता णामं देवी? हंता अत्थि, जइ णं तुमं पएसी तं सूरियकंतं देविं ण्हायं कयबलिकम्मं कयकोउयमंगलपायच्छित्तं सव्वालंकारविभूसियं केणइ पुरिसेणं ण्हाएणं जाव सव्वालंकारभूसिएणं सद्धिं इट्ठे सद्दफरिसरसरूवगंधे पंचविहे माणुस्सते कामभोगे पच्चणुब्भवमाणिं पासिज्जसि तस्स णं तुमं पएसी! पुरिसस्स कं डंडं निव्वत्तेज्जासि? अहं णं भंते! तं पुरिसं हत्थच्छिण्णगं वा सूलाइगं[1] वा सूलभिन्नगं[2] वा पायछिन्नगं वा एगाहच्चं[3] कूडाहच्चं[4] जीवियाओ ववरोवएज्जा। अह णं पएसी से पुरिसे तुमं एवं वदेज्जा–मा ताव मे सामी! मुहुत्तगं हत्थच्छिण्णगं वा जाव जीवियाओ ववरोवेहि जाव ताव अहं मित्तणाइणियगसयणसंबंधिपरिजणं एवं वयामि–एवं खलु देवाणुप्पिया! पावाइं कम्माइं समायरेत्ता इमेयारूवं आवइं पाविज्जामि, तं मा णं देवाणुप्पिया! तुब्भे वि केइ पावाइं कम्माइं समायरह, मा णं से वि एवं चेव आवइं पाविज्जिहिह जहा णं अहं, तस्स णं तुमं पएसी! पुरिसस्स खणमवि एयमट्ठं पडिसुणेज्जासि? णो तिणट्ठे समट्ठे, कम्हा णं? जम्हा णं भंते! अवराही णं से पुरिसे, एवामेव पएसी!

यथा न कोऽपि स्वापराधिनम् अदण्डयित्वैव विसृजति तथा नरकपाला नारकं न विसृजन्ति अतो नारकानागमनात् न श्रेयान् अनात्मवादः ॥३०९॥

ह्यलभ्यं भवति ततस्तेनोपमानम्।

[१६८] १ शूलायामतिशयेन गतं शूलातिगं, एतदेव व्याचष्टे–२-शूलायां भिन्नः शूलाभिन्नः स एव शूलाभिन्नकस्तं, तथा३ एकं घातम् एकेन घातेनेति भावः, ४ कूटाघातम्–कूटपतितस्य मृगस्येव घातेनेति भावः।

- शूलयाभि–पा० ४–५।

तव वि अज्जए होत्था इहेव सेयवियाए णयरीए अधम्मिए जाव णो सम्मं करभरवित्तिं पवत्तेइ, से णं अम्हं वत्तव्वयाए सुबहुं जाव उववन्नो, तस्स णं अज्जगस्स तुमं णत्तुए होत्था इट्ठे कंते जाव पासणयाए, से णं इच्छइ माणुसं लोगं हव्वमागच्छित्तए णो चेव णं संचाएति हव्वमागच्छित्तए, चऊहिं ठाणेहिं पएसी अहुणोववण्णए नरएसु नेरइए इच्छेइ माणुसं लोगं हव्वमागच्छित्तए नो चेव णं संचाएइ–१ अहुणोववन्नए नरएसु नेरइए से णं तत्थ म[5]हब्भूयं वेयणं वेदेमाणे इच्छेज्जा माणुस्सं लोगं हव्वं०णो चेव णं संचाएइ। २ अहुणोववन्नए नरएसु नेरइए न[6]रयपालेहिं भुज्जो भुज्जो समहिट्ठिज्जमाणे इच्छइ माणुसं लोगं हव्वमागच्छित्तए नो चेव णं संचाएइ। ३ अहुणोववन्नए नरएसु नेरइए निरयवेयणि[7]ज्जंसि कम्मंसि अक्खीणंसि अवेइयंसि अनिज्जिन्नंसि इच्छइ माणुसं लोगं० नो चेव णं संचाएइ। ४ एवं णेरइए नि[8]रयाउयंसि कम्मंसि अक्खीणंसि अवेइयंसि अणिज्जिन्नंसि इच्छइ माणुसं लोगं० नो चेव णं संचाएइ हव्वमागच्छित्तए। इच्चेएहिं चऊहिं ठाणेहिं पएसी अहुणोववन्ने नरएसु नेरइए इच्छइ माणुसं लोगं० णो चेव णं संचाएइ। तं सद्दहाहि णं पएसी! जहा–अन्नो जीवो अन्नं सरीरं, नो तं जीवो तं सरीरं १।

[१६९] तए णं से पएसी राया केसिं कुमारसमणं एवं वदासी–अत्थि णं भंते! एसा पण्णा उवमा, इमेण पुण कारणेण नो उवागच्छइ, एवं खलु भंते! मम अज्जिया होत्था इहेव सेयवियाए नगरीए धम्मिया जाव वित्तिं कप्पे-

तत्र [5] सुमहद्भूतनरकवेदनावेदनमेकं कारणम्। द्वितीयम्–[6] परमाधार्मिकैः कदर्थनम्। तृतीयम्–[7] नरकवेदनीयकर्माक्षयत उद्विजनम्। चतुर्थम्–[8] नरकायुष्काक्षयत उद्विजनम्।

माणी समणोवासिया अभिगयजीवा० [पृ०२९०पं०६]सव्वो वण्णओ जाव अप्पाणं भावेमाणी विहरइ, सा णं तुज्झं वत्तव्वयाए सुबहुं पुन्नोवचयं समज्जिणित्ता कालमासे कालं किच्चा अण्णयरेसु देवलोएसु देवत्ताए उववण्णा, तीसे णं अज्जियाए अहं नत्तुए होत्था इट्ठे कंते [पृ० ३०८ पं० १] जाव पासणयाए, तं जइ णं सा अज्जिया मम आगंतुं एवं वएज्जा–एवं खलु नत्तुया! अहं तव अज्जिया होत्था, इहेव सेयवियाए नयरीए धम्मिया जाव वित्तिं कप्पेमाणी समणोवासिया जाव विहरामि। तए णं अहं सुबहुं पुण्णोवचयं समज्जिणित्ता जाव देवलोएसु उववण्णा, तं तुमं पि णत्तुया! भवाहि धम्मिए जाव विहराहि, तए णं तुमं पि एयं चेव सुबहुं पुण्णोवचयं सम० जाव उववज्जिहिसि, तं जइ णं अज्जिया मम आगंतुं एवं वएज्जा तो णं अहं सद्दहेज्जा पत्तिएज्जा रोइज्जा जहा–अण्णो जीवो अण्णं सरीरं, णो तं जीवो तं सरीरं। जम्हा सा अज्जिया ममं आगंतुं णो एवं वदासी, तम्हा सुपइट्ठिया मे पइण्णा जहा–तं जीवो तं सरीरं, नो अन्नो जीवो अन्नं सरीरं।

स्वर्गगताऽपि मातामही कथयितुं नागता अतो न आत्मा शरीरव्यतिरिक्तः ॥३११॥

[१७०] तए णं केसी कुमारसमणे पएसीरायं एवं वयासी–जति णं तुमं पएसी! ण्हायं कयबलिकम्मं कयकोउयमंगलपायच्छित्तं उल्लपडसाडगं भिंगारकडुच्छुयहत्थगयं देवकुलमणुपविसमाणं केइ य पुरिसे वच्चघरंसि ठिच्चा एवं वदेज्जा–×एह ताव सामी! इह मुहुत्तगं आसयह वा चिट्ठह वा निसीयह वा तुयट्टह वा, तस्स णं तुमं पएसी! पुरिसस्स खणमवि एयमट्ठं पडिसुणिज्जासि? णो ति०। कम्हा णं? भंते! असुइ असुइ सामंतो, एवामेव

× एहि–भा० १।

पएसी! तव वि अज्जिया होत्था इहेव सेयवियाए णयरीए धम्मिया जाव विहरति, सा णं अम्हं वत्तव्वयाए सुबहुं जाव उववन्ना, तीसे णं अज्जियाए तुमं णत्तुए होत्था इट्ठे० [पृ० ३०८ पं० १] किमंग पुण पासणयाए ? सा णं इच्छइ माणुसं लोगं हव्वमागच्छित्तए, णो चेव णं संचाएइ हव्वमागच्छित्तए। चंऊहिं ठाणेहिं पएसी! अहुणोववण्णए देवे देवलोएसु इच्छेज्जा माणुसं लोगं० णो चेव णं संचाएइ–१ अहुणोववण्णे देवे देवलोएसु दिव्वेहिं काममभोगेहिं मुच्छिए गिद्धे गढिए अज्झोववण्णे से णं माणुसे भोगे नो आढाति नो परिजाणाति, से णं इच्छिज्ज माणुसं नो चेव णं संचाएति। २ अहुणोववण्णए देवे देवलोएसु दिव्वेहिं कामभोगेहिं मुच्छिए जाव अज्झोववण्णे, तस्स णं माणुस्से पेम्मे वोच्छिन्नए भवति दिव्वे पिम्मे संकंते भवति, से णं इच्छेज्जा माणुस० णो चेव णं संचाएइ। २ अहुणोववण्णे देवे दिव्वेहिं कामभोगेहिं मुच्छिए जाव अज्झोववण्णे, तस्स णं एवं भवइ–इयाणिं गच्छं मुहुत्तं जाव इह गच्छं अप्पाउया णरा कालधम्मुणा संजुत्ता भवंति, से णं इच्छेज्जा माणुस्सं० णो चेव णं संचाएइ। ४ अहुणोववण्णे देवे दिव्वेहिं जाव अज्झोववण्णे, तस्स माणुस्सए उराले दुग्गंधे पडिकूले पडिलोमे भवइ, उड्ढं पि य णं चत्तारि[2] पंच जोअणसए असुभे माणुस्सए गंधे अभिसमागच्छति, से णं इच्छेज्जा माणुसं०

स्वर्गीयो देवः स्वभोगासक्त्यादिकारणेन नात्र आगन्तुं शक्नोति अतस्तस्यानागमनादपि न श्रेयान् अनात्मवादः

[१७०] १ 'चऊहिं ठाणेहिं अहुणोववण्णए देवे' इत्यादि सुगमम्। नवरम्–२'चत्तारि पंच वा जोअणसए असुभे गंधे –हवइ' इति। इह यद्यपि नवभ्यो योजनेभ्यः परतो गन्धपुद्गला न घ्राणेन्द्रियग्रहणयोग्या भवन्ति, पुद्गलानां मन्दपरिणामभावात् घ्राणेन्द्रियस्य

– अत्र मूले 'अभिसमागच्छति' इति क्रिया।

णो चेव णं संचाइज्जा। इच्चेएहिं ठाणेहिं पएसी! अहुणोववण्णे देवे देवलोएसु इच्छेज्ज माणुसं लोगं हव्वमागच्छित्तए णो चेव णं संचाएइ हव्वमागच्छित्तए तं सद्दहाहि णं तुमं पएसी! जहा–अन्नो जीवो अन्नं सरीरं, नो तं जीवो तं सरीरं २।

[१७१] तए णं से पएसी राया केसिं कुमारसमणं एवं वयासी–अत्थि[1] णं भंते[2]! एस पण्णा उवमा[3], इमेणं पुण मे कारणेणं णो उवागच्छति, एवं खलु भंते! अहं अन्नया कयाइं बाहिरियाए उवट्ठाणसालाए अणेगगण[4]*-णायक–दंडणायग[5]–राय[6]–ईसर–तलवर–माडंबिय–कोडुंबिय–इब्भ–सेट्ठि–सेणावइ–सत्थवाह–मंति–महामंति–

च तथाविधशक्त्यभावात्, तथापि ते अत्युत्कटगन्धपरिणामा इति नवसु योजनेषु मध्ये अन्यान् पुद्गलान् उत्कटगन्धपरिणामेन परिणामयन्ति, तेऽपि ऊर्ध्वं गच्छन्तः परतोऽन्यान् तेऽप्यन्यानिति चत्वारि पञ्च वा योजनशतानि यावद् गन्धः, केवलमूर्ध्वमूर्ध्वं मन्दपरिणामो वेदितव्यः, तत्र यदा मनुष्यलोके बहूनि गोमृतककलेवरादीनि तदा पञ्चयोजनशतानि यावद् गन्धः, शेषकालं चत्वारि तत उक्तम्–'चत्वारि पञ्च' इति।

[१७१] १ अस्ति २ भदन्त! ३ प्रज्ञातो–बुद्धिविशेषादुपमा। ४ गणनायकाः–प्रकृतिमहत्तराः ५ दण्डनायकाः–तन्त्रपाला ६ राज–ईश्वर–तलवर–माडम्बिक–कौटुम्बिक–इभ्य–श्रेष्ठि–सेनापति–सार्थवाह–मन्त्रि–महामन्त्रि–गणक–दौवारिकाः प्रागुक्तसरूपाः [पृ० २८५

* एषां सर्वेषा शब्दानां व्याख्या (पृ० २८५ प० ३) द्रष्टव्या।

गणग-दोवारिय-अमच्च[7]-चेड[8]-पीढमद्द[9]-नगर[10]-निगम[11]-दूय[12]-संधिवालेहिं[13] सद्धिं संपरिवुडे विहरामि। तए णं मम णगरगुत्तिया ससक्खं[14] सलोद्दं[15] सगेवेज्जं अवउडबंधणबद्धं[16] चोरं उवणेंति, तए णं अहं तं पुरिसं जीवंतं चेव अउकुंभीए पक्खिवावेमि, अउमएणं पिहाणएणं पिहावेमि, अएण य तउएण य आयावेमि, आयपच्चइयएहिं पुरिसेहिं रक्खावेमि, तए अहं अण्णया कयाइं जेणामेव सा अउकुंभी तेणामेव उवागच्छामि उवागच्छित्ता तं अउकुंभीं उग्गलच्छावेमि उग्गलच्छावित्ता तं पुरिसं सयमेव पासामि णो चेव णं तीसे अयकुंभीए केइ छिड्डे इ वा विवरे इ वा अंतरे इ वा राई वा जओ णं से जीवे अंतोहिंतो बहिया णिग्गए, जइ णं भंते! तीसे अउकुंभीए होज्जा केइ छिड्डे वा जाव राई वा जओ णं से जीवे अंतोहिंतो बहिया णिग्गए, तो णं अहं सद्दहेज्जा पत्तिएज्जा रोएज्जा जहा अन्नो जीवो अन्नं सरीरं नो तं जीवो तं सरीरं, जम्हा णं भंते! तीसे अउकुंभीए णत्थि केइ छिड्डे वा जाव निग्गए, तम्हा सुपतिट्ठिया मे पइन्ना जहा–तं जीवो तं सरीरं, नो अन्नो जीवो अन्नं सरीरं।

अयकुम्भीनिक्षिप्तचौरदृष्टान्तेन अनात्मवादः

[१७२] तए णं केसी कुमारसमणे पएसिं रायं एवं वयासी-पएसी! से जहा नाम ए कूडागारसाला सिया दुहओ

पं० १] ७अमात्या–राज्याधिष्ठायकाः ८ चेटाः–पादमूलिकाः ९पीठमर्दाः–प्रागुक्ताः [पृ० २८५ पं०१०] १० नगरं–नगरवासिप्रकृतयः ११ निगमाः–कारणिकाः १२ दूताः–अन्येषां गत्वा राजादेशनिवेदकाः १३संधिपाला–राज्यसन्धिरक्षकाः नगररक्षाकारिणः १४ ससाक्षि +सहोढं–१५सलोद्रम् ग्रीवानिबद्धकिंचिल्लोध्रमित्यर्थः, १६ अप्रावृतबन्धनबद्धं चौरमिति।

+ सहोष्ट स–पा० ५।

लित्ता गुत्ता गुत्तदुवारा णिवायगंभीरा, अह णं केइ पुरिसे [1]भेरिं च [2]दंडं च गहाय कूडागारसालाए अंतो अंतो अणुप्पविसति तीसे कूडागारसालाए सव्वतो समंता घणनिचियनिरंतरणिच्छिड्डाइं दुवारवयणाइं पिहेइ, तीसे कूडागारसालाए बहुमज्झदेसभाए ठिच्चा तं भेरिं दंडएणं महया महया सद्देणं तालेज्जा, से णूणं पएसी! से सद्दे णं अंतोहिंतो बहिया निग्गच्छइ? हंता णिग्गच्छइ, अत्थि णं पएसी! तीसे कूडागारसालाए केइ छिड्डे वा जाव राई वा जओ णं से सद्दे अंतोहिंतो बहिया णिग्गए? नो तिणट्ठे समट्ठे, एवामेव पएसी! जीवे वि अप्पडिहयगई पुढविं भिच्चा सिलं भिच्चा पव्वयं भिच्चा अंतोहिंतो बहिया णिगच्छइ, तं सद्दहाहि णं तुमं पएसी! अण्णो जीवो तं चेव ३।

[१७३] तए णं पएसी राया केसिकुमारसमणं एवं वदासी–अत्थि णं भंते! एस पण्णा उवमा इमेण पुण कारणेणं णो उवागच्छइ, एवं खलु भंते! अहं अन्नया कयाइ बाहिरियाए उवट्ठाणसालाए जाव [कं० १७१ पं० २] विहरामि, तए णं ममं णगरगुत्तिया ससक्खं जाव उवणेंति, तए णं अहं(तं) पुरिसं जीवियाओ ववरोवेमि जीवियाओ ववरोवेत्ता अयोकुंभीए पक्खिवावेमि अउमएणं पिहावेमि जाव [कं० १७१ पं० ६] पच्चइएहिं पुरिसेहिं रक्खावेमि, तए णं अहं अन्नया कयाइं जेणेव सा कुंभी तेणेव उवागच्छामि तं अउकुंभिं उग्गलच्छावेमि तं अउकुंभीं किमिकुंभिं पिव पासामि णो चेव णं तीसे अउकुंभीए केइ छिड्डे इ वा जाव राई वा जता णं ते जीवा

दृढबद्धद्वारायाः कूटाकारशालाया अपि शब्दनिर्गमदृष्टान्तेन जीवनिर्गमः अयःकुम्भीनिक्षिप्तमारितचौरस्य कृमिरूपतादृष्टान्तेन अनात्मवादः

[१७२] १ भेरी–ढक्का। २ दण्डो वादनदण्डः।

बहियाहिंतो अणुपविट्ठा, जति णं तीसे अउकुंभीए होज्ज केइ छिड्डे इ वा जाव अणुपविट्ठा तेणं अहं सद्दहेज्जा जहा–अन्नो जीवो तं चेव, जम्हा णं तीसे अउकुंभीए नत्थि कोइ छिड्डे इ वा जाव अणुपविट्ठा तम्हा सुपतिट्ठिआ मे पइण्णा जहा तं जीवो तं सरीरं तं चेव।

[१७४] तए णं केसी कुमारसमणे पएसीं रायं एवं वयासी–अत्थि णं तुमे पएसी! कयाइ अए धंतपुव्वे वा धमावियपुव्वे वा? हंता अत्थि, से णूणं पएसी! अए धंते समाणे सव्वे अगणिपरिणए भवति? हंता भवति, अत्थि णं पएसी! तस्स अयस्स केइ छिड्डे इ वा जेणं से जोई बहियाहिंतो अंतो अणुपविट्ठे? नो इणमट्ठे समट्ठे, एवामेव पएसी! जीवो वि अप्पडिहयगई पुढविं भिच्चा सिलं भिच्चा बहियाहिंतो अणुपविसइ, तं सद्दहाहि णं तुमं पएसी! तहेव ४।

[१७५] तए णं पएसी राया केसीकुमारसमणं एवं वयासी–अत्थि णं भंते! एस पण्णा उवमा इमेण पुण मे कारणेणं नो उवागच्छइ, अत्थि णं भंते! से जहानामए केइ पुरिसे तरुणे जाव सिप्पोवगए पभू पंचकंडगं निसिरित्तए? हंता, पभू। जति णं भंते! सो च्चेव पुरिसे बाले जाव मंदविन्नाणे पभू होज्जा पंचकंडगं निसिरित्तए, तो णं अहं सद्दहेज्जा जहा–अन्नो जीवो तं चेव, जम्हा णं भंते! स चेव से पुरिसे जाव मंदविन्नाणे णो पभू पंचकंडयं निसिरित्तए तम्हा सुपइट्ठिया मे पइण्णा जहा–तं जीवो तं चेव।

[१७६] तए णं केसी कुमारसमणे पएसिं रायं एवं वयासी–से जहानामए केइ पुरिसे तरुणे जाव सिप्पोव-

तप्तलोहप्रविष्टाग्निदृष्टान्तेन जीववादः
बाल–युवकदृष्टान्तेन अजीववादः

गए णवएणं धणुणा नवियाए जीवाए नवएणं इसुणा पभू पंचकंडगं निसिरित्तए? हंता, पभू। सो चेव णं पुरिसे तरुणे जाव निउणसिप्पोवगते कोरिल्लिएणं धणुणा कोरिल्लियाए जीवाए कोरिल्लिएणं इसुणा पभू पंचकंडगं निसिरित्तए? णो तिणमट्ठे समट्ठे। कम्हा णं?। भंते! तस्स पुरिसस्स अपज्जत्ताइं उवगरणाइं हवंति, एवामेव पएसी! सो चेव पुरिसे बाले जाव मंदविन्नाणे अपज्जत्तोवगरणे, णो पभू पंचकंडयं निसिरित्तए, तं सद्दहाहि णं तुमं पएसी! जहा–अन्नो जीवो तं चेव ५।

अन्यप्रकारेण तरुणदृष्टान्तेन जीववादः

॥३१७॥

[१७७] तए णं पएसी राया केसीकुमारसमणं एवं वयासी–अत्थि णं भंते! एस पण्णा उवमा इमेण पुण कारणेणं नो उवागच्छइ, भंते! से जहानामए केइ पुरिसे तरुणे जाव सिप्पोवगते पभू एगं महं अयभारगं वा तउयभारगं वा सीसगभारगं वा परिवहित्तए? हंता पभू। सो चेव णं भंते! पुरिसे जुन्ने जराजज्जरियदेहे सिढिलवलितयाविणट्ठगत्ते दंडपरिग्गहियग्गहत्थे पविरलपरिसडियदंतसेढी आउरे किसिए पिवासिए दुब्बले किलंते नो पभू एगं महं अयभारगं वा जाव परिवहित्तए, जति णं भंते! सच्चेव पुरिसे जुन्ने जराजरियदेहे जाव परिकिलंते पभू एगं महं अयभारं वा जाव परिवहित्तए तो णं सद्दहेज्जा तहेव, जम्हा णं भंते! से चेव पुरिसे जुन्ने जाव किलंते नो पभू एगं महं अयभारं वा जाव परिवहित्तए तम्हा सुपतिट्ठिता मे पइण्णा तहेव।

[१७८] तए णं केसी कुमारसमणे पएसिं रायं एवं वयासी–से जहाणामए केइ पुरिसे तरुणे जाव सिप्पोवगए णवियाए विहंगियाए णवएहिं सिक्कएहिं णवएहिं पच्छियपिंडएहिं पहू एगं महं अयभारं जाव परिवहि-

जीवतः मृतस्य च तोलने भारभेदाभावाद् अजीववादः।

त्तए ? हंता पभू। पएसी ! से चेव णं पुरिसे तरुणे जाव सिप्पोवगए जुन्नियाए दुब्बलियाए घुणक्खइयाए विहंगियाए जुण्णएहिं दुब्बलएहिं घुणक्खइएहिं सिढिलतयापिणद्धएहिं सिक्कएहिं जुण्णएहिं दुब्बलिएहिं घुणखइएहिं पच्छिपिंडएहिं पभू एगं महं अयभारं वा जाव परिवहित्तए ? णो तिण०, कम्हा णं ?। भंते ! तस्स पुरिसस्स जुन्नाइं उवगरणाइं भवंति, पएसी! से चेव से पुरिसे जुन्ने जाव किलंते जुत्तोवगरणे तो पभू एगं महं अयभारं वा जाव परिवहित्तए, तं सद्दहाहि णं तुमं पएसी ! जहा-अन्नो जीवो अन्नं सरीरं ६ ।

[१७९] तए णं से पएसी केसिकुमारसमणं एवं वयासी-अत्थि णं भंते ! [कं० १७७ पं० १] जाव नो उवागच्छइ, एवं खलु भंते ! [पृ० ३१३ पं० ५] जाव विहराभि, तए णं मम णगरगुत्तिया चोरं उवणेंति, तए णं अहं तं पुरिसं जीवंतगं चेव तुलेमि तुलेत्ता छविच्छेयं अकुव्वमाणे जीवियाओ ववरोवेमि मयं तुलेमि णो चेव णं तस्स पुरिसस्स जीवंतस्स वा तुलियस्स वा मुयस्स वा तुलियस्स केइ आणत्ते वा नाणत्ते वा ओमत्ते वा तुच्छत्ते वा गुरुयत्ते वा लहुयत्ते वा, जति णं भंते ! तस्स पुरिसस्स जीवंतस्स वा तुलियस्स मुयस्स वा तुलियस्स केइ अन्नत्ते वा जाव लहुयत्ते वा तो णं अहं सद्दहेज्जा तं चेव, जम्हा णं भंते ! तस्स पुरिसस्स जीवंतस्स वा तुलियस्स मुयस्स वा तुलियस्स नत्थि केइ अन्नत्ते वा लहुयत्ते वा० तम्हा सुपतिट्ठिया मे पइन्ना जहा-तं जीवो तं चेव।

[१८०] तए णं केसी कुमारसमणे पएसिं रायं एवं वयासी-अत्थि णं पएसी ! तुमे कयाइ वत्थी धंतपुव्वे वा धमावियपुव्वे वा ? हंता अत्थि। अत्थि णं पएसी ! तस्स वत्थिस्स पुण्णस्स वा तुलियस्स अपुण्णस्स वा

तुलियस्स केइ अणत्ते वा जाव लहुयत्ते वा ? णो तिणट्ठे समट्ठे। एवामेव पएसी ! जीवस्स अगुरुलघुयत्तं पडुच जीवंतस्स वा तुलियस्स मुयस्स वा तुलियस्स नत्थि केइ आणत्ते वा जाव लहुयत्ते वा, तं सद्दाहि णं तुम पएसी ! न चेव ७।

[१८१] तए णं पएसी राया केसिं कुमारसमणं एवं वयासी-अत्थि णं भंते ! एसा जाव नो उवागच्छइ, एवं खलु भंते ! अहं अन्नया जाव [पृ०३१३पं०५] चोरं उवणेति, तए णं अहं तं पुरिसं सव्वतो समंता समभिलोएमि, नो चेव णं तत्थ जीवं पासामि, तए णं अहं तं पुरिसं दुहा फालियं करेमि करित्ता सव्वतो समंता समभिलोएमि, नो चेव णं तत्थ जीवं पासामि, एवं तिहा चउहा संखेज्जफालियं करेमि णो चेव णं तत्थ जीवं पासामि, जइ णं भंते ! अहं तं पुरिसं दुहा वा तिहा वा चउहा वा संखेज्जहा वा फालियंमि वा जीवं पासंतो तो णं अहं सद्दहेज्जा नो तं चेव, जम्हा णं भंते ! अहं तंसि दुहा वा तिहा वा चउहा वा संखिज्जहा वा फालियंमि वा जीवं न पासामि तम्हा सुपतिट्ठिया मे पइण्णा जहा-तं जीवो तं सरीरं तं चेव।

[१८२] तए णं केसिकुमारसमणे पएसिं रायं एवं वयासि-मूढतराए णं तुमं पएसी ! ताओ तुच्छतराओ, के णं भंते ! तुच्छतराए ? पएसी ! से जहाणामए केई पुरिसे वणत्थी वणोवजीवी वणगवेसणयाए जोइं च जोइभायणं च गहाय कट्ठाणं अडविं अणुपविट्ठा, तए णं ते पुरिसा तीसे अगामियाए जाव किंचिदेसं अणुप्पत्ता समाणा एगं पुरिसं एवं वयासी-अम्हे णं देवाणुप्पिया ! कट्ठाणं अडविं पविसामो, एत्तो णं तुमं जोइभायणाओ

वायुपूर्णभस्त्रायाः रिक्तभस्त्रायाश्च तोलने भारभेदाभावाद् न हि वायोरभावः तद्वदेव न जीवाभावः द्विधाकृतेऽपि शरीरे जीवं न पश्यामि इति अजीववादः ॥३१९॥

अरणिकाष्ठं द्विधाविभिद्य अग्निं द्रष्टुकामस्येव पएसिनृपस्य मूढत्वम्

जोइं गहाय अम्हं असणं साहेज्जासि, अह तं जोइभायणे जोई विज्झवेज्जा एत्तो णं तुमं कट्ठाओ जोइं गहाय अम्हं असणं साहेज्जासि त्ति कट्टु कट्ठाणं अडविं अणुपविट्ठा, तए णं से पुरिसे तओ मुहुत्तन्तरस्स तेसिं पुरिसाणं असणं साहेमि त्ति कट्टु जेणेव जोतिभायणे तेणेव उवागच्छइ जोइभायणे जोइं विज्झायमेव पासति, तए णं से पुरिसे जेणेव से कट्ठे तेणेव उवागच्छइ उवागच्छित्ता तं कट्ठं सव्वओ समंता समभिलोएति नो चेव णं तत्थ जोइं पासति, तए णं से पुरिसे परियरं बंधइ फरसुं गिण्हइ तं कट्ठं दुहा फालियं करेइ सव्वतो समंता समभिलोएइ णो चेव णं तत्थ जोइं पासइ, एवं जाव संखेज्जफालियं करेइ सव्वतो समंता समभिलोएइ नो चेव णं तत्थ जोइं पासइ, तए णं से पुरिसे तंसि कट्ठंसि दुहाफालिए वा जाव संखेज्जफालिए वा जोइं अपासमाणे संते तंते परिसंते निव्विण्णे समाणे परसुं एगंते एडेइ परियरं मुयइ एवं वयासी–अहो! मए तेसिं पुरिसाणं असणे नो साहिए त्ति कट्टु ओहयमणसंकप्पे चिंतासोगसागरसंपविट्ठे करयलपल्लत्थमुहे अट्टज्झाणोवगए भूमिगयदिट्ठिए झियाइ, तए णं ते पुरिसा कट्ठाइं छिंदंति जेणेव से पुरिसे तेणेव उवागच्छंति तं पुरिसं ओहयमणसंकप्पं जाव झियायमाणं पासंति एवं वयासी–किं णं तुमं देवाणुप्पिया! ओहयमणसंकप्पे जाव झियायसि? तए णं से पुरिसे एवं वयासी–तुज्झे णं देवाणुप्पिया! कट्ठाणं अडविं अणुपविसमाणा ममं एवं वयासी–अम्हे णं देवाणुप्पिया! कट्ठाणं अडविं जाव–पविट्ठा, तए णं अहं तत्तो मुहुत्तंतरस्स तुज्झं असणं साहेमि त्ति कट्टु जेणेव जोइभा० जाव [कं० १८२ पं० ७–] झियामि, तए णं तेसिं पुरिसाणं एगे पुरिसे छेदे दक्खे पत्तट्ठे जाव उवएसलद्धे ते पुरिसे एवं

वयासी–गच्छह णं तुज्झे देवाणुप्पिया! ण्हाया कयबलिकम्मा जाव हव्वमागच्छेह जा णं अहं असणं साहेमि त्ति कट्टु परियरं बंधइ परसुं गिण्हइ सरं करेइ सरेण अरणिं महेइ जोइं पाडेइ जोइं संधुक्खेइ तेसिं पुरिसाणं असणं साहेइ, तए णं ते पुरिसा ण्हाया कयबलिकम्मा जाव–पायच्छित्ता जेणेव से पुरिसे तेणेव उवागच्छंति, तए णं से पुरिसे तेसिं पुरिसाणं सुहासणवरगयाणं तं विउलं असणं पाणं खाइमं साइमं उवणेइ, तए णं ते पुरिसा तं विउलं असणं ४ आसाएमाणा वीसाएमाणा जाव विहरंति, जिमियभुत्तुतरागया वि य णं समाणा आयंता चोक्खा परमसुइभूया तं पुरिसं एवं वयासी–अहो! णं तुमं देवाणुप्पिया! जड्डे मूढे अपंडिए णिव्विण्णाणे अणुवएसलद्धे जे णं तुमं इच्छसि कट्ठंसि दुहाफालियंसि वा जोतिं पासित्तए, से एएणट्ठेणं पएसी! एवं वुच्चइ मूढतराए णं तुमं पएसी! ताओ तुच्छतराओ ८।

[१८३] तए णं पएसी राया केसिकुमारसमणं एवं वयासी–जुत्तए णं भंते! तुब्भ इय छेयाणं दक्खाणं बुद्धाणं कुसलाणं महामईणं विणीयाणं विण्णाणपत्ताण उवएसलद्धाणं अहं इमीसाए महालियाए महच्चपरिसाए मज्झे उच्चावएहिं आउसेहिं आउसित्तए उच्चावयाहि उद्धंसणाहिं उद्धंसित्तए एवं निब्भंछणाहिं० निच्छोडणाहिं० १।

[१८४] तए णं केसी कुमारसमणे पएसिं रायं एवं वयासी–जाणासि णं तुमं पएसी! कति परिसाओ पण्णत्ताओ? जाणामि चत्तारि परिसाओ पण्णत्ता, तंजहा–खत्तियपरिसा गाहावइपरिसा माहणपरिसा इसिप-

पएसीः भवद्भिः दक्षैरपि श्रमणैः महत्यां पर्षदि कथमहमेवमनादृतः १

॥३२१॥

रिसा। जाणासि णं तुमं पएसी राया ! एयासिं चउण्ह परिसाणं कस्स का दंडणीई पण्णत्ता ? हंता ! जाणामि। जे णं खत्तियपरिसाए अवरज्झइ से णं हत्थच्छिण्णए वा पायच्छिण्णए वा सीसच्छिण्णए वा सूलाइए वा एगाहच्चे कूडाहच्चे जीवियाओ ववरोविज्जइ। जे णं गाहावइपरिसाए अवरज्झइ से णं तएण वा वेढेण वा पलालेण वा वेढित्ता अगणिकाएणं झामिज्जइ। जेणं माहणपरिसाए अवरज्झइ से णं अणिट्ठाहिं अकंताहिं जाव अमणामाहिं वग्गूहि उवालंभित्ता कुंडियालंछणए वा सूणगलंछणए वा कीरइ, निव्विसए वा आणविज्जइ। जे णं इसिपरिसाए अवरज्झइ से णं णाइअणिट्ठाहिं जाव णाइअमणामाहिं वग्गूहिं उवालब्भइ, एवं च ताव पएसी ! तुमं जाणासि तहावि ण तुमं ममं वामं[1] वामेणं दंडं[2] दंडेणं पडिकूलं पडिकूलेणं पडिलोमं पडिलोमेणं विवच्चासं विवच्चासेणं वट्टसि।

तए णं पएसी राया केसिं कुमारसमणं एवं वयासी–एवं खलु अहं देवाणुप्पिएहिं पढमिल्लुएणं चेव वागरणेण संलत्ते तए णं ममं इमेयारूवे अज्झत्थिए जाव संकप्पे समुपज्जित्था–जहा जहा णं एयस्स पुरिसस्स वामं वामेणं जाव विवच्चासं विवच्चासेणं वट्टिस्सामि तहा तहा णं अहं नाणं च नाणोवलंभं च करणं च करणोवलंभं च दंसणं च दंसणोवलंभं च जीवं च जीवोवलंभं च उवलभिस्सामि, तं एएणं अहं कारणेणं देवाणुप्पियाणं वामं वामेणं जाव विवच्चासं विवच्चासेणं वट्टिए।

केशी श्र०: पर्षदां प्रकाराः तासां च दण्डनीतयः पएसीः–ज्ञानं लब्धुकामोऽहं विव्यत्यासेन स्थितः

---

[१८४] १ वामं वामेन एवम्–२ 'दंडं दंडेणं' इत्याद्यपि भावनीयम्।

केशी श्र०: पएसिनृपस्य व्यवहारित्वम्। हस्तामलकवद् आत्मा कथं न दर्श्यते ?

[१८५] तए णं केसी कुमारसमणे पएसीरायं एवं वयासी–जाणासि णं तुमं पएसी! कइ ववहारगा पण्णत्ता? हंता जाणामि। चत्तारि ववहारगा पण्णत्ता–१ देइ नामेगे णो सण्णवेइ। १सन्नवेइ नामेगे नो देइ। ३ एगे देइ वि सन्नवेइ वि। ४ एगे णो देइ णो सण्णवेइ। जाणासि णं तुमं पएसी! एएसिं चउण्हं पुरिसाणं के ववहारी के अव्ववहारी? हंता जाणामि। तत्थ णं जे से पुरिसे देइ णो सण्णवेइ से णं पुरिसे ववहारी। तत्थ णं जे से पुरिसे णो देइ सण्णवेइ से णं पुरिसे ववहारी। तत्थ णं जे से पुरीसे देइ वि सन्नवेइ वि से पुरिसे ववहारी। तत्थ णं जे से पुरिसे णो देइ णो सन्नवेइ से णं अववहारी। एवामेव तुमं पि ववहारी, णो चेव णं तुमं पएसी अववहारी।

[१८६] तए णं पएसी राया केसिकुमारसमणं एवं वयासी–तुज्झे णं भंते! इय छेया दक्खा जाव उवएसलद्धा समत्था णं भंते! ममं करयलंसि वा आमलयं जीवं सरीराओ अभिनिवट्टित्ताणं उवदंसित्तए ?

तेणं कालेणं तेणं समएणं पएसिस्स रण्णो अदूरसामंते वाउयाए संवुत्ते, तणवणस्सइकाए एयइ वेयइ चलइ फंदइ घट्टइ उदीरइ तं तं भावं परिणमइ, तए णं केसी कुमारसमणे पएसिरायं एवं वयासी–पाससि णं तुमं पए-

॥३२३॥

[१८५] १ ददाति–दानं प्रयच्छति न संज्ञापयति–न सम्यगालापेन संतोषयति, चतुर्भङ्गी पाठसिद्धा, यद्यपि त्वं न सम्यगालापेन मां संतोषयसि तथापि मम विषये भक्तिं बहुमानं च कुर्वन् आद्यपुरुष इव २व्यवहार्येव नाव्यवहारी, १ एतावता च 'मूढतराए तुमं पएसी! तओ कट्ठहारयाओ' इत्यनेन वचसा [कं० १८२ अंतिम पंक्ति] यत् कालुष्यमापादितं तदपनीतम् परमं च संतोषं प्रापित इति।

सी राया ! एयं तणवणस्सइं एयंतं जाव तं तं भावं परिणमंतं ? हंता पासामि । जाणासि णं तुमं पएसी ! एयं तणवणस्सइकायं किं देवो चालेइ असुरो वा चालेइ णागो वा किन्नरो वा चालेइ किंपुरिसो वा चालेइ महोरगो वा चालेइ गंधव्वो वा चालेइ ? हंता जाणामि–णो देवो चालेइ जाव णो गंधव्वो चालेइ वाउयाए चालेइ । पाससि णं तुमं पएसी ! एतस्स वाउकायस्स सरूविस्स सकामस्स सरागस्स समोहस्स सवेयस्स सलेसस्स ससरीरस्स रूवं ? णो तिणट्ठे० । जइ णं तुमं पएसी राया ! एयस्स वाउकायस्स सरूविस्स जाव ससरीरस्स रूवं न पाससि तं कहं णं पएसी ! तव करयलंसि वा आमलगं जीवं उवदंसिस्सामि ? । एवं खलु पएसी ! दसट्ठाणाइं छउमत्थे मणुस्से सव्वभावेणं न जाणइ न पासइ, तंजहा–धम्मत्थिकायं १ अधम्मत्थिमायं २ आगासत्थिकायं ३ जीवं असरीरबद्धं ४ परमाणुपोग्गलं ५ सद्दं ६ गंधं ७ वायं ८ अयं जिणे भविस्सइ वा णो भविस्सइ ९ अयं सव्वदुक्खाणं अंतं करेस्सइ वा नो वा १० । एताणि चेव उप्पन्ननाणदंसणधरे अरहा जिणे केवली सव्वभावेणं जाणइ पासइ, तं०–धम्मत्थिकायं जाव नो वा करिस्सइ, तं सद्दहाहि णं तुमं पएसी ! जहा–अन्नो जीवो तं चेव १ ।

रूपी अपि वायुः हस्तामलकवद् न दर्श्यते तर्हि अरूपी आत्मा तु कथं दर्श्येत

[१८७] तए णं से पएसी राया केसिं कुमारसमणं एवं वयासी–से नूणं भंते ! हत्थिस्स कुंथुस्स य समे चेव जीवे ? हंता पएसी ! हत्थिस्स य कुंथुस्स य समे चेव जीवे । से णूणं भंते ! हत्थीउ कुंथू

[१८७] १ 'हंता पएसी हत्थिस्स ! कुंथुस्स य समे चेव जीवे' इति प्रदेशानां तुल्यत्वात्, केवलं संकोचविकोचधर्मत्वात् कुन्थुशरीरे संकुचितो भवति, हस्तिशरीरे विस्तृतः उक्तं च—"आसज्ज कुंथुदेहं तत्तियमित्तो गयम्मि गयमित्तो । न य संजुज्जइ

अ[२]प्पकम्मतराए चेव अ[३]प्पकिरियतराए चेव अ[४]प्पासवतराए चेव एवं आ[५]हारनीहारउस्सासनीसासइड्ढीए महज्जुइअप्पतराए चेव, एवं च कुंथुओ हत्थी महाकम्मतराए चेव महाकिरिय०जाव? हंता पएसी! हत्थीओ कुंथू अप्पकम्मतराए चेव कुंथुओ वा हत्थी महाकम्मतराए चेव तं चेव। कम्हा णं भंते! हत्थिस्स य कुंथुस्स य समे चेव जीवे? पएसी! जहा णाम ए कूडागारसाला सिया जाव गंभीरा अह णं केइ पुरिसे जोइं व दीवं व गहाय त कूडागारसालं अंतो २ अणुपविसइ तीसे कूडागारसालाए सव्वतो समंता घणनिचियनिरंतराणि णिच्छिड्डाइं दुवारवयणाइं पिहेति तीसे कूडागारसालाए बहुमज्झदेसभाए तं पईवं पलीवेज्जा, तए णं से पईवे तं कूडागारसालं अंतो २ ओभासइ उज्जोवेइ तवति पभासेइ, णो चेव णं बाहिं, अह णं पुरिसे तं पईवं इ[६]ड्डरएणं पिहेज्जा, तए णं से पईवे तं इड्डरयं अंतो ओभासेइ, णो चेव णं इड्डरगस्स बाहिं णो चेव णं कूडागारसालाए बाहिं, एवं गो[७]किलिंजेणं पच्छि[८]पिंडएणं गंडमाणियाए[९] आ[१०]ढतेणं अ[११]द्धाढतेणं प[१२]त्थएणं

महतो गजस्य क्षुद्रतमस्य च कुन्थोः जीवस्य समानतादिविषये चर्चा

जीवो संकोयविकोयदोसेहिं" ॥ [ ] अत्र न संयुज्यते जीवः संकोचविकोचदोषाभ्यामिति, तयोस्तस्य स्वभावतयाऽभ्युपगमात्, तथा चात्र प्रदीपदृष्टान्तो वक्ष्यते, अथवा २ 'कर्म' आयुष्कलक्षणं ३ क्रिया–कायिक्यादि ४ आश्रवः प्राणातिपातादिः ५ आहारनीहारोच्छ्वासनिश्वासादिद्युतयः प्रतीताः ६ इड्डरकं–महत् पिटकं, येन समस्तापि रसवती स्थग्यते, ७ गोकिलिञ्जं नाम यत्र गोभक्तं प्रक्षिप्यते, ८ पच्छिकापिटकं च प्रतीतं, ९ गण्डयुक्ता माणिका देशविशेषप्रसिद्धा, १०आढक–११अर्धाढक–१२प्रस्थक–

पएसीः परंपरागतं मतं कथं त्यजेयम् ?

अद्धपत्थएणं[१३] कुलवेणं[१४] अद्धकुलवेणं[१५] चाउब्भाइयाए[१६] अट्ठभाइयाए[१७] सोलसियाए[१८] बत्तीसियाए[१९] चउसट्ठियाए दीवचंपएणं[२०] तए णं से पदीवे दीवचंपगस्स अंतो ओभासति ४, नो चेव णं दीवचंपगस्स बाहिं नो चेव णं चउसट्ठियाए बाहिं, णो चेव णं कूडागारसालं णो चेव णं कूडागारसालाए बाहिं, एवामेव[२१] पएसी! जीवे वि जं जारिसयं पुव्वकम्मनिबद्धं बोंदिं णिव्वत्तेइ तं असंखेज्जेहिं जीवपदेसेहिं सचित्तं करेइ खुड्डियं वा महालियं वा, तं सद्दहाहि णं तुमं पएसी! जहा–अण्णो जीवो तं चेव णं १०।

[१८८] तए णं पएसी राजा केसिं कुमारसमणं एवं वयासी–एवं खलु भंते! मम अज्जगस्स एस सन्ना जाव समोसरणे जहा–तज्जीवो तं सरीरं, नो अन्नो जीवो अन्नं सरीरं, तयाणंतरं च णं ममं पिउणो वि एस सण्णा, तयाणंतरं मम वि एसा सण्णा जाव समोसरणं, तं नो खलु अहं बहुपुरिसपरंपरागयं कुलनिस्सियं दिट्ठिं छंडेस्सामि।

[१८९] तए णं केसी कुमारसमणे पएसिरायं एवं वयासी–मा णं तुमं पएसी! पच्छाणुताविए भवेज्जासि जहा व से पुरिसे अयहारए। के णं भंते! से अयहारए? पएसी! से जहाणामए केई पुरिसा अत्थत्थी अत्थगवेसी अत्थलुद्धगा अत्थकंखिया अत्थपिवासिया अत्थगवेसणयाए विउलं पणियभंडमायाए सुबहुं भत्तपाणपत्थयणं गहाय

१३ अर्द्धप्रस्थक–१४ कुलव–१५अर्द्धकुलवा मगधदेशप्रसिद्धा धान्यमानविशेषाः, १६ चतुर्भागिका–१७अष्टभागिका–१८षोडशिका–१९द्वात्रिंशत्का मगधदेशप्रसिद्धा एव रसमानविशेषाः, २० दीपचम्पको–दीपस्थगनकम्, २१ 'एवामेव' इत्यादि निगमनं कण्ठ्यम्, उक्तं चैतदन्यत्रापि–"जह दीवो महइ घरे पलीविओ तं घरं पगासेइ। अप्पपयारे तं तं एवं जीवो सदेहाइं"। [ ]

रायपसेणइयं।

एगं महं अकामियं छिन्नावायं दीहमद्धं अडविं अणुपविट्ठा, तए णं ते पुरिसा तीसे अकामियाए अडवीए किंचि देसं अणुप्पत्ता समाणा एगमहं अयागरं पासंति, अएणं सव्वतो समंता आइण्णं विच्छिण्णं सच्छडं उवच्छडं फुडं गाढं पासंति हट्ठतुट्ठ–जाव–हियया अन्नमन्नं सद्दावेंति एवं वयासी–एस णं देवाणुप्पिया! अयभंडे इट्ठे कंते जाव मणामे, तं सेयं खलु देवाणुप्पिया! अम्हं अयभारए बंधित्तए त्ति कट्टु अन्नमन्नस्स एयमट्ठं पडिसुणेंति अयभारं बंधंति अहाणुपुव्वीए संपत्थिया। तए णं ते पुरिसा अकामियाए जाव अडवीए किंचि देसं अणुपत्ता समाणा एगं महं तउआगरं पासंति, तउएणं आइण्णं तं चेव [कं० १८९ पं० ५] जाव सद्दावेत्ता एवं वयासी–एस णं देवाणुप्पिया! तउयभंडे जाव मणामे, अप्पेणं चेव तउएणं सुबहुं अए लब्भति, तं सेयं खलु देवाणुप्पिया! अयभारए छड्डेत्ता तउयभारए बंधित्तए त्ति कट्टु अन्नमन्नस्स अंतिए एयमट्ठं पडिसुणेंति अयभारं छड्डेंति तउयभारं बंधंति। तत्थ णं एगे पुरिसे णो संचाएइ अयभारं छड्डेत्तए तउयभारं बंधित्तए, तए णं ते पुरिसा तं पुरिसं एवं वयासी–एस णं देवाणुप्पिया! तउयभंडे जाव [कं० १८९ पं० ६ तथा १०] सुबहुं अए लब्भति, तं छड्डेहि णं देवाणुप्पिया! अयभारगं, तउयभारगं बंधाहि। तए से पुरिसे एवं वदासी–दूराहडे मे देवाणुप्पिया! अए, चिराहडे मे देवाणुप्पिया! अए, अइगाढबंधणबद्धे मे देवाणुप्पिया! अए, असिढिलबंधणबद्धे देवाणुप्पिया! अए, धणियबंधणबद्धे देवाणुप्पिया! अए, णो संचाएमि अयभारगं छड्डेत्ता तउयभारगं बंधित्तए। तए णं ते पुरिसा तं पुरिसं जाहे णो संचायंति बहूहिं आघवणाहि य पन्नवणाहि य आघवित्तए वा पण्णवित्तए वा तया अहाणु-

परंपरायातस्यापि अनिष्टस्य मतस्य त्याग एव श्रेयान्-इति उदाहरणेन द्रढयति

॥३२७॥

पएसी श्रमणोपासको जातः

पुव्वीए संपत्थिया, एवं तंबागरं रूप्पागरं सुवण्णागरं रयणागरं वइरागरं, तए णं ते पुरिसा जेणेव सया जणवया जेणेव साइं साइं नगराइं तेणेव उवागच्छन्ति वयरविक्कणयं करेंति सुबहुदासीदासगोमहिसगवेलगं गिण्हंति अट्ठतलमूसियवडंसगे कारावेंति ण्हाया कयबलिकम्मा उप्पिं पासायवरगया फुट्टमाणेहिं मुइंगमत्थएहिं बत्ती सइबद्धएहिं नाडएहिं वरतरुणीसंपउत्तेहिं उवणच्चिज्जमाणा उवलालिज्जमाणा इट्ठे सद्द-फरिस-जाव विहरंति । तए णं से पुरिसे अयभारेण जेणेव सए नगरे तेणेव उवागच्छइ अयभारेणं गहाय अयविक्किणणं करेति तंसि अप्पमोल्लंसि निहियंसि झीणपरिव्वए ते पुरिसे उप्पिं पासायवरगए जाव विहरमाणे पासति पासित्ता एवं वयासी-अहो ! णं अहं अधन्नो अपुन्नो अकयत्थो अकयलक्खणो हिरिसिरिवज्जिए हीणपुण्णचाउद्दसे दुरंतपंतलक्खणे। जति णं अहं मित्ताण वा णाईण वा नियगाण वा सुणेंतओ तो णं अहं पि एवं चेव उप्पिं पासायवरगए जाव विहरंतो, से तेणट्ठेणं पएसी एवं वुचइ-मा तुमं पएसी पच्छाणुताविए भविज्जासि, जहा व से पुरिसे अयभारिए ।

[१९०] एत्थ णं से पएसी राया संबुद्धे केसिकुमारसमणं वंदइ जाव एवं वयासी-णं खलु भंते ! अहो पच्छाणुताविए भविस्सामि जहा व से पुरिसे अयभारिए, तं इच्छामि णं देवाणुप्पियाणं अंतिए केवलिपन्नत्तं धम्मं निसामित्तए, अहासुहं देवाणुप्पिया! मा पडिबंधं ०, धम्मकहा जहा चित्तस्स [पृ० २८८ पं० ६] तहेव गिहिधम्मं पडिवज्जइ जेणेव सेयविया नगरी तेणेव पहारेत्थ गमणाए ।

[१९१] तए णं केसी कुमारसमणे पएसिं रायं एवं वयासी–जाणासि तुमं पएसी ! कइ आयरिया पन्नत्ता ? हंता जाणामि, तओ आयरिआ पण्णत्ता, तंजहा–कलायरिए, सिप्पायरिए, धम्मायरिए। जाणासि णं तुमं पएसी ! तेसिं तिण्हं आयरियाणं कस्स का विणयपडिवत्ती पउंजियव्वा? हंता जाणामि, कलायरियस्स सिप्पायरियस्स उवलेवणं संमज्जणं वा करेज्जा पुरओ पुप्फाणि वा आणवेज्जा मज्जावेज्जा मंडावेज्जा भोयाविज्जा वा विउलं जीवितारिहं पीइदाणं दलएज्जा पुत्ताणुपुत्तियं वित्तिं कप्पेज्जा। जत्थेव धम्मायरियं पासिज्जा तत्थेव वंदेज्जा णमंसेज्जा सक्कारेज्जा सम्माणेज्जा कल्लाणं मंगलं देवयं चेइयं पज्जुवासेज्जा फासुएसणिज्जेणं असणपाणखाइमसाइमेणं पडिलाभेज्जा पाडिहारिएणं पीढफलगसिज्जासंथारएणं उवनिमंतेज्जा, एवं च ताव तुमं पएसी ! एवं जाणासि तहावि णं तुमं ममं वामं वामेणं जाव वट्टित्ता ममं एयमट्ठं अक्खामित्ता जेणेव सेयविया नगरी तेणेव पहारेत्थ गमणाए,

[१९२] तए णं से पएसी राया केसिं कुमारसमणं एवं वदासी–एवं खलु भंते ! मम एयारूवे अज्झत्थिए जाव समुप्पज्जित्था–एवं खलु अहं देवाणुप्पियाणं वामं वामेणं जाव वट्टिए तं सेयं खलु मे कल्लं[1] पाउप्पभायाए[2] रयणीए[3] फुल्लुप्पलकमलकोमलुम्मिलियम्मि[4]

आचार्याणां तद्विनयानां च प्रकाराः पएसी स्वम्-अविनयं सविनयं क्षमयति

---

[१९२] अस्यायमर्थः–१कल्यमिति श्वः २ प्रादुः–प्राकाश्ये, ततः प्रकाशप्रभातायां ३ रजन्यां ४ फुल्लोत्पलकमलकोमलोन्मीलिते फुल्लं–विकसितं तच्च तत् उत्पलं तच्च कमलश्च–हरिणविशेषः फुल्लोत्पलकमलौ तयोः कोमलम्–अकठोरमुन्मीलितं यथासंख्यं दलानां च

अह [5]पंडुरे [6]पभाए [7]रत्तासोग-[8]किंसुय-[9]सुयमुह-[10]गुंजद्धरागसरिसे [11]कमलागरनलिणिसंडबोहए [12]उट्ठियम्मि [13]सूरे [14]सहस्सरस्सिम्मि [15]दिणयरे [16]तेयसा जलंते अंतेउरपरियालसद्धिं संपरिवुडस्स देवाणुप्पिए वंदित्तए नमंसित्तए एतमट्ठं भुज्जो भुज्जो सम्मं विणएणं खामित्तए त्ति कट्टु जामेव दिसिं पाउब्भूते तामेव दिसिं पडिगए। तए णं से पएसी राया कल्लं पाउप्पभायाए रयणीए जाव तेयसा जलंते हट्ठतुट्ठ-जाव-हियए जहेव कूणिए [औपपातिक सूत्र पृ० ६४ पं० १] तहेव निग्गच्छइ अंतेउरपरियालसद्धिं संपरिवुडे पंचविहेणं अभिगमेणं वंदइ नमंसइ एयमट्ठं भुज्जो भुज्जो सम्मं विणएणं खामेइ।

पूर्वं रमणीयः सन् अधुना जैनो भूत्वा अमरणीयो मा भव इति सोदाहरणं संज्ञापितः पएसी

[१९३] तए णं केसी कुमारसमणे पएसिस्स रण्णो सूरियकंतप्पमुहाणं देवीणं तीसे य महतिमहालियाए महच्चपरिसाए जाव धम्मं परिकहेइ। तए णं से पएसी राया धम्मं सोच्चा निसम्म उट्ठाए उट्ठेति केसिकुमारसमणं वंदइ नमंसइ जेणेव सेयविया नगरी तेणेव पहारेत्थ गमणाए।

[१९४] तए णं केसी कुमारसमणे पएसिरायं एवं वदासी—मा णं तुमं पएसी! पुव्विं रमणिज्जे भवित्ता पच्छा अरमणिज्जे भविज्जासि, जहा से वणसंडे इ वा णट्टसाला इ वा इक्खुवाडए इ वा खलवाडए इ वा।

नयनयोश्च यस्मिन् तत् तथा तस्मिन्, अथ रजनीविभानानन्तरं ५ पाण्डुरे—शुक्ले ६ प्रभाते, ७ रक्ताशोकस्य प्रकाशः—प्रभा स च ८ किंशुकं च—पलाशपुष्पं ९ शुकमुखं च १० गुञ्जा—फलविशेषो रक्तकृष्णस्तदर्धं च तानि तेषां सदृशे—आरक्ततया समाने ११ कमलाकराः—ह्रदास्तेषु नलिनीखण्डास्तेषां बोधके १२ उदयप्राप्ते १३ आदित्ये १४ सहस्ररश्मौ १५ दिवसकरणशीले १६तेजसा ज्वलिते।

[१९५] कहं णं भंते ! ?

[१९६] वणसंडे पत्तिए पुप्फिए फलिए हरियगरेरिज्जमाणे सिरीए अतीव उवसोभेमाणे चिट्ठइ, तया णं वणसंडे रमणिज्जे भवति, जया णं वणसंडे नो पत्तिए नो पुप्फिए नो फलिए नो [1]हरियगरेरिज्ज[2]माणे णो सिरीए अईव उवसोभेमाणे चिट्ठइ तया णं जुन्ने झडे परिसडियपंडुपत्ते सुक्करुक्खे इव मिलायमाणे चिट्ठइ तया णं वणे णो रमणिज्जे भवति ।

[१९७] जया णं णट्टसाला वि गिज्जइ वाइज्जइ नच्चिज्जइ हसिज्जइ रमिज्जइ तया णं णट्टसाला रमणिज्जा भवइ, जया णं नट्टसाला णो गिज्जइ जाव णो रमिज्जइ तया णं णट्टसाला अरमणिज्जा भवति ।

[१९८] जया णं इक्खुवाडे छिज्जइ भिज्जइ सिज्जइ पिज्जइ दिज्जइ तया णं इक्खुवाडे रमणिज्जे भवइ, जया णं इक्खुवाडे णो छिज्जइ जाव तया इक्खुवाडे अरमणिज्जे भवइ ।

[१९९] जया णं खलवाडे उच्छुब्भइ उडुइज्जइ मलइज्जइ मुणिज्जइ खज्जइ पिज्जइ दिज्जइ तया णं खलवाडे रमणिज्जे भवति जया णं खलवाडे नो उच्छुब्भइ जाव अरमणिज्जे भवति। से तेणट्ठेणं पएसी ! एवं वुच्चइ [1]मा णं तुमे

---

[१९६] १ हरिततया २ देदीप्यमाने।

[१९९] १ 'मा णं तुमे पएसी ! पुव्विं रमणिज्जे भवित्ता पच्छा अमरणिज्जे भविज्जासि' इत्यादेर्ग्रन्थस्यायं भावार्थः–पूर्वमन्येषां दात्रा भूत्वा सम्प्रति जैनधर्मप्रतिपत्त्या तेषामदात्रा न भवितव्यम् अस्माकमन्तरायस्य जिनधर्मापभ्राजनस्य च प्रसक्तेः ।

पएसिनृपेण कृता स्वधन व्यवस्था पएसी-नृपस्य वैराग्यम्

पएसी! पुव्विं रमणिज्जे भवित्ता पच्छा अरमणिज्जे भविज्जासि जहा वणसंडे इ वा।

[२००] तए णं पएसी केसिं कुमारसमणं एवं वयासी–णो खलु भंते! अहं पुव्विं रमणिज्जे भवित्ता पच्छा अरमणिज्जे भविस्सामि, जहा वणसंडे इ वा जाव खलवाडे इ वा, अहं णं सेयवियानगरीपमुक्खाइं सत्त गामसहस्साइं चत्तारि भागे करिस्सामि, एगं भागं बलवाहणस्स दलइस्सामि, एगं भागं कुट्ठागारे छुभिस्सामि, एगं भागं अंतेउरस्स दलइस्सामि, एगेणं भागेणं महतिमहलयं कूडागारसालं करिस्सामि, तत्थ णं बहूहिं पुरिसेहिं दिन्नभइभत्तवेयणेहिं विउलं असणं० उवक्खडावेत्ता बहूणं समणमाहणभिक्खुयाणं पंथियपहियाणं परिभाएमाणे बहूहिं सीलव्वयगुणव्वयवेरमणपच्चक्खाणपोसहोववासस्स जाव विहरिस्सामि त्ति कट्टु जामेव दिसिं पाउब्भूए तामेव दिसिं पडिगए।

[२०१] तए णं से पएसी राया कल्लं जाव तेयसा जलंते सेयवियापामोक्खाइं सत्त गामसहस्साइं चत्तारि भाए कीरइ, एगं भागं बलवाहणस्स दलइ जाव कूडागारसालं करेइ, तत्थ णं बहूहिं पुरिसेहिं जाव उवक्खडावेत्ता बहूणं समण–जाव परिभाएमाणे विहरइ।

[२०२] तए णं से पएसी राया समणोवासए अभिगयजीवाजीवे० [पृ० १९० पं० ६] विहरइ, जप्पभिइं च णं पएसी राया समणोवासए जाए तप्पभिइं च णं रज्जं च रट्ठं च बलं च वाहणं च कोट्ठागारं च पुरं च अंतेउरं च जणवयं च अणाढायमाणे यावि विहरति।

तए णं तीसे सूरियकंताए देवीए इमेयारूवे अज्झत्थिए जाव समुप्पज्जित्था–जप्पभिइं च णं पएसी राया समणोवासए जाए तप्पभिइं च णं रज्जं च रट्ठं जाव अंतेउरं च ममं जणवयं च अणाढायमाणे विहरइ, तं सेयं खलु मे पएसिं रायं केणवि सत्थपओएण वा अग्गिपओएण वा मंतप्पओगेण वा विसप्पओगेण वा उद्दवेत्ता सूरियकंतं कुमारं रज्जे ठवित्ता सयमेव रज्जसिरिं कारेमाणीए पालेमाणीए विहरित्तए त्ति कट्टु एवं संपेहेइ संपेहित्ता सूरियकंतं कुमारं सद्दावेइ सद्दावित्ता एवं वयासी–जप्पभिइं च णं पएसी राया समणोवासए जाए तप्पभिइं च णं रज्जं च जाव अंतेउरं च णं जणवयं च माणुस्सए य कामभोगे अणाढायमाणे विहरइ, तं सेयं खलु तव पुत्ता! पएसिं रायं केणइ सत्थप्पयोगेण वा जाव उद्दवित्ता सयमेव रज्जसिरिं कारेमाणे पालेमाणे विहरित्तए। तए णं सूरियकंते कुमारे सूरियकंताए देवीए एवं वुत्ते समाणे सूरियकंताए देवीए एयमट्ठं णो आढाइ नो परियाणाइ तुसिणीए संचिट्ठइ, तए णं तीसे सूरियकंताए देवीए इमेयारूवे अज्झत्थिए जाव समुप्पज्जित्था–मा णं सूरियकंते कुमारे पएसिस्स रन्नो इमं रहस्सभेयं करिस्सइ त्ति कट्टु पएसिस्स रण्णो छिद्दाणि य मम्माणि य रहस्साणि य विवराणि य अंतराणि य पडिजागरमाणी पडिजागरमाणी विहरइ।

पएसिनृपं विरक्तं ज्ञात्वा तत्पत्न्याः सूर्यकान्तायाः तन्मारणसंकल्पः ॥२३३॥

[२०३] तए णं सूरियकंता देवी अन्नया कयाइ पएसिस्स रण्णो अंतरं जाणइ असणं जाव खाइमं सव्ववत्थगंधमल्लालंकारं विसप्पजोगं पउंजइ, पएसिस्स रण्णो ण्हायस्स जाव–पायच्छित्तस्स सुहासणवरगयस्स तं विससंजुत्तं असणं वत्थं जाव–अलंकारं निसिरेइ घातइ। तए णं तस्स पएसिस्स रण्णो तं विससंजुत्तं असणं

आहारेमाणस्स सरीरगंमि वेयणा पाउब्भूया उज्जला[1] विपुला[2] पगाढा[3] कक्कसा[4] कडुया[5] फरुसा[6] निट्ठुरा[7] चंडा[8] तिव्वा[9] दुक्खा[10] दुग्गा[11] दुरहियासा पित्तजर[12]परिगयसरीरे दाहवक्कंतिया[13] वि विहरइ[14]।

[२०४] तए णं से पएसी राया सूरियकंताए देवीए अत्ताणं संपलद्धं जाणित्ता सूरियकंताए देवीए मणसावि अप्पदुस्समाणे जेणेव पोसहसाला तेणेव उवागच्छइ पोसहसालं पमज्जइ उच्चारपासवणभूमिं पडिलेहेइ दब्भसंथारगं संथरेइ दब्भसंथारगं दुरूहइ पुरत्थाभिमुहे संपलियंकनिसन्ने[1] करयलपरिग्गहियं सिरसावत्तं अंजलिं मत्थए त्ति कट्टु एवं वयासी–नमोऽत्थु णं अरहंताणं जाव [पृ० २५६ पं० ३] संपत्ताणं। नमोऽत्थु णं केसिस्स कुमारसमणस्स मम धम्मोवदेसगस्स धम्मायरियस्स, वंदामि णं भगवंतं तत्थ गयं इह गए, पासउ

मारितोऽपि पएसि न क्षुभ्यति किन्तु धर्मं धर्माचार्यं च स्मरति

---

[२०३] १ उज्ज्वला दुःखरूपतया निर्मला सुखलेशेनाप्यकलङ्कितेति भावः २ विपुला–विस्तीर्णा सकलशरीरव्यापनात् ३प्रगाढा प्रकर्षेण मर्मप्रदेशव्यापितया समवगाढा, ४कर्कश इव कर्कशा, किमुक्तं भवति ?–यथा कर्कशपाषाणसंघर्षः शरीरस्य खण्डानि त्रोटयति एवमात्मप्रदेशान् त्रोटयन्ती या वेदनोपजायते सा कर्कशा, तथा ५ कटुका पित्तप्रकोपपरिकलितस्य रोहण्यादिकटुद्रव्यमिवोपभुज्यमानमतिशयेनाप्रीतिविजनिकेति भावः, ६ परुषा मनसोऽतीव रूक्षत्वजनिका, ७ निष्ठुरा–अशक्यप्रतीकारतया दुर्भेदाऽत एव ८ चण्डा–रुद्रा ९ तीव्रा–अतिशायिनी १० दुःखा–दुःखस्वरूपा ११ दुर्लङ्घ्या १२ पित्तज्वरपरिगतशरीरे १३ व्युत्क्रान्त्या चापि–दाहोत्पत्त्या चापि १४ विहरति–तिष्ठति।

[२०४] १ पद्मासनसन्निविष्टः

पएसि मृत्वा सूर्याभो जातः

॥३३५॥

मे भगवं तत्थ गए इह गयं ति कट्टु वंदइ नमंसइ, पुव्विं पि णं मए केसिस्स कुमारसमणस्स अंतिए थूलपाणाइवाए पच्चक्खाए जाव परिग्गहे, तं इयाणिं पि णं तस्सेव भगवतो अंतिए सव्वं पाणाइवायं पच्चक्खामि जाव परिग्गहं सव्वं [३]कोहं जाव मिच्छादंसणसल्लं, अकरणिज्जं जोयं पच्चक्खामि, सव्वं असणं चउव्विहं पि आहारं जावज्जीवाए पच्चक्खामि, जं पि य मे सरीरं इट्ठं जाव फुसंतु त्ति एयं पि य णं चरिमेहिं ऊसासनिस्सासेहिं वोसिरामि त्ति कट्टु आलोइयपडिक्कंते समाहिपत्ते कालमासे कालं किच्चा सोहम्मे कप्पे सूरियाभे विमाणे उववायसभाए जाव वण्णओ।

[२०५] तए णं से सूरियाभे देवे अहुणोववन्नए चेव समाणे पंचविहाए पज्जत्तीए पज्जत्तिभावं गच्छति, तं०— आहारपज्जत्तीए सरीरपज्जत्तीए इंदियपज्जत्तीए आणपाणपज्जत्तीए भासमणपज्जत्तीए, तं एवं खलु भो! सूरियाभेणं देवेणं दिव्वा देविड्ढी दिव्वा देवजुत्ती दिव्वे देवाणुभावे लद्धे पत्ते अभिसमन्नागए।

[२०६] सूरियाभस्स णं भंते! देवस्स केवतियं कालं ठिती पण्णत्ता?

[२०७] गोयमा! चत्तारि पलिओवमाइं ठिती पण्णत्ता, से णं सूरियाभे देवे ताओ लोगाओ आउक्खएणं

२ क्रोधमानमायालोभाः प्रतीताः प्रेम–अभिष्वङ्गमात्रम् द्वेषः–अप्रीतिमात्रः अभ्याख्यानम्–असद्दोषारोपणं पैशुन्यं–पिशुनकर्म्म परिवादः–विप्रकीर्णपरदोषकथा अरतिरती धर्म्माधर्म्माङ्गेषु मायामृषा–वेषान्तरकरणतो लोकविप्रदारणं २ मिथ्यादर्शनम्–मिथ्यात्वं तत् शल्यमिव मिथ्यादर्शनशल्यम्।

भवक्खएणं ठिइक्खएणं अणंतरं चइत्ता कहिं गमिहिति कहिं उववज्जिहिति? गोयमा! महाविदेहे वासे जाणि इमाणि कुलाणि भवंति, तं०—अड्ढाइं दित्ताइं विउलाइं विच्छिणविपुलभवणसयणासणजाणवाहणाइं बहुधणबहुजातरूवरययाइं [1]आओगपओगसंपउत्ताइं [2]विच्छड्डियपेउरभत्तपाणाइं [3]बहुदासीदासगोमहिसगवेलगप्पभूयाइं बहुजणस्स अपरिभूताइं, तत्थ अन्नयरेसु कुलेसु पुत्तत्ताए पच्चाइस्सइ।

सूर्याभः च्युत्वा नाम्ना दृढप्रतिज्ञो भूत्वा महाविदेहे वर्षे निर्वाणमेष्यति

[२०८] तए णं तंसि दारगंसि गब्भगयंसि चेव समाणंसि अम्मापिऊणं धम्मे दढा पइण्णा भविस्सइ। तए णं तस्स दारयस्स नवण्हं मासाणं बहुपडिपुन्नाणं अद्धट्ठमाणं राइंदियाणं वितिक्कंताणं सुकुमालपाणिपायं अहीणपडिपुण्णपंचिंदियसरीरं लक्खणवंजणगुणोववेयं माणुम्माणपमाणपडिपुन्नसुजायसव्वंगसुदरंगं ससिसोमाकारं कंतं पियदंसणं सुरूवं दारयं पयाहिसि।

[२०९] तए णं तस्स दारगस्स अम्मापियरो पढमे दिवसे [1]ठितिवडियं करेहिंति [2]ततियदिवसे

---

[२०७] १ आयोगस्य अर्थलाभस्य प्रयोगाः—उपायाः संप्रयुक्ता—व्यापारिता यैस्तानि आयोगप्रयोगसंप्रयुक्तानि २ विच्छर्दिते—त्यक्ते बहुजनबहुभोजनदानेनाविशिष्टोच्छिष्टसंभवात् संजातविच्छर्दे वा—नानाविधभक्तिके भक्तपाने येषां तानि तथा, ३ बहुदासीदासगोमहिषगवेलकाः प्रभूता येषां तानि तथा।

[२०९] १ स्थितौ—कुलमर्यादायां पतिता—अन्तर्भूता या प्रक्रिया पुत्रजन्मोत्सवसम्बन्धिनी सा स्थितिपतिता तां, २ तृतीये

दृढप्रतिज्ञस्य जन्मादि संस्काराः

चंद[3]सूरदंसणिगं करिस्संति [4]छट्ठे दिवसे जा[5]गरियं जागरिस्संति एक्कारसमे दिवसे वीइक्कं[6]ते संपत्ते बारसाहे दिवसे णि[6]व्वित्ते असुइ[7]जायकम्मकरणे चोक्खे संमज्जिओवलित्ते विउलं असणपाणखाइमसाइमं उवक्खडावेस्संति मित्त-णाइणियगसयणसंबंधिपरिजणं आमंतेत्ता तओ पच्छा ण्हाया कयबलिकम्मा जाव अलंकिया भोयणमंडवंसि सुहासणवरगया ते मित्तणाइ-जाव परिजणेण सद्धिं विउलं असणं आसा[8]एमाणा विसा[9]एमाणा परिभुंजेमाणा परिभा[10]एमाणा एवं चेव णं विहरिस्संति, जिमियभु[11]त्तुत्तरागया वि य णं समाणा आयं[12]ता चो[13]क्खा परमसुइभू[14]या तं मित्तणाइ-जाव परिजणं विउलेणं वत्थगंधमल्लालंकारेणं सक्कारेस्संति सम्माणिस्संति तस्सेव मित्त-जाव-परिजणस्स पुरतो एवं वइस्संति-जम्हा णं देवाणुप्पिया! इमंसि दारगंसि गब्भगयंसि चेव समाणंसि धम्मे दढा पइण्णा जाया, तं होउ णं अम्हं एयस्स दारयस्स दढपइण्णे णामेणं। तए णं तस्स दढपइण्णस्स दारगस्स अम्मापियरो नामधेज्जं करिस्संति-दढपइण्णो य दढपइण्णो य। [15]तए णं तस्स अम्मापियरो अणुपुव्वेणं ठितिवडियं च चंदसूरियदरिसणं च धम्मजागरियं च नामधिज्जकरणं च ॥३३७॥

दिवसे ३ चन्द्रसूर्यदर्शनोत्सवं, ४ षष्ठे दिवसे ५जागरिकां-रात्रिजागरणरूपां ६ निवृत्ते-अतिक्रान्ते ७ अशुचीनां-जातिकर्मणां करणे ८ आस्वादयन्तौ ९ विविधखाद्यादि स्वादयन्तौ १०परिभाजयन्तौ-अन्योऽन्यमपि यच्छन्तौ मातापितराविति प्रक्रमः, ११ भुक्तवन्तौ भुक्तोत्तरकालं आगतौ उपवेशनस्थाने इति गम्यते, १२ आचान्तौ शुद्धोदकयोगेन १३ चौक्षौ लेपसिक्थाद्यपनयनेन अत एव १४ परमशुचिभूतौ। १५ 'तए णं तस्स दढपइण्णस्स अम्मापियरो अणुपुव्वेणं ठिइपडियं' इत्याद्युक्तमनुक्तं च संक्षेपत उपदर्शयति, सुगमं

आर्य–अनार्य कुलजा दास्यः

पजेम[16]णगं च पडिवद्धावणगं च पचंक[17]मणगं च कन्न[18]वेहणं च सं[19]वच्छरपडिलेहणगं च चूलोव[20]णयं च अ[21]न्नाणि य बहूणि ग[22]ब्भाहाणजम्मणाइयाइं मह[23]या इड्ढीसक्कारसमुदएणं करिस्संति।

[२१०] तए णं दढपतिण्णे दारगे पंचधाईपरिक्खित्ते [1]खीरधाईए [2]मंडणधाईए [3]मज्जणधाईए [4]अंकधाईए [5]किलावणधाईए, अन्नाहि बहूहिं [6]खुज्जाहिं [7]चिलाइयाहिं [8]वामणियाहिं [9]वडभियाहिं [10]बब्बराहिं [11]बउसियाहिं [12]जोण्हियाहिं [13]पण्णवियाहिं [14]ईसिणियाहिं [15]वारुणियाहिं [16]लासियाहिं [17]लउसियाहिं [18]दमिलीहिं [19]सिंहलीहिं [20]पुलिंदीहिं [21]आरवीहिं [22]पक्कणीहिं [23]बहलीहिं [24]मुरंडीहिं [25]सबरीहिं [26]पारसीहिं [27]णाणादेसी–

चैतत्, नवरं १६ प्रजेमनं–भक्तग्रहणं १७ प्रचङ्क्रमणं–पदाभ्यां गमनम् जल्पनम् १८ कर्णवेधनं १९ संवत्सरप्रतिलेखनं 'प्रथमः संवत्सरोऽभूत्' इत्येवं संवत्सरलेखनपूर्वं महोत्सवकरणम् २० चूडोपनयनं मुण्डनं २१ अन्यानि च बहूनि २२ गर्भाधान–जन्मादीनि कौतुकानि उत्सवविशेषरूपाणि २३ महत्या ऋद्ध्या महता सत्कारेण–पूजया महता समुदयेन जनानामिति।

[२१०] १ क्षीरधात्र्या–स्तनदायिन्या २ मण्डनधात्र्या–मण्डयित्र्या ३ मज्जनधात्र्या–स्नापिकया ५ क्रीडनधात्र्या–मण्डयित्वा क्रीडाकारिण्या ४ अङ्कधात्र्या–उत्सङ्गधारिण्या ६ कुब्जिकाभिः–वक्रजङ्घाभिः ७ चिलातीभिः अनार्यदेशोत्पन्नाभिः ८ वामनाभिः ह्रस्वशरीराभिः ९ वडभाभिः मडहकोष्ठाभिः १० बर्बरीभिः बर्बरदेशसंभवाभिः ११ बकुशिकाभि· १२ यौनिकाभिः १३ पह्लविकाभिः १४ ईसिनिकाभिः १५ वारुणिकाभिः १६ लासिकाभिः १७ लकुसिकाभिः १८ द्रमिलाभिः १९ सिंहलीभिः २० पुलिन्द्रीभिः २१ आरिबीभिः २२ पक्कणीभिः २३ बहलीभिः २४ मुरण्डीभिः २५ शबरीभिः २६ पारसीभिः एवंभूताभिः–२७नानादेशीभिर्नानाविधाऽनार्य-

[२८]विदेस[२९]परिमंडियाहिं [३०]इंगिय[३१]चिंतिय[३२]पत्थिय[३३]वियाणाहिं [३४]सदेसणेवत्थगहियवेसाहिं [३५]निउणकुसलाहिं [३६]विणीयाहिं [३७]चेडियाचक्कवालतरुणिवंदपरियालपरिवुडे [३८]वरिसधर[३९]कंचुइ[४०]महयरवंद[४१]परिक्खित्ते [४२]हत्थाओ हत्थं [४३]साहरिज्जमाणे उवनच्चिज्जमाणे [४४]अंकाओ अंकं [४५]परिभुंज्जमाणे [४६]उवगिज्जेमाणे [४७]उवलालिज्जमाणे [४८]उवगूहिज्जमाणे [४९]अवतासिज्जमाणे [५०]परियंदिज्जमाणे परिचुंबिज्जमाणे रम्मेसु मणिकोट्टिमतलेसु परंगमाणे [५१]गिरिकंदरमल्लीणे विव [५२]चंपगवरपायवे णिव्वाघायंसि [५३]सुहंसुहेणं [५४]परिवड्ढिस्सइ।

[२११] तए णं तं दढपतिण्णं दारगं अम्मापियरो सातिरेगअट्ठवासजायगं जाणित्ता सोभणंसि तिहिकरण-

प्रदेशोत्पन्नाभिः २८ विदेशः–तदीयदेशापेक्षया दृढप्रतिज्ञजन्मदेशस्तस्य २९ परिमण्डिकाभिः ३० इङ्गितं–नयनादिचेष्टाविशेषः ३१ चिन्तितं–परेण स्वहृदि स्थापितम् ३२ प्रार्थितं च–अभिलषितं च ३३ विजानने यास्तास्तथा ताभिः, ३४ स्वदेशे यद् नेपथ्यं–परिधानादिरचना तद् गृहीतो वेषो यकाभिस्तास्तथा ताभिः ३५ निपुणानां मध्ये या अतिशयेन कुशलास्ता निपुणकुशलास्ताभिः, अत एव ३६ विनीताभिः, ३७ चेटिकाचक्रवालेन अनार्य–स्वदेश–संभवेन ३८ वर्षधराणां–वर्द्धितकप्रयोगेण नंपुसकीकृतानामन्तःपुरमहल्लकानां ३९ कञ्चुकिनाम्–अन्तःपुरप्रयोजननिवेदकानां प्रतिहाराणां वा ४० महत्तरकाणां च–अन्तःपुरकार्यचिन्तकानां ४१ वृन्देन परिक्षिप्तः, तथा ४२ हस्ताद् हस्तं–हस्तान्तरं ४३ संह्रियमाणः ४४ अङ्कादङ्कं ४५ परिभोज्यमानः ४६ परिगीयमानस्तथाविधबालोचितविशेषैः ४७ उपलाल्यमानः क्रीडादिलालनया ४८ आलिङ्ग्यमानः आलिङ्गनविशेषेण ४९ स्तूयमानः ५० परिचुम्ब्यमानः ५१ गिरिकन्दरायां लीन इव ५२ चम्पकपादपः ५३ सुखंसुखेन ५४ परिवर्द्धिष्यते।

णक्खत्तमुहुत्तंसि ण्हायं कयबलिकम्मं कयकोउअमंगलपायच्छित्तं सव्वालंकारविभूसियं करेत्ता महया इड्ढीसक्कारसमुदएणं कलायरियस्स उवणेहिंति। तए णं से कलायरिए तं दढपतिण्णं दारगं लेहाइयाओ गणियप्पहाणाओ सउणरुयपज्जवसाणाओ बावत्तरिं कलाओ सुत्तओ अत्थओ[1] य गंथओ य करणओ[2] य सेहावेहि[3] य पसिक्खावेहि[4] य, तं०-लेहं गणियं रूवं नट्टं गीयं वाइयं सरगयं पुक्खरगयं समतालं जूयं जणवयं पासगं अट्ठावयं पारेकव्वं दगमट्टियं अन्नविहिं पाणविहिं वत्थविहिं विलेवणविहिं सयणविहिं अज्जं पहेलियं मागहियं णिद्दाइयं गाहं गीइयं सिलोगं हिरण्णजुत्तिं सुवण्णजुत्तिं आभरणविहिं तरुणीपडिकम्मं इत्थिलक्खणं पुरिसलक्खणं हयलक्खणं गयलक्खणं कुक्कुडलक्खणं छत्तलक्खणं चक्कलक्खणं दंडलक्खणं असिलक्खणं मणिलक्खणं कागणिलक्खणं वत्थुविज्जं णगरमाणं खंधवारं माणवारं पडिचारं वूहं चक्कवूहं गरुलवूहं सगडवूहं जुद्धं नियुद्धं जुद्धजुद्धं अट्ठिजुद्धं मुट्ठिजुद्धं बाहुजुद्धं लयाजुद्धं ईसत्थं छरुप्पवायं धणुवेयं हिरण्णपागं सुवण्णपागं मणिपागं धाउपागं सुत्तखेड्डं वट्टखेड्डं णालियाखेड्डं पत्तच्छेज्जं कडगच्छेज्जं सज्जीवनिज्जीवं सउणरुयं-इति।

[२१२] तए णं से कलायरिए तं दढपइण्णं दारगं लेहाइयाओ गणियप्पहाणाओ सउणरुयपज्जवसाणाओ

[२११] १ 'अर्थतः' इति व्याख्यानतः २ करणतः-प्रयोगतः ३ सेधयिष्यति-निष्पादयिष्यति ४ शिक्षापयिष्यति-अभ्यासं *कारयिष्यति।

* सर्वत्र 'करिष्यति' पदम् केवल मुद्रिते पुस्तके 'कारयिष्यति'।

गुरुदक्षिणा दढप्रतिज्ञस्य भोगसमर्थता

बावत्तरिं कलाओ सुत्तओ य अत्थओ य गंथओ य करणओ य सिक्खावेत्ता सेहावेत्ता अम्मापिऊणं उवणेहिंति। तए णं तस्स दढपइण्णस्स दारगस्स अम्मापियरो तं कलायरियं विउलेणं असणपाणखाइमसाइमेणं वत्थगंध मल्लालंकारेणं सक्कारिस्संति सम्माणिस्संति विउलं जीवियारिहं पीतिदाणं दलइस्संति विउलं जीवियारिहं॰ दलइत्ता पडिविसज्जेहिंति।

॥३४१॥

[२१३] तए णं से दढपतिण्णे दारए उम्मुक्कबालभावे विण्णायपरिणयमित्ते जोव्वणगमणुपत्ते बावत्तरिकलापंडिए णवंगसुत्तपडि[1]बोहए अट्ठा[2]रसविहदेसिप्पगारभासाविसारए गीयरई[3] गंधव्व[4]णकट्टकुसले सिंगारागारचारुवेसे संगयगयहसियभणियचिट्ठियविलावनिउणजुत्तोवयारकुसले हयजोही[5] गयजोही[6] रहजोही[7] बाहुजोही[8] बाहुप्पमद्दी[9] अलंभोगसमत्थे साहस्सीए वियालचारी[10] यावि भविस्सइ।

[२१४] तए णं तं दढपइण्णं दारगं अम्मापियरो उम्मुक्कबालभावं जाव वियालचारिं च वियाणित्ता विउलेहिं

---

[२१३] १ द्वे श्रोत्रे द्वे नयने द्वे नासिके एका जिह्वा एका त्वक् एकं मन इति सुप्तानीव बाल्यादव्यक्तचेतनानि प्रतिबोधितानि यौवनेन व्यक्तचेतनावन्ति कृतानि यस्य स तथा, व्यवहारभाष्ये 'सोत्ताइं नव सुत्ताइं' [ ] इत्यादि, २ अष्टादशविधायाः अष्टादशभेदाया देशीप्रकाराया–देशीस्वरूपाया भाषाया विशारदो–विचक्षणः, तथा ३ गीतरतिः तथा ४ गन्धर्वे गीते नाट्ये च कुशलः ५ हयेन युध्यते इति हययोधी एवं ६ गजयोधी ७ रथयोधी ८ बाहुयोधी तथा ९ बाहुभ्यां प्रमृद्नातीति बाहुप्रमर्दी साहसिकत्वात् १० विकाले चरतीति विकालचारी।

अन्नभोगेहि य पाणभोगेहि य लेणभोगेहि य वत्थभोगेहि य सयणभोगेहि य उवनिमंतिहिंति।

दृढप्रतिज्ञस्य अनासक्तिः

[२१५] तए णं दढपइण्णे दारए तेहिं विउलेहिं अन्नभोएहिं जाव सयणभोगेहिं णो सज्जिहिति सो गिज्झिहिति णो मुच्छिहिति णो अज्झोववज्जिहिति, से जहा णामए पउमुप्पले ति वा पउमे इ वा जाव सयसहस्सपत्तेति वा पंके जाते जले संवुड्ढे णोवलिप्पइ पंकरएणं नोवलिप्पइ जलरएणं, एवामेव दढपइण्णे वि दारए कामेहिं जाते भोगेहिं संवड्ढिए णोवलिप्पिहिति० मित्तणाइणियगसयणसंबंधिपरिजणेणं, से णं तथारूवाणं थेराणं अंतिए केवलं बोहिं बुज्झिहिति केवलं मुंडे भवित्ता अगाराओ अणगारियं पव्वइस्सति, से णं अणगारे भविस्सइ ईरियासमिए जाव सुहुयहुयासणो इव तेयसा जलंते। तस्स णं भगवतो अणुत्तरेणं णाणेणं एवं दंसणेणं चरित्तेणं आलएणं विहारेणं अज्जवेणं मद्दवेणं लाघवेणं खन्तीए गुत्तीए मुत्तीए अणुत्तरेणं स[1]व्वसंजमसुचरियतवफलणिव्वाणमग्गेण अप्पाणं भावेमाणस्स अणंते अणुत्तरे कसिणे पडिपुण्णे णिरावरणे णिव्वाघाए केवलवरनाणदंसणे समुप्पज्जिहिति। तए णं से भगवं अरहा जिणे केवली भविस्सइ सदेवमणुयासुरस्स लोगस्स परियायं जाणहिति तं०—आगतिं गति ठितिं चवणं उववायं तक्कं कडं म[2]णोमाणसियं ख[3]इयं भुत्तं

[२१५] १ सर्वसंयमः सर्वात्मना मनोवाक्कायानां संयमनं तस्य सुचरितस्य च आशंसादिदोषरहितस्य तपसो यत्फलं—निर्वाणं तन्मार्गेण, किमुक्तं भवति ?—सर्वसंयमेन सुचरितेन च तपसा, निर्वाणग्रहणमनयोर्निर्वाणफलत्वख्यापनार्थम्, २ मनसि भवं मानसिकं तच्च कदाचिद्वचसापि प्रकटितं भवति तत उच्यते—मनसि व्यवस्थितं मानसिकं मनोमानसिकम् ३ क्षयितं क्षयं नीतमिति भावः,

पडिसेविँयं आवीकम्मं रहोकँम्मं अरहा अरहस्सभागी तं तं मणवयकायजोगे वट्टमाणाणं सव्वलोए सव्वजीवाणं सव्वभावे जाणमाणे पासमाणे विहरिस्सइ। तए णं दढपइन्ने केवली एयारूवेणं विहारेणं विहरमाणे बहूइं वासाइं केवलिपरियागं पाउणित्ता अप्पणो आउसेसं आभोएत्ता बहूइं भत्ताइं पच्चक्खाइस्सइ बहूइं भत्ताइं अणसणाए छेइस्सइ जस्सट्ठाए कीरइ णग्गभावे केसलोचबंभचेरवासे अण्हाणगं अदंतवणं अणुवहाणगं भूमिसेज्जाओ फलहसेज्जाओ परघरपवेसो लद्धावलद्धाइं माणावमाणाइं परेसिं हीँलणाओ निंदणाओँ खिंसणाओँ तज्जणाओँ ताडणाँओ गरहणाओ

४प्रतिसेवितं स्यात् रुयादि -अधः-कर्म्म-भूमौ निखातं ५रहःकर्म गुप्तस्थानकृतम् ६हीलनानि सद्भूतहीनजात्याद्युद्घट्टनानि ७ निन्दनानि-परोक्षे जुगुप्साभाषणानि ८ खिंसकानि 'धिग् मुण्ड ते' इत्यादि वाक्यानि ९ तर्जनानि अङ्गुल्या निक्षेपपुरस्सरं निर्भर्त्सनानि १० ताडनानि कशादिघाताः।

अधरीकृतचिन्तामणि-कल्पलता-कामधेनुमाहात्म्याः। विजयन्तां गुरुपादाः विमलीकृतशिष्यमतिविभवाः ॥

राजप्रश्नीयमिदं गम्भीरार्थं विवृण्वता कुशलं। यदवापि मलयगिरिणा साधुजनस्तेन भवतु कृती○ ॥

इति श्रीमलयगिरिविरचिता राजप्रश्नीयोपाङ्गवृत्तिका समर्थिता ॥

प्रत्यक्षरगणनातो ग्रन्थमानं विनिश्चितम्। सप्तत्रिंशच्छतान्यत्र श्लोकानां सर्वसंख्यया ॥ ग्रन्थाग्रम्-३७०० ॥

÷ विवरणानुसारेण मूल 'अहोकम्मं' इत्यपि स्यात्। ○ एतच्छ्लोकद्वय भा० प्रतावेव।

उच्चावया विरूरूवा बावीसं परीसहोवसग्गा गामकंटगा अहियासिज्जति तमट्ठं आराहेइ चरिमेहिं उस्सास-निस्सासेहिं सिज्झिहिति मुचिहिति परिनिव्वाहिति सव्वदुक्खाणमंतं करेहिति।

[२१६] सेवं भंते! सेवं भंते! त्ति भगवं गोयमे समणं भगवं महावीरं वंदइ नमंसइ वंदित्ता नमंसित्ता संजमेणं तवसा अप्पाणं भावेमाणे विहरति।

[२१७] णमो जिणाणं जियभयाणं। णमो सुयदेवयाए भगवतीए। णमो पण्णत्तीए भगवईए। णमो भगवओ अरहओ पासस्स। *पस्से सुपस्से पस्सवणा णमो। ग्रन्थाग्रम्–२१२०।

* वाक्यमेतद् अशुद्धं प्रतिभाति। अर्थदृष्ट्या 'पएसिस्स, पण्हे पण्णवणीए नमो' इति समवेत्।

॥ रायपसेणइयं समत्तं ॥

शब्दकोश

आ नीचे विशेष विशेष शब्दोने लगतां त्रण परिशिष्टो आपेलां छे प्रत्येक परिशिष्टमां मूळना-प्राकृत तेमज टीकाना-संस्कृत शब्दो जुदा जुदा आपेला छे शब्दो बधा विभक्ति विनाना आप्या छे.

प्रथम परिशिष्टमां विशेष व्यक्तिवाचक, स्थलवाचक अने बीजा बीजा विशेष पदार्थ सूचक नामोने संग्रहेलां छे. तेमां जे नामो विशेष व्यक्तिवाचक अने स्थलवाचक छे तेनी पासे चोकडीनुं (+आवा प्रकारनुं)निशान मूकेलुं छे.

बीजा परिशिष्टमां संगीतने लगता खास खास शब्दोने एटले गीत, नृत्य, वाद्य, अभिनय, गीतना विशेष प्रकार वगेरेने लगता शब्दोने सांकळेला छे.

त्रीजा परिशिष्टमां प्रस्तुत सूर्याभ देवनी कथामां ज्यां ज्यां जिनप्रतिमा, प्रतिमानी पूजापद्धति, जिनप्रतिमानी पूजानी सामग्री, जिनप्रतिमानां स्थान अने यक्ष-भूतादिनी प्रतिमा वगेरेने लगता जेटला शब्दो जेटली वार आव्या छे ते बधाने तारवीने गोठवेला छे.

आ शब्दोनी तारवणीने लगतो एक खुलासो करी दउं: जे लोको मूर्तिपूजाना एकांत विधाननुं समर्थन करे छे ते लोको अने जे लोको मूर्तिपूजाना एकांत निषेधनुं समर्थन करे छे ते लोको आ शब्दोनो शुं उपयोग करशे ते मारी जाण बहार छे पण मारो स्वतंत्र अने सप्रमाण अभिप्राय एवो छे के कथामां आवेला आ शब्दो कोई पण प्रकारना एकांत विधान वा एकांत निषेधनुं समर्थन करी शके ज नहीं चरितानुयोगमां वा धर्मकथानुयोगमां आवेली कथा कोई जातनुं विधान वा निषेध करी शकती नथी एवो जैनाचार्योनो मत सूज्ञना अभ्यासीओना ध्यानमां ज हशे.

आसम २७२-१
आसरह २७९-९
आसव २९०-६
आसवोयग १९३-२
आहारपज्जत्ति ३३५-८
+इक्खाग २८५-१
इक्खुवाड ३३०-११, ३३१-८
इङ्गुरग ३२५-८
इङ्गुरय ३२५-७
इत्थिलक्खण ३४०-६
इसिपरिसा ३२१-१४
इसु ३१७-१
इब्भ ४०-३, २८५-१, २८५-२
इब्भपुत्त २८५-१
इंदकील ६-१, १५७-४
इंदकुंभ १६२-१
इंदमह २८४-४
इंदियपज्जत्ति ३३५-८
ईसत्थ ३४०-९.
ईसर २८५-२
ईसिणिया ३३८-५
ईहा ३०५-९
उक्कोडिय ४-२
+उग्ग ४०-१, २८५-१
+उग्गपुत्त ४०-१, २८५-१
उग्गह ३८-१, ३०५-९
उच्चारपासवणभूमि ३३४-४
उच्छु ४-१
उज्जाण २७४-२, २९५-८,
३०२-८, ३०२-९
उज्जाणपालग २९७-६
उज्जाणपालय २९५-८
उज्जाणभूमि ३०६-९
उज्जुमई ३०६-३
उण्णयासण १९६-३
उत्तप्पसरीर ३०३-६
उत्तरंग १५७-४
उप्पत्तिया २७७-३
उप्पल २०६-३
उप्पायपव्वयग १९५-२
उयगरस १९४-२
उल्लोय ९७-३, १५९-२
उवप्पस ३०७-१
उवगाइज्जमाण २८१-६
उवगारियालयण २०२-३
उवट्ठाणसाला २८०-८
उवनच्चिज्जमाण २८१-६
उवण्णयाण २७७-३
उवरिपुंछणी १६०-१, २०४-३
उवलेवण ३२९-४
उववाइअ २८६-३
उववातिअ २२-१
उववाय ३४२-११
उसड्ड १९५-३
उसभासण १९६-३
उंवरपुष्फ ३०८-२
ऊसियफजिह २९१-२
पगाहृच्च ३०९-५
परवय २४३-२, २४३-८
पलग २६-१
पला १८०-१
पलुय १५७-४
ओमत्त ३१८-९
ओरोह ५-२
ओसह २९२-२
ओहाडणी १६०-१
ओहि ४७-१
कट्ठ ३२०-१

कडगच्छेज्ज ३४०-१०
कडिसुत्त ४१-३, २५२-१
कन्नवेहण ३३८-१
कब्बड २७१-८
कम्मया २७७-३
कयवलिकम्म ४१-२, २८०-१, २८६-१, ३०९-२, ३११-१०, ३३७-३
कयलिघरग १९७-१
कयंब १२-३
करण ३४०-३
करभरवित्ति २७६-१
कलस ७-४, १९-५
कलहंस १५-५
कलेवर २०४-२
कलेवरसंघाडग २०४-२
कवाड १५८-२
कविल १५-४
कविसीसय ५-३, १५६-१
कविसीसग १५६-२
कहग ४-४
कागणिलक्खण ३४०-८
कारंडव १५-५
कालागुरु ८-२
किण्हसुत्त १६३-२
किन्नर ३२४-२
किमिकुंभी ३१५-१३
किरिया २९०-७
किलावणधाई ३३८-३
कुक्कुड ४-१
कुक्कुडलक्खण ३४०-७
कुट्ठागार ३३२-४
+कुणाल-जणवय २७८-३, २८०-६, २९५-७,
कुसुम २०६-३
कुलनिस्सिय ३२६-८
कुलव ३२६-१
कुलसंपण्ण २८१-८
कुसुमघरग १९७-३
कुहंडिया ८९-१
कूड १५९-१
कूडागारसाला १५०-५, ३१४-१०, ३३२-५
कूडाहच्च ३०९-५
+केइयअद्ध-जणवय २७४-१, २९५-८
केउ १७-३
+केयइअद्ध-जणवय २७३-१, २९७-३
केवलनाण ३०५-८
केवलिपरियाग ३४३-३
केवलि ३०-५, ३२४-९
केसरिद्दह २४४-७
+केसिकुमारसमण २८१-८, २८७-६, २८८-२, २९४-१३, ३१४-१०, ३१५-८ ३३४-६
कोट्टिमतल १५७-३
+कोट्ठयचेइअ २७८-५, २८३-३, २८८-१, २९७-३
कोट्ठागार २७६-६
कोडुंबिय ४-३, ४०-२, २८५-२
कोडुंबियपुरिस २७९-८
कोइल १५-४
कोभव १५-४
+कोरव्व २८५-१
कोरिल्लिअ ३१७-२
कोरुग १५-४

माणवार ३४०-८
मार ८३-१
मालवन्त २४४-५
मालागारद्दारअ ६६-२
मालियघरग १९७-१
मालुयामंडवग १९८-४
माहण ४३-४, २७२-२, २९९-४, ३३२-६
माहणपरिसा ३२१-१४
मिगवण २७४-२
मियवण २९५-८, ३०२-८, ३०२-९
मुइंग ४६-२
मुइगपुक्खर ८२-१
मुइगमत्थय २९६-११,३२८-३
मुट्ठिजुद्ध ३४०-९
मुट्ठिय ४-४
मुत्तादाम १००-४
मुद्दियामंडवग १९८-३
मुरवि २५२-१
मुरंडी ३३८-६
मुसंढी ५-२
मुहमंडव २१५-१
मूढ ३०३-४
मेढी २७८-१
मोक्ख २९०-७
मोहणघरग १९७-२
मंख ४-४
मंडणधाई ३३८-३
मंडल १७४-१
मंतपओग ३३३-३
मंति ३१३-६
मंदरपव्वत २४५-३
मंदरपव्वय १५२-१
मुंड ४०-६, ३०३-४
रज्ज २७६-६
रज्जु १६७-४
रट्ठ २६६-६
रतिकरपव्वत ११२-३
रत्तवई २४३-४
रत्ता २४३-४
रमणिज्ज ३३०-१०
रम्मगवास २४४-४
रयण ५७-१
रयणकरंडग १७७-१
रयणप्पभा पुढवी १५२-१
रयणागर ३२८-१
रयय ५७-२
रसपज्जव २०७-४
रह ६-३
रहवाअ ३०२-७
रहस्समेय ३३३-१०
रहोकम्म ३४३-१
+राइण्ण ४०-१
राइन्न २८५-१
रायकुल २३-४
रायनीति २७९-४
रायमग्ग ६-१
रायरुक्ख १२-४
रायववहार २७९-५
रायहाणी २७१-८
रिट्ठ ५७-२
रुइ ३०७-१
रुक्खमह २८४-६
रुद्दमह २८४-४
रुप्पकुलअ २४४-१
रुप्पागार ३२८-१
रुप्पि २४४-३

परिशिष्ट १ ना टीकामांना शब्दो

निघस १४६-१२
नीप २२०-८
नेमा १५७-५
पट्टिका १६०-५
पत्र २३७-६
पनस २२०-८
पर्युपासनीय २२५-८
पाखण्डिक २-५
पारापत २२०-८
पुस्तकरत्न २३६-१३,
 २३६-१३
पूजनीय २२५-७
पृष्ठक २३७-४
पृष्ठवंश १६०-४
प्रकण्ठक १६८-११
प्रतिवंश १५९-८
प्रतिष्ठान १५७-६
+प्रदेशी १-३

प्रियङ्गु २२०-८
प्रियाल २२०-८
भित्तिगुलिका १५८-११
मषी २३७-७
मषीभाजन २३७-६
+महावीर १३५-१३,१३६-११,
 १४३-११
माडभाग १५९-५
माणवक २२५-१२
माननीय २२५-८
मूलपाद १५७-६
रक्तसूत्र १६१-१३
+राजप्रश्नीय १-३
राजवृक्ष २२०-८
लवक २२०-७
लिप्यासन २३७-६
लुब्धक २२०-८
लेखनी २३७-७

लेख्य २३७-८
वंश १५९-८
वज्जरिसह १४६-१२
वन्दनीय २२५-७
+वर्धमानस्वामिन् १-६
वातकरक १७६-१०
वालुका १६१-८
+वीरजिनेश्वर १-१
वैनयिक २-४
शालभञ्जिका १५९-४,१६५-४
शालितन्दुल १७४-१०
शास्त्र २३७-८
शिरीष २२०-७
शृंखला २३७-६
श्रमण १६५-१३, १३६-११,
 १४३-११
श्रावक १४७-८
षट्स्थानपतित १४८-१३

सकलसङ्घाधिपति १४७-८
सङ्ग्रामरथ १८-७
सङ्घाट १७२-४
सत्करणीय २२५-८
सत्तुस्सेह १४६-१२
सत्थ २३७-८
सप्तपर्ण २२०-७
सप्तोत्सेध १४७-१०
समचउरस १४६-१२
सव्वक्खरसन्निवाइ १४७-२
सिक्कक १६४-१०
सिरिदह १०५-५
सुवर्णपत्रक १६३-११
सुवर्णप्रतर १६३-१०
सूचि १५८-४
सूचिकागृह १५८-५
+सूत्रकृताङ्ग २-३
स्तम्भ १५७-६
स्पन्दमानिका १८-८

परिशिष्ट २—संगीतने लगता शब्दो—मूळ

अच्छिज्जंती १३४-३
अट्ठगुण १८९-९
अत्थमणत्थमण १३९-३
अप्फालिज्जमाण १३३-३
अभिणय (चउविह) १४५-३, २४८-७
अभिसेयचरिय १४३-६
असोयपल्लव १४२-१
अंचिअ १४२-४, १४५-१, २४८-५
अंचियरिभिअ १४२-५
अंतोमज्झावसाणिय १४५-४
अंबपल्लव १४२-१
आगमणागमण १३९-१

आताडिज्जंत १३४-६
आमोडिज्जंत १३४-३
आमोत १३४-३
आरभड १४३-१, १४५-२, २४८-५
आरभडभसोल१४३-१,२४८-६
आलवंत १३३-३
आलिंग १३३-४
आवड १३६-४
आवरणावरण १३९-२
आहम्मंत १३३-२
ईहामिअ १३७-५
उक्खित्त १४४-४, १८९-८
उक्खित्ताय २४८-३

उग्गमणुग्गमण १३८-४
उत्तालिज्जंत १३३-४
उद्धुमंत १३३-२
उप्पयनिवयपवत्त १४३-१
उप्पायनिवायपवत्त २४८-६
उप्पिंजलभूत १३५-२
उसभ १३७-५
उसभमंडल १४०-१
एक्कारसालंकार १८९-९
एगओचक्कवाल १३८-१
एगओवंक १३८-१
एगावली १३८-२
एगुणपण्णआउज्जविहाण१२८-१
ककारपविभत्ति १४१-२

कच्छभी १३४-१
कणगावली १३८-३
कडव १३४-४
कत्थ १८९-८
करडा १३४-४
करणसुद्ध १३१-२
कलस १३६-१
कलसिया १३४-५
कहकहभूअ १३५-२
कामभोगचरिय १४३-६
किणिअ १३४-४
किन्नर १३७-५
कुट्टिज्जंत १३४-१
कुतुंब १३४-४

॥३६७॥

परिशिष्ट २ना टीकामांना शब्दो

कडम्ब १३४-९
कडव १२७-९
कण्ठशुद्ध १३२-२
कण्ठेवितार १३१-४
कनकावलि १३८-८
करटा १३४-९
करटी १२७-८
कलश १३६-५
कलशिका १२७-१०
कलसिका १३४-१०
कहकहभूत १३५-१०
कांस्यताल १२७-११
काकस्वर १८९-११
किणिक १३४-९
किणित १२७-९
किन्नर १२७-१२
कुञ्जर १२७-१२

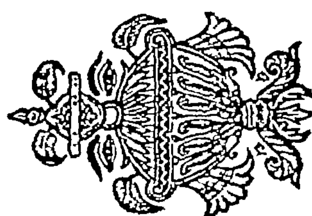
कुट्टन १३४-८
कुन्दलताप्रविभक्ति १४२-१०
कुस्तुम्ब १२६-११, १३४-७
कुस्तुम्बर १२७-१०
कुस्तुम्बरु १३४-१०
कोकिलारुत १३२-१०,१९०-७
कोशम्बपल्लवप्रविभक्ति१४२-७
क्रीडन १३५-१२
खकारप्रविभक्ति १४१-६
खरमुखी १२६-४
खरमुखीवादक १२६-४
गकारप्रविभक्ति १४१-६
गजविलम्बित १४०-६
गजविलसित १४०-७
गेयलयसुसम्प्रयुक्त १३२-९
गोमुखी १२६-१२, १३४-७
ग्रहसुसम्प्रयुक्त १३२-१०

घकारप्रविभक्ति १४१-७
घट्टन १३४-११
घन १४४-९
घोलनात्मक १४४-११
ङकारप्रविभक्ति १४१-७
चकार-छकार-जकार-झकार-
ञकारप्रविभक्ति १४१-८
चक्रार्धचक्रवाल १३८-६
चतुर्विध अभिनय १४५-११
चतुर्विधगीत १४४-१०
चतुर्विधनर्तनविधि १४५-१२
चतुर्विधवादित्र १४४-८
चन्द्रमण्डल १३९-१२
चन्द्रागमन १३९-६
चन्द्रावरण १३९-८
चन्द्रावलि १३८-७
चन्द्रास्तमयन १३९-१०

चन्द्रोद्गम १३८-१०
चमर १३७-१२
चम्पकलताप्रविभक्ति १४२-९
चम्पाप्रविभक्ति १४०-१०
चरमकामभोग १४३-१२
चरमगर्भसंहरण १४३-११
चरमच्यवन १४३-११
चरमज्ञानोत्पाद १४४-६
चरमतपश्चरण १४३-१२
चरमतीर्थप्रवर्तन १४४-६
चरमनिबद्ध १४४-६
चरमनिर्वाणनिबद्ध १४४-६
चरमनिष्क्रमण १४३-१२
चरमपूर्वमनुष्यभव १४३-११
चरमबालभाव १४३-१२
चरमभरतक्षेत्रावसर्पिणीतीर्थ-
करजन्म १४३-११

परिशिष्ट ३–प्रतिमाने लगता शब्दो–मूल

परिशिष्ट ३ ना टीकामांना शब्दो



अर्हम्

श्रीरायपसेणइय सुत्तनो सार

१ 'आमलकप्पा' नगरीनुं वर्णन

[१] ते काले ते समये आमलकप्पा[1] नामे नगरी हती. ॥१॥

१ भगवान महावीरे जे नगरीओमां चोमासां कर्यां छे तेमा आ नगरीनुं नाम नथी, तेम सूत्रोमां जणावेली–आर्यदेशनी–राजधानीओमां आ नगरीनी गणना नथी. भगवाने पोतानी साधनाना काळमां ज्यां ज्यां विहार कर्यो छे तेमां पण 'आमलकप्पा' नो उल्लेख नथी, तेथी 'आमलकप्पा' नगरी विशे कांइ विशेष जाणवा जेवी नोंधो नथी मळती. स्थितप्रज्ञ थया पछी भगवाने जे विहार कर्यो छे तेमां आ नगरीनी गणना थइ शके एम छे ए, आ 'रायपसेणइय' ना उल्लेखथी सूचित थाय छे. आ नगरी हालमां क्यां छे? तेनुं वर्तमान नाम शुं छे? ए, मगधदेशमां छे के बीजा कोइ देशमा छे? ए बधी बाबतो अद्यावधि अधारामां ज छे.

टीकाकार मलयगिरि 'आमलकप्पा'नो संस्कृत पर्याय 'आमलकल्पा' जणावे छे. आ सूत्रमां जे जे विशेष नामो आवे छे ते जेमनां तेम–प्राकृत–राखीने अनुवादमां प्रयोज्यां छे. कोइ पण प्रामाणिक आधार विना मूळ प्राकृत नामोनुं संस्कृत रूपांतर करवा जतां अर्थांतर थवानो भय रहे छे.

रायपसेणइय सुत्तनो सार

॥२॥

ए आमलकप्पा नगरीमां धन अने धान्य वगेरेनी विभूति परिपूर्ण हती, मूळथी वसवाट करीने रहेनारा अने बहारथी आवीने वसेला एवा बन्ने जातना लोको त्यां प्रमोदथी रहेता हता, नगरीनी चारे बाजु दूर दूर सुधीनी सीमाडानी भोंय[2] प्राज्ञ लोकोए संस्कारेली-केळवेली हती, ए भोंय उपर सेंकडो अने हजारो हळो फरतां रहेतां हतां, शेरडी, जव अने शाळनु वावेतर थतुं हतुं तथा ए भोंयने पाणीनी नीको द्वारा पाणी पावामां आवतु हतुं

ज्यांना कूकडा[3] अने सांढो एक गामथी बीजे गाम जइ शके एवां पासेपासेनां घणां गामो ए नगरीनी आसपास हतां, अनेक

'रायपसेणइय' नुं संस्कृत रूप श्रीमलयगिरि 'राजप्रश्नीय' जणावे छे त्यारे तेमनाथी प्राचीन आचार्य सिद्धसेने (तत्त्वार्थ–टीकाकार) आ सूत्रनु सस्कृत नाम 'राजप्रसेनकीय' नोंधेलु छे अने वादिदेवसूरिना गुरु श्रीमुनिचन्द्रसूरिए देवेंद्रनरकेन्द्रप्रकरणमां 'राजप्रसेनजित्' जणावेलु छे.

आ बधामा कोण कई रीते खरुं छे ए एक शोधनो विषय छे, परन्तु आवो व्यर्थ विवाद न ऊठे माटे ज मूळ नामोनी प्रथा साचवी राखवी जरुरी छे.

२ आपणो देश खेतीप्रधान छे, खेती अने पशुओ ज आपणी अहिंसक संस्कृतिनुं प्रधान धन छे. प्राचीन समयमां जेम बीजा बीजा विषयोनां शास्त्रो हता तेम कृषिविद्याने लगतां पण हतां. एमां खेतीनो साथे सीधो सम्बन्ध धरावनारा–भूमिपरीक्षा, भूमिने केळववानी पद्धति, पाणीकळानी विद्या, बीजरक्षणविधि, वृक्षोना रोगो अने तेनां औषधो वगेरे–अनेकविषयोनी स्फुट चर्चा रहेती. माटे ज मूळ सूत्रकार जणावे छे के 'प्राज्ञलोको भूमिने सस्कारता–केळवता' आजनो खेडूत मूढ गणाय छे तेम ते समयनो खेडूत मूढ नहि पण 'प्राज्ञ' लेखातो, ए ज, मूळ सूत्रनो उक्त उल्लेख सूचवे छे.

३ व्याकरणमहाभाष्यमा गामडाओनी परस्परनी निकटताने सूचववा ग्रामोना विशेषणरूपे 'कुक्कुटसंपात्याः ग्रामाः' उदाहरण मूकेलुं छे. उपर्युक्त वर्णन उपरथी चोक्कस जणाय छे के ते वखतनां गामो खरेखर कुक्कुटसंपात्य ज हतां. 'कुक्कुटसपात्य' एटले 'कूकडो पहोंची शके तेवुं गाम;'

थळदो, पाडाओ, गायो अने घेटांओ, ए नगरीनुं पशुधन हतुं, ज्यांनां कळामय आकारवाळां अनेक चैत्यो अने एवा ज सुंदर-पण्यतरुणीना[४]-अनेक संनिवेशो प्रेक्षकोनां मनने आकर्षतां हतां.

आखीय नगरीमां कोइ नहि लांचियो,[५] कोइ नहि खूनी, कोइ नहि गांठियो, कोइ नहि चोर अने कोइ नहि दंडपाशिक-सोनेरी टोळीवाळो; पथी ए नगरी सर्व प्रकारना उपद्रवोथी रहित हती, नगरीमां रहेनारा भिक्षुओ भिक्षाने सारी रीते मेळवी शकता हता, त्यां रहेनारा प्रत्येक मनुष्यना जानमालने लेश पण हाण थवानो संभव न हतो तेथी ते विश्वासपूर्वक सुखथी त्यां रही शकतो, अनेक कोटिना[६] कौटुम्बिक-कणवी लोको त्यां सुखे सुखे रहेता हता.

अर्थात् एक गामनो कूकडो चालतो चालतो बीजे गाम पहोंची शके तेटलु नजीकनुं गाम. भीलोना प्रदेशमां अने मगधमां कुक्कुटसंपात्य ग्रामो नजरे जोएलां छे.

४ सूत्रनो 'पण्यतरुणी' शब्द वांचीने कोई भडकी न जाय. पण्यतरुणीनी ए समयनी संस्था समाजमां आदरपात्र हती. श्रीवात्स्यायन पोताना कामसूत्रमां जणावे छे के-"शील अने रूपना गुणोथी युक्त एवी वेश्या जनसमाजमां आसन मेळवे छे, राजा तेने पूजे छे अने गुणवत जनो प्रशंसे छे, कलाना विद्यार्थिओ कळा मेळववा तेने प्रार्थे छे अने तेनो आदर करे छे." आजकाल आ संस्था विशेष विकृत थएली देखाय छे पण ते वखते प्रायः तेवु नहि होय एम आ वर्णनथी मानी शकाय.

५ आ तो मात्र वर्णना छे. कोइ सजीव के निर्जीवनुं वर्णन करतां मात्र तेनी ऊजळी बाजुनु ज वर्णन करवानो प्रघात, कविओमां आदिकवि वाल्मीकिथी चाल्यो आवे छे अने तेने लीधे तेओ केटलेक स्थळे केवळ ऊजळु ऊजळुं ज बधुं वर्णवे छे. मानवस्वभाव जोतां पण आवु बनवु असंभवित जेवुं जणाय छे. छतां नगरीना आ वर्णन उपरथी 'एमां रहेनारा एकंदर सारा हता' एम तो कल्पी शकाय.

६ मूळमां आ माटे 'अणेगकोडि'-शब्द छे. टीकाकार मलयगिरि, तेनो अर्थ करतां लखे छे के "अनेककोटिभिः अनेककोटिसंख्याकैः"

अनेक नटो, नाचनाराओ, राजानां गुणगान गानाराओ, मल्लो, मुष्टियुद्ध करनाराओ, हसावनारा विदूषको, कथा करनाराओ, कूदनाराओ के तरनाराओ, रास लेनाराओ के भांड लोको, शुभ अशुभ कही बतावनारा ज्योतिषिको, ७लंखो-वांसडानी टोच उपर खेल करनाराओ, चित्रनां पाटियां हाथमां राखी जनमनरंजन करनाराओ, तूण वगाडनाराओ अने तुंबनी वीणा वगाडनाराओ, ए बधा लोको नगरीमां सारो आश्रय मेळवता हता.

दंपतीओने क्रीडा करवाना रमणीय आरामो, मोटा मोटा उत्सवो अने मोटी मोटी उजाणीओ ऊजवी शकाय एवां सुंदर उद्यानो, सरस कूवाओ, आंखने ठारे एवां तळावो, दीर्घिकाओ-लांबी लांबी मनोहर वावडीओ अने क्याराओ नगरीनी शोभामां वधारो करतां हतां.

नगरीनी रक्षा करतुं नगरीनी फरतुं उंडुं, उपर पहोळुं नीचे सांकडुं एवुं खात[८] हतुं तथा नगरी फरती उंडी अने उपर नीचे सरखी खोदेली विशाळ खाइ हती, नगरीमां कोई उपद्रवकारी न पेसी शके माटे मोटां मोटां तीक्ष्ण चक्रो, गदाओ, मुसंढीओ, सो जणाने कचरी नाखे एवी मोटी मोटी शिलाओ वगेरे शस्त्रो[९] दरवाजे दरवाजे टांगेलां हतां, नगरीनी फरतो धनुष जेवो वांकडो कोट

अर्थात् अनेककोटि एटले अनेक क्रोड संख्या. पण आ अर्थ करता 'अनेक कोटि' नो 'अनेक प्रकार' एवो अर्थ अहीं विशेष उचित लागे छे-'कोटि' शब्दनो 'प्रकार' अर्थ, जैन आगमोमा सुप्रतीत छे.

७ आ अर्थ माटे मूळमा 'लख' शब्द छे. जे लोको चोघडिया वगाडे छे तेने 'लंघा' कहेवामां आवे छे. मूळनो 'लंख' अन आ 'लङ्घा' बन्ने समान शब्दो छे एटले 'लङ्घ' नो मूळ अर्थ 'चोघडिया वगाडनारो' कदाच होइ शके.

८ शहेरनी फरती खाइ होय छे तेम खाइनी फरतुं बहारना भागमा एक 'खात' पण होय छे, एमां अंगारा के चीणो भरवामां आवतो. चीणो एटले वधो लीसो होय छे के तेना उपर पग मूकता ज माणस तळिये उतरी जाय छे. ए रीते 'खात' शहेरनी रक्षानुं एक साधन हतुं.

९ केटलांक प्राचीन शस्त्रोनां नाम, आचार्य हेमचन्द्र आ प्रमाणे जणावे छेः "चन्द्रहास छुरी पत्रपाल दंड ईली भिंदिपाल कुन्त द्रुघण

कोटमां खूब उंची उंची करवामां आवी हती, कोट तथा
गोळ गोळ कांगराओथी शोभतो हतो, चोकीदारोने बेसवानी अटारीओ
नगरीनी वच्चेनो मार्ग[10] आठ हाथ पहोळो राखेलो हतो, कोटनी पोळोना दरवाजाओमां नाना नाना गढो रचेला हता अने ए दर-
वाजाओ मजबूत रीते जडेला हता.
नगरीना राजमार्गो सारा सारा विभागवाळा हता, त्यां व्यवहारीआओनी मोटी वसती हती अने वेव्हाररोजगारनुं तो ए नगरी
मोटुं मथक हतुं, कुंभार, सुतार, लुहार वगेरे शिल्पकारी लोकोनो त्यां सुखे निर्वाह थतो हतो.
नगरीना केटलाक मार्गो सिंगोडा[11] जेवा त्रिकोण हता, ज्यां त्रण के चार शेरीओ भेगी थाय एवा केटलाक त्रिक मार्गो अने
चतुष्क-चोक मार्गो हता अने ज्यां अनेक शेरीओ भेगी थाय एवाय केटलाय चाचर-चत्वर मार्गो हता, राजमार्ग उपर राजानी अवर-
जवर खूब रहेती, नगरीना मार्गोमां उत्तम घोडाओ, झूलता हाथीओ, शणगारेला रथो, शिखरवाळी घुम्मटदार पालखीओ, झूलती
पालखीओ अने बीजां अनेक वाहनोनी हरफर ठीक रहेती
त्यांना जलाशयो खीलेलां कमळोथी चमकतां हतां अने धोळां धोळां मोटां महालयो जाणे आभना टेकारूप होय एवां अडग जणातां

कुठार परिघ तोमर शंकु त्रिशीर्षक शक्ति पट्टिस दुःस्फोट चक्र शतघ्नी महाशिला मुषुंढी चिरिका वराहकर्णक आराफल कणय वगेरे" आ
वधानो वधारे वीगत माटे जुओ-अभिधानचिंतामणि काड ३ श्लो० ४४६-४५१
१० आ मार्गनु खास नाम मूळमां 'चरिआ' छे. भाषामा एने ज मळतो 'चर' शब्द जाणीतो छे. टीकाकार कहे छे के "चरिका अष्ट-
हस्तप्रमाणो मार्गः"
११ नगरीना विविध मार्गोने सूचववा मूळमां 'सिंघाडग' 'तिय' 'चउक्क' अने 'चच्चर' शब्दो आवेला छे. ते ते मार्गोना आकारो उपरथी
तेमनां एवा जुदां जुदां नामो थएलां छे. जे मार्गनो आकार शिंगोडा जेवो ते 'सिंघाडग'. बाकीना शब्दो प्रतीत छे. 'चोक' अने 'चाचर'
शब्दो तो भाषामा पण प्रचलित छे.

रायपसेणइय सुत्तनो सार ॥६॥

हतां. एवी ए आमलकप्पा नगरी दर्शनीय, मनोहर, प्रासादिक अने असाधारण सौंदर्यवाळी[12] हती[13]

२ 'अंबसालवण' चैत्यनुं वर्णन

[२] एवी ए आमलकप्पा नगरीथी बहार ईशान खूणामां अंबसालवण नामनुं एक चैत्य हतुं

ए चैत्य घणा लांबा काळनुं पुराणुं, पूर्व पुरुषोए गाएलुं-वखाणेलुं हतुं, छत्र, धजा, घंट, पताका, लोमहस्त[14] -मोरपींछी अने वेदिका वगेरेथी शोभित हतु, चैत्यनुं भोंतळ छाण वगेरेथी लींपीने चोक्खुं करेलुं अने भींतो वगेरे खडीथी धोळीने चकचकती करेली, उत्तम रक्त चंदनना थापावाळुं, चंदनना सुंदर कळशोथी मंडित हतुं, एना दरेक दरवाजा उपर चदनना घडावाळां तोरणो बांधेलां हतां,

एमां उपर नीचे सुगंधी पाणीनो छटकाव करीने मोटी मोटी माळाओ लटकावेली हती. पांच वर्णनां सुगंधी फुलो, काळो अगर, उत्तम कुंदुरू, तुरुक्कनो[15] उंचा प्रकारनो धूप वगेरे अनेक सुगंधी धूपोथी ए महेंकी रहेलुं हतुं-जाणे के सुगंधोनो भरेलो ओरडो

१२ औपपातिक-उववाइय-सूत्रमा 'चम्पा' नगरीनु वर्णन छे. मूळ सूत्रोमा सावत्थी, काकन्दी, राजगृह वगेरे जे जे नगरोना वर्णननी हकीकत कहेवानी होय छे त्यां सूत्रकार कहे छे के औपपातिकमां वर्णवेली 'चपा' प्रमाणे ते ते नगरनु वर्णन समजी लेवु. अहीं पण मूळकारे एवी ज भलामण करेली छे. टीकाकारे ते भलामण प्रमाणे टीकामां नगरीनो वर्णक काव्यमय भाषामा नोधेलो छे.

१३ 'हती' माटे मूळमा 'होत्था' क्रिया बतावेली छे. 'हती' अने 'होत्था' वच्चे घणु ज मळतापणुं छे अने 'होत्था, पद, 'अभविष्ट' क्रियापदनु सगा भाई जेवु छे.

१४ अहीं जणावेलो 'चैत्यनो वर्णक, औपपातिक सूत्रथी लीधेलो छे. तेमां 'लोमहस्त' नो अर्थ 'लोममय प्रमार्जन'-रुवाटानी पुञ्जणी'-आपेलो छे; ए अर्थमा 'मोरपींछी' नो पण भाव समजाइ जाय छे.

१५ सूत्रोमा ज्या त्यां धूपना नाम तरीके 'काळो अगर' 'ऊंचो किनरु' (कुंदुरु) अने 'तुरुक्क'-'तुरुष्क'नां नाम आपेलां छे. 'तुरुक्क'

ज म होय ?

ए चैत्यमां नटो,[16] नाचनाराओ जल्लो, मल्लो, मौष्टिको, विदूषको, कूदनाराओ, तरनाराओ, ज्योतिषिको, रास लेनाराओ, भांडो, कथा करनाराओ, चित्रपटने वतावनाराओ, तूण अने तुंववीणाने वगाडनाराओ, भुजगो-भोगी-शोखी-जनो अने मगधो-भाटो वगेरे रहेता हता.

ए चैत्य घणा लोकोमां अने अनेक देशोमां प्रख्यात हतुं, घणा आहोता लोको त्यां आहुति देवा, पूजा करवा,[17] वंदन करवा अने नमन करवा आवता, घणा लोकोनुं ए सत्कारनुं, सन्माननुं अने उपासनानुं स्थान हतुं, कल्याण अने मंगलरूप एवा देवता संवधी

शब्द 'तुर्कस्तान' सूचक छे एटले ज तुर्कस्तानमां नीपजता धूप माटे पण ए ज शब्दनो उपयोग मूळकार करे छे. आ रीते आपणो तुर्कस्तान साथेनो सम्बन्ध केटलो प्राचीन छे ते समजी शकाय एम छे. तुरुष्क-तुरुक्क-तरक. "तुरुष्को यवनदेशजः"-३ काड, श्लोक ३१२. "तुरुष्कास्तु साखयः स्युः" ४ काड, श्लोक २५-अभिधानचिंतामणि-हेमचंद्र.

मुसलमान बादशाहो 'शाहि'-'शाह' तरीके बहु प्रसिद्ध छे आचार्य हेमचंद्रे ए 'शाह' शब्दनुं संस्कृत 'साखि' बनाव्युं छे अने तेनी संस्कृत व्युत्पत्ति पण आपेली छे. फारसी शब्दोने विना सकोचे सस्कृतमा उतारवानी प्रथा शिष्ट लोकोमा आजथी केटलांय वर्षो पूर्वे पण प्रचलित हती एम आ उपरथी समजी शकाय एवुं छे.

१६ चैत्यनु आ वर्णन जोतां, ते भारे गम्मतनु स्थान पण होय एम लागे छे. केटलीक कथाओमां चैत्यने 'जुगारीओनो अखाडो' 'युवान युवतीओनां मीलननु स्थान' 'अभिसारिकाओनु सकेतस्थान' ए रीते वर्णवेलुं छे, ते उपर्युक्त वर्णन जोतां बध बेसे एवु छे.

१७ चैत्य, उक्त रीते मोजशोखनुं स्थान हतु छता त्यां पूजाआहुति वगेरे माटे घणा लोको आवता एम आ वर्णन सूचवे छे. चैत्यमां भुजग लोको रहे अने धर्मविधिओ पण चाले ए परिस्थितिथी, ते समयना आपणा लोकोनी मनोदशा ठीक ठीक व्यक्त थइ शके एम छे.

चैत्यनी पेठे ए, विनयपूर्वक पर्युपासवाने योग्य हतुं.

देवताई शक्तिवाळुं, साचवाळुं, साचा उपायोवाळुं अने हजारो यागोना भागो ज्यां नैवेद्यरूपे धरवामां आवे छे एवा ए चैत्यने घणा लोको आवी आवीने पूजता-अर्चता.

वळी, ए चैत्य, चारे बाजु एक मोटा वनखंडथी घेराएलुं हतुं, ए वनखंड लीलोछम, ठण्डो हिम, क्यांय हरी कांतिवाळो, क्यांय नीली कांतिवाळो, सघन छायावाळो अत्यन्त रमणीय हतो-ए वनखण्ड जोतां जाणे के मेघनो समूह ज न होय एवो भास जोनारने थतो हतो.

३ 'अशोक' वृक्षनुं वर्णन

(३) चैत्यनी चारेबाजु पथराएला ए पहोळा वनखण्डमां वच्चोवच्च एक मोटुं उंचु अशोकनुं वृक्ष हतुं, ए पण आंखने ठारे एवुं, प्रसन्नता पमाडनारुं घणुं सुशोभित हतुं

ए अशोकवृक्षनी आसपास केटलांय बीजां तिलकनां, लकुचनां-लवकनां, छत्रगोपनां, शिरीषनां, सादडनां, दधिपर्णनां, लोदरनां, धवनां, चन्दननां, अर्जुननां, नीपनां, कुडजनां, कदम्बनां, फनसनां, दाडिमनां, शालनां, ताडनां, प्रियकनां, प्रियगुनां, पुरोवक-कुरवकनां, राजवृक्षनां अने नन्दिवृक्षनां उत्तम वृक्षो[१८] आवेलां छे

ए बधांय वृक्षो मूळ, कन्द, स्कन्ध-थड, छाल, शाखा, प्रवाल, पत्र, पुष्प, फळ अने बीजोथी युक्त छे; ए वृक्षोनां मूळो भोंयमां बहु उंडे पहोंचेलां, सीधा अने एकसरखी रीते गोळ ए बधां उगेलां, पहेलुं मूळ, पछी कन्द, पछी थड, पछी शाखा प्रशाखा ए जातनी एकसरखी उगणी ए वृक्षावळीमां सचवाएली, एमनी शाखा प्रशाखाओ चारे कोर फेलाएली, एमनां मोटां मोटां गोळ थडो वाम वाम जेटलां घेरावावाळां, ए वृक्षोनां पत्रो वायुना दोषथी वा अन्य प्रकारनी ईति-उपद्रव-थी नहि खरेलां अर्थात् एमनां पांदडां

१८ अहीं जे वृक्षो गणावेलां छे तेमांनां केटलाकनो अर्थ ज अवगत थतो नथी. टीकाकार अने टबाकार बन्ने ए बाबत मौन राखे छे. कोशकारो 'वृक्षविशेष' सिवाय बीजो अर्थ आपी शकता नथी, माटे ज जेमना तेम मूळ नामो कायम राखेला छे.

एवां घाटां हतां के तेमां क्यांय छिद्र ज न जणाय, ए वृक्षोनां पाकां घरडां पांदडां तो खरी पडेलां अने ताजां नवां कूणां पांदडांने
पवां घाटां हतां के तेमां क्यांय छिद्र ज न जणाय, ए वृक्षोनां पाकां घरडां पांदडां तो खरी पडेलां अने ताजां नवां कूणां पांदडांने
लीधे ए लीला लीला काच जेवा ओपता, वृक्षोनी टोचे आवेला नवा कोमळ किसलयो शिखरनी जेम हल्या करता, छए ऋतुओमां
ए बधां कोळेलां-कळीओवाळां, फुलेलां-फुलोवाळां, फळेलां-फळोवाळां, पल्लववाळां, गुच्छावाळां अने फळोना भारथी नमेलां रहेतां.
ए उंचां उंचां तरुओ उपर दम्पतीरूप सूडा, मोर, मेना, कोयल, कोरक, कोभव, भिंगार, कोंडलक, जीवजीवक, नन्दीमुख, कपिल, ९
कपिलाक्ष, कारंड, चकवा, कलहंस अने सारस वगेरे पक्षीओ आमतेम उडतां, कूजतां-मधुर कलकल कर्या करतां, भमरा-भमरीओनुं
झुण्ड (एमनी उपर) गुंजारवमां मस्त रहेतुं.
रोग विनाना, कांटा वगरना अने मधुर रसभर ए तरुओनी[19] आसपास रिंगणी वगेरेना नाना छोडो तथा नवमालिका वगेरेना
मण्डपो शोभता; ए बधां विशेष उन्नत तरुवरो पर ध्वजो फरक्या करता
अशोक वृक्षनी चारे बाजु शोभायमान ए वृक्षकुंजमां क्यांय जाळियांवाळी चोरस वावडीओ, क्यांय गोळ वावो, क्यांय कमळोवाळां
नानां नानां पोखरो अने क्यांय पाणीथी भरेली लांबी लांबी सीधी नीको, वगेरे अनेक जळाशयो ए वृक्षघटानी शोभामां वळी विशेष १०
वधारो करतां, जेटली जातनी सुगन्धो होय छे तेटली वधी ए घटामांथी महेकती तेथी तेने लोको 'गन्धघ्राणि'[20] कहेता.
पद्मवेल, नागवेल, अशोकवेल, चम्पकवेल, आंबावेल,[21] वनवेल, वासंतीवेल, माधवीवेल, कुदवेल अने श्यामवेल वगेरे बीजी अनेक
वेलडीओथी ए वृक्षराजि वींटळापली रहेती, वनराइना प्रत्येक वृक्षना मूळमां के आसपास उगेलां डाभ वगेरे घातकतृणो नींदी नाखेलां

१९ वृक्षोने लगतु आ बधुं वर्णन वांचतां ते समयना वृक्ष-प्रेमीओनो वृक्षो प्रति पोताना सतान जेवो प्रेम सहेजे जाणी शकाय एम छे. १९
जे लोकोमां वृक्षनी साचवणी, वृक्षोने उगाडवानी पद्धतिनुं ज्ञान अने वृक्षो प्रति काळजी न होय तेओ आवां वृक्षो न उगाडी शके. आज-
काल आवा वृक्षप्रेमीओना अभावने लीधे ज देश सूको थवा लाग्यो छे ए खोटी वात नथी.

२० 'गंधघ्राणि' शब्द गधनी तृप्तिनो सूचक छे. अशोकवृक्षनी आसपासनो वृक्षकुज एटली बधो महेकतो एटले के जे जे जातना सुगधो

हतां अने उक्त बधी वेलडीओ फळफुलोथी नित्य लचकती रहेती.

ए वनराइमां केटलाय क्रीडारथो, संग्रामरथो, गाडांओ, गोळ घुम्मटवाळी पालखीओ, झूलती पालखीओ वगेरे अनेक प्रकारनां वाहनो छूटेलां रहेतां, अने सुखे सुखे जवा आववा माटे ठेकठेकाणे विचित्र प्रकारना सेतुओ-पूलो-गरनाळाओ बांधेलां हतां तथा फरवाहरवा माटे अनेक पाका सुंदर मार्गो[22] करेला हता

॥१०॥ उक्त वनराजिथी विराजित ए उत्तमोत्तम अशोकवृक्ष उपर रत्नोथी बनेल, निर्मळ, देदीप्यमान, देखावडां स्वस्तिक, श्रीवत्स, नन्दावर्त, वर्धमानक, भद्रासन, कलश, मत्स्य अने दर्पण-ए आठ मङ्गलो[23] लटकावेलां हतां

सभवी शके छे ते बधाय तेमांथी फोरता अने ते वडे लोकोनी नासा तृप्त तृप्त अने तर थइ जती माटे ए वृक्षकुज 'गधघ्राणि' कहेवातो. संस्कृतमां 'घ्रै' धातु तृप्ति अर्थने बतावे छे. 'गधघ्राणि'नो 'घ्राणि' शब्द, ए 'घ्रै' धातुथी बनेलो छे अने भाषामां बोलातुं 'धरावु' क्रियापद ए 'घ्रै'-मांथी नीकळ्युं छे. एथी मुद्रित विवरणमांना 'गधघ्राणि' शब्द करतां 'गधघ्राणि' शब्द युक्तियुक्त छे.

२१ आ माटे मूळमां 'चूयलया' शब्द छे. न्यायना ग्रथोमां केटलेक स्थळे उदाहरण माटे 'चूतलता' के 'आम्रलता' शब्दनो उपयोग थयेलो छे तेनो अर्थ 'आबावेल' छे. उगेला घटादार वृक्षो जेवा मोटा मोटा आबा तो सौनी जाणमां छे पण 'आबावेल'ने केटलाक नहि जाणता होयः खेतीवाडीना प्रदर्शनमां घणा प्रकारना आंबा आवेला, तेमा एक 'वेलियो आबो' पण नजरे जोएलो. ए आंबो पातळो सोटी जेवो होय अने जेम बीजी वेलो चडे छे तेम तेनी वेल चडे अने केरीओ पण थाय.

२२ वनराइना उक्त वर्णनथी एम समजी शकाय छे के आपणे त्यांनी नगररचनानी विद्या घणा उचा प्रकारनी हती. घणा प्राचीन समयमां पण पूलो अने पाका मार्गो वगेरे सुखसाधनो लोकोना ध्यान बहार न हतां.

२३ स्वस्तिक श्रीवत्स नंद्यावर्त वर्धमानक भद्रासन कलश मत्स्ययुगल अने दर्पण ए आठ मंगलरूप छे. आ सूत्रमां घणे स्थळे आ आठ

४ 'शिलापाट'नुं वर्णन

वळी, वज्रना डांडावाळां रूपेरी पट्टावाळां कमळ जेवां सुगन्धी, काळां, नीलां, लाल, पीळां अने धोळां चामरो टांगेलां हतां, ए उपरान्त ए अशोक तरु उपर बीजां घणां उपराउपर लटकतां छत्रो, उपराउपर लटकती धजाओ, घंट अने चामरनी जोडी, सर्वरत्नमय पद्म, कुमुद, नलिन, सुभग, सौगन्धिक, पुंडरीक, महापुंडरीक शतपत्र अने सहस्रपत्रना हाथो खोडेला[२४] हता.

[४] एवा पूजापात्र ए अशोकवृक्षनी नीचे एक मोटी काळी शिलापाट हती.

अशोक वृक्षना थडनी लगोलग आवेली ए शिलापाट उंचाई, लम्बाई अने पहोळाईमां प्रमाणसर हती.

जांबुडां, नीलां कमळनो ढगलो, मरकतमणि, बीयानुं वृक्ष, आंखनी कीकी अने तरवारना वर्ण जेवी ते काळी शिलापाट, आंजणनां वृक्षो, मेघनो समूह, नीलां कमळ अने बलदेवना वस्त्रनी माफक चमकती हती तथा भमराओनुं झुंड, आंखनो सुरमो, गळीनी गोळीओ, ||११||

मगळोने मगळ तरीके सूचवेलां छे. स्वर्गमां देवोनी सवारीमां पण आ ज आठ मगळ सर्व प्रथम चाले छे जे निगठ लोको द्रव्य मंगळ उपर ओछो भार आपे छे तेओ ज आ आठ पदार्थोने मगळ तरीके जणावे छे तेनु कारण समजातुं नथी मदिरमां ज्यां जिनमूर्ति होय छे त्यां पण आ आठ मगलनी पाटली पूजाय छे ते महदाश्चर्यनो विषय छे. बीजुं तो ठीक पण 'मत्स्यना युगल' ने मगल कहेवानुं शु कारण हशे? अथवा ए आठ मगळोनी पाछळ कोइ प्रकारनो विशेष इतिहास छुपाएलो हशे?

२४ जूना समयमां लोको 'अशोकवृक्ष' ने पूजता हशे, ए, अशोकना आ जातना वर्णन उपरथी जणाय छे. हाल्मां पण खीजडा वगेरेनां वृक्षो उपर लोको कपडां लटकावे छे, नानां नानां घोडियां के ढींगला बांधे छे अने धजा के त्रिशूळ वगेरे खोडे छे. वैदिक लोको पीपळाने अने तुलसीने पूजे छे. बौद्ध लोको गयाना बोधिवृक्षने अने जैन लोकोनो एक भाग रायणना झाडने पूजे छे. क्षत्रियोतु शमीपूजन तो सुप्रसिद्ध छे ज. वृक्षपूजानी आ परंपरा बहु वखतथी चालती जणाय छे एनी पाछळ वृक्षोनी उपयोगिता, कोइ पुण्य पुरुषनी स्मृति के वहेमनां पटळ छे ए खास शोधनो विषय छे.

५ 'सेअ' राजानुं वर्णन

पाडानुं शिंगडुं-ए बधां करतांय वधारे काळी ते शिलापाट, जोनारने केम जाणे पथराइने बेठेला भमराओनुं झुंड न होय एवो भास करावती हती.

एनो काळो रंग घन-घेरो हतो, ए क्यांय कोठलानी जेम पोली न हती, रूपमात्रनां प्रतिबिंबो तेमां आरिसानी पेठे पडतां, घाटे सिंहासन जेवी आठखूणी ए पाटनी बधी बाजुनी कोरोमां मोतीओ जडेलां हतां, चामडानुं वस्त्र, रू, माखण अने आकडानुं रू ए बधानी जेम एनी सुंवाळप हती; एवी रत्नमय[२५] रम्य शिलापाट ए अशोकवृक्षनी नीचे आवेली हती.

[५] आ तरफ—

ए नगरीमां राजा सेय[२६] अने राणी धारिणीनुं राज्य हतुं.

---

२५ रत्नमय शिलापाट अने वळी एनी कोरोमा मोतीओनुं जडतर; आ अने आवा बीजा रत्नमय, वज्रमय, मणिमय, वैडूर्यमय के सुवर्णमय पदार्थना वर्णन उपरथी ते समयनी संपत्तिनी बहुलता ज कल्पी शकाय पण ए नर्युं ऐतिहासिक सत्य छे एम तो केम कहेवाय ? 'लंकामां सोनु पाके छे', 'जे जाय जावे ते, परियाना परिया चावे एटलु धन लावे' इत्यादि वाक्योनो जे आशय छे ते ज आशय आ 'रत्नमय शिलापाट' नो छे. आ प्रकारना वर्णको एक प्रकारनी अतिशयवाळी भाषा छे, लोकमानसने लक्ष्यमा राखीने आवा वर्णको करवा पडे छे. कथाग्रंथोमा आवा वर्णको होय तोज कथाकार सफळ थयो गणाय.

२६ राजा 'सेय'नो विशेष वृत्तांत जाणवामा नथी. स्थानांग सूत्रना आठमा ठाणामां श्रमण भगवान महावीरे प्रव्रजित करेला आठ राजाओनां नामो गणावता सूत्रकारे तेमां एक नाम 'सेय' पण मूकेलुं छे. ए 'सेय' आ के बीजो कोइ ते विशे नक्की कही शकातुं नथी. टीकाकार अभयदेव तो ते 'सेय' आ ज'सेय' छे एम जणावे छे. तेओ लखे छे के "तथा सेये आमलकल्पानगर्याः स्वामी, यस्या हि सूर्यकाभो देवः सौधर्माद् भगवतो महावीरस्य वन्दनार्थमवततार नाट्यविधिं चोपदर्शयामास, यत्र च प्रदेशिराजचरितं भगवता प्रत्यपादि इति" अर्थात् जे आमलकप्पा

राजा सेय महान् हिमालय, महान् मलयगिरि, मन्दराचल अने महेन्द्र जेवो अडग-अणनम हतो. अत्यन्त विशुद्ध-खानदान-राजकुल-[२७]रावल-वंशनो ए राजा बधां राजलक्षणोथी विभूषित हतो, एने बहुजनो बहुमान आपता-पूजता. सर्वगुणसंपन्न क्षत्रिय लोहीनो ए राजा योनिशुद्ध हतो, एनो मूर्धाभिषेक थएलो हतो, एनां मातापिता विशुद्ध वंशनां हतां.

ए, मनुष्योनो इन्द्र सेय राजा सीमंकर सीमंधर क्षेमंकर क्षेमंधर हतो ए माटे ज जनपदनो पिता जेवो हतो; जनपदनो पालक अने पुरोहित, जनपदमां सेतुओ[२८] अने केतुओ करनार ए राजा, नरवर, पुरुषप्रवर, पुरुषसिंह, पुरुषव्याघ्र, पुरुषाशीविष, पुरुषवरपुण्डरीक अने पुरुषवरगंधहस्ती हतो.

नगरीमां सूर्याभदेव भगवानने वादवा आव्यो अने तेणे तेमनी पासे नृत्य करी बताव्यु तथा जे नगरीमां भगवाने प्रदेशीराजानी कथा कहेली ते आमलकप्पा नगरीनो स्वामी आ 'सेय' छे. टीकाकार मलयगिरि 'सेय'नुं संस्कृत रूपांतर 'श्वेत' कहे छे पण 'श्वेत' छे के 'श्रेय' छे ए कोण कही शके ?

२७ मूळमा 'अच्चंतविसुद्धरायकुलवंसप्पसूए' एवुं राजानुं विशेषण छे एमां 'कुल' अने 'वंश' ए बे एक साथे मूकेला पर्यायवाचक शब्दोनो खास उपयोग जणातो नथी. 'अत्यत विशुद्ध एवा जे राजकुल-रावळ-वंश तेमां जन्मेलो' एवो अर्थ लइए तो 'रायकुल' अने 'वंश' बन्ने शब्दोनी चरितार्थता छे. जणावेलो अर्थ बराबर होय तो ए विशेषणनो 'रायकुल' शब्द बाप्पा रावळना 'रावळ' वंशनो सूचक कहेवाय. राजकुल-राजउल-राउल-रावळ बाप्पानो ए वंश सुप्रसिद्ध छे पण ते वंशनो उत्पादक मूळ पुरुष कोण अने क्यारे थयो ? ए निश्चित रीते शोधी शकाय तो आगमोना इतिहास अने समय विशे विशेष अजवाळुं पडे.

२८ सेतुओ एटले मार्गो अर्थात् ए राजा मार्गोनो देशक छे, केतुओ एटले आश्चर्य ऊपजावे तेवा बनावो-ए राजा आश्चर्यकारक बनावोनो उत्पादक छे. राजानो आ बधो वर्णक कविसमयनी भाषामां लखेलो छे. एथी तेने ते रीते समजवो जोइए.

॥१४॥

समृद्धिवाळो कांतिए दीपतो ए सेय नृप प्रसिद्ध हतो. भवनो, शयनो, आसनो, यानो अने वाहनो पनी पासे विपुल-विस्तीर्ण हतां, पना भंडारमां घणुं धन, सुवर्ण अने रजत-रूपुं भरेलुं हतुं, अर्थलाभना[२९] उपायोने करी जाणनार पना राज्यमां एठवाडमां, पण घणां भातपाणी फेंकी देवामां आवतां अर्थात् लोको खाधेपीधे सुखी हता

---

२९ 'आजना राजानी पेठे प्राचीन समयना राजाओ, अर्थलाभना उपायोने करी जाणता' ए हकीकत खास विशेषण द्वारा सूचववामा आवी छे. एथी 'राजा तरीके जमीननी आवकरूपे तेमने जे योग्य मळवुं जोइए ते तो मळतु ज हशे अने ते उपरात अर्थलाभना उपायोने तेओ योजता हशे' एवो आ विशेषणनो ध्वनि नीकळी शके. पण आजना राजाओ, अर्थलाभना उपायो करता प्रजाने भारे रंजाडे छे तेम ए प्राचीन राजाओ करता हशे के केम ? ए एक प्रश्न छे. उत्तराध्ययन सूत्रना खलुंकिज्ज नामना सत्यावीशमा अध्ययननी गाथा तेरमीमां 'रायवेट्ठि' शब्द 'राजानी वेठ' अर्थमां वपरायो छे तेथी जूना वखतमां 'वेठ' हती एम तो कही शकाय अने अर्थलाभ साथे 'वेठ' नो गाढ संबंध छे ए तो जाणीतुं छे.

एठवाडमां घणुं खावानुं चाल्यु जाय एने संपत्तिनी निशानी रूपे वर्णवेलुं छे, पण ए संपत्तिनी निशानी करतां बेदरकारीनुं वधु निशान छे एम लाग्या विना रहेतु नथी. चारसें वर्ष पूर्वे लखेली एक प्राचीन प्रतिमां "तथा विच्छर्दितम्—तथाविधविशिष्टोपकारकारितया विसृष्टम् उकुरिटकादिषु प्रचुर भक्तपानम्" इत्यादि पाठ छे. तेनो अर्थ एम थाय छे के—"जे राजाना राज्यमां विशिष्ट उपकार करवाने कारणे प्रचुर खानपान उकरडा वगेरेमां फेंकाय छे." आ उपरथी 'जेना एठवाडमां अधिक खावानु फेंकाय ते विशेष उपकारी छे' एवु टीकाकारनुं कथन नीकळे छे. परंतु अहिंसानी दृष्टिए विचारीए तो आ पद्धति प्रशंसनीय न ज गणाय. कदाच खरेखर एवु बनतुं ज होय तोपण राजानी वर्णनामा तेनु आ जातनुं वर्णन अहिंसानी दृष्टिए न शोभे. एठवाडद्वारा उपकार करवा करतां चोक्खा भोजनद्वारा उपकार करवानी पद्धतिने ज जैन दृष्टि स्वीकारे छे अने विवेकीने तो एम ज शोभे. एठवाडथी तो उपकारने बदले अपकार ज थाय अने मानवबंधुओ तथा अन्य प्राणीओ प्रतिनो आपणो

६ 'धारिणी' राणीनुं वर्णन

घणा दासो, दासीओ, बळदो, पाडाओ, गायो अने घेटांओनो ए प्रभु[3] हतो, एनो यंत्रकोश, अन्नकोश, धनकोश अने आयुधकोश भरेलो रहेतो, बहु दूबळाओनो ए मित्र हतो-एवो ए सेय राजा आमलकप्पा नगरीमां अकंटक राज्य चलावतो हतो-एना राज्यमां क्यांय दुकाळ, मरकी वगेरे उपद्रवो न हता, सदा सुभिक्ष रहेतो एथी एनुं राज्यशासन शिवरूप अने क्षेमरूप लेखातुं.

[६] राणी धारिणी हाथेपगे सुकुमाळ हती, तेनी पांचे इंद्रियोमां के अंगमां कोइ प्रकारनी खोड न हती, तेनां अंगप्रत्यङ्गो सामुद्रिक लक्षणो,[31] व्यंजनो अने गुणोथी युक्त हतां, वजनमां अने उचाइमां ते बराबर मापसर[32] हती, देखावमां चंद्र जेवी प्रियकर जणाती ते राणीनी कड[33] मुठीमां आवी जाय एवी पातळी, मजबूत अने त्रिवलीवाळी हती. ॥१५॥

प्रेम-समभाव पण न जळवाय अने गंदवाड थइ रोगचाळो वधे ए तो जुदुं ज.

३० राजानी पासे अनेक बळदो घेटांओ वगेरे होवानुं जणावीने तेनी संपत्ति वर्णवी छे. देशनी दृष्टिए जोतां राजानी खरी संपत्ति पण ते ज छे. ज्यारथी राजाओए ए संपत्ति तरफ दुर्लक्ष्य कर्युं त्यारथी तेमनी पोतानी अने देशनी अधोगति शरू थइ.

३१ हाथ-पगमां साथियो चक्र वगेरेना जेवी रेखाओ होवी ते सुलक्षणो कहेवाय. शरीर उपर शुभसूचक मसा के तल वगेरे होवां ते व्यजनो अने सौभाग्य लावण्य वगेरेने गुणो समजवा.

३२ पाणीथी छलकाता भरेला कुंडमां पुरुष के स्त्रीना पडवाथी जे पाणी छल्काइने बहार नीकळे तेनुं वजन द्रोण जेटलुं होय तो ते पडनार स्त्री के पुरुष मापसर कहेवाय.

पोताना आंगळथी एकसो ने आठ आंगळ ऊंचाइ होय तो ते योग्य ऊंचाइ कहेवाय.

३३ स्त्रीओनी कड मूठीमां आवी जाय एवी पातळी होय तो ते अधिक प्रशस्त गणाय छे. जन्मतां तो पुरुषनी जेम स्त्रीनी कडमां पातळापणुं ओछुं होय छे पण पछीथी युरोपनी स्त्रीओ पोतानी कडने पातळी करवाना उपचारो करे छे तेम जूना वखतमां कडने पातळी करवाना

७ भगवान महावीर पधार्या

पूर्णचंद्रमुखी ए राणी कानोमां कुंडळ पहेरती, कपोलो उपर कस्तूरी लगाडती, एनी आकृति, शृङ्गार अने वेश बधुं चारु-सारुं हतुं,-बोलवे, चालवे अने हसवे ए कुशळ हती, विविध चेष्टाओ, विविध विलासो, ललित संलापो अने युक्त उपचारो करवामां ते विशेष निष्णात हती.

एवी ए अगे अंगे अनुपम लावण्य धरती धारिणी राणी सेय राजा साथे अनुरक्त हती अने तेनी साथे मनुष्यना शब्द, स्पर्श, रस, रूप, गंध ए पांच प्रकारना कामभोगोने[३४] अनुभवती रहेती हती.

[७] आ तरफ—

ए राजा-राणीना राज्यकाळमां गामेगाम फरता अने सुखे सुखे विहरता श्रमण भगवान महावीर[३५] आमलकप्पा नगरी तरफ पधार्या,

ऐवा उपचारो चालता हशे खरा.

३४ जैन परिभाषा प्रमाणे शब्द अने रूप ए बे काममां गणाय छे; गंध, रस, अने स्पर्श भोगमा गणाय छे. भोगो स्थूल जणाय छे, त्यारे कामो भोगो करता विशेष सूक्ष्म लागे छे. ए दृष्टिए आ विभाग थयो जणाय छे.

३५ जैन धर्मना चोवीश तीर्थकरोमांना छेल्ला तीर्थकर. तेमना पितानु नाम 8सिद्धार्थ, मातानुं नाम =त्रिशला, ज्येष्ठ भाइनु नाम नदिवर्धन, पत्नीनुं नाम *यशोदा, पुत्रीनु नाम अणोज्जा× ("ज्येष्ठा-सुदर्शना-अनवद्याङ्गी"-विशेषावश्यक टीका गा० २३०७) अने जमाइनु नाम जमाली हतुं. जमाली महावीरनी बेन सुदर्शनानो पुत्र हतो. +महावीरनी पुत्रीनी पुत्रीनुं नाम –जसवती हतु. महावीरना मातापिता पार्श्वनाथना श्रमणोपासक हतां, तेमना पिता ज्ञात कुळना क्षत्रिय हता. (आवश्यकचूर्णीमा ऋषभदेवना ज पोताना लोकोने 'ज्ञातो' तरीके जणावेला छे.

8 "सिद्धत्थ, सेज्जस, जसस (पिताना त्रण नाम) गोत्र काश्यप. = तिसला, विदेहदिण्णा, पियकारिणी (माताना त्रण नाम) गोत्र वासिष्ठ. * गोत्र कौडिन्य × अणोज्जा, पियदसणा (पुत्रीनां बे नाम) + महावीरना पित्तियए (काका) सुपास. – सेसवई, जसवई (पौत्रीना बे नाम) गोत्र कौशिक"–आचाराग अध्ययन २४

अने नगरीथी बहार ईशानखूणा तरफना अंबसालवण चैत्यमां पूर्ववर्णित वनखंडथी विराजित अशोक वृक्षनी नीचे आवीने ऊतर्या, त्यां तेओ यथोचित अवग्रह[३६] धारण करी पूर्वाभिमुख[३७] थई ए काळी शिलापाट उपर पर्यंकासने रही संयम अने तपथी आत्माने

तेओनु कुळ ते ज्ञात कुळ अने तेओनो वश ते ज्ञात वंश.) महावीरनो जन्म वैशालीमां (पटणाथी २७ माइल उत्तरे अत्यारनुं बसार) क्षत्रियकुडमां थयो हतो. तेमना मातापिताए तेमनुं नाम वर्धमान राख्युं हतु. ते त्रीश वर्षना थतां तेमनां मातापिता मृत्यु पाम्यां. त्यारबाद मोटा भाइनो रजा लई तेमणे प्रव्रज्या लीधी, अने बार वर्ष तपश्चर्या अने ध्यानमां गाळ्या बाद स्थितप्रज्ञपणु प्राप्त कर्युं. त्यारपछी तेओ त्रीश वर्ष सुधी उपदेश आपतां जीव्या, अने बहोंतेर वर्षनी उमरे इ. स. पूर्वे चारसो ऍसोनी आसपासमां तेओ वर्तमान बिहार पासे पावापुरीमां निर्वाण पाम्या. श्वेतांबरो तेमज दिगम्बरो बन्नेने महावीर स्वामी तीर्थंकर तरीके सरखा ज मान्य होवा छता तेमना जन्मनी अने विवाहनी हकीकत तथा समयादि विषे बन्नेमां मतभेद छे.

तेमनां बीजां नाम आ प्रमाणे छे:—वीर, चरमतीर्थकृत, देवार्य, ज्ञातनदन, वैशालिक, सन्मति, महतीवीर, अंत्यकाश्यप, नाथान्वय (ज्ञातान्वय); बौद्ध ग्रन्थोमां तेओ दीर्घतपस्वी निगंठ नातपुत्त तरीके प्रसिद्ध छे.

३६ आ शब्द निवासस्थानना ग्रहणनी मर्यादा सूचवे छे. जैन परिभाषामां आनो बीजो अर्थ 'सामान्य ज्ञान' एवो पण प्रसिद्ध छे, परंतु अहीं तो आनो अर्थ 'ग्रहणनी मर्यादा' घटे एम छे. घरधणीनी समति मेळवीने रहेवा माटे घरने ग्रहण करवुं, संमति मल्ये घरमां ऊतरवु ('घर' शब्द उद्यान वाडी बगीचो खेतर पहाड झाड वगेरेनो सूचक समजवानो छे) ए भावने अवग्रह शब्द सूचवे छे. शास्त्रकार अवग्रहना पांच प्रकार बतावे छे: इंद्रावग्रह, राजावग्रह, गृहपतिअवग्रह गृहस्वामिअवग्रह अने साधर्मिकावग्रह. अर्थात् कोइ निवासस्थानमां रहेवु होय त्यारे इन्द्र, राजा, गृहपति–मांडलिक, गृहस्वामी अने पोतानो साधर्मिक एमनी संमति मेळवीने एमना निवासमां रहेवुं उचित छे. एओनी संमति मळ्या विना एमना निवासमां रहेवु दोषजनक छे.

३७ ज्यां ज्यां तीर्थंकरोनी रहेवानी वात आवे छे त्यां बधे तेओ पूर्वाभिमुख थइने बेसे छे एवुं लखेलुं होय छे. पूर्व दिशामां सूर्य होय

रायपसेणइय सुत्तनो सार

॥१८॥

भावित करता रहेवा लाग्या

ए श्रमण भगवान महावीर आदिकर, तीर्थंकर, स्वयंसंबुद्ध, पुरुषोत्तम, पुरुषसिंह, पुरुषवरपुण्डरीक, पुरुषवरगंधहस्ती, अभयदाता, नेत्रदाता, मार्गदर्शक, शरणदाता, जीवितदाता, [38]द्वीपसमान, त्राणरूप, शरणरूप, गति–आश्रय–रूप, आधाररूप, धर्मचक्रने प्रवर्तावनार, विशुद्ध ज्ञान अने दर्शनथी युक्त, छद्मरहित, जिन–जय मेळवनार, जितावनार,[39] तरनार, तारनार, मुक्त, मुकावनार, बुद्ध, बोध आप-

---

छे एथी ए दिशा घणा जूना समयथी लौकिक दृष्टिए पवित्र मनाती आवी छे. घणा जूना काळमां केटलाक लोको सूर्यना पूजक हता. पूर्वाभिमुख बेसवामा सूर्य तरफना जूना सद्भावनी निशानी रहेली माल्डम पडे छे. आ परंपराने अनुसरीने बीजा बधा सामान्य लोको पण पूर्व दिशाने महत्त्व आपे छे. जैन दृष्टिए तो कोइ दिशाने खास कशु महत्त्व होय एवुं जणातु नथी. भगवान महावीरना समयमा एक एवो सम्प्रदाय हतो के जे दिशाओनी पूजाओमा मानतो. जैन सूत्रोमा ए सम्प्रदायनुं नाम 'दिसापोक्खी' जणावेलुं छे. भगवाने दिशाओनी आ जडपूजाना प्रचारने रोकवा माटे अने दिशाना माहात्म्यनी निष्प्रयोजनता बताववा माटे भगवती सूत्रमा दिशाओने जीवाजीवात्मक कहीने वर्णवेली छे. दिशाओ मात्र आकाशरूप होई जीवाजीवरूप समस्त पदार्थना आधाररूप छे ए वात खरी छे, पण एटला मात्रथी तेनी जडपूजा करवी जराय उपयोगी नथी.

३८ भगवाननो परिचय आपता स्तुतिरूप वर्णकमा भगवानने द्वीपसमान, त्राणरूप, शरणरूप, आश्रयरूप अने आधाररूप, जणावेला छे. तेने लगतो मूळ पाठ "दीवो, ताणं, सरणं, गई, पइट्ठा" आ प्रकारनो छे. मूर्तिपूजक सम्प्रदायना लोकोमां आ पाठनो प्रचार नथी पण स्थानकवासी सम्प्रदायना लोकोमां आनो प्रचार छे. 'दीवो' वगेरे शब्दो प्रथमाविभक्तिवाळा छे पण तेमने बधाने छट्ठी विभक्तिवाळा करीने प्रस्तुत स्तुतिमां योजवाना छे.

३९ शक्रस्तवमां वा भगवाननो परिचय आपता वर्णकमां घणा पाठभेदो माल्डम पडे छे. केटलेक स्थळे 'जिण' पछी 'जावय' शब्द आवे

रायपसेणइय सुत्तनो सार

८ भगवान महावीरनुं शारीरिक वर्णन

॥१९॥

एक अव्याबाध सिद्धिने मेळववाना अभिलाषी एवा हता.

नार, सर्वज्ञ, सर्वदर्शी अने अपुनरावर्तननी शिवरूप, अचल, अरोग, अक्षय अव्याबाध सिद्धिने मेळववाना अभिलाषी एवा हता. शरीरनी अद·

[८] एमना शरीरनी उंचाई[४०] सात हाथ, संस्थान समचोरस अने संहनन-शरीरनो बांधो-वज्र जेवो मजबूत हतो. शरीरनी अद· मलविसर्जनना स्थान

रना वायुओ अनुकूळ रहेता, मलाशय कंक पक्षीना मलाशय जेवो नीरोग, जठर पारेवाना जठर जेवुं तीव्र, मलविसर्जनना स्थान

पक्षीनां मलविसर्जनना स्थान जेवां निर्लेप अने पीठ, बन्ने तरफनां पांसळां तथा उरु सुजात हतां.

एमनो श्वास सुगंधी,[४१] नीरोगी उत्तम मांस, छबी उदात्त अने प्रशस्त, शरीर निर्मळ अने अंगेअंगमांथी झरतुं लावण्य असाधा-

रण हतुं.

छे त्यारे क्यांय क्यांय 'जावय' ने बदले 'जाणय' पद देखाय छे. विशेष विचार करतां 'जाणय' ने बदले 'जावय' पाठ वधारे सुसंगत छे.

'तिन्नाणं तारयाण' वगेरे विशेषणो जोता 'जावयाणं' पाठ ज बराबर छे. आ उपरात ए शक्रस्तवमां बीजा अनेक पाठभेदो छे.

४० भगवानना शरीरनुं वर्णन जोतां एम मालूम पडे छे के तेओ गृहस्थाश्रममां विशेषे करीने व्यायामप्रिय हशे. शरीरनी मजबूताइ अने सुडोळपणुं लाववामा व्यायाम ए मुख्य कारण छे. जैन सूत्रोमा ठेकठेकाणे व्यायामनी पद्धतिना वर्णनो तो आवे ज छे. कल्पसूत्रमां भगवान महावीरना पिता राजा सिद्धार्थनो अखाडो प्रसिद्ध छे. भगवानना मलाशय अने जठरनु जे वर्णन करेलुं छे, ते तेमनी मिताहारिता अने पथ्य-चारिताने सूचवे छे. खानपानना आचारो वर्णवतां जैन सूत्रोमा खानपानना प्रमाण विषे खूब भार मूकवामां आव्यो छे.

४१ योगी ज्यारे योगनी साधना पूरी करे छे, शरीर, मन अने वचन उपर पूरेपूरो काबू मेळवे छे त्यारे तेना शरीरमां लावण्य, स्फूर्ति, अने तेज वधु ने वधु प्रमाणमा प्रकटे छे. उपरांत केटलीक बीजी शक्तिओनो पण तेमा आविर्भाव थाय छे. पातंजलयोगसूत्रना विभूतिपादमां जे विभूतिओ वर्णवेली छे, ते बधी खरा योगीने सुलभ होय छे. भगवान महावीरना शरीरनुं वर्णन तेमनी योगलब्धिने अनुरूप छे.

॥२०॥

लोढाना घणनी जेवी सुबद्ध स्नायुवाळी अने शिखर जेवी उन्नत खोपरी उपर शिरोभाग, माथाना वाळ घननिचित–लगोलग उगेला–घांकडिया जमणा वांकवाळा सुंवाळा अने भमरा जेवा काळा, वाळ उगवानी चामडी–केशांतभूमि–सोना जेवी चमकती अने दाडिमना फुल जेवी स्निग्ध, छत्र जेवुं उंचुं उत्तम उत्तमांग–मस्तक, व्रणविनानो एकसरखो अर्धचन्द्र जेवो ललाटपट्ट अने पूर्णचंद्र समान सोमाकार मुख,

सांभळवामां सरवा प्रमाणयुक्त बन्ने कान, मांसथी भरेला पुष्ट बन्ने कपोल, धनुष जेवी वांकडी काळी आछी भमरो, खीलेलां कमळ जेवां एकाद धोळा वाळवाळी[४२] पांपणवाळां बन्ने नयनो, गरुडनी नासिका जेवी उत्तुंग लांबी सरळ नासिका, परवाळा जेवा बन्ने होठ,

चंपानी कळी जेवा निर्मळ[४३] एक श्रेणीबद्ध बधा दांत, अग्निथी धमेला सोनाना जेवु रातुं ताळवुं अने जीभ, अवस्थित–अवस्थासूचक अने सुविभक्त श्मश्रु–दाढी मूंछ, शार्दूलनी हडपची जेवी मांसल प्रशस्त हडपची,

प्रमाणसर चार आंगळ उंची उत्तम शख जेवी रूपाळी डोक, उत्तम पाडो वराह सिंह शार्दूल बळद अने हाथीना खभा जेवा

---

४२ पांपणमां एकाद धोळो वाळ वर्णववानु कारण समजातु नथी. कदाज ए विशेष गांभीर्य, स्थिरता अने वृद्धत्वसूचक होय.

४३ भगवानना दांतनुं वर्णन वांचता आपणे तेमना दांतोनी शुद्धिनो ख्याल मेळवी शकीए छीए. केवळी थया पछी भगवान नियत आहारी रह्या छे. आहारने जे नियत लेतो होय तेना दांतो आवा शुद्ध अने निर्मळ त्यारे ज रही शके ज्यारे ते दांतो तरफ बेदरकार न रहे. कोइ छूमतर के अतिशय मात्र कहेवाथी दातोनी शुद्धि थई जती नथी. ए तो; संयमसाधन, शरीरनी विशेषसयमपूर्वक काळजी, आहारनुं प्रमाण, स्वादेन्द्रियनो जय, अजीर्णनो अभाव अने शरीरगत रक्तकणोनी विद्युच्छक्ति उपर निर्भर छे.

भगवानना अनुयायी आपणे, वधारे तो नहि पण तेमनी दंतशुद्धि जेटलुय तेमनु अनुकरण करीए तोय बस छे.

भरावदार मजबूत खभा, सुबद्ध सांधावाळी सुश्लिष्ट स्थिर पुष्ट पोंचामां सुसंस्थित नगरना दरवाजा पाछळ रहेला भोगळ जेवी गोळ अने धोंसरा जेवी लांबी भुजाओ,

शेषनागे विस्तारेली फणा जेवा विपुल अने उंचा करेला भोगळ जेवा दृढ बाहुओ, राती कोमळ मांसल अने शुभ चिह्नोवाळी हथेळी, पांचे आंगळीओ सिधी करतां जेमां जेमां एक पण काणुं न देखाय तेवो निश्छिद्र प्रशस्त पंजो, लोहीथी भरेली कोमळ पांच पांच आंगळीओ, तांबा जेवा राता स्निग्ध चमकता नखो,

हथेळीमां चन्द्र, शंख, चक्र, स्वस्तिक अने सूर्यनी जेवी रेखाओ, पहोळी विशाळ सोनानी पाट जेवी उज्ज्वल समतल-एक सरखी अने श्रीवत्सना[४४] चिह्नथी शोभती छाती, हाडकां न देखाय तेवो मांसल बरडो, कनकनी कान्ति जेवी कान्तिवाळुं रोगरहित निर्मळ सुजात शरीर,

संगत संनत सुदर अने सुजात पडखांओ, काखनी नीचेना बन्ने बाजुना भागो बराबर प्रमाणसर अने पुष्ट, आछी ऋजु स्निग्ध अने रमणीय रुंवाटी-रोमराई, माछली अने पक्षीनी कुक्षि जेवी सुजात पुष्ट कुक्षि, माछलीना उदर जेवुं चमकतुं उदर, इंद्रियो बधी निर्मळ,

४४ श्रीवत्सनो अर्थ आपतां आचार्य हेमचद्र कहे छे के “श्रिया युक्तो वत्सो वक्षोऽनेन श्रीवत्सः रोमावर्तविशेषः” कांड २, श्लोक १३६ अभिधानचिंतामणि. रुवाटानो एक खास प्रकारनो वळांको ते श्रीवत्स. जेनी छातीमा ए विशिष्ट प्रकारनो रुंवाटानो वळांको होय ते सुलक्षणो कहेवाय एवो लोकवाद छे. श्रीवत्सवाळी छाती होवाने लीधे कृष्णनुं एक नाम श्रीवत्स पण छे. ‘वत्स’नो अर्थ ‘वक्ष–छाती’ थाय छे. जेने लीधे छाती शोभावाळी थाय ते श्रीवत्स. जे जे जिनबिंबो वर्तमानमां देखाय छे ते बधानी छातीना बराबर मध्य भागमां लंबचोरस जेवु एक उपसेलुं निशान देखाय छे अने एने ‘श्रीवत्स’ कहेवामा आवे छे. ए निशान कोइ उपसेला हाडकानी स्मृति करावे छे, त्यारे ‘श्रीवत्स’ तो रुवाटानो खास प्रकारनो वळाको छे ए ध्यान देवा जेवी वात छे.

रायपसेणइय सुत्तनो सार

||२२||

पद्म जेवी विशाळ नाभि, मुसल दपण अने वज्रना मध्य जेवो मध्यभाग, [45]उत्तम घोडो अने सिंहनी कटी जेवो कटीभाग, श्रेष्ठ
घोडाना गुप्त गुह्य भाग जेवो गुप्त सुजात अने निरुपलेप गुह्य भाग,

उत्तम हाथी जेवी मलपती ललित अने विक्रमवाळी गति, हाथीनी सुंढ जेवा शोभन उरुओ, ढांकणीमां बराबर बेठेला मांसल वत्र
घुटणो, हरणी जेवी रुडी वृत्त जंघाओ, सुश्लिष्ट सुसंस्थित अने बहार न कळाय तेवी घुटीओ,

काचवाना चरण जेवा सुप्रतिष्ठित उन्नत चारु चरणो, नानी मोटी छतां पगनी आंगळीओ सुसंहत अने कोमळ, पगना नखो
राता अने चमकता, तळियां रातां कमळना पत्र जेवां सुकोमळ अने मृदु, पगमां पर्वत नगर मगर सागर चक्र वगेरेनी जेवी
उत्तम रेखाओ,

विशिष्ट रूप जाज्वल्यमान अग्नि, चमकती वीजळी, अने तरुण सूर्यनी जेवुं उग्र तेज तथा अंगमां, उत्तम पुरुषनां अंगमां होय एवां
एक हजार आठ सुलक्षणोः [46]श्रमण भगवान महावीर शरीरे एवा प्रकारना हता

पातळो

४५ भगवानना शरीरना मध्य भागने मुसल जेवो वर्णवेलो छे. मुसल–सांबेलु–नो मध्य भाग–जेने पकडीने खडाय छे ते भाग
होय छे. मध्य भाग पछी तरतज कटीभागनु वर्णन छे, तेथी मध्य भाग अने कटी बन्ने जुदा छे ए न वीसराय.

४६ उत्तम पुरुषना शरीरमा एक हजार ने आठ शुभतम लक्षणो होय छे ए हकीकत जैन ग्रथोमा वारंवार आवे छे. पण ते लक्षणो
क्यां क्या छे ए सवधी वीगतवार हकीकत क्याय नजरे चडती नथी. हाथमा चंद्र, सूर्य, शख, चक्र, स्वतिक वगेरेनी जेवी रेखाओ होय
अने पगमा पर्वत नगर मगर सागर चक्र वगेरेनी जेवी रेखाओ होय–ए बधां शारीरिक सुलक्षणो छे. १००८ अने १०८ नी संख्या घणा
संप्रदायवाळाने तेम जैन लोकोने विशेष प्रिय छे एनु कारण शोधवा जेवुं छे.

[९] स्वभावे श्रमण भगवान महावीर अनास्रव–आस्रव विनाना–सामाजिक वा आध्यात्मिक दूषण जेथी उत्पन्न थाय तेवी प्रवृत्ति विनाना, ममतारहित, अकिंचन[४७]–ऐच्छिक गरीबीने वरेला–अपरिग्रही, संसारना स्रोते–प्रवाहे–नहि वहेनारा, आसक्ति विषयानुराग द्वेष अने अज्ञानथी पर रहेला, निर्ग्रंथ प्रवचनना उपदेशक, श्रमण शास्ताओना नायक–तेमना व्यवस्थापक, श्रमणोना अधिपति, श्रमण-

४७ जेमनी पासे किंचन–काइ–नथी ते अकिंचन. आवा अकिंचनो बे प्रकारना होय छे. एक तो ऐच्छिक अकिंचन अने बीजा ओघ अकिंचन. ओघ अकिंचनो पोतानी वृत्तिने शोध्या विना मात्र आवेग के देखादेखीथी अकिंचनपणु माणे छे, एथी तेओ अकिंचनो देखावा छतां पोतानी अने परनी समाधिमा विघ्नरूप बने छे, तेमनामां तृष्णा काम लोभ ईर्ष्या अहंकार वगेरे वृत्तिओ पडेली होय छे, तेमांनी एक वृत्तिने पण ते ओघ अकिंचनो विवेक न होवाने कारणे दाबी शकता नथी, उलटु ते वृत्तिओना तेओ दास बनेला होय छे. एथी ओघ अकिंचनोनो मोटो भाग समाज, राष्ट्र, विश्व के व्यक्तिनी शातिने हानि पहोंचाडनारो थाय छे. जेओ पोतानी वृत्तिने तपासी तावीने अने पोतानां बळ सामर्थ्य अने मर्यादा वगेरेन बराबर समजीने इच्छापूर्वक अकिंचनपणुं स्वीकारे छे, तेओ ऐच्छिक अकिंचनो छे. आवा ज अकिं-चनो पोताने विकास साधी शके छे अने व्यक्ति समाज राष्ट्र के विश्वनी शांतिमा पोतानो फाळो नोंधावी शके छे. भगवान महावीर आ जातना अकिंचन हता, पण ओघ अकिंचन न हता. ससारनो प्रत्येक प्राणी पोतानी अज्ञानताने लीधे दुःखना पंकमा फसाएलो छे. संसारमा अज्ञान अने दुःखनी मात्रा एटली बधी वधारे छे के तेनो एटले समस्त ससारना समग्र अज्ञान अने समग्र दुःखनो समूळ नाश कोइथी कोइ प्रकारे थइ शक्यो नथी, थइ शकतो नथी अने हवे पछी थइ शकशे के केम ए प्रश्न छे आम छताय जे महान आत्माओनु हृदय ए दु·ख परपराने जोतांज ककळी ऊठे छे, तेओ ते दु·खना साधनरूपे कदी पण बनता नथी अने एवा साधनभूत न थवा माटेज तेओ ऐच्छिक गरीबीने स्वीकारे छे. ऐच्छिक गरीबीने वरेला ज महानुभावो खरा अकिंचन छे.

वृंदमां परिवर्तन करनार[४८]-क्रान्ति करनार, बुद्धोने छाजे एवा चोत्रीश अतिशयोथी[४९] संपन्न हता.

४८ आ अर्थ माटे मूळ सूत्रमां 'समणगविदपरिअट्टए' शब्द आवेलो छे. टीकाकार [श्रमणा एव श्रमणकाः तेषां वृन्दस्य परिवर्तकः-औ० वृ० पृ० २१ पं० २] 'परिअट्टए'नुं संस्कृत रूपांतर 'परिवर्तक' आपे छे. श्रमणसंस्कृतिमां भगवाने जे क्रांति करेली छे तेने आ विशेषण बराबर बधबेसतुं छे. पार्श्वनाथ भगवाननी परंपरामां जे शैथिल्य पेठेलुं, तेने दूर करवा अने श्रमणसंस्कृतिनुं तेज वधारवा भगवंते चार यमना पांच यम करेला, पोतानी जीवनचर्यामां अचेलकत्व उपर वधारे भार मूकेलो अने केटलीक सामाजिक हिंसाओने दूर करवा तेमने जातिवादने दूर करी गुणवादने अग्रस्थाने स्थापेलो, तेमज स्त्रीओ अने पछात गणाता लोकोने ऊंचे चडाववा तेमने पोताना तीर्थमां सारुं स्थान आपेलुं. भगवंतनुं 'परिवर्तक' विशेषण आ बधा भावने बराबर सूचित करे छे, टीकाकार तो 'परिवर्तक'नो अर्थ 'वृद्धिकारी' बतावे छे पण ए अर्थ व्युत्पत्तिनी दृष्टिए संगत छे के केम ए विचारवा जेवुं छे.

४९ समवायांग सूत्रमां चोत्रीश बुद्धातिशेषो आ प्रमाणे जणावेला छेः १ केश दाढीमूछ रुवाडां अने नख ए बधां न वधे. २ काया निरोगी अने पवित्र रहे. ३ मांस अने लोही गोक्षीर जेवुं धोळुं होय. ४ श्वासोच्छ्वास पद्मगंधी. ५ फक्त चर्मचक्षुवाळा न जोइ शके ते रीते आहार अने निहार प्रच्छन्न रहे. ६ प्रकाशवाळुं चक्र. ७ प्रकाशवाळुं छत्र. ८ प्रकाशवाळां धोळां चामरो ९ आकाशजेवुं स्वच्छ स्फटिकमय अने पादपीठ सहित सिंहासन. १० घणो उंचो इन्द्रध्वज (आ चक्र वगेरे बधुं भगवाननी आगळ आगळ चाले). ११ ज्यां ज्यां अरिहंत भगवंतो ऊभा रहे के बेसे त्यां यक्षदेवो अशोकवृक्षने तत्काळ नीपजावे. १२ मस्तकना पाछळना भागमां तेजोमंडळ-भामंडळ. १३ भगवान ज्यां चाले ते भूभाग सरखो सपाट बनी जाय. १४ रस्तामां आवता कांटा ऊंधा वळी जाय. १५ ऋतुओ बधी नियमित अविपरीत-रहे. १६ सुगंधी शीतळ अने ठंडा वायु वडे योजनपरिमित भूभाग साफ थई जाय. १७ ते भूभागनी धूळ बेसी जाय ते प्रकारे तेना उपर मेघनो छटकाव थाय. १८ पांचे रंगनां सुगंधी फूलोनी ढींचण ढींचण जेटली भरचक वृष्टि थाय. १९ नहि गमता शब्दो स्पर्शो अने रसो रूपो अने

गधो दूर थइ जाय. २० मनगमता शब्दो स्पर्शो रसो रूपो अने गंधोनो प्रादुर्भाव थाय. २१ योजन सुधी समळाय ते रीते भगवाननो स्वर नीकळे. २२ भगवाननी देशना अर्धमागधी भाषामां थाय. २३ भगवान देशना तो अर्धमागधी भाषामा करे छता तेमने सांभळवा आवेला बधा आर्यो अनार्यो वगेरे तेमने समजी शके. २४ परस्पर वैरवाळा देवो असुरो राक्षसो वगेरे भगवाननी पासे उपशांत थाय. २५ अन्यतीर्थिको पण भगवानने नमस्कार करे. २७ तेओ भगवाननी पासे आवतां निरुत्तर थई जाय. २७ जे बाजु भगवान विहार करे ते तरफमां आजुबाजु पच्चीश पच्चीश योजन सुधी ईति न थाय. २८ मरकी न थाय. २९ स्वचक्रनो भय न रहे. ३० परचक्रनो भय न रहे. ३१ अतिवृष्टि न थाय. ३२ अनावृष्टि न थाय. ३३ दुकाळ न पडे अने ३४ जे रोगो चालता होय ते पण जलदी ज शमी जाय.

वैदिक परपराए अने बौद्ध परंपराए पण पोतपोताना ते ते प्रवर्तको माटे आवा आवा वा आथीय वधारे अद्भुततावाळा अतिशयो नोंधेला छे, ए भूलवु न जोइए.

आ अतिशयोनी गणनामां शास्त्रीय एक वाक्यता जणाती नथी, तेथी प्रवचनसारोद्धारमां अने अभिधानचिंतामणि–प्रथमकाड–मां वळी आ अतिशयो वधघट करीने बीजी रीते बतावेला छे. तेमां जे भेद छे ते आ प्रमाणे छेः योजनप्रमाण भूभागमां त्रण जगतनो जनसमुदाय माई शके. भगवान एकमुखवाळा छतां चतुर्मुख ब्रह्मा जेवा भासे. मणिकचनमय नव कमळोनी रचना थाय. शुभ शकुनो थाय. वृक्षो प्रणाम करे अने दुदुभीओ वागे (प्रवचनसा०). भगवाननी आजुबाजु चारे प्रकारना देवो क्रोडनी सख्यामां रह्या करे. त्रण गढनी रचना थाय (अभिधानचिंता०) आमांना केटलाक अतिशयो जन्मथी होय छे, केटलाक कर्मक्षयथी उपजेला होय छे अने केटलाक देवोए बनावेला होय छे, एवो विभाग टीकाकारोए बतावेलो छे. भगवाननो पुण्यप्रकर्ष अपरिमित हतो ए निःशंक वात छे पण तेनुं आ रीते माप केम नीकळी शके ? खरुं कहीए तो एमना पुण्यप्रकर्षनुं माप काढवानी भाषा ज आपणी पासे नथी. उपर जे माप काढी बताव्यु छे ते तो सामान्य मानवनी भाषा छे. पण

वचनना पांत्रीश गुणोथी "संयुक्त एवा श्रमण भगवान महावीर जे वखते आमलकप्पा नगरीमां आव्या ते वखते तेमनी साथे आका-

एवी भाषाथी कोई विवेकी जन भगवानना स्वरूप संबंधी भुलावामा न पडे, माटे ज आचार्य समंतभद्र जणावे छे के—

"देवागम–नभोयानचामरादिविभूतयः। मायाविष्वपि दृश्यन्ते नातस्त्वमसि नो महान्" ॥

अर्थात्–इंद्रजाळ करी बतावनारा, पोतानी पासे देवो आवे छे एवुं बतावी शके छे अने चामर वगेरेने अद्धर राखी बतावे छे. हे भगवन् ! अमारे मन तुं, तारी पासे देवो आवे छे तेथी मोटो नथी पण तारु वीतरागपणु ज तारी महत्तानुं खरु कारण छे एम हुं मानुं छुं.

५० "सत्यवचनना पांत्रीश अतिशयो जणावेला छे" एम समवायागसूत्रमां मूळमा लखेलु छे. ए माटे मूळमां "पणतीसं सच्चवयणाइसेसा पण्णत्ता" एवु वचन छे पण ए पांत्रीश अतिशयो कया कया छे? ए बाबत मूळमां कशुंय जणावेलुं नथी. मूळना ए वचननी टीका करता आचार्य श्रीअभयदेव जणावे छे के–"सत्यवचनना अतिशयो आगममां दीठामां आव्या नथी पण ग्रथांतरमां नोंधेला छे." ["सत्यवचनातिशया आगमे न दृष्टाः एते तु ग्रन्थान्तरदृष्टाः संभाविताः"–समवायांग टीका पृ. ६३] टीकाकारना आ उल्लेख उपरथी 'आ अतिशयो आगमिक छे के नहि ?' एवो प्रश्न जरूर उठी शके छे. एना समाधाननुं आ स्थान नथी पण ए वस्तु विचारणीय तो खरी ज. टीकाकारे ए पांत्रीश अतिशयो आ प्रमाणे बतावेला छे: १ संस्कारिता, २ उदात्तता, ३ उपचारोपेतता, ४ गांभीर्य, ५ पडछंदो पडवो, ६ सरळता, ७ संगीतयुक्तता, ८ महार्थता, ९ पूर्वापर अविरोध, १० शिष्टता, ११ असंदिग्धता, १२ अखंडनीयता, १३ हृदयंगमता, १४ देश अने काळनुं अनुसरण, १५ तत्त्वानुरूपता, १६ अतिविस्तर अने असंबद्ध अधिकार रहितता, १७ पदोनी परस्पर सापेक्षता, १८ अभिजातता, १९ अतिस्निग्ध मधुरता, २० परमर्मनो अप्रकाश, २१ अर्थ अने धर्म साथेनो सबंध, २२ औदार्य, २३ परनिंदा अने स्वप्रशंसानो अभाव, २४ प्रशस्यता, २५ व्याकरणनो अविरोध, २६ सतत कुतूहल जनकता, २७ अद्भुतता, २८ अतिविलंबरहितता, २९ विक्षेप वहेम वगेरे दूषणनुं न होवु, ३० हकीकतोनी नवीनता, ३१ खास प्रकारनी विशेषता, ३२ वर्ण पद अने वाक्योनो घटना, ३३ साहसयुक्तता, ३४ अखेद अने

शगत "धर्मचक्र आकाशगत छत्र आकाशगत श्वेत चामरो, पादपीठ सहित आकाशस्फटिकमय स्वच्छ-सिंहासन अने आगळ खेंचातो धर्मध्वज ए बधुं हतुं; तथा चौद हजार श्रमणो[५२]–साधुओ अने छत्रीश हजार श्रमणीओ साथे संपरिवरेला श्रमण भगवान महावीर फरता फरता त्यां आव्या हता.

[१०] जे वखते श्रमण भगवान महावीर त्यां आव्या ते वखते आमलकप्पा नगरीमां ठेरठेर—तरमेटामां त्रिकमां चोकमां चाचरमां

---

३५ विवक्षित अर्थनी सिद्धि.

५१ समवायांगना मूळमां 'आकाशगत' अर्थनो सूचक 'आगासग' शब्द आपेलो छे. तेनो अर्थ करतां टीकाकार लखे छे के—"तथा 'आगासग'त्ति आकाशगतं व्योमवर्ति आकाशक वा प्रकाशकम् इत्यर्थः × × × एवम् आकाशग छत्रं छत्रत्रयम् × × × आकाशके प्रकाशके श्वेतवरचामरे × 'आगासफलिहमय'ति आकाशमिव यद् अत्यन्तम् अच्छम् स्फटिकम् तन्मयं सिंहासनम् × 'आगासगओ'त्ति आकाशगतोऽत्यर्थं तुङ्ग इत्यर्थः"–(पृ० ६१). टीकाकारना कहेवा प्रमाणे 'आगासग' शब्दना त्रण अर्थो थया: एक तो व्योममां रहेतु–अद्धर रहेतुं, बीजो प्रकाशक–प्रकाश आपतुं–चमकतु, अने त्रीजो घणुं उंचुं.

५२ भगवानना विहारनो आ बधो वर्णक विवरणकारनी भलामण प्रमाणे उववाइय सूत्रमांथी लीधेलो छे. उववाइय सूत्रना मूळमा "चउदसहि समणसाहस्सीहिं छत्तीसाए अजिआसाहस्सीहिं" ए पाठ तो छे, परतु टीकाकारे त्यां ए संबधे कशी हकीकत लखी नथी ए जरूर विचारवा जेवु तो खरु ज. अने एम छे माटे उववाइय सूत्रना सपादके मूळना ए पाठने (   ) आवा निशानमां मूकेलो छे अने ते उपर "ए वचन व्याख्यानुगामी नथी" [औ० वृ० पृ० २१ सू० १० पं० ११ तथा १४] एवुं टिप्पण करेलु छे. टीकाकार अने टिप्पणकारनु वलण ए मूळ पाठ संबधे संदेह उपजावे एवुं जणाय छे अर्थात् भगवान विहार करता हशे त्यारे दरेक ठेकाणे तेमनी साथे चौद हजार साधुओ अने छत्रीश हजार साध्वीओ हमेशां रहेतां ज हशे ए नक्की न कही शकाय पण ए वचन उपरथी तेमना श्रमणश्रमणीना परिवारनुं माप तो जाणी शकाय.

चतुर्मुखोमां-चोकठामां-राजमार्गमां अने शेरीओमां—ज्यां सांभळो त्यां घणा लोको[५३] परस्पर एम कहेता हता के हे देवानुप्रियो! आकाशगत छत्र वगेरे साथे संयम अने तपथी आत्माने भावित करता श्रमण भगवान महावीर अहीं आव्या छे तो तेवा प्रकारना अरहंत भगवंतोनां मात्र नामगोत्र पण काने पडे तोय मोटो लाभ छे, तो पछी तेमनी सामे जवानो तेमने वांदवानो नमवानो तेमनो पासे जइ केटलाक खुलासा पूछवानो अने तेमनी पर्युपासना-सेवा करवानो प्रसंग मळे तो जे लाभ थाय ते माटे कहेवुं ज शुं?

आर्य पुरुषनुं एक पण धार्मिक सुवचन काने पडे तोपण ते श्रेयरूप छे तो पछी तेमनी पासे जइ विपुल अर्थ-घणी हकीकतो जाणवानो प्रसंग सांपडे तो तेथी जे श्रेय थाय ते माटे कहेवुं ज शुं?

तो हे देवानुप्रियो! आपणे जईए अने श्रमण भगवान महावीरने वांदीए नमीए सत्कारीए सन्मानीए अने कल्याणरूप मंगळमय दिव्य चैत्यनी पेठे तेमनी पर्युपासना करीए तो ए, आपणे माटे आ भव परभव अने जन्म जन्मांतरमां हितरूप थशे, सुखरूप अने निःश्रेयसरूप नीवडशे.

आम विचारीने घणा उग्रो[५४] उग्रपुत्रो भोगो भोगपुत्रो राजन्यो क्षत्रियो ब्राह्मणो भटो योधो प्रशास्ताओ मल्लकिओ लिच्छविओ लिच्छविपुत्रो अने बीजा घणा मांडलिक राजाओ युवराजो राजमान्य पुरुषो मडंबाधिपो कौटुंबिको-कणबीओ इभ्यो श्रेष्ठिओ सेनापतिओ सार्थवाहो वगेरे अनेक लोको ज्यां भगवान ऊतर्या हता त्यां जवा नीकळ्या.

---

५३ कोइ परिवर्तनकारी के संशोधक वक्ता आवे त्यारे सम्प्रदायना भेदभाव विना दरेक प्रजा तेने साभळवा इच्छे छे एवु लोकमानस आजे पण छे, तो पहेलां पण एवु ज हशे एम आ उपरथी जणाय छे.

५४ उग्र भोग राजन्य क्षत्रिय भट योध मल्लकि लिच्छवि वगेरे, ते समयना प्रसिद्ध प्रसिद्ध राजवंशोना खास विशेष नामो छे ए ध्यानमा राखवानुं छे, अर्थात् भटो एटले सुभटो, योधो एटले युद्ध करनाराओ, एवो ते नामोनो अर्थ बराबर नथी.

एमांना केटलाक[55] श्रमण भगवान महावीरने वांदवानी-नमवानी वृत्तिवाळा हता, केटलाक मात्र भगवानने जोवाना इच्छुक हता, केटलाक तो 'भगवान केवा होय' ए जातना कुतूहलथी जवा प्रेराया हता, केटलाकने अर्थविनिश्चय-खुलासा मेळववा हता, केटलाकने एम हतुं के त्यां जइशुं तो अश्रुतपूर्व सांभळशुं अने सांभळ्युं छे ते संबंधी शंकाओ दूर करशुं, केटलाके एम धारेलुं के आपणे तो भगवाननी पासे सर्व प्रकारे मुंडभाव धारण करी अगार-घर छोडी अनगार थशुं, केटलाके एवो संकल्प करेलो के आपणे पांच अणुव्रतवाळो अने सात शिक्षाव्रतवाळो एम बार प्रकारनो गृहिधर्म स्वीकारशुं, केटलाक तो मात्र जिनभक्तिना रागथी प्रेराया हता अने केटलाक गतानुगतिक हता अर्थात् तेओ एम समजेला के आ बधा जाय छे त्यारे आपणे पण जवुं ए शिष्टता छे-योग्य छेः एम जुदी जुदी वृत्तिवाळा तेओ बधा भगवाननी पासे जवा नीकळ्या.

श्रमण भगवान महावीरनी पासे जनारा ए बधा न्हाएला, तेमणे बलिकर्म[56] करेलुं, तिलक वगेरे लगाडेलां, माथे डोके माळाओ नाखेली, हार अर्धहार त्रणसरो हार लटकतां झूमणां कटिसूत्र-कणदोरो वगेरे आभरणो पहेरेलां अने सुंदर वस्त्रो सजेलां तथा शरीरे चंदन लगाडेलुं,

एओ केटलाक घोडे चडेला, केटलाक हाथी उपर बेठेला, रथ उपर चडेला, घुम्मटवाळी पालखीमां बेठेला, अने झूलती पाल-

---

५५ सभा-समितिओमा जनाराना मानसनुं आबेहूब चित्रण आ कडिकामा छे.

५६ कोई गृहस्थ ज्ञानी पासे धर्म सांभळवा जाय के राजदरबारमां जाय त्यारे 'बलिकर्म' करीने जाय-एवा अनेक उल्लेखो जैन आगमोमा विद्यमान छे. पण ए 'बलिकर्म' शुं छे ? ते सबधी स्पष्ट माहिती मळती नथी 'पोतपोताना गृहदेवो पासे बलि चडाववी-निवेद धरवुं-भेट धरवी' एवो बलिकर्मनो अर्थ टीकाकारे आपेलो छे. ("कृत बलिकर्म स्वगृहदेवतानां यैः ते तथा"-उववाइय पृ. ५९) आमा 'गृहदेवता' कोण अने तेनु शुं स्वरूप-ए प्रश्न ऊभो रहे छे.

१०भगवान महावीरनी धर्मसंशोधक वाणी

सीमां आवेला हता; वळी मोटा जनसमुदायथी विंटापला केटलाक मात्र पगे चालीने जता हता. ए बधा जनाराओनो अवाज एटलो बधो थतो हतो के जाणे कोइ खळभळेलो महासमुद्र गाजतो न होय

आमलकप्पा नगरीथी बहार ईशान खूणामां आवेला अंबसालवण चैत्यमां एओ बधा जइ पहोंच्या. त्यां छत्र वगेरे तीर्थंकरना अतिशेषो जोतां तेओ पोतपोतानां यान वाहन ऊभां राखी ऊतरी पड्या-यानो छोडी नाख्यां, वाहनो चरवा छूटां मूकी दीधां अने एओ भगवाननी पासे आवी पहोंच्या, तेमने त्रण प्रदक्षिणा दीधी, वंदना करी नमस्कार कर्यो अने भगवाननी शुश्रूषा करता तेओ बहु दूर नहि तेम बहु नजीक नहि ए रीते हाथ जोडीने तेमनी सामे विनयपूर्वक बेठा.

आमलकप्पानो राजा सेय, राणी धारिणी पण बधांनी साथे श्रमण भगवान महावीरनी सेवामां जोडायां हतां

आमलकप्पाना राजा सेय, राणी धारिणी अने त्यांना जनसमुदायने उद्देशीने श्रमणगणमां परिवर्तन करनार श्रमण भगवान महावीरे पोतानी धर्मसंशोधक वाणी संभळावी. तेमणे [५७]कह्युं केः—

(१) "जे मनुष्यो दुर्बुद्धिथी प्रेराइने पापकर्मो करी ते द्वारा धन पेदा करे छे तेओ आ विराट विश्वने दुःखना ऊंडा खाडामां धक्केले छे अने पोते पण सतत तरफडियां मारतां मारतां झुरी झुरीने उपडी जाय छे-छेवटे लेश पण शांति पामता नथी आ संसारमां शांति पण छे अने अशांति पण छे. शांति के अशांति मेळववी मानवीना पोताना हाथनी ज वात छे. मनुष्यमां तृष्णावृत्ति विशेष बळवान छे तेने लीधे ए सुखदुःखनुं खरुं स्वरूप समजी शकतो नथी, उलटुं दुःखने सुख समजे छे अने सुखने दुःख समजे छे. ए तृष्णावृत्तिनी प्रबळ बळवत्ताने ज लीधे क्रोध वधे छे, मूढता व्यापे छे अने मनुष्य पोतानुं-पोताना स्वरूपनुं-पोताना कर्तव्यनुं

५७ भगवानंनी धर्मसंशोधक देशना जे अहीं जणावेली छे तेनु मूळ उत्तराध्ययन सूत्रनां नीचेनां पद्योमां छेः

(१) जे पावकम्मेहि धणं मणुस्सा समाययंति अमतिं गहाय। पहाय ते पास पयट्टिए नरे वेराणुबद्धा नरयं उवेंति ॥२॥

भान भूली जाय छे एटले आखर ते मानव मटी दानवी वृत्ति उपर आवी जाय छे. आम थवाथी मनुष्योनी परस्पर हितकारिणी बंधुतानी वृत्ति शिथिल थाय छे, तेथी अन्योअन्य वैरवृत्ति पेदा थइ सर्वत्र अशांति ऊपजे छे. शुं मनुष्य, पशु के पक्षीओ वा आ स्थावर जगत ए बधुं ए धखधखती अशांतिमां होमाय छे, माटे ज धन पेदा करनार लोकोए परस्पर बंधुतानी वृत्तिनो नाश न थाय ते तरफ विशेष लक्ष्य राखी पोतपोतानो व्यवहार करवो घटे. अन्यथा कोईनुं श्रेय थवानुं नथी. मात्र धन पेदा करनारो आ विचार भाग्ये ज करे छे के तेनी धनतृष्णानी आगमां आजसुधीमां केटलां मानवी होमायां, केटलां पशुओ अने पक्षी बळीने खाख थइ गयां, केटलां कोटि वृक्षो कपायां, केटलां बधां स्वच्छ पाणीनो होम थई गयो, केटली बधी स्वच्छ हवाने बगाडी नाखी तेनो विनाश कर्यो अने विनाश पामती केटली आगे केटकेटलांने बाळी नाख्यां. धन पेदा करवानी आ रीतनुं ज नाम दुर्बुद्धि छे-घोर हिंसा छे-परस्पर बंधुतानी वृत्ति शिथिल थवी ए दानवी वृत्तिनुं मुख्य लक्षण छे. ए धर्मनी, पुण्यनी, सुखनी अने प्राणीमात्रनी नाशक छे ए भूलवुं न जोइए. क्रियाकांडनुं हाडपिंजर ए विशुद्ध धर्म नथी पण ते हाडपिंजरमां परस्पर बंधुतारूप अहिंसावृत्तिनो प्राण संचारवो ए ज शुद्ध धर्मनो पायो छे, माटे ज आर्य पुरुषोए एक अहिंसाने परम धर्म कहेलो छे.

(२) "विलासी मनुष्य एम मानतो होय के मारुं शरण तो धन छे, मारे परस्पर बंधुतानी वृत्ति केळववानी शी जरुर छे? तो एम मानतो ए मूढ खांड खाय छे. मात्र धन होवाने लीधे आजसुधीमां कोईनुं त्राण थयुं नथी अने हवे पछी थशे पण नहि. आ लोक के परलोकमां ते ज सुखी थशे के जेनामां व्यापक भ्रातृभावनी ज्योति प्रकटी होय अने जेनो बधो व्यवहार ए व्यापक भ्रातृभाव उपर ज चालतो होय

(३) "तृष्णानुं चक्र एटलुं बधुं प्रबळ छे के मनुष्य तेनाथी शीघ्र छूटो थइ शकतो नथी-इच्छा छतां पोताना व्यवहारोमां विवेक-

(२) वित्तेण ताणं न लभे पमत्ते इमम्मि लोए अदुवा परत्थ ॥५॥

(३) खिप्प न सक्केइ विवेगमेउं तम्हा समुट्ठाय पहाय कामे ॥१०॥

पूर्वक रही शकवामां शिथिलता आव्या करे छे; आम छतां मुमुक्षु जनोए गभरावानुं नथी ज, तेओए तो वारंवार प्रवळ प्रयत्न कर्या करवानो छे अने तृष्णानी प्रवृत्तिओना पाशमां न फसातां आत्मसंशोधनोना प्रयत्नोमां मच्या रहेवानुं ज छे.

(४) "जुओ—जे आ श्रमणो अहीं बेठेला छे तेओ तृष्णाना चक्रथी छूटवा माटे ज श्रम करी रह्या छे. तमे एम न समजता के श्रमणनो मात्र वेश पहेरवाथी श्रमण थइ जवाय छे. आ तो एक प्रकारनी शाळा छे. जेम तमे निशाळमां जइने अंकज्ञान शिखो छो तेम आ मारी शाळाना श्रमण विद्यार्थिओ तृष्णाना चक्रने छेदवानी विद्याओ शिखी रह्या छे, तेओ ए माटे सबळ प्रयत्न करे छे, छतांय तृष्णानां नवां नवां रूपो तेमने वारंवार सतावे छे जेथी तेओमां पण भारे असमंजसता फेलाइ रहे छे, आमछतांय तेमने कहुं छुं के तेओए मुमुक्षावृत्तिनो एक छांटो बाकी होय त्यांसुधी जराय गभरावानुं नथी, पण आरंभेला प्रयत्नमां ज दिनप्रतिदिन शिथिलता छोडी सविशेष उग्र बनवानुं छे. कोई तमे कहेशो के श्रमण थया पछी वळी तृष्णा शानी ? तो मारे जणाववुं जोइए के तृष्णा कांइ धननी, स्त्रीनी के पुत्रनी ज होय छे एम नथी, ए तो अनेक स्वांगो करीने प्राणीमात्रने सताव्या करे छे. श्रमणोए धन मूक्युं, स्त्री अने वहालां मातापिता छोडयां छतां तेओमां वेशनी, उपकरणनी, खावापीवानी, चेलाचाटीनी, गुरुनी, उपासकनी, वाचनानी, वेशमां पण अमुक ज प्रकारना वेशनी अने सौथी मोटामां मोटी हानिकारक तृष्णा मोटा थवानी–मोटा कहेवराववानी छे. तृष्णानां आ राक्षसी स्वरूपो आ श्रमणोने पण घडीए पळे नडया ज करे छे–वेश अने उपकरणोनी तृष्णामांथी बचवा नग्नभाव धारण करवा जतां तेनी ज एक तृष्णा बंधाई गई, खावापीवानी जाळमांथी बचवा अनशनव्रतो आदरतां तेमां ज फसाई जवा जेवुं थयुं, मनने ठेकाणे लाववा भयंकर उग्र तपो, घोर देहदंडनो अने केशलुंचन वगेरे घोरातिघोर बाह्य कष्टो करवा जतां तेमां ज टेवाइ रसलीन थवा जेवुं थयुं: आम अनेक उग्र उपचारो चालु छतांय हजु आ श्रमणो ठेकाणे आवता नथी, तेम छतांय मारी श्रद्धा छे–मारो अचळ विश्वास छे के प्रवळ प्रयत्नी सामे तृष्णा एक क्षण पण टकी शकवानी नथी. मारा पोताना जाति अनुभवथी कहुं छुं के तमे पण तृष्णानी सामे मोरचा मांडशो

(४) मुहुं मुहु मोहगुणे जयंतं अणेगरूवा समण चरतं। फासा फुसति असमजसं च ण तेसु भिक्खू मणसा पउस्से ॥११॥–अध्ययन ४ ।

तो जरूर तेने छेदीने विजय वरवाना ज.

(५) "घेर सोना रूपाना कैलास पर्वत जेवडा असंख्य पहाडो होय तोपण ए दुःखद तृष्णा शमती नथी–ए तो आकाश जेवी अमाप छे. पणुं शमन तो विवेकपूर्वक रहेवामां छे अने ते प्रमाणे पोतपोताना सर्व व्यवहारो चलाववामां छे."

सर्व सुखकर आत्मभावने फरीवार याद देवरावी भगवाने पोतानी देशना पूरी करी

[११] आमलकप्पानो ए जनसमुदाय भगवाननी उक्त देशना सांभळीने विशेष प्रमुदित थयो अने 'भगवाने निर्ग्रंथ प्रवचन ठीक कही बताव्युं छे' 'एवो कोइ श्रमण के ब्राह्मण नथी जे आ प्रकारनी धर्मदेशना करी शके' एम कहेतो कहेतो ए समुदाय पोतपोताना स्थानके जइ पहोंच्यो.

राजा सेय अने राणी धारिणी पण भगवाननी अपूर्व देशना सांभळीने प्रसन्न प्रसन्न थइ गयां, तेमणे भगवानने वंदन–नमन करी केटलाक प्रश्नोना खुलासा पूछी लीधा अने पछी तेओ निर्ग्रंथ प्रवचननी तेमज भगवाननी यशोगाथा गातां गातां पोताने महालये आवी पहोंच्यां.

[१२] जे समये श्रमण भगवान महावीर आमलकप्पा नगरीनी बहार आवेला अंबसालवण चैत्यना [५८]समवसरणमां विराजता हता ते

---

(५) सुवण्णरुप्पस्स य पव्वया भवे सिया हु केलाससमा असंखया। नरस्स लुद्धस्स न तेहि किंचि इच्छा हु आगाससमा अणंतया ॥४८॥

—अध्ययन ९

५८ 'सम्' अने 'अव' उपसर्गपूर्वक 'सृ–सरकवुं–जवुं' धातुमांथी 'समवसरण' शब्द नीपजेलो छे. भगवानना के तेमना शिष्योना आगमनने सूचववा सूत्रोमा अनेक ठेकाणे 'समोसरइ' क्रियापद वपराएलुं छे. आजनी भाषामां 'पधारवुं' क्रियापद जे भावने सूचवे छे ते भाव ए 'समोसरइ' क्रियापदनो जणाय छे. आ उपरथी 'समवसरण'नो प्रथम अर्थ 'पधारवुं' थाय. बीजो अर्थ 'जुदा जुदा मतवाळाओनो मेळो' थाय.

काले ते समये [59]सौधर्मकल्पमां सूर्याभ विमानमां सुधर्मा नामनी सभामां सूर्याभ सिंहासन उपर बेठेलो सूर्याभदेव पोताना विपुल अवधिवडे समग्र जंबूद्वीप तरफ नजर नांखी तेने बराबर निरखी रह्यो हतो.

ए सूर्याभदेवना परिवारमां चार हजार सामानिक देवो, पोतपोताना परिवारथी विंटळापली तेनी चार पट्टराणीओ, त्रण सभाओ, सात सेनाओ, सात सेनाधिपतिओ, सोळ हजार आत्मरक्षक देवो अने सूर्याभविमानमां रहेनारा बीजा पण घणा देवो अने देवीओ हतां

सूर्याभ सिंहासन उपर बेठेलो ते सपरिवार सूर्याभदेव-नाट्य, गीत, वाद्य, तंत्री, तल, ताल, बीजां विविध वाजांओ अने वादनकळामां दक्ष पुरुष जेने वगाडे छे एवो मेघनी पेठे गाजतो मृदंग-ए बधांमांथी नीकळता मधुर स्वरो सांभळतो सांभळतो दिव्य भोगोने भोगवतो रहेतो हतो

सूर्याभ देवे समग्र जंबूद्वीपने निरखतां निरखतां भारतवर्षमां आमलकप्पा नगरीनी बहार अंबसालवण चैत्यमां आवी रहेला अने योग्य अवग्रहपूर्वक संयम अने तपथी आत्माने भावित करता श्रमण भगवान महावीरने जोया.

जेमके:-'वादिओनुं समोसरण' ["चत्तारि वाइसमोसरणा"-"वादिनः तीर्थिकाः समवसरन्ति अवतरन्ति एषु इति समवसरणानि-विविधमतमीलकाः"-(स्थानांग पृ. २६४-२६८] 'समवसरण'नो त्रीजो अर्थ रहेठाण-रहेवानुं स्थान-थाय छे. ('समोसरणाइं'ति-समवसरणानि वसतयः × क्व भगवान् अवस्थितः इति जानीत-भगवान क्यां-क्या मकानमा-ऊतर्या छे ते जाणो-उववाइय पृ. ६१) अने चोथो अर्थ त्रिगडुं-समवसरणनी रचना-थाय छे. उक्त त्रणे अर्थो तद्दन सादा स्वाभाविक छे त्यारे आ चोथो अर्थ विशेष अलंकारवाळो छे. अहीं तो त्रीजो 'रहेठाण' अर्थ बध बेसे एम छे.

५९ सौधर्म स्वर्ग अने सुधर्मा सभाना नामनो निर्देश बौद्धग्रंथोमां पण आवे छे. जुओ भगवतीसूत्रनो मारो अनुवाद भाग २, पृ० १२९-१३० टिप्पण.

१३ भगवान महावीर प्रत्ये सूर्याभदेवनी भक्ति

[१३] भगवाननुं दर्शन करीने ते सूर्याभदेव [६०] हर्षवाळो, तोषवाळो अने आनंदित चित्तवाळो थयो तथा भगवान तरफ एना मनमां प्रीति थई-परम सौमनस्य थयुं. हर्षना आवेगथी तेनुं हृदय धबकवा लाग्युं, एनां कमळ जेवां उत्तम नेत्रो खीली उठ्यां, आनंदना वेगथी एनां उत्तम कडां बेरखां केयूर मुगट वन्ने कुंडलो अने सुंदर हारथी सुशोभित छाती-ए बधुं चलायमान-हलुंहलुं-थई गयुं. नीचे सुधी लटकता प्रलंबने अने कंपायमान थएलां बीजां आभूषणोने धारण करतो ते सूर्याभ देव भगवान महावीरने जोतां ज संभ्रम साथे त्वरा अने चपळतापूर्वक सिंहासनथी ऊभो थई गयो, पछी तेणे पादपीठ उपर चडी पादुकाओ-मोजडीओ-काढी नाखी अने तीर्थंकरनी सामे सात आठ पगलां जई डाबो घुंटण उंचो करी जमणो घुंटण धरणी उपर ढाळी मस्तकने त्रण वार धरणी उपर नमाव्युं. पछी जराक माथाने उंचुं करी कडां अने बेरखांथी स्तब्ध थएली भुजाओने भेगी करी, दशे नख एक बीजाने अडे ए रीते बन्ने हथेळीओ साथे राखी शिरसावर्तपूर्वक मस्तके अंजलि जोडी ते आ प्रमाणे बोल्योः

[१४] आदिकर, तीर्थंकर [कं० ७ पृ० १८ पं० २-] यावत् अजर अमर [६१]स्थानने प्राप्त थएला अरिहंत भगवंतोने नमस्कार थाओ, ॥३५॥

[१५] अजरअमर स्थानने मेळववानी वृत्तिवाळा श्रमण भगवान महावीरने नमस्कार थाओ, अहीं रहेलो हुं त्यां रहेला श्रमण भगवान महावीरने वांदुं छुं, त्यां रहेला श्रमण भगवान महावीर अहीं रहेला मने जुए छेः एम करीने ते सूर्याभ देव भगवानने वांदी नमी पाछो पूर्वाभिमुख थई सिंहासन उपर बेसी गयो.

[१६] त्यार पछी ते सूर्याभ देवना आत्मामां [६२] चिंतनरूप, अभिलाषरूप आ-आ प्रकारनो मनोगत संकल्प-विचार-उत्पन्न थयाः

६० चित्तमा खरेखरो हर्षनो उद्रेक थता शरीर उपर ते उद्रेकनी जे असर थाय छे ते, आ कडिकामा प्रत्यक्षवत् वर्णवेली छे.

६१ आ स्थळे सूर्याभ देवना मुखमां शक्रस्तवनो आखोय पाठ मूकवामा आव्यो छे पण ते सुप्रसिद्ध होवाने लीधे अहीं आपेलो नथी.

६२ एकज भावने बतावबा पर्यायरूप अनेक शब्दो मूकवानी पद्धति सूत्रोमां प्रचलित छे, प्राचीन वैदिक वा बौद्धग्रंथोमाय तेवी वाक्यपद्धति

१८ भगवान महावीरना उतारावाळी जग्याने स्वच्छ अने सुगंधित करवा सूर्याभदेवे आभियोगिक देवोने करेली आज्ञा

[१७] "योग्य अवग्रहपूर्वक संयम अने तपथी आत्माने भावित करता श्रमण भगवान महावीर जंबूद्वीपना भारतवर्षमां आमलकप्पा नगरीनी बहार अंबसालवण चैत्यमां आवीने विहरे छे ते मारे माटे श्रेयरूप छे.

"तेवा प्रकारना अरहंत भगवंतनां मात्र नाम गोत्र काने पडे तोपण ते महाफळरूप छे, तो पछी तेमनी सामे जवानो, तेमने वांदवानो, नमस्कार करवानो, तेमनी पासेथी केटलाक खुलासा पूछवानो अने तेमनी उपासना करवानो प्रसंग मळे तो तो कहेवुं ज शुं?

"आर्य पुरुषनुं मात्र एक धार्मिक सुवचन काने पडे तोपण ते महाफलरूप छे, तो पछी तेमनी पासेथी विपुल अर्थ–उपदेश–मेळववानो प्रसंग सांपडे तो तो कहेवुं ज शुं?

"तो हुं श्रमण भगवान महावीरने वांदवा, नमवा, तेमनो सत्कार करवा, सन्मान करवा तथा कल्याणरूप मंगळरूप, चैत्यरूप अने देवरूप श्रमण भगवान महावीरनी पर्युपासना करवा जाउं.

"श्रमण भगवान महावीरनी ए पर्युपासना मारे माटे–जन्म–जन्मांतरमां हितकर, सुखकर, क्षमकर,[६३] कल्याणकर नीवडवानी छे अने नीवडशे": एम ते सूर्याभ देव विचार करे छे. ए प्रमाणे गंभीरपणे विचारीने तेणे पोताना आभियोगिक देवोने बोलावी तेमने आ प्रमाणे कह्युंः

[१८] "हे देवानुप्रियो! एम छे के, योग्य अवग्रहने ग्रहण करी संयम अने तपथी आत्माने भावित करता श्रमण भगवान महावीर जबूद्वीपना भारतवर्षमां आमलकप्पा नगरीनी बहार अंबसालवण चैत्यमां आवीने विहरे छे. तो हे देवानुप्रियो! तमे त्यां जाओ

योजाएली छे. विवक्षित भाव उपर विशेष भार बताववा एकज वाच्य माटे पण अनेक शब्दो मुकाता हशे, परंतु भाषामा एवुं ठीक न जणायाथी आ अनुवादमा ए पद्धति स्वीकारी नथी.

६३ टीकाकार 'क्षम'नो अर्थ 'सगति' बतावे छेः (क्षमाय×संगतत्वाय–रायपसेणइय पृ. १०२ समिति)

अने अंबसालवण चैत्यमां विराजता श्रमण भगवान महावीरने त्रण प्रदक्षिणा करी तेमने वांदो, नमो अने पछी तमारां नाम अने गोत्रो तेमने कही संभळावो, तथा श्रमण भगवान महावीरना ऊतारानी आसपास चारे बाजु योजन-प्रमाण जमीनमां अपवित्र, सडेलां, दुर्गंधी तणखलां, लाकडां, पांदडां के कचरो वगेरे जे कांइ पड्यु होय तेने त्यांथी उठावी दूर करो अने ए जमीनने तद्दन चोख्खी करो. वळी, तेटली जमीन उपर सुगंधी पाणीनो छंटकाव एवी रीते करो जेथी त्यांनी ऊडती बधी धूळ बेसी जाय, बहु पाणीपाणी न थाय अने वधारे किच्चड पण न थाय. पछी, जेनी रज जरा पण ऊडती नथी एवी जमीन उपर जलज अने स्थलज एवां पांच प्रकारनां सुगंधी पुष्पोनो वरसाद एवी रीते वरसावो के त्यां बधां पुष्पो चत्तां ज पडे, तेमनां डिंटियां नीचे रहे अने ए पुष्पो[६४] बधे जमीनथी उंचे एक एक-जानु-हाथ-सुधी उपराउपर खीचोखीच रहे. आ उपरांत ते जमीनने काळो अगर, उत्तम किनरु अने तुरु-

६४ भक्तोनु अतिशय भक्तिथी आवेगवाळु हृदय एकवार तो कंइ कंइ कल्पनाओ करी बेसे छे अने पछी स्वस्थ थतां ते करेली कल्पनाओमां पोतानी ज बुद्धि ज्यारे विसवाद ऊभो करे छे त्यारे तेनुं निराकरण करवा वळी बीजी केवी विचित्र कल्पनाओ करवी पडे छे, तेनो आ एक साररूप नमूनो नीचे प्रवचनसारोद्धार पृ. १०७ माथी अहीं ऊतारेलो छेः

"भगवाननी समवसरणभूमिमां देवो पुष्पोनी वृष्टि करे छे. ए तो खरु, पण त्यारे ए पुष्पवाळी भूमिमां जीवदयाप्रधान जीवन गाळनारा साधुओ बेसे शी रीते? पुष्पो उपर साधुओ बेसे तो ते बिचारा मूगां पुष्पो कचराय-दुःख पामे अने कोई पण प्राणीने दुःख न देवाना व्रतवाळा साधुओ ए गरीब पुष्पोने दूभवे खरा? आना जवाबमां केटलाक कहे छे के समवसरण भूमिमा वरसेलां पुष्पो सजीव ज होय छे एम नथी, निर्जीव पण होय छे एटले तेमना उपर बेसवाथी तेमने दुःख थवानो संभव नथी. केटलाकोए आपेलो आ उत्तर खरो छे एम प्रवचनसारोद्धारना टीकाकार नथी मानता. तेओ तो कहे छे के त्यां वरसेलां बधांय पुष्पो निर्जीव नथी होतां, सजीव पण होय छे, त्यारे हवे त्या साधुओने बेसवानु केम थाय? आ माटे वळी कोइ बीजा बीजो ज जवाब शोधी काढे छे के ज्यां ज्यां साधुओ बेसवाना होय छे

करो अने ए रीते ए भूमिने सर्व प्रकारे दिव्य करो-ज्यां उत्तम देव आवी शके एवी सुंदरमां सुंदर क्षना सुगंधी धूपथी मघमघित सुगंधीमां सुगंधी अने पवित्रमां पवित्र बनावो-आम करी कारवीने पछी मने शीघ्र समाचार पण आपो."

१९ आभियोगिक देवो भक्तिपूर्वक भगवान पासे आव्या

[१९] आभियोगिक देवोए 'श्रीमान देव जे कहे छे ते बराबर छे' एम कही सूर्याभदेवनी ए आज्ञाने सहर्ष विनयपूर्वक हाथ जोडीने स्वीकारी अने पछी तेओ ईशानकोण तरफ जवा नीकळ्या. ईशानकोण तरफ जई वैक्रियसमुद्घात[६५] वडे तेमणे संख्येय यो-

---

त्या सजीव पुष्पोनी वृष्टि नथी थती पण निर्जीवनी थाय छे. प्रस्तुत टीकाकारनी नजरमां तेमनो आ उत्तर पण बराबर नथी. टीकाकार कहे छे के समवसरणभूमिमा वेसवा आवता साधुओ काइ लाकडानी पेठे हाल्या चाल्या विना बेसी ज रहे छे एम नथी, तेओ तो त्या जावआव पण करे छे, एटले रस्तामां आवतां सजीव पुष्पो कचरावानां अने दुःखी थवानां तेनु शुं ? आ बधी हकीकत ध्यानमा लई प्रवचनसारोद्धारना टीकाकार एक तद्दन विलक्षण जवाब घडी काढे छे अने ते आ छेः समवसरण भूमिमां वरसेलां पुष्पो सजीव होय छे, ए वात खरी किंतु परमकारुणिक तीर्थंकर भगवाननो एवो प्रभाव छे के जेने लीधे ते पुष्पो कचरातां छतांय लेश मात्र त्रास अनुभवता नथी, उलटुं जाणे ते पुष्पो अमृतरसथी सींचातां होय एवो आनंद अनुभवे छे अंतमां टीकाकार कहे छे के अमारो आ उत्तर बधाय गीतार्थ पुरुषोने संमत छे." आ विशे अनुवादकनो विशेष कहेवानो अधिकार नथी.

६५ आ क्रियानु वास्तविक स्वरूप समजातुं नथी. जैन सूत्रोमा आ विशे माहिती तो घणी मळे छे पण आ क्रिया अनुभव बहारनी थइ जवाथी ए माहिती शब्दस्पर्शी उपरात बीजुं कशु बतावी शकती नथी. योगीओ पोताना शरीरमा धारे एवो फेरफार करी शके छे एम संभळाय छे, तेम देवो पण तेमने ज्यां ज्यां जवुं होय ते ते स्थानने योग्य पोतानां शरीरो बनाववामा आ क्रियानो उपयोग करे छे एम आगमवचन कहे छे. पातंजल योगशास्त्र प्रसिद्ध 'निर्माणकाय'नी क्रिया जेवी आ समुद्घातनी क्रिया लागे छे अने ते एक प्रकारनी शक्तिरूप छे. आगम तो कहे छे के ते क्रिया मानवोमा पण संभवी शके छे पण तेने केम मेळववी-सिद्ध करवी ए बाबत विशेष जणावेलु नथी.

२०भगवान अने अभियोगिक देवोनो वार्तालाप

जन लांबो दंड काढ्यो अर्थात् ए द्वारा ते देवोए रत्न, वज्र, वैडूर्य, लोहिताक्ष, मसारगल्ल, हंसगर्भ, पुद्‌गल, सौगंधिक, ज्योतिरस, अंजनपुलक, अंजन, रजत, जातरूप, अंक, स्फटिक अने रिष्टनां मोटां-जाडां पुद्‌गलो दूर करी सूक्ष्म पुद्‌गलो लीधां. पछी फरी पण वैक्रियसमुद्‌घात करी तेमणे पोतानां उत्तर वैक्रियरूपो बनाव्यां. आ रीते तेओ-आभियोगिक देवो-पोतानां रूपोने बनावी घणी ज त्वरावाळी, विशेष वेगवाळी अतिशय शीघ्रतावाळी, वधुमां वधु चपलतावाळी, प्रचंड दिव्य गतिथी तीरछी दिशामां जवा उपड्या. असंख्य द्वीप अने समुद्रोनी वच्चोवच्च थता तेओ जंबूद्वीपना भारतवर्षमां आवी पहोंच्या पछी त्यां आमलकप्पा नगरीनी बहार जे तरफ अंबसालवण चैत्यमां श्रमण भगवान महावीर विराज्या हता ते तरफ जई ते आभियोगिक देवोए भगवान महावीरनी फरती त्रण प्रदक्षिणा करी, तेमने वांद्या, नमस्कार कर्यो अने पछी तेओ आ प्रमाणे बोल्याः

"हे भगवान ! अमे सूर्याभदेवना आभियोगिक देवो छीए, आप देवानुप्रियने वांदीए छीए, नमीए छीए, सत्कारीए छीए, सन्मानीए छीए अने कल्याणरूप, मंगळरूप, देवरूप अने चैत्यरूप एवा आप देवानुप्रियनी पर्युपासना करीए छीए."

[२०] 'हे देवो' एम कहीने श्रमण भगवान महावीरे ते देवोने आ प्रमाणे कह्युंः

"हे देवो ! ए पुरातन छे, हे देवो ! ए कृत्यरूप छे, हे देवो ! ए करणीयरूप छे, हे देवो ! ए आचीर्ण छे, अने हे देवो ! ए संमत छे के भवनपति, वानव्यंतर, ज्योतिषिक अने वैमानिक देवो अरहंत भगवंतोने वांदे छे, नमे छे अने तेम करी पोतपोतानां नामगोत्रो कही संभळावे छे. हे देवो ! ए पुरातन पद्धति छे अने ते सम्मत थएली छे."

गरम प्रदेशनो मानव ठंडा प्रदेशमां जाय त्यारे ते पोताना शरीर उपर गरम कपडां पहेरे छे, ओढे छे, तेम देवसृष्टिमां रहेनारा लोको ज्यारे मानवसृष्टिमां आवे छे त्यारे तेमने पोतानां शरीरनी रचना बदलवी पडती हशे एम आगमवचन उपरथी लागे छे. आ विशे विशेष तर्क जइ शकतो नथी, तेमज तेम करवाना अर्थात् शरीरपरिवर्तनना कारण संबंधे पण कशुं कही शकातुं नथी.

[२१] त्यारपछी, श्रमण भगवान महावीरे जेमने उक्त रीते कहेलुं छे एवा ते आभियोगिक देवो हर्षित थया अने यावत् प्रफुल्ल हृदयवाळा थया तेमणे श्रमण भगवानने वांदी नमी उत्तरपूर्वना खूणा तरफ जई वैक्रियसमुद्घात कर्यों, ते द्वारा संख्येय योजन लांबो दंड काढ्यो अर्थात् ए समुद्घातद्वारा ते देवोए मोटां-जाडां-पुद्गलोने दूर करी सूक्ष्म पुद्गलो लीधां. पछी फरी पण वैक्रियसमुद्घात करी [६] ते देवोए संवर्तक वायुनी रचना करी अने ते वायुद्वारा श्रमण भगवान महावीरनो जे स्थळे ऊतारो हतो ते स्थळनी आसपास चारे बाजु एक योजन सुधीमां जे कांइ अपवित्र-सडेलां, दुर्गंधी तणखलां, लाकडां, पांदडां के कचरो वगेरे पडयुं हतुं ते बधुं त्यांथी उठावी दूर करी योजनप्रमाण भूमंडलने स्वच्छ कर्युं.

२१ भूमंडल स्वच्छ कर्युं

[२२] वळी, फरीवार वैक्रियसमुद्घात करी ते द्वारा ते देवोए पाणीभरेलां वादळनी[६७] रचना करी. जेम कोइ कुशळ छंटारो पाणी-

---

६६ मूळमां आ स्थळे वाळीझूडीने साफ करवा बाबत नीचेनुं उदाहरण मूकेलुं छे.

जेम एक कोइ झाडुवाळानो छोकरो होय-ते जुवान बळवान निरोगी स्थिर बांधानो साफसूफीनी कळामा सिद्धहस्त लांबा अने सीधा हाथवाळो होय, कूदवु टपी जवुं वगेरे क्रियामा कुशळ होय, अने वळी मेधावी दक्ष तथा वाग्मी होय, एवो ते छोकरो पोताना हाथमा एक मोटी दडसपुच्छनी शलाकाहस्तका के वेणुशलाकामयी अर्थात् एक मोटी सावरणी लइ कोइ राजाना आगणाने के अंतःपुरने धीरे धीरे साफ करे वा देवळने सभाने परबने आरामने के उद्यानने वाळवा मंडे तेम ए आभियोगिक देवोए ते सवर्तक वायुद्वारा ए भूमिभागने वाळी झूडीने साफ कर्यो. (मोटा दाडावाळी सावरणी ते दंडसंपुच्छनी. जेना हाथामा सळीओ जडेली छे ते शलाकाहस्तका अने वासडानी सळीओथी बनेली सावरणी ते वेणुशलाकामयी-आ बधां जुदी जुदी सावरणीना नामो छे).

६७ आ उपरथी एम लागे छे के पाणी वरसाववा माटे कृत्रिम वादळांनी रचना प्राचीन समयमां थती हशे. आ युगना वैज्ञानिको पण एवी कोइ चोकस फळवती शोध पाछळ मंडया छे खरा. अने तेमा तेओ थोडे घणे अंशे फाव्या पण छे.

भरेला मोटा घडाद्वारा कोई बगीचाने छांटे अने तेने शांतरज-शीतळ करे तेम ते देवोए पाणीभरेलां वादळद्वारा ए स्वच्छ करेल भूमंडळ उपर सुगंधी पाणी वरसावी-छांटी त्यां उडती धूळने बेसारी दीधी-तेने शांतरज-शीतळ बनावी दीधुं. पाणीने वरसावतो मेघ जेम गाजे छे अने वीजळीथी झबके छे तेम ते देवोए रचेलुं ए पाणीभरेलुं वादळ पण पाणीने वरसावतु गाजतुं हतुं अने वीजळीथी चमकतुं हतुं.

२२ भूमंडल उपर पाणी छांटयुं—

[२३] वळी, त्रीजीवार वैक्रियसमुद्घात करी ते द्वारा ते देवोए फूलभरेलां वादळनी रचना करी जेम कोइ माळीनो कुशळ युवान पुत्र फूलभरेली चंगेरीओद्वारा राजसभाने पुष्पोथी मघमघित करी दे तेम ते देवोए मेघनी पेठे गाजता अने वीजळीथी झबकता ए फूलभरेलां वादळद्वारा पाणीथी सुगंधित करेली ए भूमि उपर पांच प्रकारनां पुष्पोने वरसावी तेने चारे बाजुथी म्हेक म्हेक करी मूकी अने जमीनथी उंचे एकएक जानु-हाथ सुधी उपराउपर पुष्पोथी खीचोखीच भरी दीधी. ते पुष्पो पण तेमणे एवी रीते वरसाव्यां के दरेक पुष्पनुं डिंटियुं नीचुं रहे अने कळीओवाळो भाग उपर रहे.

२३ फूलो वरसाव्यां ॥४१॥

त्यारपछी, पुष्पोथी मघमघता ए भूमंडळने केम जाणे सुगंधनो महासागर न बनाववो होय तेम ए देवोए त्यां चारे बाजु उत्तम काळो अगर, उत्तम किनरु अने तुरुक्कनो सुगंधी धूप मूकी तेने घणुं ज सुगंधित करी मूक्युं अने एवी रीते करी ते स्थळे देवो पण आवी शके एवुं तेने आकर्षक बनावी दीधुं

[२४] हवे आ बधुं भूमिशुद्धिने लगतुं काम पतावी ते देवो श्रमण भगवान महावीर तरफ आव्या, त्यां आवी तेमने वांदी-नमी त्यांथी पोताना स्थान भणी जवा नीकळ्या जे जातनी वेगवती प्रचंड गतिथी तेओ आव्या हता ते ज गतिद्वारा जता तेओ सौधर्मकल्पने सत्वर पहोंची गया. त्यां जे तरफ सूर्याभनामनु विमान हतुं अने सुधर्मा सभामां जे तरफ सूर्याभदेव विराजेलो हतो त्यां जई तेमणे सूर्याभदेव तरफ विनयपूर्वक हाथ जोडी माथुं नमावी 'सूर्याभदेवनो जय थाओ-विजय थाओ' एवो प्रघोष कर्यो अने तेमणे तेने जणाव्युं के "हे महाराज ! आपे अमने भगवान महावीरना उतारानी आसपासना भूमंडळने शुद्ध अने सुगंधित करवानी

सूर्याभदेव तरफथी पोताना ताबाना देवोने पोतानी साथे भगवंतने वांदवा आववानी आज्ञा

जे आज्ञा आपी हती ते प्रमाणे अमे बधुं करी आव्या छीए अर्थात् आपे आपेली आज्ञा अमे हवे आपने पाछी सोंपीए छीए"

[२५] त्यारपछी ते सूर्याभदेव, ए आभियोगिक देवो पासेथी तेमणे कहेली उक्त हकीकतने सांभळीने-अवधारीने हर्षित थयो, तुष्ट थयो यावत् प्रफुल्ल हृदयवाळो थयो

त्यारबाद तेणे पोताना सेनापति देवने बोलावीने आ प्रमाणे कह्युं "हे देवानुप्रिय! सूर्याभविमानमां आवेली सुधर्मा सभामां एक मोटी सारा रणकारावाळी घंटा टांगेली छे, जेनो घेरावो योजनप्रमाण छे अने जे मेघनी पेठे गंभीर अने मधुर रणको करे छे ते घंटाने तुं शीघ्र उलाळतो उलाळतो-उंचा उंचा घोषथी उद्घोषण करतो करतो आ हकीकतने जाहेर करः हे देवो! सूर्याभविमानमां रहेनारा प्रत्येक देवदेवीओने सूर्याभदेव आज्ञा करे छे के हे देवो! जंबूद्वीपना भारतवर्षमां आवेली आमलकप्पा नगरीना अंबसालवण चैत्यमां श्रमण भगवान महावीर समोसर्या छे, तेने वांदवा माटे सूर्याभदेव जनार छे तो हे देवानुप्रियो! तमे पण तमारी सर्व शोभा-ऋद्धि-समृद्धि साथे अने पोतपोताना परिवार साथे संपरिवृत थई पोतपोतानां यानविमान उपर चडी तेनी साथे जवा तैयार थाओ आ माटे विलंब न करतां वखतसर तमे बधा सूर्याभदेवनी समक्ष हाजर थई जाओ"

[२६] ए प्रकारनी आज्ञा करवानी सूर्याभदेवनी सूचना सांभळीने ते सेनापतिदेव हर्षित थयो अने ते-आज्ञा करवानी सूचनाने तेणे विनयपूर्वक स्वीकारी पछी ते सेनापतिदेव सूर्याभविमानमां आवेली सुधर्मा सभामां आव्यो अने ज्यां ते मोटी सारा रणकारावाळी अने वगाडतां ज मेघनी पेठे गाजती एवी योजनप्रमाण घेरावावाळी घंटा टांगेली छे त्यां जई तेणे तेने त्रण वार उलाळी. ए घंटाने त्रण वार उलाळतां ज सूर्याभविमानमां एक मोटो जबरदस्त अवाज थयो, ते अवाज थतां ज ते विमानमां रहेला बधा महेलो अवाजना पडछंदाथी गाजी उठ्या.[६८]

---

६८ वधारेमां वधारे दूर बार योजनथी आवनारो शब्द आपोआप श्रोत्रग्राह्य थइ शके छे पण तेथी वधारे दूरथी आवतो शब्द कोइ बीजा साधन विना एनी मेळे-आपोआप-श्रोत्रग्राह्य थइ शकतो नथी. एवो श्रोत्रेंद्रियना विषयने लगतो साधारण नियम जैनशास्त्रमां छे. अहीं

ए महेलोमां रहेनारा देवो अने देवीओ परस्पर क्रीडामां मशगुल हतां, रतिमां आसक्त हतां अने अनेक प्रकारना विलासोमां तल्लीन हतां, ते बधां ए घंटानो अवाज सांभळी एककान थइ गयां, घंटानो अवाज सांभळी ते बधांने कुतूहल थयुं घंटानो अवाज शांत थया पछी ते देवो अने देवीओए 'सौए भगवान महावीरने वांदवा माटे जनारा सूर्याभदेव साथे जवा तैयार थवुं अने बराबर वखतसर पोतपोतानां वाहन-यानो साथे सूर्याभदेवनी समक्ष हाजर थवुं' एवी ए सेनापतिदेवे सूचवेली सूर्याभदेवनी आज्ञाने ध्यानपूर्वक सांभळी.

[२७] सेनापतिदेवे संभळावेली सूर्याभदेवनी आज्ञाने सांभळीने ए बधां देवो अने देवीओ हर्षित थयां. एमांनां केटलांकने तो भगवान महावीरने वांदवानी वृत्ति थइ आवी, केटलांक तो भगवान महावीरने पूजवा माटे उत्सुक थई गयां, केटलांकने भगवान तरफ सत्कारनो भाव उपज्यो, केटलांक भगवंत तरफ सन्मानवृत्तिवाळां थयां, केटलांक मात्र कुतूहलवृत्तिथी ज भगवाननी पासे जवाने तैयार थवा लाग्यां, केटलांकने एम थयुं के भगवान पासे जशुं तो जेवुं आजसुधी नथी सांभळ्युं तेवुं नवुं सांभळशुं; केटलांक एवुं विचारवा लाग्यां के भगवान पासे जशुं तो अर्थोने, हेतुओने, प्रश्नोने, कारणोने अने व्याकरणोने पूछवानो प्रसंग मळशे. बीजां केटलांक मात्र सूर्याभदेवनी आज्ञानी खातर ज तैयार थवा मांडयां. केटलांक वळी परस्परना अनुरागथी भगवान पासे जवानी तैयारी

सूर्याभदेवनु विमान लाख योजननुं बतावेलु छे, तेमांनी सुघोषा घंटा योजनना घेरावावाळी छे, ते घंटा वगाडया पछी तेना शब्दनो रणको लाख योजनना ए आखाय विमानमा पहोची गयानुं जणावेलु छे, पण एवुं बने शी रीते ? उपर्युक्त साधारण नियम प्रमाणे तो बार योजन करता वधारे छेटेथी आवतो शब्द कोइ पण बीजा साधनना उपयोग विना एनीमेळे श्रोत्रग्राह्य थइ शकतो नथी, तो पछी ए घंटानो रणको लाख योजन प्रमाणवाळा विमानमां बधे शी रीते पहोंची शक्यो हशे ? टीकाकार पोते आवी शंका उठावे छे अने तेनुं समाधान आपता ते पोते ज कहे छे के ए तो बधुं देवना प्रभावथी बनी शके छे, माटे ए विशे कोइ तर्क के शंकाने अवकाश नथी. [विवरण पृ० ७१ पं०१०]

२८ एक मोटा यान–विमानने रचवानी आज्ञा

करवा लाग्यां, केटलांक जिनभक्तिना रागने लीधे अने केटलांक भगवान पासे जवांनो पोतानो धर्म छे, आचार छे, एम समजीने[६९] सज्ज थवा लाग्यां आ प्रमाणे अनेक प्रकारनी वृत्तिथी उत्साहित थएलां ते देवो अने देवीओ पोतपोतानी ऋद्धि समृद्धि अने परिवार साथे तैयार थइ पोतपोताना यान विमान सज्ज करी बराबर वखतसर सूर्याभदेवनी समक्ष हाजर थयां.

[२८] पोते करेली सूचना प्रमाणे बराबर वखतसर हाजर थएलां ते देवो अने देवीओने जोइने सूर्याभदेव खुशखुश थइ गयो पछी तेणे पोताना आभियोगिक देवोने बोलावीने आ प्रमाणे कह्युंः 'हे देवानुप्रियो! लाख योजनना विस्तारवाळुं एक मोटुं यान विमान तमे जलदी तैयार करो, ए मोटा विस्तारवाळा यानमां सेंकडो स्तंभो गोठववाना छे, एमां जात जातना हावभाववाळी अनेक पूतळीओ जडवानी छे, ज्यां त्यां शोभे ए रीते वरु, वृषभ–बळद, घोडा, मनुष्य, मगर, पक्षी सर्प के वाघ, किन्नर, शरभ चमरी गाय, हाथी, वनवेलो अने कमळवेलो, ए बधुं चीतरवानुं छे, थांभलाओ उपर वज्रनी वेदिकाओ बनाववानी छे, विद्याधर अने विद्याधरीनुं जोडलुं जेमां फरतुं देखाय एवां अनेक यंत्रो ते विमानमां गोठववानां छे, हजारो किरणोथी सूर्यनी पेठे झगारा मारे एवुं हजारो रूपकोथी युक्त एवुं ते विमान रचवानुं छे, अने जोनारनी आंखने शीतळ करे एवुं, अडकनारना हाथने सुख उपजावनारुं, देदीप्यमान, सुंदर, देखावडुं, टांगेली अनेक घंटडीओना मधुर रणकारावाळुं, दिव्य प्रभाववाळुं अने वेगवाळी गतिवाळुं एवुं ए यान विमान शीघ्र तैयार करवानुं छे हे देवो! तेवा ते यान विमानने तैयार करीने तमे मने जलदी समाचार आपो."

[२९] आभियोगिक देवोने सूर्याभदेवे पूर्वोक्त प्रकारनुं यान विमान बनाववानी आज्ञा करी तेथी तेओ खुश थया अने ए आज्ञाने नेमणे विनयपूर्वक माथे चडावी. पछी तेओ उत्तरपूर्वना खूणा तरफ गया, त्यां जईने तेमणे वैक्रियसमुद्घात कर्यो अने ते द्वारा संख्येय योजन लांबो दंड काढयो, जाडां पुद्गलोने मूकी सूक्ष्म पुद्गलोने लीधां, वळी फरीवार पण वैक्रियसमुद्घात कर्यो अने पछी ते आभियोगिक देवो दिव्य एवा ते विमान बनाववानी प्रवृत्तिमां लागी पडया

६९ जुओ टिप्पण ५५ मु. पृथ्वीपरना लोको अने पृथ्वीथी विशेष ऊंचे रहेता देवो ए बन्नेना मानसमा झाझो फेर जणातो नथी.

३०—यान-विमाननी रचनानुं वर्णन

[३०] ते देवोए ए दिव्य यान-विमानने त्रण बाजुए त्रण मोटां सुंदर सोपान गोठव्यां, एक सोपान पूर्वमां, बीजुं दक्षिणमां अने त्रीजुं उत्तरमां ते सोपानोनी भोंय वज्रमय बनावी तेनां प्रतिष्ठानो रिष्टरत्नोनां बनाव्यां, टेका माटे मूकेला स्तभो वैडूर्यरत्नमांथी घडया, सोपानोनां पाटियां सोनारूपामय रच्यां, कठेडामां आवेली सूईओ (सळियाओ) लोहिताक्षरत्नोमांथी नीपजावी सांधाना भागो वज्रथी जड्या, अवलबनोने अनेक प्रकारनां मणिओमांथी बनाव्यां, अवलंबन बाहुओने-सोपानोनी बन्ने बाजुनी कठेडावाळी भींतोने पण मणिओमांथी ज रच्यां. आ प्रकारे ते देवोए यान-विमानने त्रण बाजुए मूकेलां सोपानो अति आकर्षक, जोनारना चित्तने प्रसाद उपजावे एवां अने घणां मनोहर बनाव्यां

[३१] ते त्रणे सुंदर सोपानोनी आगळ सुंदर तोरणो बांध्यां ते तोरणो पण चंद्रकांत अने सूर्यकांत वगेरे अनेक मणिओथी भरेलां हतां, मणिमय स्तंभो उपर गोठवेलां होवाथी निश्चल हतां, तेमां विविध प्रकारनां मोतीओ मूकीने अनेक प्रकारनी भातो पाडेली हतां, फरती पूतळी जेवां हती, हाथी, घोडा, मगर, पक्षी, वनवेलो अने कमळवेलो वगेरे अनेक प्रकारनां चित्रो ए तोरणोमां कोरेलां हतां, यंत्रो पण एमां भरेलां हतां अथवा गोठवेलां हतां, ए बधां तोरणो खूब प्रकाशमान हतां, जोनारनी आंखने, अडकनारना हाथने सुख उपजावे एवां प्रासादिक हतां.

[३२] वळी, ते तोरणोनी उपर ते आभियोगिक देवोए साथीओ, श्रीवत्स, नदावर्त, वर्धमानक, भद्रासन, कलश, मत्स्य-माछली अने दर्पण ए आठ आठ मगलो गोठव्यां, उपरांत वज्रमांथी बनावेली डांडीवाळां काळां चामर, धोळां चामर वगेरे अनेक रंगनां चामरोनी धजाओ पण ते तोरणो उपर लटकावेली हती. वळी, ते तोरणो उपर, छत्र उपर छत्र होय ते घाटे अनेक छत्रो, ए प्रमाणे अनेक घंटडीओ, पताकाओ, सर्व रत्नमय उत्पलना, कुमुदना, नलिनना, सो पांखडीवाळा कमळना अने हजार पांखडीवाळा कमळना अनेक गुच्छाओ गोठवेला हता.

[३३] हवे ते आभियोगिक देवो, ए सोपानो अने तेने लगती बीजी बधी सुंदर रचना पूरी करी ते दिव्य यान-विमाननी अंदरना

भूमिभागने सुंदरमां सुंदर रीते सजाववानी प्रवृत्तिमां लागी गया.

ते दिव्य यान-विमाननी अंदरनो भूमिभाग, ते देवोए सर्व प्रकारे सम बनाव्यो हतो जेम मुरजनो उपरनो भाग, मृदंगनो उपरनो भाग, सरोवरनो उपरतळनो भाग, हाथनी हथेळीनो भाग, चंद्रना मंडळनो भाग, सूर्यना मंडळनो भाग, आरीसानो उपरनो भाग जेवो सर्व प्रकारे सरखो होय छे-क्यांय ऊंचो नीचो नथी होतो, ए प्रकारे ते विमाननी अंदरनो भूभाग सर्व प्रकारे सम करेलो हतो. वळी, जेम घेटानुं, बळदनुं, वराहनुं, सिंहनुं, वाघनुं, हरणनुं, बकरानुं, अने दीपडानुं चामडुं सर्व बाजुओथी शंकु शंकु जेवडा खीलाओ भरावी खेंचतां जेवुं एकसरखुं थई जाय छे तेवो ते विमाननो अंदरनो भूभाग सम बनावेलो हतो ते भूभागमां, काळा, नीला, राता, पीळा अने धोळा एवा अनेक मणिओ जडेला हता. तेमांना केटलाक आवर्तवाळा, प्रत्यावर्तवाळा, श्रेणि अने प्रश्रेणिवाळा हता, केटलाक वळी स्वस्तिक जेवा, पुष्यमाणव जेवा, शरावसंपुट जेवा हता ते मणिओमां बीजा केटलाक माछलानां इंडां जेवा अने मगरनां इंडां जेवा जणाता हता. केटलाक मणिओमां फूलवेल, कमळपत्र, समुद्रतरंग, वासंतीलता, कमळवेल वगेरे जेवां घणां बीजां सुदर चित्रो कोरेलां होय एम देखातुं हतुं ते भूभागमां जडेला बधा मणिओ भारे चकचकाटवाळा, अनेक किरणोवाळा, उत्कट प्रभावाळा अने तेजना अंबारथी भरेला हता.

[३४] ए मणिओमां जे काळा मणि हता ते मेघ जेवा, आंजण जेवा, दीवानी मेश जेवा, काजळ जेवा, पाडाना शिंगडा जेवा, पाडाना शिंगडामांथी बनावेली गोळी जेवा, भमरा जेवा, भमरानी हार जेवा, भमरानी पांखना सारभाग जेवा, जांबूडा जेवा, कागडाना नाना बच्चा जेवा, कोयल जेवा, हाथीना बच्चा जेवा, काळा साप जेवा, काळा बकुल जेवा, शरद ऋतुना वादळा जेवा, काळा अशोक जेवा, काळी कणेर जेवा अने काळा बपोरीया जेवा काळा हता.

प्र०—शुं ते काळा मणिओ, ए आपेली उपमाओ जेवा ज खरेखर काळा हता ?

उ०—ए अर्थ समर्थ नथी अर्थात् हे आयुष्मन् श्रमण ! ए तो मात्र उपमाओ छे; पण ते काळा मणिओ तो ते बधी उपमाओ

करतां क्यांय वधारे इष्टतर, सरस, मनोहर, अने मनोज्ञ काळा वर्णवाळा हता

[३५] ए मणिओमां जे नीला मणि हता ते भृङ्ग जेवा, भृङ्गनी पांख जेवा, पोपट जेवा, पोपटनी पांख जेवां, चाष पक्षी जेवा, चाषना पींछा जेवा, गळी जेवा, गळीना अंदरना भाग जेवा, गळीनी गोळी जेवा, सावा जेवा. [७०]उच्चंतक दंतराग जेवा, वनराइ जेवा, बळदेवे पहेरेला लीला कपडा जेवा, मोरनी डोक जेवा, अळसीना फूल जेवा, बाणना फूल जेवा, अंजनकेशीना फूल जेवा, लीला कमळ जेवा, लीला अशोक जेवा, लीला बपोरीया जेवा, अने लीली कणेर जेवा लीला हता.

प्र०—शुं ते मणिओ, ए आपेली उपमाओ जेवा ज खरेखर लीला हता?

उ०—ए अर्थ समर्थ नथी अर्थात् हे आयुष्मन् श्रमण! ए तो मात्र उपमाओ छे, पण ते लीला मणिओ तो ते बधी उपमाओ करतां क्यांय वधारे इष्टतर, सरस, मनोहर अने मनोज्ञ लीला वर्णवाळा हता.

[३६] ए मणिओमां जे राता मणि हता ते घेटाना लोही जेवा, ससलाना लोही जेवा, माणसना लोही जेवा, वराहना लोही जेवा, पाडाना लोही जेवा, नाना इंद्रगोप जेवा, उगता सूर्य जेवा, संध्याना लाल रंग जेवा, चणोठीना अडधा-लाल भाग जेवा, जासूदना फूल जेवा, केसुडाना फूल जेवा, पारिजातकना फूल जेवा, उंचा हिंगळोक जेवा, परवाळा जेवा, परवाळाना अंकुर जेवा, लोहिताक्ष-मणि जेवा, लाखना रस जेवा, कृमिना रंगथी रंगेला कामळा जेवा, चीणाना लोटना ढगला जेवा, राता कमळ जेवा, राता अशोक जेवा, राती कणेर जेवा अने राता बपोरीया जेवा राता हता

प्र०—शुं ते राता मणिओ, ए आपेली उपमाओ जेवा ज खरेखर राता हता?

उ०—ए अर्थ समर्थ नथी अर्थात् हे आयुष्मन् श्रमण! ए तो मात्र उपमाओ छे, पण ने राता मणिओ तो ते बधी उपमाओ

७० आनो अर्थ समजातो नथी, पण गळी जेवा रंगनो ते कोइ पदार्थ होवो जोइए एम एना प्रसंग उपरथी जणाय छे. आजकाल पण घणा लोको दांतने काळा रंगे छे, संभव छे के, ए काळा रग माटे आ 'उच्चंतक' शब्द वपरायो होय?

करतां क्यांय वधारे इष्टतर, सरस, मनोहर अने मनोज्ञ राता वर्णवाळा हता

[३७] ए मणिओमां जे पीळा मणि हता ते सोनाचंपा जेवा, सोनाचंपानी छाल जेवा, सोनाचंपाना अंदरना भाग जेवा, हळदर जेवा, हळदरनी अंदरना भाग जेवा, हळदरनी गोळी जेवा, हरताळ जेवा, हरताळनी अंदरना भाग जेवा, हरताळनी गोळी जेवा, चिकुर जेवा, चिकुरना रंग जेवा, उत्तम सोना जेवा, उत्तम सोनानी रेखा जेवा, वासुदेवे पहेरेला पीळा कपडा जेवा, अल्लकीना फूल जेवा, चंपाना फूल जेवा, कोळाना फूल जेवा, आवळना फूल जेवा, घींसोडीना फूल जेवा, सोनेरी जूईना फूल जेवा, सुहिरण्यना फूल जेवा, कोरंटक फूलनी उत्तम माळा जेवा, बीयाना फूल जेवा, पीळा अशोक जेवा, पीळी कणेर जेवा, अने पीळा बपोरीया जेवा पीळा हता

प्र०—शुं ते पीळा मणिओ, ए आपेली उपमाओ जेवा ज खरेखर पीळा हता ?

उ०—ए अर्थ समर्थ नथी अर्थात् हे आयुष्मन् श्रमण ! ए तो मात्र उपमाओ छे पण ते पीळा मणिओ तो ते वधी उपमाओ करतां क्यांय वधारे इष्टतर, सरस, मनोहर अने मनोज्ञ पीळा वर्णवाळा हता.

[३८] ए मणिओमां जे धोळा मणि हता ते अंक रत्न जेवा, शंख जेवा, चंद्र जेवा, कुंदना फूल जेवा, शुद्ध दांत जेवा, कमळ उपरना पाणीना मोतीया जेवा, शुद्ध पाणीना बिंदु जेवा, दहीं जेवा, कपूर जेवा, गायना दूध जेवा, हंसोनी श्रेणि जेवा, क्रौंचोनी श्रेणि जेवा, हारोनी श्रेणि जेवा, चंद्रोनी श्रेणि जेवा, शरद्ऋतुना मेघ जेवा, धमेला अने चोक्खा करेला रूपाना पतरा जेवा, चोखाना लोटना ढगला जेवा, कुंदना फूलना ढगला जेवा, कुमुदना ढगला जेवा, वालनी सूकी शिंगो जेवा, मोरपींछनी वच्चे आवेला चंद्रक जेवा, बिसतंतु जेवा, मृणालिका जेवा, हाथीदांत जेवा, लवंगना फूल जेवा, पुंडरीक कमळ जेवा, धोळा अशोक जेवा, धोळी कणेर जेवा अने धोळा बपोरीया जेवा ऊजळा हता.

प्र०—शुं ते धोळा मणिओ, ए आपेली उपमाओ जेवा ज खरेखर ऊजळा हता ?

उ०—ए अर्थ समर्थ नथी अर्थात् हे श्रमणायुष्मन् ! ए तो मात्र उपमाओ छे, पण ते धोळा मणिओ तो ते बधी उपमाओ करतां क्यांय वधारे इष्टतर, सरस, मनोहर अने मनोज्ञ धोळा वर्णवाळा हता.

[३९] ए दिव्य यान-विमाननी अंदरना भूभागमां अनेक रंगवाळा चकचकित जे मणिओ जडेला हता ते मात्र देखावमां सुंदर हता एटलुं ज नहि पण सुगधी[71] पण हता ए मणिओमांथी पवी सरस सुगंध फेलाती के जाणे ए भूभागमां कोष्ठोनां, तगरनां, पलानां, सुगंधी चूआनां, चंपानां, दमणानां, कुंकुमनां, चंदननां, सुगंधी वाळानां, मरवानां, जाइनां, जूइनां, मल्लिकानां, स्नानमल्लिकानां, केतकीनां, पाटलनां, नवमालिकानां, अगरनां, लवंगनां, कपूरनां, वासकपूरनां पुटो-पडिआओ—अनुकूळ हवामां चारे बाजु गंध फेलाय ए रीते खुल्लां पडेलां न होय, अथवा त्यां ए सुगंधी द्रव्योमांनां खांडवा जेवां द्रव्यो खंडातां न होय, वेरातां न होय, एक वासणमांथी काढी बीजा वासणमां भरातां न होय, ए जातनी उदार, मनोज्ञ, मनहर अने घ्राणने तथा मनने शांति आपनारी सुगंध ए भूभागमांथी चारे बाजु महेक्या करे छे-मघमघ्या करे छे.

प्र०—शुं ते सुगंधी मणिओ, ए आपेली उपमाओ जेवा ज खरेखर सुगंधी हता ?

उ०—ए अर्थ समर्थ नथी अर्थात् हे आयुष्मन् श्रमण ! ए तो मात्र उपमाओ छे; पण ते सुगंधी मणिओ तो ते बधी उपमाओ करतां क्यांय वधारे इष्टतर, सरस, मनोहर अने मनोज्ञ सुगंधवाळा हता.

---

७१ हीरा पन्ना मोती के मणि वगेरे झवेरातना ऊचामां ऊचा पदार्थो सौ कोइने प्रत्यक्ष छे, तेमां प्रकाश तेज चळकाट के अमुक खास प्रकारनो रंग वगेरे तो देखाय छे, परंतु तेमाना कोईमां कोई प्रकारनो उत्कट गंध होवानुं जाण्युं नथी. त्यारे देवसृष्टिना ए मणिओ वधुमां वधु सुगधी होय छे ए एक नवुं जाणवा जेवुं खरु. पृथ्वी गंधवती छे ए खरी वात, पण मणिओनो जेवो गध अहीं वर्णवेलो छे तेवो उत्कटतम गध, मानवीसृष्टिना कोइ पण स्थळमां नीपजेला के नीपजता मणिओमां जणातो नथी, ए ध्यानमां राखवा जेवुं छे.

४१ विमानमां रचेला प्रेक्षागृह-मंडपनुं वर्णन

[४०] ते मणिओनो रंग अने गंध जेवो उत्तम हतो तेवो ज तेमनो स्पर्श पण उत्तमोत्तम हतो. केम जाणे त्यां जमीन उपर कोमळ चामडुं ज न पाथर्युं होय, रू ज न भरेलुं होय, माखण ज न लगाडेलुं होय, हंसगर्भना रूथी भरेली एवी तळाइओ ज न पाथरेली होय, सरसडांनां फूलोना जाणे ढगला ज न कर्या होय अने कोमळ कमळोनां पांदडां न वेरेलां होय, एवो ते मणिओनो कोमळ कोमळतर[७२] स्पर्श हतो.

प्र०—शुं कोमळ स्पर्शवाळा ते मणिओ ए आपेली उपमाओ जेवा ज खरेखर कोमळ हता ?

उ०—ए अर्थ समर्थ नथी अर्थात् हे आयुष्मन् श्रमण ! ए तो मात्र उपमाओ छे; पण ते कोमळ मणिओ तो ते बधी उपमाओ करतां क्यांय वधारे इष्टतर, सरस, मनोहर अने मनोज्ञ कोमळ स्पर्शवाळा हता.

[४१] त्यारपछी ते आभियोगिक देवोए पूर्ववर्णित दिव्य यान–विमाननी अंदर बराबर वच्चेना भागमां एक मोटा प्रेक्षागृहमंडपनी रचना करी ए देवोए ए मंडपने अनेक स्तंभो उपर ऊभो कर्यो, उंची वेदिकाओ, तोरणो अने सुंदर पूतळीओथी सुशोभित बनाव्यो, एमां रमणीय घाटवाळां विमळ अने प्रशस्त वैडूर्यरत्नो जड्यां, ते मंडपना जुदा जुदा भागोमां बीजा पण अनेक प्रकारना मणिओ जडी तेने विशेष चळकतो बनाव्यो, तेमां पूर्वोक्त बळद, घोडो, हाथी, मगर, नर, वनवेल वगेरेनां चित्रो कोर्यां वा चीतर्यां, सुवर्णमय अने रत्नमय अनेक स्तूपो ऊभा कर्या, अनेक प्रकारनी पंचरंगी घंटडीओ तथा पताकाओथी तेना शिखरने शणगार्युं, ए मंडप पटलो बधो चकचकतो हतो के जोनारने ते जाणे हलतो होय तेवो चपल जणातो, एमांथी किरणोनी धारा छूटती होय एम लागतुं, तेना–मंडपना–बधा भागो लींपीगुंपीने चकचकता अने सुंवाळा करेला हता, मडपमां बहार अने अंदर रक्तचंदन वगेरे अनेक सुगंधी द्रव्योना थापा मारेला हता, ज्यां त्यां चंदनना कळशो गोठवेला हता, बारणाना टोडलाओ चंदनना कळशोथी शोभायमान एवां तोर-

७२ मणिओ जेवो पाषाणमय पदार्थ सुवाळामा सुंवाळो–अतिशय लीसो होइ शके खरो, पण ते, रू माखण के शिरीष जेवो नरम होवानुं कहेवामां ए दिव्य मणिओनी अतिशय सुवाळप बताववा मूळकारे उपरनी कंडिकामा ए वर्णन आपेलु हशे.

णोथी सुशोभित करेला हता, ज्यां त्यां लांबी लांबी सुगंधी माळाओ लटकावेली हती, पंचरंगी पुष्पोना तो ढगे ढग भरेला हता, अगर वगेरेना पूर्वोक्त सुगन्धी धूपोथी ए मण्डप मघमघी रह्यो हतो. जाणे के सुगन्धनो कोइ खास ओरडो न होय? मण्डपमां चारे तरफ वाजांओ वागी रह्यां हतां अने अप्सराओनां टोळे टोळां आमथी तेम फरतां जणातां हतां.

ए आभियोगिक देवोए ए प्रेक्षागृहमण्डपने हमणां कह्यो एवो सुन्दर, प्रसन्नतावर्धक, दर्शनीय-देखावडो अने अनुपम बनाव्यो हतो. ते मण्डपनी अन्दरनी भोंय यान-विमाननी भोंय जेवी तद्दन लीसी-सरखी बनावी हती अने तेमां सुगन्धी, सरस स्पर्शवाळा अने रंगबेरंगी मणिओ पण तेवा ज जडेला हता, जेमां पद्मलताओ भरेली छे एवो एक मोटो सारामां सारो चन्द्रवो ते मण्डपमां बांधेलो हतो.

४२ प्रेक्षागृहमंडपमां रचेला अखाडानुं अने अखाडा उपर आवेलां मणिपीठिका तथा सिंहासननुं वर्णन

[४२] ते मण्डपना ए लीसा भूभागनी वच्चोवच्च ते देवोए एक मोटो वज्रमय अखाडो बनाव्यो, ए अखाडानी वच्चोवच्च, आठ योजन लांबी पहोळी अने चार योजन जाडी एवी एक मोटी स्वच्छ, सुंवाळी, मणिमय मणिपीठिका बनावी ते मणिपीठिका उपर एक मोटुं सिंहासन स्थापन कर्युं. सिंहासन उपरना चाकळा (?) सुवर्णमय तार झीक अने सताराथी झगझगता हता; सिंहो रत्नना, पाया सोनाना, पायाना कांगरा अनेक प्रकारना मणिओना, गात्रो जांबूनदनां, सांधाओ वज्रना अने सिंहासननुं वाण अनेक मणिओथी भरेलुं हतुं. वळी ते सिंहासनमां घोडो, हाथी, मगर वगेरे पूर्वोक्त अनेक चित्रो कोरेलां हतां सिंहासन आगळनुं पादपीठ मणिमय अने रत्नमय हतुं, ते पादपीठ उपरनुं पग राखवानुं मसूरियुं सुंवाळा अस्तरथी ढांकेलुं हतुं अने ते मसूरियानी लटकती झालर कोमळ केसरतंतु जेवी जणाती हती. सिंहासन उपर रज न पडे माटे तेने सारा शीवेला रजस्त्राणथी ढांकेलुं हतुं, चोक्खा कपासमांथी बनेलुं चोक्खुं सूतराउ कपडुं ते रजस्त्राण उपर गोठवेलुं हतुं अने ते आखा सिंहासन उपर एक रातुं वस्त्र ढांकेलुं हतुं, ए रीते ए सिंहासनने रम्य, सुंवाळुं अने सर्व प्रकारे प्रासादिक बनाववामां आव्युं हतुं.

॥५१॥

[४३] ए सुन्दर सिंहासनना उपरना भागमां शङ्ख, कुन्द, जलबिन्दु अने समुद्रना फीण जेवुं धोळुं, तेमां भरेलां रत्नोथी झगमगतुं, झीणुं अने सुन्दर एक मोटुं विजयदूष्य बांधेलुं हतुं. ए विजयदूष्यनी बरोबर वच्चोवच्च एक मोटो वज्रमय अंकुश-वांको सळीयो

टंगेलो हतो. ए सळीयामां घडा जेवडुं एक मोटुं मुक्तादाम-मोतीनुं झुमखुं-लटकावेलुं हतुं अने ते मोतीना झुमखांनी चारे बाजु अध-घडा जेवडां बीजां चार मोतीदाम परोवेलां हतां. आ रीते ए सिंहासनना उपरना भागमां बांधेला विजयदूष्यमां एक मोटुं मोतीनुं झुम्मर शोभतु हतुं. ए झुम्मरनां मोतीओ सोनानी पांदडीवाळां बीजा अनेक लम्बूसगोथी शोभतां हतां तेमज अनेकविध मणिओ, जातजातना हारो, अधहारो अने रत्नोथी चमकतां हतां. हवे ज्यारे पूर्वनो, पश्चिमनो, दक्षिणनो के उत्तरनो वायु चालतो त्यारे ए मोतीओ धीरे धीरे हलतां हतां. हलतां हलतां तेओ ज्यारे एक बीजा साथे अफळातां त्यारे तेमांथी कानने मधुर लागे तेवु अने मनने परम शांति पमाडे तेवु उदार-मनोहर गुंजन नीकळतुं हतुं. ए सुन्दर दिव्य गुञ्जनथी सिंहासननी चारे बाजु गुंजायमान थइ रहेती हती

43 सिंहासनना उपरना भागमां लटकता घडा जेवडा मोतीना झुमखामांथी नीकळता गुंजननुं वर्णन

[४४] ते सिंहासननी आसपास वायव्य खूणामां, उत्तरमां अने ईशान खूणामां सूर्याभदेवना चार हजार सामानिक देवोने बेसवा माटे एक एक हजार-कुल चार हजार बीजां सुन्दर भद्रासनो ए आभियोगिक देवोए मांडो दीधां. सूर्याभदेवनी चार पट्टराणीओ अने तेना परिवारने बेसवा माटे पूर्वना भागमां चार हजार भद्रासनो गोठवाई गयां सूर्याभदेवनी अन्तरंग सभाना आठ हजार सभ्योने बेसवा माटे अग्निखूणामां आठ हजार भद्रासनो नंखाई गयां. एज प्रमाणे वचली सभाना दस हजार सभ्योने बेसवा सारु दस हजार भद्रासनो दक्षिणना भागमां, बाह्य सभाना बार हजार सभ्योने माटे बार हजार भद्रासनो नैऋत्य खूणामां अने सात सेनापतिओने सारु सात भद्रासनो पश्चिमना भागमां हारबन्ध नाखवामां आव्यां.

४४ भद्रासनोनी रचना

आ उपरान्त सूर्याभदेवनी चोकी करनारा अङ्गरक्षक देवो माटे ए सिंहासननी चारे बाजु अर्थात् पूर्वमां चार हजार, दक्षिणमां चार हजार, पश्चिममां चार हजार अने उत्तरमां चार हजार एम कुल बीजां सोळ हजार भद्रासनो गोठववामां आव्यां.

[४५] हवे आ रीते ते यान-विमान पूर्णपणे तैयार थई गयुं. जेम ताजो उगेलो हेमन्त ऋतुनो बाळसूर्य, अन्धारी राते सळगावेला खेरना अङ्गारा, जपाकुसुमनुं वन, केसुडांनुं वन वा पारिजातकनुं वन, रातुं चोळ जेवुं लागे तेम ते दिव्य यान-विमान रातुं चोळ चकचकतुं हतुं.

प्र०—शुं ते यान-विमान, एने वाळसूर्य वगेरेनी आपेली उपमाओ जेवुं ज खरेखर लालचोळ हतुं ?

उ०—ए अर्थ समर्थ नथी अर्थात् हे आयुष्मन् श्रमण ! ए तो मात्र उपमाओ छे, पण ते यान-विमान तो ए बधी उपमाओ करतां क्यांय वधारे इष्टतर, सरस, मनोहर अने मनोज्ञ लाल वर्णवाळुं हतुं. तेनो गन्ध अने स्पर्श पण पूर्वोक्त मणिओनी पेठे घणो सुगन्धी अने अतिशय सुंवाळो हतो.

ए आभियोगिक देवोए पोताना स्वामी सूर्याभदेवनी आज्ञा प्रमाणे पूर्वे वर्णवेलुं एवुं सुन्दर दिव्य यान-विमान सजधज कर्युं अने एनी पूर्णाहुतिना समाचार तेमणे विनयपूर्वक सूर्याभदेवने जणावी तेनी आज्ञा तेने पाछी सोंपी.

४६-४८ यानविमान उपर चडेला सपरिवार सूर्याभदेवनी भगवान पासे जती स्वारीनुं सविस्तर वर्णन

[४६] पोतानी धारणा प्रमाणे ए दिव्य यान विमाननी तैयारीना समाचार जाणी सूर्याभदेवने आनन्द थयो. हवे तेणे पोताना रूपने जिनेन्द्र पासे जवा जेवुं योग्य कर्युं मोटा परिवारवाळी पोतानी चार पट्टराणी अने गान्धर्वोनुं तथा नाटककारो-नाटकीयाओनुं मोटुं लश्कर ए बधा साथे ए सूर्याभदेवे ते दिव्य यान-विमाननी प्रदक्षिणा करी अने पछी पूर्व दिशाना सोपानद्वारा ते, ए यान-विमान उपर चडी तेमां गोठवेला मुख्य सिंहासन उपर पूर्वाभिमुख थइने बेठो. पछी तेना चार हजार सामानिक देवो, ए यानविमाननी प्रदक्षिणा करी उत्तर दिशाना सोपानद्वारा एना उपर चडया अने पूर्वे गोठवेलां पोतपोतानां आसनो उपर बेठा. तथा बीजा देवो अने देवीओ पण यान-विमाननी प्रदक्षिणापूर्वक दक्षिण दिशाना सोपानद्वारा विमान उपर चडी पोतपोतानां जुदां जुदां आसनो उपर गोठवाई गयां

[४७] ए यानविमाननी सवारीमां सौथी प्रथम आगळ अष्टमंगल-आठ मगळ-अनुक्रमे गोठवाएलां हतां. तेमां पहेलो स्वस्तिक, बीजो श्रीवत्स, त्रीजो नन्दावर्त, चोथुं वर्धमानक, पांचमुं भद्रासन, छट्ठो कळश, सातमुं मत्स्ययुगल अने आठमुं दर्पण-एवी गोठवणी हती त्यार पछी पूर्ण कलश, भृङ्गार, दिव्य छत्र अने चामरो चालतां हतां. आ साथे गगनतलनो स्पर्श करती, अतिशय सुन्दर अने वायुथी फरफरती एक मोटी ऊंची विजयवैजयंती नामनी पताका चालती हती. त्यारपछी वैडूर्यना चकचकता दांडावाळुं, माळाओथी

रायपसेणइय सुत्तनो सार

॥५४॥

सुशोभित, चंद्र जेवुं उज्ज्वल-धोळुं ऊंचुं छत्र चालतुं हतुं. पछी जेना उपर पावडीओनी सुंदर जोडी अने पादपीठ मूकेलां छे, एवुं मणि अने रत्ननी कारीगरीथी आश्चर्य पमाडनारुं उत्तम सिंहासन अनेक दास देवोना खभा उपर चालतुं हतुं त्यारबाद वज्रमांथी बनावेलो, चकचकतो, घसीने सुंवाळो करेलो, गोळ आकारवाळो, पचरंगी नानी नानी हजारो धजाओथी शोभतो, छत्राकारे गोठवाएली विजयवैजयंती पताकाथी युक्त, अतिशय ऊंचो-हजार योजन ऊंचो माटे ज आकाशने अडकतो मोटामां मोटो इन्द्रध्वज चालतो हतो. पनी पछवाडे सुंदर वेषभूषावाळा, सजधज थएला, सर्व प्रकारना अलंकारोथी विशेष देखावडा लागता पांच सेनाधिपतिओ तेमना मोटा सुभटसमुदाय साथे वेठेला हता, एमनी पाछळ पोतपोतानां टोळां साथे, पोतपोताना नेजा (?) साथे, पोतपोतानी विशिष्ट वेषभूषा साथे ए आभियोगिक देवो अने तेमनी देवीओ गोठवाएली हती. त्यारबाद-छेक छेल्ले-ते सूर्याभविमानमां रहेनारां बीजा देवो अने देवीओ पोतपोतानी सर्व प्रकारनी ऋद्धि सिद्धि, द्युति, बळ, वेषभूषा अने परिवार साथे ए यान-विमाननी सवारीमां जोडाएलां हतां: आ रीते विमानना स्वामी सूर्याभदेवनी आगळ पाछळ अने बन्ने बाजुए अनेक देव देवीओ गोठवाएलां हतां अने ए यानविमान ए बधांने उपाडी वेगबंध गाजतुं गति करतुं हतुं.

[४८] ए रीते सजधज थएलो सूर्याभदेव, पोताना ए दिव्य ठाठमाठने बतावतो बतावतो सौधर्मकल्पनी वच्चे थइने नीकळ्यो, अने सौधर्मकल्पथी उत्तरमां आवेला नीचे आववाना-निर्याणमार्ग तरफ तेणे पोताना ए यान-विमानने हंकार्युं. ते, ए निर्याणमार्गने पहोंचतां लाख योजननी वेगवाळी गतिथी झपाटाबंध भारतवर्ष तरफ आववा लाग्यो, आ तरफ आवतां आवतां तेने असंख्य द्वीपो अने समुद्रो उल्लंघवा पड्या ए रीते वेगबंध गति करतो ए सूर्याभदेव नंदीश्वर द्वीप सुधी आवी पहोंच्यो अने त्यां अग्निकोणमां आवेला रतिकर पर्वत पासे आवी लाग्यो. आ रतिकर पर्वत पासे आवीने ए सूर्याभदेवे पूर्वे वर्णवेली पोतानी देवमाया संकेली लीधी अने जंबूद्वीपना भारतवर्षमां पहोंचवा जेवी साधारण व्यवस्था करी लीधी हवे ते, रतिकर पर्वतथी जंबूद्वीप भणी आववाना मार्गे पोताना यान-विमानने हंकारवा लाग्यो अने तुरतमां ज भारतवर्षमां पहोंच्यो. त्यां पहोंची तेणे आमलकप्पानो रस्तो लीधो अने झपा-

भगवाननी साथे सूर्याभदेवनुं संभाषण

टामां ज आमलकप्पाना अम्बसालवणचैत्यमां ज्यां श्रमण भगवान महावीर ऊतर्या छे त्यां आवी लाग्यो. त्यां आवतां ज तेणे ए दिव्य यान-विमान साथे श्रमण भगवान महावीरनी त्रण प्रदक्षिणा करी अने भगवानथी उत्तर पूर्वना भागमां-ईशान खूणामां तेणे ए यान-विमानने धरतीथी चार आंगळ अद्धर राखी ऊभुं राख्युं.

[४९] मोटा परिवारवाळी पोतानी चार पट्टराणीओ, गांधर्वोनुं अने नाटकीयाओनुं टोळुं ए वधा साथे ए सूर्याभदेव ए यान-विमान उपरथी ऊतरी नीचे आव्यो त्यारबाद सूर्याभदेवना चार हजार सामानिक देवो अने ए यान विमानमां आवेला बीजा वधा देवो अने देवीओ क्रमशः नीचे आव्यां एवा मोटा परिवारथी वींटाएलो सूर्याभदेव, पोतानी सर्व प्रकारनी दिव्य ऋद्धि साथे, देववाद्योना मधुर घोष साथे चालतो चालतो श्रमण भगवान महावीर तरफ आव्यो, त्रण प्रदक्षिणा करी, वांदी, नमी तेमने विनय-नम्र रीते कहेवा लाग्योः

"हे भगवन्! हुं सूर्याभदेव मारा सकल परिवार समेत, आप देवानुप्रियने वंदन करुं छु, नमन करुं छुं अने आपनी पर्युपासना करुं छुं."

[५०] "हे सूर्याभ!" एम कही श्रमण भगवान महावीरे सूर्याभदेवने आ प्रमाणे कहुंः "हे सूर्याभ! ए पुरातन छे, हे सूर्याभ! ए जीत छे, हे सूर्याभ! ए कृत्य छे, हे सूर्याभ! ए करणीय छे, हे सूर्याभ! ए आचराएलुं छे अने हे सूर्याभ! ए संमत थएलुं छे के 'भवनपतिना, वानव्यतरना, ज्योतिषिकना अने वैमानिक वर्गना देवो अरहंत भगवन्तोने वांदे छे, नमे छे, अने पछी पोतपोतानां नाम गोत्रो कहे छे,' तो हे सूर्याभदेव! तुं जे करे छे ते पुरातन छे अने संमत थएलुं छे."

श्रमण भगवान महावीरनुं कथन सांभळी सूर्याभदेव बहु हर्षित थयो, प्रफुल्ल थयो अने घणो ज संतुष्ट थयो, पछी तेमने वांदी नमी तेमनाथी वहु नजीक नहि, तेम वहु दूर नहि, एवी रीते बेसी ते सूर्याभदेव तेमनी शुश्रूषा करतो सामो रही विनयपूर्वक हाथ जोडी श्रमण भगवान महावीरनी पर्युपासना करवा लाग्यो.

[५१] ते वखते श्रमण भगवान महावीरे पोताना दर्शनार्थे आवेला सूर्याभदेवने, आमलकप्पाना राजा-राणीने तथा आमलकप्पामांथी आवेली मोटी जनसभाने धर्मदेशना संभळावी. देशना सांभळी जनता तो पोतपोताने ठेकाणे चाली गई

५२ सूर्याभे भगवंतने पूछ्युं

[५२] देशना सांभळीने प्रसाद पामेला अने आल्हादित हृदयवाळा सूर्याभदेवे ऊभा थईने प्रणामपूर्वक श्रमण भगवान महावीरने आ प्रमाणे पूछ्युंः

प्र०—हे भगवन्! शुं सूर्याभदेव भवसिद्धिक-भव्य छे के अभवसिद्धिक-अभव्य छे? सम्यग्दृष्टिवाळो छे के मिथ्यादृष्टिवाळो छे? संसारमां परिमितपणे भमनारो छे के अनंतकाळ सुधी भमनारो छे? बोधिनी प्राप्ति थवी तेने सारु सुलभ छे के दुर्लभ छे? शुं ते आराधक छे के विराधक छे? ते चरम शरीरी छे के अचरम शरीरी छे?

५३ भगवंत नो उत्तर

[५३] 'हे सूर्याभ!' एम कहीने श्रमण भगवान महावीरे तेने नीचे प्रमाणे उत्तर आप्यो

उ०—हे सूर्याभ! तुं भव्य छो, सम्यग्दृष्टिवाळो छो, संसारमां परिमितपणे भमनारो छो, तने बोधिनी प्राप्ति थवी सुलभ छे, तुं आराधक छो अने तु चरमशरीरी छो.

५४ भगवंत पासे नाच करी बतावानी सूर्याभनी वीनंती

[५४] भगवाने आपेलो उत्तर सांभळीने सूर्याभदेवनुं चित्त आनदित थयुं अने परम सौमनस्य युक्त थयुं,भगवाननो उत्तर सांभळ्या पछी ए सूर्याभदेवे भगवानने वांदी नमी आ प्रमाणे विनंती करीः "हे भगवन्! तमे बधुं जाणो छो अने जुओ छो, ज्यां ज्यां जे छे ते बधु तमे जाणो छो अने जुओ छो, सर्व काळना बनावोने जाणो छो अने जुओ छो, सर्व भावोने तमे जाणो छो अने जुओ छो; मारी दिव्य ऋद्धिसिद्धिने, में प्राप्त करेली दिव्य देवद्युतिने अने दिव्य देवानुभावने पण पहेलां अने पछी तमे जाणो छो अने जुओ छो, तो हे भगवन्! आप देवानुप्रिय तरफनी मारी भक्तिने लीधे हुं एवी इच्छा करु छुं के मारी दिव्य ऋद्धिसिद्धि, दिव्य देवद्युति अने दिव्य देवप्रभाव तथा बत्रीश प्रकारनी दिव्य नाट्यकळा आ गौतम वगेरे श्रमणनिर्ग्रंथोने देखाडुं."

५५– सूर्याभनी वीनंतीनो भगवाने करेलो अनादर

[५५] श्रमण भगवान महावीरे सूर्याभदेवनी उपर्युक्त विनंतीने आदर[७३] न आप्यो, अनुमति न आपी अने ते तरफ मौन राख्युं.

[५६] त्यारपछी बीजीवार, त्रीजीवार पण सूर्याभदेवे एवी ज विनंती करी अने तेना उत्तरमां भगवान महावीरे तेनो आदर न करतां मात्र मौन ज धरी राख्युं. छेवटे ते सूर्याभदेव, श्रमण भगवान महावीरने त्रण प्रदक्षिणा दई, वांदी नमी उत्तर-पूर्वनी दिशा तरफ गयो. ईशान खूणामां जई तेणे वैक्रियसमुद्घात कर्यो, ते द्वारा तेणे संख्येय योजन सुधीना लांबा दंडने वहार काढ्यो, जाडां मोटां पुद्गलो तजी दीधां अने जोइए तेवां यथासूक्ष्म पुद्गलोनो संचय कर्यो, वळी, बीजीवार वैक्रियसमुद्घात करी तेणे नरघाना उपरना

७३ आत्मज्ञानी भगवाननी स्थितप्रज्ञ दशा जोतां तेओ सूर्याभदेवना संकल्पने आदर न आपे ते ज स्वाभाविक छे पण आ तरफ सूर्याभदेवनी मनोभूमिका जोतां ते, तेमनी पासे नाटक करी देखाडवा सिवाय बीजुं करी पण शु शके ? भक्तोनी बे कोटि छे. एक तो मनसा वचसा कायेन पोताना भजनीयने अनुसरनारा वा अनुसरवा माटे अतुल प्रयत्नशील रहेनारा अने बीजा तेमना मात्र प्रशंसको. प्रथम कोटिना भक्तो आवा बाह्य उपचारमां पडता नथी, एओ तो भजनीयना शुद्ध अनुसरणने ज पोतानी भक्ति समजे छे; त्यारे जेओ भजनीयने अनुसरवा जेटला प्रबळ पुरुषार्थशाळी नथी होता तेओ तेमना प्रशंसको रहीने तोष माने छे अने आवा प्रशंसको ज बाह्य उपचार सिवाय बीजी भक्ति सुधी पहोंची शकता नथी. ए प्रशंसको, पोताना भजनीयनो बाह्य उपचार सामे सख्त अणगमो जाणवा छतांय तेमनी पोतानी जातनी प्रसन्नता माटे तेओ बाह्य उपचार सिवाय बीजुं कशु करी शके तेवा नथी होता. आ परिस्थितिमांथी औपचारिक भक्तिनो आविर्भाव थयो लागे छे. आमांथी विवेकनुं तत्त्व नीकळी जाय तो ते औपचारिक भक्ति राष्ट्रीय, सामाजिक अने वैयक्तिक हानिने नीपजावे छे. वळी बीजु– "यद् यदाचरति शिष्टः तत् तदेवेतरो जनः" ए उक्तिनुं तत्त्व पण भगवानना अणगमामां रहेलुं छे ए ध्यानमा राखवानुं छे. टीकाकार, सूर्याभदेवना ए नाट्यविधिने स्वाध्याय वगेरे कर्तव्यनो विघातक बतावे छे ("गौतमादीनां च नाट्यविधेः स्वाध्यायादिविघातकारित्वात्"–विवरण पृ० १२१ प०–१०).

 भक्तिपूर्वक नाच करी बतावबानी सूर्याभनी तैयारी

भाग जेवो सर्वे प्रकारे सर्वे बाजुथी एकसरखो एवो एक भूभाग सर्ज्यो, तेमां रूप, रस, गंध अने स्पर्शथी सुशोभित पूर्वे वर्णवेला एवा अनेक मणिओ जडी दीधा, सर्वे बाजुथी एकसरखा भूमंडळमां वच्चोवच्च तेणे एक प्रेक्षागृह रच्युं-नाटकशाळा खडी करी. ए नाटकशाळा, तेमां बांधेलो उल्लोच-चंदरवो, अखाडो अने मणिनी पेढली ए बधानुं वर्णन आगळ कहेवाइ गयुं छे, तथा मणिनी ए पेढली उपर सिंहासन, छत्र वगेरे जे आगळ वर्णवाइ गयुं छे ते बधुं बराबर गोठवी दीधुं.

॥५८॥ [५७] त्यारपछी ए सूर्याभदेव श्रमण भगवान महावीरना देखतां तेमने प्रणाम करे छे अने 'भगवान मने अनुज्ञा आपो' एम कही पोते बांधेली नाटकशाळामां तेमनी-तीर्थंकरनी-सामे उत्तम सिंहासनमां बेसे छे.

त्यारबाद बेसतां वेंत तेणे अनेक प्रकारनां मणिमय कनकमय रत्नमय विमल अने चकचकतां कडां पोंची बेरखां वगेरे आभूषणोथी दीपतो ऊजळो पुष्ट अने लांबो एवो पोतानो जमणो हाथ पसार्यो.

एना ए जमणा हाथमांथी सरखां वय लावण्य रूप अने यौवनवंता, सरखां नाटकीय उपकरणो अने वस्त्राभूषणोथी सजेला, खभानी बन्ने बाजुमां उत्तरीय वस्त्रथी युक्त, डोकमां कोटियुं अने शरीरे कंचुक पहेरेला, टीलां अने छोगां लगावेला, चित्र विचित्र पट्टावाळां अने फुदडी फरतां जेना छेडा फेण जेवा उंचा थाय एवी छेडे-कोरे-मूकेली झालरवाळां रंगबेरंगी नाटकीय परिधान पहेरेला, छाती अने कंठमां पडेला एकावळ हारोथी शोभायमान अने नाच करवानी पूरी तैयारीवाळा एकसो ने आठ देवकुमारो नीकळ्या.

[५८] एज प्रमाणे सूर्याभदेवे पसारेला डाबा हाथमांथी चंद्रमुखी, चंद्रार्धसमान ललाटपट्टवाळी, खरता तारानी जेम चमकती आकृति वेश अने चारु शृंगारथी शोभती, हसवे बोलवे चालवे विविधविलासे ललित संलापे अने योग्य उपचारे कुशळ, हाथमां वाजांवाळी, नाचकरवानी पूरी तैयारीवाळी अने बराबर ए देवकुमारोनी जोडीरूप एवी एकसो ने आठ देवकुमारीओ नीकळी.

[५९] पछी ए सूर्याभदेवे [७४] शंखो१, रणशिंगां२, शंखलीओ३, खरमुखीओ४, पेयाओ५, पीरपीरिकाओ६, पणवो-नानी पडघमो७,

७४ वाद्योनां जे जे नामो अहीं आपेलां छे तेमांना केटलाक स्पष्ट समजाता नथी. लोकगम्य कहीने टीकाकारे तेमनी व्याख्या जती

५९ अनेक प्रकारनां वाजांओ

पटहो–मोटी पडघमो८, ढक्काओ–डाकलीओ९, मोटी ढक्काओ–डाको१०, भेरीओ११, झालरो१२, दुंदुभीओ१३, सांकडमुखीओ१४, मोटा मादळो१५, मृदंगो१६, नंदीमृदंगो१७, आलिंगो१८, कुस्तुंबो१९, गोमुखीओ२०, नाना मादळो२१, त्रण तारनी वीणाओ२२, वीणाओ२३, भमरीवाळी वीणाओ२४, छ भमरीवाळी वीणाओ२५, सात तारनी वीणाओ २६, वव्वीसो२७, सुघोषा घटाओ२८, नंदीघोषा घंटाओ२९, सों तारनी मोटी वीणाओ३०, काचवी वीणाओ३१, चित्रवीणाओ३२, आमोदो३३, झांझो३४, नकुलो३५, तूणो ३६, तुंबडावाळी वीणाओ३७, मुकुंदो३८, हुडुक्को३९, विचिक्कीओ४०, करटीओ४१, डिंडिमो४२, किणितो४३, कडवांओ४४, दर्दरो४५, दर्दरिकाओ४६, कुस्तुंबुरुओ४७, कलशीओ४८, कलशो४९, तालो५०, कांसाना तालो५१, रिंगिरिसिको५२, अंगरिकाओ५३, शिशुमारिकाओ५४, वांसना पावाओ५५, वालीओ५६, वेणुओ–वांसळीओ५७, परिलीओ५८, अने वद्धको५९, एम[७५] ओगणपचासे जातनां एकसो ने आठ आठ वाजांओ बनाव्यां अने एकसो ने आठ आठ ते दरेक वाजांने वगाडनारा बनाव्या.

[६०] पछी ए सूर्याभदेवे पोताना हाथमांथी सरजेला ते देवकुमारो अने देवकुमारीओने बोलाव्या, तेओए 'आवीने शी आज्ञा छे?' एम विनयपूर्वक जणाव्युं

[६१] तेमने सूर्याभ देवे कह्युं के–"हे देवानुप्रियो ! तमे श्रमण भगवान महावीर पासे जाओ अने तेमने त्रण प्रदक्षिणा दई

॥५९॥

करी छे. जिज्ञासुओए ते ते वाद्योनी माहिती उस्ताद वगाडनाराओ पासेथी जाणी लेवी घटे.

७५ मूळ पाठमां वाजाओना भेदनी संख्या ओगणपचास जणावेली छे पण मूळ पाठ प्रमाणे वाजांओनी संख्या ओगणसाठ थाय छे. आ विसवादनु समाधान करवा टीकाकार कहे छे के ए ओगणपचास तो मूळभेदो समजवाना छे अने वधाराना तेना पेटा भेदो छे. ("एव-माइयाइं एगूणपण्णं आउज्जविहाणाइं विउव्वइ [कं० ५९] मूलभेदापेक्षया आतोद्यभेदा एकोनपञ्चाशत् शेषास्तु एतेषु एव अन्तर्भवन्ति यथा वशातोद्यविधाने वाली–वेणु–परिली–वव्व (द्ध ?) गाः"–इति–विवरण पृ० १२८ पं० ८)

वंदन–नमन करी ए गौतम वगेरे श्रमणनिर्ग्रंथोने ते दिव्य देवऋद्धि दिव्य देवद्युति दिव्य देवानुभाववाळुं बत्रीस प्रकारनुं नाटक भजवी बतावो."

६२–६३ नाच–गान वादननी शरूआत

[६२] सूर्याभदेवनी आज्ञा थतां ज तेने माथे चढावी हृष्टतुष्ट थएलां ए देवकुमारो अने देवकुमारीओ श्रमण भगवान महावीर तरफ जई तेमने वांदी–नमी जे तरफ गौतमादिक श्रमणनिर्ग्रंथो हता ते तरफ वळ्यां अने एक साथे ज एक हारमां एक-कतार ऊभा रह्यां, साथे ज नीचे नम्यां, वळी पाछुं साथे ज तेओ पोतानां माथां उंचां करी टट्टार ऊभां रह्यां एज प्रमाणे सहितपणे अने संगतपणे नीचे नम्यां अने पाछां टट्टार ऊभा रह्यां, पछी साथे ज टट्टार ऊभा रही फेलाइ गयां अने पोतपोतानां नाचगाननां उपकरणो हाथपगमां बराबर गोठवी राखी एक साथे ज वगाडवा लाग्यां, नाचवा लाग्यां अने गावा लाग्यां.

[६३] तेमनुं संगीत उरथी शरू थतां उठावमां धीरुं–मंद मंद, मूर्धामां आवतां तारस्वरवाळुं अने पछी कंठमां आवतां विशेष तारस्वरवाळुं, एम त्रिविध हतुं, ज्यारे ए बधां गातां हतां त्यारे तेनो मधुर पडछंदो नाटकशाळामां आखाय प्रेक्षागृहवाळा मंडपमां पडतो हतो. जे जातना रागनुं गाणुं हतुं तेने ज अनुकूळ एमनुं संगीत हतुं. गानाराओनां उर मूर्धा अने कंठ ए त्रणे स्थानो अने ए स्थानोनां करणो विशुद्ध हतां, वळी, गुंजतो वांसनो पावो अने वीणाना स्वर साथे भळतुं, एक बीजानी वागती हथेळीना अवाजने अनुसरतुं, मुरज अने कांसीओना झणझणाटना तथा नाचनाराओना पगना ठमकाना तालने बराबर मळतुं, वीणाना लयने बराबर बंधबेसतुं अने शरूआतथी जे तानमां पावो वगेरे वागतां हतां तेने अनुरूप एवुं एमनुं संगीत कोयलना टहुकाजेवुं मधुरुं हतुं वळी, ए सर्व प्रकारे सम, सललित–कानने कोमळ, मनोहर, मृदुपदसंचारी, श्रोताओने रतिकर, छेवटमां पण सुरस एवुं ते नाचनाराओनुं नाचसज्ज विशिष्ट प्रकारनुं उत्तमोत्तम संगीत हतुं

६४ वाजांओ वगाडवानी पद्धतिओ

[६४] ज्यारे ए मधुरुं संगीत चालतुं हतुं त्यारे शंख रणशिंगुं शंखली खरमुखी पेया अने पीरीपीरिकाने वगाडनारा ते देवो तेमने धमता, पणव पटह उपर आघात करता, भंभा मोटी डाकोने अफळावता, भेरी झालर दुंदुभीओ उपर ताडन करता, मुरज

६६–८४ नाटकना बत्रीश प्रकारनां जे जे अभिनयो करी बताव्या तेमनां नाम

मृदंग नंदीमृदंगोनो आलाप लेता, आलिंग कुस्तुंब गोमुखी मादळ उपर उत्ताडन करता, वीणा विपंची वल्लकीओने मूर्छावता, सो तारनी मोटी वीणा काचबी वीणा चित्र वीणाने कूटता, बद्धीस सुघोषा नंदिघोषानुं सारण करता, भ्रामरी षड्भ्रामरी परिवादनीनुं स्फोटन करता, तूण तुंबवीणाने छयछबता, आमोद झांझ कुंभ नकुलोनुं आमोटन करता–परस्पर अफळावता, मृदङ्ग हुडुक्की विचिक्कीओने छेडता, करटी डिंडिम किणित कडवांने वजावता, दर्दरक दर्दरिकाओ कुस्तुंबुरु कलशीओ मड्डुओ उपर अतिशय ताडन करता, तल ताल कांसाना तालो उपर थोडुं थोडुं ताडन करता–परस्पर घसता, रिंगिरिसिका लत्तिका मकरिका शिशुमारिकानुं वट्टन करता अने वंसी वेणु वाली परिल्ली तथा वद्धकोने फूंकता हता.

[६५] ए रीते ए गीत नृत्य अने वाद्य दिव्य मनोज्ञ मनहर अने शृंगाररसथी तरबोळ बन्यां हतां, अद्भुत थयां हतां, बधानां चित्तनां आक्षेपक नीवडयां हतां. ए संगीतने सांभळनारा अने नृत्यने जोनाराना मुखमांथी उछळता वाहवाहना कोलाहलथी ए नाटकशाळा गाजी रही हती. एम ए देवोनी दिव्य रमत प्रवृत्त थएली हती.

[६६] ए रमतमां मस्त बनेला ते देवकुमारो अने देवकुमारीओए श्रमण भगवान महावीरनी सामे स्वस्तिक श्रीवत्स नदावर्त वर्धमानक भद्रासन कलश मत्स्य अने दर्पणना दिव्य अभिनयो[७६] करी ए मंगळरूप प्रथम नाटक भजवी देखाडयुं हतुं ॥६१॥

७६ भरतनुं नाट्यशास्त्र, नाट्य संगीत वगेरेने लगती अनेकविध माहितीओथी भर्युं पडयुं छे. अहीं नाट्यना जे बत्रीश प्रकार करी देखाड्या छे तेमांना केटलाक तो ए नाट्यशास्त्रमां बतावेला छे. जेवा के–संकुचित. प्रसारित, द्रुत, विलम्बित, अंचित वगेरे. ५७मी कण्डिकाथी ८९मी कण्डिका सुधीमां संगीत अने वाद्योना वर्णन साथे ए बधा अभिनयोनो चितार आपेलो छे. घणाखरा अभिनयोनो भाव समजाय एवो छे. एमांना केटलाक पशुपक्षीने लगता, वनस्पतिने लगता, जगतना अन्य पदार्थोने लगता, प्राकृतिक प्रसंगोने लगता अने उत्पातोने लगता छे. वळी केटलाक लिपिने लगता छे–जे अभिनयो 'क' वगेरे अक्षरोनी आकृतिने लगता छे ते बधा लिपिसम्बन्धी अभिनयो छे. ब्राह्मी लिपिमां + आवी आकृति

[६७] वळी, ए देवकुमारो अने देवकुमारीओ बीजुं नाटक भजवी बताववा पूर्वे जणावेली रीते एकसाथे एक हारमां भेगां थई गावा नाचवा अने वाजां वगाडवा लाग्यां तथा ए अद्भुत देवरमतमां मशगुल बनी गयां.

॥६२॥ आ बीजा नाटकमां तेमणे श्रमण भगवान महावीरनी सामे आवर्त प्रत्यावर्त श्रेणि प्रश्रेणि स्वस्तिक पूस माणवग वर्धमानक मत्स्यांडक मकरांडक जार मार पुष्पावली पद्मपत्र सागरतरंग वासंतीलता अने पद्मलताना अभिनयो करी देखाडी बीजुं नाटक पूरुं कर्युं.

[६८] पछी त्रीजुं नाटक भजवी बताववा भेगां थयेलां ते देवकुमारो अने देवकुमारीओए श्रमण भगवान महावीरनी सामे ईहामृग वळद घोडो मानव मगर विहग-पक्षी व्याल किन्नर रुरु शरभ चमर कुंजर वनलता अने पद्मलताना अभिनयो करी देखाड्या

[६९] चोथुं नाटक देखाडतां ते देवकुमारो अने देवकुमारीओए श्रमण भगवान महावीरनी सामे एकतश्चक्र द्विधाचक्र एकतश्चक्रवाल द्विधाचक्रवाल एम चक्रार्ध अने चक्रवालनो अभिनय भजवी बताव्यो.

[७०] पांचमुं नाटक भजवतां तेमणे आवलिकाओनो अभिनय कर्यो. एमां एमणे चंद्रावलिका वलयावलिका हंसावलिका सूर्यावलिका एकावलिका तारावलिका मुक्तावलिका कनकावलिका अने रत्नावलिकाओना देखावो करी बताव्या.

[७१] छट्ठुं नाटक शरू करतां तेमणे उद्गमनोना एटले चंद्र ऊगवानां अने सूर्य ऊगवानां दृश्यो खडां कर्यां.

[७२] सातमा नाटकमां आगमनना अर्थात् चंद्रना आगमनना अने सूर्यना आगमनना देखावो करी बताववामां आव्या.

'क' नी छे एटले ए आकृति प्रमाणे गोठवाईने जे अभिनय करी बताववो ते 'क' नी आकृतिनो अभिनय गणाय. ए ज प्रमाणे लिपिसम्बन्धी बीजा बधा अभिनयो विशे समजी लेवुं. छेल्लो बत्रीशमो अभिनय भगवान महावीरनी जीवन घटनाना मुख्य मुख्य प्रसंगोने लगतो छे. आ बधुं जोता ते समयनी अभिनयकळाना परमप्रकर्षनो ख्याल आवे छे अने ते प्रत्येक अभिनयनी उपयोगिता पण समजाय एवुं छे. भगवतीसूत्रमां पण सूर्याभदेवे करी बतावेला अहीं जणावेला अभिनयोनो उल्लेख छे. ते माटे जुओ भगवतीसूत्रनो मारो अनुवाद-खंड २, पृ० ४३ नु टिप्पण.

८० लिपिना अभिनयो

[७३] आठमा नाटकमां तेओए आवरणना-चंद्रना अने सूर्यना आवरणना देखावो करी देखाड्या अर्थात् ज्यारे चंद्रग्रहण अने सूर्यग्रहण थाय त्यारे जगतमां अने गगनमां जे जातनुं वातावरण प्रसरे छे ते ए नाटकमां प्रत्यक्ष करी वतावावामां आव्युं.

[७४] नवमा नाटकमां अस्तमनना देखावो आव्या एटले ज्यारे चंद्र अने सूर्य आथमी जाय छे त्यारे जगतमां अने आकाशमां जे जे घटनाओ वने छे ते वधी नजरोनजर खडी करवामां आवी.

[७५] दसमुं नाटक चंद्रमंडल सूर्यमंडल नागमंडल यक्षमंडल भूतमंडल राक्षसमंडल अने गांधर्वमंडलना अभिनयोमां पूरुं थयुं एमां चंद्र सूर्य नाग यक्ष भूत राक्षस अने गांधर्व संवंधी मंडलोना भावो भजवी वताव्या ॥६३॥

[७६] अग्यारमुं नाटक द्रुतविलंवित अभिनयने लगतुं हतुं, तेमां वृषभनी अने सिंहनी ललित गति, घोडानी अने गजनी विलंवित गति, मत्त घोडो अने मत्त हाथीनी विलसित गति करी वतावावामां आवी.

[७७] वारमा नाटकमां सागर अने नागरना आकारोने अभिनयमां करी वताव्या.

[७८] तेरमुं दिव्य नाटक नंदा अने चंपाना अभिनयने लगतुं हतुं.

[७९] चौदमा नाटकमां मत्स्यांड मकरांड जार मारनी आकृतिओना अभिनयो हता

[८०] पन्नरमा नाटकमां [७७]क ख ग घ अने ङना घाटना अभिनयो करी वताव्या.

---

७७ अहीं लिपिना अभिनयोना उल्लेखमा पाच वर्गना पचीश अक्षरोना ज अभिनयोनी नोंध छे, तेमा स्वरना अने य र ल व श ष स ह ळ क्ष के ज्ञ ना अभिनयोनो उल्लेख नथी ए ध्यानमा राखवा जेवु छे. ब्राह्मी लिपिमा 'क' वगेरेनी जे मूळ आकृतिओ वतावी छे ते आकृतिना घाटना अभिनयो अहीं समजवा जोइए. अशोकना शिलालेखो ब्राह्मीलिपिमा लखाएला छे ए लिपिना अक्षरोनी आकृति माटे सुप्रसिद्ध लिपिशास्त्री हीराचन्द गौरीशंकर ओझानी प्राचीन लिपिमाळा जोई जवी घटे.

पछीनां चार नाटको अनुक्रमे १६ च छ ज झ ञ ना, १७ ट ठ ड ढ ण ना, १८ त थ द ध न ना, अने १९ प फ व भ म ना घाटना अभिनयोने लगतां हतां.

[८१] वीसमुं नाटक अशोक आंवो जांवुडो अने कोसंवना पल्लव संवंधी अभिनयोने लगतुं हतुं.

[८२] २१ मुं नाटक लताना देखावो करवाने माटे हतुं. तेमां पद्म नाग अशोक चंपो आम्र वन वासंती कुंद अतिमुक्तक अने श्यामनी वेलडीओना अभिनयो हता.

[८३] पछी अनुक्रमे २२ द्रुत[७८] २३ विलंबित २४ द्रुतविलंवित २५ अंचित २६ रिभित २७ अंचितरिभित २८ आरभट २९ भसोल अने ३० आरभट भसोलना अभिनयोने लगतां नव नाटको करी वताव्यां.

३१ मा नाटकमां उत्पात निपात संकुचित प्रसारित रयारइय (?) भ्रांत अने संभ्रांतनी क्रियाओने लगता अभिनयो देखाडवामां आव्या.

[८४] ३२ मा नाटकमां ते एक साथे एक हारमां भेगां थएलां देवरमणमां तल्लीन बनेलां देवकुमारो अने देवकुमारीओए श्रमण भगवान महावीरना पूर्वभव संवंधी चरित्रने लगता बनावोना अभिनयो भजवी बताव्या अने पछी तेमना ज वर्तमान जीवनसंवंधी पण जे जे मोटा मोटा बनावो बन्या हता ते दरेकने अभिनयोमां करी देखाड्या-तेमां तेमनुं च्यवन, गर्भसंहरण, जन्मसमयना बनावो, अभिषेकनो प्रसंग, बालक्रीडा, यौवनदशा, कामभोगनी लीला, निष्क्रमणनो प्रसंग, तपश्चरणनी अवस्था, ज्ञानी थयानी परिस्थिति, तीर्थप्रवर्तननी घटनाने लगता अभिनयो हता अने पछी छेल्ला अभिनयमां भगवान महावीरना निर्वाणनुं चित्र पण ऊतारवामां आव्युं हतुं. आम ए चरम-छेल्लुं-बत्रीशमुं नाटक पूरुं थयुं.

[८५] ए नाटकोमां ते देवकुमारो अने देवकुमारीओए ढोल वगेरे तत-पहोळां, वीणा वगेरे वितत-तांतवाळां, झांझ वगेरे घन-नक्कर अने शंख वगेरे शुषिर-पोलां एम चार जातनां वाजां वगाडेलां.

८४ भगवान महावीरना जीवननी घटनाओना अभिनयो

८५ नाटकनो उपसंहार

---

७८ जुओ भगवतीसूत्रनो मारो अनुवाद-खंड २, पृ० ४४ नुं टिप्पण.

[८६] उत्क्षिप्त पादवृद्ध[७९] मंद अने रोचित एम चार प्रकारनुं संगीत गाएलुं.

[८७] अंचित, रिभित, आरभट अने भसोल एम चार प्रकारे नृत्य करेलुं.

[८८] दार्ष्टांतिक प्रात्यंतिक सामान्यतोपनिपातनिक अने लोकमध्यावसानिक एम चार जातना अभिनयो[८०] भजवी बतावेला.

[८९] हवे ते देवकुमार अने देवकुमारीओ गौतमादिक श्रमण निर्ग्रंथोने ए बत्रीशे प्रकारनुं दिव्य नाटक देखाडी तथा श्रमण भगवान महावीरने त्रण प्रदक्षिणा दई तेमने वांदी नमी जे तरफ पोतानो अधिपति सूर्याभदेव हतो ते तरफ गयां अने हाथ जोडी पोताना ए अधिपतिने जय विजयथी वधावी तेओए जणाव्युं के आपे करेली आज्ञा प्रमाणे अमे श्रमण भगवान महावीर पासे जई बत्रीशे प्रकारनु ए दिव्य नाटक देखाडी आव्यां.

त्यारबाद ए सूर्याभदेव पोतानी ते दिव्य देवमायाने संकेली लई एक क्षणमां एकलो-हतो तेवो एकाकी बनी गयो पछी ते श्रमण भगवान महावीरने त्रण प्रदक्षिणा दई वांदी नमी पोताना पूर्वोक्त परिवार साथे ए दिव्य यान विमान उपर चडी ज्यांथी आव्यो हतो

७९ प्रस्तुत 'उत्क्षिप्त' वगेरे शब्द उपरथी संगीतना आ चार भेदो समजाय एवा छे पण तेनी विशेष माहिती तो कोई संगीतविशारद पासेथी ज जाणी लेवी जोइए.

८० मूळकारे अभिनयना आ चार प्रकार बतावेला छे, दार्ष्टान्तिक अभिनय ते कोई प्रकारना दृष्टांतनो अभिनय. २ 'प्रत्यत' नो अर्थ 'म्लेच्छदेश' छे ("प्रत्यन्तो म्लेच्छमण्डलः" अभिधान चि० कां० ४ श्लो० १८). भोट वगेरे देशोने म्लेच्छदेश गणेला छे. ए देशना लोकोनो तेमना आचारनो के ए देशना कोइ प्रसग वगेरेनो अभिनय ते प्रात्यंतिक अभिनय. ३ सामान्य प्रकारनो अभिनय ते सामान्योपनिपातिक अने लोकना मध्य के अत सबधी अभिनय ते लोकमध्यावसानिक अभिनय. अभिनयना प्रकारसूचक ते ते शब्दनो आ तो शब्दार्थमात्र छे. परंतु ते विशे विशेष समजवा माटे अभिनयविशारदो अने नाटयशास्त्रद्वारा जाणी लेवु जोइए.

त्यां ज पाछो चाल्यो गयो.

[९०] एना गया पछी 'भगवन्' एम कहीने चौद पूर्वने जाणनारा, चार ज्ञानथी युक्त, सर्वाक्षरसंनिपाती, महातपस्वी, सूर्याभनी ए देवमायाने जोइने शंकाशील थयेला अने कुतूहलवाळा बनेला भगवान गौतम श्रमण, भगवान महावीरने वांदी नमीने नम्रपणे आ प्रमाणे बोल्या.

९० शंकाशील श्रीगौतमनो प्रश्न अने भगवाननुं प्रतिवचन

[९१] प्र०—हे भगवन्! ते सूर्याभदेवनी ए दिव्य देवमाया, ए दिव्य देवद्युति, ए दिव्य देवानुभाव क्यां जतो रह्यो? क्यां समाई गयो?

[९२] उ०—हे गौतम! सूर्याभदेवे सर्जेली ए देवमाया तेना शरीरमां जती रही, तेना शरीरमां समाई गई.

[९३] प्र०—हे भगवन्! ते क्या कारणथी एम बन्युं?

[९४] उ०—हे गौतम! बहार अने अन्दर छाण वगेरेथी लींपेली गुपेली फरती वंडीवाळी बन्ध बारणांवाळी उंडी अने पवन न भराय एवी जेम कोई एक मोटी शिखरबंधी शाळा होय, ए शाळानी पासे माणसोनुं एक मोटुं टोळुं ऊभुं होय अने ए वखते ए टोळु आकाशमां एक मोटुं पाणीभर्युं वादळुं जूए तथा ए वादळुं हमणांज वरसशे एम जो टोळाने लागे तो जेम ए टोळुं पासेनी ए शाळामां पेसी जाय, तेम ए देवमाया सूर्याभना शरीरमां समाई गई अथवा ए शाळा बहार उभेलुं टोळुं पोतानो सामे चडी आवता वंटोळियाने जुए तो पण जेम ए पासेनी शाळामां पेसी जाय, तेम ए देवमाया सूर्याभना शरीरमां समाइ गई एम में कह्युं छे.

[९५] वळी, गोतमे पूछ्युं के—

प्र०—हे भगवन्! सूर्याभदेवनुं सूर्याभविमान क्यां जणावेलुं छे?

९५–९६ सूर्याभदेवनुं विमान क्यां छे? एवा श्रीगौतमना प्रश्ननो आपेलो उत्तर

[९६] उ०—हे गौतम! जम्बूद्वीप नामना द्वीपमां मन्दर पर्वतथी दक्षिणे आ रत्नप्रभा नामनी पृथ्वी छे, तेना रमणीय समतल भूभागथी ऊंचे चन्द्र सूर्य ग्रहगण नक्षत्र अने तारकाओ आवेलां छे, त्यांथी आगळ घणां योजनो सेंकडो योजनो हजारो योजनो

लाखो योजनो करोडो योजनो अने लाखोकरोडो योजनो ऊंचे ऊंचे दूर जईए त्यारे त्यां सौधर्मकल्प नामनो कल्प जणावेलो छे, ए कल्प पूर्व पश्चिम लांबो, उत्तर दक्षिण पहोळो, आकारे अर्धचन्द्रसमान संस्थित छे, किरणोना प्रकाशथी झगझगतो छे, तेनी लम्बाई पहोळाई असंख्य कोटानुकोटि योजन छे अने तेनो घेरावो पण तेटलो ज छे,

ए सौधर्मकल्पमां सौधर्मदेवोनां बत्रीश लाख विमानावासो होय छे एम कह्युं छे. ए बधा विमानावासो सर्वरत्नमय दर्शनीय अने असाधारण सुन्दरतावाळा छे.

ते विमानोनी वच्चोवच्च पांच अवतंसको जणावेला छे. अशोक अवतंसक, सप्तपर्ण अवतंसक, चम्पक अवतंसक, चूतक अवतंसक अने वच्चे सौधर्मावतंसक. ए पांचे अवतंसको पण सर्वरत्नमय सुन्दरतम छे.

एमांना ते सौधर्मावतंसक महाविमानथी पूर्वे तीरछुं असंख्य लाख योजन आगळ वधीए त्यारे त्यां सूर्याभदेवनुं सूर्याभ नामनुं विमान जणावेलुं छे. ए विमानना लम्बाई पहोळाई साडाबार लाख योजन छे अने घेरावो ओगणचाळीश लाख बावन हजार आठसो अडतालीश योजन छे.

९७ विमानना प्राकारनुं वर्णन

[९७] सूर्याभदेवना ए विमाननी फरतो चारे बाजु एक मोटो प्राकार-गढ छे. ए गढ त्रणसें योजननी उंचाइए छे. मूळमां तेनी पहोळाई सो योजन, वच्चे पचास योजन अने छेक उपर पचीस योजन छे अर्थात् ए गढ मूळमां पगतो-पहोळो वच्चे सांकडो अने छेक उपर वधारे पातळो छे. गढनो आकार गायना पूंछडा जेवो छे अने ते आखोय गढ सर्वकनकमय अच्छो मनोहर छे.

ए गढनां कांगरां अनेक प्रकारना काळा नीला लाल पीळा अने धोळा एम पांचे रंगोथी शोभितां छे. ते एक एक कांगरुं, लम्बाइमां एक योजन, पहोळाईमां अरधुं योजन, अने थोडुं माठेरुं योजन उंचाईमां छे. ते बधां कांगरां सर्वे प्रकारनां रत्नोमांथी बनावेलां छे-बहु रमणीय छे.

[९८] सूर्याभदेवना ते विमाननी एक एक बाजुए हजार हजार बारणां होय छे एम कहेलुं छे अर्थात् ते विमानने पूर्वे पश्चिम

रायपसेणइय सुत्तनो सार

१८ विमानना वारणांनुं वर्णन

उत्तर दक्षिण एम चारे बाजुनां मळीने चार८ हजार वारणां होय छे.

ते एक एक बारणुं उंचाइए पांचसो योजन छे, पहोळाईए अने प्रवेशे अढीसो योजन छे.

ते बधां वारणां धोळां छे, तेमनी उपरनां शिखरो सोनानां छे, ए शिखरोमां वृषभ मगर विहग मानव कुंजर किन्नर पद्मलता वगेरेनां चित्रो कोरेलां, एमना स्तम्भ-थांभला उपरनी वेदिकाओ वज्रमय-ए बधां हजारो किरणोथी झळहळे छे, एवां ए आंखने ठारे एवां सुखस्पर्शवाळां छे

||६८|| ते दरेक वारणानी नेमो वज्रमय, मूळ पाया रिष्टरत्नना, थांभलीओ वैडूर्यनी अने तेनुं तल पंचरङ्गी उत्तम मणिओमांथी बनेलुं छे. डेलीओ हंसगर्भरत्ननी, इन्द्रकीलो गोमेदना, बारसाखो लोहिताक्षरत्ननी, ओतरंगो ज्योतिरसरत्नना, सूईओ-खीलीओ-लोहिताक्षरत्ननी, सांधाओ वज्रना, खीलीओनी टोपीओ विविध मणिमय, आगळियो अने तेनुं अटकण वज्रनुं, आवर्तनपीठ-उलाळानुं टेकण रजतनुं, वारणानां उत्तर पडखां अकरत्ननां, एवी ए वारणांओनी शोभावाळी रचना छे. तेनां कमाड लगार पण आंतरा विनानां चपोचप भीडाय तेवां मजबूत छे. वारणांनी भींतोमां बन्ने पडखे एकसो अडसठ अडसठ भींतगोळीओ छे अने तेटलीज गोमाणसीओ एटले बेठको छे. विविध मणिरत्नोथी रमती पूतळीओ वारणांओमां खोडेली छे. तेनो माढ-माडभाग-वज्रनो अने माडभागनुं शिखर रूपानुं छे..

वारणाना उपला भागो सुवर्णमय, तेमां मणिमय जाळीवाळा गोखलाओ, पडखां अने पडखांनी बाजुओ अंकरत्नमय अने वांसडाओ खपाटो तथा नळियां ज्योतिरसरत्नमय छे तेनी पाटीओ रूपानी, नळियांनां ढांकण सुवर्णमय अने टाटीओ वज्रमय छे. ए जातनां ते वारणां शंखना उपला भाग जेवां अने रूपाना ढगला जेवां धोळां लागे छे. ते वारणांओ उपर अनेक प्रकारनां तिलको-टीलां अने अर्धचंद्रो कोरेलां छे, मणिनी माळाओ टांगेली छे, वारणां बहार अने अंदर सुंवाळां छे, तेना उपरनी रंगनी भूकी सोनानी वेळुमय छेः एवां ए वारणां सुंदर, सारा स्पर्शवाळां, रूडी शोभावाळां, प्रसन्नता पमाडे तेवां दर्शनीय अने असाधारण रमणीय छे.

[९९] ए वारणांनी बन्ने बाजुनी बेठकोमां कमळ उपर कोरेला एवा चंदनना सोळ सोळ कळशोनी हारो, तेओमां सुगंधी पाणी भरेलां, तेमना कांठाओमां रातां सूतर नांखेलां अने तेनां ढांकणां पद्मोत्पलनां–एवा ए सर्वरत्नमय घडाओ, हे दीर्घजीवी श्रमण ! मोटामां मोटा इन्द्रकुंभनी जेवा विशेष रमणीय जणावेला छे

[१००] वळी, ते वारणांओनी बन्ने बाजुनी बेठकोमां सोळ सोळ नागदन्तोनी–आंकडियाओनी हारो आवेली छे. ते दरेक नागदन्तो उपर नानी नानी झणझणती घण्टडीओ लटकेली, एओ भींतमां बराबर बेठेला, एमनो आगळो भाग भींतथी सारी रीते बहार पडतो –एवा ए सापना अडधा भाग जेवा देखाता वज्रमय सीधा लांबा नागदन्तो, हे आयुष्मन् श्रमण ! मोटा मोटा गजदन्तना आकार जेवा सुंवाळा अने शोभाजनक छे

वळी, ए नागदंतोमां काळा, नीला, राता, पीळा अने धोळा सूतरथी परोवेली लांबी लांबी माळाओ लटकावेली, ए माळाओना लंबूसको–उपरनां फुमकां–सोनानां, ए फुमकांनी अडखेपडखे जडेली सोनाना पतरानी पांदडीओ छे. ज्यारे दक्षिणनो उत्तरनो पूर्वनो अने पश्चिमनो मंद मंद पवन वाय त्यारे ते धीरे धीरे हलती हलती पांदडीओमांथी कान अने मनने शांति आपे एवुं मधुरुं संगीत नीकळे छे

वळी, हे आयुष्मन् श्रमण ! ए नागदंतोनी उपर बीजा सोळ सोळ नागदंतोनी हारो आवेली छे, तेओ पण गजदंतना आकार जेवा सुंवाळा अतिरमणीय छे. उपरना आ नागदंतोमां रजतमय शिकां टांगेलां छे, ए दरेक शिकामां वैडूर्यनी धूपघडीओ मूकेली छे, ए धूपघडीओमां उत्तम काळो अगर किनरु अने तुरुष्कनो सुगंधी धूप मघमघी रह्यो छे, एवी ए सुगंधी–वाट जेवी मघमघती धूप-घडीओमांथी नीकळती मनोहारी सुगंध घ्राण अने मनने शांति आपती ते प्रदेशमां चारे कोर फेलाती रहे छे

[१०१] वळी, ए वारणांओनी बन्ने पडखेनी बेठकोमां सोळ सोळ पूतळीओनी हारो जणावेली छे. ते पूतळीओ विविध प्रकारनी लीलाओवाळी, सुप्रतिष्ठित, सारी रीते शणगारेली, रंगबेरंगी वस्त्रो पहेरेली अने अनेक जातनी माळाओवडे शोभायमान छे. एमनो

कटिभाग मूठीमां आवी जाय एवो पातळो, अंबोडो उंचो अने कठण पीवर-भरावदार-छाती, आंखना खूणा राता, वाळ काळा, कोमळ अने शोभनिक छे. अशोक वृक्ष उपर तेनी डाळने डाबे हाथे पकडीने ए पूतळीओ उभेली छे. आंखमींचामणी करती ए, जाणे देवोनां मनने हरी न लेती होय, एक बीजा सामुं जोती ए, जाणे परस्पर खीजती न होय, एवी जणाय छे. ए वधी वनेली छे तो पृथ्वीमांथी-माटीमांथी-पण नित्य रहेनारी छे. एमनु मुख चंद्र जेवुं, ललाट चंद्रार्ध जेवुं अने देखाव चंद्र जेवो सौम्य छे. खरता तारानी जेम ए वधी झगमग्या करे छे, मेघनी वीजळीनो झबकारो अने प्रखर सूर्यनो चमकाट ए करतांय तेओ वधु झवके छे-चमके छे एवी ए पूतळीओ शृंगारे आकारे अने वेशे प्रसाद उपजावे एवी देखावडी अने मनोहर छे •

[१०२] वळी, ए वारणांओनी वन्ने वाजुनी बेठकोमां सर्वरत्नमय सुंदर जाळीवाळां सोळ सोळ रमणीय स्थानो छे,

[१०३] वन्ने पडखेनी ए बेठकोमां सोळ सोळ घंटानी हारो टांगेली जणावेली छे. ए घंटाओ सुवर्णमय, तेमना लोलको वज्रमय, घंटानां वन्ने पडखां विविध मणिमय, घटानी सांकळो सोनानी अने दोरीओ रूपानी छे तेमनो रणको मेघना गडगडाट जेवो, सिंहनी त्राड जेवो, दुंदुभिना नाद जेवो, हंसना स्वर जेवो मंजु छे. एवा-ए कान अने मनने ठारे-सुख आपे-तेवा रणकावडे ते घंटाओनी आसपासनो प्रदेश पण गाजतो रहे छे.

[१०४] वळी, ए वारणांओनी वन्ने वाजुनी बेठकोमां सोळ सोळ वनराइओ जणावेली छे. ए वनराइओमां वृक्षो वेलो फणगा अने पांदडां मणिमय छे, एमना उपर भमराओ गुंजता रहे छे एवी ए वनराइओ टाढी हिम जेवी शीतळ अने प्रासादिक छे

[१०५] वळी, ते वन्ने पडखेनी बेठकोमां वज्रमय सोळ सोळ प्रकंठको-ओटलाओ जणावेला छे ते दरेकनी लवाई पहोळाई अढीसो योजन अने जाडाई सवासो योजन छे ते ते एक एक प्रकंठक उपर एक एक मोटो उंचो महेल आवेलो जणावेलो छे, ते दरेक महेल अढीसो योजन ऊंचो अने सवासो योजन पहोळो छे जाणे प्रभाना पुंज न होय एवा ए महेलो विविध मणिओ अने रत्नोथी खीचोखीच जडेला छे. उपराउपर छत्रोथी शोभायमान विजय वैजयंती पताकाओ ए महेलो उपर पवनथी फरफरती रहे छे.

एनां मणिकनकमय शिखरो उचां आभने अडतां छे. महेलोनी भींतोमां वच्चे वच्चे रत्नोवाळां जाळियांओ मूकेलां छे. बारणांमां पेसतां ज विकासमान पुण्डरीक कमळो अने भींतोमां विधविध तिलको तथा अर्धचंद्रको कोरेला छे. महेलो अंदर अने बहार लीसा सोनेरी वेळुथी लींपेला सुंदरतम छे जे प्रकंठको उपर ते महेलो छे ते प्रकंठको पण छत्रोथी शोभती धजाओथी रमणीय छे.

[१०६] ए महेलोनां बारणांनी बन्ने बाजु सोळ सोळ तोरणो जणावेलां छे ए मणिमय तोरणो मणिमय थांभलाओ उपर बेसाडेलां छे, तेमना उपर पद्म वगेरेना गुच्छाओ टांगेला छे ते एक एक तोरणनी आगळ पूर्वे वर्णवेला एवा नागदंतो तथा एवी ज बब्बे पूतळीओ उभेली छे. ते ज रीते दरेक तोरणनी आगळ एक एक बाजु सर्वरत्नमय घोडा हाथी मानव किंनर किंपुरुष महोरग गांधर्व अने वृषभनां बब्बे जोडकां तथा तेमनी श्रेणीओ वगेरे आवेलां छे, ते ज प्रकारे नित्य पुष्पवाळी सर्वरत्नमय पद्मलता वगेरेनी श्रेणिओ आवेली छे ए रीते, हे आयुष्मन् श्रमण! दिशास्वस्तिक चंदनकलश अने मत्तगजना मुखनी जेवा भृङ्गारनी बे हारो गोठवेली छे

वळी, ते तोरणनी आगळ बब्बे बब्बे आरिसा होवानुं जणावेलुं छे. ए आरिसानां चोकठां सुवर्णमय, मंडळो अंकरत्नमय अने एमां पडतां प्रतिबिम्बो निर्मलातिनिर्मल छे. हे दीर्घजीवी श्रमण! चन्द्रमंडळ जेवा ए निर्मळ आरिसा अर्धकायप्रमाण जणावेला छे.

वळी, ए तोरणोनी आगळ वज्रना बब्बे थाळो जणावेला छे. ए रथना पैडा जेवा मोटा मोटा थाळो जाणे के त्रणवार छडेला आखा चोखाथी भरेला ज होय एवा भासे छे.

वळी, ए तोरणोनी आगळ स्वच्छ पाणी अने ताजां लीलां फळोथी भरेली बे बे पात्रीओ मूकेली जणावेली छे हे चिरंजीव श्रमण! ए बे बे पात्रीओ गायने खाण आपवाना मोटा गोळ सुंडला जेवडी मोटी सर्वरत्नमय अने शोभनातिशोभन छे.

॥७२॥

वळी, ए तोरणोनी आगळ नानाविध भांडोथी भरेला सर्वरत्नमय बे बे सुप्रतिष्ठको छे-शरावो छे बे बे मनोगुलिकाओ-पेढलीओ छे. ए पेढलीओमां सोनानां अने रूपानां अनेक पाटियांओ जणावेलां छे. ते सोनारूपानां पाटियांओमां वज्रमय नागदंतो जडेला छे, ए नागदंतो उपर वज्रमय शिकां छे, ए शिकां उपर काळा नीला राता पीळा अने धोळा सूतरना पडदावाळा पवनथी भरेला घडाओ छे, ए बधा पवनपूर्ण घटो वैडूर्यमय सुंदर छे.

वळी, ए तोरणोनी आगळ रत्नथी भरेला बब्बे करंडियाओ छे, चक्रवर्त्तीना रत्नपूर्ण करंडियानी जेम ए करंडियाओ पोताना प्रकाशथी ए जग्याने चारे बाजुथी चकचकती करी मूके छे.

वळी, ए तोरणोनी आगळ वज्रमय बब्बे हयकंठा गजकंठा नरकंठा किन्नरकंठा किंपुरुषकंठा महोरगकंठा गांधर्वकंठा अने वृषभकंठा छे. तेओमां सर्वरत्नमय बब्बे चंगेरीओ छे. तेमां सर्वरत्नमय पुष्प माळा चूर्ण वस्त्र आभरण सरसव अने पींछीओ मूकेली छे

वळी, ए तोरणोनी आगळ बब्बे सिंहासनो अने बब्बे छत्रो होवानुं जणावेलुं छे. ए छत्रोना दांडा वैडूर्यना, कानी-झूल-सोनानी, सांधा वज्रना, मोतीथी परोवेली सोनानी आठ हजार सळीओ अने चंदन जेवी शीतळ सुगंधी छाया छे. मंगलरूप चित्रोथी आलेखेलां चंद्रना घाट जेवां ए सर्वे छत्रो अतिशोभनिक छे.

वळी, ए तोरणोनी आगळ बे बे चामरोनी हयाती जणावेली छे. ए चामरोना हाथा वैडूर्यना अने एमां विविध मणिरत्ननी कोरणी कोरेली छे. क्षीरसागरना फीण जेवां पातळा वाळवाळां सर्वरत्नमय ए चामरो बहु सुशोभित देखाय छे.

ए ज प्रमाणे ते तोरणोनी आगळ तेल, कुठ-उपलेट, पत्र-तमालपत्र, चूआ, तगर, पलची, हरताळ, हिंगळोक, मणसिल अने अंजनना बब्बे कुडलाओनी अस्ति जणावेली छे. ए कुडलाओ सर्वरत्नमय अने अनुपम शोभावाळा छे

[१०७] वळी, ए सूर्याभविमानना एक एक बारणा उपर चक्रनी नीशानीवाळा एकसो ने आठ ध्वजो छे, ए ज प्रमाणे मृग, गरुड, छत्र, पींछुं, पक्षी, सिंह, वृषभ, चारदंतो हाथी अने उत्तम नागनी नीशानीवाळा एकसो ने आठ आठ ध्वजो छे, अर्थात् ए

प्रत्येक वारणा उपर एक हजार अने अँशी ध्वजो लहेरी रह्या छे एम जणावेलुं छे.

ए सूर्याभविमानमां चंदरवाथी सुशोभित पांसठ पांसठ भौमो–भूमिनां स्थानो जणावेलां छे. ए भौमोनी वरावर वच्चे एक एक सिंहासन मांडेलुं छे, वाकीना भौमो उपर एक एक भद्रासन मांडेलुं छे

विमानमां वारणांओनां ओतरङ्गो सोळ प्रकारनां रत्नोथी घडेलां छे. वारणांओ उपर धजा अने छत्रोथी शोभतां आठ आठ मंगलो आवेलां छेः ए रीते विमानमी चारे वाजुनां ते वधां वारणांओ एवी उत्तमोत्तम शोभावाळां छे

वनखंडो अने तेनां तृणोनो मधुर ध्वनि

[१०८] ए सूर्याभविमाननी आसपास पांचसें पांचसें योजन मूकीने चार दिशामां चार वनखंडो आवेला छे. पूर्वमां अशोकवन, दक्षिणमां सादछवन, पश्चिममां चंपकवन अने उत्तरमां चूतकवन. ए वनखंडोनी लंबाई साडाबार लाख योजनथी कांइक वधारे अने पहोळाई पांचसो योजन छे. ते दरेकनी फरतो एक एक कोट छे एम ए चारे वनखंडो लीलाछम जेवा, टाढा हिम जेवा, जोनारनी आंखने ठारे एवा शीतळ छे. ॥७३॥

[१०९] ते वनखंडोनुं भोंतळ तद्दन सम–सपाट छे, ते उपर अनेक प्रकारना मणिओ अने तृणो शोभी रह्यां छे, तेमनो स्पर्श अने गंध मनगमतो आकर्षक छे.

[११०] हे भगवन् ! पूर्व पश्चिम दक्षिण अने उत्तरना वायरा वाय छे त्यारे मंद मंद हलता परस्पर अथडाता एवा ते तृणोनो अने मणिओनो केवो अवाज थाय छे ?

हे गौतम ! एमनो अवाज श्रमहर श्रुतिमधुर अने श्रुतिने अत्यंत तृप्ति आपनारो थाय छे

छत्र, धजा, घंट, पताका अने उत्तम तोरणोथी सुशोभित एक सुंदर रथ होय, जेनी चारे वाजु नानी नानी टोकरीओ जडेली होय, हिमालयमां उगेला तिनिशना लाकडामांथी वनावेलो होय, आरा अने धोंसरुं वरावर वेसाडेलां होय, पैडां उपरनो लोढानो पाटो

वनखंडोमां अनेक जलाशयो

मजबूत होय. कुलीन घोडानी जोड जोडेली होय, हांकनारो सारथि अतिकुशळ होय अने अनेक प्रकारनां हथीआरो कवचो भाथांओ वगेरे युद्धोपकरणोथी जे भरेलो होय, एवो ए रथ, मणिओथी बांधेला राजाना भव्य आंगणामां वारंवार चालतो होय, वारंवार आवतो जतो होय, त्यारे तेनो जे मधुरध्वनि संभळाय छे, तेना जेवो ते तृणोनो अने मणिओनो ध्वनि छे ?

गौतम ! ना, एना जेवो एमनो ध्वनि नथी पण ते करतांय विशेष मधुर छे.

वादनकुशळ नर वा नारीद्वारा रात्रीना छेल्ले पहोरे वागती चडती उतरती मूर्छनावाळी एवी वैकालिक वीणानो जे मधुर अवाज संभळाय छे तेवो अवाज, ते तृणोनो अने मणिओनो छे ?

गौतम ! ना, एवो पण नथी–ए करतां सविशेष मधुर छे

भद्रशाळ नंदन सोमनस के पांडकवनमां अथवा हिमालय मलय के मंदर गिरिनी गुफाओमां रहेता, गानताननी सहेल करवा साथे मळेला किन्नरो किंपुरुषो महोरगो अने गांधर्वोनो जेवो विशुद्ध मधुर गीतध्वनि गुंजे छे, तेवो ध्वनि परस्पर अथडाता ए मणिओनो अने तृणोनो छे ?

गौतम ! हा, ते मणिओनो अने तृणोनो एवो मधुरातिमधुर ध्वनि नीकळे छे.

[१११] वळी, ए वनखंडोमां ठेकठेकाणे नानी मोटी नानामां नानी अने मोटामां मोटी एवी अनेक चोरस वावो, गोळ पुष्करिणीओ, सीधी वहेती नदीओ, वांकी चुंकी वहेती नदीओ अने फूलोथी ढांकेलां एवां हारबंध आवेलां अनेक सरोवरो तथा हारबंध शोभता अनेक कूवाओ आवेला छे. ए बधांना कांठा रजतमय, कांठाना भागो खाडाखडिया विनाना एकसरखा छे एमनी अंदरना पाणाओ वज्रमय अने वेळु सुवर्ण–रजतमय छे

वावो वगेरे ए बधां जलाशयो सुंवाळा सोनाना तळियावाळां छे, एमां ऊतरवानां अने नीकळवानां साधनो सारी रीते गोठवाएलां छे, एमना घाटो अनेक प्रकारना मणिओथी जडेला छे चार खूणावाळां ए जलाशयोमां पाणी अगाध अने अतिशीतळ छे

जेमनी उपर भमरा-भमरीओ गुंजी रह्यां छे एवां उत्पल, कुमुद, नलिन, सुभग, सौगंधिक, पौंडरीक, सो अने हजार पांखडीवाळां खीलेलां कमळोथी अने विसपत्र तथा मृणालना दंडोथी ए बधां जलाशयो ढंकाएलां छे. जेमनी अंदर भमता मत्स्यो अने काचवाओ कल्लोल करी रह्या छे अने जेमने कांठे अनेक प्रकारनां पक्षीओ विचरी रह्यां छे एवां ए स्वच्छातिस्वच्छ जळथी छलकतां जलाशयो ते घनखंडोमां शोभी रह्यां छे.

ए जलाशयोमां केटलांकमां आसव जेवां पाणी छे, केटलांकमां शेरडीना रस जेवां, केटलांकमां घी जेवां, केटलांकमां दूध जेवां, केटलांकमां खारा ऊस जेवां अने केटलांकमां सामान्य पाणी जेवां पाणी भरेलां छे

ते वावो अने कूवा वगेरे प्रत्येक जलाशयोनी फरतां चारे दिशामां त्रण त्रण सोपानो छे, ते सोपानो उपर तोरणो धजाओ अने छत्रो वगेरे शोभी रह्यां छे.

[११२] तेमां नानी नानी वावो वगेरेनी अने कूवानी हारोमां वच्चे वच्चे घणा उत्पातपर्वतो नियतिपर्वतो जगतीपर्वतो दारुपर्वतो आवेला छे तथा कोइ ऊंचा के नीचा एवा दकमंडपो दकमालको अने दकमंचो ऊभा करेला छे.

वळी त्यां मनुष्योने हिंचवालायक हिंचका जेवा केटलाक हिंचकाओ गोठवाएला छे, तेम पक्षीओने झूलवालायक झूला जेवा केटलाये झूलाओ झूली रह्या छे. ए बधा हिंचकाओ अने झूलाओ सर्वरत्नमय होवाथी अधिकाधिक प्रकाशमान अने मनोहर छे

[११३] वच्चे वच्चे आवेला ते उत्पातपर्वतो वगेरे पर्वतो उपर अने हिंचकाओ उपर सर्वरत्नमय एवां अनेक हंसासनो, क्रौंचासनो, गरुडासनो, उन्नत ढळतां अने लांबां आसनो, पक्ष्यासनो, भद्रासनो, वृषभासनो, सिंहासनो, पद्मासनो अने स्वस्तिकासनो सजाएलां छे.

[११४] वळी, ते वनखंडोमां सर्वरत्नमय झळहळायमान एवां आलिगृहो, मालिगृहो, कदलीगृहो, लतागृहो, आसनगृहो, प्रेक्षणगृहो,

आसव जेवां अने बीजा प्रकारनां पाणी

वनखंडोमां क्रीडानां अनेक साधनो अने देवोनी क्रीडा

॥७८॥

चार प्रासादो अने उपकारिकालयन

मज्जनगृहो, मंडनगृहो, प्रसाधनगृहो, गर्भगृहो, मोहनगृहो, शालागृहो, जाळीवाळां गृहो, चित्रगृहो, कुसुमगृहो, गंधगृहो, आदर्शाभवनो शोभी रह्यां छे अने ते प्रत्येक गृहमां पूर्वे कह्या प्रमाणे हंसासनो वगेरे आराम आपनारां आसनो मांडेलां छे.

[११५] वळी, ते वनखंडोमां ज्यां त्यां सर्वरत्नमय एवा झळां झळां थता जाइनी वेलोना मंडपो, जूइनी वेलोना मंडपो, मल्लिका, नवमालिका, वासंती, दधिवासुका, सूरिल्लि-सूरजमुखी, नागरवेल, नाग, अतिमुक्तक, अप्फोया अने मालुकानी लताओना मंडपो फेलापला छे.

[११६] ते प्रत्येक मंडपमां हंस अने गरुड वगेरेना घाटना, ऊंचा ढळता अने लांबा एवा केटलाय सर्वरत्नमय शिलापट्टको ढाळेला छे ते बधाय शिलापट्टको माखण जेवा सुंवाळा कोमळ अने देदीप्यमान छे.

हे चिरंजीव श्रमण ! ते स्थळे अनेक देवो अने देवीओ बेसे छे, सूए छे, विहरे छे, हसे छे, रमे छे, रतिक्रीडा करे छे अने ए रीते पोते पूर्वे उपार्जेलां शुभ कल्याणमय मंगलरूप पुण्यकर्मोना फलविपाकोने भोगवता आनंदपूर्वक विचरे छे.

[११७] वळी, ते वनखंडोनी वच्चोवच्च पांचसें योजन ऊंचा अने अढीसो योजन पहोळा एवा चार मोटा प्रासादो शोभी रह्या छे. ए प्रासादोनां भोंयतळियां तद्दन सपाट छे अने तेमां चंदरवा सिंहासनो वगेरे उपकरणो यथास्थाने गोठवापलां छे.

तेमांना एक प्रासादमां अशोकदेव, बीजामां सप्तपर्णदेव, त्रीजामां चंपकदेव अने चोथामां चूतकदेव एम चार देवोनो निवास छे- ए चारे देवो मोटी दिव्य समृद्धिवाळा अने पल्योपमप्रमाण आयुष्यवाळा छे.

[११८] अतिशय सुंदर एवा ते सूर्याभनामना देवविमाननो अंदरनो भूभाग तद्दन सपाट अने अत्यंत रमणीय छे त्यां पण घणा देवो अने देवीओ फरे छे, बेसे छे, हसे छे, रतिक्रीडा करे छे अने आनंद माणता विचरे छे.

ते विमानना ए भूभागनी वच्चोवच्च लाख योजन लांबुं पहोळुं एवुं एक मोटुं उपकारिकालयन छे, तेनो घेरावो त्रण लाख सोळ हजार बसें सत्तावीस योजन, त्रण कोश, अठ्ठावीससें धनुष, तेर आंगळ अने उपर ओछुं वधतुं अडधुं आंगळ छे. ए एवुं

मोटुं लयन आखुंय सुवर्णमय छे अने अत्यन्त मनोहरमां मनोहर छे

[११९] ए लयननी चारे बाजु अडधुं योजन ऊंची अने पांचसें धनुष पहोळी एवी एक मोटी पद्मवरवेदिका छे अने एटलाज मापनो एक मोटो वनखड ते लयनने घेरी रहेलो छे.

ते वेदिकाना थांभला, पाटियां, खीलीओ, खीलीओनी टोपीओ, वांसडा, वांसडा उपरनां नळियां, पाटीओ, मोभीयां, ढांकणां अने तेनां जाळियां, गोंखला वगेरे ए बधुं विविध रत्नमय मणिमय वज्रमय अने सुवर्णरजतमय छे. एनां केटलांक जाळियां नानी नानी टोकरीओवाळां, मोतीना पडदावाळां अने मोटी मोटी लटकती माळावाळां छे.

ए वेदिकामां ज्यां त्यां सर्वरत्नमय घोडानी वृषभनी अने सिंह वगेरेनी जोडो शोभी रही छे.

हे भंते! ए वेदिकाने पद्मवरवेदिका कहेवानुं शुं कारण?

गौतम! ए वेदिकाना थांभला, पाटीयां, खीलीओ, खीलीओनी टोपीओ, मोभ अने जाळियां वगेरे दरेक भागमां, चोमासाना पडता पाणीने रोकी शके एवां छत्राकार अनेक प्रकारनां सर्वरत्नमय सुंदर उत्पलो, कुमुदो, नलिनो, पुंडरीको वगेरे नाना प्रकारनां खीलेलां पद्मो शोभी रह्यां छे, माटे हे चिरंजीव श्रमण! ए वेदिकाने पद्मवरवेरिका कहेली छे.

हे भगवन्! उपर वर्णवेली ए पद्मवरवेदिका शुं शाश्वत छे के अशाश्वत छे?

गौतम! द्रव्यार्थिक नयनी दृष्टिए तो ए वेदिका शाश्वत छे, पण हे गौतम! ते वेदिकाना वर्णो गंधो, रसो अने स्पर्शोनी दृष्टिए जोतां अर्थात् वर्णादि पर्यायोनी अपेक्षाए तो ते वेदिका अशाश्वत छे, माटे तेने शाश्वत पण कही छे अने अशाश्वत पण कही छे.

हे भगवन्! उपर वर्णवेली वेदिका, शुं त्यां कायम रहेवानी छे?

हे गौतम! ए वेदिका, त्यां कोई दिवस न हती, नथी के नहि हशे एम तो न कहेवाय, पण ए, त्यां हमेशांने माटे हती, छे अने हशे एम कहेवाय, माटे ते त्यां ध्रुव, शाश्वत, अव्यय, नित्य अने सदा अवस्थित छे एम मानवुं जोइए.

[१२०] उपकारिकालयननी फरतो जे वनखंड वर्णवेलो छे तेनो चक्रवालविष्कंभ बे योजनथी कांइक ओछो छे अने तेनो घेरावो तो ते लयनना जेटलो ज छे. ए वनखंडमां पण अनेक देवो अने देवीओ फरे छे, हसे छे, बेसे छे, सूए छे अने रतिक्रीडा करतां विहरे छे.

[१२१] ए लयननी फरतां चारे दिशामां चार चार सोपानो गोठवेलां छे ए सोपानो उपर तोरणो ध्वजो अने छत्रो वगेरे घणा मनहर पदार्थो झूली रह्या छे.

लयननुं भोंयतळ, मणि रत्न अने वज्र वगेरे बहुमूल्य धातुओथी बांधेलुं छे अने वळी ते तद्दन सपाट अने चारे बाजु झगारा मारतुं शोभी रह्युं छे.

[१२२] लयनना ते समतळ भूभागनी वच्चोवच्च पांचसें योजन उंचो अने अढीसो योजन पहोळो एवो एक मोटो मुख्य प्रासाद आवेलो छे.

ते मुख्य प्रासादनी फरता अने तेना करतां ऊंचाई अने पहोळाईमां अडधा एवा बीजा चार प्रासादो आवी रहेला छे.

वळी, ए आजुबाजु आवेला चार प्रासादोनी आसपास तेमने वींटळाईने तेमना करतां ऊंचाइए अने पहोळाइए अडधा एवा बीजा चार महालयो सोहामणा आवेला छे.

वळी, सोहामणा ए चार महालयोने घेरीने ऊभेला पण मापमां तेना करतां अडधा एवा बीजा चार महालयो त्यां दीपी रहेला छे. आ छेल्ला चार महालयोनी ऊंचाइ ६२॥ योजन अने पहोळाइ ३१ योजन उपर एक कोश छे

ए बधाय प्रासादोनी अंदर चंदरवा सिंहासन वगेरे शोभनिक उपकरणो गोठवापलां छे अने उपर धजाओ तोरणो अने आठआठ मंगळो झूली रह्यां छे.

[१२३] एम अनेक प्रासादोथी वींटापला ते मूळ प्रासादथी उत्तरपूर्वमां अर्थात् ईशानखूणामां एक मोटी सुधर्मा सभा आवेली छे एनी लंबाइ सो योजन, पहोळाइ पचास योजन अने उंचाइ बहोंतेर योजन छे. जेमनी उपर अनेक प्रकारनां तोरणो पूतळीओ अने

स्तूपो अने तेमनी सामेनी मणिपीठिका उपर चार जिन प्रतिमा

अप्सरानां ढुंडो कोरेलां छे एवा अनेक मनहर स्तंभो उपर ए सभा रचापली छे. ए सभाने पूर्वमां दक्षिणमां अने उत्तरमां एम त्रण द्वारो मूकेला छे. ते एक एक द्वार सोळ सोळ योजन उंचुं अने आठ योजन पहोळुं छे, तेम ते दरेकनो प्रवेशमार्ग पण तेटला ज मापनो छे ए त्रणे द्वारो धोळां दुध जेवां, सुवर्णमय स्तूपवाळां अने उपर आठ आठ मंगळोथी विराजित छे.

ते प्रत्येक द्वारनी सामे एक एक मुख्य मंडप छे ए मंडपनी लंबाइ सो योजन, पहोळाइ पचास योजन अने ऊंचाई सोळ योजन करतां वधारे छे.

ए मंडपने पण पूर्वमां दक्षिणमां अने उत्तरमां एम त्रण बारसाख पाडेलां छे ते प्रत्येक बारसाख ऊंचाईमां सोळ योजन अने पहोळाईमां आठ योजन छे अने ते दरेकनो प्रवेशमार्ग पण तेटला ज मापनो छे ते बधां बारणांओ चंदरवा वगेरेथी सुशोभित छे अने तेमनी उपर धजाओ अने आठ आठ मंगलो फरफरी रह्यां छे.

वळी, ते प्रत्येक मुखमंडपनी सामे तेमनी जेवा ज सुंदर प्रेक्षागृहमंडपो आवेला छे ॥७९॥

[१२४] ते एक एक प्रेक्षागृहमंडपना समतळ भूभागनी वच्चे एक मोटो वज्रमय अखाडो शोभी रह्यो छे.

ते एक एक अखाडानी वच्चोवच्च आठ योजन लांबी पहोळी, चार योजन जाडी अने नाना प्रकारनां मणिरत्नोथी बांधेली एवी एक मोटी मणिपीठिका शोभी रही छे, ए मणिपीठिका उपर सिंहासन वगेरे आरामनी सामग्री गोठवी राखेली छे.

वळी, ज्यां प्रेक्षागृहमंडपो वर्णवेला छे त्यां ते प्रत्येक मंडपनी सामे पण सोळ योजन लांबी पहोळी अने आठ योजन जाडी एवी सुंदर मणिपीठिकाओ ढाळेली छे.

ते दरेक पीठिकानी उपर सोळ योजन लांबा पहोळा अने ते करतां ऊंचाइमां कांइक वधारे ऊंचा तथा सर्व प्रकारनां रत्नोथी चणेला धोळा शंख जेवा ऊजळा एवा अनेक स्तूपो बांधेला छे. ए दरेक स्तूपो उपर धजाओ तोरणो अने आठ आठ मंगळो छाजी रह्यां छे.

चैत्यवृक्षोनुं वर्णन

तथा, ए एक एक स्तूपनी फरती चारे दिशामां वळी बीजी मणिपीठिकाओ आवेली छे. ते पीठिकाओनी लंबाई पहोळाई आठ योजन अने जाडाई चार योजन छे. ए पीठिकाओ अनेक प्रकारना मणिओथी निर्मेली अतिशय रमणीय छे, एमनी उपर अने ए स्तूपोनी बराबर सामे चार जिनप्रतिमाओ विराजेली छे, ए प्रतिमाओ जिननी ऊंचाइए ऊंची अने पर्यंकासने बेठेली छे. तेमांनी एक ऋसभनी, बीजी वर्धमाननी, त्रीजी चंद्राननी अने चोथी वारिषेणनी प्रतिमा छे.

[१२५] वळी, ते स्तूपोनी सामे सोळ योजन लांबी पहोळी अने आठ योजन जाडी एवी सर्वमणिमय बीजी मणिपीठिकाओ निर्मेली छे. ते दरेक पीठिका उपर एक एक चैत्यवृक्ष आवेलुं छे.

ए बधां चैत्यवृक्षो आठ योजन ऊंचां अने [८१]अडधुं योजन ऊंडां छे बे योजननुं थड अडधुं योजन पहोळुं छे. थडथी नीकळी ऊंची गएली वचली शाखा छ योजन ऊंची छे. एम ए चैत्यवृक्षोनो सर्वांग लंबाई पहोळाई एकंदर आठ योजन झाझेरी छे.

ए वृक्षोनां मूळ वज्रमय, शाखा रूपेरी, कंदो रिष्टरत्नमय, स्कंधो वैडूर्यना, नानी नानी शाखाओ मणिमय रत्नमय पांदडां वैडू-

---

८१ आगमोदयसमितिवाळा पुस्तकमा (पृ० ८७) "ते णं चेइयरुक्खा अट्ठ जोयणाइं उड्ढं उच्चत्तेणं, अट्ठ जोयणाइं उव्वेहेण" आवो पाठ छे. ते पाठ प्रमाणे "ते चैत्यवृक्षो ऊचाईमां आठ योजन छे अने ऊंडाईमा आठ योजन छे" आवो अर्थ थाय. त्यारे आ मूळ पाठनी टीकामां तद्दन जुदो ज अर्थ छे. ("प्रत्येक चैत्यवृक्षा अष्टौ योजनानि ऊर्ध्वम्–उच्चैस्त्वेन, अर्धयोजनम् उद्वेधेन–उण्डत्वेन" समिति आवृत्ति पृ०९०) आ विवरणमा "ऊंडाई अडधु योजन" बतावी छे.

मने लागे छे के प्रस्तुत विवरणनु प्रामाण्य जोतां समितिवाळी आवृत्तिमा 'अद्धजोयणं' पाठ होवो जोइए पण संशोधकनी असावधानीथी 'अट्ठ जोयणाइं' थई गयुं छे, आ पाठमा 'अट्ठ' ने बदले 'अद्ध' वांचवाथी काम सरी जशे एम कोइ न धारे, कारण के 'जोयणाइं' ए बहुवचननी संगति थइ शके एम नथी. 'अडधा योजन' माटे 'जोयण' एम एकवचन ज घटमान थई शके.

येनां, डींटियां सुवर्णमय, अंकुराओ जांबूनदमय अने फूलफलभर विचित्र मणिरत्नमय सुरभि छे ए फळोनो रस अमृतसम मधुरो छे. ए रीते सरस छाया, प्रभा, शोभा अने प्रकाशवाळां ए चैत्यवृक्षो विशेषमां विशेष प्रासादिक छे.

ए वृक्षो उपर आठ आठ मंगळो ध्वजो अने छत्रो वगेरे शोभी रहेलां छे अने एमनी-ए वृक्षोनी-फरता शिरीष वगेरे बीजां पण अनेक वृक्षो आवेलां छे.

ए चैत्यवृक्षोनी आगळ आठ योजन लांबी पहोळी अने चार योजन जाडी एवी सर्वमणिमय बीजी अनेक मणिपीठिकाओ आवेली छे.

ए दरेक पीठिकाओ उपर साठ योजन ऊंचा अर्ध क्रोश उंडा अने अर्ध क्रोश पहोळा[८२] एवा विशिष्ट प्रकारना वज्रमय अनेक महेन्द्रध्वजो खोडेला छे, तेमनी उपर पवनथी हालती नानी नानी अनेक पताकाओ, आठ आठ मंगळो, ध्वजो अने छत्रो वगेरे बधुं लहेरी रहेलुं छे.

---

८२ अहीं पण समितिवाळी आवृत्तिमां मूळ पाठ अने टीकानो पाठ बन्ने परस्पर असगत छपाएला छे ज्यारे मूळमां 'जोयणं' छे त्यारे टीकामां "अर्धक्रोशम्" छे.

मारी पासेनी भावनगरवाळी प्रति सिवाय बाकीनी बधीय प्रतिओमां पण समितिनी आवृत्ति जेवो ज पाठ छे. मात्र एक भावनगरवाळी प्रतिमां ज 'जोयणं'ने बदले 'अद्धकोस' पाठ छे अने ए 'अद्धकोस' पाठ पण भावनगरवाळी प्रतिमा पहेलेथी न हतो परंतु कोईए सुधारीने बनावेलो छे अर्थात् भावनगरवाळी प्रतिमां पहेलां 'जोयण' पाठ ज हतो पण पछी तेने बदले कोईए विवरणनु प्रामाण्य ध्यानमां राखी 'अद्धकोस' करेलो छे अने अहीं में तो ए सुधारेला पाठने ज मान्य राख्यो छे.

ते दरेक महेन्द्रध्वजोनी आगळ सो योजन लांबी पचास योजन पहोळी अने दस योजन उंडी[८३] एवो नन्दा नामनी पुष्करिणीओ आवेली छे एनां पाणी सामान्य पाणी जेवां मीठा रसवाळां छे.

ए प्रत्येक पुष्करिणीओनी चारे कोर पूर्वे वर्णवेलां पद्मवरवेदिकाओ अने वनखंडो आवेलां छे अने पुष्करिणीओमां त्रण बाजु सरस सोपानो गोठवेलां छे तथा उपर बेसाडेलां तोरणो, ध्वजो, आठ आठ मंगळो अने छत्रो वगेरे त्यां ठेकठेकाणे दीपी रहेलां छे

ए सुधर्मासभामां पूर्वे अने पश्चिममां सोळ सोळ हजार तथा दक्षिण अने उत्तरमां आठ आठ हजार पेढलीओ बांधेली छे ए पेढलीओ उपरनां पाटीयां सुवर्ण रजतमय अने ते उपर जडेला नागदन्तो वज्रमय छे ते नागदन्तोमां काळा सूतरनी माळाओ लटके छे.

वळी, ए सुधर्मासभामां ए पेढलीओनी जेवी ज अने जे उपर सुखे सूई शकाय एवी सुकोमळ सुंदर शय्याओ बीछापली छे, एवी अडताळीश हजार गोमानसीओ आवेली छे. ते गोमानसीओनी पासे ज जडेला नागदन्तोमां टांगेलां रजतमय शिंकां उपर वैडूर्यमय धूपघडीओ मूकेली छे अने ए धूपघडीओमांथी नीकळतो सुगन्धमय काळा अगरनो धूप चारे कोर महेकी रह्यो छे.

[१२६] सभानी अन्दरना भागनुं भोंतळ तद्दन सपाट अने विविध मणिओथी बांधेलुं छे अने ते उपर सिंहासन चन्दरवा वगेरे सामग्री सरस रीते सजेली छे

वळी, ए भोंतळनी वच्चोवच्च सोळ योजन लांबी पहोळी अने आठ योजन जाडी एवी सर्वमणिमय एक मोटी मणिपीठिका

---

८३ अहीं पण मूळ पाठ अने विवरणमां मोटो भेद छे. मूळ पाठ 'दस जोयणाइं' छे त्यारे विवरणनो पाठ 'द्वासप्ततियोजनानि' छे अर्थात् मूळमां 'दस योजन' लखेलां छे त्यारे विवरणमां 'बहोंतेर योजन' लखेलां छे. आ स्थाने पण मात्र एक भावनगरनी प्रतिमां विवरणमां 'दश योजनानि' पाठ आवे छे अने तेने ज अहीं राख्यो छे, आम करवाथी ज मूळ अने विवरणनो विसवाद मटे छे. समितिवाळी आवृत्तिमा तो ए विसंवाद कायम रहेलो छे. वळी विवरणमां जे 'बहोंतेर योजन' लखेलु छे ते पण विचारणीय तो खरुज ने ?

चैत्यस्तंभनी वच्चेना शिकामां श्री जिनना साथळनां हाडकां

बांधेली छे. तेनी उपर साठ योजन ऊंचो, योजन ऊंडो अने योजन पहोळो तथा अडताळीश खूणावाळो , अडताळीश धारवाळो–अडताळीश पासावाळो एवो महेन्द्रध्वजनी जेवो एक मोटो माणवक चैत्यस्तम्भ आवेलो छे. एनी उपर आठ आठ मगळो धजाओ अने छत्रो वगेरे खोडी राखेलां छे.

ए चैत्यस्तम्भनी वच्चेना छत्रीश योजन[८४] जेटला भागमां सोना रूपानां पाटियां जडेलां छे ते पाटियां उपर बेसाडेला वज्रमय नागदन्तोमां रूपेरी शिकां टांगी राख्यां छे ते शिकां उपर वज्रमय गोळ गोळ दाबडीओ गोठवी राखेली छे अने ते दाबडीओमां जिनना सक्थिओ–साथळनां हाडकांओ मूकी राखेलां छे.

सूर्याभदेवने अने बीजां पण अनेक देव देवीओने जिनना ते सक्थिओ अर्चनीय छे वन्दनीय छे अने पर्युपासनीय छे.

[१२७] आठ मंगळ अने चामर वगेरेथी सुशोभित ते माणवक चैत्यस्तम्भनी पूर्वे आठ योजन लांबी पहोळी अने चार योजन जाडी एवी सर्वमणिमय एक मोटी मणिपीठिका आवेली छे अने तेना उपर एक मोटुं सिंहासन ढाळेलुं छे

वळी, ते चैत्यस्तम्भनी पश्चिमे, पूर्वे आवेली एवी अने एवडी ज बीजी एक मणिपीठिका आवेली छे, तेना उपर एक मोटुं अतिशय रमणीय देवशयनीय गोठवेलुं छे.

ए देवशयनीयना पडवायो सोनाना, पाया मणिना अने पायाना कांगरां सोनानां छे. एनी ईसो अने उपळां वज्रनां, वाण विविधमणिमय, तळाई रूपेरी अने ओशीकां सुवर्णमय छे.

ते देवशयनीय बन्ने बाजुथी ऊंचुं अने वच्चेथी ढळतुं एवुं गम्भीर छे, ए मेलुं न थाय एटला माटे एना उपर रातुं वस्त्र ढांकेलुं

८४ अहीं आगमोदयसमितिवाळी आवृत्तिमां मूळमा 'बत्तीसाए जोयणेसु'–छपाएलु छे पण ते पाठ, विवरण जोतां खोटो जणाय छे. विवरणमां 'षट्त्रिंशति योजनेषु' (पृ० ९२) पाठ छे माटे मूळमां 'छत्तीसाए जोयणेसु' ज पाठ होवो उचित छे.

छे अने ए माखण जेवुं सुंवाळुं, कोमळ, अतिसुवासित, मनोहर छे.

सूर्याभनो शस्त्र भंडार सिद्धायतनमां एकसो-आठ जिनप्रतिमाओ

[१२८] एनी उत्तरपूर्वे एटले ईशान खूणामां आठ योजन लांबी पहोळी अने चार योजन जाडी एवी सर्वमणिमय एक मोटी मणिपीठिका छे. तेनी उपर साठ योजन ऊंचो एक योजन पहोळो एवो एक क्षुल्लक-नानो महेन्द्रध्वज रोपेलो छे, एना उपर आठ आठ मंगळो अने ध्वजो वगेरे शोभी रह्यां छे.

ए नाना महेन्द्रध्वजथी पश्चिमे चोप्पाळ नामनो एक मोटो हथियारोनो वज्रमय भण्डार छे, एमां उत्तम प्रहरणो-परिघो तरवारो गदाओ अने धनुष वगेरे अस्त्रशस्त्रो संघरी राख्यां छे. ए भण्डारमां साचवी राखेलां सूर्याभदेवनां ए बधां अस्त्रशस्त्रो ऊजळां पाणीवाळां अणीदार अने विशेषमां विशेष तेजवाळां छे

[१२९] सुधर्मा सभानी उपर आठ आठ मंगळो छत्रो अने धजाओ वगेरे शोभाजनक पदार्थो दीपी रह्यां छे. ए सभानी उत्तरपूर्वे एटले ईशान खूणामां सो योजन लांबुं पचास योजन पहोळुं अने बहोंतेर योजन ऊंचुं एवुं एक मोटुं सिद्धायतन आवेलुं छे. ए सिद्धायतननी बधी शोभा सुधर्मासभानी जेवी समजवानी छे.

ए सिद्धायतननी वच्चोवच्च सोळ योजन लांबी पहोळी आठ योजन जाडी एवी एक मोटी मणिपीठिका आवेली छे. ए पीठिकानो उपर सोळ योजन लांबो पहोळो अने ते करतां थोडो वधारे ऊंचो एवो सर्वरत्नमय एक मोटो देवच्छंदक गोठवेलो छे. तेना उपर जिननी ऊंचाईए ऊंचो एवी एकसो ने आठ जिनप्रतिमाओ विराजेली छे.

ए प्रतिमाओना हाथपगनां तळियां तपनीयमय, नखो वच्चे लोहिताक्षरत्न जडेल अंकरत्नना, जांघो, जानुओ, ऊरुओ अने देहलता कनकमय, नाभी तपनीयमय, रोमराई रिष्टरत्नमय, चुचुको अने श्रीवृक्ष तपनीयमय, बन्ने ओष्ठो प्रवालमय, दांतो स्फटिकमय, जीभ अने ताळवुं तपनीयमय, नासिका वच्चे लोहिताक्षरत्ने जडेल कनकमय, आंखो वच्चे लोहिताक्षरत्ने जडेल अंकरत्नमय, कीकीओ आंखनी पांपणो अने भवांओ रिष्टरत्नमय, बन्ने कपोलो कान अने भालपट्ट कनकमय, माथानी घडीओ वज्रमय, माथाना वाळ उगवानी

नागनी अने भूतनी प्रतिमाओ

चामडी तपनीयमय अने माथा उपरना वाळ रिष्टरत्नमय छे.

[१३०] ते दरेक जिनप्रतिमाओनी पाछळ, माळावाळां धोळां छत्रो धरी राखनारी छत्रधारक प्रतिमाओ छे, बन्ने बाजुए मणिकनकमय चामरने वींझती चामरधारक प्रतिमाओ छे.

वळी ते दरेक जिनप्रतिमाओनी आगळ सर्वरत्नमय एवी बे बे ८५नागप्रतिमाओ, भूतप्रतिमाओ, यक्षप्रतिमाओ अने कुंडधारक प्रतिमाओ आवेली छे. ॥८५॥

ए उपरान्त एकसो आठ एकसो आठ घंटो, कळशो, भृङ्गारो, आरिसाओ, थाळो, पात्रीओ, सुप्रतिष्ठो, मनोगुलिकाओ, रत्नकरंडीयाओ, हयकंठाओ गजकंठाओ अने वृषभकंठाओ वगेरे अनेक पदार्थो त्यां ए प्रत्येक जिनप्रतिमानी आगळ गोठवेला छे.

वळी फूल, माळा, चूर्ण, गन्ध, वस्त्र, आभरण, सरसव अने मोरपींछ वगेरे उपकरणोनी एकसो आठ एकसो आठ चंगेरीओ, त्यां प्रतिमाओ आगळ मूकी राखेली छे.

---

८५ सूर्याभदेवना विमानमां तो बधा वैमानिक देवो रहे छे, त्यां नागो अने भूतोनो निवास नथी तेम संबंध पण नथी, छतां ए विमानमां नागो अने भूतोनी प्रतिमाओ शा माटे स्थापेली हशे? स्थापेली तो ठीक पण एमने जिनप्रतिमाओनी आगळ शा माटे मूकवामां आवी हशे? नागोनी अने भूतोनी प्राचीन पूजापद्धतिनी आमां असर तो नहि होय? लोको नागोथी अने भूतोथी भय पामता अने तेमाथी पोतानुं रक्षण मेळववा तेओए नागो अने भूतोनी पूजा प्रवर्तावेली ए वात प्रसिद्ध छे; त्यारे शुं सूर्याभदेव पण नागोनी अने भूतोनी पूजा करतो हशे खरो? एने पण एमनाथी भय हशे के केम? नाग अने भूत ए बन्ने नामो एक बळवान अने सुप्रसिद्ध वंशने पण सूचवे छे, तो शुं अहीं वपराएला ते बन्ने शब्दो ए वंशना सूचक छे के नागदेवता वा भूत प्रेत व्यंतरना सूचक छे, ए बाबत पण विचारवा जेवी तो खरीज.

सूर्याभदेवना धर्मपुस्तकनुं वर्णन

वळी, फूल, माळा, गन्ध अने मोरपींछ वगेरेनां तेटलां ज पटलको त्यां स्थापी राखेलां छे. ए उपरान्त एकसो आठ एकसो आठ सिंहासनो, छत्रो, चामरो, तेलना डवाओ, कुठना डवाओ, सुगन्धी पत्र, सुगन्धी च्चूवा, तगर, एलची, हरताळ, हिंगळोक, मणसिल अने आजणना डवाओ, ए बधुं त्यां यथाक्रमे गोठवी राखेलुं छे ए डवाओमां तेल वगेरे जे पदार्थो भरेला छे ते अत्यन्त निर्मळ सुगन्धी अने उत्तम जातना छे

वळी, ए सिद्धायतनमां सुगंधी धूपथी मघमघतां एकसो ने आठ धूपधाणां राखेलां छे अने ए आयतनोनी उपर जडेला आठ आठ मंगळो धजाओ अने छत्रो वगेरे एमनी शोभामां वधारो करी रह्यां छे.

[१३१] ते सिद्धायतननी उत्तरपूर्वे एटले ईशान खूणामां सुधर्मासभा जेवी एक मोटी उपपातसभा आवेली छे ए सभानी उत्तरपूर्वे सो योजन लांबो पचास योजन पहोळो अने दस योजन ऊंडो एवो एक मोटो स्वच्छ पाणीनो धरो भरेलो छे. ते धरानी उत्तरपूर्वे सूर्याभदेवनी एक मोटी अभिषेकसभा आवेली छे ए सभामां अभिषेक करवानी बधी सामग्री भरेली छे ते अभिषेकसभानी उत्तरपूर्वे सूर्याभदेवना अलंकारोथी भरेली एवी एक मोटी अलंकारसभा आवेली छे. ए सभानी उत्तरपूर्वे एक मोटी व्यवसायसभानुं स्थान आवेलुं छे, तेमां सिंहासन वगेरे बधां उपकरणो व्यवस्थित रीते गोठवेलां छे.

ए व्यवसायसभामां सूर्याभदेवनुं एक मोटुं पुस्तकरत्न मूकेलुं छे. ते पुस्तकनां [८६]पानां रत्ननां, पानां उपर राखवानी कांबीओ रिष्ट-

---

८६ स्वर्गीय बधा पदार्थो रत्न अने मणि वगेरेना वर्णवेला छे तेम त्यांनुं पुस्तक पण रत्नमय छे एम मूळकार कहे छे. पुस्तकनी रत्नमयता पाषाण उपर लखवाना युगनी यादी आपे छे. लखवा माटे पांदडां के कागळो ज्यां सुधी नहि शोधायां हतां ते पहेलां पुस्तको पत्थर के माटीनी इंटो उपर लखाता ए हकीकत इतिहासप्रसिद्ध छे. आ स्वर्गीय पुस्तक पण पाषाणमय (रत्नमय-रत्न पण एक जातनो पाषाण छे) होईने पत्थर उपर लखाएलुं होय ते स्वाभाविक छे. मूळकार, पुस्तक तेनी शाही लेखण खडियो अक्षरो अने खडियाना ढाकण सुद्धानुं अद्भुत

रत्ननी, पानामां परोवेलो दोरो तपनीयनो, दोरानी गांठो विविधमणिमय, खडियो वैडूर्यनो, खडियानुं ढांकणुं रिष्टरत्ननुं, तेनी सांकळ तपनीयनी, मषी-शाही रिष्टरत्ननी, लेखण वज्रनी अने अक्षरो रिष्टरत्नमय छे. एवा रत्नमय पुस्तकमांनुं बधुं लखाण धर्मसंबंधी छे अथवा बीजी रीते कहीए तो ए पुस्तक एक धार्मिक शास्त्र छे.

ते व्यवसायसभानी उत्तरपूर्वे आगळ वर्णवेला धरा जेवडी लांबी पहोळी अने ऊंडी एवी एक मोटी नंदा पुष्करिणी आवेली छे. तेनी उत्तरपूर्वे आठ योजन लांबु पहोळुं अने चार योजन जाडुं एवुं सर्व रत्नमय अतिशय मनोहर एक मोटुं बलिपीठ आवेलुं छे.

ए रीते वर्णवेलुं सूर्याभदेवनुं वसतिस्थान वधारेमां वधारे मनोहर अने सर्व प्रकारे अतिशय आकर्षक छे.

[१३२] ते काले ते समये ताजा अवतरेला सूर्याभदेवे आहार शरीर इंद्रिय श्वासोच्छ्वास अने भाषा मननी पर्याप्तिद्वारा शरीरनी

वर्णन करे छे, पण तेओ पुस्तकना नाम बाबत कशो उल्लेख करता नथी, तेम तेना मूळकर्ता, टीकाकार, तेमां आवेला विषयोनी चर्चा वगेरे पुस्तक संबधी महत्त्वनी बाबत माटे एक आंकडो पण पाडता नथी. जे अंगो उपांगो के पूर्वो वगेरे जैनशास्त्रो प्रसिद्ध छे तेना करता ए पुस्तक शुं कोई जुदा प्रकारनुं हशे ? मूळमां फक्त एटलुं लखेलुं छे के ए पुस्तकमां धर्म संबंधी लखाण छे, पण ते लखाण कया धर्मने लगतुं छे, कोणे लखेलु छे अने शा उद्देशथी लखेलुं छे एवी कोई माहिती मूळकारे आपी नथी बीजी वाचनामा आ पुस्तकने 'धम्मिए सत्थे' अर्थात् 'धार्मिक शास्त्र' तरीके जणावेलुं छे. आ स्थळे समितिवाळा पुस्तकमा मूळ अने टीकामां पाठभेद छे जे पाठ टीकामा बीजी वाचनानो कहेलो छे तेने संपादके अहीं मूळमां छापेलो छे अने जे पाठने टीकाकारे प्रस्तुत मूळनो मूळपाठ जणावेलो छे ते पाठ मूळमां देखातो नथी. आवा प्रकारना मूळगत अने टीकागत पाठभेदो आ सूत्रमा तेम ज अन्य सूत्रोमां अनेक स्थळे रहेला छे तेथी विचारक अभ्यासी शुद्ध अने प्राचीन पाठने तारवी काढी अर्थ मेळववा प्रयत्न करे तो ज मूळना भावने पामी शके, नहि तो भुलावामा पडे तेवु छे.

सामानिक सभाना देवोनी सूर्याभदेवने भलामण

सर्वांगपूर्णता मेळवी लीधी पछी ए देव एवा विचारमां पड्यो के-अहीं आवीने मारुं प्रथम कर्तव्य शुं छे? हवे पछी निरंतर शुं करवानुं छे? तत्काळ अने भविष्यमां सदाने माटे श्रेयरूप एवुं शुं काम करवानु छे?[८७]

[१३३] सूर्याभदेव एवो विचार करे छे त्यां तरत ज तेनी सामानिक सभाना देवो हाथ जोडीने सेवामां हाजर थया अने 'जय थाओ विजय थाओ' एम बोली स्वामीने वधावता तेनी पासे आवीने कहेवा लाग्याः

हे देवानुप्रिय! आपना आ विमानमां एक मोटुं सिद्धायतन छे. तेमां जिननी ऊंचाइए ऊंची एवी एकसो ने आठ जिनप्रतिमाओ विराजेली छे आपनी सुधर्मासभामां एक मोटो माणवक चैत्यस्तंभ ऊभो करेलो छे तेमां गोठवी राखेला वज्रमय गोळ डबामां जिननां सक्थिओ स्थापी राखेलां छे. ए, आपने अने अमने बधाने अर्चनीय वंदनीय उपासनीय छे.

तो हे देवानुप्रिय! ए प्रतिमाओनी अने ए सक्थिओनी अर्चा वंदना अने पर्युपासना ए आपनुं प्रथम कर्तव्य छे अने वळी वर्तमान अने भविष्यमां सदाने माटे श्रेयरूप एवुं पण ए ज काम छे.

[१३४] सूर्याभदेव उक्त सूचन सांभळी देवशय्यामांथी तरत ज बेठो थयो, त्यांथी उपपातसभाना पूर्वद्वारे नीकळी पेला स्वच्छ पाणीथी भरेला मोटा धरा तरफ गयो. धराने अनुप्रदक्षिणा करतो ते तेमां पूर्व द्वारे पेठो अने त्यां गोठवेल सोपानद्वारा तेमां ऊतर्यो,

---

८७ टीकाकार लखे छे के "आ स्थळे पुस्तकोमां घणोय वाचनाभेद-पाठभेद छे अने तेमानो केटलोक तो प्रायः अपूर्व छे, तेथी शिष्योने संमोह तो थवानो पण ए न थाय ते माटे अहीं एक सुगम पाठ अमे आपेलो छे." ("इह प्राक्तनो ग्रन्थः प्रायः अपूर्वः भूयान् अपि च पुस्तकेषु वाचनाभेदः ततो मा भूत् शिष्याणा सम्मोह इति क्वापि सुगमोऽपि यथावस्थितवाचनाक्रमप्रदर्शनार्थं लिखित.-पृ० १०२) मारी समजमां फेर न होय तो जे हकीकतने आश्रीने जैन समाजमां मोटो मतभेद प्रवर्ते छे ते हकीकतने लगतो आ पाठभेद लागे छे. आ पाठभेद बाबत खूब विचारीने तत्त्वशोध थाय तो ज जैन समाजमा शांति प्रवर्ते ए ध्यानमा राखवानु छे.

त्यां तेणे जलक्रीडा अने जलनिमज्जन सारी रीते कर्यां, पछी ते चोक्खो अने परमशुचिभूत थई घरामांथी बहार आव्यो अने ज्यां अभिषेकसभा हती त्यां गयो.

सूर्याभदेवनुं स्नान

अभिषेकसभाने प्रदक्षिणा करतो ते पूर्वद्वारे तेमां पेठो अने त्यां गोठवेला मुख्य सिंहासन उपर जई चडी बेठो.

सूर्याभदेवनो इंद्राभिषेक

[१३९] पछी तेनी सामानिक सभाना देवसभ्योए त्यांना कर्मकररूप आभियोगिक देवोने बोलाव्या अने हुकम आप्यो केः

हे देवानुप्रियो ! आपणा स्वामी आ सूर्याभदेवना महाविपुल इंद्राभिषेकनी तैयारी करो.

उक्त आज्ञा सांभळतां ज ते आभियोगिक देवोए त्यांथी ईशान खूणामां जई एक बे वार वैक्रियसमुद्घात करी लीधो अने ते द्वारा अभिषेकनी सामग्री माटे एक हजार आठ एक हजार आठ एवा घणा पदार्थो बनावी लीधा, जेवा के—

सोनाना, रूपाना, मणिना, सोनामणिना, रूपामणिना अने सोनारूपामणिना कळशो बनाव्या, भौमेय कलशो घडी काढ्या; ते ज प्रकारे अने तेटली ज संख्यामां भृङ्गारो, आरिसा, थाळो, पात्रीओ, छत्रो, चामरो, फूलनी अने मोरपींछ वगेरेनी चंगेरीओ, तेलना, हिंगळोकना अने आंजण वगेरेना डबाओ अने धूपधाणांओ ए बधुं एक हजार आठ एक हजार आठनी संख्यामां रची नाख्युं.

ए बधी स्वाभाविक अने बनावटी सामग्री लई ते आभियोगिक देवो तिरछा लोक तरफ जवा वेगवाळी गतिथी झपाटाबंध उपड्या. ए बाजु असंख्य योजन जतां जतां तेओ क्षीरसमुद्र पासे आवी पहोंच्या, तेमांथी क्षीरोदक अने त्यांना प्रशस्त उत्पल वगेरे कमळो लई त्यांथी तेओ पुष्करोदक समुद्रे जई पहोंच्या. त्यांनां पवित्र पाणी अने पुष्पादिक लई ते आभियोगिक देवो भरत ऐरवतमां आवेलां मागध, वरदाम अने प्रभास तीर्थो तरफ उडया. त्यां पहोंची तीर्थजळ अने तीर्थधूळ लई तेओ गंगा सिंधु रक्ता अने रक्तवती नदीओने ओवारे ऊतर्या. त्यांनां शुचि पाणी अने माटी लेताक तेओ चुल्लहिमवंत वगेरे पर्वतो तरफ जई चडया. त्यांथी पाणी पुष्प अने सर्व प्रकारनी औषधि सरसव वगेरे लीधुं. त्यांथी तेओ पद्मपुंडरीकना धरा तरफ गया. त्यांनुं चोक्खुं पाणी वगेरे भरी त्यांथी हिम-

अभिषेकने लीधे देवोनो आनंद

वंत, ऐरवत. रोहिता, रोहितांशा, सुवर्णकूला अने रूप्यकूला नदीओ भणी तेओ उपडया, पछी सद्दावति वियडावति अने वृत्तवैताढ्य तरफ गया. पछी त्यांथी महाहिमवंत रुक्मि वगेरे पर्वतो भणी उडया अने त्यांथी महापद्मद्रह महापुंडरीकद्रह तरफ जई पछी तेओ हरिवर्ष अने रम्यकक्षेत्रनी हरिकांता अने नारीकांता नदीओ भणी वळया त्यांथी गंधावती मालवंत अने वृत्तवैताढ्य तथा निषध नीलवंत तिगिच्छ केसरिद्रह अने महाविदेहनी सीता सीतोदा नदीओ भणी तेओ गया. पछी त्यांथी चक्रवर्तीना बधा विजयोए जई अने ए रीते ते ते बधां स्थळोनां पाणी माटी पुष्पादिक लई छेक छेल्ले तेओ मंदर पर्वते जई पहोंच्या मंदर पर्वतना भद्रशाल नंदन अने सोमनस वनमांथी सुंदर गोशीर्षचंदन वगेरे सामग्री लई तेओ झपाटाबंध पाछा फर्या अने त्वरावाळी चालथी पाछा सूर्याभविमानमां– ज्यां सिंहासन उपर पोतानो स्वामी सूर्याभदेव बेठेलो छे त्यां–जई पहोंच्या अने पेला सामानिक सभाना सभ्यो समक्ष इंद्राभिषेकनी सर्व सामग्री जे तेमणे विविध स्थळेथी आणी हती ते हाजर करी दीधी.

अभिषेकनी सर्व सामग्री आवी पहोंच्या पछी सूर्याभदेवनी सामानिक सभाना चार हजार देवसभ्यो, तेनी चार पट्टराणीओ, बीजी त्रण सभाओना पोतपोताना परिवारवाळा देवो, सात सेनाधिपतिओ, सोळ हजार आत्मरक्षक देवो अने बीजा पण घणा देवदेवीओ–ए बधाए त्यां अभिषेकसभामां आवी ते ते सामग्रीद्वारा मोटी धामधूमथी सूर्याभदेवनो इंद्राभिषेक कर्यो.

[१३६] ए महाविपुल इंद्राभिषेक चालतो हतो त्यारे केटलाक देवोए सूर्याभविमानमां सुगंधी पाणीनो छंटकाव कर्यो, केटलाकोए ते विमाननी बधी धूळ झाडी काढी, बीजा केटलाकोए ए विमान अने तेनां शेरी बजार वगेरे भागोने लिंपीगुंपीने साफ कर्या, मांचा उपर मांचा ढाळीने विमानने शणगार्युं, ठेकठेकाणे द्वारबंध धजापताकाओ रोपी, चंदरवा बांध्या, सुगंधी छांटणां छांट्यां, चंदनना थापा मार्या, बारणेबारणे चंदनना पूर्ण कळशो अने तोरणो टांग्यां, लांबी लांबी सुगंधी माळाओ लटकावी, सुवासित पुष्पो वेर्यां, सुगंधमय धूपो उवेख्या, सोनुं रूपुं वज्र रत्न मणि फूल फळ माळा चूर्ण गंध आभरण अने वस्त्र वगेरेनो वरसाद वरसाव्यो, मंगळ वाजां वाग्यां, ढोल धडुक्या, वीणाओ रणझणी, धवळ मंगळ गवायां, विविध प्रकारनां अभिनयोवाळां नृत्यो थयां, नाटको भजवायां,

सोना रूपां रत्नो वगेरे वेंचार्यां, एम ते ते देवोए पोताना स्वामीना अभिषेकनी खुशालीमां ते विमानने अनेक प्रकारे सुशोभित कर्युं.

वळी, ते प्रसंगे हर्षमां आवी जई कोइ देवो बुचकारा करवा लाग्या, कोई फूल्या समाता नथी, केटलाको नाचवा मांड्या, तांडव करवा लाग्या, होकारा करवा लाग्या, बाहुओ अफळाववा लाग्या, हणहणवा मांड्या, हाथीनो पेठे चीसो पाडवा लाग्या; केटलाको ऊछळे छे, सिंहनाद करे छे, ऊंचे ऊडे छे, नीचे पडे छे, पग पछाडे छे, गाजे छे, झबके छे, वरसे छे, पोतपोतानां नामो कही संभळावे छे, तेजथी तपे छे; केटलाको मोटेथी थूथू करे छे अने केटलाको पोताना हाथमां धूपधाणां, फळशो अने कमळो वगेरे राखी आमतेम दोडादोडी करे छेः ए रीते ते दरेक देवो पोताना स्वामीना अभिषेकनी खुशाली माणे छे.

सूर्याभदेवे पहेरेलां वस्त्र अने आभूषणो

अभिषेक थई रह्या बाद ते दरेक देवो हाथ जोडीने बोल्या केः

हे नंद ! तारो जय थाओ, हे भद्र ! तारो जय थाओ, जे अजित छे तेने तु जित अने जे जित छे तेनी तुं रक्षा कर. देवोमां जेम इंद्र ताराओमां चंद्र, असुरोमां अमर, नागोमां धरण अने मनुष्योमां भरतनी पेठे तुं अमारी वच्चे रहे.

वळी, घणां पल्योपमो, घणां सागरोपमो, घणां पल्योपमो अने सागरोपमो सुधी अमारा उपर अने आ आखा सूर्याभविमान उपर आधिपत्य भोगव अने अमने बधांने सुरक्षित राखतो तुं अहीं आनदथी विहर.

आम बोलीने ते बधां देवदेवीओए जय जय नाद कर्यो अने ए रीते सूर्याभदेवनो इंद्राभिषेक पूरो थयो.

[१३७] अभिषेक पूरो थतां ते सूर्याभदेव, त्यांथी पूर्वने बारणे नीकळी अलंकार सभाने प्रदक्षिणा करतो तेमां ते ज बारणे पेठो अने त्यांना मुख्य सिंहासने बेठो.

पछी तेना सामानिक सभ्यदेवोए तेनी समक्ष त्यां बधी अलंकारसामग्री उपस्थित करी. पहेलां तो न्हापलो होवाथी तेणे सुकोमळ अंगलूछणा द्वारा पोतानां अंगो लूछयां, तेना उपर सरस गोशीर्षचंदननो लेप कर्यो अने त्यारबाद एकज फूंके ऊडी शके तेवुं

सूर्याभदेवे पुस्तक वांची धार्मिक व्यवसाय जाण्यो

युगल[८८] घोडानी लाळ जेवुं नरम, सुंदर वर्ण अने स्पर्शवाळुं अने जेने छेडे सोनुं जडेलुं छे तेवुं स्फटिक जेवुं ऊजळु धोळुं देवदूष्य तेणे पहेर्युं. पछी हार, अधहार, एकावळ, मोतीनी माळा, रत्नावळ, अंगद, केयूर, कडां, बेरखां, कणदोरो, दसे आंगळीए वेढ वींटीओ, छाती उपर दोरो, मादळियुं, कंठी, झूमणु, काने कुंडळ अने माथे चूडामणि मुगट वगेरे आभरणो पहेरी पोताना देहने ए सूर्याभदेवे ठीक ठीक सजाव्यो.

वळी, गुंथेली वींटेली भरेली अने एक बीजाना नाळथी जोडेली एवी चारे प्रकारनी माळाओथी पोतानी जातने कल्पवृक्षनी पेठे सुशोभित करतां तेणे दिव्य पुष्पमाळ पण पहेरी

[१३८] ए रीते अलंकृत थएलो ते सूर्याभदेव व्यवसायसभाने प्रदक्षिणा करतो तेमां आव्यो अने त्यां सिंहासनारूढ थयो. पछी तो तेना सामानिक सभ्योए तेनी समक्ष त्यांना पुस्तकरत्नने मूक्युं, तेणे तेने उघाडी वांची तेमांथी धार्मिक व्यवसायने लगती समजुती मेळवी लीधी.

ए क्रम पूरो थया बाद ते, त्यांथी पूर्वद्वारे नीकळी नंदा पुष्करिणीए गयो. त्यां गोठवेला सोपानद्वारा पुष्करिणीमां ऊतरी तेणे पोताना हाथपग पखाळ्या, पछी चोक्खा परमशुचिभूत थई हाथीनी मुखाकृतिनी जेवी पाणीथी भरेली एक मोटी धोळी रजतमय झारी अने पुष्करिणीनां कमळो वगेरे लई त्यांथी ते सिद्धायतन तरफ जवा नीकळ्यो.

---

८८ भगवान महावीरना समसमयी लोको वे वस्त्रो पहेरता ए हकीकत, ते समयनी वस्त्रपरिधानपद्धतिनो उल्लेख अने बीजां केटलांक प्राचीन चित्रो उपरथी समजी शकाय एम छे. ए रीते स्वर्गीय देवो पण भारतवर्षनी ए वस्त्रपरिधानपद्धतिने अनुसरता होय एम आ वर्णन सूचित करे छे. वस्त्रनी बनावटनु वर्णन जोता ते समयनी वस्त्ररचनानी कळा परमप्रकर्षने पामेली छे ए तो चोक्खुं जणाय छे. सूत्रकारे वर्णवेलुं वस्त्र आजनां वस्त्रयंत्रो पण नथी बनावी शकतां, त्यारे ए वस्त्र ते समयना हाथवणाटनी बनावट छे ए, वस्त्ररचनानी कळानो परमप्रकर्ष नहि तो बीजुं शुं?

सूर्याभदेवे श्रीजिनप्रतिमानी पूजा करी

सिद्धायतनमां ज्यां देवच्छंद छे अने जे वाजुए जिनप्रतिमाओ छे ते तरफ जई ए सूर्याभदेवे अने तेना सकळ परिवारे तेमने प्रणाम कर्या. पछी तेमने मोरपींछथी पूंजी, सुगधी पाणीथी पखाळी, सरस गोशीर्षचंदननो लेप कर्यो, सुवासित अंगलूछणाथी तेमने लूंछी अने पछी ते प्रतिमाओने अक्षत एवां देवदूष्य युगल पहेराव्यां. त्यारवाद ते सवस्त्र प्रतिमाओ उपर फूल, माळा, गंध, चूर्ण, वर्ण, वस्त्र, आभरण वगेरे चडावी तेमने लांबीलांबी माळाओ पहेरावी अने पांचे प्रकारनां पुष्पोना पगर भर्या. पछी ते जिनप्रतिमाओनी सन्मुख रूपेरी अखंड चोखाना स्वस्तिक दर्पण वगेरे आठआठ मंगळो आलेख्यां, वैडूर्यमय धूपधाणामां सुगंधी धूप सळगावी ते प्रत्येक प्रतिमाओ आगळ धूप कर्यो अने पछी गंभीर अर्थवाळा मोटा एकसो ने आठ छंदो बोली तेमनी स्तुति करी.[८९]

---

८९ टीकाकारे लखेलुं छे के–"सूर्याभदेव वांदे छे एटले ते जिनप्रतिमाओने चैत्यवंदनविधिपूर्वक वांदे छे अने पछी नमे छे एटले प्रणिधानादिकना योगपूर्वक नमे छे" एवो केटलाकनो मत छे. त्यारे वळी बीजा केटलाक तो कहे के "चैत्यवदननो जे प्रसिद्ध विधि छे ते तो विरतिवाळाओने ज वधवेसे एवो छे. तेमा ईर्यापथिकीपूर्वकनो काउस्सग्ग आवतो होवाथी विरतिवाळा सिवायना बीजाओने ए विधि करवो उचित नथी, माटे 'वांदे छे' एटले चैत्यवंदनपूर्वक वांदे छे एम नहि पण सामान्यपणे वांदे छे अने 'नमे छे' एटले आशय–भाव–वृद्धिने कारणे आदरपूर्वक नमे छे" एवो अर्थ समजवो. सूर्याभदेवे करेली चैत्यवंदनरूप स्तुतिना प्रसंगमां आ प्रकारे मोटो मतभेद छे." अहीं जे तथ्यरूप होय ते तो परम ऋषि केवळी भगवंतो जाणे" आम कहीने ए मतभेदोथी गुंचवाईने टीकाकार छूटी जता जणाय छे, पण ए वावत कोई प्रकारनी स्पष्टता करता नथी. वळी "आ पछी जे हकीकत आवे छे ते संबधे पण मोटो पाठभेद छे" एम टीकाकार जणावे छे. आ बधो वाचनाभेद अने उक्त मतमतांतरो ध्यानमा राखीने आ प्रकरणने समजवु जोईए. "मोटा छंदवाळा १०८ श्लोक द्वारा सूर्याभदेवे स्तुति करेली" एम मूळमा कहेलुं छे पण ए छंदो कया प्रकारना हता ए विशे कशु जणावेलु नथी. स्तुति करतां सूर्याभदेवे शक्रस्तव पण कहेलुं छे परंतु ते अतिप्रसिद्ध होवाथी अहीं पूरू आपेलु नथी. ("वन्दते ताः प्रतिमाः चैत्यवन्दनविधिना प्रसिद्धेन, नमस्करोति पश्चात् प्रणिधानादियोगेन इति एके. अन्ये

सूर्याभदेवे विमाननी पूतळीओ वगेरेनी अर्चना करी अने देवो द्वारा करावी

त्यारबाद ते सूर्याभदेव सातआठ पगलां पाछो फर्यो, पछी बेसी, डाबो पग ऊंचो राखी, जमणो पग जमीन उपर मूकी, माथुं
त्रण वार नीचुं नमावी, हाथ जोडीने आ प्रमाणे बोल्यो:
नमस्कार. [पृ० १८ पं० २-]
अरिहंत भगवतोने नमस्कार, यावत् अचळ सिद्धिने वरेलाओ प्रति नमस्कार. [पृ० १८ पं० २-]
पछी तो ए सिद्धायतननो वचलो भाग, तेनी चारे बाजुनो द्वारप्रदेश, मुखमंडपो, प्रेक्षागृहमंडपो, वज्रमय अखाडो, बधा चैत्य-
स्तंभो, मणिपीठिकाओ उपरनी जिनप्रतिमाओ, बधां चैत्यवृक्षो, महेन्द्रध्वजो, नंदापुष्करिणीओ, माणवक चैत्यस्तंभोमां सचवाई रहेलां
जिननां सक्थिओ, देवशय्याओ, नाना महेन्द्रध्वजो, सुधर्मासभा, उपपातसभा, अभिषेकसभा, अलंकारसभा अने ए बधी सभाओनो
चारे बाजुनो प्रदेश, ए बधांने तथा ए बधे स्थळे आवेली पूतळीओ शालभंजिकाओ, द्वारचेटीओ अने बीजां बधां भव्य उपकरणो
वगेरेने ते सूर्याभदेवे मोरपींछीथी पूंज्यां, दिव्य पाणीनी धाराओथी पोंख्यां, तेमना उपर गोशीर्ष चंदनो लेप्यां–ते वती थापा मार्या
अने तेमनी सन्मुख फूलना पगर भर्या, धूप दीधो अने ते शोभावर्धक बधी सामग्री उपर फूल चडाव्यां, तेमज माळाओ, घरेणां
अने वस्त्रो वगेरे पहेराव्यां अने पोतानी ऋद्धिने सूचवता ते प्रत्येक पदार्थ तरफ ए रीते ते सूर्याभदेवे पोतानो सद्भाव बताव्यो.
एम करतो करतो ते, छेक छेल्ले व्यवसायसभामां आवी पहोंच्यो. त्यां तेणे त्यांना पुस्तकरत्नने मोरपींछथी पूंज्युं, दिव्य जळनी
धाराथी पोंख्यु अने उत्तम गंध तेमज माळा वगेरे वडे पूर्ववत् तेनी अर्चा करी तथा त्यांनी पूतळीओ वगेरे तरफ पण तेणे ते ज
रीते पोतानो सद्भाव सूचित कर्यो.
आ बधुं करीने ज्यारे ते बलिपीठ पासे आवी बलिनुं विसर्जन करे छे त्यारे तेणे पोताना आभियोगिक देवोने बोलावी नीचेनो

तु अभिदधति–विरतिमतामेव प्रसिद्धः चैत्यवन्दनविधिः अन्येषा तथाऽभ्युपगमपुरस्सरकायव्युत्सर्गासिद्धेः इति वन्दते सामान्येन, नमस्करोति आशय-
वृद्धेः अभ्युत्थाननमस्कारेणेति। तत्त्वमत्र भगवन्तः परमर्षयः केवलिनो विदन्ति। अत ऊर्ध्वं सूत्रं सुगमम्, केवलं भूयान् विधिविषयो वाचनाभेद
इति"–पृ० ११०)

हुकम कही संभळाव्यो

हे देवानुप्रियो ! तमे शीघ्र जाओ अने आ सूर्याभविमानमां आवेला सिंगोडाना घाटना मार्गोमां त्रिकोमां चतुष्कोमां चत्वरोमां चतुर्मुखोमां अने महापथोमां तथा प्राकार अटारीओ द्वारो गोपुरो तोरणो आरामो उद्यानो वनो वनराजिओ काननो अने वनखंडोमां अर्थात् मारा आ विमानमां वसतां देवो अने देवीओ उक्त रीते नाने मोटे वधे स्थळे अर्चनिका करे एवुं तेमने जाहेर करो.

आभियोगिक देवोद्वारा पोताना स्वामी सूर्याभदेवनी उपर प्रमाणेनी घोषणा सांभळी त्यां वसतां प्रत्येक देवो अने देवीओए उक्त घोषणामां जणाव्या प्रमाणेनां ते ते प्रत्येक स्थळनी अर्चनिका करी.

आ बधुं पती गया पछी ते सूर्याभदेव नदा पुष्करिणीए गयो, त्यां तेणे हाथ पग पखाळ्या अने त्यांथी ते, चार हजार सामानिक देवसभ्यो, चार पट्टराणीओ अने सोळ हजार आत्मरक्षक देवो वगेरे अनेक देव देवीओ साथे, मोटा ठाठमाठथी वाजते गाजते वरघोडो फरे तेम फरतो फरतो सीधो पोतानी सुधर्मासभा तरफ आव्यो, त्यां पूर्वद्वारे पेसी त्यांना मुख्य सिंहासन उपर पूर्वाभिमुख थईने बेठो.

[१४०] ए सभामां ते सूर्याभदेवनी पश्चिमोत्तरे अने उत्तरपूर्वे ढाळेलां चार हजार भद्रासनोमां सूर्याभदेवनी सामानिक सभाना सभ्यदेवो बेठा, पूर्वमां तेनी चार पट्टराणीओ, दक्षिणपूर्वमां आंतरसभाना आठ हजार देवो, दक्षिणमां मध्यसभाना दस हजार देवो, दक्षिणपश्चिममां बाह्यसभाना बार हजार देवो अने पश्चिमे सात सात सेनाधिपतिओ बेठा.

वळी, ते सूर्याभदेवनी फरता चारे दिशामां चार चार हजार आत्मरक्षक देवो बेठा. ए आत्मरक्षक देवोए बराबर सजेलां कवचो पहेरेलां, खेंचेली कामठीवाळां धनुषो हाथमां धरी राखेलां, पोतपोताना पहेरवेशो उपर उत्तम चिह्नपट्टो भरावेला, तेमांना केटलाकना हाथमां नीलां पीळां अने रातां फळां हतां, केटलाकना हाथमां चाप, चारु, चर्म, दड, खड्ग अने पाश वगेरे अस्त्रशस्त्रो झबकी रहेलां हतां, पोताना स्वामी सूर्याभदेव तरफ खूब भक्तिभावभरी दृष्टिए जोता तथा विनीत भावे किंकरभूत थईने रहेला अने समये

समये ए सूर्याभदेवनी रक्षा माटे सावधान रहेता ते आत्मरक्षक देवो त्यां तेनी फरता चारे दिशामां चोकी पहेरो भरता ऊभा छे.

ते सूर्याभदेवनी ए बधी दिव्य ऋद्धि छे, दिव्य शोभा छे अने दिव्य देवशक्ति छे

प्र०—हे भगवन्! ए सूर्याभदेवनी स्थिति-आवरदा केटली लांबी जणावेली छे?

उ०—हे गौतम! एनी आवरदा चार पल्योपमनी जणावेली छे.

प्र०—हे भगवन्! सूर्याभदेवनी सामानिक सभामां बेसनारा देवोनी स्थिति केटली लांबी जणावेली छे?

उ०—हे गौतम! तेओनी आवरदा पण चार पल्योपमनी जणावेली छे.

हे गौतम! ते सूर्याभदेव ए प्रकारनो महाऋद्धि, महाद्युति, महाबळ, विशाळ यश, अतुल सुख अने महाप्रभाववाळो छे.

[१८१] प्र०—हे भगवन्! ते प्रकारनी दिव्य देवऋद्धि देवद्युति अने देवप्रभाव ए बधुं ए सूर्याभदेवने केवी रीते मळ्युं? तेणे ए बधुं केवी रीते प्राप्त कर्युं? अने केवी रीते ए बधानो ते स्वामी थयो? ए सूर्याभदेव एना पूर्वजन्ममां कोण हतो? एनुं नाम गोत्र शुं हतुं? ए कया गाम नगर के संनिवेशनो निवासी हतो? एणे एवुं ते शुं दीधुं शुं खाधुं शुं कर्युं ने शुं आचर्युं के जेथी ते एवो महाप्रभावशाळी देव थयो? अथवा तथाप्रकारना आर्य श्रमण के ब्राह्मणनी पासेथी तेणे एवुं ते धार्मिक आर्य सुवचन शुं सांभळ्युं के जेथी ते एवो अतुल वैभववाळो उत्तम देव थयो?

उ०—'हे गौतम वगेरे श्रमणो!' एम कहीने श्रमण भगवान महावीरे भगवान गौतमने आमंत्रीने आ प्रमाणे कह्युं:

सूरियाभनुं वर्णन समाप्त।

सूर्याभदेवनी आवरदा अने तेना पूर्व भवने लगता प्रश्नोत्तरो

राजा पएसीनी कथा

'केकयि' नामनो अडधो आर्यदेश अने सेयविया नगरी

[१४२] हे गौतम ! एम छे के आ जम्बूद्वीप नामना द्वीपमां भारतवर्षमां केकयिअर्ध[९०] नामे जनपद, धन अने धान्य वगेरेनी विभूतिथी परिपूर्ण हतो. ते देशमां सर्व प्रकारनां सुखनुं धाम एवी सेयविया[९१] नामनी नगरी हती. ते नगरीथी बहार उत्तरपूर्वना ॥९७॥

---

९० जैन शास्त्रोमा २५॥ आर्य देशोनां तथा ते दरेक देशनी एक एक राजधानीनां नाम प्रसिद्ध छे. २५ देशो तो आखेआखा आर्य हता अने 'केकयि' देश अडधो आर्य हतो एम ए शास्त्र सूचवे छे. बौद्धग्रंथोमां य 'केकय' देशनो उल्लेख छे. ते देशनुं वर्तमान स्थान उत्तरमा पेशावर तरफ कही शकाय. पण तेनी चोक्कस सीमा कळी शकाती नथी. मूळ पाठमा 'केइयअद्धे' एवुं छपाएलुं छे अने टीकाकारे ("केकयी नाम अर्धम्'-पृ० ११४) लखीने ते मूळ शब्दनी व्याख्या आपी छे. टीकानो उल्लेख जोतां मूळ पाठ 'केइय'ने बदले 'केअई' के 'केयई' होय तो शुद्ध पाठ कहेवाय. राजा दशरथनी एक राणीनुं 'कैकयी' नाम ते, आ केकय देशनी हती माटे 'कैकयी' पड्युं जणाय छे.

९१ आ नगरीने 'केकय' देशनी राजधानी तरीके सूत्रोमां वर्णवेली छे. 'सेयविया' नो संस्कृत पर्याय टीकाकारे 'श्वेतम्बी' सूचवेलो छे. आवश्यक सूत्र (पृ० १९७ विभाग १) मां जणावेलु छे के "छद्मस्थ भगवान महावीर विहार करता करतां उत्तरचावाल के उत्तरवाचाल प्रदेशमां गया, त्यांथी 'सेयविया' गया, त्यां ते नगरीना श्रमणोपासक राजा परदेशीए भगवाननो महिमा कर्यो अने पछी त्यांथी भगवान सुरभिपुर पहोंच्या. आ नगरी वर्तमानमां क्यां छे तेनी हकीकत मळी नथी. दीघनिकाय नामना बौद्ध ग्रंथमां आवेला पायासिसुत्तंतमां आ नगरोने 'सेतव्या' नामथी

दिग्भागमां-ईशान खूणामां वधी ऋतुओमां फळोथी लच्युं रहेतु सुन्दर सुगन्धी शीतळ छायावाळुं अने सर्वे प्रकारे रम्य नन्दनवन जेवु मियवण नामे उद्यान हतुं. ते नगरीनो राजा महाहिमवन्त जेवो प्रभावशाळी पयेसी[९२] राजा हतो. ए राजा अधार्मिक, अधर्मिष्ठ, धर्मने नहि अनुसरनारो, अधर्मने ज जोनारो, अधर्मने फेलावनारो हतो. एना शील तथा आचारमां क्यांय धर्मने नामनुं पण स्थान

सूचवेली छे अने कोशल देशमां (जैनदृष्टिए अयोध्या अने तेनी आसपासनो प्रदेश)विहार करता करता कुमार काश्यप आ नगरीमा आव्या एम सूचवी एने कोशलोना नगर तरीके जणावेली छे. ("येन सेतव्या नाम कोसलान नगरं तद् अवसरि"–दीघनिकाय भाग २ पृ. ३१६)

९२ मूळमा आ माटे 'पएसी' शब्द वपराएलो छे , टीकाकार आ माटे 'प्रदेशी' शब्द वापरे छे अने आवश्यकमां 'पदेसी, शब्द सूचवेलो छे .आ राजा संबधी जे हकीकत हवे पछी आ, रायपसेणइय सूत्रमां आवनारी छे तेने लगभग मळती हकीकत 'दीघनिकाय' ना पायासिसु–'त्तंत' नामना लावा प्रकरणमां आवेली छे. ('पायासि' शब्दमां 'य'नी पहेला जे काना जेवुं निशान छे ते, खरेखर कानो नथी पण पडिमात्रानी लिपिमां ए काना जेवुं निशान 'य' उपरनी मात्रा छे एटले एनुं खरुं वांचन 'पयेसि' थाय पण मात्रा वाचवानी भूलना परिणामे अने 'य' पछी एक कानो वधी जवाने कारणे 'पयेसि' ने वदले 'पायासि' थयुं होय एम न वने ?) ए सुत्तंतमां मुख्य प्रश्नकार राजा 'पायासि' छे, तेमां तेने राजन्य वशनो जणावेलो छे अने तेनो सवंध कोशल वंशना राजा 'पसेनदि' साथे वतावेलो छे. रायपसेणइयमां जेम राजा पयेसि ने अत्यंत पापिष्ठ तरीके वर्णवेलो छे तेम दीघनिकायमां नथी. परंतु एमां एम तो कहेलुं छे के– ए राजाने पापमय विचारो थयेला; परलोक नथी, औपपातिक सत्ता नथी अने सुकृत तथा दुष्कृतनो कोइ प्रकारनो फलविपाक –परिणाम–नथी. आ राजा विशे वीजी कोई ऐतिहासिक माहिती मळी नथी. (तेन खो पन समयेन पायासि राजञ्ञो सेतव्यं अज्झावसति × × × पसेनदिकोसलेन दिन्नं राजदेय्य × × × पायासिराजञ्ञस्स एवरूप पापकं दिट्ठिगतं उप्पन्नं होति इति पि नत्थि परलोको, नत्थि सत्ता ओपपातिका, नत्थि सुकतदुक्कतान कम्मानं फलविपाको ति–दीघनिकाय भाग २ पृ० ३१६–३१७)

रायपसेणइय सुत्तनो सार

न हतुं. वळी, ए राजा पोतानी आजीविका अधर्मथी ज चलावतो. एना मोढामांथी 'हणो' 'छेदो भेदो' एवो ज भाषा नीकळतो. ए प्रकृतिए प्रचण्ड क्रोधी भयानक अने अधम हतो. एना हाथ हमेशां लोहीभर्या-लोहीथी खरडाएला ज रहेता. ए विनाविचार्ये प्रवृत्ति करनारो, हलकाओने उत्तेजन आपनारो, लांचियो, ठगारो, कपटी, बगभगत अने अनेक प्रकारना फांसलाओ रची सर्वे कोईने दुःख देनारो हतो. एनामां कोई प्रकारनां व्रत शील गुण के मर्यादा न हतां, कदी पण ए प्रत्याख्यान उपोसथ के उपवास न करतो, अनेक मनुष्यो मृग पशु पक्षी अने सर्प वगेरेनो घातक हतो. टुंकामां ए राजा अधर्मनो केतु हतो. कदी ते गुरुजनोनो आदर न करतो, विनय न करतो, तेम कोई श्रमण या ब्राह्मणमां तेने लेश पण विश्वास न हतो. आवो ते क्रूर राजा पोताना आखा देशनी करभर-वृत्ति बराबर चलावी न शकतो.

सूरियकंता राणी, सूरियकंत युवराज कल्याणमित्र चित्त सारथि

[१४३] ए राजाने बोलवे चालवे हसवे कुशळ अने हाथेपगे सुंवाळी सूरियकन्ता नामे राणी हती. पयेसी राजामां अनुरक्त ए राणी तेनी साथे अनेक प्रकारनां मानवी भोगोने भोगवती रहेती हती.

[१४४] पएसी राजानो मोटो दीकरो सूरियकन्ता राणीने पेटे अवतरेलो सूरियकन्त नामे युवराज कुमार हतो ए युवराज, राजा पयेसीनां राज्य राष्ट्र बळ वाहन कोश कोठार अन्तःपुर अने समग्र देशनी पोतानी मेळे संभाळ करतो रहेतो हतो.

॥९९॥

[१४५] ते पयेसी राजाने तेनाथी मोटो, भाई अने कल्याणमित्र जेवो, चित्त[९३] नामे एक सारथि हतो संपत्तिवाळो ए कोईथी न

९३ आ माटे टीकाकार 'चित्र' शब्द वापरे छे. दीघनिकायमां आ माटे 'खत्ते' शब्द छे. आ सूत्रमा जेम राजा पएसी अने चित्त वच्चे गाढ संबंध बतावेलो छे तथा ते बेनी वच्चे विशेष वातचीत थयानी हकीकत लखेली छे, तेम दीघनिकायना पायासिसुत्तंत प्रकरणमा राजा पायासि अने खत्ते वच्चेनो संबध जणावेलो छे अने ते बेनी वच्चे विशेष वातचीत थयानी नोंध करेली छे. 'खत्ते' नो संस्कृत पर्याय क्षत्तृ-क्षत्ता छे अने तेनो अर्थ सारथि-रथ हांकनार-छे. ["सूतः क्षत्ता च सारथिः"-अमरकोश का० २ क्षत्रियवर्ग श्लो० ५९.] हु न

चित्त सारथि ए भेटणुं लई पोताने घेर आव्यो अने तेणे पोताना कौटुम्बिक पुरुषोने बोलावीने कह्युं के-हे देवानुप्रियो ! मारे माटे छत्रीवाळो चार घण्टावाळो एवो घोडा जडेलो रथ जल्दी तैयार करी हाजर करो. कौटुम्बिक पुरुषो ए रथनी तैयारीमां लाग्या एटला समयमां चित्त सारथि नाह्यो, बलिकर्म कर्युं, बख्तर पहेर्युं, भाथुं बांध्युं, गळामां हार साथे राजचिह्नवाळो पट्टो पहेर्यो अने जोइतां हथीआर-पडीआरो पण वांधी लीधां.

पछी पेलुं राजाए आपेलुं भेटणुं लई, तैयार थईने आवेला रथ उपर चित्त सारथि बेठो, तेने माथे एक जणे कोरंटकना फूलनी माळावाळुं छत्र धर्युं अने रथनी पाछळ हथीआरबन्ध बीजा अनेक माणसोने पण तेणे साथे लीधा ए रीते ते सेयविया नगरीथी नीकळी केकयिअर्ध देशनी वच्चे थतो कुणाल देशनी सावत्थी नगरी तरफ जवा लाग्यो.

वच्चे वच्चे बहु लांबा नहि एवा सुखरूप शिरामणीवाळा पडाव करतो करतो ते सावत्थी नगरीए जई पहोंच्यो.

त्यां जितशत्रु राजाना घरनी जे बाजु बहारनी उपस्थानशाळा हती त्यां जई तेणे घोडा उभा राख्या, रथने स्थिर कर्यो, पछी रथथी उतरी पोताना राजाए आपेलुं भेटणुं लई जितशत्रु राजाना घरमां अंदरनी उपस्थानशाळामां गयो, त्यां पहोंची राजा जितशत्रुने प्रणाम कर्या, तेने 'जय हो विजय हो' एम कहीने वधाव्यो अने पछी राजा पयेसीए मोकलेलुं भेटणुं नजर कर्युं

ए भेट स्वीकारी जितशत्रु राजाए चित्त सारथिनो सत्कार कर्यो, सन्मान कर्युं अने ऊतरवा माटे राजमार्ग उपरनो एक मोटो आवास काढी आप्यो. चित्त सारथि सावत्थी नगरीनी वच्चोवच्च थतो ते आपेले उतारे जइ पहोंच्यो, नाह्यो, बलिकर्म कर्युं, मांगलिक शुद्ध वस्त्रो पहेर्यां, नाना पण महामूल्य घरेणांथी शरीरने शणगार्युं.

पछी जमी करीने चोक्खो थई सुन्दर रीते गोठवेला सिंहासन उपर आवीने बेठो एटले वधोरने वखते नमते छांये एनी सामे गान्धर्वो मधुर गीतो गावा लाग्या अने कुशळ नाचनाराओ सुंदर नृत्य करवा लाग्या. आ रीते मानवभोग्य योग्य उत्तम सुखोने भोगवतो ते त्यां सावत्थी नगरीमां रहेवा लाग्यो.

[१४७] ते वखते त्यां-सावत्थी नगरीमां-पार्श्वापत्य केशी नामे कुमारश्रमण पण आवेला हता. ए केशी कुमारश्रमण जातवान कुलीन बलिष्ठ विनयी ज्ञानी सम्यग्दर्शनी चारित्रशील लाजवान निरभिमानी ओजस्वी तेजस्वी वर्चस्वी अने यशस्वी हता. एमणे क्रोध मान माया अने लोभ उपर जीत मेळवेली हती, निद्रा इंद्रियो अने परीषहो उपर काबू करेलो हतो. एमने जीवननी तृष्णा के मरणनो भय नहोतां. एमना जीवनमां तप, चरण, करण, निग्रह, सरळता, कोमळता, क्षमा, निर्लोभता ए वधा गुणो मुख्यरूपे हता वळी, ते श्रमण, विद्यावान मांत्रिक ब्रह्मचारी अने वेद तथा नयना ज्ञाता हता तेमने सत्य शौच वगेरे सदाचारोना नियमो प्रिय हता, तथा तेओ चौदपूर्वी अने चार ज्ञानवाळा हताः एवा ते केशी[९६] कुमारश्रमण पोताना पांचसें भिक्षुशिष्यो साथे क्रमे क्रमे गामे गाम फरता फरता सुखे सुखे विहरता श्रावस्ती नगरीनी बहार ईशान खूणामां आवेला कोट्ठय चैत्यमां आवीने ऊतर्या अने त्यां योग्य अभिग्रह धारण करीने संयम तथा तपथी आत्माने भावित करता रहेवा लाग्या.

जे वखते केशी कुमारश्रमण सावत्थी नगरीए आव्या ते वखते ते नगरीमां ठेर ठेर-तरभेटामां त्रिकमां चोकमां चाचरमां चोकठामा राजमार्गमां अने शेरीए शेरीए ज्यां सांभळो त्यां घणा लोको परस्पर एम कहेता हता के आजे तो पार्श्वापत्य केशी कुमारश्रमण अहीं आव्या छे, तो हे देवानुप्रियो! आपणे तेमनी पासे जईए, तेमने वांदीए, नमीए, सत्कारीए अने सन्मानीए.

---

९६ दीघनिकायमां आमने स्थाने कुमार काश्यप (पाली-कुमार कस्सप)नु नाम छे. काश्यपनो भिक्षु समुदाय पांचसेंनी संख्यामा बतावेलो छे. कुमार काश्यपने श्रमण गोतमना (गौतम बुद्धना) श्रावक तरीके वर्णवेला छे. (बौद्धशासनमां त्यागी होय ते श्रावक अने गृहस्थ होय ते उपासक) आ कुमारकाश्यप सीधा ज सेयविया नगरीमां आवे छे त्यारे केशीकुमार-श्रमण सावत्थीए आव्या पछी सेयविया भणी जाय छे. आजन्म ब्रह्मचारी होय ते कुमारश्रमण कहेवाय. मूळ तो कुमारश्रमण शब्द यौगिक छे पण पछी ते ब्राह्मण मुनि वगेरे शब्दनी पेठे रूढ थयो लागे छे. पाणिनीयना मूळ अष्टाध्याय [२-१-७०]मा पण ए शब्दनो उल्लेख छे एटलो ए शब्द प्राचीन छे.

चित्त सारथिनुं केशिकुमार पासे जवुं

आम विचारीने ए नगरीनो जनसमुदाय-महाजन कोट्ठय चैत्यमां ज्यां केशी कुमारश्रमण ऊतर्या हता त्यां तेमना दर्शनार्थे पहोंच्युं. केशी कुमारश्रमणे पोतानी पासे आवेला लोकोने तेमने योग्य हितशिक्षाओ कही संभळावी.

[१४८] ते वखते त्यां जता के त्यांथी पाछा फरता लोकोनो घोंघाट सांभळीने चित्त सारथिना मनमां एम थयुं के-'शुं आजे आ नगरीमां इंद्र स्कंद रुद्र मुकुंद नाग भूत यक्ष स्तूप चैत्य वृक्ष गिरि गुफा कूवो नदी सरोवर के समुद्र संबंधी कोइ उत्सव छे के जेने लईने आ घणा उग्रो भोगो राजन्यो क्षत्रियो इक्ष्वाकुओ ज्ञातो कौरव्यो ब्राह्मणो भटो योधो लिच्छविओ मल्लकिओ प्रशास्ताओ इभ्यो इभ्यपुत्रो अने सेनापतिओ वगेरे नाही धोईने आवजा करी रह्या छे, केटलाक घोडे चडेला छे, केटलाक हाथीए बेठेला छे अने केटलाक टोळे वळीने पगे चालता आवजा करे छे'?

लोकोनी ए दोडधामवाळी आवजानुं कारण जाणवा चित्त सारथिए पोताना कंचुकी पुरुषने तपास करवा मोकल्यो, तेणे बराबर तपास करी खरा समाचार मळतां ज आवीने चित्त सारथिने विनयपूर्वक जणाव्युं के-हे देवानुप्रिय! आजे आ नगरीमां कोइ इंद्र के सागर वगेरेनो उत्सव नथी पण पार्श्वापत्य केशी कुमारश्रमण आ नगरीना कोट्ठय नामना चैत्यमां आवीने ऊतरेला छे अने तेमना दर्शनार्थे जवा माटे आ बधी दोडधाम घोंघाट थई रह्यां छे

[१४९] पोताना संदेशवाहके कहेली ए हकीकत सांभळीने चित्त सारथि खुश थयो अने तेने पण केशी श्रमण पासे जवानुं मन थयुं, पछी तेणे कौटुंबिक पुरुषोने बोलावीने अश्वरथ जलदी तैयार करी लाववानो आदेश कर्यो.

रथ आवी पहोंचतां तो ते सारथि नाह्यो, बलिकर्म कर्युं, मंगलमय शुद्ध वस्त्रो पहेर्यां, एक जणे एना उपर छत्र धर्युं अने ए रीते ते, रथमां बेसी मोटा समुदाय साथे केशी कुमारश्रमणना ऊतारा भणी जवा नीकळ्यो. तेमनी पासे पहोंचतां ज घोडाओ ऊभा राख्या, रथने थंभावी दीधो अने पोते रथथी ऊतरी केशी कुमारश्रमणनी त्रण प्रदक्षिणा करी, तेमने वांदी नमी हाथ जोडी विनयपूर्वक सेवा करतो तेमनी सामे बेठो.

केशी कुमारश्रमणे चित्त सारथिने अने तेनी साथेनी मोटी जनताने चतुर्याम धर्मनो उपदेश कर्यो एटले के सर्व प्रकारनी हिंसाथी विराम करवो, सर्व प्रकारना असत्यथी विराम करवो, सर्व प्रकारनी चोरीथी विराम करवो अने सर्व प्रकारना बहिद्धादानथी[९७] विराम करवो

[१५०] केशी कुमारश्रमणे कहेली आ हितशिक्षाओ सांभळीने चित्त सारथि प्रमुदित थयो अने श्रमणने त्रण प्रदक्षिणा दई हाथ जोडी आ प्रमाणे बोल्यो ॥१०५॥

हे भगवन्! तमे कहेला निर्ग्रंथ प्रवचनमां श्रद्धा करुं छुं, विश्वास धरुं छुं, हे भगवन्! तमोए जणावेलुं निर्ग्रंथ प्रवचन मने रुचे छे, ते प्रमाणेना पालन माटे ऊजमाळ थउं छुं अने हे भगवन्! जेवुं तमे कहेलुं छे तेवुं ते, मने साचुं लागे छे

तमारी पासे आ घणा उग्रो भोगो अने इभ्यो वगेरेए पोतानुं पुष्कळ सोनुं रूपुं धन धान्य बळ वाहन भंडार कोठार अने विशाळ अंतःपुर ए बधांनो परित्याग करीने अने ए बधुं धन जनतामां वहेंची दईने मुंड थई गृहवास छोडी अणगारपणुं स्वीकार्युं छे पण हुं तेम करवा समर्थ नथी हुं तो आप देवानुप्रियनी पासे पांच अणुव्रतवाळो अने सात शिक्षाव्रतवाळो एम बार प्रकारनो गृहिधर्म स्वीकारवा शक्तिमान छुं

केशी कुमारश्रमण बोल्याः हे देवानुप्रिय! तने सुख थाय तेम कर, तेमां विघ्न न आववा दे पछी केशी कुमारश्रमण पासे चित्त सारथिए पूर्वे जणावेलो गृहिधर्म स्वीकार्यो अने तेमने वांदी नमीने पाछो ए सारथि पोताने ऊतारे आवी पहोंच्यो

९७ स्थानांगसूत्रनी टीकामा (पृ० २०२) बहिद्धा एटले मैथुन अने आदान एटले परिग्रह एम जणावेलु छे अथवा स्त्रीपरिग्रह वा बीजो कोई पण प्रकारनो परिग्रह 'बहिद्धादान'मां समाई जाय छे. केशी कुमारश्रमण भगवान पार्श्वनाथना अनुयायी हता माटे तेमणे चार महाव्रतोने उपदेशेलां छे.

चित्त, श्रमणोपासक थयो

[१५१] हवे ते चित्त सारथि श्रमणोपासक थयो. जीव अजीव पुण्य पाप आस्रव संवर निर्जरा क्रिया अधिकरण वंध अने मोक्षना स्वरूपने ते बराबर समजवा लाग्यो. निर्ग्रंथ प्रवचनमां तेने हवे एवी दृढ श्रद्धा थई के ते प्रवचनथी कोई देव असुर नाग सुवर्ण यक्ष राक्षस किन्नर किंपुरुप गरुड गांधर्व के महोरग वगेरे देवगणो तेने चळावी शके नहि निर्ग्रंथ प्रवचन तरफनी तेनी वधी शंकाओ टळी गई, वधी कांक्षाओ शमी गई अने बधी विचिकित्साओ ओसरी गइ. ते ए प्रवचनना मर्मने बराबर समज्यो अने जेम अस्थिमज्जा परस्पर ओतप्रोत थई रहेलां छे तेवी ज ओतप्रोतता ए प्रवचनमां तेने जामी गई हवे ते एम मानवा लाग्यो के आ निर्ग्रंथ प्रवचन परमार्थरूप छे अने बाकी वधुं अनर्थरूप छे प्रवचननी आवी आस्थाने लीधे हवे ते[९८] अतिशय दानशाली थयो एटले हवे तेणे पोताना घरना आगळिया उचा करी लीधा अर्थात् सर्व कोइने माटे दरवाजाओ खुल्ला करी नाख्या तेनुं शील एटलुं वधुं पवित्र वन्यु के हवे ते कोइना घरमां के अतःपुरमां प्रवेशतो तोपण लेशमात्र अप्रीतिकर नहोतो लागतो. चौदश आठम अमावास्या[९९] अने पूर्णिमाना दिवसोमां ते पूरेपूरो उपोसथ पाळतो, निर्ग्रंथ श्रमणोने निर्दोष खानपान खादिम स्वादिम पीठ पाटीयां शय्या संथारो वस्त्र पात्र कामळ पगपूंछणुं अने ओसडवेसड आपतो हतो तथा शीलव्रत गुण विरमण प्रत्याख्यान अने उपोसथोपवास द्वारा पोताना आत्माने भावित करतो अने सावत्थी नगरीमां जे जे राजकार्यो अने राजव्यवहारो हता ते वधांने जितशत्रु राजाने साथे राखीने ते पोते ज संभाळतो रहेवा लाग्यो

---

९८ जेणे धर्मवचनने सांभळीने समजमां लीधेलु होय अने जीवनशुद्धि, समाजशुद्धि, राष्ट्रशांति अने विश्वशांतिना कारणे ए धर्मवचनने जीवनमां उतारवा प्रयत्न कर्यो होय तेवा एक मानवनु खरेखरुं शब्द चित्र आ कडिकामां दोरेलु छे.

९९ वैदिक संप्रदाय अने वौद्ध सप्रदायमां पण आ तिथिओने धर्मकरणी माटे बतावेली छे. आ माटे जुओ 'भगवान महावीरनी धर्मकथाओ'मांनु ते विशेनु टिप्पण.

[१५२] आम केटलाक दिवसो वीत्या पछी कोइ एक दिवसे राजा जितशत्रुए एक महामूल्य भेटणुं तैयार कराव्युं. पछी चित्त सारथिने बोलावीने राजाए कह्युं के-हे चित्त ! तुं सेयविया नगरीए जा अने हुं आ जे नजराणुं आपुं छुं ते राजा पयेसीने नजर कर तथा मारी वती एमने विनंती करजे के तेमणे जे मारा योग्य संदेशो कह्यो मोकलाव्यो छे ते मारे मन साचो अने असंदिग्ध छे. आम सूचना आपीने राजाए विशेष आदरपूर्वक चित्त सारथिने विदाय आपी.

[१५३] चित्त सारथि पण ए भेटणुं लई पोताने ऊतारे आवी, जवानी तैयारी करवा लाग्यो. जतां पहेलां ते नाही धोई शुद्ध वस्त्रो पहेरी केशी कुमारश्रमण पासे गयो.

श्रमणे सारथिने धर्मोपदेश कर्यो. धर्मोपदेश सांभळी सारथि प्रसन्न थयो ऊठतां तेणे श्रमणने विनंती करी के—हे भगवन् ! राजा जितशत्रुनी विदाय लई आजे हु सेयविया नगरी भणी रवाना थाउं छुं, तो हे भगवन् ! तमे कोई वार सेयविया नगरी जरूर पधारजो. सेयविया नगरी प्रासादिक छे, दर्शनीय छे अने बधी रीते रमणीय छे, माटे जरूर तमे त्यां पधारवा कृपा करशो.

चित्त सारथिना आ कथननो केशी श्रमणे आदर न कर्यो, ते तरफ कांई ध्यान न आप्युं, पण मात्र मौन ज धरी राख्युं. छतां चित्त सारथिए तो बीजीवार अने त्रीजीवार पण सेयविया नगरी आववानो आग्रह कर्या कर्यो.

ज्यारे बे-त्रणवार सारथिए आग्रहभरी विनती करी त्यारे केशी कुमारश्रमण सारथि प्रति बोल्या-के हे चित्त ! जेम कोई एक लीलोछम ठंडी छायावाळो मोटो वनखंड होय, तो हे चित्त ! ते वनखंड, मनुष्य पशु पक्षी अने सर्पो वगेरेने रहेवालायक खरो ? चित्त बोल्यो-हा जरूर-ए रहेवालायक खरो

श्रमण बोल्या-पण हे चित्त ! ए वनखंडमां अनेक प्राणीओनुं लोही पीनारा भीलुंगा नामना पापशकुनो रहेता होय तो ए वनखंड शुं रहेवालायक खरो ? चित्त बोल्यो-एम होय तो ए सारो वनखड पण उपसर्ग देनारो होवाथी रहेवालायक न गणाय.

श्रमण बोल्या-ए ज प्रमाणे, हे चित्त ! तारी सेयविया नगरी पण भले घणी सारी होय, छतां तेनो अधार्मिक राजा पयेसी

सेयविया तरफ आववा माटे चित्ते केशिश्रमणने करेली विनंती पएसिनृप अधार्मिक होवाथी ए विनंतीनो अस्वीकार

केशिश्रमणना आदर माटे चित्ते पोताना उद्यानपाल कोने करेली भलामण

प्रजानो कारभार सारी रीते न चलावनारो होवाथी हुं त्यां केवी रीते आवी शकुं ?

[१५४] पछी चित्त सारथिए केशी कुमारश्रमणने एम कह्यु के-हे भगवन्! तमारे राजा पयेसी साथे शुं करवुं छे? सेयविया नगरीमां सार्थवाह वगेरे बीजा घणा लोको छे, जेओ आप देवानुप्रियने वांदशे नमशे अने आपनी सेवामां रहेशे तेम ज ए लोको आपने खानपान खादिम स्वादिम प्रतिलाभशे तथा पीठ फलक शय्या संस्तारक वगेरे द्वारा पण आपने उपनिमन्त्रित करशे.

सारथिनुं आ कथन सांभळी केशी कुमार बोल्या-चित्त! त्यारे वळी कोइ वखते तारी सेयविया नगरीए पण आवीशुं.

[१५५] पछी सारथि केशी श्रमणने वांदी नमी त्यांथी पोताना ऊतारा तरफ जवा माटे पाछो फर्यो. ऊतारे आवी घोडे जोडेला चार घंटावाळा रथमां बेसी सेयविया नगरीथी जे रीते आव्यो हतो ते रीते कुणालदेशनी वचमां थतोक पाछो त्यां जवा नीकळ्यो

केकयिअर्ध देशनी सेयविया नगरीमां आवतां ज चित्त सारथिए त्यांना मियवण उद्यानना रखेवाळोने बोलावी सूचना करी के-हे देवानुप्रियो! पार्श्वापत्य केशी कुमारश्रमण क्रमे क्रमे गामेगाम फरता फरता अहीं आववाना छे, तो तेओ अहीं आवे त्यारे, देवानुप्रियो! तमे तेमने वांदजो, नमजो, तेमने रहेवा योग्य स्थळमां रहेवानी अनुज्ञा आपजो अने पीठ फलक शय्या संस्तारक लई जवा निमंत्रण करजो.

ते रखेवाळोए चित्त सारथिनुं उक्त कथन माथे चढाव्युं अने तेओ केशी कुमारना आगमननी राह जोवा लाग्या.

[१५६] मियवणना रखेवाळोने पूर्वोक्त भलामण करी चित्त सारथि सेयविया नगरीए आवी पहोंच्यो नगरीनी वच्चोवच्च थतोक ते, पयेसी राजाना घरमां वहारनी उपस्थानशाळा तरफ गयो त्यां पहोंची तेणे घोडाओने थंभावी रथ ऊभो राख्यो, रथथी ऊतरी राजा जितशत्रुए आपेलुं महामूल्य भेटणुं लई ते सारथि, राजा पयेसी पासे गयो, हाथ जोडी राजा पयेसीने वधावी ते भेटणुं तेने नजर कर्युं.

राजा पयेसीए जितशत्रुनी भेट स्वीकारतां चित्त सारथिनुं सन्मान कर्युं, सत्कार कर्यो अने तेने पोताने घेर जवानी अनुज्ञा आपी.

राजा पासेथी नीकळी रथमां बेसी सारथि पोताने घेर आव्यो, नाह्यो, बलिकर्म कर्युं, खाइ पीने शुद्ध थयो अने पछी पोताना

केशिश्रमण सेयविया आव्या

उत्तम प्रासादमां सुशोभित सिंहासने बेठो. त्यां तेनी सामे मृदंगो वागवा लाग्या, बत्रीश प्रकारनां नाटको थवा लाग्यां अने उत्तम तरुणीओ नाचवा लागीः ए रीते ते, गानतानमां पोतानो समग्र वितावतो उत्तम सुखोने भोगवतो रहेवा लाग्यो

[१५७] हवे अन्य कोइ दिवसे केशी कुमारश्रमणे मागी आणेलां पीठ पाटीयां शय्या अने संथारो [१००] पाछां आपी दीधां अने पोते पोताना पांचसें अनगारो साथे बहार विहार अर्थे नीकळी पडया

सावत्थी नगरीथी विहार करी फरतां फरतां तेओ केकयिअर्ध देशनी सेयविया नगरीना मिगवण उद्यानमां आवी पहोंच्या अने त्यां यथोचित अवग्रह स्वीकारी संयम अने तपथी आत्माने भावित करता रहेवा लाग्या. ||१०९||

ज्यारे केशी कुमारश्रमण ते उद्यानमां आवी पहोंच्या त्यारे तेमनुं आगमन थयुं जाणी ते उद्यानपालको बहु खुश थया. तेमनी पासे आवीने तेओए केशी श्रमणने वांद्या, तेमने योग्य रहेवाना स्थळोमां रहेवानी अनुमति आपी, अने तेमने उपयोगमां लेवा माटे पीठ पाटीयां संथारो वगेरे लई जवाने निमंत्रण आप्युं.

ते रखेवाळोए केशी कुमारश्रमणनां नाम अने गोत्र पूछीने याद पण करी लीधां. पछी तेओ एकांतमां भेगा थई परस्पर वातचीत करवा लाग्या के, हे देवानुप्रियो ! आपणो चित्तसारथि जेमनी वाट जोतो रहे छे, जेमनुं दर्शन इच्छे छे अने जेमनां नाम गोत्र सांभळतां पण ए खूब प्रसन्न थाय छे, ते ज आ केशी कुमारश्रमण गामेगाम फरतां फरतां अहीं सेयविया नगरीमां आवी चडया छे,

---

१०० आजकाल जेम उपाश्रयमां पीठ पाट पाटला वगेरे तैयार रहे छे अने साधुओ संथाराने साथे ज फेरवे छे तेम पहेलां न हतुं पहेलां तो चोमासु करनारा श्रमणो पोते जाते पीठ वगेरे उपयुक्त पदार्थने गृहस्थने त्याथी निर्दोष रीते मागी लावता अने संथारो पण साथे न फेरवता ज्यारे अने ज्यांसुधी जरूर पडे त्या सुधीनी मुदत माटे सथारो पण गृहस्थने त्याथी मागी लाववामां आवतो. सथारामा घास–पराळ पाथरवामां आवतु.

तो हे देवानुप्रियो ! आपणे जईए अने चित्तसारथिने तेने अतिप्रिय लागे तेवी केशी कुमारना आगमननी हकीकत जणावीए.

एवो विचार करी ते उद्यानपालको चित्तसारथिने घेर गया, तेने प्रणामपूर्वक जयविजयथी वधावी कहेवा लाग्या के, हे देवानुप्रिय ! तमे जेमनी वाट जोइ रह्या छो ते केशी कुमारश्रमण आपणी सेयविया नगरीना मियवण उद्यानमां आवी संयम अने तपथी आत्माने भावित करता रहेवा लाग्या छे.

पएसीने उपदेश आपवानी चित्तनी भलामण

[१५८] उक्त हकीकत सांभळी चित्तसारथि वहु खुश थयो. पछी ते, आसनथी उठी-ऊभो थई पादपीठथी नीचे ऊतरी पगमांथी मोजडीओ काढी नांखी खभे खेस राखी हाथ जोडी जे दिशामां केशी कुमारश्रमण ऊतर्या हता ते दिशा तरफ सात आठ पगलां गयो अने प्रणामपूर्वक तेमनी स्तुति करवा लाग्योः

नमोऽत्थु णं अरिहंताणं भगवंताणं वगेरे [पृ० १८ पं० २]

आम शक्रस्तव पूरुं करतां छेवटे ते बोल्यो के-अहींना मियवण उद्यानमां पधारेला ए मारा धर्माचार्य अने धर्मोपदेशक केशी कुमारश्रमण भगवानने हुं वांदुं छुं.

ए रीते पोताना धर्माचार्यने नमस्कार करी तेमनो आगमन संदेशो कहेवा आवनार ते उद्यानपालकोनो सारथिए सत्कार कर्यो अने जीवतांसुधी पहोंचे तेटलुं विशाळ प्रीतिदान आपी तेमने विदाय कर्या.

पछी तेणे कौटुंबिक पुरुषोने बोलावीने अश्वरथ जलदी तैयार करी लाववानो आदेश कर्यो रथ आवतां आवतां तो ते नाही, वलिकर्म करी, शुद्ध वस्त्रो पहेरी अने शरीरने शोभावी तैयार थई गयो.

पछी ते, रथमां वेसी मोटा जनसमुदाय साथे केशी कुमारश्रमणना दर्शनार्थे गयो.

[१५९] केशी श्रमणनी धर्मदेशना सांभळी हरखाएलो अने तोप पामेलो सारथि बोल्यो के-हे भगवन् ! अमारो राजा पएसी अधार्मिक छे अने पोताना देशनो य कारभार वरावर चलावतो नथी, तेम कोई श्रमण व्राह्मण के भिक्षुओनो आदर करतो नथी

रायपसेण-
इय सुत्तनो
सार

अने सर्व कोईने हेरान हेरान करे छे. माटे हे देवानुप्रिय ! तमे प राजाने धर्मोपदेश आपो, तो तेनुं घणुं भलुं थाय, साथे श्रमण
ब्राह्मण भिक्षुओ, मनुष्यो, पशुओ अने पक्षीओनुं पण घणु भलुं थाय अने तेम थतां तेना आखाय देशनु पण घणुं सारुं थाय.

चित्तसारथिनुं आ कथन सांभळी केशी कुमारश्रमण बोल्या के-हे चित्त ! जे मनुष्यो आराम के उद्यानमां आवेला श्रमण ब्राह्मणनी
सामे जता नथी, तेमने वांदता नमता के सत्कारता नथी, तेमज तेमनी पर्युपासना करता नथी अने तेमनी पासे जई पोताना प्रश्नोना
खुलासा पूछता नथी, तेओ केवळीए कहेला धर्मने सांभळवानो लाभ मेळवी शकता नथी

जे मनुष्यो उपाश्रयमां आवेला श्रमण ब्राह्मणनो आदर करता नथी, तेमनी पासे जई कशो खुलासो पूछता नथी, तेओ धर्म
सांभळवानो ल्हावो लई शकता नथी.

जे मनुष्यो गोचरीए नीकळेला श्रमण ब्राह्मणनी भक्ति करता नथी, तेमज तेमने विपुल अशन पान खादिम अने स्वादिम वडे
प्रतिलाभता नथी तथा तेमने कोई प्रकारनो खुलासो पूछता नथी, तेओ धर्मने सांभळवा समजवाना अधिकारी थई शकता नथी.

तेमज जे मनुष्यो श्रमण ब्राह्मणनी पासे जवा छतां पोतानी जातने हाथ कपडुं के छत्री वडे ढांकी राखे छे-छुपावी राखे छे
अर्थात् एक खूणामां जई चुपचाप बेसी रहे छे पण कशो खुलासो पूछवा आगळ आवता नथी, तेओ य धर्मने सांभळवानो लाभ
खोई बेसे छे.

पण हे चित्त ! जे मनुष्यो आराम उद्यान के उपाश्रयमां आवेला श्रमण ब्राह्मणनो आदर करे छे, गोचरीए आवेला तेमने विपुल
दान आपे छे अने तेमनी पासे जतां पोतानी जातने न छुपावतां ज्यां ज्यां प्रसंग मळे त्यां त्यां सर्व खुलासा पूछी ले छे, तेओ ज
धर्मने सांभळवानो समजवानो के मेळववानो लाभ मेळवो शके छे.

तो हे चित्त ! तारा राजा पएसीने अमे धर्म केवी रीते कही शकीए, केमके ते अमारी पासे आवतो नथी तेमज अमारी सामुं
पण जोतो नथी.

पएसीनी
धर्म सांभ-
लवानी
अयोग्यता

॥१११॥

रायपसेण इय सुत्तनो सार

॥११२॥

घोडानी परखने बाने चित्त, पएसीने श्रमण पासे लई गयो

[१६०] पछी सारथि बोल्यो:

हे भगवन्! कोई एक वखते मारी पासे कंबोज देशमांथी चार घोडाओनी भेट आवेली, ए में न राखतां परबारी राजाने त्यां मोकली आपी, तो हे भगवन्! ए घोडाओना व्हानाथी राजा पएसीने हुं आप देवानुप्रियनी पासे लावी शकीश, माटे हे देवानुप्रिय! ते समये तमे राजा पएसीने धर्मकथा कहेतां लेश पण ग्लान थशो नहि. तमे तमारे राजा पएसीने खूब छूटथी धर्म कहेजो–लेश पण अचकाशो नहि.

पछी केशी कुमारश्रमण बोल्याः हे चित्त! ते प्रसंगे वात

त्यारबाद चित्तसारथि पोताना धर्माचार्य केशी कुमारश्रमणने वांदी नमी रथमां बेसी पोताने आवासे जई पहोंच्यो.

[१६१] हवे एक दिवसे प्रभातना पहोरे नियम धारी अने आवश्यक करी सूर्य उगतां ज चित्तसारथि पोताने घेरथी राजा पएसीने घेर गयो. राजाने नमस्कार करी जयविजयथी वधावी ते बोल्यो:

हे देवानुप्रिय! आपने में केळवेला चार घोडानी भेट मोकलेली छे, तो हे स्वामी! चालो अने आज ए घोडाओनी चेष्टा जुओ, अर्थात् एमनां चाल स्वभाव वगेरेनी परख करो.

राजाए सारथिने कह्युं चित्त! तुं जा अने पारखवाना ते चारे घोडाओ जोडेलो अश्वरथ जलदी तैयार करी अहीं हंकारी लाव.

अश्वरथ आवी पहोंचतां शरीरने सजधज करीने राजा रथमां बेसी सेयविया नगरीनी वच्चोवच्च थतोक घोडाने खेलवतो खेलवतो बहार नीकळ्यो.

एम जतां जतां चित्तसारथि ते रथने अनेक योजनो[101] सुधी खेंची गयो राजा पएसी, गरमी, तरस, रथनो वायरो–ऊनी लू के उडती धूळथी कंटाळी थाकी गयो अने बोल्यो:

---

१०१ अहींनो आ 'अनेक योजन' शब्द, फरवानी मर्यादाना अतिरेकने सूचवे छे तेथी तेनो 'सो पचास योजन' एवो अर्थ कोइ न समजे.

श्रमण तरफ पएसीनी अरुचि

चित्त! मारुं शरीर थाकी गयुं छे माटे हवे रथने तुं पाछो वाळ.

सारथि रथने पाछो वाळी मियवण उद्यान तरफ हंकारी गयो उद्यान पासे पहोंचतां तेणे राजाने कह्युं:

स्वामी! आ मियवण उद्यान छे अहीं घोडाओने सारी रीते थाक खवडावीए अने तेमनो वधो श्रम आपणे दूर करी नाखीए

[१६२] राजाए 'हा' पाडतां ते उद्यानमां केशी कुमारश्रमणना ऊतारानी पासे जई चित्ते घोडाओने रोकी राख्या रथने स्थिर कर्यो अने घोडाओने छोडी नाखी तेमनो श्रम दूर थाय तेवी प्रवृत्ति शरू करी. ॥११३॥

राजा पण रथथी नीचे ऊतरी सारथिनी ए प्रवृत्तिमां जोडायो अने घोडाओने धीमे धीमे फेरववा लाग्यो.

एम करतां करतां, मियवणमां मळेली मोटी सभामां वच्चे बेसी मोटा अवाजे कहेता केशी कुमारश्रमणने राजाए जोया.

जोतां ज तेने विचार आव्यो के 'जड लोको ज जडनी उपासना करे छे, मुंड लोको ज मुंडनी पूजा करे छे, मूढ लोको'ज मूढनो आश्रय खोळे छे, अपंडित लोको ज अपंडितनो आदर करे छे अने अज्ञानी लोको ज अज्ञानीनुं बहु मान करे छे' तो आ वळी कोण जड मूढ मुंड अपंडित अने अज्ञानी पुरुष छे जे शरमाळ अने शरीरे हृष्टपुष्ट देखावडो लागे छे? ए शुं खाय छे? शुं पीये छे? एवुं ते शुं खाधा पीधाथी एनुं शरीर आवुं तगमगी रह्युं छे? अने वळी ए शुं दे छे जेने लीधे आवडी मोटी मानवमेदनीनी वच्चे बेठो बेठो ते मोटा वराडा पाडे छे?

आम विचार आवतां ज राजाए सारथिने कह्युं चित्त! जोतो खरो, आ लोको केवा जड छे जे पेला मोटा जडनी सेवा करे छे अरे ए मोटो जाडो जड तेओनी सामे केवा मोटा वराडा पाडीने कोण जाणे शुंय समजावे छे! गम्मत तो ए छे के आवा नफकरा अने जामी गएला जड लोकोने लीधे आपणे आपणी पोतानी पण उद्यानभूमिमां सारी रीते हरी फरी शकता नथी. मात्र विसामो अने शांति मेळववा माटे तो अहीं आव्या अने अहीं तो माथाना वाळ ऊचा थई जाय एवा वराडा काने अथडाया करे छे.

[१६३] चित्ते राजाने कह्युं.

चित्ते करावेलो श्रमणनो परिचय

हे स्वामी! ए केशी नामे कुमारश्रमण पार्श्वापत्य छे, जातिवंत छे, चार ज्ञानना धारक छे, एमने आधोऽवधिज्ञान थएलुं छे अने तेओ अन्नजीवी[१०२] छे.

राजा बोल्योः

चित्त! तुं शुं कहे छे? शुं ए पुरुषने आधोऽवधिज्ञान छे? शुं ए अन्नजीवी छे?

सारथि बोल्योः

हा, स्वामी! एम ज छे

राजाः चित्त! त्यारे शुं ए पुरुष अभिगमनीय छे?

चित्तः हा, स्वामी! ए श्रमण अभिगमनीय छे

राजाः त्यारे तो चित्त! आपणे तेनी सामे जईए.

[१६४] आम वातचीत करी ए बन्ने जणा साथे, केशी कुमारनी सामे जईने तेमनी पासे बेठा.

राजाः हे भंते! शुं तमे आधोऽवधिज्ञान धरावो छो? शुं तमे अन्नजीवी छो?

श्रमणे राजाने कह्युंः

हे पएसी! गामे गाम फरता कोई अंकवाणिया शंखवाणिया के दंतवाणिया दाणमांथी छटकी जवा माटे कोईने खरो रस्तो पूछता

---

१०२ केशी कुमारश्रमणनु हृष्टपुष्ट अने कांतिवाळुं मोटु ताजुं शरीर जोईने राजाने मन आ प्रश्न उद्भवेलो छे. जेओ तपस्वी होय अने भिक्षामां आवेल अतप्रात अन्न खाता होय तेओनुं शरीर आवुं मोटुं ताजुं अने कांतिवाळुं होई शके खरु? ए जातनी राजाने मन शंका छे. टीकाकार पण आ ज खुलासो आपे छे. ("एष किम् आहारयति? × न खलु कदन्नभक्षणे एवंरूपायाः शरीरकान्तेः उपपत्तिः इत्यादि–पृ० १३०).

नथी पण आडे अवळे मार्गे चाले छे, तेम विनयना मार्गथी छटकी जवाने लीधे तने पण सारी रीते पूछतां आवडतुं नथी.

पएसी ! मने जोईने तने एवो विचार थयेलो खरो के आ जड लोको पेला मोटा जडनी उपासना करे छे अने आ मारा उद्यानमां पण वराडा पाडी मने ए सुखे रहेवा देता नथी ?

राजाः हा, ए वात खरी.

[१६५] पण हे भंते ! ए तमे जाण्युं शाथी ? तमने एवुं ते केवुंक ज्ञान के दर्शन थएलुं छे जेथी मारा मननो संकल्प पण तमे जाणो लीधो ?

केशी श्रमण बोल्या.

अमारा श्रमण निर्ग्रंथोना शास्त्रोमां कहेलुं छे के ज्ञानना पांच[103] प्रकार छेः १ आभिनिबोधिकज्ञान २ श्रुतज्ञान ३ अवधिज्ञान ४ मनःपर्यवज्ञान अने ५ केवळज्ञान. तेमां अवग्रह ईहा अवाय अने धारणा एम चार प्रकारनुं पहेलुं ज्ञान छे अंगप्रविष्ट अने अंगबाह्य एवा बे प्रकार बीजा ज्ञानना छे त्रीजुं ज्ञान, भवप्रत्यय अने क्षायोपशमिक एम बे भेदवाळुं छे अने चोथा ज्ञानना ऋजुमति तथा विपुलमति एवा बे भेद छे.

हे पएसी ! जणावेलां पांच ज्ञानोमां पहेलांनां चारे ज्ञान तो मने थएलां जे, फक्त एक पांचमुं केवळज्ञान छे ते मने थएलुं नथी. ए पांचमुं ज्ञान तो अरिहंत भगवंतोने होय छे.

हे पएसी ! हुं छद्मस्थ छुं अने ए चार ज्ञानोद्वारा तारा मनना संकल्पने पण जाणी शकुं छुं-जोई शकुं छुं.

[१६६] पछी राजाए केशी श्रमणने कह्युं.

हे भंते ! अहीं हुं आपनी पासे बेसुं ?

केशी कुमारश्रमण बोल्याः

पएसीना अविनय बाबत श्रमणनी टकोर

श्रमणना ज्ञान बाबत पएसीनी पृच्छा

॥११५॥

१०३ ज्ञानना नाना मोटा अनेक प्रकारो अने तेनी विशेष समजुती माटे जुओ नन्दीसूत्र अथवा भगवतीसूत्र.

जीव अने शरीर भिन्न भिन्न छे एवी श्रमणनी समज

आ उद्यानभूमि तारी पोतानी छे तेथी अहीं बेसवुं के न बेसवुं ए तारी वृत्तिनी वात छे.

पछी तो चित्तसारथि अने राजा पएसी ए बन्ने जणा साथे केशी कुमारश्रमणनी पासे बेठा. राजाए श्रमणने पुछ्युं:

हे भंते ! तमारा श्रमण निर्ग्रंथोमां एवी समज छे, एवी प्रतिज्ञा छे, एवी दृष्टि छे, एवी रुचि छे, एवो हेतु छे, एवो उपदेश छे, एवो संकल्प छे, एवी तुला छे, एवुं मान छे, एवुं प्रमाण छे अने एवुं [104]समोसरण छे के-जीव जुदो छे अने शरीर जुदुं छे, पण जे जीव छे ते ज शरीर छे एवी समज नथी.

कुमारश्रमण बोल्याः

हा, पएसी ! अमारी समजमां जीव जुदो छे अने शरीर जुदुं छे एम छे पण जे जीव छे ते ज शरीर छे एवी अमारी समज नथी.

[१६७] राजा बोल्यो.

जीव अने शरीर बन्ने जुदां जुदां ज होय अने जे जीव छे ते ज शरीर छे एम न होय तो, हे भंते ! तमे सांभळो के-

एक मारो[105] दादो हतो, जे आ ज नगरीमां मोटो अधार्मिक राजा हतो, ते पोताना देशनी पण ठीक सार संभाळ न करतो अने

१०४ समोसरण एटले एक मतमा "घणाओनु मीलन"-["एतत् समवसरणम्-बहूनामेकत्र मीलनम्"-पृ० १३३ टीकाकार]

१०५ दीघनिकायमा आ बाबत नीचेनी हकीकत छे. राजा पायासि अने कुमार काश्यप ए बे वच्चे मुलाकात थता पायासि पोतानी शकाओ काश्यप पासे रजु करे छे. पछी काश्यप, राजाने समजाववा कहे छे के-हे राजन्य ! आ चन्द्र शु छे ? सूरज शुं छे ? तेओ आ लोकमां छे के परलोकमा छे ? देवो छे के मानवो छे ? अर्थात्-आ उदाहरण आपीने काश्यप, राजा पासे परलोकनो साबीती आपे छे पण राजाने गळे आ वात उतरती नथी. पछी राजा कहे छे के, मारा केटलाक जातभाइओ अने मित्रो प्राणातिपातादिकमा मस्त रहेता, तेओने में कही राखेलु के प्राणातिपातादिकथी तमे नरके जाओ तो मने ए बाबतनी सूचना करवा अहीं आवजो पण तेओ अहीं आव्या नहीं तेम

रायपसेण-
इय सुत्तनो
सार

घणांय पापकर्मोमां ज राच्यो रहेतो तमारा कहेवा प्रमाणे तो ए पापी मारो दादो काळ आवतां मरण पामी कोई एक नरकमां नैरयिक
थयो होवो जोईए. हे भंते ! केम खरुं ने ?
वळी, ए मारा दादानो हु वहालो पौत्र छुं, तेने मारा पर घणुं हेत हतुं, हुं तेनो विशेष लाडीलो-मानीतो हतो, तेनु हृदय मने
जोईने विशेष आनंद पामतुं. वधारे शुं, पण मारुं नाम सांभळीने पण तेओ पोतानुं अहोभाग्य मानता.
हवे, हे भंते ! तमारा कहेवा प्रमाणे जीव अने शरीर जुदां जुदां होय तो मारा दादा नरकमां गया होवा जोइए. वळी, मारा
दादाने मारा उपर घणुं हेत हतुं तेथी तेमणे अहीं मारी पासे आवीने एम जणाववु जोईए के "हे पौत्र ! हुं तारो दादो हतो पण
अधार्मिक होवाने कारणे में घणां पापो आचरेलां, तेथी हु नरकमां पड्यो छुं. माटे, हे पौत्र ! तुं लेश पण पाप न आचरजे अने
प्रामाणिकपणे देशनो कारभार करजे पापकर्ममां पडीश तो मारी पेठे नरकमां जईश-नरकनी यातनाओ बहु भयंकर छे, माटे भूल्ये-
चूक्ये जरा पण पापाचरण न सेवीश"
हे भंते ! मारो दादो मारी पासे आवीने उक्त रीते कहे, तो जीव अने शरीर जुदां जुदां छे एवी मारी श्रद्धा थाय, पण अत्यार-
सुधीमां मारे दादे अहीं मारी पासे आवीने एवुं कशुंय कहेलुं नथी, तेथी हुं एम समजुं छुं के तेमनो जीव अने शरीर ए बन्ने साथे ज
नाश पामी गयां छे अर्थात् मारा दादाना देहने देन देतांनी साथे तेमनो जीव पण अहीं बळी गयो छे तो परलोकमां जाय ज कोण ?
अने एम छे माटे ते अहीं आवी पण क्यांथी शके ? अने आम छे माटे जीव अने शरीर बन्ने एक ज छे-जे जीव छे ते ज शरीर
छे-ए मारी प्रतिज्ञा सुप्रतिष्ठित छे.

कोई दूतने पण तेमणे मोकल्यो नहीं, माटे परलोक नथी एवी मारी श्रद्धा छे. रायपसेणइय सूत्रमा राजा पएसीए पोताना दादानुं दृष्टान्त
आपीने जे हकीकत कहेली छे ते ज हकीकत दीघनिकायमा राजा पायासिए पोताना मित्रोनु उदाहरण आपीने कहेली छे. वळी, नरकमांथी न
आवी शकवानु जे कारण रायपसेणइयमूत्रमां बतावेलु छे ते ज कारण दीघनिकायमा पण कहेलु छे. जुओ दीघनिकाय भाग २ पायासिसुत्तंत पृ० ३२०.

जीव अने
शरीर भिन्न
भिन्न होय
तो मारो
दादो पापी
होईने नरके
गएलो, ते
मने हजु
सुधी केम
कांई खबर
आपवा न
आव्यो ?
आम कही
जीव अने
शरीरनी
अभिन्नता
कहे छे.
॥११७॥

श्रमणः जेलमां पडेलो अपराधी, पोतानां सगांने समजाववा आवी शकतो नथी ते न आवे माटे जीव अने शरीर अभिन्न छे एम केम बने ?

[१६८] केशी कुमारश्रमण बोल्या'

हे पएसी ! तारे सूर्यकांता नामे राणी[106] छे हवे तुं एम समज के ए रूडी रूपाळी तारी राणी कोई रूडा रूपाळा परपुरुष साथे मानवीय कामसुखोने अनुभवती होय एम तुं जो, तो ए कामुक पुरुषनो तुं शुं दंड करे ?

हे भंते ! हुं ए पुरुषनो हाथ कापी नाखुं, पग छेदी नाखुं, एने शूळीए चडावी दउं अथवा एक ज घाए तेनो प्राण लउं.

हे पएसी ! ते कामुक पुरुष कदाच तने एम कहे के-हे स्वामी ! तमे एक घडीक थोभी जाओ, मारा मित्रो ज्ञातिजनो संबंधीजनो अने परिवारना लोकोने हुं एम कही आवु के-हे देवानुप्रियो ! कामवृत्तिने वश थई हुं सूर्यकांताना संगमां पडयो तेथी मरणनी आ सख्त सजा पाम्यो छुं, माटे हे देवानुप्रियो ! तमे भूल्येचूक्ये पण एवा पापाचरणमां न पडशो, पडशो तो मारी पेठे फांसीनी सजा पामशो.

हे पएसी ! ए पुरुषनुं काकलुदीथी भरेलुं आवुं गळगळुं वचन सांभळीने तुं ते कामुकने सजा करतां घडीक पण थोभी जईश खरो ?

हे भंते ! एम तो न ज बने ए कामुक मारो अपराधी छे माटे लेश पण ढील कर्या विना हुं तेने पाधरो ज फांसीए चडावी दउं.

ए ज प्रमाणे, हे पएसी ! नरकमां पडेलो तारो दादो परतंत्रपणे जे दुःखो भोगवी रह्यो छे ते तने-वहाला पौत्रने कहेवा न आवी शके.

---

१०६ केशी कुमारश्रमण राणीनु उदाहरण आपीने अहीं जे हकीकत जणावे छे ते ज हकीकत चोरनुं उदाहरण आपीने कुमार काश्यप दीघनिकायमा जणावे छे. तेओ कहे छे के-हे राजन्य ! कोई पकडायेलो चोर तने एम कहे के, 'हु मारा कुटुबने कही आवु के तमे चोरी न करशो अने करशो तो मारी जेम विपत्तिमां पडशो एवु मने मारा कुटुबमा जई कही आववानी रजा आपो, हु पाछो आवतां सुधी तमो खमो अने त्यारबाद मने शिक्षा करजो, तो तु चोरनी ए वात माने खरो ? राजा न पाडे छे इत्यादि. जुओ दीघनिकाय पृ० ३२१.

मनुष्यलोकमां जईने पापकर्मनां माठां फळोनी सूचना करी आववानी पनी तो घणीय इच्छा होय, पण ते पेला अपराधी पुरुषनी पेठे त्यांथी छूटो ज थई शकतो नथी.

नरकमां ताजो ज आवेलो अपराधी-नारकी, मनुष्यलोकमां आववाने तो इच्छे छे, पण नीचेनां चार कारणोने लीधे ते अहीं आवी शकतो नथी

त्यांनी–नरकनी भयंकर वेदनानो अनुभव तेने अत्यंत विह्वल करी नाखे छे अने तेथी ते किंकर्तव्यमूढ बनी जाय छे, ए प्रथम कारण छे.

नरकना कठोर संत्रीओ ए नारकीने घडीभर पण छूटो राखता नथी अने तेने वारंवार सताव्या करे छे, ए बीजुं कारण छे.

ताजा नारकीनुं नारक वेदनीय कर्म पूरुं भोगवाई रहेलुं नथी होतुं, ए त्रीजुं कारण छे, अने चोथुं कारण तेनुं नरकनुं आवखुं पूरुं थएलुं नथी होतुं, ए छे, अर्थात् मनुष्यलोकमां आववाने इच्छतो पण नारकी ए बधा प्रतिबंधोने लीधे अहीं आवी शकतो नथी

माटे, हे पएसी ! 'शरीर साथे ज जीव अहीं वळी जाय छे अने तेथी मरेलो माणस फरी अहीं क्यांथी आवी शके ?' एम जे तुं कहे छे ए बराबर नथी.

मरीने नरकमां पडेलो प्राणी अहीं नथी आवी शकतो तेनुं कारण तेनी परतंत्रता ज छे, नहीं के ते नथी माटे, हे पएसी ! तुं एम समज के-जीव जुदो छे अने शरीर जुदुं छे–कोइ काळे ते बन्ने एक छे एवुं नथी.

[१६९] पएसी बोल्यो

हे भंते ! मारी मान्यताने दृढीभूत करनारो आ एक बीजो दाखलो सांभळो—

अहीं–आज नगरीमां मारी एक दादी[१०७] रहेती हती, जे मोटी धार्मिक श्रमणोपासिका हती, वळी ए जीव अजीव पुण्य पाप

१०७ आ सूत्रमां राजा पएसीए पोतानी धर्मिष्ठ दादीनुं उदाहरण आपीने जे हकीकत जणावी छे ते ज हकीकत दीघनिकायमां राजा

आस्रव संवर वगेरे तत्त्वोनी जाणकार हती अने तप तथा संयमवडे पोताना आत्माने वासित करती बहु पुण्य उपार्जन करती हती तमारा कहेवा प्रमाणे तो, काळ अवतां मरण पामी, ए कोई एक स्वर्गमां देव थएली होवी जोइए. हे भंते ! केम खरुं ने ?

वळी, ए मारी दादीनो हुं वहालो पौत्र छुं हवे ए मारी दादी, तमारा कहेवा प्रमाणे देव थई होय तो तेणीए अहीं मारी पासे आवीने एवुं कहेवुं जोइए के-हुं तारी दादी हती अने धार्मिक होवाने लीधे बहु पुण्योपार्जन करी स्वर्गमां देव थई छुं, माटे हे पौत्र ! तुं पण धार्मिक थजे अने देशनो कारभार प्रामाणिकपणे करजे. दानादिक वडे पुण्य उपार्जन करीश तो मारी पेठे स्वर्गनां सुखो अनुभवीश.

हे भंते ! मारी दादी मारी पासे आवीने ए प्रमाणे कहे तो जीव अने शरीर जुदां जुदां छे एवो मारी खात्री थाय. पण मर्याने लांबो वखत थयो छतां अत्यारसुधीमां मारी दादीए अहीं मारी पासे आवीने एवुं कशुं य सूचवेलुं नथी, तेथी जीव अने शरीर ए बन्ने एक ज छे पण जुदां जुदां नथी ए मारी खात्री पाकी थाय छे.

पएसीः धर्मिष्ठ होईने स्वर्गे गएली मारी दादी मने स्वर्ग विशे समाचार आपवा न आवी माटे जीव अने शरीर अ-भिन्न छे.

[१७०] केशी कुमारश्रमण बोल्याः

हे पएसी ! तु एम समज के,[१०८] देवमंदिरमां जवा माटे तुं नाहेलो छे, भीनां कपडां पहेरेलां छे, तारा हाथमां कळश अने धूपनी

पायासिए पोताना धर्मपरायण मित्रोनु उदाहरण आपीने सूचवेली छे. तेमां कह्यु छे के-"राजा पायासिए पोताना धार्मिक मित्रोने कह्यु के तमो तमारी धर्मवृत्तिने लीधे स्वर्गे जवाना अने एम बने तो मने तमो ए समाचार आपवा जरूर आवजो" इत्यादि-जुओ दीघनिकाय पृ० ३२७.

१०८ दीघनिकायमा आने बदले कुमार काश्यपे बीजु उदाहरण आपेलु छे अने ते आ छे. "जेम कोई मनुष्य गूथकूपमा-गधाती गटरमां-पडेलो होय अने तेनुं आखुं शरीर मळथी खरडायेलुं होय ते माणसने त्यांथी बहार काढी नवरावी-धोवरावी-चोक्खो करी, सुगंधी तेलथी तेना उपर विलेपन करी, माळा वगेरे पहेरावी तेने सुशोभित करी पछी तेने पाछा फरीवार ए गन्धाती गटरमां जवानुं कहेवामां आवे तो जाय

कडछी रही गई छे अने देवमंदिरमां पेसवाने तुं पगलां ज उपाडे छे, एवामां पायखानामां बेठेलो कोई पुरुष तने एम कहे के- हे स्वामी ! तमे अहीं पायखानामां आवो, बेसो, ऊभा रहो अने थोडीवार लांबुं डील करो, तो हे पएसी ! तुं ए वातने काने धर खरो ?

पएसी बोल्यो

हे भंते ! हु एवुं कशुं काने न धरु अर्थात् एक क्षण माटे पण पायखानामां न जउं. हे भंते ! पायखानुं तो भारे गंदुं छे, एवी गंदी जग्यामां हु शी रीते जई शकुं ?

केशी कुमारश्रमण बोल्याः

ए ज प्रमाणे, हे पएसी ! स्वर्गमां देव थएली तारी दादी अहीं आवी तने पोतानां सुखो कहेवाने इच्छे, तोपण आवी शके नहि.

स्वर्गमां ताजो उत्पन्न थएलो देव, मनुष्यलोकमां आववाने तो इच्छे छे, पण नीचेनां चार कारणोने लीधे ते अहीं आवी शकतो नथीः

ए देव, स्वर्गना दिव्य कामभोगोमां खूब मशगुल बनी जाय छे अने मानवीसुखोमां तेनी रुचि रहेती नथी, ए पहेलुं कारण छे.

ए देवनो मनुष्य साथेनो प्रेमसबंध तूटी गएलो होय छे अने स्वर्गनां देवदेवीओ साथेनो नवो प्रेमसंबंध तेमां संक्रमेलो होय छे, ए बीजुं कारण छे.

दिव्य कामसुखो भोगववानी लालचमां पडेलो ए देव, [109]अब घडीए जउं अब घडीए जउं, एम विचारे तो छे, पण तेना आवतां

स्वर्गमां गएलो प्राणी स्वर्गीय भोगोनी आसक्तिने लीधे अहिं न आवी शके माटे जीव नथी एम न कहेवाय

॥१२१॥

खरो ? राजा कहे छे–न जाय तेम आ गन्धाता मानवलोकमांथी स्वर्गे पहोंचेला देवो फरीवार गन्धाता मानवलोकमां आवे खरा ?" इत्यादि. दीघनिकाय पृ० ३२४.

१०९ दीघनिकायमा कहेलुं छे के–"मानवलोकना पूरां सो वरस एटले त्रायस्त्रिंश देवोनो एक दिवस-रात; एवां आपणां सो वरस जेटलां

आवतां तो मनुष्यलोकनां तेनां अल्पायुषी संबंधीओ मरी गयेलां होय छे, कारण के देवनी घडी एटले आपणां हजारो वर्ष अर्थात् एनी एक घडीमां तो आपणी केटलीए पेढीओ बदलाई जाय छे, एटले घडी पछीय देवनुं आववुं कल्पी लईए तोपण ए एना खरा संबंधीओने मळी शकतो नथी, ए त्रीजुं कारण छे.

चोथुं कारण मनुष्य लोकनी माथुं फाडी नाखे एवी भयंकर गंदकी छे.[110] ए गंदकी उंचे पण[111] चारसो पांचसो योजन सुधी फेलाय छे अने ए एवी तीव्र होय छे के देव एने सही शकतो नथी.

लावा त्रीश रातदिवस थाय त्यारे देवोनो एक मास अने एवा बार मास वीते त्यारे देवोनुं एक वरस थाय. ए त्रायस्त्रिंश देवोनुं एवां दिव्य हजार वर्ष जेटलुं दीर्घ आयुष्य होय छे. ए देवो एम धारे छे के आपणे बे के त्रण रात आ दिव्य कामगुणोने भोगवी पछी आपणा मानवी सम्बन्धीओने समाचार आपवा जईशु" इत्यादि पृ० ३२७.

११० दीघनिकायमां जणावेलुं छे के-"देवोनी दृष्टिमां मनुष्यो अशुचि छे, दुर्गन्धी छे, जुगुप्सित छे. मनुष्यलोकनी दुर्गन्ध सो योजन ऊंचो जईने देवोने बाधा उपजावे छे." "योजनसतं खो राजञ्ञ! मनुस्सगधो देवे उब्बाहति"–पृ० ३२५.

१११ नव योजन करतां वधारे दूरथी आवता सगंध पुद्गलो आपोआप घ्राणेन्द्रियनो विषय थई शकतां नथी एवो घ्राणेन्द्रियना विषयने लगतो जैनशास्त्रनो नियम छे. नव योजन करता वधारे दूरथी जे पुद्गलो आवे छे तेमनो गन्ध अत्यन्त मन्द थई जाय छे अर्थात् घ्राणेन्द्रिय तेने लई शकती नथी. आवो नियम छतां अहीं जे चारसें पांचसें योजन सुधी दुर्गन्ध जवानी वात कही छे तेनी सगति केम थाय? आवो प्रश्न टीकाकारने पोताने थाय छे. अने तेनुं समाधान पण तेओ पोते ज पोतानी रीते शोधी काढे छेः "जो के नियम तो एवो ज छे तोपण जे पुद्गलो अतिउत्कट गन्धवाळां होय छे ते नव योजन सुधी पहोंचतां त्यां तेमने जे बीजा पुद्गलो मळे छे तेमा तेओ पोताना दुर्गन्धनो पास बेसाडे छे अने ए पास बेठेलां पुद्गलो वळी आगळ जई बीजा पुद्गलोमा पास बेसाडे छे, ए रीते उपर उपर पास बेसाडेला पुद्गलो

देव पनी पोतानी इच्छा होवा छतां उपरनां चार कारणोने लीधे अहीं आवी शकतो नथी. माटे, हे पएसी ! 'शरीर साथे ज जीव अहीं वळी जाय छे, पथी मरेलो माणस फरी अहीं क्यांथी आवी शके ?' एवी तारी समज बराबर नथी.

चारसे पाचसे योजन सुधी पहोंची थळे छे. पण आ वात लक्ष्यमां राखवानी छे के उपर उपर जतां गन्ध मन्द थई जाय छे. मनुष्यलोकमां जे
दुर्गंध छे ते साधारण रीते चारसे योजन सुधी जाय छे पण मनुष्यलोकमां ज्यारे दुर्गन्ध खूब वधे छे त्यारे ते पांचसें योजन सुधी पण
पहोंचे छे, माटे मूळकारे 'चारसो' अने 'पांचसो' एम बे संख्या बतावी छे." ("इह यद्यपि नवभ्यो योजनेभ्यः परतो गन्धपुद्गला न घ्राणेन्द्रि-
यग्रहणयोग्या भवन्ति, पुद्गलानां मन्दपरिणामभावात् घ्राणेन्द्रियस्य च तथाविधशक्त्यभावात् तथापि ते अत्युत्कटगन्धपरिणामा इति नवसु योजनेषु
मध्ये अन्यान् पुद्गलान् उत्कटगन्धपरिणामेन परिणमयन्ति, तेऽपि ऊर्ध्वं गच्छन्तः परतोऽन्यान् तेऽपि अन्यान् इति चत्वारि पञ्च वा योजन-
शतानि यावत् गन्धः केवलम् ऊर्ध्वम् ऊर्ध्वम् मन्दपरिणामो वेदितव्यः। तत्र यदा मनुष्यलोके बहूनि गोमृतककलेवरादीनि तदा पञ्च योजनशतानि
यावद् गन्धः शेषकाल चत्वारि तत उक्तम्–चत्वारि पञ्च इति"–पृ० १३४). आ समाधान तद्दन साधारण छे. टीकाकार पोते ज कहे छे के
उपर उपर गन्ध मन्द थतो जाय छे तो पछी चारसे के पाचसे योजन सुधीमां मन्दतम थयेली दुर्गंध, देवोने केम बाधा पहोंचाडी शके ?
आ तो एक सगति मात्र कहेवाय. आ बाबतमां स्थानांगना टीकाकार अभयदेवसूरि वळी नवो प्रकाश पाडे छे. तेओ कहे छे के–"मनुष्य-
क्षेत्रनु केवुं गन्दु स्वरूप छे एम आ उपरथी सूचित थाय छे. वस्तुतः तो देव वा बीजो कोई नव योजन करता वधारे दूरथी आवेलां पुद्गलोनो
गन्ध जाणतो नथी–जाणी शकतो नथी अथवा शास्त्रमां इन्द्रियोना विषयनु जे प्रमाण बतावेलु छे ते सम्भव छे के औदारिक शरीर सम्बन्धी
इन्द्रियोनी अपेक्षाए होय." ("इद च मनुष्यक्षेत्रस्य अशुभस्वरूपत्वमेवोक्तम न च देवः अन्यो वा नवभ्यो योजनेभ्यः परतः आगतं गन्ध जाना-
ति–इति अथवा अत एव वचनाद् यद् इन्द्रियविषयप्रमाणमुक्तं तद् औदारिकशरीरेन्द्रियापेक्षयैव सम्भाव्यते"–पृ० २४४ स्थानांगटीका.)
भरतादिक क्षेत्रमां ज्यारे एकांत सुखमा काळ होय त्यारे तेनी दुर्गंध चारसो योजन जाय छे अने ज्यारे तेवो काळ न होय त्यारे

लोढानी कुंभीमां नाखेला चोरना उदाहरणथी अजीववाद

मरीने स्वर्गमां गएलो प्राणी अहीं नथी आवी शकतो, तेनुं कारण स्वर्गना मोजशोखो तरफ तेनी विशेपतम अभिरुचि छे, नहि के ते नथी ज, तेथी हे पएसी ! तुं एम समज के जीव जुदो छे अने शरीर जुदुं छे, पण ते बन्ने एक नथी.

[१७१] वळी फरीने पएसी बोल्यो'

हे भंते ! जीव अने शरीर जुदां जुदां नथी ते माटे आ एक बीजो पुरावो ध्यानपूर्वक सांभळोः

हे भंते ! तमे एम समजो के कोइ एक दिवसे मारी बहारनी उपस्थानशाळामां मारा मंत्री वगेरे परिवारथी घेराएलो हुं राजसिंहासनमां बेठो होउं, ते वखते मारा कोटवाळो कोई एक चोरने पकडी लावे, हुं ते चोरने जीवतो ने जीवतो लोढानी कुंभीमां पूरी दउं, तेना उपर लोढानुं ढाकणुं सज्जड ढांकी दउं, तेने लोढा तथा सीसाना रसथी रेवरावी दउं अने तेना उपर मारा विश्वासु सैनिकोनी चोकी मूकी ते लोहकुंभीनी साचवण करावुं

पछी वखत जतां हुं पोते जाते ते कुंभीने खोलावुं तो तेमां पेला पूरेला पुरुषने मरेलो जोउं छुं. जीव अने शरीर जुदां जुदां होय तो ए पुरुषनो जीव कुंभीमांथी बहार शी रीते जाय ? कुंभीने क्यांय राई जेटलुं पण काणुं नथी, जेथी जीवने बहार जवानो मार्ग मळी शके कुंभी क्यांय जरा पण काणी होत तो एम मानी पण शकात के जीव बहार नीकळी गयो छे अने तेथी एम पण ठरत के शरीर अने जीव जुदां जुदां छे, पण आ कुंभी तो क्यांय काणी ज नथी एटले जीव जुदो होय तो एमांथी नीकळी शी रीते शके? माटे जीव अने शरीर बन्ने एक छे अने शरीर अक्रिय थतां जीव पण अक्रिय थाय छे, ए मारुं धारवुं बराबर छे

[१७२] केशी कुमारश्रमण बोल्याः-

पाचसो योजन जाय छे माटे बे सख्या बतावी छे एम श्रीअभयदेवसूरि कहे छे. ("कदाचित् भरतादिषु एकान्तसुषमादौ चत्वारि, अन्यदा तु पञ्चापि"–पृ० २४४ स्था० टी०)

हे पएसी! तुं एम समज के शिखरना घाटनी घुम्मटवाळी एक मोटी ओरडी होय, जे चारे कोर लींपेली होय, जेनां वारणां सज्जड वासेलां होय अने जेमां जराय हवा पण न पेसी शके एवी ते उंडी होय, तेमां कोई पुरुष भेरी अने एने वगाडवानो दंडो लइने पेसे, पेसीने एनां बारणां सज्जड रीते वंध करे, पछी ते, ओरडीनी वच्चोवच्च बेसीने मोटा मोटा अवाजथी ए भेरीने वगाडे, तो हे पएसी! भेरीनो ए अवाज बहार नीकळे खरो?

हा, भंते! नीकळे.

हे पएसी! ए ओरडीमां क्यांय एक पण काणुं छे खरुं?

ना, भंते, ए ओरडीमां क्याय पण काणुं नथी

हे पएसी! एज प्रमाणे, वगर काणानी ओरडीमांथी पण अवाज वहार नीकळी शके छे, तेम वगर काणानी कुंभीमांथी जीव पण वहार नीकळी शके छे, अर्थात् पृथ्वीने शिलाने के पर्वतने भेदीने सोंसरुं जवानुं सामर्थ्य जीवमां छे, माटे तेने गमे त्यां पूरवामां आवे तोपण ते वहार नीकळी ज जवानो. एथी तुं एम समज के जीव अने शरीर जुदां जुदां छे पण ए बन्ने एक नथी

[१७३] वळी, पएसी बोल्योः–

हे भंते! जीव अने शरीर जुदां जुदां नथी पण एक ज छे एवी मारी धारणाने टेको आपतो आ वळी एक दाखलो सांभळोः मारा कोटवाळोए पकडी आणेला चोरने हुं जीवथी मारी नाखुं, पछी ते मारी नाखेला चोरने लोढानी कुंभीमां पूरी दउं, तेना उपर मजबूत ढांकणुं बेसारी, तेने रेवरावी अने पाकी चोकी बेसाडी दउं, पछी वखत जतां ते लोढानी कुंभी उघाडी जोऊ छुं तो तेने कीडाओथी खदवदती कुंभी जेवी भाळुं छुं.

ए कुंभीमां क्यांय राई जेटलुंय काणुं नथी, छतां एमां एटला वधा कीडा क्यांथी पेसो गया?

हुं तो एम समजुं छुं के शरीर अने जीव एकज छे, माटे शरीरमांथी ज ए वधा नीपज्या होवा जोइए. शरीर अने जीव जुदां जुदां

सज्जड बंध करेला घरमांथी जेम शब्द वहार आवे छे तेम सज्जड बंध करेली कुंभीमांथी जीव नीकळी शके छे मरेलो चोर कुंभीमां कृमिरूप थयोछे माटे अजीववाद ॥१२५॥

होय तो ए कुंभीमां में जोएला ए जीवो बहारथी शी रीते आवी शके ?

[१७४] केशी कुमार बोल्याः-

हे पएसी ! तें पहेलां कोईवार धमेलुं लोढुं जोएलुं छे खरुं ? वा तें जाते कोईवार लोढुं धमावेलुं खरुं ?

भंते ! हा, धमेलुं लोढुं में जोएलुं छे अने तेने धमावेलुं पण छे.

पएसी ! एवुं ए लोढुं अग्निमय लालचोळ थई गएलुं होय छे, ए वात खरीने ?

हा, भंते ! ए वात खरी छे

तो हे पएसी ! ए नक्कर लोढामां ते अग्नि शी रीते पेठो ? राइ जेटलुंय काणुं लोढाने नथी, छतां तेमां अग्नि पेसी शके छे, तेम जीव पण सर्वत्र अनिरुद्ध गति शक्तिवाळो छे. ते पृथ्वीने अने शिला वगेरेने भेदीने पण गमे त्यां पेसी शके छे.

हे पएसी ! बराबर सज्जड बंध करेली ए कुंभीमां पण तें जे जीवो जोया छे ते बधाय तेमां [112]बहारथी पेठेला छे, माटे तुं एम मान के शरीर अने जीव जुदां जुदां छे पण एक नथी.

[१७५] राजा पएसी बोल्योः-

हे भंते ! कोइ एक बाणावली तरुण पुरुष तरुण होय त्यारे एक साथे पांच बाणोने फेंकी शकवा जेटलो कुशळ होय, पण ते ज पुरुष ज्यारे मंद ज्ञानवाळो बाळक हतो त्यारे एवी कुशळता धरावी शकतो होत तो हुं एम मानत के जीव जुदो छे अने शरीर जुदुं छे परंतु मंद ज्ञानवाळो ए बाळक[113] एवी कुशळता बतावी शकतो नथी, माटे जीव अने शरीर एक छे ए मारी कल्पना सुसंगत छे.

तपेला लोढामां जेम अग्नि पेसे छे तेम काणा वगरनी कुंभीमां जीवो पेसे छे. बाल अने युवकना उदाहरणथी अजीववाद

११२ मुडदामां जे कीडा देखाय छे तेमना जीवो, कोई बीजी गतिथी च्यवीने मुडदाना शरीरमा पेठेला छे–उपजेला छे एवो आ वाक्यनो आशय छे.

११३ राजा पएसीना आ तर्कनो अभिप्राय नीचे प्रमाणे जणाय छेः आत्मवादी परम्पराओ आत्माने नित्य माने छे, एटले जेवो आत्मा

युवकना बीजा प्रकारना उदाहरण द्वारा जीववाद

[१७६] केशी कुमार बोल्या'– नवुं धनुप नवी दोरी अने नवुं बाण ए वडे एक साथे पांच बाणोने फेंकी शकवा

हे पएसी ! कोइ एक बाणावली तरुण पुरुप, नवुं धनुप नवी दोरी अने नवुं बाण ए वडे एक साथे पांच बाणोने फेंकी शकवा हे पएसी ! कोइ एक बाणावली तरुण पुरुप, जूनुं खवाई गएलुं धनुप तेवी ज दोरो अने तेवुंज बूठुं फळुं होय, तो ते जेटली कुशळता धरावी शके छे, पण ते ज पुरुप पासे जूनुं खवाई गएलुं धनुप तेवी ज दोरो अने तेवुंज बूठुं फळुं होय, तो ते एक साथे पाच फळाने फेंकी शके खरो ?

भंते ! न फेंकी शके

हे पएसी ! तरुण पुरुष शक्तिशाळी तो छे, परतु उपकरणोनी न्यूनता–खामी–ने लीधे ते पोतानी शक्ति बतावी शकतो नथी, तेम हे पएसी ! मंद ज्ञानवाळा बाळकमां आवडतरूप उपकरणनी खामी छे, माटे ते ए अवस्थामां एक साथे पांच बाणने फेंकी शकतो नथी. हा, ते ज मंद ज्ञानवाळो बाळक ज्यारे तरुण थइ आवडतरूप उपकरण मेळवे छे, त्यारे तेमां एवी शक्ति खीली उठे छे, पण तेथी तुं एम न मान के शरीर अने जीव बन्ने एक छे. पएसी ! ए बन्ने तो जुदां जुदां छे.

॥१२७॥

[१७७] पएसी बोल्योः–

बाळकमां छे तेवो ज आत्मा, ते बाळकनी युवावस्थामां पण छे. जो आम छे तो पछी जे काम बाळकनो आत्मा नथी करी शकतो ते काम तेनी युवावस्थानो आत्मा करी शके छे. बन्ने अवस्थामां–बाळ अने युवान अवस्थामां एक ज व्यक्तिनो आत्मा एक ज होय अने ते नित्य होय–एक सरखो ज अवस्थामां रहेतो होय, तो ए घटना न बनी शके, माटे राजा पएसी कहे छे के आत्मा अने शरीर जुदां जुदां नथी. राजा पएसीने मते तो बाळकनुं शरीर अशक्त छे. माटे जे काम ते न करी शके ते ज काम ते बाळकनुं युवान शरीर जरूर करी शके, शरीर तो बदलाया करे छे माटे तेने मते आत्मा अने शरीर एक ज छे, ए कल्पना, उदाहरणथी ते समजावे छे.

जीवता अने मुएलाना वजनमां फरक नथी माटे जीव नथी

हे भंते ! जेम कोइ तरुण पुरुष, लोढाना सीसाना के जसतना मोटा भाराने उपाडवा समर्थ छे, तेम ते ज तरुण पुरुष ज्यारे डोसो थाय अर्थात् चामडी वधी लवडी गएली, गात्र तमाम ढीलां, दांतो वधा खरी गएला अने चालतां लाकडीनो टेको लीधेलो एवो घरडो थाय, त्यारे एवा मोटा भारने उपाडी शकतो देखातो नथी.

हे भंते ! तरुण मटी एवो ए डोसो थएलो पुरुष, एवा मोटा भारने पण उपाडी शकतो देखाय, तो हुं एम मानुं के जीव जुदो छे अने शरीर जुदुं छे, *अन्यथा* मारी मान्यता ज बरावर छे

[१७८] केशी कुमार बोल्याः-

हे पएसी ! एवडो मोटो भार तो कोई हट्टोकट्टो पुरुष ज उपाडी शके. वळी, एवा हट्टाकट्टा तरुण पुरुषनी पासे भार उपाडवानां साधनो बरावर न होय तो ए पण एवा भारने न उपाडी शके. धार के, कोई हट्टोकट्टो तरुण पुरुष तो छे, पण तेनी पासे भार उंचकवानी जे कावड छे, ते पातळी अने घुणे खाधेली छे, कावडनां शिकां दोरडां अने वांसनी सळीओ ए वधुंय एवुं सडेलुं छे, आम होवाथी एवो बळवान पुरुष पण ए भारने न उठावी शके अर्थात् भार उपाडवामां सुदृढ शरीर उपरान्त बीजी पण कळवकळ होवी जोइए अने उपकरणो पण पूरतां होवां जोइए. तरुण मटी पेला डोसा थयेला पुरुष पासे ए वधुं होत, तो ए पण एवो भार जरूर उपाडी शकत, माटे तारे एम मानवुं जोइए के शरीर अने जीव जुदां जुदां छे पण ते बन्ने एक नथी.

[१७९] पएसी बोल्योः—

हे भंते ! में एक जीवतो चोर तोळ्यो, पछी तेने जीवथी मारी नाखी फरीवार तोळ्यो. जीवतां तेनुं जे वजन हतुं तेज वजन तेना मडानुं हतुं–ए बन्ने वजनमां लेश पण फरक न हतो. जीव अने शरीर जुदां जुदां होय अने जीव शरीरमांथी नीकळी जतो होय, तो मडानुं वजन घटवुं जोइए. हे भंते ! ए बन्ने स्थितिमां वजननो जराय फरक जणातो नथी, माटे हुं एम मानु छुं के जीव अने शरीर एक ज छे पण जुदां जुदां नथी

पवनथी भरेली कोथलीमां अने खाली कोथलीमां वजननो फरक नथी माटे पवन नथी ? शरीरने चीरी चीरीने जोयां छतां जीव न भळायो माटे जीव नथी ॥१२९॥

[१८०] केशी कुमार वोल्या —

हे पपसी ! पहेलां कोईवार तें चामडानी मसकमां[११४] पवन भरेलो छे खरो ? वा भरावेलो छे खरो ? चामडानी खाली मसक अने पवनभरेली मसक ए वन्नेना वजनमां कांइ फेर पडे छे खरो ?

ना, भंते ! फेर नथी पडतो

पपसी ! खाली अने पवनभरेली मसकना वजनमां फेर न पडतो होय तो जीवतानुं अने मुडदानुं वजन फरक विनानुं ज होय ने ? जीव भारे नथी तेम हळवो य नथी, तेथी जीव नीकळी जतां मुडदानुं वजन घटे एम न वने, एटले एक सरखा वजनने लीधे तुं एम मानतो हो के जोव अने शरीर वन्ने एक ज छे, ते जरा य संगत नथी.

[१८१] पपसी बोल्यो —

हे भंते ! कोई वार एक चोरने मारी पासे लाववामां आव्यो, 'तेमां जीव छे के नहि' ए जाणवा में तेने चारे वाजु तपास्यो, पण जीव तो क्यांय दीठामां न आव्यो.

पछी में तेना बे ऊभा चीरा करी तेने फरीवार जोयो, छतांय जीव तो न ज देखायो. पछी तो थई शके तेटला तेना नाना नाना कटका करी तेने वारंवार तपासी जोयो, छतांय तेमां क्यांय जीवनुं निशान पण न जणायुं माटे हुं कहुं छुं के जीव अने शरीर एक छे पण जुदां जुदां नथी.

---

११४ आ मसकनुं उदाहरण बरावर छे खरुं ? पवनथी भरेली मसकनुं वजन अवश्य वधे ज अने खाली मसकनु वजन पवनथी भरेली मसक करतां जरूर ओछुं थाय ए तो आजे पण प्रत्यक्ष छे. जे पवन पोताना जबरदस्त आंचकाथी मोटां मोटां तोतिंग वृक्षोने समूळ उखेडी नाखे छे, जे पवनथी भरेला डबा वा तुबडां द्वारा आपणे तरी शकीए छीए ते पवननु वजन न होय ए वने ज केम ? छतां 'पवननुं वजन नथी' एम जे अहीं कहेलु छे ते कई दृष्टिए समजवुं ए कळातु नथी अथवा स्थूलदृष्टिए आम कहेलुं होय.

अरणीना लाकडाने चीरीने अग्नि जोनारनी पेठे पएसी राजानी मूढता

[१८२] केशी कुमार मुनि बोल्याः

हे पएसी ! पेला कठीयारा[११५] करतांय तुं विशेष मूढ जणाय छे.

हे भंते ! ए कठीयारो वळी कोण हतो ?

पएसी ! अग्नि अने अग्नि राखवानुं ठाम साथे लई केटलाक वनजीवी लोको वननी शोध माटे नीकळी पड्या. चालतां चालतां तेओ जेमां घणां लाकडां छे एवी एक मोटी अटवी पासे आवी पहोंच्या एवामां तेमांना कोइए पोताना साथना माणसने कह्युं के, हे देवानुप्रिय ! अमे लाकडाओनी भरेली आ अटवीमां जईए छीए. तु आ अग्नि अने अग्निनुं ठाम लइ जा अने अमारा माटे खावानुं रांधी राखजे कदाच कोइ कारणथी अग्नि ओलवाई जाय तो तुं लाकडामांथी अग्नि लईने अमारुं खावानुं रांधी राखजे.

तेमना गया बाद थोडी वारे रांधवानी शरुआत करवा जतां पेला साथीए अग्निने ओलवाई गयेलो दीठो. एथी तेणे पोताना साथीनी भलामण प्रमाणे लाकडामांथी अग्नि मेळववा लाकडुं हाथमां लइ चारे बाजु तपासी जोयुं पण तेमां तेने ते क्यांय न कळायो पछी तो तेणे हाथमां कुहाडो लइ लाकडुं चीरी नाख्युं छतां तेमांय अग्नि न दीठो. छेवटे तेणे थई शके तेटला तेना नाना नाना कटका करी ते दरेकने तपासी जोया, छतांय तेमां एकेमां अग्निनुं निशान पण न भाळ्युं. आखरे थाकी कंटाळी ते बिचारो चिंतातुर थइ लमणे हाथ दईने बेठो अने 'हजु सुधी हुं रांधी न शक्यो' ए बाबत अफसोस करवा लाग्यो.

एटलामां जे साथीओ लाकडाना भारा लेवा गएला हता ते बधा पाछा फर्या अने आ बिचाराने चिंतातुर थएलो दीठो.

तेओए पूछ्युंः हे देवानुप्रिय ! तुं उदास केम बेठो छे ? हजु सुधी तें अमारा सारु खावानुं नथी रांध्युं ?

तेणे जणाव्युं के, हे भाइओ ! तमारा गया बाद थोडीवारमां ज तमोए आपेलो ए अग्नि तो ओलवाई गयो. पछी हुं तमारा

११५ दीघनिकायमां आवुज एक मोटुं उदाहरण आपेलुं छे. तेमां मात्र एक नानो छोकरो अने एक जटिल ए बेने आश्रीने हकीकत कहेली छे. जुओ पृ० ३४१.

कहेवा प्रमाणे लाकडामांथी अग्नि मेळववा लाकडाने तपासवा लाग्यो लाकडाने चीरी, तेना नाना नाना कटका करी तपासी जोयुं तो तेमां अग्नि तो क्यांय न जोवामां आव्यो. तेथी अग्नि विना हुं रांधुं शी रीते ? ए माटे ज आम अफसोसमां पड्यो छुं.

पछी तेओमांना ज कोइ दक्ष पुरुषे साथेना बीजा बधा भाइओने कह्युं के, तमे बधा नाही धोइने बलिकर्म करी तैयार थइने आवो, हुं हमणां ज रसोइ बनावी नाखुं छुं

पछी ए दक्ष पुरुषे कुहाडो लई लाकडामांथी घसणियुं शर बनाव्युं अने ए शरने अरणी साथे घसी अग्नि उपजावी अग्निने संधूकीने ते बधाओनी रसोई करी नांखी एटलामां नहावा धोवा गएला बधा साथीओ आवी पहोंच्या. सौ साथे जमी करीने चोक्खा थइ मेळा मळीने वातो करवा बेठा रसोईनी वात नीकळतां पेला दक्ष पुरुषे पेला उदास थयेला साथीने कह्युं के, हे देवानुप्रिय ! अग्निने शोधवा माटे तें लाकडां फाडी फाडीने जोवानो प्रयास कर्यो तेथी एम जणाय छे के, तुं जड छे, मूढ छे अने तद्दन अज्ञान छे

हे पएसी ! ए अग्निशोधक कठीयारानी पेठे तें पण जीवने शोधवा-जोवा-माटे शरीरने चीरी चीरीने जोवानुं पाणी वलोव्युं, तेथी तुं पण एना करतां कांइ ओछो मूढ नथी.

पएसी—
तमे दक्ष थइने भर सभा वच्चे मारुं आम अपमान करो छो ?

[१८३] पएसी बोल्यो—

हे भंते ! तमारा जेवा ज्ञानी वृद्ध महामति विज्ञानी अने विनीत पुरुष आवी मोटी सभा वच्चे मारा पर आक्रोश करे, खीजाई जाय अने मारी निर्भर्त्सना करे ए शुं ठीक कहेवाय ?

केशी—
सभाओ अने तेना नियमोने जाणे छे?

॥१३१॥

[१८४] केशी श्रमण बोल्या:—

पएसी ! तने खबर छे के क्षत्रियपर्षदा गृहपतिपर्षदा ब्राह्मणपर्षदा अने ऋषिपर्षदा एम चार प्रकारनी पर्षदाओ छे ए चारे पर्षदाओनी दंडनीतिने पण तुं क्यां नथी जाणतो ?

क्षत्रियपर्षदानो अपराध करनार कांतो पोताना हाथ पग गुमावे, माथुं गुमावे अने कांतो जीवथी जाय.

पएसी—ज्ञान मेळववानी वृत्तिथी में तमने उश्केर्या केशी—तुं व्यवहारी छे

गृहपतिपर्षदाना अपराधीने वंधाइने आगमां सळगी जवुं पडे.

ब्राह्मणपर्षदानो अपराधी अनिष्ट उपालंभपूर्वक कुंडीना वा शुनकना निशानथी अंकित थाय के निर्वासित थाय-हद्पार जाय.

ऋपिपर्षदानो अपराध करनार, अतिअनिष्ट नहि एवी वाणीवडे उपालंभ पामे.

हे पएसी ! उक्त दंडनीतिथी तुं परिचित छे, छतांय तुं मारी प्रतिकूळ वर्त्या करे छे, विपरीत रह्या करे छे, माटे ज तारे 'तुं मूढतर छे' एवी हळवी पण मारी आक्रोशवाणी वाणी सांभळवी पडे छे.

पएसी वोल्योः—

हे भंते ! मने एम थएलुं के हुं जेम जेम आपनी प्रतिकूळ वर्तीश-विपरीत वर्तीश, तेम तेम तत्त्वने विशेप जाणीश, ज्ञानने पामीश, करण अने दर्शनने अधिक समजी शकीश, तेथीज हुं अत्यारसुधी आपनी प्रतिकूळ वर्त्यो छुं अने विपरीत बोल्यो छुं.

[१८५]—केशी मुनि बोल्याः—

हे पएसी ! तुं जाणेज छे के व्यवहारकोना चार प्रकार कहेला छे.

केटलाको दे तो छे पण मीठी वाणी नथी बोली शकता. केटलाको वाणीने तो मीठी राखे छे पण कशुंय देता नथी. केटलाको कशुंय देता नथी तेम वाणी पण मीठी नथी राखता. अने केटलाको दे छे अने साथे वाणी पण मधुरी बोले छे हे पएसी ! आ चार व्यवहारकोमां जे देतो नथी अने वाणी ये मीठी नथी बोलतो, ते तद्दन अव्यवहारी छे अने वाकीना त्रणे व्यवहारना जाणकार छे.

हे पएसी ! ए रीते तुं पण व्यवहारी [११६] छे, कांइ अव्यवहारी नथी.

---

११६ आ पदनी व्याख्या करता टीकाकार लखे छे के—"केशी कुमारश्रमणे राजा पएसीने 'तुं मुढ नर छे' एम पहेला कहेलुं अने तेथी राजाना मनमा कलुषता पण नीपजेली, हवे ते कलुषता दूर करवा अने तेने संतुष्ट-प्रसन्न करवा केशी कुमारजीए तेने अहीं 'व्यवहारी'

[१८६]—पएसी बोल्योः-

हे भंते ! तमे दक्ष छो, बुद्ध छो, विज्ञानी छो, तो जेम कोइ आमळाने हथेळीमां बतावे, तेम तमे मने जीवने न बतावी शको ?

राजा पएसीए ए प्रश्न कर्यो तेटलामां तेनी पासेज जोरथी वायु वावा लाग्यो, तेथी तृण अने वनस्पतिओ वधुं हालवा लाग्युं, कंपवा लाग्युं, परस्पर अथडावा लाग्युं अने नवा नवा आकारे ऊडवा लाग्युं.

ते वखते लाग जोइने केशी मुनिए राजा पएसीने कह्युं के-हे पएसी ! जे आ तृणो अने वनस्पतिओ कंपे छे ते तो तुं जुए छे ने ? तो शु एने कोइ देव हलावे छे ? दानव, नाग, किन्नर, किंपुरुष, महोरग के गांधर्व हलावे छे ?

पएसी बोल्यो –

हे भंते ! ए तृण वगेरेने तो वायु ज हलावे छे, पण कोइ देव दानव के किन्नर हलावतो नथी.

केशी—हे पएसी ! काम, राग, मोह, वेद, लेश्या अने शरीरने धारण करनारा ए वायुने तुं जोई शके छे ?

पएसी—ना, भन्ते ! हुं तेने जोई शकतो नथी.

केशी—रूपधारी, देहधारी, मोही अने रागी एवा वायुने पण तुं जोई शकतो नथी, तो इन्द्रियातीत एवा जीवने हुं तने शी रीते

पएसी— तमे आवा ज्ञानी थइने हथेलीमां आत्मा न बतावी शको ? केशी—रूपी वायु न जोइ शकाय तो अमूर्त आत्मा केम जोइ शकाय ? ॥१२३॥

कहीने वखाण्यो छे." आ पदनो आशय खोलता टीकाकार केशी कुमारश्रमणनु हार्द आ प्रमाणे जणावे छे–" हे राजा पएसी ! जो के तु सारी रीते बोलीने मने सतोष नथी आपतो तोपण मारा तरफ तारा भवित अने बहु मान छे माटे तु 'व्यवहारी' छे." (एवामेव पएसि ! तुमं पि ववहारी इति–यद्यपि त्वं न सम्यगालापेन मा सतोषयसि तथापि मम विषये भक्तिबहुमान च कुर्वन् आद्यपुरुष इव व्यवहारी एव न अव्यवहारी. एतावता च 'मूढतराए तुम पएसी ! तओ कट्ठहारयाओ' इत्यनेन वचसा यत् कालुष्यमापादितं तद् अपनीतम्, परमं च सतोषं प्रापित इति । पृ० १४०)

मोटा हाथी अने नाना-मां नाना कंथवाना जीवनी समानता वगेरे विशे चर्चा

बतावी शकुं ?

पपसी ! खरी वात तो एम छे के, जे मनुष्य रागद्वेषथी पर छे, ते धर्मास्तिकाय अधर्मास्तिकाय आकाशास्तिकाय अशरीरीजीव परमाणुपुद्गल शब्द गन्ध वायु ए आठ पदार्थोने सारी रीते जाणी शके छे-समजी शके छे अने 'आ जिन थशे के नहि' 'आ वधां दुःखोनो नाश करशे के नहि ?' ए बे हकीकतोने पण तेज जाणी शके छे. अर्थात् वीतराग मनुष्य ए दस बाबतोने सारी रीते जाणी शके छे, माटे हे पपसी ! तुं एम समज के जीव अने शरीर जुदां जुदां छे पण एक नथी.

[१८७] पपसी बोल्योः—

हे भन्ते ! हाथीनो अने कंथवानो जीव एक सरखो छे ?

हे पपसी ! हा, ते बन्नेना जोव एक सरखा छे.

हे भंते ! हाथी करतां तो कंथवो अल्प कर्मवाळो अल्प क्रियावाळो अने अल्प आस्रववाळो छे तथा कंथवाना आहार, निहार, श्वासोच्छ्वास, बळ, वीर्य अने द्युति वगेरे पण अल्प छे, अने एथी उलटुं, ए बधुं कंथवा करतां हाथीमां वधारे छे; आम हाथीमां अने कंथवामां आसमान जमीन जेटलो चोक्खो भेद जणाय छे, छतांय हे भंते ! तमे एम कहो छो के हाथीनो अने कंथवानो जीव एक सरखो छे ?

केशी कुमार बोल्याः—

हे पपसी ! तुं एम धार के घुम्मटदार अने शिखराकार एक मोटी ओरडी होय, तेमां कोई पुरुष दीवो लइने पेसे अने पछी ए ते ओरडीनां बधां बारी बारणां बराबर बन्ध करी दे अने एनां बधां छिद्रो छांदी दे, तो ए दीपकनो प्रकाश, ए आखीए ओरडीने अजवाळशे पण बहारना भागने नहि अजवाळे, केम खरुंने ? ए रीते, ए दीपक उपर कोई मोटो थाळ ढांके अथवा मोटुं डालुं ढांके, तो ते दीपकनो प्रकाश ते ते ढांकणना अन्दरना भागने प्रकाशशे पण बहार नहि प्रकाशे, अर्थात् बधे दीपक तो एकज छे पण ते

मोटा ढांकण नीचे होय तो वधारे भागमां प्रकाशे छे अने नाना ढांकण नीचे होय तो ओछा भागने प्रकाशे छे. तेज न्याये, हे पएसी! आ जीव पण जेवडा-मोटा के नाना-शरीरने मेळवे छे, तेवडा शरीरना वधा भागोने पोताना असंख्य आत्मप्रदेशो द्वारा सचित्त करी शके छे, पछी भलेने शरीर मोटामां मोटुं होय के नानामां नानुं होय; माटे हे पएसी! तुं एम समज के हाथीनो अने कंथवानो जीव एक सरखो छे अने तुं एम पण मान के जीव अने शरीर जुदां जुदां छे पण एक नथी.

[१८८] राजा बोल्योः—

हे भंते! 'जीव अने शरीर एक छे' एवुं हुं कांइ एकलोज मानतो नथी, पण मारा दादा अने मारा पिता एमज समजता आव्या छे, एटले मारी ए समज कुलपरम्परानी समज छे, बहुपुरुष परम्पराथी चाली आवेली छे, तो हे भंते! मारा कुलनी ए दृष्टिने हुं शी रीते छोडी शकु?

[१८९] केशी श्रमण बोल्याः—

हे पएसी! तारी ए समजने तुं नहि बदलावीश, तो पेला लोढानो भारो नहि छोडनारा कदाग्रही पुरुषनी पेठे तारे पस्तावुं पडशे

राजा बोल्योः—

भंते! लोढानो भारो नहि छोडनारो कदाग्रही पुरुष वळी कोण हतो अने तेने पस्तावुं केम पड्युं?

केशी कुमार बोल्याः—

पएसी! केटलाक धनार्थी लोको विपुल करीयाणां भरीने अने साथे घणुं वधुं भातुं लइने, ज्यां कोई आवेलुं नहि एवी एक मोटी लांबी अटवीमां जइ चड्या त्यां कोई एक स्थळे पहोंचता तेमणे जेमां घणुं लोढुं दटायेलुं छे एवी एक मोटी लोढानी खाण जोई. खाणने जोतांज खुशीमां आवी जई तेओ परस्पर कहेवा लाग्या के आ लोढुं आपणने विशेष उपयोगी छे, माटे तेने भारा बांधी लइ जवुं सारुं छे.

पएसी—मारी परंपराने केम छोडुं? खोटी परंपरा तो छोडवीज जोइए एवुं उदाहरण साथे समर्थन

पसेण-इय सुत्तनो सार

॥१३६॥

एम विचारी तेओ लोढाना भारा वांधी तेमने उंचकी एज अटवीमां आगळ चाल्या.

चालतां चालतां, जेमां घणुं सीसुं भरेलुं छे एवी एक मोटी सीसानी खाण तेमना जोवामां आवी. थोडाक पण सीसाना बदलामां लोढुं घणुं मळे छे, माटे लोढा करतां सीसाने बहुमूल्य समजी तेओए लोढाना भाराने पडता मूकी सीसाना भारा वांधवानो विचार कर्यो अने एना भारा वांध्या पण खरा परन्तु तेओमांना एक साथीए सीसाने बहुमूल्य समजवा छतां लोढाना भाराने पडतो मूकी सीसानो भारो न ज वांध्यो. ए बाबत तेने बीजा साथीओए घणुं घणुं समजाव्युं तोय ते एकनो बे न थयो. उलटुं तेणे एम कह्युं के, हे देवानुप्रियो! लोढानो आ भारो हु घणा दूरथी उपाडी लाव्यो छुं अने तेने घणो मजबूत बांधेलो छे, माटे एने मूकीने सीसानो भारो वांधवानु मारुं मन नथी

पछी तो तेओ बधा सीसाना भाराने उंचकी ए अटवीमां वळी आगळ वध्या. आगळ चालतां चालतां तेओए तांबानी, रूपानी, सोनानी, रत्ननी अने वज्रनी मोटी मोटी खाणो जोई. एओए तो जेम जेम बहुमूल्य वस्तुओ मळती गई, तेम तेम ओछी कीमतवाळी वस्तुओ छोडी दीधी अने आखरे तेओए वज्रना भारा बांधी तेमने उंचकी पोताना देशमां पोतपोताना नगर भणी जवाने प्रयाण कर्युं नगरमां पहोंची, भारे भारे आणेलां वज्रोने वेची, तेओ बधा न्याल न्याल थई गया. तेओए आठ तळवाळा मोटा मोटा महालयो बंधाव्या, घणां दास दासीओ गायो अने घेटां वगेरेने आंगणे वसाव्यां अने ए महालयोमां बिराजी तेओ तरुणीओथी भजवातां बत्रीश प्रकारनां नाटको, तेमनां गान नाच जोतां जोतां आनन्दपूर्वक रहेवा लाग्या. त्यारे पेलो लोढाना भाराने उंचकी लावनार साथी लोढु वेची घणुं ओछुं कमायो अने तेमना ए साथीओनो वैभव जोइ पोतानी जातने निंदवा लाग्यो' हुं केवो हीनपुण्य छुं, केवां माठां लक्षणवाळो छुं, में साथीओनुं कहेवुं छेवटसुधी काने न ज धर्युं अने एक मारा दुराग्रहमांज तणायो. तेमनुं कहेवुं मान्युं होत तो आजे हु पण एमना जेवोज वैभव माणत. हे एएसी! तुं पण तारो दुराग्रह न छोडीश, तो ए लोढाना भारावाळा दुराग्रहीनी पेठे तारेय पस्तावुं पडशे अने तेनी पेठे दीनहीन थवुं पडशे

श्रमणोपासक पएसी आचार्योना अने तेमनी प्रतिपत्तिओना प्रकारो

[१९०] केशीकुमारनुं ए कथन सांभळी आखरे राजा पएसीने भान आव्युं अने तेणे केशीकुमारने वन्दन करीने कह्युं के, हे भंते ! मारे जराय पस्तावुं पडे एवुं तो हुं नहि करुं. मारो पूर्वग्रह छोडीने आपनी पासे हुं केवळीभाषित धर्मने सांभळवानी-समजवानी इच्छा राखुं छुं, माटे हवे मारे पेला लोढावाळानी पेठे पस्तावानुं क्यां रह्युं ?

केशी श्रमण बोल्याः—

हे देवानुप्रिय ! सुख थाय तेम कर, पण सारा काममां प्रतिबंध न आववा दे.

राजानी जिज्ञासावृत्ति जोइ केशी श्रमणे जेम चित्त सारथिने धर्मकथा कही संभळावी गृहिधर्म समजाव्यो हतो, तेम राजा पएसीने पण तेमणे धर्मकथा कही गृहिधर्मनी समजण आपी अने राजाए गृहिधर्म स्वीकारी पोतानो सेयविया नगरी भणी जवानो मनसूबो कर्यो.

[१९१] राजा उठतो हतो त्यां केशी श्रमण बोल्याः—

पएसी ! कलाचार्य, शिल्पाचार्य अने त्रीजा धर्माचार्य ए त्रण आचार्योना विभागने तुं जाणे छे अने ए त्रणेनी विनयप्रतिपत्ति केवी केवी करवानी होय छे, तेनी पण तने खबर छे.

पएसी बोल्यो —

हे भंते ! हा, ए बधुं हुं बराबर जाणुं छुं. कलाचार्य अने शिल्पाचार्यनुं तैलादिकथी मर्दन करवुं, तेमने न्हवराववा, तेमनी पासे पुष्पादिकनी सुवास फेलाववी, वस्त्रो अने घरेणां गांठां आपी सारी रीते शणगारवा, आदरपूर्वक जमाडवा, मोटुं प्रीतिदान आपवुं अने तेमने एवी वृत्ति बांधी आपवी के जे तेमना पुत्रोना पुत्रो सुधी पहोंच्या करे.

अने धर्माचार्यने जोतां तेमने वंदन करवुं, सत्कार करवो, देवताना चैत्यनी पेठे ते मंगळमय आचार्यनी उपासना करवी तथा तेमने खान पान खादिम स्वादिम वगेरे निर्दोष पदार्थोद्वारा प्रतिलाभवा अने पीठ पाटिआं शय्या संथारो वगेरे लइ जवा निमंत्रित करवा

हे पएसी! तुं एम समजे छे त्यारे अत्यारसुधी मारी सामे तें जे प्रतिकूळ वर्तन चलाव्युं छे तेनी माफी माग्या विना नगरी भणी जवाने आटलो वधो उतावळो केम थयो छे ?

[१९२] राजा बोल्योः—

हे भंते! अत्यारसुधी हुं आपनी प्रतिकूळ वर्त्यो छुं ए खरुं पण ए विषे में एवो विचार कर्यो छे के आवती काले प्रभातनो पहोर थतांज मारा वधा परिवार साथे अहीं आवी आपने वंदन नमन करी में करेला आ अविनयनी विनयपूर्वक वारंवार माफी मागुं

आम कही राजा पएसी पोताने स्थाने पहोंची गयो अने सवार थतां ज ए राजा राजा कोणिकनी पेठे मोटा आडंबर साथे पांच [117]अभिगमपूर्वक केशी श्रमण पासे आव्यो अने तेमने वांदी नमी पोताना अविनय संबंधी विशेष नम्रतापूर्वक क्षमा मागी

[१९३] केशी श्रमणे ए राजा पएसीने तेनी राणी सूर्यकांताने तथा तेनी साथेनी मोटी सभाने धर्मदेशना कही संभळावी.

[१९४] धर्मदेशना सांभळी पोताने स्थाने जवानी त्वरावाळा राजाने केशी कुमारे कह्युं—

हे पएसी! वनखंड, नृत्यशाळा, शेरडीनो वाढ अने खोळनो वाडो पहेलां पहेलां तो रमणीय लागे छे पण पछी अरमणीय थइ जाय छे, तेम, तुं पहेलां रमणीय[118] थइ पछी अरमणीय न थतो.

पएसी पोताना अविनयने सविनय खमावे छे पहेलां सारो हतो हवे जैन थइने अरमणीय न थतो

---

११७ कोई सतपुरुष पासे जतां जे अदब–मर्यादा साचववानी होय छे तेनुं नाम अभिगम छे.

११८ आ वाक्यनो आशय स्पष्ट करवा टीकाकार आ प्रमाणे जणावे छेः "केशीकुमारजी राजा पएसीने कहे छे के हे राजन्! तु जैन-धर्मानुगामी न हतो त्यारे बीजा लोकोने दान आपतो हतो. दाननी तारी आ प्रथा हवे पण तारे चालु राखवी उचित छे. अर्थात् जैन धर्मानुगामी थया पछी पण तुं पहेला जेवो दानी हतो तेवोज हवे पण दानी रहे ए उचित छे. तात्पर्य ए के तुं पहेलां जेवो रमणीय हतो तेवोज रमणीय हवे पछी पण रहेजे, पण अरमणीय न थतो. अरमणीय थईश–टुंको दृष्टिवाळो थईश–तो जैनधर्मनी अपकीर्ति थशे अने अमोने

[१९५] पएसी बोल्यो—

हे भंते! वनखंड, नृत्यशाळा, शेरडीनो वाढ अने खोळनो वाडो ए पहेलां पहेलां तो रमणीय लागे छे अने पछी अरमणीय थइ जाय छे, ते वळी केम?

[१९६] केशी बोल्याः—

पएसी! सांभळ. वनखंड ज्यांसुधी पत्रवाळो फूलवाळो फळवाळो अने घटादार छायावाळो लीलोछम होय छे त्यां सुधी रमणीय लागे छे अने ज्यारे तेनां पांदडां खरी पडे छे, फूलो करमाइ जाय छे, फळो नथी होतां, तेम ते सूको खंख थइ जाय छे, त्यारे बीहामणो लागे छे

[१९७] नृत्यशाळामां ज्यारे नाच चालतो होय, गाणां गवातां होय, वाजां वागतां होय अने लोको हसता रमता होय त्यारे ते रमणीय लागे छे अने ज्यारे नाच बंध होय, गाणां न चालतां होय, वाजां न वागतां होय अने तेमां एक पण माणस न फरकतुं होय, त्यारे ते सूनकार स्थान जेवी बीहामणी जणाय छे.

[१९८] शेरडीना वाढमां चिचोडा चालता होय, शेरडी पीलाती होय, लोको तेनो रस पीता होय, कोइ तेने लेता होय वा देता होय, त्यारे ते वाढ भर्यो भर्यो–रमणीय लागे छे, पण ज्यारे तेमां चिचोडा बंध होय, शेरडी न पीलाती होय, एक चकलु य न फरकतुं होय, त्यारे ते खावा धाय छे–अळखामणो दीसे छे.

अंतरायकर्म लागशे." (मा ण तुमे पुव्वं रमणिज्जे भवित्ता पच्छा अरमणिज्जे भविज्जासि ॥ इत्यादेर्ग्रन्थस्य अयं भावार्थः–पूर्वमन्येषां दात्रा भूत्वा सम्प्रति जैनधर्मप्रतिपत्त्या तेषामदात्रा न भवितव्यम् अस्माकमन्तरायस्य जिनधर्मापभ्राजनस्य च प्रसक्तेः" पृ० १४५)

राजा पएसीने आ सूचना करी केशीकुमारजीए विशाळ भावनी जे समज आपी छे ते अतिमहत्त्वनी छे अने आजे आपणे एने अनुसरीए तो जैनधर्मनी प्रभावना थवा उपरात समाजमां पण शांति पेदा करी शकीए.

पएसीए करेली पोताना धननी सुव्यवस्था

[१९९] खोळना वाडामां ज्यारे घाणीओ चालती होय, तल पीलाता होय, लोको भेगा थइने सानी खाता होय, एक बीजा परस्पर सानीने लेता देता होय, त्यारे ते रमणीय जणाय छे, पण ज्यारे घाणीओ ज बंध होय कोइनी अवरजवर न होय, त्यारे ते अरमणीय भासे छे तेम हे पएसी! तुं पहेलां रमणीय थइने पछी पाछळथी अरमणीय न थतो.

[२००] राजा पएसी बोल्योः—

हे भंते! तमे जणावेलां उदाहरणोनी पेठे हुं पहेलां रमणीय थइ पछी अरमणीय नहि थउं में तो एवो विचार कर्यो छे के हाल मारा तावामां सेयविया प्रमुख जे सात हजार गामो छे तेना चार भाग पाडुंः एक भाग राज्यनी व्यवस्था अने रक्षण माटे बलवाहनने सोंपुं, एक भाग कोठार माटे राखुं, एक भाग अंतःपुरनी रक्षा तथा निर्वाह माटे दउं अने एक भागनी पेदाशमांथी एक मोटी कूटागारशाळा बनावुं, तेमां अनेक पुरुषोने पगारदार, पेटवडिये के भाडे रोकी खानपान खादिम स्वादिम तैयार करावु कने ए बधुं अनेक श्रमण, ब्राह्मण, भिक्षु तथा प्रवासी वटेमार्गुओ वगेरेमां वहेंचावुं, तथा हुं शीलव्रत, गुणव्रत, विरमण, प्रत्याख्यान अने पोषधोपवासद्वारा जीवनयापन करतो रहुं. हे भंते! मारी आ धारणा छे.

एम कही ते राजा पोताना परिवार साथे केशी मुनीने वांदी नमी पोताने स्थानके चाल्यो गयो.

[२०१] नगरीमां आवी राजाए जे धारणा केशी मुनीने निवेदी हती, ते प्रमाणे बधी व्यवस्था करी दीधी अने पोते पण ते रीते आचरवा लाग्यो.

[२०२] हवे तो राजा पएसी श्रमणोपासक थयो, जीव अजीव वगेरे तत्त्वोनुं तेने भान थयुं, ए प्रवृत्ति सर्वेनी जेम ओछी बने अने संवरमां जेम अधिक रहेवाय तेम ते वर्तवा लाग्यो एटले राज्य, राष्ट्र, बळ, वाहन, भंडार, कोठार, गाम नगर अने अंतःपुर तरफ तेनुं ध्यान आपो आप ओछुं रहेवा लाग्युं.

रायपसेणइय सुत्तनो सार

पएसीनो वैराग्य अने तेथी तेनी स्त्रीए तेने मारवानो करेलो संकल्प

ज्यारथी राजा पएसीनुं ध्यान राज्यकारभार अने विषयोपभोगो तरफ ओछुं रहेवा लाग्युं-ओसरवा लाग्युं, त्यारथी तेनी रसीली राणी सूर्यकांताने एवो विचार थयो के हवे कोइ शस्त्रप्रयोग, अग्निप्रयोग, मंत्रप्रयोग के विषप्रयोगद्वारा राजा पएसीने ठेकाणे करवो जोइए, राजकुमार सूर्यकांतनो राज्याभिषेक करवो जोइए अने मारे विविध विषयोपभोगोमां रस लेतां लेतां राज्यश्रीने संभाळता रहेवुं जोइए

तेणीए आ पोतानो संकल्प राजकुमार सूर्यकांतने सूचव्यो अने राजाने मारी नाखी तेने राज्य सिंहासन आपवानुं जणाव्युं

राज्यकुमार सूर्यकांत पोतानां माताना तेवा क्रूर विचारमां संमत न थयो ते बाबत कशो उत्तर न आपतां मौन ज रह्यो.

पोताना ए विचारमां राजकुमारनी असंमति जाणी तेणीने एम थयुं के रखेने राजकुमार तेना आ रहस्यनो भेद फोडी नाखे अने राजाने बधुं कही दे.

आम विचारी तेणी राजा पएसीने मारवानो लाग शोधवा लागी, तेनां छिद्रो जोवा लागी अने हवे तेने शीघ्र मारी नाखवानी बाबतमां सावधान रहेवा लागी

[२०३] एकवार लाग मळतां ज तेणीए राजा पएसीना खानपानमां, तेने पहेरवानां वस्त्रोमां, सुंघवानी माळाओमां अने तेना शणगारनां घरेणांओमां [११९]विष मेळव्युं.

॥१४१॥

नाही धोई बलिकर्म करी जेवो राजा रसवती शाळामां जमवा आव्यो, तेवुं ज तेने तेणीए ए विषमय भोजन पीरस्युं, विषमय वस्त्रो पहेराव्यां, विषमय माळाओ आपी अने विषमय शणगार सजाव्यो

---

११९ भोजनमां के पीणामां विष भेळववानी कळा तो प्रख्यात छे, पण वस्त्रोमां सुंघवानी माळाओमां अने शणगारना सामानमां, न कळी शकाय ते रीते विष भेळववानी कळा ते काळे पण लोकोमां जाणीती हती ए जाणवा जेवी हकीकत छे. आजे पण एवा विषमय पोषाक बने छे के जेने पहेरता ज मरण नीपजे.

एम थतां राजा पएसीना शरीरमां तीव्र वसमी वेदना ऊपजी अने विषम पित्तज्वरनुं जोर व्यापतां, नहि सही शकाय तेवी भारे वळतरा थवा लागी.

[२०४] राजा तो समजी गयो के पोते राणीना कावत्राथी ठगायो छे, छतां तेणे राणी उपर लेश पण रोष न आणतां पाधरो पोषधशाळा तरफ जवानो मनसुबो कर्यो. त्यां जइ तेने पूजी प्रमार्जी तथा शौचनी अने लघुशंकानी जग्याने तपासी पछी ते पूर्वाभिमुख थइ डाभना संथारामां पल्यंकासने स्थिर बेठो अने हाथ जोडी माथुं नमावी आ प्रमाणे वोल्योः

अरहंत भगवंतोने नमस्कार.

मारा धर्माचार्य अने धर्मोपदेशक केशी कुमारश्रमणने नमस्कार. अहीं रही तेमने वंदन करता मने भगवंत केशी कुमारजी जुओ, हुं तेमने वारंवार वांदुं छुं-नमुं छुं.

में पहेलां ए मारा धर्माचार्य पासेथी स्थूल प्राणातिपात वगेरेना त्यागथी प्रतिज्ञाओ लीधी हती अने हमणां पण तेमनी ज साक्षीमां सर्व प्रकारना प्राणातिपात वगेरेना त्यागनो नियम लउं छुं, क्रोध मान माया अने लोभ वगेरे कषायो छोडी दउं छुं, नहि करवा जेवुं वधुं कार्य तजी दउं छुं अने जीवतांसुधी चारे प्रकारना आहारनो पण परित्याग करुं छुं

वळी, आ शरीर जे मने अत्यंत वहालुं छे तेने पण छेल्ला श्वासोच्छ्वास चालतां सुधी वोसरावी दउं छुं.

एम करीने ते राजाए पोताना सारां नरसां वधां कार्योनी आलोचना करी, प्रतिक्रमणा करी अने तेणे कालमासे मरण आवतां समाधिपूर्वक काळ करी सौधर्मकल्पना सूर्याभविमानमां सूर्याभदेवरूपे अवतार मेळव्यो.

[२०५] ते त्यां हमणां ताजो उत्पन्न थएलो सूर्याभदेव पांच प्रकारनी पर्याप्तिओद्वारा शरीरादिकनी पूर्णता मेळवे छे, तो हे गोतम! आ सूर्याभदेवे ए दिव्य देवऋद्धि, दिव्य देवशक्ति अने दिव्य देवप्रभाव ए रीते मेळवेलां छे.

[२०६] हे भगवन्! सूर्याभदेवनी जीवनस्थिति आयुष्यमर्यादा केटला काळ सुधीनी जणावेली छे?

मार्यो गएलो पएसी क्षोभ पामतो नथी पण पोताना धर्मने अने धर्माचार्यने संभारे छे पएसी मरीने सूर्याभ देव थयो

[२०७] हे गौतम! तेनी आयुष्यमर्यादा चार पल्योपमनी कहेली छे,

हे भगवन्! ते सूर्याभदेव आयुष्य पूरुं थतां त्यांथी क्यां जवानो–क्यां जन्म लेवानो ?

हे गौतम! सूर्याभदेव, तेनो देवत्वकाळ पूरो थतां महाविदेहवर्षमां जन्म लेवानो. महाविदेहवर्षमां जे कुळो आढ्य छे, दीप्त छे, खानपानना सगलेवडदेवडना व्यापारमां कुशळ छे, जेमनी पासे भवन, शयन, आसन, यान, वाहन, धन, सोनुं अने रूपुं विशेष छे, दासदासीओ गाय अने घेटां घणां छे, एवा प्रसिद्ध अने कोईथी पराभव न पामनारां कुळोमां ते सूर्याभदेव पुत्र वड अधिकाधिक छे, पणे अवतरशे

सूर्याभदेव च्यवीने महाविदेहमां दृढप्रतिज्ञ नामे थइ निर्वाण पामशे

[२०८] ए पुत्रपणे गर्भमां आवतां ज तेनां मातापितानी धर्ममां दृढता थशे.

पूरा नव मास अने साडा सात दिवस जतां ते बाळकनो त्यां जन्म थशे.

दृढप्रतिज्ञना जन्मादि संस्कारो

[२०९] जन्म थया पछी पहेले दिवसे तेनां मातापिता बाळकना जन्मनो उत्सव करशे, त्रीजे दिवसे [120] सूर्यचंद्रनां दर्शन करावशे, छट्ठे दिवसे धर्मजागरण ऊजवशे, एम अग्यार दिवस वीती जतां अने बारमो दिवस आवतां बाळकना जन्मनुं सूतक काढी नाखशे अर्थात् तेनां मातापिता चोक्खां थशे, पछी वधे लींपणगुंपण करी भोजननी विपुल सामग्री तैयार करावशे अने पोतानां सगां संबंधी मित्र ज्ञातिजन स्वजन परिजन वगेरेने आमंत्री न्हाइ धोई बलिकर्म करी वधां साथे बेसीने भोजनमंडपमां भोजन करशे.

।।१४३।।

पछी ते पुत्रनां मातापिता, वस्त्र गंध माला अने अलंकारवडे आमंत्रित जनोनो सत्कार करशे, सन्मान करशे अने तेओनी समक्ष एम कहेशे के आ बाळक तेनी मातानी कुक्षिमां आव्यो त्यारथी अमे धर्ममां दृढ प्रतिज्ञावाळां थयां छीए, माटे अमे तेनुं 'दृढप्रतिज्ञ' एवुं यथार्थ नाम पाडीशुं.

---

१२० आ संस्कारोने लगती सविस्तर माहिती माटे जुओ संस्कारो उपरतुं 'भगवान महावीरनी धर्मकथाओ' मांनुं टिप्पण.

आर्य अने अनार्यकुळनी अनेक दास दासीओ

ए प्रकारे नामसंस्कार थया बाद समय आवतां बाळकनां मातापिता तेना प्रजेमनक प्रतिवर्धापनक प्रचंक्रमण कर्णवेध संवत्सरप्रतिलेख अने चूलोपनयन वगेरे बधा संस्कारो करशे.

[२१०] तेओ पोताना पुत्रना लालनपालन माटे पांच धात्रीओनी योजना करशेः एक बाळकने धवरावनारी, बीजी शणगारनारी, त्रीजी न्हवरावनारी, चोथी खोळामां लई फरनारी अने पांचमी रमाडनारी.

ए उपरांत त्यां घरकाम माटे रोकवामां आवेली, पोतपोताना देशनो पोषाक पहेरनारी, इंगित चिंतित अने प्रार्थितने समजनारी, एवी देशविदेशनी बीजी पण अनेक कुशळ दासीओ[१२१] द्वारा अने अंत.पुरना रक्षण माटे योजापला वर्षधरो[१२२] कंचुकीओ तथा महत्तरो द्वारा ए बाळकनुं घणी सारी रीते लालनपालन थशे, कोई ते बाळकने हाथोहाथ फेरवशे, कोइ तेनी पासे नाचशे, कोइ तेनां गीत गाशे, कोइ तेने वची लेशे, ए प्रकारे अनेक रीते लालित पालित थतो ते बाळक चंपाना छोडनी जेम सुखे सुखे दिनदिन वृद्धि पामशे.

---

१२१ सूत्रोमा ज्या ज्या दासीओनु वर्णन आवे छे त्या बधे लगभग एक सरखो उल्लेख होयछे. अनार्य देशना जे नामो सूत्रमा सूचवेला छे तेज नामो दासीओना वर्णनमां नोंधेलां छे. जेमके–चिलाईया (किरात देशनी) बब्बरिया (बाबर देशनी) सिंहली (सिंहल देशनी) आरबी (अरबस्ताननी) पारसी (पारस–पर्शिया–देशनी) इत्यादि. आ उपरथी एम समजी शकाय छे के आर्योए अनार्यो उपर जय मेळवी तेमने दास तरीके राखवानी प्रथा पाडेली ते आजसुधी पण भुंसाई नथी.

१२२ राजाना अंत'पुरनी रक्षा माटे उक्त दासीओ उपरात केटलाक वर्षधरो अने कचुकीओ पण राखवामा आवता; जेओ मूळथी नपुंसक हता वा जेओने अतःपुरनी रक्षा माटे खसी करवामा आवता तेओ वर्षधर कहेवाता अने जेओ स्त्रीनी पेठे काचळी–कापडुं–पहेरीने रहेता तेओ कंचुकी कहेवाता. आचार्य हेमचन्द्र कहे छे के—"षण्ढे वर्षवर." अभिधान०काड–३ श्लो० ३९२. अर्थात् "षढ एटले वर्षवर." कोशमा वर्षवर शब्द छे अने सूत्रोमा वर्षधर शब्द छे, छता ए बन्ने शब्दोनो भाव तो एक सरखो छे.

[२११] पुत्रने नवमुं वरस वेसतां तेनां मातापिता, न्हवरावी बलिकर्म करावी सारी रीते शणगारी शुभ मुहूर्त्तमां मोटा उत्सव
साथे कलाचार्य पासे कलाओ शीखवा मोकलशे.
[२१२] कलाचार्य लिपि अने गणितथी मांडीने पक्षीओनी भाषा समजवा सुधीनी बहोंतेरे कळाओने[123] प्रयोग साथे शीखवाडी
मातापिता पासे ते पुत्रनुं उपनयन करशे.
दृढप्रतिज्ञनो कलाओ संबंधी अभ्यास जोइ मातापिता कलाचार्य उपर खुश थशे अने विशिष्ट खानपान वस्त्र गध माला अलंका-
रोवडे कलाचार्यनो सत्कार करशे तथा जीवनपर्यंत चाले तेवुं विपुल प्रीतिदान दइ तेमने विसर्जित करशे.
[२१३-२१४] बहोंतेर कलानिपुण, अढार [124]देशीभाषाविशारद, गीतनृत्यरसिक नाट्यकळाकोविद, एवो दृढप्रतिज्ञ यौवनमां आवतां
तेनां मातापिता तेने भोगसमर्थ जाणी एम कहेशे के, हे चिरंजीव ! तुं युवान थयो छे माटे हवे तुं कामभोगोनी आ विपुल सामग्रीने
भोगव
[२१५] दृढप्रतिज्ञ पोतानां मातापिताने (विनयपूर्वक) जणावशे के, हे मातापिता ! भोगोनी ए सामग्रीमां मने जराय रस नथी,
अर्थात् ते ए भोगसामग्रीथी ललचाशे नहि, खेंचाशे नहि, तेम तेमां लेश पण आसक्ति राखशे नहि.
जेम कमळ पंकमां पेदा थाय छे अने पाणीथी वधे छे, छतां पंक के पाणीथी लेपातुं नथी, तेम कामोमां पेदा थएलो अने भोगोमां
वधेलो ए दृढप्रतिज्ञ ते कामभोगथी जरा पण लेपाशे नहि
पण तथारूप उत्तम स्थविरो पासेथी बोधिज्ञानने मेळवशे अने अगारने त्यजी मुंड थइ अनगार धर्मनो स्वीकार करशे
पछी तो ते पूर्ण अहिंसा सत्य त्याग तप अने सद्वर्तनना तेजथी चमकशे अने जेवटे उत्तमोत्तम ज्ञान दर्शन चारित्र आर्जव मार्दव
लघुता क्षमा निर्लोभता वगेरे गुणोथी अधिकाधिक दीपतो ते, अनुत्तर अनंत निरावरण निर्व्याघात एवा केवळज्ञान अने केवळद-

दृढप्रतिज्ञनुं भणतर
गुरुदक्षिणा
दृढप्रतिज्ञनी भोगसमर्थता दृढ प्रतिज्ञनि-अनासक्ति

॥१४५॥

१२३ बहोतेर कळानी सविस्तर समज माटे जुओ 'भगवान महावीरनी धर्मकथाओ' मांनु कळाओ उपरनु टिप्पण.
१२४ आ विशेषणनी स्पष्ट समज माटे जुओ भगवान महावीरनी धर्मकथाओमानुं देशी भाषा उपरनु टिप्पण.

शंनने पामशे

हवे तो ते दढप्रतिज्ञ अर्हन् जिन भगवान केवळी कहेवाशे अने जेमां देवो मनुष्यो तथा असुरो रहे छे एवा समस्त लोकना पर्यायने जाणशे, अर्थात् ते, प्राणीमात्रनां आगति, गति, स्थिति, च्यवन, उपपात, तर्क, क्रिया, मनोभाव वगेरेने जाणशे, तेमनुं प्रकट कर्म के गुप्त कर्म ए बधु कळी शकशे, तेमनुं खाधेलुं पीधेलुं अने भोगवेलुं समजी शकशे.

एवो ते दढप्रतिज्ञ अर्हन् सर्व लोकना सर्व जीवोना सर्व भावोने जाणतो जोतो पृथ्वी तळ उपर विहरशे

ए प्रकारे बहु वर्ष विहरतो ते पोताना आयुष्यनो अन्त निकटवर्ती जाणी घणा दिवसोनुं अनशन लेशे अने जे साध्यनी सिद्धि माटे नग्नभाव, मुंडभाव, केशलोच, ब्रह्मचर्यधारण, अस्नान, अदन्तधावन, अणुवहाणग, भूमिशय्या, काष्ठासननो आश्रय, भिक्षा माटे परगृहप्रवेश, मानापमानसहन, लोकनिन्दा वगेरे घणुं आकरु कष्ट सहवुं पडे छे तथा न खमी शकाय तेवा जात जातना बावीश परीषहो खमवा पडे छे, ते साध्यनी सिद्धि मेळवशे, अर्थात् ते सिद्ध थशे, बुद्ध थशे, मुक्त थशे अने सर्व दुःखोना अन्तने करशे–परिनिर्वाण पामशे.

[२१६] हे भगवन्! ते ए प्रमाणे छे, हे भगवन्! ते ए प्रमाणे छे, एम कही भगवान गौतम, श्रमण भगवान महावीरने वांदी, नमी, संयम, अने तपवडे आत्माने वासित करता विहरे छे.

[२१७] भयोने जितेला जिनोने नमस्कार श्रुतदेवता भगवतीने नमस्कार. प्रज्ञप्ति भगवतीने नमस्कार. अरिहंत भगवान पार्श्वनाथने नमस्कार. राजा पएसीना प्रश्नोने जणावनारा प्रस्तुत ग्रन्थने नमस्कार. मूळनुं ग्रन्थमान–२१२०

रायपसेणइयनो सार समाप्त ॥